विश्व के प्रमुख संविधान

[MAJOR CONSTITUTIONS OF THE WORLD]

—

लेखक
पुखराज जैन
अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग
गवनमेण्ट डिग्री कॉलेज, पाली

१९७३



साहित्य भवन : आगरा-३

लेखक

प्रथम संस्करण १९७३



मूल्य तेरह रुपया पिचहत्तर पैसे



प्रकाशक
साहित्य भवन
हास्पीटल रोड आगरा



मुद्रक श्री देवी प्रिंटस, आगरा

भूमिका

पुस्तक की रचना विभिन्न भारतीय विश्वविद्यालया के प्रमुखतया स्नातक स्तर के विद्यार्थियो की आवश्यकता को दृष्टि म रखते हुए की गई है।

इस विषय प' हिन्दी मे भी अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं लेकिन फिर भी एक और पुस्तक की रचना करने मे मेरा अपना दृष्टिकोण रहा है। पुस्तक के अन्तगत विभिन्न सविधानो के अध्ययन मे तुलनात्मक एव आलाचनात्मक दृष्टिकोण को अपनाया गया है जिससे विद्यार्थी यह समझ सक कि एक विशेप दश का सविधान किन बातो मे अ य देशो के सविधानो से प्रभावित हुआ है और कहाँ तक उसकी अपनी मौलिकता है। विश्वविद्यालयीय परीक्षाओ मे अनेक तुलनात्मक प्रश्न पूछे जाते हैं और इस बात का ध्यान रखा गया है कि इस सम्ब ध मे विद्यार्थियो के समक्ष कोई कठिनाई न रहे। पाठ्यसामग्री प्रस्तुत करने मे इस बात को दृष्टि मे रखा गया है कि विभिन विश्व-विद्यालयो की इस स्तर की परीक्षाओ म पूछे गये और पूछे जा सकने वाले सभी प्रश्नो का पूण उत्तर इस एक ही पुस्तक के आधार पर दिया जा सके। पुस्तक मे नवीनतम सामग्री का सकलन किया गया है और विभिन्न सविधानो मे यथास्थान १९७३ के प्रारम्भ तक की घटनाओ की विवेचना की गई है।

यथास्थान मा य लेखको एव विचारको क कथनो का हिन्दी और अग्रेजी दोनो ही भाषाओं म उल्लेख कर दिया गया है और यथासम्भव उनके मूल स्रोत भी दिये गये हैं जिससे पुस्तक न केवल सामा य विद्यार्थियो वरन् विशेप अध्ययन मे रुचि रखने वालो के लिए भी उपयोगी हो सके।

अध्ययन सामग्री को सरल भाषा और आकपक शैली द्वारा विद्यार्थी वग के लिए बोधगम्य तथा हृदयग्राही बनाने का प्रयास किया गया है। व्यापक एव सुसगठित रूप मे अध्यायो को शीपको उपशीपको म विभाजित करके विद्यार्थियो मे वैज्ञानिक और विश्लेपणत्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करने का प्रयत्न किया गया है। प्रत्येक अध्याय के अन्त मे महत्त्वपूण प्रश्नो की सूची भी दी गई है। इस सूची मे विभिन्न विश्व-विद्यालया मे पूछे गये सभी प्रश्न सम्मिलित हैं।

मैं उन समस्त दार्शनिको एव विचारको के प्रति आभारी हू जिनकी रचनाओ से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप म सहायता प्राप्त की गयी है। मैं पुस्तक के प्रकाशक बसल ब धुओ को भी धन्यवाद देना चाहूगा, जिन्होंने बहुत थोडे समय म पुस्तक को सुन्दर रूप मे प्रकाशित किया है।

विद्यार्थी वग के लिए पुस्तक उपयोगी होगी, ऐसा मेरा विश्वास है। पुस्तक को और उपयोगी बनाने के लिए प्राध्यापका एव पाठको के सुझाव आमन्त्रित हैं।

—पुखराज जन

विषय-सूची

अध्याय पृष्ठ

द्वितीय खण्ड

संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान

1

ब्रिटिश संविधान का विकास

(DEVELOPMENT OF THE BRITISH CONSTITUTION)

> "विदेशी विजयों तथा देश के भीतर क्रान्तियों के होते हुए भी ब्रिटिश जनता का राष्ट्रीय जीवन चौदह सौ वर्षों तक निर्बाध चलता रहा। किसी भी समय वर्तमान तथा भूतकाल की शृंखला भंग नहीं हुई, किसी भी समय ब्रिटेन के निवासियों ने किन्हीं चकाचौंध करने वाले सिद्धान्तों को मानकर एक बिलकुल नया संविधान बनाने का प्रयत्न नहीं किया। हमारे विकास का प्रत्येक चरण किसी पूर्ववर्ती क्रिया का परिणाम रहा है। हमारे कानून तथा संविधान में हुआ प्रत्येक परिवर्तन कोई बिलकुल नई बात नहीं लाया है, बल्कि पहले से विद्यमान किसी पुरानी बात का विकास तथा उसमें सुधार रहा है।"[1]
>
> —फ्रीमन

ब्रिटेन और उसके निवासी

सामान्य व्यक्ति जिस देश को इंगलैण्ड, ब्रिटेन या ग्रेट ब्रिटेन के नाम से जानते हैं उसका पूरा नाम 'ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्ड का संयुक्त राज्य' (United Kingdom of Great Britain and Northern Ireland) है। यद्यपि नाम में

[1] "The continual national life of the people notwithstanding foreign conquests and internal revolutions has remained unbroken for fourteen hundred years At no moment the tie between the present and the past has been wholly ran asunder, at no moment have English people sat down to put together a wholly new constitution in obedience to some dazzling theory Each step in our growth has been the natural consequence of some earlier steps each change in our law and constitution has been not the bringing of anything new but the development and improvement of something that was already old"

—E. A. Freeman, *Growth of the English Constitution*, p. 19

वेल्स तथा स्काटलैण्ड का उल्लेख नहीं किया गया है लेकिन इसमें वेल्स और स्काटलैण्ड के प्रदेश भी सम्मिलित हैं। किसी समय ये पृथक्-पृथक राज्य थे, किन्तु वर्तमान समय में ये एक ही राज्य के अंग हैं।

ब्रिटेन यूरोप के उत्तर-पश्चिम में स्थित एक छोटा सा टापू है। इसका क्षेत्रफल केवल ६४,३०० वर्ग मील है और जनसंख्या ६ करोड़ के लगभग है। ब्रिटेन के इस लघु आकार ने इसे एक सुसंगठित इकाई का रूप प्रदान कर ब्रिटेन में एकात्मक शासन व्यवस्था को सफल बनाया है। शेष यूरोप और ब्रिटेन के बीच में इंगलिश चैनल के आ जाने से यह यूरोप की मुख्य भूमि से पृथक है। यह प्राकृतिक स्थिति ब्रिटेन के लिए बहुत लाभदायक रही और इसने ब्रिटेन के जीवन तथा इतिहास को बहुत प्रभावित किया है। आज वायु सेना और रॉकेट के युग में इंगलिश चैनल का महत्त्व भले ही कम हो गया हो, भूतकाल में इंगलिश चैनल ने इस देश के लिए **'प्राकृतिक प्रहरी'** का काम किया है और इसी कारण ब्रिटेन के सम्पूर्ण इतिहास में केवल एक बाहरी आक्रमण सफल हुआ। अतः ब्रिटिश निवासियों के द्वारा सुरक्षा की भावना अनुभव करते हुए निरन्तर व्यापारिक और औद्योगिक विकास किया गया है। इस सामुद्रिक स्थिति के कारण ही ग्रेट ब्रिटेन जनशक्ति की दृष्टि से संसार का एक सर्वशक्तिशाली राज्य बन गया और अन्तरराष्ट्रीय व्यापार का केन्द्र भी रहा।

ब्रिटिश अर्थव्यवस्था उद्योग धन्धों पर ही आधारित है। ५३ प्रतिशत जनसंख्या उद्योग धन्धों पर आश्रित है और केवल ६ प्रतिशत लोग ही कृषि पर निर्भर हैं। इसी कारण ब्रिटेन की संस्कृति मुख्यतया नगरीय है। ब्रिटेन में धर्म और जाति आदि का भेद होते हुए भी अनेकता में एकता विद्यमान है। एक दूसरे के प्रति आदर भाव, सहिष्णुता, समझौते द्वारा निर्णय, व्यावहारिकता, आवश्यकतानुसार प्रगतिशीलता के साथ मूलतः रूढ़िवादिता ब्रिटिश नागरिकों के स्वभाव और चरित्र के विशेष लक्षण हैं और इन्हीं लक्षणों ने ब्रिटिश प्रजातन्त्र को सफलता प्रदान की है।

ब्रिटिश संविधान का विकास

ब्रिटिश संविधान एक विकसित संविधान है। इसका समस्त स्वरूप किसी एक विशेष समय पर निश्चित होने के बजाय इसने चौदह सौ वर्षों के विकास से अपने वर्तमान स्वरूप को प्राप्त किया है और अब भी यह विकासमय है। वुडरो विल्सन का यह कथन नितान्त सत्य है कि **'इंगलैण्ड के संवैधानिक इतिहास की यह विशेषता है कि राजनीतिक संगठनों का निरन्तर विकास होता रहा है और उसकी यह निरन्तरता प्राचीन काल से हो अब तक अविच्छिन्न बनी रही है।'**[1] इंगलैण्ड में कभी कोई ऐसी क्रान्ति नहीं हुई जिसकी समानता १७८९ की फ्रांस की क्रान्ति या १९१७ की सोवियत रूस की क्रान्ति से की जा सके। अतः संवैधानिक विकास पर

[1] Woodrow Wilson, *The State* p 183

एक दृष्टि डाले बिना वतमान सविधान और शासन व्यवस्था को ठीक प्रकार से नही समझा जा सकता है ।

सवैधानिक विकास की दृष्टि से, ब्रिटिश सविधान के इतिहास को निम्न युगो मे विभाजित किया जा सकता है

(१) ऐंग्लो-सैक्सन काल (पाँचवी सदी से १०६६ ई० तक)
(२) नामन ऐंजिवन काल (१०६६ ई० से ११५३ ई० तक)
(३) प्लैण्टगैनट (११५४-१३९९) और लकास्ट्रियन काल (१३९९ ई० मे १४८५ ई० तक)
(४) टयूडर काल (१४८५ ई० से १६०३ ई० तक)
(५) स्टुअट काल (१६०३ ई० से १७१४ इ० तक)
(६) हैनोवर काल (१७१४ ई० से प्रारम्भ)

(१) ऐंग्लो-सक्सन काल सीमित राजतन्त्र की स्थापना (पाचवी सदी मे १०६६ ई० तक)— **ब्रिटेन की राजनीतिक सस्थाओ के विकास का प्रारम्भ निश्चित रूप से ऐंग्लो सैक्सन काल से होता है ।**[1] इगलण्ड मे ५४ ई० पूव तक केल्टो का राज्य था । ५४ ई० पूव म वहा पर रोमन साम्राज्य स्थापित हो गया, जो ४५० से अधिक वप तक रहा । परन्तु इस काल में इगलण्ड का कोई सवधानिक विकास नही हुआ । ब्रिटेन के सवधानिक विकास पर ऐंग्लो सक्सन काल में स्थापित शासन व्यवस्था का ही प्रभाव पडा । इस काल मे स्थापित की गई सस्थाओ में प्रमुख दो हैं—**नियन्त्रित राजपद और स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था ।**

इगलण्ड मे सक्सन काल के अ तगत पहले तो ७ कबीलो के छोटे-छोटे राज्य स्थापित किये गये, जिनके नाम थे ईस्ट ऐंगिलिया, मरसिया, नारथम्बरलण्ड, कैण्ट, सुसेक्स, एसेक्स और वेसेक्स । नवी सदी मे एल्फ्रेड महान (८४९ ई०-९०१ ई०) ने इन सात राज्यो को मिलाकर एक विशाल राज्य की स्थापना की और तभी से इगलण्ड म राजतन्त्र का उदय हुआ । ट्रेविल्यान लिखते है कि **'राजाओ मे सबसे महान एल्फ्रेड का जीवन व चरित्र अंग्रेजी सविधान का जीता जागता रूप मालूम होता है ।'**

ऐंग्लो-सक्सनकालीन राजा की शक्तिया असीमित नही होती थी और उस पर 'विटनजमाट' (Witenagmot) या 'विटन' (Witan) का नियन्त्रण होता था । इसके अतिरिक्त उसकी शक्तिया बहुत कुछ सीमा तक उसके व्यक्तित्व, बुद्धिमत्ता और बल पर निभर करती थी । विटन का सभापति राजा स्वय होता था और वही इसके सदस्यो को नियुक्त करता था । सामान्यतया इसमे प्रभावशाली साम तो, सरदारो और बिशपा आदि को सम्मिलित किया जाता था । 'विटन' राजा की ऐसी परामश-दात्री सस्था थी, जिसके काय निश्चित नही थे । यह राजा को कानून निर्माण, प्रशासनिक विषयो और सन्धियो के सम्बन्ध में परामश देती थी और सर्वोच्च न्यायालय

[1] Ogg & Zink, *Modern Foreign Governments*, p 4

के रूप में राजा के साथ बैठा करती थी। साधारणतया सैक्सन राजा 'विटन' की सलाह को पर्याप्त महत्त्व देते थे और निरंकुशतापूर्वक कार्य नहीं करते थे। ऐन्सन (Anson) ने 'विटन' को दृष्टि में रखते हुए कहा है कि "**हमारे संवैधानिक इतिहास की प्रमुख विशेषता यह रही है कि राजा ने कभी भी सिद्धान्त में, बिना सलाहकारों की राय के, कोई भी राज्य कार्य नहीं किया है।**"

संवैधानिक विकास को ऐंग्लो सैक्सन काल की दूसरी देन स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था है। इस प्राचीन अवस्था में भी स्थानीय इकाइयों का प्रशासन में महत्त्वपूर्ण स्थान था। इस काल में स्थानीय शासन की तीन इकाइयाँ थीं—टाउनशिप (Township) हण्ड्रेड (Hundred) और शायर (Shire)। उस समय से ही ब्रिटेन में स्थानीय स्वशासन का चलन चला आ रहा है और इसने ब्रिटिश प्रजातन्त्र की सफलता में सराहनीय योग दिया है। ब्लैकस्टोन का कहना है कि—"**इंगलैण्ड की स्वतन्त्रता उसकी स्वतन्त्र स्वायत्त संस्थाओं की देन है अपने पूर्वज सैक्सनों के समय से ही अंग्रेजों ने नागरिक कर्तव्यों और दायित्वों को अपने ही द्वारों पर सीखा है।**"[1]

(२) नार्मन ऐंजिवन काल राजकीय निरंकुशता और सबल केन्द्रीय सरकार का उदय (सन् १०६६ ई० से ११५३ ई० तक)—सन् १०६६ ई० तक ऐंग्लो-सैक्सन जाति का ब्रिटेन पर प्रभुत्व रहा, परन्तु इस वर्ष नार्मन देश के विलियम ऑफ नारमण्डी ने ब्रिटेन पर सफल आक्रमण कर नार्मन राज्य की स्थापना की। ऐंग्लो सैक्सन काल की शासन व्यवस्था स्थानीय आधार पर संगठित किन्तु राष्ट्रीय आधार पर निर्बल थी। कठोर और केन्द्रीयकृत शासन स्थापित करने का कार्य नार्मन राजा विलियम के द्वारा ही किया गया। मुनरो के शब्दों में '**प्राचीन सैक्सन शासन स्थानीय क्षेत्रों में सशक्त, किन्तु सम्पूर्ण राष्ट्रीय स्तर पर निर्बल था, इंगलैण्ड का नार्मन शासन दोनों ही क्षेत्रों में सशक्त हो गया।**'[2]

सैक्सन राजतन्त्र निर्बल था, विलियम ने राजा के पद को शक्तिशाली बनाने का निश्चय किया और इसके लिए अनेक उपाय अपनाये। उसने सैक्सनकालीन सामन्तों की रियासतों को छीनकर उन्हें अपने विश्वासपात्र नार्मन सरदारों में बाँट दिया और इन सामन्तों पर शर्त लगा दी कि वे राजा को आर्थिक और सैनिक सहायता प्रदान करेंगे। इस प्रकार उसने सामन्तों की शक्तियों को क्षीण कर दिया। उसने अपने आपको चर्च का भी प्रधान बना लिया और बिशपों की नियुक्ति के अधिकार स्वयं प्राप्त कर लिये। नार्मन राजा ने कानून के क्षेत्र में भी एकता उत्पन्न की

[1] The liberties of England may be ascribed above all things to her free local institutions Since the days of their Saxon ancestors her sons have learned at their own gates the duties and responsibilities of citizens —*Blackstone*

[2] Munro and Ayearst, *The Governments of Europe* p 34

और प्रत्येक शायर मे राजा द्वारा नियुक्त शैरिफ के पद की व्यवस्था कर स्थानीय संस्थाओ पर केन्द्र का नियन्त्रण स्थापित किया।

मैगनम कौंसिलियम और क्यूरिया रेजिस (Magnum Concilium and Curia Regis)—विलियम ने निरकुशता के माग म बाधा समझकर 'विटनजमोट' को समाप्त कर दिया था। लेकिन राजा का अधिकार क्षेत्र और काय इतने बढ गये कि परामशदात्री समितियो की आवश्यकता अनुभव की गयी। अत नीति निर्धारण और शासन म राजा की सहायता के लिए दो संस्थाओ—**मैगनम कौंसिलियम या महान परिषद और क्यूरिया रेजिस या राज परिषद**—का उदय हुआ। मगनम कौंसिलियम 'विटनेजमोट' की ही स्थानापन्न थी और यह नीति निर्धारण सम्बन्धी विपयो पर राजा को सहायता और मन्त्रणा देने के लिए वप मे तीन चार बार समवेत होती थी। यह एक बडी संस्था थी और इसके सत्र अल्पकालीन होते थे, अत दैनिक प्रशासनिक कार्यो का सम्पादन 'राज परिषद' करती थी, जो अपेक्षाकृत छोटी संस्था थी। चेम्बरलेन, चान्सलर, अन्त पुर के रक्षक तथा प्रहरी आदि राजा के निकटतम व्यक्ति इसके सदस्य होते थे। इसी कारण 'क्यूरिया रेजिस' अपेक्षाकृत अधिक प्रभावशाली संस्था थी। 'क्यूरिया रेजिस' के सदस्य 'मैगनम कौंसिलियम' के भी सदस्य होते थे। दोनो संस्थाएँ नामन एन्जिवन काल की सर्वाधिक महत्त्वपूण देन है। 'क्यूरिया रेजिस' से 'प्रिवी कौंसिल' और 'प्रिवी कौंसिल' से केबीनट का विकास हुआ। मुनरो के शब्दो मे 'अत्यन्त प्रारम्भिक रूप में हम मगनम कौंसिलियम मे आधुनिक पार्लियामेण्ट का और क्यूरिया रेजिस मे आधुनिक केबीनेट का स्वरूप देख सकते हैं।'[1]

(३) प्लण्टगनेट (११५४ १३९९) और लकास्ट्रियन (१३९९-१४८५) काल वधानिक संस्थाओ का उदय—नामन काल मे स्थापित शासन व्यवस्था म हेनरी प्रथम के द्वारा सुधार किया गया। 'क्यूरिया रेजिस' अपने मूल रूप मे प्रशासनिक और न्यायिक दोनो ही विपयो से सम्बद्ध थी और इसके कायक्षेत्र का कोई विभाजन नही था। लेकिन कुछ समय बाद शासन काय मे शीघ्रता और कुशलता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए क्यूरिया रेजिस के न्याय और प्रशासन सम्बन्धी कार्या मे विभाजन किया गया तथा इनकी सदस्यता म भी पृथकता की गयी। इसके सदस्यो का एक भाग तो पहले की भाति **'राजकीय सभा'** के ही रूप मे रहा और इसे कालान्तर मे **'प्रिवी कौंसिल'** का नाम दिया गया। दूसरा भाग केवल न्यायिक कार्यो तक ही सीमित रह गया और इस रूप मे वह 'एक्सचेकर' (Exchequer) और न्याय के उच्च न्यायालयो का जनक बन गया।

प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त का उदय—प्लण्टगैनेट काल मे प्रवेश करत-करते मैगनम कौंसिलियम का काय विधि निर्माण तक ही सीमित रह गया था। पहले राज

[1] Munro and Ayearst, *The Governments of Europe* p 36

परिवार के लोग और उच्चकोटि के सामंत ही इसके सदस्य होते थे, परन्तु धीरे धीरे इसकी सदस्य संख्या बढती गयी और इसमे निम्न वर्गों के लोग भी आने लगे। १२१३ मे एक कारण से इसकी सदस्य संख्या मे बहुत वृद्धि हो गयी। सम्राट् जॉन को बहुत अधिक धनराशि जनता से कर के रूप एकत्र करनी थी और उसने महसूस किया कि नाइटो के सहयोग से यह कार्य भली प्रकार सम्पन्न हो सकता है। अत परिस्थितियो से बाध्य होकर उसने शरिफो को यह आज्ञा दी कि मगनम कौंसिलियम मे प्रत्येक काउण्टी से चार उत्तम नाइट भेजे जायँ। यद्यपि विभिन्न काउण्टियों के प्रतिनिधि नाइटो को कौंसिल मे आमन्त्रित करने मे राजा जान का उद्देश्य प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त को मान्यता देना नही था, किन्तु इसका सुदूरव्यापी परिणाम यही निकला। इस प्रकार जान ने अनजाने मे 'प्रतिनिधित्व के बिना कर नहीं' (No Taxation, without Representation) के सिद्धान्त को जन्म दिया। कालान्तर मे यह एक मान्य सिद्धान्त सा बन गया कि जनता के प्रतिनिधियो की स्वीकृति के उपरान्त ही कर लगाये जायँ। इस प्रकार १३वी सदी म प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त को अपनाया गया, लेकिन ये प्रतिनिधि पूर्णतया राजा के आदेशो के आधीन ही रहते थे और प्रतिनिधियो पर राजा की कोप दृष्टि भी रहती थी। इसलिए प्रतिनिधि चुना जाना आदर की बात नही समझी जाती थी, वरन् प्रतिनिधियो को बलपूर्वक कौंसिल म भेजना होता था।

मग्नाकार्टा या महान अधिकार पत्र (Magna Carta)—११९९ म जान इगलण्ड की राजगद्दी पर बैठा। यह अयोग्य, अदूरदर्शी और अत्याचारी शासक था। सामन्तो ने उसके अत्याचारो से दुखी होकर उसके विरुद्ध विद्रोह कर दिया और १५ जून, १२१५ ई० को रनीमेड नामक स्थान मे उसे एक अधिकार-पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया। यह अधिकार-पत्र मैग्नाकार्टा या महान अधिकार-पत्र के नाम से विख्यात है और इस ब्रिटेन के वैधानिक इतिहास मे एक महान मील चिह्न माना जाता है। विलियम स्टब्स (William Stubs) नामक पादरी के शब्दो म तो **'इगलैण्ड के संविधान का इतिहास इस महान अधिकार-पत्र की व्याख्या ही है।'** मग्नाकार्टा ने किन्ही नवीन अधिकारो को जन्म देने के बजाय सामन्तो के उन परम्परागत अधिकारो को मान्यता प्रदान की, जिन्हे सम्राट् जान ने भग किया था। मग्नाकार्टा के मुख्य उपबन्ध निम्नांकित हैं

(१) राजा सामन्तो पर करारोपण महान परिषद की सम्मति पर ही करे।

(२) किसी नागरिक को उस समय तक बन्दी न बनाया जाय और न ही निर्वासित किया जाय, जब तक कि उसका अपराध सिद्ध न हो जाय।

(३) किसी व्यक्ति को उसकी स्थिति और अपराध की मात्रा के अनुरूप ही दण्ड दिया जाय, दण्ड मनमाना न हो।

(४) 'कोर्ट ऑफ कामन प्ली' (Court of Common Plea) एक निश्चित स्थान पर ही काम करे, राजा के साथ साथ दौरे न करे।

(५) राजा चर्च के संगठन और उसके अधिकारियों की नियुक्ति में हस्तक्षेप न करे।

(६) प्रभावशाली सामन्तों और पादरियों को 'महान परिषद' की बैठक में बुलाया जाय।

(७) विदेशी व्यापारियों के इंगलैण्ड में स्वतन्त्र विचरण पर केवल युद्धकाल में ही प्रतिबन्ध हो, सामान्य काल में उन पर प्रतिबन्ध न हो।

(८) समस्त राज्य में तौल के एक ही पैमानों का प्रयोग किया जाय।

यद्यपि मैग्नाकार्टा का सम्बन्ध प्रमुखतया सामन्तों और पादरियों से था, लेकिन इसमें सामान्य जनता को भी बिना कानूनी प्रक्रिया के बन्दी न बनाये जाने की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी। इसके अतिरिक्त मैग्नाकार्टा ने सामन्त जनता को जो अधिकार प्रदान किये थे, वे धीरे-धीरे सामान्य जनता को भी प्राप्त हो गये। इस प्रकार मैग्नाकार्टा सामान्य जनता की स्वतन्त्रता और अधिकारों का मूल आधार बन गया। इस अधिकार पत्र का महत्त्व यह है कि इसने राजा की निरंकुशता का अन्त कर मर्यादित राजतन्त्र और विधि के शासन की स्थापना की। **थाम्पसन और जॉनसन ने इसके महत्त्व का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि 'मैग्नाकार्टा वस्तुतः ब्रिटिश संविधान का आधारस्तम्भ है, क्योंकि इसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि राजा भी विधि से ऊपर नहीं, अपितु विधि के अधीन है।'[1] यहीं से राजा की निरंकुशता का अन्त और मर्यादित राजतन्त्र का प्रारम्भ होता है।**

पार्लियामेण्ट का उदय—मैग्नाकार्टा के बाद प्लण्टगनट काल में ही पार्लियामेण्ट का उदय हुआ। १२५४ ई० में सम्राट हेनरी तृतीय ने पार्लियामेण्ट की बैठक में भाग लेने के लिए प्रत्येक काउण्टी से दो-दो नाइटों को आमन्त्रित किया। प्रस्तावित करों के बारे में सम्राट और सामन्तों में कोई समझौता नहीं हो सका, इसके फलस्वरूप दोनों में सशस्त्र संघर्ष प्रारम्भ हो गया। इस संघर्ष में सामन्तों के मुखिया साइमन डि माण्टफोर्ड की विजय हुई और वह देश का तानाशाह बन गया। १२६५ ई० में माण्टफोर्ड ने पार्लियामेण्ट की एक बैठक बुलाई, जिसमें उसने समस्त अर्ल बिशप, बैरन और शायर के नाइट प्रतिनिधियों के अतिरिक्त उन नगरों के प्रतिनिधियों को भी बुलाया, जिनसे उसके मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे। कर लगाने के लिए अधिक से अधिक जनता का समर्थन प्राप्त करने हेतु ही उसके द्वारा ऐसा किया गया। जब साइमन डि माण्टफोर्ड की तानाशाही का अन्त हो गया, तो नगरों के प्रतिनिधियों को बुलाने का चलन भी समाप्त हो गया और अगले ३० वर्षों में ब्रिटिश संसद की बैठक उसके बिना ही होती रही।

पार्लियामेण्ट का उदय १२९५ ई० से माना जाता है जब सम्राट एडवर्ड प्रथम ने संसद की एक बैठक बुलायी। संसद की इस बैठक को ही 'मॉडल पार्लिया

[1] 'Magna Carta is justly considered the corner stone of the English constitution because it established the principle that the king is subject to, not above the law.' —*Thompson and Johnson*

मेण्ट' (Model Parliament) कहा जाता है। एडवर्ड प्रथम इस समय युद्ध मे लगा हुआ था और उसे धन की बहुत आवश्यकता थी, अत सबका सहयोग प्राप्त करने के लिए उसने पादरियो और सामन्तो के अतिरिक्त नगरो के प्रतिनिधियो को भी बुलाया। ये सभी प्रतिनिधि अलग-अलग सम्राट के सामने बुलाये गये और उन्होंने चुपचाप सम्राट के कर प्रस्तावो का समर्थन कर दिया।

एडवर्ड प्रथम द्वारा बुलायी गयी पार्लियामेण्ट के सदस्य तीन वर्गों मे से थे—सामन्त वर्ग, पादरी वर्ग और नगरो के प्रतिनिधि या पौरजन (commons)। यदि तीन सदनो की यह प्रथा स्थायी हो जाती तो ब्रिटिश ससद का रूप त्रिसदनात्मक हुआ होता, परन्तु सयोगवश ससद के दो ही सदन हुए। सामन्त वर्ग के लोग और उच्च पादरी एक साथ मिल गये, क्योकि दोनो के आर्थिक और सामाजिक हित समान थे और दोनों ने ही अपनी उच्च स्थिति के आधार पर ससद की सदस्यता प्राप्त की थी, निर्वाचन के आधार पर नहीं। इसी प्रकार नगरो के प्रतिनिधियो और शायरो के प्रतिनिधि 'नाइट' के हित बहुत कुछ सीमा तक समान थे और दोनों की सदस्यता निर्वाचन पर आधारित थी, अत ये दोनो वर्ग एक साथ मिल गये। सामन्तों और उच्च पादरियो के दल को लार्ड सभा कहा गया और नगरो के प्रतिनिधियो तथा नाइटो के दल का नाम लोक सदन (House of Commons) पडा। इस प्रकार ब्रिटेन मे सयोगवश द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका का विकास हुआ, जिसे कालान्तर मे समस्त विश्व के द्वारा अपनाया गया।

प्लैण्टैगैनेट काल के बाद लकास्ट्रियन राज्यकाल (१३९९–१४८५) प्रारम्भ हुआ, जिसमे सवैधानिक दृष्टि से कुछ अत्यन्त महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए। ऐसे प्रमुख परिवर्तन निम्न प्रकार हैं

(१) हेनरी चतुर्थ ने 'क्यूरिया रैजिस' में से अपने कुछ परामर्शदाता चुनकर इन परामर्शदाताओ की सस्था को 'प्रिवी कौंसिल' का नाम दिया। इस प्रकार प्रिवी कौंसिल का उदय हुआ जिसने आगे चलकर केबीनेट को जन्म दिया।

(२) सन १४०१ मे लोक सदन ने यह माँग की कि नये कर लगाने के पूर्व राजा को जनता की शिकायतो की याचिकाएँ सुननी चाहिए और उनके निवारण का प्रयत्न करना चाहिए। यह माँग आगे चलकर एक परम्परा बन गई।

(३) सन् १४०७ ई० म लोक सदन ने स्वय वित्त विधेयक प्रस्तुत करने का अधिकार ले लिया। आगे चलकर लोक सदन का यह अधिकार सभी पक्षो से मान्य हो गया।

(४) ट्यूडर काल पुन कठोर राजतन्त्र की स्थापना (१४८५ ई० से १६०३ ई०)—१३४१ ई० के उपरान्त ३०-३२ वर्षों तक ब्रिटेन मे गृहयुद्ध तथा अशान्ति का साम्राज्य था। लकास्टर तथा यार्क वशो के बीच युद्ध चलता रहा, जो 'गुलाबो के युद्ध' (War of Roses) के नाम से प्रसिद्ध है। अन्त म, १४८५ ई० म लकास्टर वश के हेनरी ट्यूडर ने अपने यार्किस्ट प्रतिद्वन्द्वियो को पराजित किया और

वह सप्तम हेनरी के नाम से सिंहासनारूढ़ हुआ। इसी समय से ट्यूडर वंश का राज्य प्रारम्भ हुआ, जो १६०३ ई० तक चलता रहा। इस वंश के शासनकाल में सामन्तों और संसद की शक्ति क्षीण हो गयी और पुनः कठोर राजतन्त्र की स्थापना हुई। लम्बे गृहयुद्ध, अशान्ति तथा सामन्तों की लूटमार से जनता तंग आ चुकी थी और वह स्वयं यह चाहती थी कि सम्राट सामन्तों पर नियन्त्रण स्थापित कर शान्ति और व्यवस्था स्थापित करे। ट्यूडर सम्राट बहुत अधिक शक्तिशाली और योग्य थे। उन्होंने सामन्तों को नियन्त्रित कर स्वेच्छाचारी शासकों की भाँति, लेकिन जनता के हित को दृष्टि में रखते हुए शासन किया। इन ट्यूडर सम्राटों ने बहुत धनराशि एकत्रित कर ली थी, इसलिए उन्हें संसद को बुलाने की आवश्यकता नहीं हुई और संसद का महत्त्व बहुत कम हो गया। शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित करने के अतिरिक्त इस काल की एक अन्य महत्त्वपूर्ण बात यह रही कि राजकीय शक्ति पोप के नियन्त्रण से मुक्त हो गई।

(५) स्टुअर्ट काल निरंकुश राजतन्त्र और सीमित राजतन्त्र के पक्षों में संघर्ष और लोकतन्त्र की आधारशिला की स्थापना (१६०३ ई० से १७१४ ई० तक)—महारानी एलिजाबेथ का कोई पुत्र या निकट सम्बन्धी न होने के कारण उनकी मृत्यु के बाद १६०३ में इंगलैण्ड का सिंहासन स्काटलैण्ड के राजा जेम्स प्रथम के हाथ में आ गया। जेम्स प्रथम के समय में ही सम्राट और संसद में संघर्ष प्रारम्भ हो गया था लेकिन जेम्स प्रथम ने चतुराई से काम लेते हुए संसद को अधिक उत्तेजित नहीं होने दिया।

जेम्स प्रथम की मृत्यु के बाद १६२५ में उसका पुत्र चार्ल्स प्रथम गद्दी पर बैठा। उसने संसद की उपेक्षा और मनमानी प्रारम्भ कर दी और राजा के दैवी अधिकारों तथा विशेषाधिकारों पर बल देना प्रारम्भ कर दिया। ऐसी स्थिति में उसका संसद से झगड़ा हुआ और १६२८ ई० में संसद चार्ल्स प्रथम से उस **'अधिकार याचना पत्र'** (Petition of Rights) को मनवाने में सफल हुई, जिसमें राजा की शक्तियों पर निम्न प्रतिबन्ध लगाये गये थे

(i) संसद की स्वीकृति के बिना राजा कोई कर नहीं लगा सकता।

(ii) संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना राजा कोई कर नहीं ले सकता।

(iii) बिना कोई निश्चित कारण बताये, राजा किसी व्यक्ति को जेल में नहीं डाल सकता।

(iv) शान्तिकाल में राजा मार्शल लॉ नहीं लगा सकता।

संसद के दबाव में चार्ल्स प्रथम ने **'अधिकार याचना-पत्र'** को अपनी स्वीकृति प्रदान कर दी, किन्तु अपने वचन को निभाया नहीं। जब संसद ने इसका विरोध किया तो सम्राट ने संसद को भंग कर दिया और ११ वर्ष तक संसद के बिना ही शासन किया। संसदीय नेताओं ने सम्राट की इस निरंकुशता का विरोध किया और इन दोनों पक्षों में १६४२ से १६४५ तक गृहयुद्ध चला। इस गृहयुद्ध में संसदीय

नेताओं की जीत हुई और सम्राट चार्ल्स पर मुकदमा चलाकर १६४९ में उन्हें मृत्यु दण्ड दिया गया।

गणतन्त्र की स्थापना—१६४९ ई० में इंगलैण्ड में राजतन्त्र तथा लॉर्ड सभा का अन्त कर क्रामवेल की अध्यक्षता में गणतन्त्र की स्थापना की गयी। इस समय इंगलैण्ड में एक लिखित संविधान भी अपनाया गया। ३ सितम्बर, १६५८ ई० को क्रामवेल की मृत्यु हो गयी।

पुनः राजतन्त्र की स्थापना—गणतन्त्र और लिखित संविधान ब्रिटिश निवासियों के स्वभाव के अनुकूल नहीं थे, अतः क्रामवेल की मृत्यु के साथ ही इनका अन्त हो गया। १६६० ई० में चार्ल्स प्रथम के पुत्र चार्ल्स द्वितीय को गद्दी पर बिठाया गया, जिसने १६८५ ई० तक राज्य किया। प्रिवी कौंसिल अब एक बड़ी संस्था हो गयी थी, इसलिए चार्ल्स द्वितीय ने १६६७ ई० से कुछ महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की एक समिति से परामर्श लेना शुरू कर दिया, जिसे 'कबाल' (Cabal) कहा जाने लगा। इसी से बाद में केबीनेट का उदय हुआ। चार्ल्स द्वितीय के शासनकाल में १६७९ में हेबियस कार्पस ऐक्ट' (Habeas Corpus Act) भी पारित किया गया जिसमें व्यवस्था की गयी कि बिना अभियोग चलाये किसी भी व्यक्ति को नजरबन्द नहीं रखा जा सकता।

गौरवपूर्ण क्रान्ति—१६८५ में चार्ल्स द्वितीय की मृत्यु के बाद उसका भाई जेम्स द्वितीय गद्दी पर बैठा, जिसने केवल तीन वर्ष ही राज्य किया। उसने संसद की अनुमति के बिना कानून रद्द करने का अधिकार धारण कर लिया। इससे संसदीय नेता बहुत अप्रसन्न हुए और जेम्स द्वितीय को सिंहासन से हटाने हेतु उन्होंने ओरेंज के राजकुमार विलियम तृतीय को इंगलैण्ड पर आक्रमण के लिए आमन्त्रित किया। विलियम तृतीय ने एक विशाल सेना के साथ इंगलैण्ड पर आक्रमण कर दिया। जब जेम्स द्वितीय ने देखा कि सभी पक्षों ने उसका साथ छोड़ दिया है, तो वह फ्रांस भाग गया। इस प्रकार बिना किसी रक्तपात के ही वांछित परिवर्तन हो गया। इसे ही इंगलैण्ड की 'गौरवपूर्ण क्रान्ति' (Glorious Revolution) के नाम से जाना जाता है।

अधिकार-पत्र १६८९ (Bill of Rights)—गौरवपूर्ण क्रान्ति के बाद विलियम व मेरी को ब्रिटेन का सम्मिलित शासक बनाया गया। इस अवसर पर संसद सम्राट से अधिकार-पत्र मनवाने में सफल हो गयी, जिसमें निम्न बातें थीं

(i) संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना राजा कोई कर नहीं लगा सकता।
(ii) राजा को वर्ष में कम से कम एक बार संसद की बैठक अवश्य बुलानी होगी।
(iii) संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना राजा कोई सेना नहीं रख सकता।
(iv) राजा अपनी स्वार्थ पूर्ति हेतु उच्चायुक्त जैसे किसी नवीन न्यायालय की स्थापना नहीं कर सकता।
(v) संसद में जनता के प्रतिनिधियों को भाषण की स्वतन्त्रता प्राप्त होगी।

मुनरो ने इस अधिकार पत्र के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा है, "इससे पार्लियामेण्ट की वैधानिक प्रभुता की घोषणा की गयी ।"[1] यद्यपि सामान्य दृष्टि से यह अधिकार-पत्र कोई संविधान नहीं था, किन्तु जैसा कि प्रो० एडम्स ने कहा है "यह ब्रिटिश इतिहास में लिखित संविधान के सर्वाधिक निकट की कोई वस्तु थी ।"[2]

१७०१ का उत्तराधिकार अधिनियम (Act of Settlement)—विलियम और मेरी निस्सन्तान थे, अतः १७०१ में उत्तराधिकार अधिनियम पारित कर यह निश्चित किया गया कि रानी एन (मेरी) के देहावसान पर इंगलण्ड का राज्य हैनोवर की राजकुमारी सोफिया (जेम्स प्रथम की प्रपौत्री) अथवा उसके उत्तराधिकारी को मिलेगा। इसी अधिनियम द्वारा न्यायाधीशों को सदाचार पर्यन्त पद की सुरक्षा प्रदान की गई और यह भी निश्चित हुआ कि राजा संसद की स्वीकृति के बिना न तो विदेश जा सकता है और न ही युद्ध की घोषणा कर सकता है।

(६) हैनोवर काल संसदीय जनतन्त्र का विकास (१७१४ से प्रारम्भ)—राजपद पर संसद की सर्वोच्चता तो १६८९ के अधिकार पत्र से ही स्थापित हो गई थी, १७१४ ई० में साम्राज्ञी एन की मृत्यु पर 'उत्तराधिकार अधिनियम' के अनुसार हैनोवर का जार्ज प्रथम ब्रिटेन का सम्राट् बना। यहीं से संसदीय जनतन्त्र का विकास प्रारम्भ हुआ, जिसने बीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक पूर्णता प्राप्त कर ली। संसदीय जनतन्त्र का विकास इन चरणों में हुआ

(i) राजा की वास्तविक शक्तियों का पतन—राजपद पर संसद की सर्वोच्चता तो १६८९ के अधिकार-पत्र से ही स्थापित हो गई थी, किन्तु हैनोवर वंश के सिंहासनारूढ होने के पहले तक राजा का मन्त्रियों की नियुक्ति और पदच्युति में पर्याप्त हाथ रहता था। हैनोवर काल से राजा के इस अधिकार का पतन होता गया और ये अधिकार पार्लियामेण्ट के हाथ में पहुंच गये। जार्ज तृतीय के शासनकाल में अधिकारों का अवश्य कुछ अंशों में पुनर्जीवन हुआ, किन्तु वह अस्थायी सिद्ध हुआ और विलियम चतुर्थ के समय से राजा के अधिकारों का क्रमिक ह्रास होता गया। साम्राज्ञी विक्टोरिया तक आते-आते सम्राट एक संवैधानिक शासक मात्र हो गया।

(ii) मन्त्रिमण्डलीय प्रणाली का विकास—हैनोवर काल के पूर्व तक मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता सम्राट ही करता था और मन्त्रिमण्डलीय प्रणाली का पूर्ण विकास नहीं हो पाया था। लेकिन हैनोवर राजा जार्ज प्रथम अंग्रेजी भाषा

[1] 'The Bill of Rights proclaimed the legislative supremacy of Parliament
—W B Munro, *The Governments of Europe* pp 47–48

[2] 'It was most nearly of the nature of a written constitution of anything in English history
—G B Adams *Constitutional History of England*, p 335

से परिचित नही थे और इगलण्ड की राजनीति मे भी उनकी कोई रुचि नही थी। अत उन्होने केबीनेट की बठको मे सम्मिलित होना बद कर दिया। सम्राट ने १७२१ ई० मे ह्विग पार्टी के नेता सर राबट वाल्पोल को केबीनेट की अध्यक्षता का कत्तव्य सौपा और वाल्पोल ब्रिटेन का एक प्रकार से प्रथम प्रधानमन्त्री बना। धीरे-धीरे मन्त्रिमण्डलीय प्रणाली के अन्य सिद्धान्तो को अपनाया गया। लॉड सभा मे पराजित होने पर वाल्पोल ने त्यागपत्र नही दिया, किन्तु १७४२ ई० मे जब लोक सदन मे उसका बहुमत न रहा, तो सम्राट का पूण विश्वासपात्र होने पर भी उसने त्यागपत्र देकर यह स्थापित किया कि कोई व्यक्ति तभी तक प्रधानमन्त्री रह सकता है, जब तक कि लोक सदन मे उसे बहुमत का विश्वास प्राप्त हो। कालान्तर मे सामूहिक उत्तरदायित्व की धारणा और मन्त्रिमण्डलीय शासन के अन्य सिद्धान्तो का विकास हुआ।

(iii) **लोक सदन का लोकतन्त्रीकरण**—यद्यपि १७वी सदी म ही ससद ने सर्वोच्चता प्राप्त कर ली थी, किन्तु अब भी वह पर्याप्त शक्तिशाली नही हो पाई थी, क्योकि वह जनता के एक अत्यन्त छोट भाग का ही प्रतिनिधित्व करती थी। अत ससद के अन्दर और बाहर ससदीय मताधिकार को व्यापक करने के लिए आन्दोलन चला, जिसे उन्नीसवी सदी मे सफलता प्राप्त हुई। सन १८३२ के सुधार कानून द्वारा इस दिशा मे श्रीगणेश करते हुए सवप्रथम कुछ सीमित रूप मे मध्यम-वग के लोगो को मताधिकार प्रदान किया गया। इसके बाद १८६७ के सुधार कानून द्वारा मताधिकार को और व्यापक करते हुए कारीगरो व नगर के मजदूर लोगो को मताधिकार प्रदान किया गया। इसके बाद १८८४ के सुधार कानून द्वारा खेतीहर श्रमिको को मताधिकार प्रदान किया गया। सन् १९१८ के एक कानून द्वारा इससे आगे चलकर ३० वष स अधिक आयु वाली स्त्रियो को मताधिकार प्रदान किया गया। अन्त म १९२८ के कानून द्वारा सावजनिक वयस्क मताधिकार को स्वीकार करते हुए २१ वष या इससे अधिक आयु के स्त्री पुरुषो को मताधिकार प्रदान किया गया। इस प्रकार १८३२, १८६७ और १८८४ के सुधार कानूनो व १९१८ और १९२८ के अधिनियमो से लोक सदन का लोकतन्त्रीकरण हुआ और यही लोक सदन की शक्ति का सबस प्रमुख आधार है।

(iv) **लोक सदन की तुलना मे लाड सभा की शक्तियो का पतन**—१८वी सदी तक लोक सदन पर लार्ड सभा का आतक छाया रहता था और लाड अपन मनोनीत सदस्यो को ही लोक सदन मे भेज देते थे। किन्तु लोकतन्त्र के लक्ष्य की प्राप्ति के लिए लोक सदन की तुलना मे लॉड सभा की शक्तियाँ कम किया जाना आवश्यक था, क्योकि लाड सभा का गठन आनुवशिक आधार पर होता था, निर्वाचन के आधार पर नही। १८३२ का सुधार कानून लॉड सभा की इच्छा के विरुद्ध ही पारित हुआ था और इसी समय म लॉड सभा की शक्तियाँ कम होनी प्रारम्भ हो गयी। उन्नीसवी सदी म यह परम्परा स्थापित हो गयी थी कि वित्तीय विषयो मे

अन्तिम शक्ति लोक सदन ही है, लेकिन १९१० मे लॉड सभा ने लॉयड जाज के प्रगतिशील वजट को अस्वीकार करके इस परम्परा को भग किया। ऐसी स्थिति मे १९११ मे एक ससदीय अधिनियम पास कर लॉर्ड सभा की शक्तिया कम कर दी गयी जो १९४९ के ससदीय अधिनियम से और कम हो गयी। लोक सदन की तुलना मे लॉड सभा की शक्तिया कम करके ही इगलैण्ड लोकतन्त्र की पूण प्राप्ति कर सका है।

(v) *दलीय पद्धति का विकास—ससदीय जनतन्त्र का काय सचालन* राजनीतिक दलो पर ही आधारित है और इगलैण्ड मे भी ससदीय जनतन्त्र का पूण विकास राजनीतिक दलो की सहायता से ही सम्भव हुआ है। इस सम्बन्ध मे ड्रैग्निच ने कहा है, "जब तक राजनीतिक दल सशक्त न हो गये, राजा एक दल को दूसरे दल से भिडाता रहा, पर अन्त मे लोक सदन में बहुमत प्राप्त किसी सुगठित दल के विरुद्ध राजा की कुछ न चल सकी।"[1]

दलीय पद्धति का उदय स्टुअट काल मे ही हो गया था। चार्ल्स द्वितीय के कोई सन्तान नही थी और चार्ल्स द्वितीय के भाई जेम्स द्वितीय को राजसिंहासन से अलग रखने के लिए ससद मे एक विधेयक 'एक्सक्लूजन बिल' (Exclusion Bill) रखा गया। इस विधेयक पर ही ससद ह्विग्स और टोरी दो दलो मे विभक्त हो गयी। मतभेद का प्रश्न तो शीघ्र हल हो गया, पर दोनो दलो ने परस्पर विरोधी राजनीतिक दलो का रूप ले लिया और द्विदल प्रणाली स्थापित हो गयी। सत्रहवी सदी के अन्त तक स्थिति यह थी कि यदि कुछ व्यक्ति विरोधी दल बनाते थे तो उन्ह राजद्रोही कहा जाता था। बाद मे स्थिति मे परिवतन हुआ और विरोधी दल को सम्राट का वफादार विरोधी दल (His Majesty's Loyal Opposition) कहा जाने लगा। बाद मे विरोधी दल के नेता पद को राजकीय मान्यता प्राप्त हो गयी।

ब्रिटेन के इस सवधानिक विकास की मुख्य विशेषता यह है कि यह स्थिर गति और शान्तिपूण ढग से हुआ है और इस सवैधानिक विकास की दिशा, कुछ बाधाओ और रुकावटो के बावजूद राजतन्त्र से लोकतन्त्र की स्थापना रही है।

प्रश्न

१ ब्रिटिश सविधान के विकास पर सक्षिप्त लेख लिखिए।

२ 'ब्रिटिश सविधान विकास का परिणाम है, निर्माण का नही'। इस कथन की समीक्षा कीजिए।

[1] Until political parties became strong the King could play off one group against another, but in the end he could not prevail against a united party commanding a majority in the House of Commons

—Alex N Dragnich, *Major Governments of Europe*, p 29

2

ब्रिटिश संविधान का महत्त्व और विशेषताएँ

(IMPORTANCE AND SAILENT FEATURES OF THE BRITISH CONSTITUTION)

पूर्व ने सभ्य मानव को आध्यात्मिक दर्शन प्रदान किया, मिस्र ने वर्णमाला प्रदान की, मूर ने बीजगणित, यूनान ने शिल्पकला तथा रोम ने विश्व को कानून के आधार दिये तो ब्रिटेन ने विश्व को राजनीतिक विचार और संवैधानिक पद्धति प्रदान की है।"

—मुनरो

ब्रिटिश संविधान के अध्ययन का महत्त्व

स्वयं अपने क्षेत्र और जनसंख्या की दृष्टि से ब्रिटेन कभी भी एक महान देश नहीं रहा है। विश्व के अनेक राज्य ब्रिटेन की तुलना में बहुत विशाल और अधिक जनसंख्या वाले हैं। द्वितीय महायुद्ध के पूर्व तक ब्रिटेन को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रथम श्रेणी के राष्ट्र की स्थिति प्राप्त थी किन्तु आज यह स्थिति संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद में ही शेष रह गई है और कुछ व्यक्ति तो ब्रिटेन को द्वितीय श्रेणी का राष्ट्र कहने में भी संकोच का अनुभव करते हैं। आर्थिक और औद्योगिक दृष्टि से न केवल अमरीका वरन जर्मनी, जापान और अन्य कुछ राज्यों ने भी ब्रिटेन से अधिक महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त कर ली है और ब्रिटेन सामान्य व्यक्तियों के लिए अब एक राजनीतिक व्यवस्था का प्रतीक भी नहीं रहा है। लेकिन इनमें से कोई भी बात संवैधानिक अध्ययन की दृष्टि से ब्रिटेन के महत्त्व को कम नहीं कर

1 Civilized man has drawn his religious inspiration from the East, his alphabet from Egypt his algebra from the Moors his sculpture from Greece and much of his legal philosophy from Rome But for his political ideas and procedures, he owes more to England than to any other nation" —*Munro*

सकी है। आज भी राजनीति विज्ञान और लोक प्रशासन मे रुचि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए ब्रिटिश शासन पद्धति से परिचित होना अनिवाय समझा जाता है और विदेशी सविधानो तथा शासन प्रणालियो के अध्ययन क्रम मे ब्रिटिश सविधान के अध्ययन को प्रथम स्थान दिया जाता है। स्वाभाविक रूप से अनेक ऐसे तथ्य हैं, जिनके कारण ब्रिटिश सविधान का अध्ययन बहुत अधिक महत्त्वपूण हो जाता है। इन तथ्यो की विवेचना निम्न प्रकार है

(१) प्राचीनतम सविधान—विश्व के सविधानो मे ब्रिटिश सविधान का सबसे महत्त्वपूण स्थान है और इसकी महत्ता का एक प्रमुख कारण उसकी प्राचीनता और मौलिकता है। यह सविधान विश्व के वतमान सविधानो म सबसे पुराना है और विश्व के किसी भी सविधान का इतना लम्बा इतिहास नही है जितना कि ब्रिटिश सविधान का। ब्रिटिश सविधान का प्रारम्भ ब्रिटिश इतिहास के ऐंग्लो सक्सन काल से प्रारम्भ होता है और आग तथा जिक के शब्दो मे "**इगलण्ड की राजनीतिक सस्थाओ और प्रक्रियाओ के प्रस्थान बिंदु राष्ट्रीय इतिहास के उस राजमाग पर बिखरे हुए हैं, जो भूतकाल में तेरह सौ या चौदह सौ वर्षों की लम्बाई मे फला हुआ है।**"[1] प्राचीनतम होने के कारण इसके द्वारा विश्व के अन्य देशो के सविधान और शासन व्यवस्था को प्रभावित किया गया है और अन्य देशो के सविधानो को उस समय तक नही समझा जा सकता, जब तक कि ब्रिटिश सविधान का अध्ययन न कर लिया जाय।

(२) लोकतन्त्रात्मक पद्धति का श्रेष्ठ उदाहरण—ब्रिटिश सविधान का अध्ययन इसलिए भी महत्त्वपूण है कि इसके अन्तगत लोकतन्त्रात्मक शासन और जीवन के तत्त्वो का अनवरत विकास हुआ है और इसे आधुनिक विश्व का प्रथम लोकतन्त्रीय सविधान कहने मे कोई अतिशयोक्ति नही है। शासन पथ पर इगलैण्ड ने अपनी यात्रा एक निरकुश राज्य के रूप म प्रारम्भ की थी परन्तु विकसित और परिवर्द्धित होते हुए इसने अपने को लोकतन्त्र मे परिणत कर लिया। यद्यपि यह तथ्य है कि प्राचीन यूनान मे लोकतन्त्रीय सस्थाएँ प्रचलित थी लेकिन तत्कालीन यूनान की परिस्थितिया और शासन व्यवस्था तथा वतमान समय की परिस्थितियो और आज के प्रजातन्त्र म आधारभूत भेद है और एक विशाल राज्य मे अप्रत्यक्ष लोकतन्त्र को अपनाने का काय सवप्रथम इगलण्ड मे ही किया गया है। विश्व के अन्य देशो द्वारा लोकतन्त्र को इगलण्ड से ही ग्रहण किया गया है, इस बात को स्पष्ट करते हुए **मुनरो** लिखते ह कि—"**अठारहवीं तथा उन्नीसवीं शताब्दियो मे सभ्य ससार के एक बहुत**

1 The starting points of English political institutions and procedures lie scattered along a high road of national history stretching thirteen or fourteen hundred years into the past
—Ogg & Zink, *The Modern Foreign Governments* p 5

बड़े भाग का लोकतन्त्रीकरण, जो अधिकांश मे अंग्रेजी भाषा भाषी जातियों के नेतृत्व मे हुआ है, समस्त संसार के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तथ्यो मे है।"[1]

(३) **एकमात्र अलिखित संविधान**—ब्रिटिश संविधान का अध्ययन इस दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है कि वर्तमान समय मे इंगलण्ड का संविधान ही एकमात्र अलिखित संविधान है। ब्रिटिश संविधान उन व्यक्तियो के लिए एक चुनौती है जो यह मानते हैं कि शासन व्यवस्था का सुसंचालन तभी सम्भव है कि जबकि शासन के मौलिक सिद्धान्त लिपिबद्ध हो। शासन के मौलिक सिद्धान्त लिपिबद्ध न होने पर भी न तो ब्रिटेन मे अराजकता है और न ही निरंकुशता। शासक और शासित दोनो ही अपनी सीमाओं से परिचित हैं और यह ब्रिटिश व्यक्तियो की जागरूक विवेकशीलता और व्यावहारिकता का प्रमाण है।

(४) **निरन्तर विकासमय संविधान**—ब्रिटिश संविधान का अध्ययन इस दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है ब्रिटिश संविधान अनवरत विकास का परिणाम है। अन्य राज्यो के समान ही शासन पथ पर ब्रिटेन ने अपनी यात्रा एक निरंकुश राज्य के रूप मे प्रारम्भ की थी, किन्तु यूरोप के अन्य राज्यो ने जहा निरंकुशता के स्थान पर प्रजातन्त्र को अपनाने का कार्य क्रान्ति और रक्तपात के आधार किया, ब्रिटिश संविधान ने बिना किसी क्रान्ति और रक्तपात के बदलती हुई परिस्थितियो के अनुसार अपने आपको ढालने मे सफलता प्राप्त की। वुडरो विल्सन का यह कथन नितान्त सत्य है कि '**इंगलैण्ड के संवैधानिक इतिहास की यह विशेषता है कि राजनीतिक संगठनो का निरन्तर विकास होता रहा है और उसकी यह निरन्तरता प्राचीन काल से अब तक अविच्छिन्न बनी रही है।**'[2] इंगलण्ड मे कभी कोई ऐसी क्रान्ति नही हुई जिसकी समानता फ्रास की सन १७८९ की क्रान्ति से या रूस की सन् १९१७ की क्रान्ति से की सके।

(५) **स्वतन्त्रता का प्रतीक**—ब्रिटिश संविधान का निरन्तर विकास हुआ है और ब्रिटिश संविधान के विकास का इतिहास निरंकुशता के विरुद्ध स्वतन्त्रता की जन भावनाओ के संघर्ष का इतिहास रहा है तथा इस इतिहास ने ब्रिटिश संविधान को स्वतन्त्रता का प्रतीक बना दिया है। ब्रिटिश संविधान मे नागरिको के किसी अधिकार पत्र का उल्लेख न होने पर भी ब्रिटिश नागरिक किसी अन्य देश के नागरिको की तुलना मे कम स्वतन्त्र और अधिकारसम्पन्न नही हैं। ब्रिटिश संविधान के स्वतन्त्रता के प्रतीक होने का यह प्रभाव और प्रमाण है। संविधान के इस लक्षण ने इसे हम सबकी दृष्टि मे बहुत अधिक सम्मान का पात्र बना दिया है। कनाडा के

[1] "The democratisation of a large part of the world during the eighteenth and nineteenth centuries largely through the British speaking leadership is one of the most conspicuous facts in the history of political science —*Munro*

[2] Woodrow Wilson, *The State* p 183

भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री मैकेन्जी किंग के शब्दों में, "इस अंग्रेजी संविधान को हम प्यार करते हैं यह इंगलैण्ड के निवासियों की उत्कृष्टतम प्रतिभा की सर्वोच्च सफलता को प्रस्तुत करता है। किसी ने इसे कभी देखा नहीं, और न किसी ने इसका पर्याप्त रूप से कभी वर्णन ही किया है, तथापि जब भी अधिकार एवं स्वतन्त्रता पर कोई भी आंच आती दिखती है तब इसके अस्तित्व का अनुभव होता है, कारण यह है कि यह जुल्म व अधम के विरुद्ध शताब्दियों के संघर्ष का परिणाम है और इसमें स्वतन्त्रता की आत्मा का समावेश है।"

(६) विश्वव्यापी प्रभाव—ब्रिटिश संविधान के अध्ययन की महत्ता का एक प्रमुख कारण यह भी है कि विश्व की सबसे प्राचीन और प्रभावशाली शासन पद्धति के जनक के रूप में इसने विश्वव्यापी प्रभाव डाला है। विश्व के उन राज्यों पर, जो पहले ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत थे, ब्रिटिश शासन पद्धति का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा है। कनाडा आस्ट्रेलिया न्यूजीलैण्ड भारत, बर्मा और मलाया आदि देशों की वर्तमान शासन व्यवस्था ब्रिटिश प्रभाव का ही प्रमाण है। यूरोप महाद्वीप के अन्य जनतन्त्रीय राज्यों पर भी यह प्रभाव स्पष्टतया देखा जा सकता है और सोवियत रूस भी ब्रिटिश संसदीय पद्धति के प्रभाव से अछूता नहीं रहा है। अमरीकी शासन पद्धति को भी निषेधात्मक रूप में इसने प्रभावित किया है। मुनरो के शब्दों में "ब्रिटिश संविधान संविधानों का जनक है और ब्रिटिश संसद संसदों की जननी है। अन्य देशों के विधानमण्डलों को चाहे कोई भी संज्ञा क्यों न हो, उनका उद्गम स्रोत एक ही है।'[1]

भारतीय विद्यार्थियों के लिए विशेष महत्त्व

ब्रिटिश संविधान का अध्ययन सामान्यतः तो सभी के लिए महत्त्वपूर्ण है किन्तु भारतीय व्यक्तियों विशेषतया भारतीय विद्यार्थियों के लिए इसके अध्ययन का विशेष महत्त्व है। ब्रिटिश विचारों और राजनीतिक संस्थाओं से प्रभावित होकर हमारे द्वारा संसदीय प्रजातन्त्र को अपना लिया गया है, किन्तु संसदीय प्रजातन्त्र की सफलता के लिए अभी हमें ब्रिटेन से बहुत कुछ सीखना शेष है। यदि हम संसदीय प्रजातन्त्र को सफल बनाना चाहते हैं तो हमें ब्रिटेन की प्रजातन्त्रीय परम्पराओं को अपनाना होगा, अनुशासन, सहिष्णुता, विवेकशीलता, उदारता और जागरूकता के चारित्रिक गुणों को लेना होगा और राजनीति के महान खेल को मेल की भावना के साथ खेलने की प्रवृत्ति अपनानी होगी। यह सब कुछ ब्रिटिश संविधान के विस्तृत और व्यापक अध्ययन से ही सम्भव है।

1 'The British constitution is the mother of parliaments No matter by what name the legislative bodies of other countries may be known they owe much to this inheritence'

—Munro & Ayearst, *The Government of Europe* p 15

शासन विज्ञान के क्षेत्र मे ब्रिटेन की देन

ब्रिटिश सविधान प्राचीनतम और मौलिक है और शासन विज्ञान के क्षेत्र मे ब्रिटिश जनता की अनेक मौलिक देन है। विधि और शासन विज्ञान के क्षेत्र मे दो जातियो की विशेष देन कही जा सकती है प्राचीनकाल मे रोमवासियो की और आधुनिककाल म ब्रिटिशवासियो की। रोमवासियो की देन का इस दृष्टि मे महत्त्व कम हो जाता है कि रोमवासियो ने विश्व को अधिनायकवादी शासन व्यवस्था प्रदान की, जिसे सामान्यतया वर्तमान समय मे एक श्रेष्ठ शासन व्यवस्था नही समझा जाता है। ब्रिटेनवासियो की महत्त्वपूर्ण देन प्रजातन्त्रीय शासन व्यवस्था है, जो वर्तमान समय मे सर्वत्र व्याप्त और सर्वाधिक लोकप्रिय है। प्रजातन्त्रीय व्यवस्था को सर्वप्रथम इगलण्ड म अपनाया गया और ब्रिटेन से ही अन्य देशो ने इसे ग्रहण किया। **मुनरो** का कथन है कि, '**पूर्व ने सभ्य मानव को आध्यात्मिक दर्शन प्रदान किया, मिस्र ने वर्णमाला प्रदान की, मूर ने बीजगणित की तथा यूनान ने मूर्ति कला की शिक्षा दी तथा रोम ने विश्व को कानून के आधार दिये तो ब्रिटेन ने विश्व को राजनीतिक विचार और सवैधानिक पद्धति प्रदान की है।**"

शासन विज्ञान के क्षेत्र मे ब्रिटेन की देन का उल्लेख इन रूपो म किया जा सकता है

(१) **प्रतिनिध्यात्मक शासन**—राजतन्त्रीय निरकुशता के विरुद्ध सघर्ष के दौरान सर्वप्रथम इगलण्ड मे '*प्रतिनिधित्व के बिना कर नही*' (*No Taxation, without Representation*) का नारा लगाया गया जिसका तात्पर्य यह था कि कानूनो का निर्माण, उनकी क्रियान्विती, कर लगान और राजकोष से धन व्यय करने का कार्य जन प्रतिनिधियो के द्वारा ही किया जा सकता है। इस विचार ने सर्वप्रथम इगलैण्ड म और उसके बाद विश्व के अन्य देशो म प्रजातन्त्र को सम्भव बनाया। इगलण्ड मे अपनाई गई प्रतिनिधित्व की इस धारणा ने ही प्रजातन्त्र को नगरराज्यो की परिधि से बाहर निकालकर विशाल क्षेत्रो का व्यावहारिक शासन बना दिया।

(२) **उत्तरदायी शासन**—राजनीतिक क्षेत्र म जनता की शक्ति को वास्तविकता का रूप प्रदान करने की दिशा म ब्रिटेन की दूसरी देन उत्तरदायी या मन्त्रिमण्डलात्मक शासन है। ब्रिटेन ने अपने विचार और व्यवहार के आधार पर इस बात का प्रतिपादन किया कि प्रजातन्त्र मे न केवल शासक वर्ग जनता द्वारा निर्वाचित होना चाहिए, वरन् शासक वर्ग अपने दिन-प्रतिदिन के कार्यों के लिए भी जनप्रतिनिधियो के प्रति उत्तरदायी होना चाहिए। **न्यूमन** के कथनानुसार '**शासन विज्ञान के क्षेत्र में ब्रिटेन की सबसे महत्त्वपूर्ण देन मन्त्रिमण्डलात्मक पद्धति है।**'[1]

(३) **विधि का शासन**—शासन विज्ञान को ब्रिटेन की एक अन्य महत्त्वपूर्ण देन '**विधि का शासन**' है। *सर्वप्रथम इगलैण्ड मे इस बात को अपनाया गया कि एक*

[1] 'The cabinet system is one of Britains s outstanding gifts to the science and practice of Government —*Neumann*

देश पर व्यक्तियों का नहीं, वरन् विधियों का शासन होना चाहिए तथा सभी व्यक्तियों के लिए एक ही प्रकार के कानून तथा न्याय व्यवस्था होनी चाहिए।

(४) **संसद की सर्वोच्चता**—सर्वप्रथम इंगलैण्ड में ही 'संसद की सर्वोच्चता' के सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ, जिसका आशय यह है कि कानूनी दृष्टि से विधान-मण्डल की सत्ता ही सर्वोच्च होती है। यद्यपि भारत और अमरीका आदि देशों में 'संसद की सर्वोच्चता' की धारणा को नहीं अपनाया गया है, किन्तु यह एक महत्त्वपूर्ण विचार है, इसमें सन्देह नहीं।

(५) **द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका**—सर्वप्रथम इंगलैण्ड में संयोग से द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका का विकास हुआ और कालान्तर में द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका लोकतन्त्र का अपरिहार्य सिद्धान्त बन गई। वर्तमान समय में विश्व के प्रायः सभी लोकतन्त्रीय देशों की व्यवस्थापिका द्विसदनात्मक ही है।

(६) **स्थानीय स्वशासन**—स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में भी ब्रिटिश जनता का महत्त्वपूर्ण योग रहा है। सम्भवतया सर्वप्रथम इंगलैण्ड में ऐंग्लो-सैक्सन काल में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था को अपनाया गया और आज समस्त विश्व में स्थानीय स्वशासन को लोकतन्त्र का मूल आधार समझा जाता है।

(७) **प्रजातान्त्रिक समाजवाद की धारणा**—ब्रिटेन और अन्य राज्यों के द्वारा जब सर्वप्रथम प्रजातन्त्रीय व्यवस्था को अपनाया गया था तब यही धारणा प्रचलित थी कि एक प्रजातन्त्रात्मक राज्य के द्वारा अपने नागरिकों के जीवन में कम से कम हस्तक्षेप ही किया जाना चाहिए। १९वीं सदी में कार्ल मार्क्स और ऐंजिल्स ने विचार के क्षेत्र में इस धारणा को चुनौती दी और २०वीं सदी में सोवियत रूस तथा अन्य राज्यों में साम्यवाद का उदय परम्परागत प्रजातन्त्रीय धारणा के लिए एक प्रत्यक्ष चुनौती बन गया। इस चुनौती का उत्तर भी ब्रिटेन के द्वारा ही दिया गया है। एक सदी पूर्व का ब्रिटिश 'पुलिस राज्य' आज एक 'कल्याणकारी राज्य' बन गया है और आज ब्रिटेन अपने व्यवहार के आधार पर इस बात का उदाहरण उपस्थित कर रहा है कि पूँजीवाद और साम्यवाद, दोनों से ही दूर रहते हुए, एक नवीन व्यवस्था 'प्रजातान्त्रिक समाजवाद' को किस प्रकार अपनाया जा सकता है और बदली हुई परिस्थितियों में प्रजातन्त्र की रक्षा कैसे की जा सकती है?

क्या ब्रिटिश संविधान का अस्तित्व है?

अपने आप में यह एक मनोरंजक बात है कि ब्रिटिश संविधान के अध्ययन का प्रारम्भ संविधान के अस्तित्व पर विवाद को लेकर होता है। इंगलैण्डवासी तो इस बात पर गर्व करते हैं कि उनका संविधान एक श्रेष्ठ और प्राचीनतम संविधान है। चार्ल्स डिकिन्स के शब्दों में वे कहते हैं कि **"हम अंग्रेजों को अपने संविधान पर गर्व है। यह ईश्वर की देन है। इस सम्बन्ध में अन्य किसी देश पर उसकी इतनी कृपा नहीं हुई है।"** किन्तु अन्य विद्वानों द्वारा इस संविधान के अस्तित्व पर ही सन्देह व्यक्त किया गया है। बर्क ने अपने ग्रन्थ **'फ्रांस की राज्यक्रान्ति पर विचार** (Re-

flections on the French Revolution) म ब्रिटिश सविधान की प्रशसा करते हुए कहा था कि 'हमारा सविधान अत्यन्त श्रेष्ठ है, जहाँ विश्व के अन्य देशों मे वाछित परिवतन हेतु क्रान्ति और रक्तपात की आवश्यकता होती है, हमारे द्वारा यह परिवतन शान्तिपूण और सवधानिक माग से किया जा सकता है।" इस पर अमरीका के प्रसिद्ध विद्वान टामस पेन न बक को चुनौती देते हुए कहा था—"क्या बक महोदय ब्रिटिश सविधान की कोई प्रति प्रस्तुत कर सकते हैं ? यदि नहीं, तो हम इस निष्कष पर पहुचते हैं कि ब्रिटिश सविधान का अस्तित्व न तो कभी था और न है, यद्यपि उक्त सविधान के विषय में बहुत कुछ कहा गया है।" पेन अपने मूल विचार को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि 'जहा सविधान को प्रत्यक्ष रूप में उपस्थित नहीं किया जा सकता वहा सविधान होता ही नहीं है।"[1] फ्रास के प्रसिद्ध इतिहासकार डी० टाकविले ऐसे ही विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि 'इगलण्ड मे सविधान जसी कोई वस्तु नहीं है।' सुप्रसिद्ध ब्रिटिश लेखक जाज बर्नार्ड शॉ भी ऐसा ही विचार व्यक्त करते हुए कहते हैं कि 'हमारा एक ब्रिटिश सविधान है, लेकिन कोई भी नही जानता कि यह क्या है यह कहीं भी लिखा हुआ नही है और न इसमे कोई सशोधन ही किया जा सकता है। हा सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान एक वास्तविक और मूल रूप मे पढा जा सकने योग्य लेख है। म आपको उसका प्रत्येक वाक्य समझा सकता हूँ।"

तक— ब्रिटिश सविधान का कोई अस्तित्व ही नहीं है —इस बात के पक्ष म टामस पेन, डी० टाकविले और उनके समथकों द्वारा तीन तक दिये जाते है, जो इस प्रकार हैं

(१) ब्रिटिश सविधान न तो किसी सविधान सभा का परिणाम है और न ही लेखबद्ध—पेन और डी० टाकविले का विचार है कि सविधान का निर्माण किसी सविधान निर्मात्री परिषद् के द्वारा किया जाना चाहिए, लेकिन ब्रिटिश सविधान न तो किसी परिषद् के निश्चयों का परिणाम है और न ही यह एक लेखपत्र के रूप में है।

(२) ब्रिटिश सविधान का लचीलापन—अमरीका और फ्रास आदि देशों के सविधानों म सशोधन के लिए साधारण कानूनों के निर्माण से भिन्न प्रक्रिया को अपनाया गया है। इसके आधार पर डी० टाकविले और पेन के द्वारा इस विचार को अपना लिया गया कि, "सविधान उसे ही कहा जा सकता है जिसमे परिवतन के लिए विशेष प्रक्रिया को अपनाना आवश्यक हो।" ब्रिटिश सविधान लचीला होने के कारण उनके द्वारा इसके अस्तित्व पर सन्देह व्यक्त किया गया है।

1 'Where a constitution cannot be produced in a visible form there is none —*Thomas Paine*

'In England the constitution there is no such thing —*De Tocqueville*

(३) संवधानिक कानून या आधारभूत नियमो का अभाव—अमरीका और फ्रास आदि देशो मे 'संविधान की सर्वोच्चता' की धारणा को अपनाया गया है, जिसका तात्पय है संविधान मे वर्णित नियमो अर्थात् संवधानिक कानूनो की तुलना मे श्रेष्ठता। इगलैण्ड म 'संविधान की सर्वोच्चता' की धारणा को नही, वरन् 'संसद की प्रभुसत्ता' की धारणा को अपनाया गया है और इगलैण्ड म संवधानिक कानूनो तथा साधारण कानूनो का भी कोई भेद नही है। ब्रिटिश संविधान म आधारभूत नियमो का अभाव होने के कारण उनके द्वारा इसके अस्तित्व पर सन्देह व्यक्त किया गया है।

ब्रिटिश संविधान का अस्तित्व है ?

वस्तुत डी० टाकविले और थामस पन की विचारधारा ठीक नही ह और उनके द्वारा ब्रिटिश संविधान के अस्तित्व को अस्वीकार करते हुए जो तक दिये गय हैं, उन्ह स्वीकार नही किया जा सकता।

(१) लिखित और अलिखित संविधान का भेद अवास्तविक—डी० टाकविले और पेन की विचारधारा का प्रमुख आधार ब्रिटिश संविधान का अलिखित होना है। लेकिन लिखित और अलिखित संविधान का भेद वज्ञानिक नही है। वास्तव में कोई भी संविधान न तो पूणतया लिखित होता है और न ही पूणतया अलिखित। **गानर** के शब्दो मे **'लिखित और अलिखित संविधान में मात्रा का ही भेद होता है, प्रकार का नही।'**[1] अमरीकी संविधान को लिखित संविधान का प्रथम और श्रेष्ठ उदाहरण बतलाया जाता है किन्तु अमरीकी शासन व्यवस्था का पूण ज्ञान ७ धाराएँ पढन स ही नही हो जाता है। शासन व्यवस्था के अनक व्यवहार, प्रथाए और परम्पराएँ—संविधान के ही अग है और उनके सम्बन्ध म जाने बिना संविधान का अध्ययन अधूरा ही रहता है। **मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था राजनीतिक दलो का उदय** और **राष्ट्रपति का निर्वाचन** इस प्रकार की परम्पराओ के उदाहरण हैं। **जब लिखित और अलिखित संविधान का भेद ही वज्ञानिक और वास्तविक नहीं है, तो इस आधार पर ब्रिटिश संविधान के अस्तित्व को कसे अस्वीकार किया जा सकता है ?**

(२) ब्रिटिश संविधान का एक अश लिखित है—यदि लिखित होना ही संविधान का आधार समझा जाता हो तो ब्रिटेन के अलिखित संविधान में भी महत्त्वपूण लिखित अश पाया जाता है। ब्रिटिश संविधान के अन्तगत राजसिंहासन के सम्बन्ध में उत्तराधिकार की व्यवस्था कायपालिका विभागो की व्यवस्था मताधिकार, निर्वाचन, संसद के दोनो सदनो के पारस्परिक सम्बन्ध और न्यायपालिका के काय कानून द्वारा ही निश्चित किये गय है। १२१५ का मग्नाकार्टा, १६२८ का अधिकार याचना-पत्र, १६८६ का अधिकार पत्र, १६२० का आयरलण्ड की स्वतन्त्रता का अधिनियम,

[1] "The distinction between written and unwritten constitution is really one of degree, rather than of kind —*Garner*

१९३७ का सम्राट के मंत्रि परिनियम, १९४७ का भारतीय स्वतन्त्रता अधिनियम तथा १९११ और १९४९ के संसदीय अधिनियम इसी प्रकार के उदाहरण है। इस प्रकार ब्रिटन के अलिखित संविधान में भी महत्त्वपूर्ण लिखित अंश पाया जाता है।

ब्रिटिश संविधान को अलिखित और अमरीकी संविधान को लिखित कहा जाता है लेकिन इन दोनों में भेद केवल यह है कि एक में अलिखित अंश की प्रधानता है तो दूसरे में लिखित अंश की।

(३) ब्रिटिश संविधान केवल सिद्धान्त में ही लचीला है, व्यवहार में नहीं—डी० टाकविल और थामस पेन के अन्य तर्कों का भी कोई महत्त्व नहीं है। यद्यपि सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटिश संविधान लचीला है, लेकिन लचीला होने के कारण ही उसे संविधान मानने से इन्कार कैसे किया जा सकता है। यदि डी० टाकविले और थामस पेन का तर्क सही होता तो फिर राजनीति विज्ञान की पुस्तकों में परिवर्तन शीलता के आधार पर संविधान के दो भेद—लचीला संविधान और कठोर संविधान—न बतलाये जाते।

इसके अतिरिक्त ब्रिटिश संविधान केवल सिद्धान्त में ही लचीला है, व्यवहार में ब्रिटिश व्यक्तियों की रूढ़िवादिता और उनकी राजनीतिक परिपक्वता ने उसे पर्याप्त सीमा तक कठोर बना दिया है। ब्रिटेन में ऐसी परम्परा है कि शासन व्यवस्था में यदि कोई परिवर्तन करना हो तो यह कार्य चुनाव के समय जनता से स्पष्ट आदेश प्राप्त करने के बाद ही किया जाय। ऐसी स्थिति में संसद एक संविधान सभा हो जाती है और व्यावहारिक दृष्टि से संविधान को लचीला नहीं कहा जा सकता।

(४) ब्रिटिश संविधान में आधारभूत नियम हैं—यह कहना भी नितान्त गलत है कि ब्रिटिश संविधान में आधारभूत नियम नहीं हैं। मैग्नाकार्टा, पिटीशन आफ राइट्स (Petition of Rights, 1628) और बिल आफ राइट्स (Bill of Rights, 1689) को इस प्रकार के आधारभूत नियम ही कहा जा सकता है।

वास्तव में संविधान का अस्तित्व संविधान के लेखबद्ध होने या उसके कठोर होने पर निर्भर नहीं करता, वरन इस बात पर निर्भर करता है कि क्या शासन व्यवस्था का संचालन करने वाले कुछ आधारभूत तत्त्व हैं? डायसी के शब्दों में **'संविधान लिखित या अलिखित, उन सभी नियमों और कानूनों का संग्रह होता है, जिनका राज्य की प्रभुत्व सत्ता के प्रयोग अथवा वितरण पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में प्रभाव पड़ता है।"** ब्रिटेन में सदैव ही इस प्रकार के नियमों की सत्ता रही है तथा इस दृष्टि से ब्रिटेन में संविधान का अस्तित्व रहा है। विल्फ्रेड हैरीसन लिखता है कि **"ग्रेट ब्रिटेन का संविधान उतना ही आधारभूत और नियमों का संग्रह है जितने कि संयुक्त राज्य अमरीका, सोवियत संघ व फ्रांस के संविधान हैं।'**[1]

प्रो० मुनरो जनिंग्ज, ब्राइस, डॉ० फाइनर, ऑग और जिंक तथा अन्य समस्त

[1] W Harrison, *The Government of Great Britain*, p 23

के द्वारा भी ऐसे ही विचार व्यक्त किये गये हैं। वास्तव में, संविधान का तात्पर्य कागज के टुकड़ों से नहीं, वरन ऐसी वैधानिक संस्थाओं से होता है जिनके आधार पर शासन व्यवस्था का संचालन होता है। ब्रिटेन में ऐसी वैधानिक संस्थाओं का उदय विश्व के अन्य किसी भी देश के पूर्व ही हो गया था। जेनिंग्ज के शब्दों में **'अगर संविधान से हमारा तात्पर्य संस्थाओं से है, कागजों से नहीं, तो ब्रिटेन में संविधान का अस्तित्व रहा है।'**[1]

इस सम्बन्ध में मुनरो लिखते हैं कि—'अंग्रेजी भाषा का शब्द 'कान्स्टीट्यूशन (Constitution) लेटिन भाषा के शब्द 'कन्सटीट्यूरे' (Constituere) से निकला है जिसका अर्थ है स्थापित होना। यदि कुछ नियम, उपनियम और रीति-रिवाज लोगों के द्वारा सरकार का आधार मान लिए जायें, तो उनके पास एक संविधान हो जाता है। यह संविधान जब सरकार का आधार बन जाता है, तो फिर यह बात सारहीन हो जाती है कि यह संविधान सभा द्वारा बना या विकसित हुआ।"

इसी सन्दर्भ में वे आगे लिखते हैं—"ब्रिटिश संविधान संस्थाओं, सिद्धान्तों तथा व्यवहारों का जटिल मिश्रण है। यह अधिकार पत्रों और विधियों, न्यायिक निर्णयों, प्रचलित नियमों, पूर्व दृष्टान्तों, आचरणों और रीति रिवाजों का मिश्रण है। यह एक प्रलेख नहीं, वरन सैकड़ों प्रलेखों का संग्रह है। यह एक स्रोत नहीं, वरन सैकड़ों स्रोतों से बना है।"[2]

वस्तुत ब्रिटिश संविधान के अस्तित्व पर कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। **ऑग तथा जिंक के शब्दों में कहा जा सकता है कि—'यह निश्चित है कि पेन तथा डी० टाकविले के समय से काफी पहले इंगलैण्ड में संविधान था। ऐसा संविधान जिसकी सत्ता के प्रति ब्रिटिश जाति सचेत थी और इसके इतिहास पर गर्व करती थी।'**[3]

ब्रिटिश संविधान के स्रोत

लॉर्ड ब्राइस ने लिखा है, "इंगलैण्ड का संविधान जनता की स्मृति में विद्यमान है। हम यों भी कह सकते हैं कि इंगलैण्ड का संविधान लिखित पूर्व निर्देशनों, न्यायशास्त्रियों या राजनीतिज्ञों की व्याख्याओं, रूढ़ियों, प्रथाओं, राज्य की विधियों पर प्रभाव डालने वाले समझौतों और विश्वासों तथा कुछ परिनियमों का समूह है। संक्षेप में, इंगलैण्ड का संविधान बड़ी-बड़ी संवैधानिक घटनाओं, कानूनों, न्यायिक निर्णयों, साधारण कानून (कामन ला) और रूढ़ियों में पाया जाता है।"

1 If we mean by constitution institutions and not papers it does exist —Jennings, *The Law and the Constitution* p 8

2 Munro *Governments of Europe* p 31 3rd edition

3 'Certainly long before the times of both Paine and DeTocqueville England had such a body of rules with Englishmen equally conscious of its existence and proud of its history' —*Ogg & Zink*

ब्रिटिश संविधान के प्रमुख स्रोत निम्नलिखित है

(१) महान अधिकार पत्र या ऐतिहासिक प्रलेख (Great Charters or historical documents)—ब्रिटिश संविधान एक लम्बे समय के ऐतिहासिक विकास का परिणाम है और संवैधानिक विकास के इस लम्बे इतिहास मे युग युग प्रवर्तक घटनाएँ हुई है, जिन्होने महान अधिकार पत्र या ऐतिहासिक प्रलेखो को जन्म दिया। उदाहरणार्थ सम्राट जान को अपने सामन्तो के सामने झुकते हुए १२१५ मे एक अधिकार पत्र जारी करना पड़ा जिसे 'मग्नाकार्टा' कहा जाता है। इसी प्रकार जब १६८८ की गौरवपूर्ण क्रान्ति के माध्यम से शासन व्यवस्था मे जनता की प्रभुसत्ता स्थापित हो गई, तो १६८९ के अधिकार-पत्र के माध्यम से पार्लियामेण्ट की वैधानिक प्रभुता की घोषणा की गई। १६२८ के 'अधिकार याचिका पत्र' (Petition of Rights) को भी ऐसा ही एक ऐतिहासिक प्रलेख कहा जा सकता है। ज्येष्ठ विलियम पिट (Elder William Pitt) का कहना था कि—"मग्नाकार्टा, पिटीशन ऑफ राइटस तथा बिल आफ राइटस ब्रिटिश संविधान की बाइबिल हैं।"

(२) संसदीय अधिनियम (Parliamentary Acts)—ब्रिटिश संविधान यद्यपि एक अलिखित संविधान है लेकिन अलिखित संविधान मे भी कानूनो का अंश होता है और संसदीय अधिनियम ब्रिटिश संविधान का एक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। मताधिकार, निर्वाचन पद्धतियां संसद के दोनों सदनो के पारस्परिक सम्बन्धों और सार्वजनिक अधिकारियो के अधिकारो तथा कर्तव्यों आदि के सम्बन्ध मे संसद के द्वारा समय समय पर महत्त्वपूर्ण अधिनियम पारित किये गये है और ये संसदीय अधिनियम भी संविधान के स्रोत है। ऐतिहासिक प्रलेखो और संसदीय अधिनियमो मे अन्तर यह है कि ऐतिहासिक प्रलेख संवैधानिक इतिहास के महत्त्वपूर्ण अवसरो पर विविध पक्षो द्वारा किये गये परस्पर समझौते या ऐतिहासिक घटनाओ के निष्कर्ष हैं जबकि संसदीय अधिनियम सामान्य परिस्थितियो मे संसद द्वारा पारित कानून है। इसके अतिरिक्त संसदीय अधिनियमो का अपना महत्त्व है लेकिन ऐतिहासिक प्रलेख उनकी तुलना मे निश्चित रूप से अधिक महत्त्वपूर्ण है। संसदीय अधिनियमो और परिनियमो मे निम्न लिखित प्रमुख हैं—बन्दी प्रत्यक्षीकरण, १६७९ (Habeas Corpus Act, 1679), व्यवस्था अधिनियम, १७०१ (Act of Settlement, 1701), स्काटलैण्ड के मिलन का अधिनियम, १७३७ (Act of Union with Scotland 1737) १८३२, १८६७ और १८८४ के सुधार अधिनियम (Reforms Act) १९११ और १९४९ के संसदीय अधिनियम (Parliamentary Acts) जन प्रतिनिधित्व अधिनियम १९१८ (Representation of People Act 1918), वेस्टमिनिस्टर अधिनियम, १९३१ (Statute of Westminster, 1931) और राजमुकुट के मन्त्रियो का अधिनियम, १९३७ (Ministers of the Crown Act, 1937) आदि।

(३) न्यायिक निर्णय (Judicial Decisions)—न्यायिक निर्णयो का प्रत्येक देश के संविधान के विकास मे महत्त्वपूर्ण योग होता है। ब्रिटिश संविधान मे यद्यपि

अमरीकी संविधान की भाँति 'न्यायिक पुनर्विलोकन' (Judicial review) की व्यवस्था नहीं है, लेकिन न्यायालयों ने संविधान के विकास में पर्याप्त योग दिया है। ब्रिटिश नागरिकों की स्वतन्त्रता तो बहुत अधिक सीमा तक न्यायिक निर्णयों का ही परिणाम है। उदाहरण के लिए 'विलकीज बनाम वुड' (Wilkies v Wood) के अभियोग में यह निर्णय किया गया था कि 'किसी भी अनाम निर्दिष्ट व्यक्ति की तलाशी अथवा उसके कागजात को अधिकार में लेने का सामान्य अधिपत्र (General Warrant) अवैध है।' सामरसेट (Somerset) के अभियोग में ब्रिटेन से दासता के लिए अन्त करने की घोषणा की गयी। हावेल के अभियोग में न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता की गारण्टी दी गयी और सुप्रसिद्ध बुशेल अभियोग (Bushell s Case, 1670) के आधार पर जूरियों की स्वतन्त्रता की दृढ़ स्थापना हुई। संविधान में न्यायिक निर्णयों के योग को दृष्टि में रखते हुए प्रो० डायसी ने सत्य ही कहा है कि **"ब्रिटिश संविधान कानूनों का परिणाम नहीं है, वरन् व्यक्तियों द्वारा अपने अधिकारों की रक्षा के लिए लाये गये अभियोगों का परिणाम है।"**[1]

(४) **सामान्य विधि (Common Law)**—सामान्य विधि से तात्पर्य उन वैधानिक नियमों से है जिनका निर्माण संसद अथवा सम्राट् द्वारा नहीं हुआ, वरन् जो रीति रिवाज और परम्पराओं पर आधारित हैं और जिन्हें न्यायालय के द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। एक पंक्ति में **न्यायालय द्वारा स्वीकृत रीति रिवाज और परम्पराएँ ही सामान्य विधि हैं।** स्पष्टतया समझने के लिए सामान्य विधि का परम्पराओं और न्यायिक निर्णयों से भेद जान लिया जाना चाहिए। परम्पराओं से वे इस दृष्टि से भिन्न हैं कि परम्पराएँ न्यायालय द्वारा स्वीकृत नहीं होतीं जबकि सामान्य विधि न्यायालयों द्वारा स्वीकृत होती है। न्यायिक निर्णयों से वे इस रूप में भिन्न हैं कि न्यायिक निर्णय कानूनों की व्याख्या पर किये गये न्यायालयों के निर्णय होते हैं, लेकिन सामान्य विधि न्यायालयों द्वारा स्वीकृत परम्पराएँ।

ब्रिटिश नागरिकों के मूल अधिकार व स्वतन्त्रताएँ सामान्य विधि पर ही आधारित हैं। मुनरो के शब्दों में, "सामान्य विधि संसदीय अधिनियमों की भाँति न्यायिक निर्णयों के साथ साथ निरन्तर प्रगति करता रहता है। सम्राट के विशेषाधिकार, संसद की सर्वोच्चता फौजदारी अभियोगों में जूरी व्यवस्था, ब्रिटिश जनता के विचार व्यक्त करने और भाषण की स्वतन्त्रता के अधिकार आदि सामान्य कानूनों पर ही आधारित हैं।"

(५) **प्रथाएँ और परम्पराएँ (Customs and Conventions)**—वैसे तो प्रथाएँ और परम्पराएँ सभी संविधानों का एक स्रोत होती हैं, लेकिन ब्रिटिश

[1] English constitution far from being the result of legislation in the ordinary sense of the term is the fruit of contests carried on in courts on behalf of the right of the individuals —*Dicey*

संविधान अलिखित और विकसित होने के कारण प्रथाएँ और परम्पराएँ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। ब्रिटिश संविधान की अनेक महत्त्वपूर्ण बातें, विशेष रूप से संसदीय व्यवस्था, पूर्णतया प्रथाओं और परम्पराओं पर ही आधारित हैं। उदाहरण के लिए सम्राट जार्ज प्रथम अंग्रेजी भाषा से परिचित न होने के कारण उनके द्वारा मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता करना बन्द कर दिया गया और तभी से यह परम्परा स्थापित हो गयी कि सम्राट मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता नहीं करेगा। इसी प्रकार प्रथम प्रधानमन्त्री सर राबर्ट वालपोल के समय में यह परम्परा स्थापित हुई कि लोक सदन में बहुमत दल का नेता ही प्रधानमन्त्री बनेगा और लोक सदन में बहुमत का विश्वास खो देने पर वह अपना त्यागपत्र दे देगा। इसी प्रकार यह भी परम्परा ही है कि लोक सदन का अध्यक्ष चुन जाने के बाद सम्बन्धित सदस्य अपने राजनीतिक दल से त्यागपत्र दे देगा। इसी प्रकार की अन्य भी अनेक परम्पराएँ हैं जिन पर ब्रिटिश संविधान आधारित है।

(६) संविधान पर टीकाएँ (Commentaries on Constitution)—संविधान पर लिखी गयी टीकाओं को भी संविधान का एक स्रोत समझा जाता है, क्योंकि कोई महत्त्वपूर्ण संवैधानिक समस्या उपस्थित होने पर संसद, न्यायालय और सभी सम्बद्ध पक्ष इन टीकाओं का आश्रय लेते हैं। ब्रिटिश संविधान और शासन व्यवस्था पर लिखे गये कुछ अधिक प्रमुख ग्रन्थ, जिनसे संविधान और शासन व्यवस्था को समझने में सहायता मिलती है, इस प्रकार हैं **डायसी** का ग्रन्थ '**लॉ ऑफ दी कान्स्टीट्यूशन**' (Law of the Constitution, 1885) **बेजहाट** का **इंगलिश संविधान**' (English Custitution, 1867), **सर अर्स्कीन मे** (Sir Erskine May) की पुस्तक '*संसदीय कार्यपद्धति और चलन*' (*Parliamentary Procedure* and Practices), **एनसन का** '**लॉ एण्ड कस्टम ऑफ दी कान्स्टीट्यूशन**' (Law and Custom of the Constitution) और हरबर्ट मारीसन की '**सरकार तथा संसद**' (Government and Parliament)।

इसी प्रकार कुछ सम्राटों, प्रधानमन्त्रियों, मन्त्रियों तथा अनुभवी राजनीतिज्ञों ने जो लेख और आत्मकथाएँ लिखी हैं, उनसे शासन व्यवस्था के वास्तविक स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है जैसे साम्राज्ञी विक्टोरिया की पत्रावली, एटली की पुस्तक '*As it Happened*', लायड जार्ज के संस्मरण और जार्ज तथा पंचम एमरी की आत्मकथा।

ब्रिटिश संविधान की विशेषताएँ

संविधान जीवन का वह मार्ग है, जिसे राज्य ने अपने लिए चुना है। विभिन्न राज्यों की परिस्थितियों में भेद होने के कारण स्वाभाविक रूप से उनके जीवन मार्ग भी विभिन्न होते हैं। ब्रिटेन ने अपनी परिस्थितियों के अनुरूप जिस संविधान को अपनाया है, उसकी अपनी कुछ विशेषताएँ हैं जिनका उल्लेख निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) विकसित संविधान (An evolved Constitution)—भारत, अमरीका,

फ्रांस और अन्य देशों के संविधान ऐसे है, जिनका निर्माण किसी एक विशेष संविधान सभा के द्वारा किया गया है, किन्तु ब्रिटिश संविधान का निर्माण नही हुआ वरन् उसका विकास हुआ है और इसने वर्तमान स्वरूप सदियों के विकास के बाद प्राप्त किया है। ब्रिटेन मे ६वीं सदी में राजतन्त्र की स्थापना हुई, १३वी सदी में संसद का विधिवत् चलन प्रारम्भ हुआ १७वीं सदी में संसदीय प्रभुसत्ता की स्थापना हुई और उसके बाद का संवैधानिक इतिहास ब्रिटिश व्यवस्था के लोकतन्त्रीकरण की गाथा है। इस दृष्टि से ब्रिटिश संविधान की तुलना एक ऐसे विशाल भवन से की जा सकती है जिसके विभिन्न भाग अलग-अलग पीढ़ियों के प्रयत्नों का परिणाम हों। प्रो० मुनरो ने लिखा है कि, "ब्रिटिश संविधान कोई पूर्णता प्राप्त वस्तु न होकर एक विकासशील वस्तु है। यह बुद्धिमत्ता और संयोग की सन्तान है जिसका मार्गदर्शन कहीं आकस्मिकता ने और कहीं उच्चकोटि की योजनाओं ने किया है।"[1]

ब्रिटिश संविधान के इस तत्व के कारण संविधान बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार अपने स्वरूप में परिवर्तन करते हुए निरन्तर प्रगतिशील रहा है।

ब्रिटिश संविधान संयोग और विवेक का शिशु
(Child of Chance and Wisdom)

ब्रिटिश संविधान का निर्माण उस प्रकार से योजनाबद्ध रूप में नही हुआ है, जिस प्रकार से संयुक्त राज्य अमरीका या भारत के संविधान का निर्माण हुआ। लिटेन स्ट्रेची के शब्दों में, 'ब्रिटिश संविधान संयोग और विवेक का शिशु है।'

ग्रेट ब्रिटेन की कुछ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण संस्थाएँ संयोग का ही परिणाम है। इस सम्बन्ध में द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका और केबीनेट का उल्लेख प्रमुख रूप से किया जा सकता है। विश्व के अन्य देशों ने ये संस्थाएँ ब्रिटेन से ली हैं, किन्तु स्वयं ब्रिटेन में इन संस्थाओं की स्थापना सोच विचार कर नही की गयी, वरन वे संयोग का ही परिणाम हैं। सन १२६५ में सम्राट् के द्वारा तीन अलग अलग वर्गों (सामन्त वर्ग के प्रतिनिधि, धर्माधिकारी वर्ग और नगरो के प्रतिनिधि) के जन प्रतिनिधियों को कर प्रस्तावों पर विचार के लिए आमन्त्रित किया गया था। इस उदाहरण से त्रिसदनात्मक व्यवस्थापिका का विकास होना चाहिए था, लेकिन संयोगवश द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका का विकास हुआ। बरन (सामन्त) और उच्च धर्माधिकारियों ने हितों की परस्पर एकता अनुभव की और वे एक हो गये। इसी प्रकार शायर के 'नाइट' और शहरों के प्रतिनिधि दोनों ही निर्वाचित होते थे और इस बात ने दोनों को एक दूसरे के समीप किया। इसके साथ ही छोटे धर्माधिकारी क्षेत्र से

[1] "The British constitution is not a completed thing but a process of growth It is a child of wisdom and of chance whose course has been sometimes guided by accident and sometimes by high design' —Munro *Government of Europe* p

अलग हो गये और ब्रिटेन में लोक सदन तथा लार्ड सभा के रूप में संसद के दो सदनों का विकास हुआ।

इसी प्रकार ब्रिटेन की केबीनेट पद्धति भी संयोग का ही परिणाम है। यह एक सुखद संयोग ही था कि सन् १७१४ में पदासीन हैनोवर वंश के सम्राट जार्ज प्रथम और जार्ज द्वितीय अंग्रेजी भाषा नहीं जानते थे और उन्हें ब्रिटिश राजनीति की अपेक्षा हेनोवर राजनीति में अधिक रुचि थी। इस संयोग ने ब्रिटिश केबीनेट को राजकीय प्रभाव से मुक्त कर दिया। जब केबीनेट के ही एक सदस्य द्वारा केबीनेट की बैठकों की अध्यक्षता करना प्रारम्भ किया गया तो इसके परिणामस्वरूप प्रधानमन्त्री के पद का विकास हुआ। संयोगवश हुए इस घटनाचक्र के परिणामस्वरूप ही लोक सदन के प्रति मन्त्रिमण्डलीय उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का जन्म और विकास हुआ।

ब्रिटेन के अन्तर्गत यदि कुछ संस्थाएँ संयोग का परिणाम है, तो दूसरी ओर कुछ संस्थाओं को बुद्धिमत्तापूर्वक किये गये प्रयत्नों का परिणाम कहा जा सकता है। लोक सदन का लोकतन्त्रीकरण और लोक सदन की तुलना में लार्ड सभा की शक्तियां कम करने का कार्य इसी प्रकार के प्रयत्न हैं। १८३२, १८६७, १८८४ और अन्य सुधार अधिनियमों के आधार पर मताधिकार को व्यापक किया गया और इससे लोक सदन वास्तविक रूप में एक लोकतन्त्रीय सदन हुआ। इसी प्रकार १९११ और १९४९ ई० के संसदीय अधिनियमों के आधार पर लार्ड सभा की शक्तियों को कम किया गया। इन दोनों अधिनियमों के कारण ही आज 'संसद की प्रभुसत्ता' का तात्पर्य 'लोक सदन की प्रभुसत्ता' से हो गया है। वर्तमान के स्थानीय स्वशासन और न्यायपालिका के संगठन की जो व्यवस्था है वह भी विवेक का ही परिणाम है।

इस प्रकार ब्रिटिश संविधान की कुछ बातें विवेक का परिणाम हैं लेकिन यह तो मानना ही होगा कि इस संविधान में विवेक की अपेक्षा संयोग का तत्त्व अधिक है। इस संविधान के विषय में ठीक ही कहा गया है कि 'यह संयोग और विवेक का परिणाम है।'

(२) **अलिखित संविधान (An unwritten Constitution)**—वर्तमान समय में, जबकि सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि संविधान आवश्यक रूप से एक 'प्रलेख' (Document) के रूप में होना चाहिए, ब्रिटिश संविधान अलिखित संविधान का एकमात्र उदाहरण है। अंग्रेज लोग सिद्धान्तवादी कम और व्यवहारवादी अधिक होते हैं और इसी कारण उनमें अपने संविधान को लिपिबद्ध करने के प्रति सदैव अनिच्छा रही है। ब्रिटिश संविधान में यद्यपि कानूनों के रूप में कुछ लिखित अंश भी हैं, लेकिन उसका अधिकांश अंश प्रथाओं और परम्पराओं के रूप में अलिखित ही है और प्रमुखतया संविधान के इसी लक्षण के कारण डी० टाकविले और टामस पेन के द्वारा तो उसके अस्तित्व पर भी सन्देह व्यक्त कर दिया गया है। मुनरो ने इस सम्बन्ध में

लिखा है कि, "जो बात ब्रिटिश संविधान को विशिष्ट बनाती है वह ऐसे अनेक नियमों का अस्तित्व है, जो केवल परम्परा पर आधारित हैं।"[1]

(३) लचीला या सुपरिवर्तनशील संविधान (*Flexible Constitution*)—परिवर्तनशीलता के आधार पर दो प्रकार के संविधान होते हैं लचीला संविधान और कठोर संविधान। लचीले संविधान में साधारण कानून के निर्माण की प्रक्रिया से ही परिवर्तन किया जा सकता है, किन्तु कठोर संविधान में परिवर्तन करने के लिए साधारण कानूनों के निर्माण से भिन्न, संविधान में निर्धारित विशेष प्रक्रिया को अपनाना आवश्यक होता है। ब्रिटिश संविधान इस दृष्टि से लचीला है कि ब्रिटिश संसद सामान्य बहुमत के आधार पर संविधान में कोई भी परिवर्तन कर सकती है। अंग्रेजी विद्वान आन्सन (Anson) ने लिखा है कि 'हमारी पार्लियामेण्ट जंगली चिड़ियों अथवा शैल मछलियों की रक्षा के लिए कानून बना सकती है या लाखों नागरिकों को राजनीतिक शक्ति प्रदान कर सकती है अथवा उसका वितरण नवीन निर्वाचन क्षेत्रों में कर सकती है।'

सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटिश संविधान लचीला है और ब्रिटेन में साधारण कानून तथा संवैधानिक कानून में कोई अन्तर नहीं है। किन्तु व्यवहार में ब्रिटिश व्यक्तियों की रूढ़िवादिता और सुस्थापित जनतन्त्रीय परम्पराओं ने संविधान की मूल व्यवस्थाओं में परिवर्तन का कार्य बहुत कठिन कर दिया है। ब्रिटेन में यह एक परम्परा स्थापित हो गयी है कि संविधान में महत्वपूर्ण परिवर्तन उस समय तक न किया जाय, जब तक कि सार्वजनिक चुनाव में उस विषय पर जन सहमति न प्राप्त हो जाय। उदाहरण के लिए, १९११ के संसदीय अधिनियम के आधार पर लार्ड सभा के अधिकारों में कटौती करने के पूर्व १९१० में लोक सदन को विघटित कर इस विषय पर जन स्वीकृति प्राप्त कर ली गयी थी।

(४) सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर (*Difference between Theory and Practice*)—ब्रिटिश संविधान का एक महत्वपूर्ण लक्षण सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर है। मुनरो के शब्दों में, "ब्रिटिश संविधान में जो कुछ दिखायी देता है वह वास्तव में है नहीं और जो है, वह दिखाई नहीं देता।'[2]

यद्यपि विश्व के अन्य देशों के संविधानों में भी सैद्धान्तिक स्थिति और वास्तविक स्थिति में अन्तर पाया जाता है किन्तु किसी भी अन्य संविधान में सिद्धान्त और वास्तविकता में भेद का यह तत्त्व इतना प्रबल नहीं है जितना कि ब्रिटिश संविधान में। ओग ने ऐसा ही मत व्यक्त करते हुए कहा है, 'सभी शासन व्यवस्थाओं

[1] What makes the British constitution so unique is the uncommonly large number of its rules which are based solely on convention —*Newman*

[2] In the British constitution nothing is what it seems to seems to be what is it ' —Munro *Government of Europe*

में सिद्धान्त व व्यवहार मे अनेक भेद पाये जाते हैं पर जितने अधिक रूप में वे अंग्रेजी संविधान मे पाये जाते हैं उतने किसी संविधान मे नही पाये जाते ।"[1]

सिद्धान्त और व्यवहार में अन्तर के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं **प्रथमत**, सैद्धान्तिक दृष्टि से इंगलैण्ड में राजतन्त्र है किन्तु व्यवहार में वहाँ पर राजतन्त्र न होकर लोकतन्त्र है। **द्वितीयत**, सैद्धान्तिक दृष्टि से इंगलैण्ड की शासन व्यवस्था में शक्ति का पृथक्करण पाया जाता है क्योंकि वहा की कानून निर्माण की शक्ति संसद मे, कार्यपालिका शक्ति मन्त्रिमण्डल में व न्यायिक शक्ति न्यायपालिका मे निहित है। किन्तु इंगलैण्ड में संसदात्मक शासन व्यवस्था है और वहा शक्तियों के पृथक्करण के स्थान पर शक्तियों का केन्द्रीयकरण या सामंजस्य ही देखा जा सकता है। **तृतीयत**, सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटिश संसद कैबीनेट पर नियन्त्रण रखती है किन्तु वास्तविकता यह है कि संसद स्वयं कैबीनेट से नियन्त्रित होती है।

सिद्धान्त और व्यवहार के इस भेद के कारण ही ऑग ने कहा है कि, **"सैद्धान्तिक दृष्टि से ग्रेट ब्रिटेन की शासन व्यवस्था निरंकुश राजतन्त्रात्मक है पर उसका रूप सीमित संवैधानिक राजतन्त्र का है और वस्तुतः वह लोकतान्त्रिक गणराज्य है।"**[2] ऑग का यह कथन ब्रिटिश संविधान की एक प्रमुख असंगति की ओर ध्यान आकर्षित करता है और ब्रिटिश सम्राट की औपचारिक शक्तियों तथा उसकी वास्तविक स्थिति में भेद को स्पष्ट करता है। जहाँ तक सैद्धान्तिक अध्ययन का प्रश्न है, ब्रिटेन की शासन व्यवस्था आज भी वैसी ही है जैसी कि १६८८ की गौरवपूर्ण क्रान्ति से पूर्व रही होगी। बेजहाट के द्वारा १८३२ में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'दी इंगलिश कान्स्टीट्यूशन' (*The English Constitution*) में कार्यों की एक लम्बी सूची का उल्लेख किया गया है, जो ब्रिटिश सम्राट सिद्धान्त में कर सकता है। उसके अनुसार "महारानी विक्टोरिया सेना को बरखास्त कर सकती हैं, सभी सरकारी पदाधिकारियों को पदच्युत कर सकती हैं, युद्धपोतों को बेच सकती हैं, कार्नवाल को देकर शान्ति सन्धियां कर सकती हैं और ब्रिटेन की विजय के लिए युद्ध छेड़ सकती हैं।" सिद्धान्त के अनुसार ब्रिटेन में सब कुछ सम्राट का ही है और ब्रिटिश शासन व्यवस्था निरंकुश राजतन्त्रात्मक है।

जहा तक रूप या गठन का सम्बन्ध है, ब्रिटिश शासन व्यवस्था को *सीमित संवैधानिक राजतन्त्रात्मक* कहा जा सकता है क्योंकि सम्राट को अपने कर्तव्यों का निर्वाह करने में सहायता देने हेतु मन्त्रिमण्डल और संसद जैसी संस्थाओं की व्यवस्था

1 There are plenty of contrasts between theory and practice in all governments But in none do they form the very warp and woof of the system as in Britain —*Ogg*

2 The Government of the United Kingdom is in ultimate theory an absolute monarchy in form a limited constitutional monarchy and in actual character a democratic republic

—Ogg *British Government and Politics* p 65

की गयी है। लेकिन जहाँ तक वस्तुस्थिति का प्रश्न है ब्रिटिश शासन व्यवस्था को न केवल लोकतन्त्रीय, वरन 'लोकतान्त्रिक गणराज्य' कहा जा सकता है। सम्राट उत्तराधिकार के आधार पर अपना पद प्राप्त करते है, लेकिन उनकी स्थिति और कार्य जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि से किसी भी रूप मे भिन्न नही हैं। लास्की लिखते हैं, "लोकतन्त्र ने अपने आपको जनता के हाथो मे बेच दिया है" आग के शब्दो मे इगलैण्ड की स्थिति आज 'मुकुटधारी गणतन्त्र (Crowned Republic) की है।

(५) ससदात्मक प्रजातन्त्र (Parliamentary Democracy) — समदीय प्रजातन्त्र को अपनाया गया है और ब्रिटिश शासन ससदात्मक का आदर्श प्रतीक है। ससदात्मक शासन के तीनो ही तत्त्व, व्यवस्थापिका और कार्यपालिका मे घनिष्ट सम्बन्ध तथा की अनिश्चितता) पूर्ण अशो म विद्यमान है।

इस सम्बन्ध में यह स्मरणीय है कि संसद की प्रभुसत्ता केवल कानूनी दृष्टिकोण के अनुसार ही है, व्यवहार में संसद की शक्तियों के प्रयोग पर अनेक प्रतिबन्ध हैं। आन्तरिक क्षेत्र में संसद की शक्ति लोकमत, नैतिक धारणाओं और परम्परा से सीमित है और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में यह शक्ति अन्तरराष्ट्रीय नैतिकता, अन्तरराष्ट्रीय कानून और ब्रिटेन की यथार्थ स्थिति से सीमित होती है।

(७) एकात्मक शासन (Unitary Government)—क्षेत्र की दृष्टि से ब्रिटेन एक सुगठित इकाई है और सम्भवतया इसी कारण ब्रिटेन में एकात्मक शासन को अपनाया गया है। संविधान के द्वारा शासन की समस्त शक्ति केन्द्रीय सरकार में निहित कर दी गयी है और यह केन्द्रीय सरकार ही सम्पूर्ण देश के शासन का संचालन करती है। यद्यपि प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से केन्द्रीय सरकार के द्वारा स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों की स्थापना की गयी है और इन स्थानीय इकाइयों को पर्याप्त शक्तियां भी प्राप्त हैं लेकिन शासन व्यवस्था एकात्मक होने के कारण इन स्थानीय प्रशासनिक इकाइयों को अपना अस्तित्व और शक्तियां संविधान से नहीं वरन् केन्द्रीय सरकार से प्राप्त हैं और स्वाभाविक रूप से उनका अस्तित्व तथा शक्तियां केन्द्रीय सरकार की इच्छा पर ही निर्भर करती हैं।

(८) विधि का शासन (Rule of Law)—ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता, जिस पर ब्रिटिशवासी बहुत अधिक गर्व करते हैं 'विधि का शासन' है। 'विधि के शासन' का आशय यह है कि इंगलैण्ड के शासन का संचालन किन्हीं विशेष व्यक्तियों की इच्छा द्वारा नहीं वरन् विधि के द्वारा ही किया जाता है। विधि के शासन का एक अन्य तात्पर्य यह है कि ब्रिटेन में सभी व्यक्ति, चाहे उनका पद और स्थिति कुछ भी क्यों न हो, एक ही प्रकार की विधि और एक ही प्रकार के न्यायालयों के अधीन हैं। इस सम्बन्ध में ब्रिटिश व्यवस्था फ्रांस की व्यवस्था के नितान्त विपरीत है जहां सरकारी कर्मचारियों और अधिकारियों की विशेष स्थिति को स्वीकार करते हुए उनके लिए प्रशासनिक विधि और न्यायालय की व्यवस्था की गयी है। डायसी ने विधि के शासन को लक्ष्य करते हुए ही कहा है '**विधि के शासन के अनुसार प्रत्येक सरकारी कर्मचारी, प्रधानमन्त्री से लेकर एक सामान्य सिपाही और कर संग्रह करने वाले अधिकारी तक अपने अवैध कार्यों के लिए देश के कानून के प्रति उसी प्रकार से उत्तरदायी हैं, जैसे कोई अन्य सामान्य नागरिक।**"

'विधि के शासन' की यह बात सैद्धान्तिक दृष्टि से ही पूर्ण सत्य है व्यवहार में इस पर अनेक प्रतिबन्ध हैं।

(९) अधिकार पत्र का अभाव, किन्तु नागरिक स्वतन्त्रताओं और अधिकारों की विद्यमानता (*No Bill of Rights, but presence of Civil Liberties and Rights*)—वर्तमान राजनीतिक जीवन की सामान्य प्रवृत्ति यह है कि संविधान के अन्तर्गत नागरिकों के लिए अधिकार पत्र की व्यवस्था की जाती है और शासन को

इनकी अवहेलना करने की शक्ति से वंचित कर दिया जाता है। प्राय ऐसा समझा जाता है कि नागरिक अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की रक्षा करने के लिए ऐसा करना आवश्यक है, किन्तु ब्रिटिश संविधान में इस प्रकार का कोई अधिकार-पत्र नहीं है। लेकिन संविधान में अधिकार-पत्र का अभाव होने पर भी ब्रिटिश नागरिक अन्य देशों के नागरिकों की तुलना में कम स्वतन्त्र और अधिकारसम्पन्न नहीं हैं। कुछ अधिकार (बन्दी प्रत्यक्षीकरण का अधिकार, शस्त्र धारण करने का अधिकार, आवेदन प्रस्तुत करने का अधिकार, अत्यधिक जुर्माने और अमानुषिक दण्ड से बचने का अधिकार आदि) तो संसदीय अधिनियमों द्वारा प्रदान किये गये हैं। अन्य कुछ स्वतन्त्रताएँ (भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, सम्मेलन और संघ बनाने की स्वतन्त्रता आदि) सामान्य विधि पर आश्रित हैं। नागरिक इन स्वतन्त्रताओं का उपभोग तब तक कर सकते हैं, जब तक कि वे किसी कानून को भंग न करें या अन्य नागरिकों के ऐसे ही अधिकार को आघात न पहुँचायें।

(१०) मिश्रित शासन प्रणाली (Mixed Government)—ब्रिटिश संविधान एक निर्मित नहीं, वरन विकसित संविधान है। एक ही समय पर पूर्ण संविधान का निर्माण करने के बजाय संविधान को परिस्थितियों के अनुसार ढाला जाता रहा है। परिस्थितियों के अनुसार विकास ने जहाँ संविधान में प्रगतिशीलता का समावेश किया है वहाँ इसी कारण संविधान में असंगति भी आ गयी है और इस असंगति का प्रमाण तथा प्रतीक है 'ब्रिटेन की मिश्रित शासन प्रणाली'। मूल रूप में जो तीन प्रकार की शासन व्यवस्थाएँ (राजतन्त्र, कुलीनतन्त्र और प्रजातन्त्र) होती हैं, ब्रिटेन में इन तीनों ही शासन व्यवस्थाओं के लक्षण विद्यमान हैं। राजतन्त्र के प्रतीक रूप में ब्रिटिश सम्राट है जिसके द्वारा उत्तराधिकार के आधार पर अपना पद प्राप्त किया जाता है। लॉर्ड सभा कुलीनतन्त्रीय संस्था है जिसके अधिकांश सदस्य कुलीन वर्ग में से आते हैं और उत्तराधिकार के आधार पर पद ग्रहण करते हैं। लोक सदन और कैबीनेट लोकतन्त्रीय संस्थाओं के प्रतीक हैं। राजपद और लॉर्ड सभा के होते हुए भी वास्तविकता की दृष्टि से ब्रिटेन में लोकतन्त्रीय शासन ही है क्योंकि राजपद और लार्ड सभा की शक्तियों को बहुत अधिक सीमित कर दिया गया है।

(११) द्विदल पद्धति (Two Party System)—ब्रिटिश संविधान और राजनीति की एक विशेषता द्विदल पद्धति है। ब्रिटेन में राजनीतिक दलों के संगठन की स्वतन्त्रता है, किन्तु व्यवहार में पिछली लगभग तीन सदियों में ब्रिटिश राजनीति में लगभग सदैव ही दो राजनीतिक दलों की प्रमुखता रही है। प्रथम महायुद्ध की समाप्ति तक ब्रिटिश राजनीति के दो प्रमुख दल थे—अनुदार दल और उदार दल। महायुद्ध के बाद उदार दल का पतन और मजदूर दल का उदय प्रारम्भ हुआ और आज ब्रिटेन के दो प्रमुख दल हैं—अनुदार दल और मजदूर दल। द्विदल पद्धति के कारण ब्रिटेन में एक ही राजनीतिक दल की सरकार का निर्माण होता है और वह

राजनीतिक स्थायित्व प्रदान करती है। ब्रिटेन में संसदीय शासन की अद्वितीय सफलता का बहुत कुछ श्रेय इस द्विदल पद्धति को ही दिया जा सकता है।

(१२) सीमित शक्ति विभाजन का सिद्धान्त—शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त के प्रतिपादक माण्टेस्क्यू का तो विचार था कि ब्रिटिश शासन पद्धति का एक विशेष गुण शक्ति विभाजन का सिद्धान्त है किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि ब्रिटेन में शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को पूर्ण रूप से नहीं अपनाया जाता। ब्रिटेन में संसदात्मक शासन व्यवस्था है और संसदीय शासन में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका अनिवार्य रूप से परस्पर सम्बन्धित होती हैं। ब्रिटेन में ऐसा ही है और शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त को उत्तरदायित्व के केन्द्रीयकरण के सिद्धान्त के साथ मिश्रित कर दिया गया है। ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल में कार्यपालिका और विधायी शक्तियों का मेल हो गया है, पर न्यायपालिका स्वतन्त्र है। रैम्जे म्योर के शब्दों में "**यदि शक्तियों का विभाजन अमरीकी संविधान का एक आवश्यक सिद्धान्त है तो उत्तरदायित्व का केन्द्रीयकरण अंग्रेजी संविधान का एक आवश्यक अंग है।**"[1] शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का एक सीमा तक ही प्रयोग किया गया है, उसका वास्तविक प्रचलन न्यायपालिका के सम्बन्ध में ही है।

ब्रिटिश संविधान और शासन की कुछ आधुनिक प्रवृत्तियाँ

परम्परागत रूप में ब्रिटिश संविधान की उपर्युक्त विशेषताएँ हैं ही, इनके अतिरिक्त ब्रिटिश संविधान और शासन व्यवस्था में कुछ विशेष प्रवृत्तियों का उदय हो रहा है जिनकी विवेचना निम्न रूप में की जा सकती है

(१) लिखित कानूनों को अपनाने की प्रवृत्ति—ब्रिटिश संविधान अलिखित है किन्तु ब्रिटिश व्यक्ति भी अब यह अनुभव करने लगे हैं कि शासन की मूल बातों को परम्पराओं पर छोड़ने के बजाय उन्हें कानूनों के रूप में लेखबद्ध कर दिया जाना चाहिए। बीसवीं सदी में शासन के मूलाधार से सम्बन्धित अनेक कानूनों का निर्माण किया गया है यथा १९११ और १९४९ के संसदीय अधिनियम, १९१८ और १९२८ के संसदीय सुधार अधिनियम, १९४८ का जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, १९१९ का मन्त्रियों का पुनर्निर्वाचन सम्बन्धी अधिनियम, १९३७ तथा १९४६ का मिनिस्टर्स ऑफ दि क्राउन अधिनियम और १९५३ का रीजेन्सी अधिनियम आदि। इस प्रवृत्ति के आधार पर सम्भव है कि ब्रिटिश संविधान कालान्तर में प्रधानतः अलिखित संविधान के स्थान पर प्रधानतः लिखित संविधान का रूप ग्रहण कर ले।

(२) क्षेत्रीय स्वशासन और राजनीतिक संघ की ओर प्रवृत्ति—ब्रिटिश शासन व्यवस्था एकात्मक है किन्तु इसमें इंगलैण्ड, स्काटलैण्ड, उत्तरी आयरलैण्ड और वेल्स आदि क्षेत्र इस बात की माँग करते रहे हैं कि इन क्षेत्रों को क्षेत्रीय प्रशासन

1 If separation of powers is the essential principle of American Constitution concentration of responsibility is the essential principle of British Constitution —*Ramsay Muir*

सम्बन्धी स्वायत्तता प्रदान करते हुए इंगलैण्ड को एक राजनीतिक संघ का रूप प्रदान किया जाना चाहिए। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद से ही यदाकदा इस प्रकार की माँग की जाती रही है और उत्तरी आयरलैण्ड में पृथक संसद की स्थापना से इस प्रकार की माँग को बल मिला है। भविष्य में यदि क्षेत्रवाद की यह प्रवृत्ति प्रबल हो जाती है तो ब्रिटेन को एकात्मक शासन के स्थान पर संघीय शासन अपनाना पड सकता है।

(३) संसद की शक्तियों का ह्रास और केबीनेट की शक्तियों में वृद्धि—ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता 'संसद की प्रभुसत्ता' बतलाई जाती है लेकिन यह मात्र सैद्धान्तिक ही है। व्यवहार में बीसवीं सदी के प्रारम्भ से ही राज्य के कार्यों में वृद्धि, कानून निर्माण की जटिलता, प्रदत्त व्यवस्थापन, द्विदल पद्धति और दलीय अनुशासन तथा अन्य अनेक कारणों से संसद की सत्ता का ह्रास और संसद पर मन्त्रिमण्डल के नियन्त्रण की प्रवृत्ति देखने में आती है। रैम्जे म्योर ने तो इसी प्रवृत्ति के कारण 'मन्त्रिमण्डल के अधिनायकवाद' की आशंका भी व्यक्त की है। लेकिन मन्त्रिमण्डल की शक्तियों में वृद्धि की प्रवृत्ति विश्व के अन्य अनेक प्रजातन्त्रों में भी दिखाई देती है और ब्रिटेन में प्रजातन्त्रीय भावना मूल रूप में प्रबल होने के कारण 'मन्त्रिमण्डल अधिनायकवाद' की कोई आशंका नहीं है।

(४) अधिकाधिक लोकतन्त्रीकरण की प्रवृत्ति—ब्रिटेन में लोकतन्त्र तो सत्रहवीं सदी में स्थापित हो गया था किन्तु अपनी रूढ़िवादिता और अत्यधिक व्यावहारिकता के कारण लोकतन्त्र को अपनाते हुए भी ब्रिटेन के द्वारा अपनी शासन व्यवस्था में अलोकतन्त्रीय तत्त्वों को बने रहने दिया गया। बीसवीं सदी और विशेष रूप से द्वितीय महायुद्ध के बाद समस्त विश्व में लोकतन्त्र का जो ज्वार आया, उसने ब्रिटिश शासन व्यवस्था के इन अलोकतान्त्रीय तत्त्वों पर आघात किया है और वर्तमान समय में ब्रिटिश शासन व्यवस्था अधिकाधिक लोकतन्त्रीकरण की ओर बढ़ रही है। १९४८ में लॉर्ड सभा के सदस्यों को देशद्रोह व महापराध के लिए स्वयं सभा द्वारा जाँच व दण्डित किये जाने के विशेषाधिकार से वंचित कर उन्हें भी साधारण न्यायालयों के क्षेत्राधिकार में कर दिया गया है। इसी वर्ष अचल सम्पत्ति के आधार पर अतिरिक्त मताधिकार की व्यवस्था का उन्मूलन कर बहुल मताधिकार के अवशेष तत्त्वों को समाप्त कर दिया गया गया है और लोकसदन में विश्वविद्यालयों का प्रतिनिधित्व समाप्त कर दिया गया है। १९४९ में लार्ड सभा की शक्तियों में कमी की गई और स्त्रियों को लॉर्ड सभा की सदस्यता प्रदान की गई। बीसवीं सदी के छठे दशक से यह विचार बल पकड़ रहा है कि लॉर्ड सभा की शक्तियाँ और कम कर दी जानी चाहिए व सदस्यता का आधार आनुवंशिकता न होकर वैयक्तिक गुण होना चाहिए।

(५) उपनिवेशों के साथ सम्बन्धों में परिवर्तन की प्रवृत्ति—अंग्रेज लोगों के स्वभाव में बहुत अधिक लचीलापन है और उन्होंने बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार अपने आपको परिवर्तित करने की क्षमता का परिचय दिया है। १९३० के पूर्व तक ब्रिटिश उपनिवेशों पर ब्रिटेन का लगभग पूर्ण प्रभुत्व था। १९३१ के

वेस्टमिनिस्टर अधिनियम म यह निर्धारित किया गया कि उपनिवेश पूर्णतया स्वतन्त्र व स्वाधीन होगे और ब्रिटिश सम्राट नाममात्र के लिए ही उनका राज्याध्यक्ष होगा। इस प्रकार ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल का सगठन हुआ। इस समय तक ऐसा समझा जाता था कि एक गणतन्त्रो राज्य 'ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल' का सदस्य नहीं हो सकता, क्योंकि राष्ट्रमण्डल के सदस्य देशो के लिए ब्रिटिश सम्राट को अपना प्रधान मानना आवश्यक है। लेकिन १६४६ म भारत को ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल की सदस्यता प्रदान करने के लिए 'ब्रिटिश राष्ट्रमण्डल' मे से 'ब्रिटिश' विशेषण हटा दिया गया। पाकिस्तान और घाना भी गणतन्त्र बनने पर राष्ट्रमण्डल के सदस्य बने रहे। इस प्रकार ब्रिटेन अपने उपनिवेशो के साथ सम्बन्धो म प्रधानता की स्थिति को छोडकर समान भागीदार की स्थिति की ओर बढ रहा है।

(६) एकदलीय मन्त्रिमण्डलों को पुन स्थापित करने की प्रवृत्ति—ब्रिटेन की सामान्य प्रवृत्ति एक राजनीतिक दल के मन्त्रिमण्डल के निर्माण की है किन्तु प्रथम और द्वितीय महायुद्ध के काल मे राष्ट्रीय आवश्यकता के कारण राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलो की स्थापना की गई और १६३० ३५ के काल मे ब्रिटिश राजनीति म तीन राजनीतिक दलो का उदय हो जाने के कारण मिले-जुले मन्त्रिमण्डलो की स्थापना हुई। लेकिन ब्रिटेन पुन द्विदल पद्धति पर आ गया है और १६४५ से लेकर अब तक के २६ वर्षों म ब्रिटेन म निरन्तर एकदलीय मन्त्रिमण्डल की ही स्थापना हुई है। इस प्रकार एकदलीय मन्त्रिमण्डलो को पुन स्थापित करने की प्रवृत्ति अपना ली गई है।

(७) दोनो प्रमुख राजनीतिक दलो में मतैक्य की प्रवृत्ति—मजदूर दल के उदय काल म ऐसा प्रतीत हुआ था कि मजदूर दल और अनुदार दल की नीति म आधारभूत भेद है। सामान्य व्यक्ति इन्हे पूजीवादी दल और समाजवादी दल के रूप म समझने लगे थे। १६३० के लगभग मजदूर दल एक अतिवादी दल ही था किन्तु १६४५ म शासनसत्ता प्राप्त करने के बाद मजदूर दल ने यह अनुभव किया कि ब्रिटिश परिस्थितियो मे अतिवादी नीति लोकप्रिय या उपयोगी नही हो सकती और उसने उत्तरदायित्व का भाव अपनाते हुए अपनी धारणाओ और आचरण को सयमित कर लिया। उधर अनुदार दल ने भी यह अनुभव कर लिया कि १६वी सदी की आर्थिक और राजनीतिक विचारधारा को २०वी सदी मे नही अपनाया जा सकता। आज दोनो प्रमुख दल एक दूसरे के बहुत अधिक समीप आ गये हैं और स्थिति यह है कि शासनसत्ता पर चाहे किसी का नियन्त्रण हो, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था म विशेष परिवर्तन नही होता।

प्रश्न

१ ब्रिटिश संविधान के महत्त्व पर प्रकाश डालिए।
२ शासन विधान के क्षेत्र म ऐंग्लो सक्सन जाति की क्या देन है? स्पष्ट कीजिए।
३ ब्रिटिश संविधान के क्या स्रोत हैं? क्या यह कहना उचित है कि ब्रिटिश संविधान का अस्तित्व नहीं है? (बिहार, १९६१, ६४, राजस्थान, १६६७)

४ ब्रिटिश संविधान की विशेषताओं का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए।
(कानपुर, १९७२, विक्रम, १९६८)

५ 'ब्रिटिश शासन सिद्धान्ततः निरंकुश राजतन्त्र, स्वरूप में सीमित राजतन्त्र और व्यवहार में लोकतन्त्रात्मक गणराज्य है।" विवेचना कीजिए।
(पटना, १९६७, आगरा, १९६१, ७२, विक्रम, १९६४, राजस्थान, १९६६, ७२)

६ "ब्रिटिश संविधान में कोई बात जैसी दिखायी देती है, वैसी नहीं है और जैसी है वैसी दिखायी नहीं देती।' इस कथन की व्याख्या कीजिए।
(बिहार, १९६०, विक्रम १९६७, राजस्थान, १९७०)

७ इंगलैण्ड तथा संयुक्तराज्य अमरीका के संविधान के प्रसंग में संसदीय एवं अध्यक्षात्मक कार्यपालिका में भेद का वर्णन कीजिए।
(विक्रम, १९६३, आगरा, १९६७, ७०, कानपुर, १९६६, ७१ राजस्थान, १९६६)

८ ब्रिटिश संविधान विकसित है, निर्मित नहीं। स्पष्ट कीजिए।
(आगरा १९६८)

९ 'ब्रिटिश संविधान विवेक और संयोग का शिशु है।' इस कथन का विश्लेषण कीजिए। (बिहार १९५६, विक्रम, १९६७)

3

संविधान के अभिसमय अथवा वैधानिक परम्पराएँ

(CONVENTIONS OF THE CONSTITUTION)

"कानून की सूखी हड्डियों के ऊपर अभिसमय मानो मांस रूपी आवरण है। इनसे कानूनी सविधान कार्यरूप मे लाया जाता है और वे इसे निरन्तर विकसित विचारो के साथ रखते हैं। सविधान स्वत काय नहीं करता, इसे मनुष्य सचालित करते हैं। वह राष्ट्रीय सहयोग का एक यन्त्र है और सवधानिक अभिसमय इस प्रकार के सहयोग के लिए परिवर्द्धित नियम है।"[1] —जैनिग्ज

सविधान के अभिसमय अथवा वैधानिक परम्पराए, जिन्हे मिल ने 'सविधान के अलिखित नियम', डायसी ने 'सवधानिक अभिसमय' और एन्सन ने 'सवधानिक परम्पराओं' की सज्ञा दी है, ब्रिटिश सविधान के विभिन्न स्रोतो मे न केवल एक, वरन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण स्रोत है। ब्रिटिश सविधान को बहुत अधिक सीमा तक अभिसमयो पर आधारित सविधान ही कहा जा सकता है। सविधान मे अभिसमयो का महत्त्व स्पष्ट करते हुए प्रधानमन्त्री एस्क्विथ ने १९१० मे ब्रिटिश ससद मे कहा था कि 'हमारी सवैधानिक व्यवस्था व्यवहार, प्रथाओ और परम्पराओ पर निर्भर है।"

1 'Conventions provide the flesh which clothes the dry bones of the law they make the legal constitution work they keep it in touch with the growth of ideas The constitution does not work itself it has to be worked by men It is an instrument of national cooperation and the spirit of cooperation is as necessary as the instruments The constitutional conventions are the rules elaborated for effecting the cooperation —Jennings *The Law and the Constitution* (Third Ed 1948) pp 80 81

अभिसमय का तात्पर्य

प्रो० डायसी का मत है कि अभिसमय 'संविधान सम्बन्धी नैतिकता के आदेश' (Precepts of Constitutional Morality) हैं। उन्होंने इनकी पूर्ण परिभाषा देते हुए कहा है— 'संविधान के अभिसमय वे रीति रिवाज अथवा समझौते हैं जिनके अनुसार पूर्ण प्रभुत्वसम्पन्न विधानमण्डल के विभिन्न अंगों को अपने विवेकाधारित अधिकारों का प्रयोग करना चाहिए, चाहे वे सम्राट के परमाधिकार हों या पार्लियामेण्ट के विशेषाधिकार।'[1]

प्रो० ऑग (Ogg) के अनुसार—"अभिसमय उन समझौतों, आदतों या प्रथाओं से मिलकर बनते हैं जो राजनीतिक नैतिकता के नियम मात्र होने पर भी बड़ी से बड़ी सार्वजनिक सत्ताओं के दिन प्रतिदिन के सम्बन्धों और गतिविधियों के अधिकांश भाग का नियमन करते हैं।"

अभिसमय के लक्षण

ऑग, डायसी और अन्य लेखकों द्वारा अभिसमय की जो परिभाषाएँ की गयी हैं, उनके आधार पर अभिसमय के निम्न तीन लक्षण बतलाये जा सकते हैं, जो इस प्रकार हैं

(१) अभिसमयों का स्रोत संसद की कानून-निर्मात्री शक्ति न होकर प्रथाएँ होती हैं। जब ये प्रथाएं धीरे धीरे प्रयोग में आते आते अपनी उपयोगिता के आधार पर प्रशासन में स्थायित्व प्राप्त कर लेती हैं तभी उनका रूप अभिसमयों का हो जाता है।

(२) अभिसमयों का पालन कानूनी या न्यायिक मान्यता के कारण नहीं किया जाता वरन् उनका पालन तो लोकमत पारस्परिक सहमति और उपयोगिता के कारण किया जाता है।

(३) अभिसमयों को कानूनी या न्यायिक मान्यता प्राप्त न होने पर भी व्यवहार में अभिसमयों को कानून जैसी पवित्रता प्राप्त होती है और उनका कानूनों के समान ही पालन किया जाता है।

1 The conventions of the constitution are the customs or understanding as to the mode in which the various members of the sovereign legislative body should exercise their discretionary authority whether it be termed prerogative of the crown or the privileges of the parliament —Dicey *Introduction to the Study of Law of the Constitution* p 445

2 Conventions consist of understandings habits or practices which though only rules of political morality regulates a large portion of the actual day to day relations, and activities of even the most importance of public authorities '
—Ogg *European Government and Politics*, p 26

अभिसमय और कानून मे भेद

व्यावहारिक प्रशासन के क्षेत्र में यद्यपि अभिसमयों का कानून की भाँति ही पालन किया जाता है, लेकिन अभिसमय और कानून में महत्वपूर्ण भेद है और अभिसमय की प्रकृति को समझने के लिए उसे जान लिया जाना चाहिए। अभिसमय और कानून में निम्न प्रकार से भेद किए जा सकते हैं

(१) कानून लिखित रूप में होते हैं अभिसमय अलिखित रूप में होते है।

(२) कानून किसी कानून निर्मात्री सत्ता की इच्छा के परिणाम होते हैं, जिनका निर्माण एक विशेष पद्धति को अपनाकर किया जाता है। अभिसमय उदाहरण या व्यवहार के परिणाम होते हैं। जब एक विशेष प्रकार का व्यवहार अपनाया जाता है और यह व्यवहार उपयोगी सिद्ध होता है, तो कालान्तर में यह अभिसमय का स्थान प्राप्त कर लेता है।

(३) कानून में निश्चितता का भाव होता है और उन्हें एक विशेष समय में लागू किया जाता है। अभिसमय अस्पष्ट और अनिश्चित होते हैं और उनके लागू किये जाने का कोई विशेष समय नही होता। एक विशेष प्रकार के व्यवहार ने अभिसमय का रूप प्राप्त कर लिया है अथवा नहीं इसके सम्बन्ध में अनेक बार वाद विवाद भी किया जाता है।

(४) कानून के पीछे राज्य की प्रभुत्वशक्ति का दबाव होता है। व्यक्ति के लिए कानून का पालन करना अनिवार्य होता है और अवज्ञा करने पर वह दण्ड का भागी होता है। परम्पराएँ राजनीतिक नैतिकता के नियममात्र हैं सैद्धान्तिक दृष्टि से जिनका पालन करना व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर करता है, यद्यपि व्यवहार में उनका पालन न करना प्रायः सम्भव नही होता।

(५) कानून न्यायालय द्वारा मान्यता प्राप्त होते हैं और न्यायालय उनकी रक्षा करते है किन्तु न्यायालय न तो परम्पराओं को मान्यता देते हैं और न ही उनकी रक्षा करते हैं। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति या शासन द्वारा कानून का उल्लंघन किए जाने पर पीडित पक्ष न्यायालय की शरण ले सकता है किन्तु किसी पक्ष द्वारा परम्पराओं का उल्लंघन किए जाने पर न्यायालय की शरण नहीं ली जा सकती।

कानून और अभिसमय के उपर्युक्त भेद मात्र सैद्धान्तिक ही हैं। जहाँ तक व्यवहार का सम्बन्ध है, अभिसमयों का कानूनों के समान ही पालन किया जाता है। जेनिंग्ज इस सम्बन्ध में ठीक ही लिखते हैं कि 'क्या कानून है और क्या अभिसमय है, ये मुख्यतः पारिभाषिक प्रश्न हैं। इनके उत्तर केवल उन्हीं को ज्ञात हैं जिनका कार्य इन्हें ज्ञात करना है। जनसाधारण के लिए इस बात का कि कोई नियम

न्यायिक अधिकारियों द्वारा अभिज्ञात है या नहीं, कोई विशेष महत्व नहीं होता।"[1]

अभिसमयों का वर्गीकरण

ब्रिटिश संविधान के सभी अभिसमयों की पूरी सूची देना सम्भव नहीं है, इनमें से प्रमुख अभिसमयों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

राजपद से सम्बन्धित अभिसमय

(१) सम्राट अपने मन्त्रियों के परामर्श से ही कार्य करता है।

(२) सम्राट् लोकसदन में बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित करता है।

(३) अभिसमय के ही आधार पर सम्राट मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता नहीं करता है।

(४) यद्यपि वैधानिक दृष्टि से सम्राट् को विधेयकों पर निषेधाधिकार प्राप्त है किन्तु यह परम्परा स्थापित हो गई है कि सम्राट विधेयक पर अपने निषेधाधिकार का प्रयोग नहीं करेगा। पिछले १५० वर्षों में सम्राट् ने अपने निषेधाधिकार का प्रयोग नहीं किया है।

(५) सिद्धान्त में सम्राट् को अधिकार प्राप्त है कि वह लोकसदन को भंग कर दे, लेकिन यह परम्परा स्थापित हो गई है कि सम्राट अपने इस अधिकार का प्रयोग प्रधानमन्त्री के परामर्श से ही करेगा।

(६) पदासीन प्रधानमन्त्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित हो जाने पर सम्राट विरोधी दल के नेता को प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित करता है।

मन्त्रिमण्डल से सम्बन्धित अभिसमय

(१) अभिसमय के अनुसार सम्राट् के मन्त्रियों के लिए संसद का सदस्य होना अनिवार्य है।

(२) संसद में किसी महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पर पराजित हो जाने पर मन्त्रिमण्डल या तो त्यागपत्र दे दे या प्रधानमन्त्री सम्राट को परामर्श दे कि उसके द्वारा लोकसदन को विघटित कर दिया जाय।

(३) अभिसमय के अनुसार ही किसी कम महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव पर लोक सदन में पराजित हो जाने पर मन्त्रिमण्डल के लिए पदत्याग करना आवश्यक नहीं है

[1] 'What is law and what is convention are primarily technical questions The answers are known only to those whose business is to know them For the mass of the people it does not matter whether a rule is recognised by the judicial authorities or not The technicians of government are primarily concerned
—*Jennings*

नवम्बर १६७२ म आव्रजा नियमा के अनुमोदन पर एडवड हीथ सरकार की पराजय हुई, लेकिन इस कारण उसने त्यागपत्र नहीं दिया।[1]

(४) यह भी अभिसमय ही है कि मन्त्रिमण्डल सामूहिक रुप से लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होते है। यदि लोकसदन किसी एक मन्त्री के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर दे ता भी समस्त मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना होता है।

(५) सामान्यतया प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्या का अपने ही राजनीतिक दल म से लेता है और अपने सहयोगियो के चुनाव मे प्रधानमन्त्री स्वतन्त्र होता है।

(६) मन्त्रिमण्डल अपनी विदेश नीति के लिए ससद का समर्थन प्राप्त करेगा और युद्ध तथा शान्ति की घोषणा के लिए प्रधानमन्त्री लोकसदन का समर्थन अवश्य ही प्राप्त करेगा।

(७) मन्त्रिमण्डल के द्वारा अपनी समस्त शक्ति के साथ घरेलू सकट का प्रतिकार किया जाना चाहिए, लेकिन इसके साथ ही उसके द्वारा ससद का आमन्त्रित कर उसम मन्त्रणा अवश्य ही की जानी चाहिए।

विधायी प्रक्रिया और ससद के दोनो सदनो के पारस्परिक सम्बन्धो से सम्बन्धित अभिसमय

(१) ससद के दो सदन होगे—लोकसदन और लार्ड सभा—यह बात अभिसमय पर ही आधारित है।

(२) सम्राट वर्ष म एक बार ससद का अधिवेशन अवश्य ही बुलाये और ससद के प्रथम अधिवेशन स दूसरे अधिवेशन के बीच एक वर्ष से अधिक का समय नही होना चाहिए।

(३) लोक सदन (House of Commons) के अध्यक्ष (speaker) के सम्बन्ध म यह परम्परा है कि अध्यक्ष' पद के लिए खडे होने के पूर्व उसे अपने राजनीतिक दल की सदस्यता त्याग देनी चाहिए। निर्वाचन म पूर्व के लोक सदन का अध्यक्ष निर्विरोध चुन लिया जाता है और वह जब तक चाहे, लोक सदन का अध्यक्ष रह सकता है।

(४) प्रत्येक विधेयक के तीन वाचन हो चुकने के बाद ही उस पर सदन म मतदान हो सकता है।

(५) जब सरकारी पक्ष की ओर से भाषण हो चुकता है तब विरोधी पक्ष की ओर म एक भाषण होता है। वस्तुत सम्राट के विरोधी पक्ष (His Majesty's Opposition) का समस्त विचार अभिसमय का ही परिणाम है।

(६) अभिसमय के अनुसार किसी वित्त विधेयक पर तभी विचार किया जा सकता है, जबकि उस विधेयक पर सम्राट की सिफारिश प्राप्त हो जाय।

(७) जब लॉर्ड सभा अपीलीय न्यायालय के रूप मे कार्य करती है, उस समय लार्ड सभा म 'लॉ लॉर्ड' को छोडकर अन्य कोई पीयर नही बैठता।

[1] दिनमान ३ दिसम्बर १६७२ पृ० ३२।

अधिराज्यों से सम्बन्धित अभिसमय

कुछ अभिसमय ऐसे हैं जो ब्रिटेन और उसके अधिराज्यों के पारस्परिक सम्बन्धों का निरूपण करते हैं। उदाहरण के लिए, प्रत्येक अधिराज्य को अपने आंतरिक और बाहरी मामलों में स्वतन्त्र देश की स्थिति प्राप्त होगी, लेकिन वह नाममात्र के लिए ब्रिटिश सम्राट के प्रति निष्ठा रखेगा। इसी प्रकार ब्रिटिश सम्राट् के उत्तराधिकार में परिवर्तन करने वाले किसी कानून के लिए अधिराज्यों की संसदों की स्वीकृति आवश्यक है। अधिराज्यों से सम्बन्धित अभिसमयों में से अधिकांश को १९३१ के वेस्टमिनिस्टर अधिनियम द्वारा कानून का रूप प्रदान कर दिया गया है।

की शक्ति के अतिरिक्त और कोई शक्ति नही है। जो लोग परम्परागत नियमो का उल्लघन करते हैं, उनका प्रत्यक्ष सघर्ष देश के कानून के साथ हो जाता है। सविधान की परम्पराएँ कानून नही ह परन्तु उनको शक्ति इस बात से मिलती है कि जो व्यक्ति उनका उल्लघन करता है अन्त मे कानून को भग करता है और उसे कानून भग करने का दण्ड मिलता ह।"

आलोचना—डायसी का उपरोक्त तर्क पूर्ण सत्य नही ह और इस अभिसमयो के पालन का आधार नही कहा जा सकता।

सर्वप्रथम, अभिसमयो का उल्लघन कानून के उल्लघन को जन्म देता ह, यह बात सभी अभिसमयो के सम्बन्ध मे नही कही जा सकती। अनेक एस अभिसमय हैं जिनके उल्लघन मे कोई कानून भग नही होता। उदाहरणार्थ, यदि लोक सदन का स्पीकर अपने दल से त्यागपत्र न दे ससद के द्वारा कानून का निर्माण करते हुए विधेयक के तीन वाचन न करके दो ही वाचन किये जायें या प्रधानमन्त्री लॉर्ड सभा से लिया जाय तो इनसे कोई कानून भग नही होता। इस प्रकार के अनेक अभिसमयो का उदाहरण देते हुए कहा जा सकता ह अभिसमयो का पालन कानून भग होने के भय से नही वरन उनकी उपयोगिता के कारण किया जाता ह।

द्वितीय, डायसी का तर्क स्वय उसके द्वारा दिये गये उदाहरण पर भी पूर्णरूप से लागू नही होता। लावेल का कहना ह कि वैधानिक दृष्टि से ससद का अधिवेशन प्रतिवर्ष होना आवश्यक नही है। क्योंकि ससद प्रभुसत्ता सम्पन्न सस्था है, अत वह कई वर्षों के लिए सेना अधिनियम पास कर सकती है वतमान करो को कई वर्षों के लिए स्वीकार कर सकती है और छोटे मोटे व्यय आकस्मिक निधि मे पूरा कर सकती है।

इन सबके अतिरिक्त डायसी का उपरोक्त विचार स्वय डायसी द्वारा ही प्रमुख रूप से प्रतिपादित ससद की प्रभुसत्ता की धारणा के प्रतिकूल है। यदि डायसी का यह मत मान लिया जाय कि परम्पराओ को कानून का समर्थन प्राप्त है, तो इससे ससद की व्यवस्थापन सम्बन्धी सर्वोच्चता खण्डित हो जाती ह, क्योंकि तब ससद उन कानूनो के बारे मे स्वच्छन्दतापूवक अपने अधिकारो का प्रयोग नही कर सकेगी, जो अपने पालन के लिए परम्पराओ के पालन पर निर्भर करते ह। डायसी ने कानून और अभिसमयो को जो एकदम अन्योन्याश्रित मान लिया है, वह अनुचित है।

लावेल का मत—लावेल के अनुसार, **अभिसमयो के पालन का कारण यह है कि वे नैतिकता के नियम हैं। ये एक प्रकार से खेल के नियम हैं और देश का वह भाग जिसके हाथ मे देश का प्रशासन ह इन अभिसमयो के प्रति जागरूक है। इसके अतिरिक्त अभिसमयों को लोकमत की शक्ति भी प्राप्त है। यदि राजसत्ता के सचालक वर्ग द्वारा अभिसमयो का उल्लघन किया जायगा तो देश मे विरोध की लहर दौड जायगी और सरकार को परास्त होना पडेगा।**'[1] अभिसमयो को प्राप्त लोकमत की शक्ति के कारण जनता के

[1] Lowell *Government of England* Vol I pp 12 13

प्रति उत्तरदायी कोई भी सरकार अभिसमयो के उल्लंघन का साहस नहीं कर सकती। ऑग तथा जिंक के द्वारा भी ऐसा ही मत व्यक्त किया गया है।

इगलण्ड मे अभिसमय को लोकमत की शक्ति प्राप्त है, इसका प्रमाण यह है कि यदि किसी अभिसमय का उल्लघन होता भी है, जसा कि १९०९ मे लार्ड सभा ने लॉयड जार्ज के प्रगतिशील बजट को अस्वीकार करके किया था, तो तुरन्त ही यह माग उठ खडी होती है कि इस अभिसमय को कानून का रूप दे दिया जाय। निर्वाचको ने उदार दल का आदेश दिया था कि वह लार्ड सभा की वित्तीय तथा विधायी शक्तियो को सीमित कर दे।

लास्की का मत—लास्की के अनुसार परम्पराओ का पालन किये जाने के दो कारण हैं। प्रथमत ये अभिसमय प्रचलित सवैधानिक सिद्धान्तो के अनुरूप और उनके क्रियान्वय म सहायक ह। उदाहरण के लिए, मन्त्रिमण्डल की बैठको के सभापतित्व के अभिसमय को ले सकते हैं। जार्ज राजाओ ने मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व करना इसलिए बन्द कर दिया था कि वे अंग्रेजी नहीं जानते थे और उन्हे इगलैण्ड की राजनीति म विशेष रुचि नहीं थी। बाद म जब जार्ज तृतीय के द्वारा मन्त्रिमण्डल की बैठको की अध्यक्षता का प्रयत्न किया गया, तो यह मन्त्रिमण्डल के विरोध के कारण असफल रहा। वास्तव म इस समय तक यह नितान्त स्पष्ट हो गया था कि मन्त्रिमण्डलीय शासन की भावना के अनुसार मन्त्रिमण्डल की बैठको की अध्यक्षता प्रधानमन्त्री द्वारा ही की जानी चाहिए, सम्राट् द्वारा नहीं।

लास्की के अनुसार अभिसमयो के पालन का दूसरा कारण यह है कि ब्रिटिश राजनीति के प्रमुख दल देश के आधारभूत राजनीतिक और सामाजिक ढाचे के सम्बन्ध म एकमत है। इसलिए जिस किसी राजनीतिक दल के हाथ म शासन की शक्ति हो, अभिसमयो का पालन किया जाता है। राजनीतिक दलो मे इस प्रकार के मतैक्य के कुछ उदाहरण ह ससदीय लोकतन्त्र मे आस्था और व्यक्तिगत सम्पत्ति पर आधारित सामाजिक व्यवस्था म विश्वास।

वास्तविक अनुशक्तियाँ

जेनिग्ज का कहना है कि "अभिसमयो का अस्तित्व केवल अपने लिए ही नहीं है उनका अस्तित्व इसलिए है कि इसके कुछ श्रेष्ठ कारण है।"[1] इस सम्बन्ध मे डायसी, लावेल, ऑग और जिंक, जेनिग्ज तथा बार्टर आदि के द्वारा जो विचार व्यक्त किये गये हैं, उनके अनुसार अभिसमयो के पालन के वास्तविक कारणो की विवेचना निम्न प्रकार ह

(१) उपयोगिता—अभिसमयो के पालन का सबसे प्रमुख कारण शासन व्यवस्था मे उनकी उपयोगिता है। ब्रिटेन की समस्त शासन व्यवस्था, विशेष रूप से मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था, अभिसमयो पर ही आधारित है और अभिसमयो के

[1] Jennings, *Cabinet Government*, p 7

उल्लंघन से ऐसी राजनीतिक कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जायेंगी कि शासन व्यवस्था का सचालन ही असम्भव हो जायगा। उदाहरण के लिए यह अभिसमय ही है कि लोक सदन का विश्वास खो देने पर मन्त्रिमण्डल या तो त्यागपत्र दे दे या नव-निर्वाचन कराये। यह इसलिए है कि यदि मन्त्रिमण्डल को सदैव विरोधी लोक सदन का सामना करना पड़े तो शासन व्यवस्था सुचारु रूप से नहीं चल सकती। इस प्रकार उपयोगिता के कारण ही उनका पालन वाछनीय तथा आवश्यक होता है। न्यूमन का कहना है कि, "**सवैधानिक अभिसमयो की वैधता राजनीतिक वास्तविकताओ द्वारा निर्धारित होती है।**"[1] वास्तव में ये ब्रिटेन में ससदीय लोकतन्त्र के खेल के नियम हैं और इनका पालन किये बिना ससदीय लोकतन्त्र का खेल नहीं खेला जा सकता।

(२) लोकमत की शक्ति—अभिसमयो को वैधानिक शक्ति प्राप्त न होने पर भी इन्हें लोकमत की शक्ति प्राप्त है और यही इनके पालन का प्रमुख कारण है। लोकतन्त्र में *शासन की अन्तिम शक्ति लोकमत की शक्ति पर* निर्भर करती है और इसी कारण जनता के प्रति उत्तरदायी कोई सरकार अभिसमयो के उल्लंघन का साहस नहीं कर सकती। ऑग तथा जिंक का कहना है—'**सुप्रसिद्ध अभिसमयो के उल्लंघन से सारे देश में विरोध का तूफान उठ खड़ा होगा। अतः सरकार तथा विरोधी दल दोनों अभिसमयो के पालन के लिए उत्सुक रहते हैं, जिससे आगामी निर्वाचन के समय उन्हें आँखें नीची न करनी पड़ें।**"

(३) ब्रिटिश जाति की राजनीतिक जागरूकता—अभिसमयो को लोकमत की शक्ति तो प्राप्त है ही, इसके साथ ही ब्रिटिश जनता राजनीतिक दृष्टि से बहुत अधिक जागरूक है और इसी कारण अभिसमयों के उल्लंघन का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। ब्रिटिश जनता में राजनीतिक चेतना का अभाव होने पर अभिसमयो के उल्लंघन की आशंका हो सकती थी।

(४) राजनीतिक दलों में मतैक्य—ब्रिटेन के वर्तमान राजनीतिक दलों में ब्रिटेन के आधारभूत राजनीतिक ढाँचे के सम्बन्ध में मतैक्य भी इन अभिसमयो के पालन का एक कारण है। ब्रिटिश राजनीति के प्रमुख दल इन अभिसमयो पर सहमत हैं और इनका पालन करते हैं, लेकिन यदि ब्रिटेन में साम्यवादी दल जैसी किसी राजनीतिक शक्ति का उदय हो जाता है जो ससदीय लोकतन्त्र में ही विश्वास नहीं करता, तो अभिसमयो के पालन की आशा नहीं की जा सकती है।

(५) ब्रिटिश जाति का स्वभाव—ब्रिटिश लोग परम्पराप्रिय और रूढ़िवादी हैं और 'वे **अभिसमयो का पालन करने के इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि उनके हृदय और मस्तिष्क स्वय ही इनका पालन करते रहते हैं।**'

(६) मनोवैज्ञानिक अनुशक्ति—अभिसमयो के पालन का कारण मनोवैज्ञानिक अनुशक्ति भी है। व्यक्तियों का स्वभाव नियमों का पालन करना है, चाहे वे नियम

[1] In the last analysis therefore, the validity of constitutional conventions will be determined by political realities —*Newman*

लिखित हो या अलिखित, विधि हो या अभिसमय। जेनिंग्ज का कहना है कि 'शासन एक सहकारी कार्य है और केवल विधि के नियम ही सामान्य कार्यवाही का उपबन्ध नहीं कर सकते।"[1]

(७) शान्ति और प्रगति की इच्छा—प्रो० स्ट्रॉग ने इस मत का प्रतिपादन किया है कि 'अभिसमयों, सामान्य विधियों और लिखित कानूनों—इन सबके पीछे एक ही अनुशक्ति है और वह है जनता की शान्ति तथा प्रगति की इच्छा।' जनता शान्ति और प्रगति चाहती है और ये सभी शान्ति तथा प्रगति के उपाय हैं। इसी कारण अभिसमयों का भी पालन किया जाता है।

ब्रिटिश संविधान में अभिसमयों का महत्त्व

लिखित संविधान प्रायः बदलते हुए सामाजिक और राजनीतिक मूल्यों के साथ नहीं चल पाते और देश तथा समाज की बदलती हुई आवश्यकताओं के अनुसार संविधान को व्यावहारिकता प्रदान करने का कार्य अभिसमयों के द्वारा ही किया जाता है। इस दृष्टि से सभी देशों के संविधानों में अभिसमयों का अस्तित्व और उनका महत्त्व होता है। किन्तु ब्रिटिश संविधान तो अलिखित ही है और जहाँ तक ब्रिटिश संविधान का सम्बन्ध है अभिसमय 'संविधान की आत्मा' ही है। ब्रिटिश संविधान में अभिसमयों का महत्त्व निम्न रूपों में बतलाया जा सकता है

(१) संविधान के विकास में सहायक—संवैधानिक मार्ग पर इंगलण्ड ने अपनी यात्रा निरंकुश राजतन्त्र के रूप में प्रारम्भ की थी किन्तु आज इंगलैण्ड में लोकतन्त्रीय शासन व्यवस्था है। राजतन्त्र से लोकतन्त्र का यह रूप इंगलण्ड को यकायक ही प्राप्त नहीं हो गया है वरन् इसके लिए उसने एक लम्बा रास्ता तय किया है। संविधान के इस विकास का कुछ श्रेय जहाँ मैग्नाकार्टा, पिटीशन आफ राइटस और बिल आफ राइटस जैसे कुछ अधिकार पत्रों को दिया जा सकता है, वहाँ अधिकांश में राजतन्त्र का लोकतन्त्रीकरण परम्पराओं द्वारा ही हुआ है। सम्राट् मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता नहीं करेगा, सम्राट लोक सदन के बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री पद प्रदान करेगा और मन्त्रिमण्डल उसी समय तक अपने पद पर रहेगा जब तक उसे लोक सदन का विश्वास प्राप्त रहे आदि इसी श्रेणी की कुछ परम्पराएं हैं। इस प्रकार राजतन्त्र से लोकतन्त्र की दिशा में संविधान का विकास अधिकांशतया परम्पराओं के कारण ही सम्भव हुआ है। डा० फाइनर ने कहा है, "राजतन्त्री संविधान को लोकतन्त्री संविधान का रूप देने में और

[1] Government is a cooperative function and rules of land alone cannot provide for common action
—Jennings *The Law and the Constitution* p 97

' These three branches of law all have the same ultimate sanction which is society s desire for peace and progress '
—*C F Strong*

सत्रहवीं शताब्दी से बीसवीं शताब्दी तक आने में ब्रिटेन के लोगों ने नये अनुच्छेद जोड़ना पसन्द नहीं किया, वे परम्पराओं के विकास पर निर्भर रहे।"[1]

(२) संविधान को कायरूप प्रदान करना—परम्परा न केवल संविधान के विकास में सहायक हुई है वरन उसे कायरूप भी प्रदान करती है। इंगलैण्ड में सम्राट् कानूनी सम्प्रभु है तथा मन्त्रिमण्डल संसद व अन्त में जनता राजनीतिक सम्प्रभु है। ऐसी स्थिति में विशुद्ध कानूनी दृष्टिकोण अपनाने पर शासन के विभिन्न पक्षों में विरोध उत्पन्न हो जायगा और अव्यवस्था फैल जायगी। अतः यह एक परम्परा है कि राजा मन्त्रिमण्डल के परामर्श को मानता है और इस परम्परा के कारण ही राजनीतिक सम्प्रभु तथा कानूनी सम्प्रभु में सामंजस्य बना हुआ है।

इसी प्रकार कुछ अन्य परम्पराएँ भी शासन के सुचारु संचालन में बहुत अधिक सहायक हैं। इन परम्पराओं के कारण मन्त्रिमण्डल और लोकसदन में सहयोग बना रहता है एवं मन्त्रिमण्डल, संसद और शासन की अन्य सभी सत्ताएँ अपनी अपनी सीमा में बनी रहती हैं। ब्रिटिश शासन व्यवस्था का समस्त संचालन इन परम्पराओं पर ही निर्भर है और आग तथा जिंक के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'परम्पराएँ कानून के सूखे ढाँचे पर मांस चढ़ाने का काम करती हैं, कानूनी संविधान को कार्यरूप देती हैं और उसे प्रगतिशील समाज की आवश्यकताओं व राजनीतिक विचारों के अनुकूल बनाये रखती हैं।'[2]

(३) शासन व्यवस्था को श्रेष्ठतम रूप प्रदान करना—परम्पराएँ न केवल संविधान की क्रियान्विती में सहायक हैं, वरन वे संविधान तथा शासन को श्रेष्ठ रूप भी प्रदान करती हैं। उदाहरण के लिए, यह एक परम्परा है कि प्रत्येक विधेयक के तीन वाचन होने चाहिए और इस परम्परा के कारण कानून निर्माण में जल्दबाजी की आशंका नहीं रहती। इसी प्रकार इस परम्परा से कि लार्ड सभा की उन बैठकों में, जिनमें वह न्यायालय के रूप में कार्य करे, कानूनी लॉर्डों को ही सम्मिलित होना चाहिए। इससे न्याय कार्य ठीक प्रकार से चलता रहता है और इस बात की आशंका नहीं रहती कि अनभिज्ञ सदस्य न्याय कार्य का खेल बना दें। ब्रिटेन में विरोधी दल की समस्त मान्यता अभिसमयों पर ही आधारित है और इसके कारण ही शासक दल अपनी सीमाओं में बँधा रहता है तथा विरोधी दल शासन कार्य में रचनात्मक योग

1 In converting monarchical into a democratic constitution and in passing from the seventeenth to the twentieth century the British eschewed writing the new articles they prefer to rely on the growth and inheritence of customs that is conventions
—Dr Finer *Government of European Powers* p 50

2 Conventions clothe the dry bones of law with flesh and make the legal constitution work and keep it abreast of social changing needs and political ideas
—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 29

देता है। ह्वीयर ने सभवतया इसी बात का लक्ष्य करते हुए कहा है कि, "अभिसमय अल्पसख्यको के अधिकारो की रक्षा करते हैं।"[1]

प्रश्न

१ सविधान के अभिसमय स आप क्या समझते ह ? अभिसमया के पीछे कौनसी अनुशक्ति है ? उदाहरण सहित समझाइए।

(पटना, १६६१, मगध १६६४ बिहार, १६६५)

२ अभिसमय और विधि म क्या अन्तर ? अभिसमया का पालन क्यो होता है ?

३ सवधानिक परम्पराओ से आप क्या समझते हैं ? ब्रिटिश सविधान से उदाहरण देते हुए उनका महत्त्व समझाइए।

४ आप सविधान के अभिसमया से क्या समझते हैं ? उनका वर्गीकरण कीजिए और ब्रिटिश सविधान म उनका महत्त्व समझाइए। (आगरा, १६६६)

५ 'सविधान के अभिसमय' क्या माने जाते है ? इगलण्ड और अमरीका के सविधाना स उदाहरण देकर अभिसमय का महत्त्व समझाइए।

(आगरा, १६६४)

६ सविधान के अभिसमय क्या हैं ? य किस प्रकार क्रियान्वित होते है ?

(आगरा १६६७)

[1] 'They provide safeguard for minority rights'
—K C Wheare, *Modern Constitutions* p 200

4

सम्राट और राजमुकुट

(KING AND THE CROWN)

"यदि सम्राट राज्य के पोत की प्रेरक शक्ति नहीं है, तो भी वह उस पोत का मस्तूल अवश्य है जिस पर पाल लटका हुआ है और इस प्रकार वह उस पोत का न केवल लाभदायक वरन् अत्यन्त आवश्यक अंग है।"[1]
—लावेल

कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान—सम्राट

ब्रिटेन में संसदीय शासन व्यवस्था है और संसदीय शासन प्रणाली की यह विशेषता होती है कि इसमें कार्यपालिका के दो प्रधान होते हैं औपचारिक प्रधान और वास्तविक प्रधान। देश की शासन सत्ता कार्यपालिका के वास्तविक प्रधान के हाथ में होती है किन्तु वास्तविक प्रधान राज्य का अध्यक्ष नहीं होता। इसके विपरीत राज्य का अध्यक्ष केवल नाममात्र का ही प्रधान होता है और उसके हाथ में कोई वास्तविक शक्ति नहीं होती। इसलिए उसे कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान कहते हैं। इंगलैण्ड में संसदीय प्रणाली की यह विशेषता विद्यमान है। सम्राट ब्रिटिश कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान है किन्तु उसके पास वास्तविक शक्तियां नहीं हैं। वास्तविक शक्तियों का प्रयोग प्रधानमन्त्री और केबीनेट के द्वारा किया जाता है, जिसे सैद्धान्तिक रूप में गौण स्थिति प्राप्त है।

इंगलैण्ड में सम्राट पद अत्यन्त प्राचीन है और इतिहास के विभिन्न चरणों में हुए संवैधानिक विकास से सम्राट की स्थिति में जितना परिवर्तन हुआ, उतना अन्य किसी पद में नहीं हुआ है।

1 If the king is no longer the motive power of the ship of the state it is the spur on which the sail is bent and as such it is not only a useful but an essential part of the vessel
—Lovell, *The Government of England* (1914) Vol I p 26

सम्राट और राजमुकुट
(King and Crown)

सम्राट वह व्यक्ति होता है जो एक विशेष समय पर ब्रिटिश राज्य के प्रमुख पद पर आसीन होता है। राजमुकुट राज्यशक्ति का वह प्रतीक है जिसे सम्राट अपने सिर पर धारण करता है। प्राचीनकाल से इस प्रकार की प्रथा चली आ रही है कि सम्राट पदधारी व्यक्ति द्वारा विधिवत समारोह के बाद जब राजमुकुट धारण कर लिया जाता था तभी से उसे शासन की समस्त शक्तिया प्राप्त होती थी। इस प्रकार राजमुकुट राजशक्ति का प्रतीक था। किन्तु प्राचीनकाल मे सम्राट और राजमुकुट के इस भेद का कोई महत्त्व नही था क्योकि सम्राट राजमुकुट था और राजमुकुट सम्राट। किन्तु वतमान समय मे जबकि ब्रिटेन म वास्तविकता की दृष्टि से राजतन्त्र के स्थान पर लोकतन्त्र की स्थापना हो गई है, सम्राट और राजमुकुट का भेद निश्चित रूप से बहुत अधिक महत्त्वपूण हो गया है और इसके बिना ब्रिटिश सविधान का यथाथ ज्ञान प्राप्त नही किया जा सकता। ग्लैडस्टन के शब्दो मे कहा जा सकता है कि, "अंग्रेजी सविधान के साहित्य में अनेक सूक्ष्म भेद हैं, पर उनमे से उतना अधिक महत्त्वपूण कोई नहीं है, जितना महत्त्वपूण सम्राट व राजमुकुट का भेद है।"[1]

सम्राट व राजमुकुट के भेद का महत्त्व

शासन पथ पर ब्रिटेन ने अपनी यात्रा एक निरकुश राजतन्त्र के रूप म प्रारम्भ की थी, किन्तु ब्रिटेन म आज लोकतन्त्र है। राजतन्त्र से लोकतन्त्र की दिशा म ब्रिटिश सविधान का जो विकास हुआ उसका सीधा-सादा रूप यह है कि व्यक्ति रूप मे राजा को जो शक्तिया प्राप्त थी व अब सस्था रूप म राजमुकुट को प्राप्त हो गई है। इस प्रकार राजा और राजमुकुट का भेद जान लेने के आधार पर ब्रिटिश सविधान का समस्त विकास समझा जा सकता है।

न केवल ब्रिटिश सविधान के विकास वरन ब्रिटिश शासन व्यवस्था के वास्तविक स्वरूप को भी राजा और राजमुकुट के भेद के आधार पर ही जाना जा सकता है। सद्धान्तिक दृष्टि स ब्रिटेन म आज भी निरकुश राजतन्त्र है क्याकि कानून निर्माण, प्रशासन और न्यायिक क्षेत्र का कोई भी एसा काय नही है जो सम्राट द्वारा न किया जा सकता हो। लेकिन ब्रिटेन म वैधानिक सत्य राजनीतिक असत्य होता है और सद्धान्तिक रूप मे राजा की जो शक्तियाँ हैं व्यवहार मे उन शक्तियो का प्रयोग स्वय राजा द्वारा नही वरन राजमुकुट द्वारा किया जाता है।

राजमुकुट क्या है?

शाब्दिक अर्थ म, राजमुकुट राजसत्ता का वह प्रतीक है जिसे सम्राट राजपद

1 There are many subtle distinctions in the vernacular of the British Government but none so vital as the distinction between the King and the Crown —*Gladstone*

ग्रहण करने के समय अपने मस्तक पर धारण करता है। किन्तु वतमान समय म राजमुकुट ने एक सवधानिक अर्थ भी प्राप्त कर लिया है। इस सवधानिक अथ म राजमुकुट एक सस्था है जिसमे व्यक्ति रूप मे सम्राट, केबीनेट, लोकसेवाएँ और वे सभी हे जिनके द्वारा प्रशासनिक सत्ता का उपभोग किया जाता है। प्रो० मुनरो न इसे 'एक कृत्रिम या विधि व्यक्ति कहा है जो न तो कभी शरीर धारण करता है और न कभी मरता ही है।'[1] सर सिडनी लो ने राजमुकुट को 'सुविधाजनक क्रियाशील उपकल्पना' कहा है और प्रो० आग राजमुकुट की व्याख्या करते हुए कहते हैं कि, "राजमुकुट सर्वोच्च कार्यपालिका तथा शासन मे नीति निर्माण की सस्था है जिसका अथ हे राजा, मन्त्रियो तथा ससद का सम्मिश्रण। यह वह सस्था है जिसको राजा की समस्त शक्तिया तथा विशेषाधिकार धीरे धीरे हस्तान्तरित कर दिये गये हैं।"[3]

वस्तुत राजमुकुट का तात्पय सम्पूण सरकार स है।

सम्राट और राजमुकुट मे भेद

सम्राट और राजमुकुट मे कुछ अत्यन्त महत्वपूण भेद ह जो इस प्रकार हैं

(१) सम्राट एक व्यक्ति है, राजमुकुट एक सस्था—सम्राट एक व्यक्ति होता है जो एक विशेष समय पर राजपद पर आसीन होता है। इसके विपरीत, राजमुकुट एक सस्था हे, यह शासनसत्ता का प्रतीक है जिसे विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक तीनो ही प्रकार की शक्तिया प्राप्त हैं। एक सस्था रूप म 'राजमुकुट' के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए आग और जिक लिखत ह, "सस्थागत राजा केवल एक प्रकार की कल्पना है जो कि सम्प्रभु, मन्त्रिगण और ससद को वास्तविक सर्वोच्च सत्ता के विलक्षण सगम के पीछे निहित है। हम सत्ता के इसी कुछ कुछ दुर्बोध सम्मिश्रण को राजमुकुट कहते हैं।"[4]

(२) सम्राट अस्थायी हे राजमुकुट स्थायी—सम्राट व्यक्ति होने के नाते जन्म लेता है और मरता है। मानव होन के नाते उसके साथ मानव जीवन की समस्त क्रियाएँ लगी हुई ह। उसे सिंहासन च्युत किया जा सकता है और वह स्वय

1 The Crown is an artificial or juristic person it is not incarnate and it never dies —*Munro*

2 The Crown is a convenient working hypothesis —*Sir Sydney Low*

3 It is the supreme executive and policy-framing agency in the government which means a wholesome combination of sovereign ministers and parliament It is the institution to which substantially all prerogatives and powers once belonging to the king in person have gradually been transferred —*Ogg*

4 The institutional king is only a sort of fiction standing back of the actual supreme authority embodied in a subtle association of sovereign ministers and parliament This somewhat intangible synthesis of authority is what we call the Crown
—Ogg & Zink *Modern Foreign Government*, p 48

भी सिंहासन का त्याग कर सकता है। इसके विपरीत राजमुकुट जो एक संस्था है न कभी जन्म ग्रहण करती है और न ही कभी उसकी मृत्यु होती है। ब्रिटिश कानून के प्रसिद्ध व्याख्याता ब्लैकस्टोन ने इसे व्यक्त करते हुए कहा है, "हेनरी एडवर्ड तथा जार्ज की मृत्यु हो सकती है लेकिन सम्राट सदैव ही जीवित रहते हैं।"[1] उसका अभिप्राय यह था कि एक विशेष समय पर सम्राट पद पर आसीन व्यक्ति की मृत्यु निश्चित है, परन्तु सम्राट का पद, जिसे राजमुकुट कहा जाता है, अमर है। इसी अभिप्राय को व्यक्त करने के लिए इंगलैण्ड में यह लोकोक्ति भी प्रसिद्ध है कि 'सम्राट मृत है, सम्राट चिरजीव हो' (The king is dead, long live the king)।

(३) सम्राट वैयक्तिक है राजमुकुट सामूहिक—सम्राट और राजमुकुट में एक अन्य अन्तर वैयक्तिकता और सामूहिकता का है। सम्राट का रूप वैयक्तिक है, राजमुकुट का रूप सामूहिक। राजमुकुट की शक्तियों का प्रयोग एक व्यक्ति द्वारा न होकर अनेक व्यक्तियों द्वारा होता है। अतः राजमुकुट का रूप सामूहिक है तथा शक्ति का प्रयोग करने वाले इस समूह में संसद, मन्त्रिमण्डल व लोकसेवा के सदस्य सम्मिलित हैं। वेड और फिलिप्स ने राजमुकुट के सामूहिक स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "राजमुकुट शब्द से शासन की सम्पूर्ण शक्ति के योग का बोध होता है और वह कार्यपालिका का पर्यायवाची है। राजमुकुट की कुछ शक्तियों के प्रयोग में राजा से व्यक्तिगत विवेक से काम लेने के लिए कहा जा सकता है, कुछ का प्रयोग राजा मन्त्रियों के पूर्ण दायित्व पर करता है क्योंकि कानूनों पर आधारित अधिकांश शक्तियाँ मन्त्रियों को ही प्राप्त हैं और यद्यपि उनका प्रयोग राजा के नाम पर किया जाता है तथापि मन्त्रिगण ही सरकारी तौर पर उसका वास्तविक प्रयोग करते हैं।"[2]

(४) वास्तविक प्रशासन में सम्राट शक्तिहीन है, राजमुकुट सर्वशक्तिशाली—भूतकाल में सम्राट वास्तविक प्रशासन में सर्वाधिक शक्तिशाली था किन्तु प्रजातन्त्र की दिशा में संवैधानिक विकास के साथ साथ सम्राट की शक्तियों का ह्रास होता गया और सम्राट के हाथ से शासन की शक्ति निकलकर मन्त्रिमण्डल तथा संसद को प्राप्त होती रही। वर्तमान समय में वास्तविक प्रशासन में सम्राट को कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। किन्तु राजमुकुट एक संस्था है, जिसमें सम्राट के अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल

[1] "Henry Edward or George may die, but the king survives them all" —*Blackstone*

[2] 'The term Crown' represents the sum total of government powers and is synonymous with the executive In the exercise of some of the powers of the Crown the king may be called upon to exercise a personal discretion others are exercised by the king on the sole responsibility of ministers for the majority of the statutory powers are conferred upon ministers as such and are exercised by them in their official capacity though they are none the less exercised on behalf of the Crown

—Wade and Philips *Constitutional Law*, p 12

और ससद भी सम्मिलित है। अत व्यक्ति रूप म सम्राट के हाथ से शक्तियाँ निकल कर राजमुकुट सस्था को प्राप्त होती रही है और आज राजमुकुट सवशक्तिशाली है। ब्रिटेन मे यह कहावत प्रचलित है कि, 'जसे जैसे प्रजातन्त्र का विकास होता है, राजमुकुट का शक्ति बढती जाती है' (As democracy grows, Crown be comes stronger) विरोधाभास प्रतीत होने पर भी यह नितात सत्य है।

सम्राट के उत्तराधिकार के नियम

सम्राट के उत्तराधिकार के सम्बन्ध म यही नियम प्रचलित है कि सम्राट अथवा साम्राज्ञी का ज्येष्ठ पुत्र अथवा पुत्री सिंहासनाधिकारी हों, किन्तु यदि किसी राजा का पुत्र हो ही नही या राजा को किसी कारण पदच्युत कर दिया गया हो, तो उसके उत्तराधिकार की व्यवस्था ससद करती है। उदाहरण के लिए, सन १६८६ मे स्टुअट वश के राजा जेम्स द्वितीय के इगलैण्ड छोड देने पर ब्रिटिश ससद ने ही विलियम और मेरी को राजा और रानी बनाया और सन १७०१ म रानी ऐन के कोई सन्तान न होने के कारण ससद ने उत्तराधिकार नियम पारित कर हैनोवर वश के राजा जाज प्रथम को सम्राट का पद प्रदान किया। वतमान समय मे सम्राट के उत्तराधिकार नियम **'सन १७०१ के उत्तराधिकार नियम'** (Act of Settlement) द्वारा ही निर्धारित किये जाते हैं। ससद को इन नियमो मे परिवतन करने का अधिकार है। सन १६३१ के वस्टमिनिस्टर अधिनियम पारित हो जाने स अब यह अनिवाय हो गया है कि राजा के उत्तराधिकार नियमों, पद और उपाधि आदि मे कोई परिवतन करते समय ब्रिटिश ससद अधिराज्यो के विधानमण्डलो की भी स्वीकृति प्राप्त करे। राजा के अस्वस्थ हो जाने या राजा के अल्पवयस्कता की स्थिति मे ससद सरक्षक की नियुक्ति करती है। सामान्य प्रथा यह है कि राजा का निकटतम उत्तराधिकारी ही सरक्षक बनाया जाता है। वतमान समय मे राजसिंहासन को रानी एलिजाबेथ द्वितीय सुशोभित कर रही है।

राजमुकुट की शक्तियाँ (सिद्धान्त रूप मे सम्राट की शक्तियाँ)

सिद्धान्त रूप मे ब्रिटिश सम्राट को अत्यन्त व्यापक शक्तिया प्राप्त हैं। कानून के अनुसार वह व्यवस्थापिका का अविभाज्य अग प्रशासन का अध्यक्ष तथा इगलण्ड, वेल्स, उत्तरी आयरलण्ड और स्काटलण्ड मे न्यायपालिका का प्रधान है। वह समस्त सैन्य शक्तिया का नियन्ता और चच का अध्यक्ष भी है। उसे ब्रिटिश राज्य का मानवीकृत रूप कहना अनुचित न होगा। सम्राट की शक्तियो का अध्ययन करने के पूव हमारे द्वारा उनकी शक्तिया के स्रोत जान लिय जाने चाहिए।

सम्राट की शक्तियों के स्रोत—सम्राट की शक्तियो का विकास दो स्रोतो स हुआ है राजकीय विशेषाधिकार (Prerogatives) और ससदीय अधिनियम।

राजकीय विशेषाधिकार—ससद के उदय के पूव समस्त शक्तियाँ सम्राट के ही हाथो मे व्यक्तिगत रूप मे निहित थी। बाद म जब ससद का विकास हुआ और शनै-शनै वह सम्राट की शक्तियो को अपने हाथो लेती गयी, तो सम्राट की य

(३) राज्य के सभी उच्च अधिकारी और जल, थल तथा नभ सेना के समस्त पदाधिकारी राजमुकुट के द्वारा ही नियुक्त किये जाते हैं।

(४) ग्रेट ब्रिटेन के अन्य देशों के साथ सम्बन्ध, औपनिवेशिक राज्य तथा अधीनस्थ प्रदेशों का शासन आदि कार्य राजमुकुट द्वारा ही निर्धारित और सम्पादित किये जाते हैं।

(५) राजमुकुट ही राजदूतों और वाणिज्य दूतों की नियुक्ति करता है।

(६) युद्ध की घोषणा तथा सन्धिवार्ता भी राजमुकुट के अधिकार के अन्तर्गत ही आते हैं।

(७) राजमुकुट के द्वारा अपराधियों को क्षमा प्रदान करने या उनके दण्ड को कम करने का कार्य किया जा सकता है।

(८) स्थानीय स्वशासन की देखभाल भी राजमुकुट के द्वारा ही की जाती है, क्योंकि इंगलैण्ड में स्थानीय स्वशासन केन्द्रीय सरकार के अधिकार में ही है।

(९) राजमुकुट राष्ट्रीय कोष का नियन्त्रण व संचालन करता है। राष्ट्रीय बजट भी राजमुकुट की ओर से ही प्रस्तुत किया जाता है और वही बजट की धन राशि को कार्यरूप में लाता है।

(१०) मन्त्रिगण व्यक्तिगत या सामूहिक रूप में जो भी कार्य करते हैं, वे सब राजमुकुट के नाम से ही किये जाते हैं।

इस प्रकार कार्यपालिका क्षेत्र में राजमुकुट की कार्यपालिका शक्तियाँ अत्यन्त व्यापक हैं। ओग राजमुकुट की कार्यपालिका शक्तियों की तुलना अमरीकी राष्ट्रपति से करते हुए लिखते हैं कि, "ठीक उसी प्रकार से जिस प्रकार संयुक्त राज्य का राष्ट्रपति राष्ट्रीय प्रशासन की व्यापक शाखाओं का संचालन करता है ब्रिटेन में राजमुकुट के नाम से प्रसिद्ध सामूहिक शक्ति अपनी देखभाल व नियन्त्रण में राष्ट्रीय कानूनों को लागू करती है, राष्ट्रीय कर वसूल करती है और राष्ट्रीय व्यय का प्रबन्ध तथा अनेक ऐसे कार्य करती है, जिनका करना देश का शासन प्रबन्ध चलाने के लिए आवश्यक है।"

व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियाँ—राजमुकुट को व्यवस्थापन सम्बन्धी अनेक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। ब्रिटेन में कानून निर्माण की शक्ति 'संसद में राजा' (King in Parliament) को प्राप्त है। इस प्रकार राजमुकुट के द्वारा संसद के साथ मिलकर व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियों का उपभोग किया जाता है। इस सम्बन्ध में राजमुकुट की शक्तियाँ निम्न प्रकार हैं

(१) संसद के दोनों सदनों में से द्वितीय सदन (लार्ड सभा) के निर्माण के सम्बन्ध में राजमुकुट को शक्ति प्राप्त है। राजमुकुट को पीयर बनाने का अधिकार प्राप्त है। राजा के द्वारा जिन लोगों को पीयर बनाया जाता है, केवल वे ही लार्ड सभा के सदस्य होते हैं। लोक सदन के चुनाव की तिथि भी लार्ड सभा के द्वारा ही घोषित की जाती है।

(२) राजमुकुट संसद के दोनों सदनों का अधिवेशन बुलाता और स्थगित करता है। लार्ड सभा तो एक स्थायी सदन है लेकिन राजमुकुट लोक सदन का विघटित कर सकता है।

(३) संसद के प्रारम्भ में सम्राट भाषण देता है जिसमें देश की नीति पर प्रकाश डाला जाता है। वास्तविकता यह है कि सम्राट का भाषण उसके मन्त्रियों द्वारा ही तैयार किया जाता है और राजा इसमें किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं कर सकता है।

(४) कोई भी विधेयक उस समय तक कानून का रूप नहीं ले सकता जब तक कि उस पर सम्राट के हस्ताक्षर न हो गये हों।

(५) राजमुकुट को अधिराज्यों के सम्बन्ध में घोषणाएँ करने व अध्यादेश जारी करने का अधिकार है।

(६) पिछले कुछ वर्षों से राजमुकुट को व्यवस्थापन क्षेत्र में एक और शक्ति प्राप्त हो गया है और वह है परिषद आदेश (Orders in Council) जारी करने की शक्ति। वर्तमान समय में व्यवस्थापन कार्य इतना अधिक बढ़ गया है कि संसद समस्त कार्य नहीं कर पाती। परिणामस्वरूप अनेक विधेयकों के सम्बन्ध में वह केवल मोटी रूपरेखा पारित कर देती है और सूक्ष्म बातों की पूर्ति करना वह राजमुकुट पर छोड़ देती है, जिसे वह मन्त्रियों और प्रशासनिक विभागों के माध्यम से करता है। ये ही परिषद आदेश हैं और इन्हें राजमुकुट के नाम से ही जारी किया जाता है।

न्याय सम्बन्धी शक्तियाँ—सम्राट को 'न्याय का स्रोत' (Fountain of Justice) कहा जाता है और न्यायिक क्षेत्र में भी उसे कुछ शक्तियाँ प्राप्त हैं। ब्रिटेन के सभी न्यायालय सम्राट के न्यायालय कहलाते हैं। सम्राट ही न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है तथा संसद की प्रार्थना पर उन्हें उनके पद से भी हटा सकता है। वह अपराधियों के दण्ड को कम कर सकता या उन्हें क्षमा प्रदान कर सकता है। उपनिवेशों व अधिराज्यों की अन्तिम अपीलें राजमुकुट ही सुनता है।

धार्मिक क्षेत्र में शक्तियाँ—सम्राट को धार्मिक क्षेत्र में भी कुछ शक्तियाँ प्राप्त हैं। इंगलैण्ड में ऐंग्लिकन चर्च है और रानी ऐलिजाबेथ के समय से ही सम्राट उसका प्रमुख है। वह चर्च के समस्त अधिकारियों जैसे आर्क बिशप (Archbishop), बिशप (Bishop) डीन (Dean) और कैनन (Cannon) की नियुक्ति करता है। सम्राट कैण्टरबरी और यार्क के धार्मिक सम्मेलन बुलाता है और इन सम्मेलनों द्वारा पारित नियमों पर सम्राट के हस्ताक्षर उसी प्रकार आवश्यक है, जिस प्रकार संसद द्वारा पारित विधेयकों पर उसके हस्ताक्षर जरूरी हैं। सन् १९१९ से चर्च के प्रबन्ध के लिए **'नेशनल असेम्बली'** (National Assembly) नामक संस्था की स्थापना हो गयी और इस सभा द्वारा पारित नियमों पर भी राजमुकुट की अन्तिम स्वीकृति आवश्यक है। सम्राट ब्रिटिश चर्च की ही भाँति स्काटलैण्ड के **'प्रिसबिटेरियन चर्च'**

का भी सर्वोच्च प्रमुख है। धार्मिक क्षेत्र में सम्राट की इस स्थिति के कारण ही उसे 'धर्मरक्षक' कहा जाता है।

सम्मान का स्रोत—राजमुकुट को अधिकार प्राप्त है कि वह ब्रिटिश नागरिकों को सम्मानसूचक उपाधियां प्रदान कर सके। इस प्रकार की उपाधियों में ड्यूक, बैरन, अर्ल, नाइट तथा लार्ड की उपाधियां प्रमुख हैं।

सम्राट की वास्तविक स्थिति (सम्राट राज करता है, शासन नहीं)

सैद्धान्तिक दृष्टि में सम्राट की जिन शक्तियों का उल्लेख किया गया है व्यवहार में उन शक्तियों का प्रयोग सम्राट द्वारा नहीं वरन् केबीनेट द्वारा ही किया जाता है। सम्राट तो कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान है, जो राज्य करता है शासन नहीं। ब्रिटेन में संसदीय शासन व्यवस्था है और इस कारण प्रत्येक सार्वजनिक कार्य के लिए मन्त्रिगण संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। यह नितान्त स्वाभाविक है कि शक्ति और उत्तरदायित्व साथ साथ चलते हैं अतः वास्तविक रूप में शासन की शक्तियों का प्रयोग भी मन्त्रिगणों के द्वारा ही किया जाता है, सम्राट द्वारा नहीं। सम्राट की शक्तियों का वर्णन करते हुए फाइनर ठीक ही कहता है कि, 'यह विशाल, गगनचुम्बी तथा वैभवपूर्ण अट्टालिका है जिसके अन्दर राजनीतिक शक्ति का एक शून्य स्थान है।'[1]

ट्यूडर काल तक सम्राट का पद वास्तव में शक्ति और प्रभाव का पद था। महारानी एलिजाबेथ प्रथम एक शक्तिशाली शासिका थी किन्तु उनके बाद से ही सम्राट पद की शक्तियां कम होनी प्रारम्भ हो गयीं। सत्रहवीं सदी में असीमित राजतन्त्र और मर्यादित राजतन्त्र के समर्थकों के बीच जो संघर्ष हुआ उसके परिणाम सम्राट पद के लिए घातक हुए। सन् १६४६ में सम्राट पद को समाप्त करके गणतन्त्र की स्थापना की गई। यद्यपि यह गणतन्त्र ११ वर्ष ही चला और १६६० में सम्राट पद को पुनर्जीवित कर चार्ल्स द्वितीय को सम्राट बना दिया गया, किन्तु इसके साथ सम्राट पद की शक्तियां पुनर्जीवित न हो सकीं। अब 'सम्राट प्रशासन में छायामात्र ही रह गया और वास्तविकता संसद के हाथ में पहुंच गई। १६८८ की गौरवपूर्ण क्रान्ति ने सम्राट पद की शक्तियां सदैव के लिए कम कर दीं और सम्राट पर संसद की सर्वोच्चता स्थापित हो गई। इसके बाद जैसे-जैसे केबीनेट का विकास होता गया, वैसे वैसे दैनिक प्रशासन में भी सम्राट पद का महत्त्व कम होता गया। सम्राट की शक्तियों के ह्रास में हैनोवर वंश ने बहुत योग दिया। हैनोवर वंश के प्रथम दो राजा (जार्ज प्रथम और जार्ज द्वितीय) न तो अंग्रेजी भाषा से परिचित थे और न ब्रिटिश राजनीति में उनकी कोई रुचि थी। अतः उनके द्वारा मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता न की जाने पर प्रधानमन्त्री के पद का विकास हुआ। जार्ज

[1] 'It is a vast sky flying figure of splendour with a political power vaccum inside —H Finer

तृतीय ने राजपद की शक्तिया को पुनर्जीवित करने की अथक चेष्टा की किन्तु वे इसमे सफल नही हुए। अब प्रधानमन्त्री तथा केबीनेट के सदस्यो की नियुक्ति और पदच्युति के सम्बन्ध मे निश्चित परम्पराएँ स्थापित हो गयी और सम्राट इस सम्बन्ध मे अपने विवेक का प्रयोग नही कर सकता था। सन १८३४ म विलियम चतुथ ने ससद मे बहुमत रहते हुए मेलबोर्न मन्त्रिमण्डल को पदच्युत करने का प्रयत्न किया था, किन्तु वह इसमे सफल नही हुआ। समस्त अनिच्छा के बावजूद १८३३ मे सम्राट को प्रथम सुधार अधिनियम पर अपनी स्वीकृति देनी पडी और रानी विक्टोरिया (१८३७ १९०१) तक सम्राट का पद पूणतया मर्यादित शक्तियो का पद बन गया। १९३६ मे जब सम्राट एडवड अष्टम को श्रीमती सिम्पसन से विवाह करने के लिए राजसिंहासन छोडना पडा तो यह बात नितान्त स्पष्ट हो गई कि विवाह जसी व्यक्तिगत बात मे भी सम्राट स्वतन्त्र नही है और उसे अपने मन्त्रियो की इच्छा के सम्मुख झुकना पडता है।

वतमान समय मे सम्राट शासन का औपचारिक प्रधान है तथा उसके अधिकार नाममात्र के है। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति के सम्बन्ध म निश्चित परम्पराएँ हैं और वह लोक सदन के बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री पद प्रदान करने के लिए बाध्य है। केबीनट के अन्य सदस्यो की नियुक्ति म प्रधानमन्त्री की इच्छा सर्वोपरि होती है। प्रशासनिक अधिकारी वग की नियुक्ति लोक सेवा आयोग द्वारा की जाती है और इसम सम्राट की इच्छा का कोई महत्त्व नही है। सम्राट की व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियों के विषय म भी यही स्थिति है। ससद के दोनो सदनो का अधिवशन बुलाने और स्थगित करन का काय निश्चित परम्पराओ और प्रधानमन्त्री की मन्त्रणा के आधार पर किया जाता है। जहा तक लोक सदन को विघटित करने की शक्ति का सम्बन्ध है सम्राट इस शक्ति का प्रयोग प्रधानमन्त्री की मन्त्रणा के आधार पर ही कर सकते है। ससद म सम्राट के द्वारा जो भाषण पढा जाता है, वह मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही तयार किया हुआ होता है और सम्राट इसम कोई परिवतन नही कर सकत। यद्यपि सद्धान्तिक रूप मे सम्राट की स्वीकृति के बिना कोई विधेयक कानून नही बन सकता किन्तु व्यवहार मे सम्राट किसी विधयक को अस्वीकृत नही कर सकता है। निषेधाधिकार इस दृष्टि से अब एक मत प्रथा है कि पिछले २५० वर्षों म इसका कभी प्रयोग नही किया गया है। यदि सम्राट कभी निषेधाधिकार के प्रयोग का दुस्साहस करे तो यह सम्राट पद की समाप्ति के लिए वातावरण तयार करना ही होगा।

सम्राट की अन्य शक्तिया के सम्बन्ध मे भी यही सत्य है। सम्राट को न्याय का स्रोत समझा जाता है किन्तु इसका अथ यह नही है कि वह देश की न्यायिक कायवाही म कोई हस्तक्षेप कर सकता है। सन १७०१ के 'उत्तराधिकार अधिनियम' के अनुसार न्यायाधीश सदाचार पयन्त अपने पद पर काय करत हैं और सम्राट उन्हे पदच्युत नही कर सकता। सम्राट अपराधियो को क्षमा प्रदान करन की शक्ति

का प्रयोग भी गृहमन्त्री के परामर्श के आधार पर ही कर सकता है। राजा को सम्मान का स्रोत कहा जाता है किन्तु उपाधियाँ वितरित करने का कार्य वह अपने ही विवेक के आधार पर नहीं कर सकता। पियर या लार्ड बनाने के सम्बन्ध में उसे प्रधानमन्त्री के परामर्श के अनुसार ही कार्य करना होता है और अन्य उपाधियाँ प्रदान करने के सम्बन्ध में भी स्थिति यही है। इस प्रकार यह नितान्त स्पष्ट है कि राजा के अधिकार शून्यवत् हैं, वे औपचारिक हैं, वास्तविक नहीं। सैद्धान्तिक रूप में सम्राट के जो भी अधिकार बतलाये जाते हैं, व्यवहार में उनका प्रयोग प्रधानमन्त्री और अन्य मन्त्रियों के द्वारा ही किया जाता है और वे ही इसके लिए उत्तरदायी भी होते हैं। भूतपूर्व ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ग्लैडस्टन ने इसी तथ्य को इन शब्दों में रखा है, '**राज्याभिषेक से मृत्युपर्यन्त राजा के जीवन में कोई क्षण ऐसा नहीं होता, जबकि किसी सार्वजनिक कार्य के लिए वह ब्रिटिश संसद के प्रति उत्तरदायी न हो, और राजमुकुट की शक्तियों का कोई ऐसा प्रयोग नहीं हो सकता, जिसके लिए वह किसी मन्त्री को उत्तरदायी होने के लिए तैयार न पा सके।**"

सम्राट कोई त्रुटि नहीं कर सकता
(The King can do no Wrong)

वर्तमान समय में शासन व्यवस्था के अन्तर्गत सम्राट की वास्तविक स्थिति को स्पष्ट करने के लिए एक शब्दावली का प्रयोग किया जाता है और वह है '**सम्राट कोई त्रुटि नहीं कर सकता**'। शाब्दिक दृष्टि से इसका अर्थ यह है कि सम्राट जो कुछ भी करता है, ठीक ही करता है और उसके किसी भी कार्य में कोई त्रुटि नहीं होती। किन्तु सम्राट के सम्बन्ध में प्रचलित इस कहावत का संवैधानिक महत्व भी है जिसे निम्न रूपों में समझा जा सकता है

(१) **सम्राट कानून से ऊपर है**—सम्राट कोई त्रुटि नहीं कर सकता'। अतः स्वाभाविक रूप से वह कानून से परे होता है और उसके विरुद्ध कोई कानूनी कार्यवाही नहीं की जा सकती। ब्रिटिश सम्राट न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से मुक्त है और उसके विरुद्ध किसी भी न्यायालय में दीवानी या फौजदारी अभियोग नहीं चलाया जा सकता। कानून की दृष्टि में राजा कभी अपराधी हो ही नहीं सकता। डायसी के अनुसार, "**सम्राट प्रधानमन्त्री को गोली मार दे, तो भी इंगलैण्ड में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है जिसके अनुसार उसके विरुद्ध कार्यवाही की जा सके।**"

(२) **सम्राट स्वविवेक से नहीं वरन् केबीनेट के परामर्श से कार्य करता है, अतः उसके कार्यों के लिए केबीनेट ही उत्तरदायी है**—सम्राट कोई भी कार्य स्वविवेक से नहीं करता, उसके द्वारा अपने सभी कार्य केबीनेट के परामर्श से ही किये जाते हैं। काटर के शब्दों '**राजमुकुट की शक्तियों का उसी प्रकार से प्रयोग किया जाता है, जिस प्रकार से संसद के समर्थन के आधार पर केबीनेट उनका प्रयोग करना चाहती है।**" स्वाभाविक रूप से सम्राट के नाम से किये गये कार्यों के लिए सामूहिक रूप से केबीनेट या व्यक्तिगत रूप से सम्बन्धित मन्त्री ही

उत्तरदायी है, स्वयं सम्राट नहीं। लार्ड ईशर (Lord Esher) ने इस स्थिति की ओर लक्ष्य करते हुए कहा है कि, "राजा के बहुत से विशेषाधिकार है पर जब उनको कार्य रूप में परिणित किया जाता है तब केवल संसद के प्रति उत्तरदायी मन्त्री के परामर्श पर उनका प्रयोग हो सकता है।"[1] आगे वे लिखते हैं कि, "मन्त्रि-मण्डलीय उत्तरदायित्व राजतन्त्र का संरक्षक है। इसके अभाव में राजतन्त्र राजनीतिक झगड़ो की आंधियों तथा राजनीतिक तूफानो के बीच अधिक समय तक नहीं ठहर सकता है।"[2] इसी प्रकार लार्ड अर्सकिन (Lord Erskine) का इस सम्बन्ध में विचार है कि, "राजा ऐसा कोई अन्तःकरण नहीं रख सकता, जो उत्तरदायी नागरिकों की धरोहर न हो सभी व्यक्तियों में दोष हो सकते हैं परन्तु हमारे शासन की बुद्धिमत्ता उन दोषो को राजा से दूर रखती है। वह कोई भी कार्य बिना परामर्श के नहीं कर सकता और जो कुछ किया गया है, उसकी स्वीकृति पदारूढ व्यक्ति देता है, चाहे वह कार्य किसी भी स्रोत से प्रारम्भ हुआ हो।"

इस प्रकार राजा कोई भी कार्य स्वविवेक के आधार पर नहीं करता और इस कारण उससे कोई त्रुटि होने की आशंका नहीं है। कहा जाता है कि एक बार चार्ल्स द्वितीय के शयन कक्ष के द्वार पर एक दरबारी ने निम्न पंक्तियां लिख दी थी

यहां सोते हैं सम्राट हमारे अधिराज
विश्वास नहीं करता जिनकी बातो का कोई।
कभी कम अक्ली की बात नहीं कहते हैं,
और न करते हैं बुद्धि की बात ही कोई॥"

इन पंक्तियो को पढ़कर राजा चार्ल्स ने कहा था, "यह नितान्त सत्य है क्योंकि राजा की बातें तो अपनी होती है, उसके कार्य उसके मन्त्रियों के होते हैं।"[3]

(३) अवैधानिक कार्य के लिए किसी को सम्राट के नाम पर उन्मुक्ति नहीं मिल सकती है—उपरोक्त सूत्र एक और सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है और वह

[1] 'The King has many prerogatives but when translated into action they must be exercised on the advice of a minister responsible to Parliament' —*Lord Esher*

"Ministerial responsibility is the safeguard of the monarchy Without it the Throne cannot stand for long amid the gusts of political conflicts and the storms of political passion
—Lord Esher *Journals and Letters* p 92

[3] 'Here lies our sovereign Lord the King
Whose words no one relies on
He never says a foolish thing
Nor ever does a wise one

Very true' retorted the King because 'While *my* words are my own my acts are of my ministers

यह है कि कोई भी व्यक्ति अपने अवैधानिक कार्य के लिए सम्राट के नाम पर मुक्ति प्राप्त नही कर सकता। इस सम्बन्ध मे सीधा सादा तर्क यह है कि जब सम्राट स्वय कोई त्रुटि नही करता, तो उसके द्वारा किसी को गलती करने के लिए अधिकृत भी नही किया जा सकता है। कोई भी मन्त्री अपने द्वारा किये गये अवैध कार्यो के लिए सम्राट के आदेशो की शरण नही ले सकते और सम्राट की वध उन्मुक्तियो के नाम पर अपनी रक्षा नही कर सकते। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन १६७८ के 'थामस आसबोन अर्ल आफ डेन्बी' के अभियोग मे हुआ है। डेन्बी पर फ्रास स्थित ब्रिटिश राजदूत को एक पत्र लिखने के अपराध मे ससद ने उन पर फौजदारी और दुश्चरित्रता का अभियोग लगाया। डेन्बी ने अपने बचाव मे कहा कि उक्त पत्र सम्राट के आदेश के आधीन लिखा गया था और सम्राट कोई गलती नही कर सकता। अत वह दोषी नही है। स्वय सम्राट के द्वारा भी डेन्बी के कथन की पुष्टि करते हुए अपनी ओर से क्षमादान का प्रस्ताव रखा गया। लेकिन ससद ने डेन्बी के तर्क को अस्वीकार करते हुए कहा कि मन्त्री की त्रुटियो के लिए स्वय मन्त्री ही उत्तरदायी है, सम्राट नही। तभी से यह सिद्धान्त चला आ रहा है कि मन्त्री या अन्य कोई अधिकारी अपने अवैध कार्यो के लिए सम्राट के नाम पर मुक्ति नही प्राप्त कर सकता।

प्रशासन मे सम्राट की स्थिति और प्रभाव

ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे सम्राट की वास्तविक स्थिति को समझने के लिए हमारे द्वारा 'शक्ति' और 'प्रभाव' मे अन्तर कर लिया जाना चाहिए। यह तथ्य है कि ब्रिटिश सम्राट एक सवैधानिक शासक मात्र है और वह राज्य करता है, शासन नही। लेकिन इस आधार पर वास्तविक प्रशासन मे उसे एक 'स्वर्णिम शून्य' (golden zero) या 'रबड की मोहर' (Rubber stamp) नही कहा जा सकता। ग्लैडस्टन के शब्दो मे, "सत्रहवीं सदी मे सम्राट की स्थिति मे जो परिवर्तन हुए हैं, उनके कारण शक्ति के स्थान पर लाभदायक प्रभाव की स्थापना हो गयी है।"[1]

वास्तविक प्रशासन मे सम्राट एक निष्क्रिय इकाई नही है। ब्रिटिश राज्य का प्रमुख होने के नाते ब्रिटिश राज्य और जनता के हितो की रक्षा उसका पवित्र कर्तव्य है और अपने इस कर्तव्य को पूरा करने के लिए उसके द्वारा निरन्तर अपने प्रभाव का उपभोग किया जाता है। सम्राट अपने इस प्रभाव का उपयोग किस प्रकार कर सकते हैं इसे स्पष्ट करते हुए बजहॉट का कहना है कि, "प्रशासन तथा नीति निर्धारण के सम्बन्ध में सम्राट को तीन महत्त्वपूर्ण राजनीतिक अधिकार प्राप्त हैं परामर्श के लिए पूछे जाने का अधिकार, प्रोत्साहित करने का अधिकार और चेतावनी देने का अधिकार।" इन अधिकारो का महत्त्व बतलाते हुए आगे वे लिखते

1 Beneficial substitution of influence for power —*Gladstone*

हैं कि, "एक बुद्धिमान सम्राट को इनके अतिरिक्त अन्य किन्हीं अधिकारों की आवश्यकता भी नहीं है।"[1]

सम्राट अपने इन अधिकारों के आधार पर वास्तविक प्रशासन को किस सीमा तक प्रभावित करता है, इस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता, क्योंकि संसदीय शासन की परम्परा के अनुसार सम्राट और प्रधानमन्त्री के मध्य की मन्त्रणा को गुप्त रखा जाता है लेकिन फिर भी शासन पर सम्राट के प्रभाव के कुछ निश्चित प्रमाण उपलब्ध हैं।

रानी विक्टोरिया का जो पत्र व्यवहार प्रकाशित हुआ है और हैरल्ड निकलसन के द्वारा सम्राट पंचम की जो आत्मकथा (George V His Life and Reign) लिखी गई उनसे यह बात नितान्त स्पष्ट हो जाती है कि सम्राट चाहे कितना ही शक्तिहीन क्यों न हो गया हो, वह अब भी प्रशासनिक क्षेत्र में घटनाचक्र को पर्याप्त सीमा तक प्रभावित करने की क्षमता रखता है। यह एक सर्वविदित बात है कि रानी विक्टोरिया के द्वारा वास्तविक प्रशासन में निरन्तर हस्तक्षेप किया जाता था और उनके द्वारा अनेक बार किन्हीं विशेष व्यक्तियों को मन्त्रिमण्डल में शामिल करवाने या न करवाने में सफलता प्राप्त की गई। यद्यपि उनके अधिकारी इतने प्रभावशाली नहीं थे लेकिन ब्रिटिश राजनीति पर उनका प्रभाव नगण्य नहीं है। एडवर्ड सप्तम ने लायड जार्ज के विवादास्पद बजट और लार्ड सभा के सुधारों में सक्रिय भूमिका अदा की थी और वे वैदेशिक सम्बन्धों के क्षेत्र में तो विशेष रूप से सक्रिय थे। उनके एक घनिष्ट सहयोगी लार्ड ईशर का तो विचार है कि उन्होंने रानी विक्टोरिया की अपेक्षा भी अधिक महत्त्वपूर्ण ढंग से शासन कार्य को प्रभावित किया।

वास्तविक प्रशासन में सम्राट के प्रभाव का एक कारण यह है कि सम्राट व्यक्तिगत रूप में कुछ ऐसे कार्यों का सम्पादन करता है, जिन्हें अन्य कोई नहीं कर सकता। वह विदेशी राजदूतों का स्वागत करता है, पीयर नियुक्त करता है, उपाधियाँ देता है और सिंहासन भाषण देता है। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति और लोकसदन का विघटन भी वही करता है। यद्यपि इन कार्यों में उसकी शक्ति नहीं के बराबर है, लेकिन कुछ दशाओं में वह अपने विवेक से कार्य कर सकता है और व्यवहार में ऐसा किया भी गया है। सन १८९४ में प्रधानमन्त्री पद के अनेक उम्मीदवार थे और लार्ड रोजबरी को प्रधानमन्त्री बनाने में रानी विक्टोरिया ने अपने विवेक का प्रयोग किया था। १९३१ में रम्जे मैकडानल्ड के नेतृत्व में राष्ट्रीय सरकार का जो

[1] The king possesses three important political rights—the right to be consulted the right to encourage and the right to worn
—*Bagehot*

To this he adds—' And a king of great sense and sagacity would want no others —Bagehot, *The British Constitution*, p 7

गठन किया गया, उसमें तो निश्चित रूप से सम्राट ने ही पहल की थी और इसी कारण इस घटना को 'राजमहल की क्रान्ति' (Palace Revolution of 1931) की संज्ञा दी जाती है। १९४५ में मजदूर दलीय सरकार में अन्तर्गत अर्नेस्ट बेविन को विदेश सचिव बनवाने में सम्राट षष्ठम जार्ज का हाथ था। १९५७ में जब मिस्र के विरुद्ध असफल सैनिक कार्यवाही के बाद तत्कालीन प्रधानमन्त्री इडन को त्यागपत्र देना पडा तो अनुदार दल में उनके पद के लिए दो व्यक्ति थे बटलर और मैकमिलन। रानी ने चर्चिल और सलिसबरी से मन्त्रणा कर बटलर के स्थान पर मैकमिलन को प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित किया। इसी प्रकार की स्थिति १९६३ में मैकमिलन के त्यागपत्र के बाद उत्पन्न हुई। इस समय अनुदार दल में अनेक प्रत्याशी थे और बटलर इनमें प्रमुख थे। लेकिन रानी ने अप्रत्याशित रूप से लार्ड ह्यूम को प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित किया।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि यद्यपि सम्राट शक्तिहीन है, लेकिन फिर भी प्रधानमन्त्री के चुनाव तथा अन्य कुछ बातों में विशेष परिस्थितियों के अन्तर्गत उसके द्वारा अपने प्रभाव का उपयोग किया जाता है।

राजा के प्रभाव के आधार

वास्तविक प्रशासन में राजा को जो भी प्रभाव प्राप्त है, उसके कुछ विशेष कारण या आधार हैं जिनकी विवेचना इस प्रकार है

(१) व्यक्तित्व—कार्टर ने लिखा है कि 'शासन पर सम्राट का प्रभाव औपचारिक शक्तियों की अपेक्षा उसके व्यक्तित्व पर निर्भर करता है।'[1] यदि राजा का व्यक्तित्व प्रभावशाली है तो मन्त्रिगण स्वतः ही उसके व्यक्तित्व के सम्मुख नतमस्तक हो जाते हैं। इसके विपरीत यदि राजा का व्यक्तित्व प्रभावशाली नहीं होता तो वह मन्त्रिमण्डल के हाथों में रबड की मोहर बनकर रह जाता है। प्रशासन पर रानी विक्टोरिया के प्रभाव का एक प्रमुख कारण उनका भव्य व्यक्तित्व ही था।

(२) अनुभव—राजा के प्रभाव का दूसरा कारण उन्हें प्राप्त दीर्घ अनुभव है। राजा जीवन भर शासन का अध्यक्ष रहता है और अपने इस काल में आन्तरिक राजनीति के अन्तर्गत अनेक मन्त्रिमण्डलों का उत्थान और पतन और अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में अनेक उतार चढाव देख लेता है। अपने इस दीर्घकालीन अनुभव के आधार पर वह अपने परामर्श से मन्त्रिमण्डल को प्रभावित कर सकता है।

(३) राजनीतिक निष्पक्षता—उसके प्रभाव का एक आधार उसकी राजनीतिक निष्पक्षता है। वह किसी एक विशेष राजनीतिक दल का नेता नहीं, वरन सम्पूर्ण ब्रिटिश जनता और राष्ट्र का प्रधान होता है और उसके द्वारा इसी दृष्टिकोण से कार्य किया जाता है। मन्त्रिमण्डल भी सम्राट की राजनीतिक निष्पक्षता से

[1] G M Carter, *The Government of Great Britain*, p 181

परिचित होते है। इस कारण उनके द्वारा सम्राट के परामर्श को उचित महत्त्व दिया जाता है।

(४) संसदीय शासन की कार्यपद्धति—राजा के प्रभाव का एक कारण संसदीय शासन की कार्यपद्धति भी है। शासन का अध्यक्ष होने के नाते मन्त्रिमण्डल की समस्त कार्यवाही और परराष्ट्र विभाग का समस्त पत्र व्यवहार उसके पास पहुंचता है। राजा का अपना कर्मचारी मण्डल होता है। उसका एक मन्त्री भी होता है, जिसे राजा का 'आत्म साधक' (conscience keeper) कहा जाता है। इस मन्त्री का कर्तव्य राजा को समस्त राजनीतिक घटनाओं की सूचना देना ही होता है। इन सबके अतिरिक्त प्रधानमन्त्री का यह कर्तव्य है कि वह सम्राट को मन्त्रिमण्डल के निश्चयों से अवगत कराये। ये सभी बातें सम्राट को ऐसी स्थिति प्रदान कर देती हैं कि यदि उसमे क्षमता है तो वह शासन कार्य को प्रभावित कर सके।

(५) पद की महत्ता—इन सबके अतिरिक्त सम्राट के प्रभाव का अन्तिम कारण सम्राट पद की महत्ता है। सम्राट का पद ऐतिहासिक महत्त्व रखता है और वर्तमान समय मे भी ब्रिटिश राष्ट्र मे इसको सर्वोच्च महत्त्व प्राप्त है। स्वाभाविक रूप से सम्राट के द्वारा जो भी परामर्श दिया जाता है, मन्त्रिमण्डल उसको पर्याप्त महत्त्वपूर्ण मानते हुए उस पर विचार करने का कार्य करता है।

राजपद का औचित्य या उपयोगिताएँ
(Justification or Utilities of Monarchy)

ब्रिटेन विश्व मे प्रजातन्त्र का अग्रदूत देश रहा है और आज प्रजातन्त्र के युग मे ब्रिटेन मे प्रजातन्त्रीय भावना अन्य किसी भी देश की तुलना में कम नही है। ऐसी स्थिति में ब्रिटेन में राजा का पद एक राजनीतिक असंगति है, लेकिन ब्रिटिश व्यक्ति अपने अत्यधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण के कारण इस प्रकार की असंगतियो को निभाना भलीभांति जानते हैं और ब्रिटिश राजपद के सम्बन्ध मे भी ऐसा ही है। विश्व के अन्य देशो मे जहा राजतन्त्र समाप्त होता जा रहा है, ब्रिटिश निवासी ऊंचे स्वर मे 'सम्राट चिरजीवी हो' (Long live the King) के नारे लगाते हैं और राजतन्त्र की लोकप्रियता निरन्तर बढती जा रही है। सर विंस्टन चर्चिल के शब्दो मे, "हम सभी लोगों के हृदय मे राजतन्त्र गहरा बैठा हुआ है और यह हम सभी को अत्यन्त प्रिय है।"

गणतन्त्रीय आन्दोलन और उसका अन्त—वर्तमान समय मे तो राजतन्त्र बहुत अधिक लोकप्रिय है लेकिन यह लोकप्रियता बहुत अधिक पुरानी नही है और इसके पूर्व राजपद को जनविरोध का सामना करना पड़ा है। स्टुअर्ट राजाओं के काल मे तो राजपद और ब्रिटिश जनता के बीच तीव्र संघर्ष हुआ ही था। इसके बाद विलियम ऑफ ऑरेंज और प्रथम दो जार्ज राजाओ को भी उनके विदेशी होने के कारण ब्रिटिश जनता अपनी भक्ति नही दे सकी थी। जार्ज तृतीय ने 'देशभक्त राजा' (Partriot King) बनने का प्रयत्न किया, किन्तु अपने शासनकाल के अन्तिम

वर्षों मे उनका मस्तिष्क विकृत हो जाने के कारण राजपद के सम्मान मे कोई वृद्धि नही हुई। जार्ज चतुर्थ और विलियम चतुर्थ ने ऐसा अनियमित जीवन व्यतीत किया कि रानी विक्टोरिया भी अपने शासन के प्रथम वर्षो मे विशेष विख्यात नही थी और उनकी आलोचना होती रही थी।

धीरे धीरे राजपद का विरोध इतना बढ गया कि १८७१ मे गणतन्त्रवादी आन्दोलन ही चल पडा जिसका लक्ष्य राजतन्त्र को समाप्त करना था। लन्दन मे एक गणतन्त्रीय क्लब की स्थापना हुई और चार्ल्स ब्रेडला इसके प्रथम सभापति हुए। उस समय बडी उत्तेजना फली, जब इस विचारधारा को सर चार्ल्स डिल्के जसे प्रसिद्ध व्यक्तियो ने ग्रहण कर कर लिया और चम्बरलेन ने भविष्यवाणी की कि 'गणतन्त्र अवश्य स्थापित होगा और जिस गति से हम इस दिशा मे बढ़ रहे हैं, वह हमारे समय मे ही स्थापित हो जायगा।' किन्तु कुछ ही वर्षों मे यह आन्दोलन धीमा पड गया और रानी विक्टोरिया ने डिल्के को मन्त्रिपद पर नियुक्त करने के पूर्व उन्हें इस बात के लिए बाध्य किया कि वे राजतन्त्र विरोधी धारणाओ के विरुद्ध स्वमत घोषित करें।

१८७८ के बाद ब्रिटेन मे गणतन्त्रात्मक भावनाएँ कभी भी गम्भीर रूप से व्यक्त नही की गयी है और साम्यवादियो को छोडकर जिनकी सख्या ब्रिटेन म बहुत कम है, सभी राजनीतिक दल एक दूसरे से बढ-चढकर राजतन्त्र का गुणगान करते है। पैतृक आधार पर निर्मित लार्ड सभा की कटु आलोचना करने वाला श्रमिक दल भी सम्राट तथा राजपरिवार का गुणगान करने म किसी से पीछे नही है। श्रमिक दल के एक प्रमुख नेता हरबर्ट मारिसन न लिखा है कि, 'ससार में कोई भी राजतन्त्र हमारे राजतन्त्र से ज्यादा सुरक्षित या जनता द्वारा ज्यादा सम्मान प्राप्त नहीं है।'[1]

राजपद के औचित्य के आधार

स्वाभाविक रूप से प्रश्न उपस्थित होता है कि वर्तमान समय म जबकि विश्व के लगभग सभी देशो मे राजतन्त्र समाप्त होता जा रहा है ब्रिटेन मे ही राजा का पद इतना अधिक सम्मानित कसे बना हुआ है। ब्रिटेन म राजपद के बने रहने और उसके इतने अधिक सम्मानित होने के कारणो की विवेचना निम्न रूपो मे की जा सकती है

(१) ऐतिहासिक महत्व की सस्था—राजपद इगलण्ड मे सर्वोच्च ऐतिहासिक महत्त्व की सस्था है। इगलैण्ड मे, ८२९ म राजा एगबर्ट के समय स राजतन्त्र चला आ रहा है और इस प्रकार यह लगभग ११५० वर्ष पुराना है। ब्रिटेन के इस लम्बे इतिहास मे केवल ११ वर्ष (१६४९-१६६०) के लिए क्रामवल के नेतृत्व म गणतन्त्र का प्रयोग किया गया। लेकिन यह प्रयोग असफल रहा और इसकी असफलता ने

1 No monarchy in the world is more secure or more respected by the people than ours
—Herbert Morrison *Parliament and Government* p 91

राजतन्त्र की प्रतिष्ठा मे वृद्धि ही की। १६६० मे ब्रिटेन मे फिर से राजतन्त्र की स्थापना कर दी गई। अपने इस लम्बे इतिहास के कारण राजपद ब्रिटिश जनता के स्वभाव के साथ जुड गया है और अपने रुढिवादी स्वभाव के कारण उनके लिए राजतन्त्र के बिना ब्रिटिश राज्य की कल्पना करना भी लगभग असम्भव हो गया है।

(२) विक्टोरिया के समय से ब्रिटिश सम्राटो का प्रभावशाली व्यक्तित्व और उपयोगी भूमिका—वर्तमान समय म राजपद को जो इतना अधिक सम्मान प्राप्त है उसका बहुत अधिक श्रेय राजपद धारण करने वाले व्यक्तियो के व्यक्तित्व और कार्यों को दिया जा सकता है। रानी विक्टोरिया ने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व और बदलती हुई परिस्थितिया के अनुसार वधानिक शासिका के रूप म काय करके राजपद के लिए सम्मान अर्जित किया। रानी विक्टोरिया के समय म ब्रिटिश साम्राज्य ने जो भव्यता प्राप्त की, उसने भी सम्राट के प्रति श्रद्धा मे वृद्धि की। एडवड सप्तम की मिलनसार प्रवृत्ति और सबके प्रति विनोदप्रिय व्यवहार ने राजपद को प्रसिद्ध बनाया। पचम जाज ने अपने वयक्तिक सम्पक, कमठता तथा महायुद्ध म विजय प्राप्त कर राजतन्त्र की जडें गहरी कर दी और प्रजाजनो के पिता' के रूप मे ख्याति प्राप्त कर ली। उनके उत्तराधिकारी एडवर्ड अष्टम, जिन्हे 'प्रसन्नमुख राजकुमार' कहा जाता था जनता म अत्यधिक लोकप्रिय थे और उनकी प्रत्येक मुद्रा पर जनता करतल ध्वनि करती थी। षष्ठ जाज द्वितीय महायुद्ध के सबसे बुरे दिना मे भी लन्दन मे ही बने रहे और उन्होने अपन आपको जनता के सुख दुख का भागीदार बनाकर गहरा प्रेम और श्रद्धा प्राप्त की। उनकी पुत्री एलिजाबेथ द्वितीय ने अपनी हँसमुख प्रवृत्ति और सद्गुणा से जनता का मन मोह लिया है।

इस प्रकार सम्राट का पद न केवल एतिहासिक है वरन् इसका अतीत भी सराहनीय है और इस बात ने सम्राट को 'जनता के पिता' का स्थान प्रदान कर दिया है। डॉ० अर्नेस्ट जोंस का कहना है कि 'राजा प्रजा का सम्बन्ध बहुत कुछ सीमा तक पिता पुत्र के सम्बन्ध की भाति है।'

(३) राजपद का लोकतन्त्रीकरण—वतमान समय म इगलण्ड म राजपद के बने रहने का सबसे बडा कारण है राजपद का लोकतन्त्रीकरण। यदि इगलण्ड के राजाओ ने सोवियत रूस के राजाओ अथवा 'मैं राजा हू' कहने वाले फ्रास के लुई चतुर्थ की भाति व्यवहार किया होता, तो इगलण्ड का राजपद भी उसी तरह समाप्त हो गया होता, जिस तरह रूस अथवा फ्रास के राजतन्त्र समाप्त हो गये। लेकिन इगलण्ड के राजाओ ने बदलती हुई परिस्थितियो को समझा और १६८८ की गौरव पूर्ण क्रान्ति के बाद वे लोकतन्त्र के विकास मे कभी भी बाधक नही हुए। उन्होने लोकतन्त्र को विकास की प्रक्रिया का अनिवार्य परिणाम समझा और उसके विकास म कभी अनजाने मे, कभी जानबूझकर और कभी विवशतापूर्वक सहयोग दिया। रानी ऐन, विलियम और मेरी तथा प्रथम दो जाज राजाओ का योग इस सम्बन्ध मे विशेषतया उल्लेखनीय है। विशेष बात यह है कि राजपद का लोकतन्त्रीकरण शान्ति-

पूर्ण ढंग से हुआ है और इसने उभय पक्षों में स्नेह और सम्मान को जन्म दिया है। वर्तमान समय में तो राजपद लोकतन्त्र का प्रतीक बन गया है। लास्की के शब्दों में, **"राजतन्त्र को लोकतन्त्र के हाथों उसके प्रतीक के रूप में बेच दिया गया है और इस बिक्री से सभी वर्गों को इतना अपार हर्ष हुआ है कि उस सार्वजनिक खुशी के गगन भेदी स्वर में इक्के दुक्के मतभेद की आवाजें सुनाई भी नहीं पड़तीं।"**[1] राजपद के लोकतन्त्रीकरण को दृष्टि में रखते हुए ही ऑग ने ब्रिटिश शासन व्यवस्था को **'राजमुकुटधारी गणतन्त्र'** (Crowned Republic) के नाम से पुकारा है।

(४) **सम्राट के व्यक्तिगत अधिकार और कार्य**—राजनीतिक क्षेत्र में सम्राट पद का प्रतीकात्मक मूल्य ही नहीं है, वरन् इसके द्वारा कुछ उपयोगी और आवश्यक कार्य भी किये जाते हैं। वह संसद का अधिवेशन बुलाता, स्थगित करता और लोक सदन को विघटित करता है। वह उद्घाटन भाषण देता, प्रधानमन्त्री, अन्य मन्त्रियों तथा अनेक अधिकारियों की नियुक्ति करता है और परिषद आदेश सम्राट की उपस्थिति में ही जारी किये जाते हैं। सम्राट के ये सब कार्य औपचारिक अवश्य हैं लेकिन इसके साथ ही यह तथ्य है कि इन्हें केवल ब्रिटिश राज्य के संवैधानिक प्रधान (सम्राट) द्वारा ही किया जा सकता है, अन्य किसी अधिकारी द्वारा नहीं। इसके अतिरिक्त यद्यपि सामान्य परिस्थितियों में सम्राट अपने इन कार्यों के लिए कैबीनेट के परामर्श से बंधा हुआ है, किन्तु विशेष परिस्थितियों में ब्रिटिश राज्य और उसकी जनता के हितों की रक्षा के लिए नितान्त आवश्यक होने पर उसके द्वारा स्वविवेक के आधार पर कार्य किये जा सकते हैं। स्टण्डर्ड ने बताया है कि **'ऐसे आपातकाल में सम्राट उन अभिसमयों के अनुसार आचरण नहीं करेगा, जिनके अनुसार उसे राजनीति से पृथक रहना चाहिए, वरन् सम्राट को अन्तिम उपाय के रूप में अपना कर्तव्य स्वयं निश्चित करना है।"** संवैधानिक संकट को दूर करने के लिए सम्राट के द्वारा राजनीतिक दलों का सम्मेलन भी बुलाया जा सकता है जैसा कि जार्ज पंचम ने १९१४ में किया था।

(५) **सम्राट सर्वोच्च सलाहकार के रूप में**—भूतकाल में मन्त्री परामर्श देते थे और सम्राट निर्णय करते थे। वर्तमान समय में यद्यपि निर्णय कैबीनेट करती है, लेकिन सम्राट के द्वारा परामर्श अवश्य ही दिया जाता है। सम्राट को अधिकार प्राप्त

1 Monarchy to put it bluntly, has been sold to democracy as a symbol of itself and so nearly universal has been the chorus of eulogy *which has accompanied the process of sale that rare voices of dissent have hardly been heard*

—Laski *Parliamentary Government in Enland* p 312

2 'At such critical moments the limits of the convention that keeps the Crown out of politics are reached and the reigning Sovereign *must himself decide in the last resort,* where his duty lies —*H Standard*

है कि उसे शासन सम्बन्धी सभी बातों के सम्बन्ध में सूचित किया जाय और प्रधानमन्त्री का कर्तव्य है कि वह ऐसी सूचना देता रहे। मन्त्रिमण्डल की कार्यवाही, ज्ञापन, विवरण पुस्तक, विदेश मन्त्रालय के समस्त पत्र और संसदीय प्रतिवेदन उसे प्राप्त होते रहते हैं। आवश्यकता पड़ने पर सम्राट अपने सचिव द्वारा कोई भी शासन सम्बन्धी कागजात मँगवा सकता है। आन्तरिक और अन्तरराष्ट्रीय राजनीति के सम्बन्ध मे जानकारी देने के लिए उसका अपना कर्मचारी मण्डल होता है। प्रशासनिक कार्य के मूल स्रोतों तक उसकी पहुंच होने के कारण सम्राट को आन्तरिक और अन्तरराष्ट्रीय राजनीति का बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त हो जाता है और जब इस प्रकार का ज्ञान सम्पन्न व्यक्ति प्रधानमन्त्री को परामर्श देता है, तो उसके परामर्श का महत्त्वपूर्ण रूप से प्रभाव पड़ता है। उसके परामर्श को महत्त्वपूर्ण बनाने वाली बात यह है कि लम्बे समय से पदारूढ होने के कारण उसे अनेक विषयों पर प्रधानमन्त्री की तुलना मे अधिक ज्ञान प्राप्त होता है और उसके द्वारा दलीय दृष्टिकोण के आधार पर नही, वरन राष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ हितों की दृष्टि से परामर्श दिया जाता है। जेनिंग्ज का कहना है कि, 'कतिपय मामलों मे, विशेषतः वैदेशिक तथा राष्ट्रमण्डल सम्बन्धी मामलों में, प्रायः सम्राट को प्रधानमन्त्री से अधिक जानकारी प्राप्त रहती है। अतः पदारूढ मन्त्रिमण्डल सम्राट से राज्य के समस्त महत्त्वपूर्ण विषयों पर सामान्य रूप से परामर्श लेता है और सम्राट का यह परामर्श अन्तिम निर्णय तक पहुंचने मे निर्णायक होता है।

(६) **सम्राट मध्यस्थ के रूप मे**—सम्राट के द्वारा मध्यस्थ के रूप मे भी उपयोगी कार्य किया जाता है। सम्राट का व्यक्तित्व बहुत अधिक प्रतिष्ठित और राजनीतिक दृष्टि से निष्पक्ष होता है। उसे वास्तविक राजनीतिक शक्ति प्राप्त न होने के कारण किसी पक्ष का उसके प्रति शत्रु भाव भी नही होता है। इन कारणों से उसके द्वारा मध्यस्थ का कार्य सफलतापूर्वक किया जा सकता है। भूतकाल में सम्राट के द्वारा अनेक बार ऐसा किया गया है। १८७२ मे महारानी विक्टोरिया ने प्रधानमन्त्री ग्लैडस्टन को बताये बिना ही लार्ड रसेल को पत्र लिखकर आग्रह किया था कि वह अल्बामा प्रश्न सम्बन्धी पत्रों के लिए आग्रह न करें। इसी प्रकार १८८१ मे महारानी ने जनरल पौसनबी को कहा था कि वह स्टैफोर्ड नार्थकोट और लार्ड कीम्बरफील्ड से मिल ले, जिससे आयरलैण्ड सम्बन्धी सरकार के प्रस्ताव पर सर्वसम्मत समझौता हो सके। १९१४ मे लायड जार्ज ने होमरूल बिल पर समझौता कराने का प्रयत्न किया था और १९१६ मे सम्राट के निजी सचिव ने एस्क्विथ और लायड जार्ज के विवाद को सुलझाने की चेष्टा की थी। सम्राट के मध्यस्थता सम्बन्धी कार्यों को लक्ष्य करते हुए ही एटली ने कहा है कि, "सम्राट एक रेफ्री की तरह है, यद्यपि अब ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं जब उसे सीटी बजाने की आवश्यकता पड़े।"

(७) **सम्राट, ब्रिटिश राष्ट्र की एकता का प्रतीक**—सम्राट न केवल ब्रिटिश शासन, वरन् ब्रिटिश राष्ट्र की एकता का भी प्रतीक है। ब्रिटिश सम्राट किसी एक

पक्ष का नहीं, वरन् सभी का सम्राट है और सम्राट के राज्यारोहण, राजतिलक तथा अन्य अवसरों पर सभी व्यक्ति जिस रूप मे राजभक्ति व्यक्त करते है, उसके परिणाम स्वरूप देशभक्ति और राष्ट्रीय एकता की भावनाओं को बल मिलता है। लार्ड बाल्फोर लिखते हैं कि, 'हमारा सम्राट अपनी उत्पत्ति और अपने पद के कारण हमारे राष्ट्रीय इतिहास का जीवित प्रतीक है। वह न तो किसी दल का नेता है न किसी वर्ग विशेष का प्रतिनिधि है, वह तो सारी ब्रिटिश जाति का प्रधान है वह सभी का सम्राट है।"[1]

विशेष बात यह है कि विरोधी दल भी सम्राट के प्रति उतनी ही भक्ति रखता है, जितनी कि शासक दल। इसी आधार पर जनिंग्ज कहते हैं कि, "हम एक ही समय मे शासन को बुरा कह सकते हैं, साथ ही सम्राट का जय जयकार कर सकते है।"[2] युद्ध आदि अवसरों पर जब सम्राट घोषणा करता है कि 'तुम्हारा सम्राट तथा तुम्हारा देश तुम्हारी सेवाएँ चाहता है' और जब उसके द्वारा स्वयं युद्ध केन्द्रों का निरीक्षण किया जाता है, तो नागरिको मे देशभक्ति की भावना का ज्वार उमड पडता है।

(८) ब्रिटेन के अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव का साधन—न केवल आन्तरिक राजनीति, वरन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की दृष्टि से भी ब्रिटेन के लिए सम्राट पद का बहुत अधिक महत्त्व है। १९वी सदी मे ब्रिटेन का जो विश्वव्यापी साम्राज्य स्थापित हुआ उसका एक आधार सम्राट का व्यक्तित्व भी था और सम्राट ने ब्रिटिश साम्राज्य के स्थायित्व मे भी योग दिया। सर विंस्टन चर्चिल के शब्दो मे "सम्राट एक दुर्बोध और जादू भरी कडी है, जिसने हमारे ढीले बंधे हुए किन्तु दृढता से जुडे हुए राष्ट्रमण्डलीय देशो, राज्यो तथा जातियो को मिलाये हुए रखा है।"[3] इसी प्रकार प्रधान मन्त्री बाल्डविन ने एक बार एडवर्ड अष्ठम से कहा था कि, "सम्राट ही हमारे बचे हुए साम्राज्य की अन्तिम कडी है और यदि इसे तोड दिया जायगा, तो स्वतन्त्र राष्ट्रमण्डलीय देशो के बीच कुछ भी सामान्य प्रतीक नही रहेगा।"

वर्तमान समय मे अन्तरराष्ट्रीय राजनीति मे ब्रिटेन को जो भी थोडा बहुत महत्त्व प्राप्त है उसका एक बडा आधार राष्ट्रमण्डल है और राष्ट्रमण्डल सम्राट के व्यक्तित्व पर ही टिका हुआ है। ब्रिटिश राजनीतिज्ञ भी इस बात से परिचित हैं। इसी कारण उनके द्वारा 'Statute of Westminister' के आधार पर इस प्रतीक को दृढ करने की चेष्टा की गयी है। सम्राट अपनी यात्राओं आदि के आधार पर भी अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र मे ब्रिटिश प्रभाव को बढाने की चेष्टा करता है।

[1] *Introduction to Bagehot's English Constitution*, p xxv

[2] We can damn the government and cheer the king
—Jennings, *The English Constitution*, p 111

[3] जार्ज षष्ठ की मृत्यु पर चर्चिल का रेडियो से प्रसारित भाषण।

(९) ब्रिटिश सम्राट का सामाजिक व्यक्तित्व—ब्रिटिश सम्राट का देश के सामाजिक ढांचे पर भी पर्याप्त प्रभाव है। जब कभी सम्राट किसी सामाजिक उत्सव में सम्मिलित होता है तो उत्सव की शोभा बहुत अधिक बढ़ जाती है, क्योंकि जनता भारी संख्या में सम्राट के दर्शनार्थ उपस्थित होती है। समाज में सम्राट की अपील को बहुत महत्त्व दिया जाता है। सम्राट ब्रिटिश समाज का नेता है और धार्मिक तथा नैतिक जीवन, फैशन, साहित्य और कलाओं पर उसका अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। सामान्यतया जनता के द्वारा सम्राट, साम्राज्ञी और राजपरिवार के अन्य सदस्यों के रहन सहन के अनुकरण की चेष्टा की जाती है। सामाजिक जीवन पर सम्राट के प्रभाव को स्पष्ट करते हुए लो ने कहा है कि "किसी भी संगठन के साथ राजकीय शब्द के जुड़ जाने से सफलता अवश्यम्भावी हो जाती है।"[1]

(१०) सम्राट पद का मनोवैज्ञानिक महत्त्व—सम्राट पद का मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी महत्त्व है। यह जनता के लिए सरकार और राज्य का साकार रूप है और राजभक्ति के माध्यम से देशभक्ति का संचार करता है। साधारण व्यक्ति राष्ट्र सरकार तथा देश जैसे अमूर्त शब्दों की अपेक्षा राजा जैसे मूर्त शब्द को आसानी से ग्रहण कर सकता है। एडवर्ड जक्स के शब्दों में, "राजा एक व्यक्तिगत तथा चिन्मय तत्त्व प्रस्तुत करता है, जो उन संवैधानिक व्यवस्थाओं की अपेक्षा, जिन्हें न देखा जा सकता है और न ही सुना जा सकता है जनता की भावनाओं को अधिक प्रभावित करता है।"

सम्राट पद ब्रिटिश प्रजातन्त्र को एक प्रकार की भव्यता प्रदान करने का कार्य भी करता है। जनिंग्ज के अनुसार, "प्रजातन्त्रात्मक शासन बेजान तर्कों और नीरस नीतियों तक ही सीमित नहीं है। उसमें कुछ रंगीनी, कुछ तड़क भड़क होनी ही चाहिए और ऐसी स्पष्ट तड़क भड़क और कहां देखने को मिलेगी, जैसी कि शाही पोशाक में मिलती है।"

(११) निरन्तरता तथा स्थायित्व का प्रतीक—ब्रिटिश जनता रूढ़िवादी और राष्ट्रीय जीवन के क्रान्तिकारी परिवर्तनों के विरुद्ध है और वह राजपद को इस कारण भी बनाये रखना चाहती है कि राजपद ब्रिटिश जीवन के आधारभूत मूल्यों की रक्षा का साधन समझा जाता है। बार्कर के कथनानुसार 'राजतन्त्र क्रान्तिकारी कल्पनाओं और चमत्कारिक परिवर्तनों को रोकने में सहायक है।"[2]

ब्रिटिश जनता राजपद को सुरक्षा का साधन मानती है और इस बात पर विश्वास करती है कि जब तक राजपद है, तब तक उनके राजनीतिक और सामाजिक

[1] "The title royal to the name of an association is regarded as almost certain guarantee of success" —*Low*

[2] 'Monarchy helps to prevent revolutionary dream and sensational changes" —*E Barker*

जीवन के मूल्य नितान्त सुरक्षित हैं। इसी आधार पर ब्रिटेन में यह बात कही जाती है कि, **"जब सम्राट बकिंघम प्रासाद में हो तो जनता सुख की नींद सोती है।"**[1]

ब्रिटिश सम्राट के सम्बन्ध में महत्त्व की बात यह है कि क्रान्तिकारी कल्पनाओं के विरुद्ध होते हुए भी यह प्रगति और प्रजातान्त्रिक विकास के मार्ग में बाधक नहीं है।

(१२) **संसदीय प्रजातन्त्र में राजपद की उपयोगी भूमिका**—संसदीय प्रजातन्त्र में कार्यपालिका के वास्तविक प्रधान के साथ-साथ एक औपचारिक प्रधान की भी आवश्यकता होती है। इस औपचारिक प्रधान को कुछ विशेष कार्य करने होते हैं जैसे एक प्रधानमन्त्री के त्यागपत्र के बाद दूसरे प्रधानमन्त्री को पद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित करना, व्यवस्थापिका का अधिवेशन बुलाना और स्थगित करना, लोकप्रिय सदन को विघटित करना आदि। इस औपचारिक प्रधान के द्वारा वास्तविक कार्यपालिका को परामर्श देने का कार्य भी किया जाता है। ब्रिटेन में संसदीय प्रजातन्त्र है और इस कारण इस प्रकार के औपचारिक प्रधान की आवश्यकता है। ऐसी स्थिति में ब्रिटेन में यदि राजपद को समाप्त किया जाय, तो भारतीय राष्ट्रपति जैसे किसी निर्वाचित प्रधान की व्यवस्था करनी होगी। नये सिरे से निर्वाचित प्रधान की व्यवस्था करने में अनेक समस्याएं और आशंकाएँ हैं। निर्वाचित प्रधान की चुनाव व्यवस्था के सम्बन्ध में विवाद खड़े हो सकते हैं। इस बात की भी आशंका है कि महत्वाकांक्षी प्रवृत्ति वाला निर्वाचित प्रधान अपने पद की राजनीतिक मर्यादाओं के उल्लंघन का प्रयत्न कर सकता है। इन सबके अतिरिक्त अपने पिछले राजनीतिक जीवन के आधार पर वह पक्षपातपूर्ण आचरण कर सकता है या उसकी निष्पक्षता पर सन्देह किया जा सकता है। ब्रिटिश राजपद के सम्बन्ध में इस प्रकार की कोई आशंका नहीं है। एक विशेष बात, जिसने संसदीय शासन की दृष्टि से राजपद की उपयोगिता बहुत बढ़ा दी है यह है कि **'अपनी कोई दलगत आस्था न होने के कारण न केवल वह सदैव निष्पक्षता के साथ सभी कार्य करता है वरन इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि उसकी निष्पक्षता पर सभी पूर्ण विश्वास करते हैं।"**

(१३) **आर्थिक औचित्य**—राजपद की उपरोक्त सभी उपयोगिताएँ तो हैं ही आर्थिक दृष्टिकोण या व्यय के आधार पर भी राजपद के औचित्य को चुनौती नहीं दी जा सकती। **राजतन्त्र पर इंगलैण्ड की आय के एक प्रतिशत का बीसवां भाग खर्च होता है।** यदि राजपद के स्थान पर निर्वाचित प्रधान की व्यवस्था की जाय, तो भी उसके चुनाव, वेतन, भत्ते और कर्मचारी मण्डल आदि के रूप में इससे अधिक धनराशि ही खर्च करनी होगी। राजपद से होने वाले लाभों की तुलना में वस्तुतः यह धनराशि कुछ भी नहीं है?

1 With the King in Buckingham Palace people sleep more quietly in their beds

—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments*, p 64

क्या निर्वाचित राष्ट्रपति राजपद का विकल्प हो सकता है ?
(Can an Elected President Replace the King)

अनेक बार यह प्रश्न किया जाता है कि क्या वंशानुगत राजा के स्थान पर निर्वाचित प्रधान के पद की व्यवस्था कर दी जानी चाहिए। इस सम्बन्ध मे वस्तुस्थिति यह है कि ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे सम्राट के द्वारा जो भूमिका निभाई जाती है, निर्वाचित अध्यक्ष के द्वारा उसे पूरा नही किया जा सकता। निम्न कारणो से निर्वाचित प्रधान राजपद का विकल्प नही हो सकता है

प्रथम, ब्रिटिश राजा न केवल ब्रिटेन वरन् ब्रिटिश अधिराज्यो और राष्ट्र-मण्डलीय देशो का भी प्रधान समझा जाता है। एक निर्वाचित प्रधान केवल ब्रिटिश जनता द्वारा निर्वाचित होगा और उसे राष्ट्रमण्डल के देशो की निष्ठा कभी भी प्राप्त नही हो सकती। **द्वितीय,** निर्वाचित राष्ट्रपति दलगत आस्थाओ से ऊपर नही होता। यदि वह दलीय आस्था का त्याग भी कर दे, तो भी पुराने राजनीतिक जीवन के आधार पर उसकी निष्पक्षता म सन्देह किया जा सकता है और उसे सम्राट जसी सभी पक्षो की ओर से प्रतिष्ठित स्थिति प्राप्त नही हो सकती। **तृतीय,** निर्वाचित राष्ट्र-पति का कायकाल सीमित होने कारण उसे प्रशासनिक कार्यों का दीघकालीन अनुभव और ज्ञान प्राप्त नही हो सकेगा। अत निर्वाचित प्रधान होने पर ब्रिटेन सम्राट के राजनीतिक ज्ञान एव प्रशासनिक अनुभव से वचित हो जायगा। **चतुथ,** ससदीय शासन मे, शासन के अध्यक्ष को केवल एक औपचारिक प्रधान के रूप म काय करना है। सम्राट के द्वारा अपने पद की राजनीतिक मर्यादाओ को पूणतया स्वीकार कर लिया गया है, लेकिन निर्वाचित राष्ट्रपति महत्वाकाक्षाओ के वशीभूत होकर यदि कभी परम्पराओ का उल्लघन कर बैठे, तो सवधानिक गतिरोध की स्थिति उत्पन हो जायगी। इन सबके अतिरिक्त व्यावहारिक बुद्धि का यही कहना है कि जब वशानुगत राजा कायपालिका के औपचारिक प्रधान के रूप म ठीक प्रकार से काय कर रहा है, तो निर्वाचित अध्यक्ष की व्यवस्था करके निर्वाचन और तत्सम्बन्धी समस्याओ का सामना क्यो किया जाय ?

निर्वाचित राष्ट्रपति सम्राट का स्थानापन्न नही हो सकता। ब्रिटेन म इस सम्बन्ध मे सोचा भी नही जा रहा है। ऑग के शब्दो मे, **"ब्रिटेन इसी प्रकार मुकुटधारी गणतन्त्र बना रहेगा और बना रहना चाहिए।"**

उपरोक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि सम्राट शक्तिहीन भले ही हो गया हो, राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से अब भी उसके पद का पर्याप्त महत्त्व है। इसके अतिरिक्त शक्तिहीन होते हुए भी व्यावहारिक प्रशासन मे उसके द्वारा उपयोगी और महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है। ब्रिटिश शासन व्यवस्था का वह एक आवश्यक अग है और लावेल के शब्दो म कहा जा सकता है कि, **"यदि राजा, राज्य के पोत की प्रेरक शक्ति नहीं है,** तो भी वह उस पोत का

मस्तूल अवश्य है जिस पर पाल लटका हुआ है और इस प्रकार उस पोत का वह न केवल लाभदायक वरन् अत्यन्त आवश्यक भाग है।"

प्रश्न

१ सम्राट और राजमुकुट मे क्या अतर है ? राजमुकुट की शक्तिया का वणन कीजिए। (पटना, १६६१, विक्रम, १६६०)

२ ब्रिटिश सविधान की शब्दावली मे अनेक सूक्ष्म भेद है लेकिन इनमे कोई भी इतना महत्त्वपूण नही है, जितना कि सम्राट और राजमुकुट का भेद है।" (ग्लैडस्टन) स्पष्ट कीजिए।

३ ब्रिटेन मे सम्राट और राजमुकुट के मध्य भेद बतलाइए। देश के शासन म राजपद की क्या स्थिति है ? किन कारणोवश राजपद आज भी बना हुआ है ? (कानपुर, १६७०)

४ इगलैण्ड मे राजपद के औचित्य का उल्लेख कीजिए। (कानपुर, १६७२)

५ आधुनिक युग मे ब्रिटिश राजतन्त्र की सवैधानिक स्थिति और शक्तिया का वणन कीजिए। (विक्रम, १६६६)

६ इगलण्ड के सविधान म 'राजमुकुट' से आप क्या समझते हैं ? राजा तथा राजमुकुट म अन्तर स्पष्ट कीजिए। (राजस्थान, १६६६)

5

मन्त्रिमण्डल

(THE CABINET)

"केबीनेट ब्रिटिश राजनीति की लाक्षणिक विसंगतियों में से एक है। यह शासनाधिकार का केन्द्र है वह संस्था है जो लोकसदन को नियन्त्रित करती है और राज्य के प्रशासकीय यन्त्र का संचालन करती है।"[1] —जी एम कार्टर

केबीनेट की पूर्वज संस्था—प्रिवी परिषद

ब्रिटिश व्यक्ति बहुत अधिक रूढ़िवादी हैं और अपनी रूढ़िवादिता के कारण ही उनके द्वारा उन राजनीतिक संस्थाओं को भी बने रहने दिया गया है, जिनका वतमान समय में कोई वास्तविक कार्य नहीं रह गया है। प्रिवी परिषद एक ऐसी ही संस्था है। वर्तमान समय में केबीनेट के द्वारा जो कार्य किये जाते हैं, भूतकाल में इनमें से अधिकांश कार्य प्रिवी परिषद ही किया करती थी। इस दृष्टि से इसे 'केबीनेट की पूर्व संस्था' कहा जा सकता है। १८वीं सदी तक प्रिवी परिषद ही ब्रिटेन में कार्यपालिका सत्ता का प्रमुख स्रोत थी। मन्त्रिमण्डलात्मक शासन व्यवस्था के विकास के साथ साथ इसकी शक्तियाँ केबीनेट को हस्तान्तरित होती गयी और वर्तमान समय के प्रशासनिक यन्त्र में इसे एक सम्मानप्रद किन्तु केवल एक औपचारिक स्थान प्राप्त है। यह एक ऐसी संस्था है, जिसके माध्यम से सम्राट की कुछ शक्तियों का औपचारिक रूप से प्रयोग किया जाता है। 'यह अपनी पूर्वकालीन महत्ता की छायामात्र ही है, किन्तु अपने प्राचीन महत्त्व के कारण इसका स्थान बहुत ही सम्मानित है।"[2]

[1] 'The Cabinet is one of the typical anomalies of British politics It is the centre of governmental authority the body which controls the House of Commons and which directs the administrative apparatus of the State'
—G M Carter and Others *The Government of Britain* p 156

[2] Viscount Samuel, Quoted in *Parliament Affairs*, p 117

प्रिवी परिषद का उदय नामन काल की 'क्यूरिया रेजिस' (Curia Regis) से हुआ है। 'क्यूरिया रेजिस', जो राजा की परामर्शदात्री संस्था थी, के सदस्य बड़े-बड़े जमींदारों और सामन्तों में से नियुक्त किये जाते थे। कालान्तर में, इस संस्था के कार्य बहुत अधिक बढ़ गये और इसका आकार भी बहुत विशाल हो गया, अतः राजा को मन्त्रणा देने का कार्य एक लघुतर संस्था के हाथों में आ गया, जो 'प्रिवी परिषद' कहलायी।

रचना—प्रिवी परिषद सम्राट की अपनी परिषद है और वह किसी भी व्यक्ति को इसका सदस्य नामजद कर सकता है। प्रिवी परिषद की सदस्य संख्या १९५८ के प्रारम्भ तक लगभग ३०० थी। वर्तमान समय में यह सदस्य संख्या ३३४ है। केन्टरबरी और यार्क के लार्ड पादरी अपने पद के आधार पर इसके सदस्य होते हैं। लन्दन का बिशप, विधि लार्डस, ब्रिटेन के विदेशों में राजदूत, लोकसदन का अध्यक्ष, अधिराज्यों के प्रधानमन्त्री और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के सदस्य भी इसमें सम्मिलित होते हैं। कला, विज्ञान तथा साहित्य में विशिष्टता प्राप्त कुछ व्यक्तियों को भी इसका सदस्य बना दिया जाता है। प्रिन्स ऑफ वेल्स (सम्राट का ज्येष्ठ पुत्र और सिंहासन का उत्तराधिकारी) और राजघराने के कुछ 'ड्यूक' भी इसके सदस्य होते हैं। अधिराज्यों (Dominions) के कुछ अधिक प्रसिद्ध व्यक्तियों को भी कभी कभी इसकी सदस्यता प्रदान कर दी जाती है।

कार्यपद्धति—पूरी प्रिवी परिषद उस समय बुलाई गई थी, जब १७१४ ई० में महारानी ऐन की मृत्यु हो गई थी, उसके बाद से अब तक पूरी प्रिवी परिषद को कभी नहीं बुलाया गया है। प्रिवी परिषद की बैठकों में सामान्यतया ४-७ सदस्य भाग लेते हैं और उनके लिए गणपूर्ति केवल ३ सदस्यों की है। इसकी बैठकें परिषद का क्लर्क बुलाता है और सम्राट स्वयं या उनकी अनुपस्थिति में 'लॉर्ड प्रेसीडेण्ट' इसकी बैठकों की अध्यक्षता करते हैं। इसकी बैठकें राजप्रासाद में होती हैं। प्रिवी परिषद कुछ समितियों के माध्यम से कार्य करती है जैसे न्यायिक समिति, व्यापार मण्डल, शिक्षा मण्डल, चिकित्साशास्त्र, विज्ञान, उद्योग, कृषि और प्रवासी देशों आदि विषयों के बारे में अनुसन्धान कार्य के लिए समितियाँ। इनमें १८३२ में निर्मित "न्यायिक समिति' सबसे प्रमुख है।

कार्य—प्रिवी परिषद के द्वारा औपचारिक रूप से निम्न कार्य किये जाते हैं

(१) प्रिवी परिषद 'सपरिषद आदेश' (Orders-in Council) जारी करती है जो दो प्रकार के होते हैं। एक तो सपरिषद आदेश शाही परमाधिकार के आधीन जारी किये जाते हैं जैसे उपनिवेशों के गवर्नरों को जो निर्देश भेजे जाते हैं उनकी रूपरेखा स्वीकार करना। दूसरी प्रकार के आदेश जो इस परिषद द्वारा जारी किये जाते हैं, वे 'प्रदत्त व्यवस्थापन' के आधीन होते हैं, जिनकी सत्ता संसद को प्राप्त है।

(२) नवीन सरकार के निर्माण के समय यह मन्त्रियो को शपथ दिलाती है।

(३) यह लाइसेंस देती तथा जुर्माने माफ करती है।

(४) यह विश्वविद्यालयो तथा नगरपालिकाओ को चार्टर प्रदान करती है।

(५) यह शेरिफ नामक अधिकारियो की नियुक्ति करती है।

(६) यह विभिन्न प्रकार की खोजो और अनुसन्धानो का प्रबन्ध करती और **'ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कारपोरेशन'** (B B C) की नीति निर्धारित करती है।

(७) प्रिवी परिषद राजमुकुट को शाही घोषणाओ के बारे मे परामर्श देती है।

(८) इसकी न्याय समिति उपनिवेशो के उच्च न्यायालयो के निर्णयो के विरुद्ध अपील सुनती है। उपनिवेशो के लिए यह अन्तिम न्यायालय है। लार्ड सैम्युअल ने न्यायिक समिति को विश्व के सबसे गौरवशाली न्यायाधिकरणो मे से एक बताया है। न्यायिक समिति निर्णयात्मक संस्था नही, वरन सम्राट की परामर्शदात्री संस्था मात्र है। यह सम्राट को एक विशेष प्रकार का निर्णय देने का परामर्श देती है।

उपरोक्त कार्यों से इसकी उपयोगिता स्पष्ट है और इसी आधार पर **हरबर्ट मारिसन** लिखते है कि 'यह संविधान का एक अनिवार्य अंग है।'[1]

मन्त्रिमण्डल या केबीनेट

ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे केबीनेट का महत्त्व

ब्रिटेन मे संसदीय शासन व्यवस्था है। संसदीय शासन मे कार्यपालिका का एक औपचारिक प्रधान होता है तथा दूसरा कार्यपालिका का वास्तविक प्रधान। सत्ता का प्रयोग औपचारिक प्रधान के नाम से किया जाता है, किन्तु वास्तविक रूप मे सत्ता का प्रयोग, औपचारिक प्रधान नही, वरन वास्तविक प्रधान करता है। ब्रिटेन मे सम्राट कार्यपालिका का औपचारिक प्रधान है और केबीनेट कार्यपालिका की वास्तविक प्रधान। प्रसिद्ध ब्रिटिश विधिवेत्ता डायसी के शब्दो मे "यद्यपि शासन का प्रत्येक कार्य सम्राट के नाम पर किया जाता है, परन्तु इंगलैण्ड की वास्तविक कार्यपालिका शक्ति केबीनेट मे ही निहित है।'[1]

ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे केबीनेट के महत्त्व को स्पष्ट करने के लिए ब्रिटिश संविधान के विभिन्न लेखको द्वारा अलग-अलग शब्दावलियो का प्रयोग किया गया है, जिनमे से कुछ अग्र प्रकार हैं

[1] It is still an essential feature in the constitution
—Herbert Morrison, *Parliament and Government*, p 91

[2] While every act of the state is done in the name of the Crown the real executive government of England, is the Cabinet "
—Dicey, *Law of the Constitution*

बेजाहाट के अनुसार "केबीनेट एक हाइफन है जो जोडता है, एक बक्सुआ है जो कार्यपालिका और व्यवस्थापिका को मिलाता है।"[1]

लावेल ने इसे 'राजनीतिक मेहराब की आधारशिला कहा है।'[2]

रैम्जे म्योर का कहना है कि 'केबीनेट राज्य के जहाज का परिचालक चक्र है।'[3]

एमरी के शब्दो मे 'केबीनेट सरकार का केन्द्रीय निर्देशक यन्त्र है।'[4]

सर जॉन मरियट का कहना है कि 'केबीनेट वह धुरी है जिस पर सम्पूर्ण प्रशासन चक्र घूमता है।'[5]

ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे केबीनेट का महत्त्व तो पिछली दो सदियो से चला आ रहा है। वर्तमान समय मे लगभग सभी देशो मे कार्यपालिका अधिकाधिक शक्ति प्राप्त करती जा रही है और ब्रिटेन मे यह प्रवृत्ति प्रमुख रूप से देखी जाती है। परम्पराओ के आधार पर सम्राट पूर्णतया एक औपचारिक प्रधान बनकर रह गया है और व्यावहारिक प्रवृत्तियो के कारण संसद की शक्तियो का ह्रास हो रहा है। ऐसी स्थिति मे **रैम्जे म्योर** जैसे कुछ व्यक्ति तो **'केबीनेट के अधिनायकत्व'** की बात करने लगे हैं। केबीनेट की अधिनायकत्व की बात निराधार है लेकिन इसके साथ ही यह तथ्य है कि ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे केबीनेट सर्वाधिक शक्तिशाली इकाई है।

केबीनेट या मन्त्रिमण्डल का अभिप्राय

मन्त्रिमण्डल का आशय उस राजनीतिक समिति से है जो प्रधानमन्त्री के नेतृत्व मे कार्यपालिका शक्तियो का प्रयोग करती है। लोकसदन के बहुमत दल के नेता को सम्राट के द्वारा प्रधानमन्त्री पद प्रदान किया जाता है और प्रधानमन्त्री सिद्धान्तत ससद सदस्यो और व्यवहार मे सामान्यतया अपने ही राजनीतिक दल के संसद सदस्यो म से अपने सहयोगियो का चुनाव करता है। मुनरो के शब्दो म, **"मन्त्रिमण्डल राजमुकुट के नाम पर प्रधानमन्त्री द्वारा नियुक्त किये हुए उन राजकीय परामर्शदाताओ की समिति को कहा जा सकता है जिन्हें लोकसदन के बहुमत का समर्थन प्राप्त हो।"**[6] इसी प्रकार सर सिडनी लो के मतानुसार, "मन्त्रिमण्डल वह

1 'A combining hyphen which joins, a buckle which fastens the legislative party of the state with the executive part —Bagehot

2 The key stone of the political arch —Lowell

3 The Cabinet in short, is the steering wheel of the ship of the State —Ramsay Muir

4 'The central directing instrument of government —Amery

5 "The pivot round which the whole political machinery revolves —Sir John Marriot

6 'Cabinet may briefly be defined as the body of royal advisors choosen by the Prime Minister in the name of the Crown with the approval of a majority in the House of Commons —Munro

उत्तरदायी कार्यपालिका है जो राष्ट्रीय कार्यों के सामान्य प्रशासन को पूर्ण रूप से नियन्त्रित करती है, किन्तु इस शक्ति का प्रयोग लोकसदन के कठोर निरीक्षण मे किया जाता है जिसके प्रति वह अपनी समस्त भूलों और कार्यों के लिए उत्तरदायी है।"[1]

मन्त्रिमण्डल का उदय और विकास

ब्रिटिश सविधान की भाँति ही ब्रिटिश शासन व्यवस्था की सबसे प्रमुख सस्था मन्त्रिमण्डल भी विकास का ही परिणाम है, निर्माण का नही। इसकी स्थापना किसी ससदीय अधिनियम के आधार पर नही हुई वरन् वह पिछली लगभग तीन सदियो के विकास का परिणाम है। यद्यपि मन्त्रिमण्डल के द्वारा १८वी सदी से काय किया जा रहा है, किन्तु कानून म इसके अस्तित्व को '१९३७ के सम्राट के मन्त्रि परिनियम' (Ministers of the Crown Act) मे ही स्वीकार किया गया है।

मन्त्रिमण्डल का प्रारम्भिक रूप 'कबाल' (Cabal)—मन्त्रिमण्डल का विकास 'प्रिवी परिषद' से और 'प्रिवी परिषद' का विकास दो प्रारम्भिक सस्थाओ 'क्यूरिया रेजिस' और 'विटजेनमाट' से हुआ है। जिस प्रकार नामन काल मे 'क्यूरिया रेजिस' से प्रिवी परिषद की उत्पत्ति हुई थी, उसी प्रकार १८वी सदी म प्रिवी परिषद स मन्त्रिमण्डल की उत्पत्ति हुई। १६६० तक सम्राट को परामश देने का काय प्रिवी परिषद के द्वारा किया जाता था, लेकिन १७वी सदी के अन्त तक प्रिवी परिषद सदस्य सख्या की दृष्टि से इतनी वडी सस्था हो गई कि इसके द्वारा प्रभावदायक रूप मे कार्य नही किया जा सकता था। अत सम्राट चार्ल्स द्वितीय के द्वारा पूरी प्रिवी परिषद से परामश लेने की अपेक्षा एक छोटी अनौपचारिक समिति से परामर्श लेना प्रारम्भ कर दिया गया जिसम राजा के निकटतम मित्र आदि थे। इस अनौपचारिक समिति को 'कबाल' (Cabal) का नाम दिया गया जो इसके सदस्यो के नामो के प्रथम अक्षरो से मिलकर बना था।[2] आन्तरिक समिति की यह व्यवस्था चलती रही और इसन एक सस्था का रूप ग्रहण कर लिया। यह 'कबाल' ही कैबीनेट या मन्त्रिमण्डल की जननी थी।

ससद द्वारा 'कबाल' का विरोध—'कबाल' राजा की सृष्टि थी और यद्यपि इसके सदस्य ससद मे से लिये गये थे, किन्तु वे ससद के प्रति नही, वरन राजा के प्रति उत्तरदायी थे और इस बात के कारण ससद ने कबाल के प्रति अनेक शकाएँ अपना ली। अत उसने इस व्यवस्था का विरोध करने के उद्देश्य से सन् १७०१ के

[1] 'Cabinet is the responsible executive having complete control of the administration of the general direction of national business but exercising this vast power under the strict supervision of the representative chamber to which it is accountable for all of its acts and omissions' —*Sydney Low*

[2] कबाल के पाँच सदस्यो के नाम ये थ क्लीफोर्ड, एशले, बकिघम आर्लिंगटन और लाडरडेल।

उत्तराधिकार कानून मे दो उपबन्ध किये। पहला उपबन्ध तो यह था कि राजा की सेवा मे काय करने वाला कोई भी व्यक्ति पार्लियामेण्ट का सदस्य न हो और दूसरे प्रिवी परिषद म जो भी निणय किए जाय, वे उसकी पूरी बठक मे हो। इन उपबन्धो का उद्देश्य ऐसी प्रथा को रोकना था जो 'कवाल' के रूप मे विकसित हो रही थी। यदि ये उपबन्ध स्थायी हो जाते, तो इगलैण्ड मे मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था के स्थान पर अध्यक्षात्मक व्यवस्था का विकास होता। किन्तु ये उपबन्ध स्थायी नही हुए और प्रिवी परिषद की एक लघु समिति के रूप म केबीनेट का निरन्तर विकास होता रहा।

मन्त्रीय उत्तरदायित्व का विकास—मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था के विकास के लिए इस धारणा को अपनाना जरूरी था कि मन्त्री अपनी नीति और कार्यो के लिए सम्राट के स्थान पर ससद के प्रति उत्तरदायी होने चाहिए। ससद ने यह बात चार्ल्स द्वितीय के समय डेन्बी पर महाभियोग लगाकर प्राप्त कर ली। राजनीतिक दलो के उदय ने मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था के विकास मे और योग दिया। विलियम और ऐने मन्त्रियो का चुनाव स्वय ही करत थे, लेकिन अनुभव न उन्हे यह सिखाया कि मन्त्रियो और ससद के सम्बन्ध तभी अच्छे हो सकते हैं जबकि मन्त्रियो को ससद का विश्वास प्राप्त हो। १६९५ मे विलियम ने अपने सभी मन्त्री एक ही दल 'ह्विग दल' मे से चुनने का प्रयोग किया। ऐने एकदलीय मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध थी, लेकिन परिस्थितिया से बाध्य होकर उसे विलियम का अनुकरण करना पडा। इस प्रकार लोकसदन के बहुमत दल के मन्त्रिमण्डल के निर्माण का चलन हुआ। इसस मन्त्रिमण्डल एक सजातीय इकाई होने लगे और १७४२ मे जब सर राबट वाल्पोल ने सम्राट का विश्वास प्राप्त होने पर भी लोकसदन का विश्वास खो देने के कारण त्यागपत्र दे दिया, तो लोकसदन के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व की धारणा का विकास हुआ।

प्रधानमन्त्री पद का उदय—रानी ऐन के समय तक सम्राट मन्त्रिमण्डल की बैठको की अध्यक्षता करते थे, लेकिन इतिहास के एक सयोग ने इस दोष को दूर कर दिया। जाज प्रथम और जाज तृतीय अग्रेजी भाषा से परिचित नही थे और ब्रिटिश राजनीति मे भी उनकी रुचि नही थी। अत उन्होने मन्त्रिमण्डल की बठको मे भाग लेना बन्द कर दिया। अब मन्त्रिमण्डल को अपन अध्यक्ष का चुनाव करना पडा और यह अध्यक्ष ही अनौपचारिक रूप से प्रधानमन्त्री हो गया। ब्रिटेन के ये प्रथम अनौपचारिक प्रधानमन्त्री सर रॉबट वाल्पोल ही थे। जाज तृतीय ने समय की गति को रोकते हुए शासन शक्ति अपने हाथ मे लेने का प्रयत्न किया, किन्तु इसम उसे सफलता नही मिली। १८वी सदी के अन्त तक मन्त्रिमण्डल की निम्न विशेषताए स्थापित हो चुकी थी केबीनेट के सदस्य ब्रिटिश ससद म से लिये जान चाहिए, सामान्यत वे एक ही राजनीतिक दल मे से होन चाहिए, उनका ससद म बहुमत होना चाहिए, उनकी एक सामान्य नीति होनी चाहिए, मन्त्री लोकसदन के सम्मुख

उत्तरदायी होने चाहिए और वे सभी प्रधानमन्त्री के आधीन होने चाहिए। १९वीं सदी में इन्हीं सिद्धान्तों को सुदृढ़ता प्रदान की गई।

२०वीं सदी में मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था से सम्बन्धित कुछ अन्य बातों का विकास हुआ। अब मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की संख्या १०-१२ के स्थान पर १८-२२ हो गयी और मन्त्रिमण्डल के कार्य बढ़ जाने के कारण मन्त्रिमण्डलीय समितियों का प्रचलन हुआ। संकटकाल में राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलों की स्थापना का चलन हुआ और युद्धकाल में मन्त्रिमण्डल की आन्तरिक समिति के रूप में 'युद्ध मन्त्रिमण्डल' का विकास हुआ। बीसवीं सदी में ही कैबीनेट सचिवालय की भी स्थापना हुई।

मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था की विशेषताएँ

इंगलैण्ड मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था का मातृ देश है और अन्य देशों ने इस व्यवस्था को इंगलैण्ड से ही ग्रहण किया है। अतः ब्रिटेन की मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था को उचित प्रकार से समझ लिया जाना चाहिए। ब्रिटेन की मन्त्रिमण्डलीय प्रणाली की विशेषताओं की विवेचना निम्न प्रकार से की जा सकती है :

(१) सम्राट की वास्तविक कार्यपालिका से पृथक्ता—मन्त्रिमण्डलीय प्रणाली की प्रथम विशेषता यह है कि औपचारिक प्रधान होने के नाते राजा कार्यपालिका का अभिन्न अंग है लेकिन वह मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित नहीं है। वह न तो मन्त्रिमण्डल की बैठकों की अध्यक्षता करता है और न ही उसकी कार्यवाही में भाग लेता है। मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था की यह विशेषता संयोगवश ही विकसित हुई है किन्तु इसकी निश्चित उपयोगिता है। इस विशेषता के कारण ही शासन के सभी निर्णय और कार्य यद्यपि सम्राट के नाम से किये जाते हैं, किन्तु सम्राट इनमें प्रत्यक्ष रूप से कोई भाग नहीं लेता।

किन्तु इससे यह नहीं समझ लिया जाना चाहिए कि राजा का प्रशासन पर कोई प्रभाव ही नहीं है। राजा को प्रशासन सम्बन्धी समस्त सूचनाएँ प्राप्त करने का अधिकार है और उसे अधिकार है कि वह मन्त्रिमण्डल को परामर्श दे एवं मन्त्रिमण्डल को उसके कार्यों के लिए प्रोत्साहित करे या चेतावनी दे। यदि राजा प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला व्यक्ति है तो उसके द्वारा अपने परामर्श के आधार पर शासन कार्य को पर्याप्त सीमा तक प्रभावित किया जा सकता है।

(२) व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में घनिष्ट सम्बन्ध—मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के बीच घनिष्ट सम्बन्ध पाया जाता है। सभी मन्त्री संसद में से लिये जाते हैं और ब्रिटिश व्यवस्था का यह लक्षण अमरीकी व्यवस्था के नितान्त विपरीत है जो कि शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित है और जिसमें व्यवस्थापिका और कार्यपालिका एक दूसरे से पृथक् रहते हुए अपना कार्य करती हैं। लास्की के शब्दों में—"ब्रिटिश कैबीनेट पार्लियामेण्ट से पृथक् नहीं वरन् उसका ही एक भाग है। यह वास्तव में शासन के कार्यपालिका विभाग को

व्यवस्थापन विभाग के साथ संयुक्त करने वाला साधन है।"[1] मन्त्रिमण्डल संसद को निर्देशित और नियन्त्रित करता है तथा यह संसद के विचार के विषयों का भी निश्चित करता है। यद्यपि मन्त्रिमण्डल लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होता है और अन्तिम रूप में लोकसदन के द्वारा अविश्वास का प्रस्ताव पास कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत भी किया जा सकता है लेकिन इसके साथ ही यह भी सत्य है कि प्रधानमन्त्री के द्वारा सम्राट को परामर्श देकर लोकसदन को विघटित करवाया जा सकता है। इस प्रकार लोकसदन स्वयं को नष्ट किये बिना मन्त्रिमण्डल को नष्ट नहीं कर सकता है। इस स्थिति का स्वाभाविक परिणाम यह है कि व्यवस्थापिका और कार्यपालिका को एक दूसरे के साथ सहयोग करना होता है। वे उस प्रकार से परस्पर विरोधी दिशाओं में नहीं बढ़ते, जैसा कि अमरीका में कई बार होता है और अभी १९७३ में हो रहा है। बेजहाट के शब्दों में **'ब्रिटिश राजनीति का समस्त जीवन मन्त्रिमण्डल और संसद की क्रिया प्रतिक्रिया ही है।'** यह क्रिया प्रतिक्रिया पारस्परिक विरोध की भावना पर नहीं, वरन् समझौते और लेन देन की भावना पर आधारित होती है।

(३) **मन्त्रिमण्डल का सामूहिक उत्तरदायित्व**—सामूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त ब्रिटेन का आधुनिक राजनीतिक पद्धति के लिए मुख्य योगदान है और जैसा कि विवटिन हाग ने कहा है, **'यह अंग्रेजी मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था की कार्यविधि का मूल आधार है।'**[2] सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का तात्पर्य है कि प्रत्येक मन्त्री अपने विभाग के लिए व्यक्तिगत रूप से तथा अन्य विभागों के लिए सामूहिक रूप से लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होते है।

त्रिमुखी उत्तरदायित्व—मन्त्रिमण्डल के अधिकार क्षेत्र के समान ही उसका उत्तरदायित्व भी व्यापक है और उसे तीन सत्ताओं के प्रति अपने दायित्व का पालन करना होता है। **प्रथमतः**, मन्त्री सम्राट के प्रति उत्तरदायी होते हैं, किन्तु वर्तमान समय में यह दायित्व औपचारिक ही है, क्योंकि सम्राट उस समय तक किसी भी मन्त्री को पदच्युत नहीं कर सकते, जब तक कि उसके पीछे लोकसदन का बहुमत है। **द्वितीयतः**, मन्त्री परस्पर एक दूसरे के प्रति उत्तरदायी होते हैं क्योंकि मन्त्रिमण्डल का उत्तरदायित्व सामूहिक होता है और एक की गलती का परिणाम सभी को भुगतना होता है। इसी कारण प्रत्येक विभाग के महत्त्वपूर्ण मामलों पर पूरे मन्त्रिमण्डल की बैठकों में ही निर्णय लिये जाते हैं।

1 The British Cabinet is an integral and living part of Parliament and not separated from it It is an instrument for linking the executive branch of government with the legislative
—Laski *Parliamentary Government in England* p 221

2 'Collective responsibility is the corner-stone of the British Cabinet System
—Quintin Hogg *The Purpose of Parliament*, p 65

त्रिमुखी उत्तरदायित्व का तीसरा और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण रूप है मन्त्रि-मण्डल का लोकसदन के प्रति सामूहिक उत्तरदायित्व। इसका तात्पर्य यह है कि यदि लोकसदन किसी एक मन्त्री के विरुद्ध भी अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर दे तो या तो सारा मन्त्रिमण्डल अपना त्यागपत्र दे देगा या प्रधानमन्त्री सम्राट से लोक सदन को भंग करने के लिए आग्रह करेगा। इसका कारण यह है कि सभी विभागों के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों का निर्णय अकेले मन्त्री के द्वारा नहीं वरन सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल के द्वारा किया जाता है। मन्त्रिमण्डल लोकसदन और सम्राट के सम्मुख एक इकाई की भाँति कार्य करता है और लार्ड मार्ले की भाषा में "वे साथ साथ तैरते या साथ साथ डूबते हैं।"[1] विदेश विभाग के एक त्रुटिपूर्ण पत्र का प्रभाव वित्तमन्त्री पर पडता है और एक श्रेष्ठ गृहमन्त्री को युद्धमन्त्री की भूलों से हानि उठानी पडती है।

मन्त्रिमण्डल की जब बैठकें होती है तो मन्त्री स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचार व्यक्त करते हैं, वे परस्पर मतभेद व्यक्त कर सकते है लेकिन मन्त्रिमण्डल के द्वारा जब कोई निर्णय ले लिया जाय, तो चाहे यह निर्णय उनके विचारों के अनुकूल हो या प्रतिकूल, मन्त्रिमण्डल के सदस्य होने के नाते उन्हें यह निर्णय स्वीकार करना होता है और उनके द्वारा जनता, सम्राट या संसद के सामने अपने मतभेद व्यक्त नहीं किये जा सकते। प्रो० कीथ ने लिखा है "यदि संसद में मत लिया जाय तो प्रत्येक मन्त्री को सरकार के पक्ष में निर्णय देना चाहिए। वह इस आधार पर अपना बचाव नहीं कर सकता कि उसकी बात नहीं मानी गयी थी। यदि वह उत्तरदायित्व नहीं लेना चाहता है, तो उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए।" इसी प्रकार लार्ड सैलिस-बरी के अनुसार "मन्त्रिमण्डल का प्रत्येक सदस्य, जो त्यागपत्र नहीं देता, निश्चित रूप से उत्तरदायी होता है और उसे बाद मे यह कहने का कोई अधिकार नहीं है कि एक मामले मे तो वह समझौते के लिए सहमत हुआ था और दूसरे मे अपने साथियो द्वारा राजी कर लिया गया।"[2]

सामूहिक उत्तरदायित्व से बचाव केवल त्यागपत्र द्वारा ही हो सकता है। उदाहरणार्थ, लार्ड मार्ले तथा मि० बर्न्स ने १९१४ में एस्क्विथ मन्त्रिमण्डल से अपना त्यागपत्र दे दिया था, क्योंकि वे मन्त्रिमण्डल के युद्ध घोषणा के निर्णय से सहमत नहीं थे। सर हरबर्ट सम्युअल, अन्य उदारवादियों तथा विस्काउण्ट स्नोडन ने १९३२ मे अपना त्यागपत्र दे दिया, क्योंकि वे प्रधानमन्त्री रैम्जे मैक्डानल्ड द्वारा किये गये

[1] They swim and sink togther —*Lord Marley*

[2] 'Each member of the Cabinet who does not resign is absolutely and irretrievably responsible and has no right afterwards to say that he agreed in one case to a compromise while in another he was persuaded by his colleagues —Lord Salisbury (Quoted from Lady Cecil's *Life of Robert Marquis of Salisbury* Vol II pp 219 20)

ओटावा समझौते से सहमत नही थे। १९३८ मे पहले एन्थोनी ईडन और बाद म डफ कूपर द्वारा अपना त्यागपत्र दे दिया गया, क्योंकि वे प्रधानमन्त्री चम्बरलेन की जमनी के प्रति तुष्टीकरण नीति से सहमत नही थे। ऐसे अन्य भी अनेक उदाहरण हैं।

सामूहिक उत्तरदायित्व का यह सिद्धान्त न केवल केबीनेट के सदस्यो वरन राज्यमन्त्रियो, उपमन्त्रियो, ससदीय सचिवो, जूनियर लार्डों और राजनीतिक कार्यपालिका के सभी सदस्यो पर लागू होता है। प्रधानमन्त्री एटली ने अपने पाँच ससदीय सचिवो को पदच्युत कर दिया, जब उन्होंने ग्रेट ब्रिटेन के आयरलण्ड के साथ सम्बन्धो के बारे म एक सरकारी विधेयक के विरुद्ध मत दिये।

सामूहिक उत्तरदायित्व का यह सिद्धान्त ससदीय व्यवस्था के सचालन के लिए निश्चित रूप से बहुत उपयोगी है। यह मन्त्रिमण्डल के सदस्यो म पारस्परिक विश्वास उत्पन्न करता है और मन्त्रिमण्डल को आवश्यक शक्ति प्रदान करता है। लास्की के शब्दो मे '**सामूहिक उत्तरदायित्व पारस्परिक विश्वास उत्पन्न करता है और नीति निर्धारण मे उस लेन देन को सम्भव करता है, जिसके बिना प्रभावदायक पारस्परिक विश्वास प्राप्त नहीं किया जा सकता।**'[1]

(४) **व्यक्तिगत उत्तरदायित्व**—सामूहिक उत्तरदायित्व के साथ साथ मन्त्रियो का व्यक्तिगत उत्तरदायित्व भी होता है। एमरी के शब्दो मे '**मन्त्रियो का सामूहिक उत्तरदायित्व उनके व्यक्तिगत उत्तरदायित्व को कम नहीं करता।**'[2] इस सम्बन्ध म सामान्य परम्परा यह है कि महत्वपूर्ण नीति सम्बन्धी मामलो म उत्तरदायित्व सामूहिक होता है किन्तु एक मन्त्री विशेष के कार्य और आचरण से सम्बन्धित विषयो म उत्तरदायित्व व्यक्तिगत होता है। यदि मन्त्री की किसी व्यक्तिगत त्रुटि या उसके विवेकहीन आचरण की ससद मे आलोचना की जाती है तो प्रधानमन्त्री सारे मन्त्रिमण्डल का त्यागपत्र देने के बजाय उस मन्त्री विशेष से त्यागपत्र देने के लिए कह सकता है। उदाहरणस्वरूप १९३६ मे बजट का भेद खुल जाने के कारण जे० एच० टामस को त्यागपत्र देना पडा और एटली सरकार के वित्तमन्त्री सर ह्यूज डाल्टन को भी इसीलिए त्यागपत्र देना पडा कि उन्होने अपने बजट की कुछ बातें अपने एक प्रिय पत्रकार को बताने की भूल की। मैकमिलन मन्त्रिमण्डल के युद्धमन्त्री जॉन प्रोफ्यूमो को अपना त्यागपत्र देना पडा क्योंकि उनके क्रिश्चियन कीलर से अनुचित सम्बन्ध थे और उन्होने इस बात से इन्कार करके ससद को धोखा दिया।

1 Collective responsibility begets mutual confidence and make possible that give and take in the shaping of policy without whic any effective mutual confidence is rarely attained
—Laski *Parliamentary Government in England*, p 25

2 The collective responsibility of ministers in no way derogat from their individual responsibility
—Amery *Thoughts on the Constitution* p 7

अनेक बार ऐसे भी उदाहरण मिले हैं जबकि व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का गलत रूप म प्रयोग करते हुए मन्त्रिमण्डल को बचा लिया गया। १९३६ म होर लावाल समझौते पर सर सम्युअल होर का त्यागपत्र ऐसा ही एक उदाहरण है। यह नितान्त स्पष्ट था कि विदेशमन्त्री सर सम्युअल होर के द्वारा यह समझौता प्रधानमन्त्री और कबीनेट के अन्य प्रमुख साथियों की सहमति के बिना नही किया जा सकता था। लेकिन जब पार्लियामेण्ट के अन्दर और बाहर होर-लावाल समझौते' का प्रचण्ड विरोध हुआ तो इस समझौते का समस्त दायित्व होर को अपने ऊपर लेना दिया गया और सरकार को बचाने के लिए सर सैम्युअल होर को बलि का बकरा बना दिया गया।

(५) **गोपनीयता**—मन्त्रिमण्डलीय व्यवस्था का एक प्रमुख सिद्धान्त गोपनीयता होता है। मन्त्रिमण्डल के सदस्य उन सभी बातो के विषय में गोपनीयता बरतने के लिए बाध्य होते है जिनके विषय मे ऐसा करने का निर्णय मन्त्रिमण्डल ने किया हो। मन्त्रिमण्डल की बैठकों मे जो विवाद होते हैं इगलण्ड म इनका कोई लेखा नही रखा जाता है, केवल मन्त्रिमण्डल के निर्णयों का लेखा रखा जाता है। १९१६ तक तो मन्त्रिमण्डल के निर्णयो का भी कोई लेखा नही रखा जाता था लकिन युद्धकाल म व्यावहारिक कठिनाइयां उत्पन्न होने के कारण १९१७ मे लायड जार्ज द्वारा **'मन्त्रिमण्डलीय सचिवालय'** की स्थापना की गयी। गोपनीयता का निर्वाह करने के लिए प्रत्येक मन्त्री को अपना पद ग्रहण करने के पूर्व शपथ लेनी होती है। इसके अतिरिक्त १९२० के **'राजकीय गुप्तता अधिनियम'** (Official Secrets Act) के अनुसार भी वे गोपनीयता बरतने के लिए बाध्य होते है। गोपनीयता का उल्लंघन करने पर मन्त्री को त्यागपत्र देना होता है। १९२२ मे भारत मन्त्री को इसीलिए त्यागपत्र देना पडा था कि उनसे भारत विषयक कुछ रहस्य प्रकट हो गये थे। इसी प्रकार १९३४ मे भूतपूर्व श्रममन्त्री जार्ज लैंसबरी के पुत्र एटगर लैंसबरी पर जुर्माना किया गया था, क्योंकि उनके जीवन चरित्र मे कबीनेट को दिये गये एक ज्ञापन को प्रकाशित कर दिया गया था। सामूहिक उत्तरदायित्व के पालन हेतु गोपनीयता के नियम का पालन आवश्यक भी है।

(६) **राजनीतिक सजातीयता** (Political homogeneity)—सामूहिक उत्तरदायित्व तथा गोपनीयता के सिद्धान्त का पालन इसी आधार पर सम्भव होता है कि मन्त्रिमण्डल एकदलीय होता है। सामान्यत ब्रिटेन म मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्य एक ही राजनीतिक दल में स लोकसदन के बहुमत वाले दल मे स लिये जाते है और डिजरैले के शब्दो म 'इगलण्ड मिले-जुले मन्त्रिमण्डलो को पसन्द नहीं करता।' राष्ट्रीय या मिले जुले मन्त्रिमण्डलो का गठन केवल सकटकाल की स्थिति म ही किया जाता है और वे सकटकालीन स्थिति तक ही विद्यमान रहते हैं। वास्तव मे, यह राजनीतिक सजातीयता या दलीय लक्षण ही मन्त्रिमण्डल को सिद्धान्तो और कार्यों की एकता प्रदान करता है। लास्की के शब्दो म 'सभी सामान्य परिस्थितियों में सामूहिक

उत्तरदायित्व का रहस्य दलीय पद्धति मे निहित है। यह दलीय लक्षण ही मन्त्रिमण्डल को नीति और कार्य की एकता प्रदान करता है।"

(७) **प्रधानमन्त्री का नेतृत्व**—प्रधानमन्त्री का नेतृत्व इस पद्धति की एक अन्य विशेषता है और राजनीतिक एकता तथा सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का पालन प्रधानमन्त्री के नेतृत्व मे ही किया जा सकता है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का नेता होता है। वह मन्त्रियो की नियुक्ति करता, उनके विभागो का वितरण करता, उनके कार्यों म सामजस्य उत्पन्न करता, उनकी कार्यवाहियो का निरीक्षण करता तथा उन्हे पदच्युत कर सकता है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल रूपी उस राजनीतिक खिलाडियो की टीम का नेता होता है जिसके नेतृत्व मे मन्त्रिमण्डल राजनीतिक खेल खेलता है। इस प्रकार प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल के वृत्तखण्ड की मुख्य शिला है और समस्त मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था प्रधानमन्त्री के नेतृत्व पर आधारित है। वर्तमान समय की प्रवृत्ति तो प्रधानमन्त्री के पद को पूर्व की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली बनाने की ही है।

मन्त्रिमण्डल का गठन

मन्त्रिमण्डल के गठन की प्रक्रिया प्रधानमन्त्री की नियुक्ति से प्रारम्भ होती है। औपचारिक रूप से प्रधानमन्त्री का चुनाव सम्राट द्वारा किया जाता है। लेकिन सामान्यतया ब्रिटेन की द्विदल पद्धति के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री का चुनाव महानिर्वाचन म जनता द्वारा ही किया जाता है। सुस्थापित परम्परा के अनुसार सम्राट लोकसदन के बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के लिए आमन्त्रित करता है। अत सामान्यतया इस सम्बन्ध म सम्राट की व्यक्तिगत इच्छा या विवेक का कोई महत्त्व नही है। लेकिन विशेष परिस्थितियो मे, जबकि एक प्रधानमन्त्री अकस्मात त्यागपत्र दे दे या उसकी मृत्यु हो जाय और उसका कोई निश्चित उत्तराधिकारी न हो, तो सम्राट प्रधानमन्त्री के चुनाव मे अपने विवेक का प्रयोग कर सकता है। भूतकाल म कुछ अवसरो पर इस सम्बन्ध मे सम्राट ने अपने विवेक का प्रयोग किया भी है, लेकिन ऐसा करते समय उसे इस बात को ध्यान म रखना होता है कि उसके द्वारा इस पद के लिए चुना गया व्यक्ति लोकसदन के बहुमत का विश्वासभाजन हो। वर्तमान समय मे एक बात के कारण सम्राट द्वारा प्रधानमन्त्री का चुनाव करने मे अपने विवेक का प्रयोग करने के अवसर और कम हो गये हैं। अब ग्रेट ब्रिटेन के दोनो ही प्रमुख दल, मजदूर दल और अनुदार दल, ने इस चलन को अपना लिया है कि महानिर्वाचन के बाद और इसके बाद जब कभी प्रधानमन्त्री का पद रिक्त हो, लोकसदन का बहुमत स्वय अपने नेता का चुनाव करेगा।

राबर्ट वालपोल के समय से ही प्रत्येक प्रधानमन्त्री ससद के दोनो मे से किसी एक सदन का सदस्य रहा है और १९२३ म जार्ज पचम द्वारा लॉर्ड कर्जन के स्थान पर बाल्डविन को प्रधानमन्त्री पद प्रदान करने से यह परम्परा स्थापित हो गई है कि

प्रधानमन्त्री लोकसदन का ही सदस्य होना चाहिए। लार्ड सभा के सदस्य होने के कारण ही लॉर्ड कर्जन को प्रधानमन्त्री पद से वंचित रखा गया था।

अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति सम्राट के द्वारा प्रधानमन्त्री के परामर्श के आधार पर की जाती है और रानी विक्टोरिया के बाद से ही इस सम्बन्ध में सम्राट का प्रभाव समाप्त हो गया है। नवीन सरकार के निर्माण का निमन्त्रण प्राप्त होने के बाद प्रधानमन्त्री अपने सहयोगियों की सूची सम्राट को देता है और सम्राट के द्वारा उनके नामों की घोषणा की जाती है।

परम्परा के अनुसार मन्त्रिमण्डल के सदस्यों के लिए संसद का सदस्य होना अनिवार्य है। किसी ऐसे व्यक्ति को, जो नियुक्ति के समय संसद सदस्य न हो, केवल ६ मास की अवधि के लिए मन्त्री बनाया जा सकता है। इस बीच में या तो उसे लार्ड की उपाधि देकर लार्ड सभा का सदस्य बना दिया जाता है या वह उपचुनाव में किसी निर्वाचन क्षेत्र में चुनकर आता है। मन्त्रिमण्डल में दोनों ही सदनों को प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाता है। सामान्यतः प्रत्येक कैबीनेट में चार मन्त्री लार्ड सभा में से होते हैं यद्यपि इस प्रकार की कोई कानूनी व्यवस्था नहीं है। इसके अतिरिक्त प्रधानमन्त्री को अपने सहयोगियों का चुनाव करने में अपने दल के अन्दर विभिन्न व्यक्तियों की स्थिति विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों और समुदायों का प्रतिनिधित्व, सदस्यों की दक्षता और उनकी समाज सेवा की भावना आदि का ध्यान रखना होता है। सहयोगियों का चुनाव निश्चित रूप से एक कठिन और महत्त्वपूर्ण विषय है, क्योंकि मन्त्रिमण्डल की सफलता सही सहयोगियों के चुनाव पर ही निर्भर करती है। इस सम्बन्ध में लावेल ने ठीक ही लिखा है कि, "प्रधानमन्त्री का यह कार्य ऐसा ही है जैसा कि बहुत से ऐसे ब्लाकों की सहायता से जो एक दूसरे से मेल न खाते हों, एक चित्र तैयार करना।"[1]

यद्यपि सहयोगियों के चुनाव में प्रधानमन्त्री के द्वारा कुछ वास्तविकताओं को दृष्टि में रखा जाता है, लेकिन जहाँ तक वैधानिक दृष्टिकोण का सम्बन्ध है, वह अपने सहयोगियों के चुनाव में पूर्ण स्वतन्त्र होता है। व्यवहार में भी इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णायक तो उसका अपना विवेक ही है। एमरी लिखते हैं कि, "वास्तव में किसी अधिनायक को ही अपनी कैबीनेट के निर्माण में इतनी अधिक स्वेच्छाचारी शक्ति प्राप्त होती है, जितनी कि ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को।"[2]

मन्त्रिमण्डल की सदस्य संख्या निश्चित करना, उनके स्तर निर्धारित करना और उनमें विभागों का वितरण करना प्रधानमन्त्री का ही कार्य है। मन्त्रिमण्डल का

[1] A L Lowell *The Government of England*, Vol I p 57

[2] No dictator indeed enjoys such a measure of autocratic power as enjoyed by the British Prime Minister in the process of making up his Cabinet —Amery, *Thoughts on the Constitution* p 24

निर्माण हो चुकने के बाद भी प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल में कोई भी परिवर्तन कर सकता है। किसी एक राजनीतिक दल को लोकसदन में स्पष्ट बहुमत प्राप्त न होने पर संयुक्त मन्त्रिमण्डल या संकट की स्थिति में 'राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डल' का निर्माण किया जा सकता है। युद्धकाल में मन्त्रिमण्डल की भी एक आन्तरिक समिति के रूप में युद्ध मन्त्रिमण्डल का गठन किया जा सकता है, जैसा कि प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध के समय किया गया था।

१९३७ के 'सम्राट के मन्त्रि परिनियम' (Ministers of Crown Act) के अनुसार वर्तमान समय में मन्त्रिमण्डल में निम्न पद होते हैं

(१) प्रधानमन्त्री तथा राजकोष का प्रथम लार्ड (Prime Minister and the First Lord of the Treasury)।

(२) चान्सलर आफ एक्सचेकर या वित्तमन्त्री (Chancellor of Exchequer)।

(३) गृह विभाग का सचिव।

(४) उपनिवेशों का सचिव।

(५) विदेश विभाग का सचिव।

(६) नभ सेना का सचिव।

(७) युद्ध सचिव।

(८) जल सेना का लार्ड।

(९) स्काटलैण्ड का सचिव।

(१०) व्यापार मण्डल का अध्यक्ष (President of the Board of Trade)

(११) शिक्षा बोर्ड का अध्यक्ष (President of the Board of Education)

(१२) कृषि तथा मत्स्य विभाग का सचिव।

(१३) स्वास्थ्य विभाग का मन्त्री।

(१४) यातायात विभाग का मन्त्री।

(१५) श्रममन्त्री।

(१६) लार्ड प्रिवी सील।

(१७) पोस्ट-मास्टर जनरल।

(१८) लॉर्ड प्रेसीडेण्ट आफ कौंसिल।

(१९) फर्स्ट कमिश्नर ऑफ वर्क्स एण्ड पेंशन।

(२०) कोआर्डिनेशन का मन्त्री।

मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की संख्या कम अधिक हो सकती है। इसी परिनियम के अनुसार ही प्रधानमन्त्री का वार्षिक वेतन १० हजार पौण्ड वार्षिक, मन्त्रिमण्डल के

मन्त्रियों का वेतन ५ हजार पौण्ड तथा कुछ अन्य मन्त्रियों तथा सचिवों का वेतन १,५०० पौण्ड से लेकर ३,००० पौण्ड वार्षिक तक निश्चित किया गया है। जून १९७० के आम चुनाव के बाद एडवर्ड हीथ की अध्यक्षता में निर्मित मन्त्रिमण्डल १९५७ के बाद अब तक निर्मित मन्त्रिमण्डलों में सबसे छोटा है। इस मन्त्रिमण्डल में केवल १७ सदस्य हैं।[1]

मन्त्रिपरिषद और मन्त्रिमण्डल (केबीनेट)
(Council of Ministers and the Cabinet)

साधारणतया लोग मन्त्रिपरिषद तथा मन्त्रिमण्डल को एक ही संस्था मान लेते हैं लेकिन ये दोनों एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं हैं और इन दोनों में पर्याप्त अन्तर है। मन्त्रिपरिषद प्रो० आग के अनुसार "एक वृहद संस्था होती है जिसमें राजनीतिक कार्यपालिका के सभी पदाधिकारी होते हैं जो संसद के सदस्य होते हैं और लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होते हैं और जो तब तक अपने पद पर रहते हैं जब तक कि लोकसदन में उनको बहुमत का समर्थन प्राप्त रहता है। लेकिन मन्त्रिमण्डल जैसा कि रैम्जे म्योर कहते हैं "मन्त्रिपरिषद का हृदय है शासन का परिचालक यन्त्र है जिसमें सभी महत्त्वपूर्ण विभागों के राजनीतिक अध्यक्ष सम्मिलित रहते हैं, साथ ही कुछ प्राचीन तथा प्रतिष्ठित पदों के अधिकारी भी।" इस प्रकार मन्त्रिमण्डल को मन्त्रिपरिषद रूपी वृहद चक्र का एक आन्तरिक चक्र कहा जा सकता है।

मन्त्रिपरिषद और मन्त्रिमण्डल के भेद निम्न रूपों में स्पष्ट किये जा सकते हैं

(१) **आकार सम्बन्धी भेद**—मन्त्रिमण्डल का आकार मन्त्रिपरिषद की तुलना में बहुत छोटा होता है। मन्त्रिपरिषद में सामान्यतया ७० से लेकर ९० तक सदस्य होते हैं और अक्टूबर १९६४ में हेरल्ड विल्सन द्वारा निर्मित मन्त्रिपरिषद में तो १०१ सदस्य थे, किन्तु मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की संख्या १८-२३ के बीच ही होती है।

(२) **पद सम्बन्धी भेद**—दोनों का दूसरा महत्त्वपूर्ण अन्तर पद सम्बन्धी है। समस्त राजनीतिक कार्यपालिका को मन्त्रिपरिषद के नाम से जाना जाता है और इसमें कई श्रेणियों के सदस्य होते हैं, जैसे (१) मन्त्रिमण्डलीय स्तर के मन्त्री जो मन्त्रिमण्डल के स्थायी सदस्य होते हैं, इनमें से कुछ किन्हीं विशेष विभागों के प्रधान होते हैं और कुछ बिना विभाग के मन्त्री होते हैं, (२) मन्त्रिमण्डलीय स्तर के व मन्त्री,

1 *Britannica Book of the Year 1971*, p 755

2 'The Ministry is a large body consisting of the whole number of Crown officials who have seats in Parliament are responsible to the House of Commons and hold office subject to the approval of the working majority in that body '

—Ogg *English Government and Politics* p 121

जो मन्त्रिमण्डल के स्थायी सदस्य नही होते है, वरन मन्त्रिमण्डल की केवल उन्ही बठको मे शामिल होते हैं जिनमे उनके विभाग मे सम्बन्धित विषयो पर विचार किया जाना हो, (३) अन्य मन्त्री (४) राजमन्त्री, (५) ससदीय उप सचिव, (६) जूनियर लाड, (७) ससदीय निजी सचिव आदि।

मन्त्रिपरिषद के सदस्यो की इन विभिन्न श्रेणियो म से केवल प्रथम श्रेणी के सदस्य मन्त्रिमण्डल के सदस्य होते हैं। इस प्रकार मन्त्रिमण्डल का प्रत्येक सदस्य मन्त्रिपरिषद का सदस्य होता है लेकिन मन्त्रिपरिषद का प्रत्येक सदस्य मन्त्रिमण्डल का सदस्य नही होता। स्वाभाविक रूप म मन्त्रिमण्डल के सदस्यो का पद मन्त्रिपरिषद के अन्य सदस्यो की तुलना म उच्च होता है।

(३) **वेतन सम्बन्धी अन्तर**—विभिन्न स्तर के मन्त्रियो के वेतन मे भी अन्तर होता है। प्रधानमन्त्री को १० हजार पौण्ड वार्षिक वेतन, मन्त्रिमण्डल के अन्य सदस्यो को ५ हजार पौण्ड वार्षिक वेतन तथा अन्य स्तर के मन्त्रियो को १,५०० पौण्ड वार्षिक से लेकर ३,००० पौण्ड वार्षिक तक वेतन मिलता है।

(४) **कार्य और शक्ति सम्बन्धी अन्तर**—मन्त्रिमण्डल के सदस्यो और मन्त्रिपरिषद के सदस्यो मे सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अन्तर कार्य और शक्ति से सम्बन्धित होता है। इस दृष्टि से मन्त्रिमण्डल के सदस्य अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं और मन्त्रिपरिषद के सदस्य कम महत्त्वपूर्ण। मन्त्रिमण्डल के सदस्य सामान्यतया विभिन्न प्रशासनिक विभागो के अध्यक्ष होते है, उनके द्वारा समस्त प्रशासनिक व्यवस्था से सम्बन्धित महत्त्वपूर्ण बातो के सम्बन्ध मे नीति का निर्धारण किया जाता है और उनके द्वारा विभिन्न विभागो मे सामजस्य भी स्थापित किया जाता है। मन्त्रिपरिषद के सदस्यो को इस प्रकार का कोई महत्त्वपूर्ण कार्य नही करना होता।

उपरोक्त भेदो के बावजूद मन्त्रिपरिषद और मन्त्रिमण्डल दोनो ही राजनीतिक कार्यपालिका के अग है। प्रधानमन्त्री का त्यागपत्र न केवल मन्त्रिमण्डल वरन समस्त मन्त्रिपरिषद का त्यागपत्र समझा जाता है और लोकसदन द्वारा अविश्वास का प्रस्ताव पास किये जाने पर सम्पूर्ण मन्त्रिपरिषद को त्यागपत्र देना होता है।

मन्त्रिमण्डल की कार्य-पद्धति

सम्राट जार्ज प्रथम के समय से ही सम्राट मन्त्रिमण्डल की बैठको म भाग नही लेता और अब यह मन्त्रिमण्डलीय पद्धति का एक स्वीकृत सिद्धान्त बन गया है। मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व प्रधानमन्त्री ही करता है। जब ससद का अधिवेशन हो रहा हो तब मन्त्रिमण्डल की सप्ताह म दो बार बैठकें होती हैं और जब ससद का अधिवेशन नही चल रहा हो, तो सप्ताह मे एक बार ही बैठक होती है। इसके अतिरिक्त प्रधानमन्त्री कभी भी आवश्यकतानुसार मन्त्रिमण्डल की बैठके बुला सकता है। ससदीय कार्यक्रम, परराष्ट्र नीति और प्रधानमन्त्री द्वारा प्रस्तावित अन्य विषयो के सम्बन्ध म इन बैठको मे विचार किया जाता है। अपने कार्यों के सुचारु सचालन के लिए मन्त्रिमण्डल के द्वारा अनेक स्थायी और अस्थायी समितियो

का निर्माण किया जाता है। इनमें से कुछ समितियाँ इस प्रकार हैं विधान समिति, प्रतिरक्षा समिति, लॉर्ड प्रेसीडेण्ट की समिति, आर्थिक नीति समिति और उत्पादन समिति। मन्त्रिमण्डल की सहायता और वास्तविक प्रशासन के सचालन के लिए एक **'मन्त्रिमण्डलीय सचिवालय'** होता है।

मन्त्रिमण्डल के कार्य तथा शक्तियाँ

मन्त्रिमण्डल के कार्यों तथा शक्तियों का आधार वैधानिक न होकर परम्परागत है। जहाँ तक वैधानिक स्थिति का सम्बन्ध है, मन्त्रिमण्डल सम्राट की एक परामर्शदात्री समिति मात्र है, किन्तु वास्तविक स्थिति यह है कि सम्राट की सभी शक्तियों का उपभोग कैबीनट के द्वारा ही किया जाता है। राजतन्त्र के लोकतन्त्रीकरण की प्रक्रिया में राजा के पद की शक्तियाँ ज्यों-ज्यों कम होती गयी, मन्त्रिमण्डल की शक्तियाँ वैसे-वैसे बढ़ती गई हैं। आज जैसा कि सर जॉन मेरियट कहते हैं, *'यह एक ऐसा केन्द्र बिन्दु है, जिसके चारों ओर समस्त राजनीतिक यन्त्र घूमता है।'* ग्लैडस्टन के अनुसार, **'मन्त्रिमण्डल वह सूर्य पिण्ड है जिसके चारों ओर अन्य पिण्ड घूमते रहते हैं।'** हाल्डेन समिति के प्रतिवेदन में मन्त्रिमण्डल को **'सम्पूर्ण शासनतन्त्र का मुख्य आधार'** बतलाया गया है। रम्जे म्योर, लावेल, एमरी, बजहॉट और ब्रिटिश संविधान के लेखकों ने भी शासन व्यवस्था में मन्त्रिमण्डल की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए ऐसी ही गौरवपूर्ण शब्दावली का प्रयोग किया है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि मन्त्रिमण्डल ब्रिटिश शासन व्यवस्था का हृदय है और ब्रिटिश शासन व्यवस्था में मन्त्रिमण्डल को जितनी महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है उतनी शासन के अन्य किसी भी अंग को नहीं।

शासन का आधार बिन्दु होने के कारण मन्त्रिमण्डल के कार्य बहुमुखी हैं। सन् १९१८ में सरकार द्वारा नियुक्त शासन-तन्त्र समिति ने अपने प्रतिवेदन में मन्त्रिमण्डल के निम्न कार्य बताये हैं

(१) संसद के सम्मुख प्रस्तुत की जाने वाली नीति का अन्तिम निर्धारण,

(२) संसद द्वारा निश्चित नीति के अनुसार राष्ट्रीय कार्यपालिका का सर्वोच्च नियन्त्रण,

(३) राज्य प्रशासन के विभिन्न विभागों की शक्तियों को परिसीमित करना और उनमें निरन्तर सामंजस्य स्थापित करना।

वास्तव में, इस प्रतिवेदन में मन्त्रिमण्डल की केवल कार्यपालिका शक्तियों का ही उल्लेख किया गया है। वर्तमान समय में मन्त्रिमण्डल को कार्यपालिका क्षेत्र के अतिरिक्त विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं, जिनका उल्लेख इन रूपों में किया जा सकता है

(१) कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य—मन्त्रिमण्डल ही ब्रिटेन की वास्तविक कार्यपालिका है और इस रूप में उसके द्वारा व्यापक शक्तियों का उपभोग किया जाता है, जिनमें से कुछ अग्र प्रकार हैं

(1) **राष्ट्रीय नीति निर्धारित करना**—मन्त्रिमण्डल का सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य राष्ट्रीय नीति निर्धारित करना है। मन्त्रिमण्डल यह निश्चित करता है कि आन्तरिक क्षेत्र में प्रशासन के विभिन्न विभागों द्वारा और वैदेशिक क्षेत्र में दूसरे देशों के साथ सम्बन्ध के विषय में किस प्रकार की नीति अपनाई जायगी। रैम्जे म्योर के शब्दों में, 'वास्तविक कार्यपालिका के रूप में मन्त्रिमण्डल राष्ट्रीय नीति की रूपरेखा परिभाषित करता है और यह निश्चित करता है कि देश और विदेश में उत्पन्न प्रत्येक सामयिक समस्या को किस प्रकार हल किया जायगा।" मन्त्रिमण्डल द्वारा निर्धारित नीति के आधार पर ही समस्त प्रशासनिक व्यवस्था चलती है।

(ii) **राष्ट्रीय कार्यपालिका पर सर्वोच्च नियन्त्रण**—शासन की समस्त कार्यपालिका शक्ति का प्रयोग वास्तव में मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही किया जाता है। मन्त्रिगण विभिन्न विभागों के अध्यक्ष होते हैं, वे अपने विभागों का संचालन करते और उनके कार्यों की देख-भाल करते हैं। सम्राट की समस्त कार्यपालिका शक्तियों का प्रयोग मन्त्रिमण्डल ही करता है। राजनयिक स्तर के प्रमुख पदाधिकारियों का चयन भी मन्त्रिमण्डल ही करता है, सम्राट इन्हें केवल औपचारिक रूप से नियुक्त कर देता है।। संसद में प्रशासन से सम्बन्धित जो प्रश्न पूछे जाते हैं उनका उत्तर मन्त्रिमण्डल को ही देना होता है। इसी प्रकार संसद में मन्त्रिमण्डल व प्रशासन के विविध विभागों के कार्यों की जो आलोचना की जाती है, उन्हें दृष्टि में रखते हुए मन्त्रिमण्डल को प्रशासन के दोष दूर करने का प्रयत्न करना होता है।

(iii) **मन्त्रिमण्डल का समन्वयकारी कार्य**—प्रशासनिक सुविधा के लिए सरकार को विभिन्न प्रशासनिक विभागों में विभाजित कर दिया जाता है लेकिन इन विभिन्न विभागों में विभाजित होने पर भी सरकार में एक प्रकार की आंगिक एकता पाई जाती है और सुशासन के लिए प्रशासन के विभिन्न विभागों में समन्वय नितान्त आवश्यक है। विभिन्न विभागों में इस प्रकार का समन्वय स्थापित करने का कार्य मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही किया जाता है। मन्त्रिमण्डल समस्त विभागों में नीति सम्बन्धी समन्वय स्थापित करता है और इस बात का प्रयत्न करता है कि विभिन्न विभागों में अधिकार क्षेत्र सम्बन्धी विवाद उत्पन्न न हों तथा उनके द्वारा परस्पर सहयोग किया जाय। विभिन्न विभागों के कार्यों में समन्वय स्थापित करने के लिए ही वर्तमान समय में मन्त्रिमण्डलीय समितियों की स्थापना की गई है।

(२) **व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्य**—वर्तमान समय में मन्त्रिमण्डल न केवल प्रशासनिक कार्य करता है, वरन् विधि निर्माण के क्षेत्र में भी संसद का नेतृत्व और पथप्रदर्शन करता है। संसदीय शासन में विधायी और कार्यपालिका शक्तियों के एकीकरण के कारण मन्त्रिमण्डल का संसद से अविच्छिन्न सम्बन्ध रहता है। मन्त्रिमण्डल न केवल, राष्ट्रीय नीति निर्धारित करता है, वरन् शासन की सर्वोच्च नीति और कार्यक्रम को क्रियान्वित करने के लिए आवश्यक कानूनों का निर्माण भी मन्त्रिमण्डल का ही कार्य है। सरकारी अधिकारी वैधानिक परामर्श के आधार पर विभिन्न

विधेयकों का प्रारूप तैयार करते हैं, मन्त्रिमण्डल उन्हें अंतिम स्वीकृति देता है तथा संसद में प्रस्तावित करता और बहुमत के समर्थन से उन्हें पास कराता है। अपने राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त होने के कारण मन्त्रिमण्डल का संसद पर नियन्त्रण रहता है और मन्त्रिमण्डल ही समस्त विधि निर्माण कार्य के लिए उत्तरदायी है। संसद का अधिवेशन बुलाने और स्थगित करने का कार्य सम्राट मन्त्रिमण्डल के परामर्श से ही करते हैं और मन्त्रिमण्डल के परामर्श से ही लोकसदन को विघटित किया जाता है। संसद के अधिवेशन के प्रारम्भ में सम्राट द्वारा पढ़ा जाने वाला भाषण भी मन्त्रिमण्डल ही तैयार करता है। प्रतिवर्ष विभिन्न कानूनों के अन्तर्गत जो सैकड़ों 'सपरिषद आदेश' निकलते हैं, उनके निर्माण में भी केबीनट की स्वीकृति निहित रहती है। मन्त्रिमण्डल के इन विधायी कार्यों की व्यापकता के कारण कुछ लेखकों ने इसे 'लघु विधायिका' (Little Legislature) की संज्ञा दी है। आग और जिंक ता लिखते है कि "व्यवस्थापन में मन्त्रिमण्डल का प्रभुत्व इतना अधिक है कि बिना किसी अतिशयोक्ति के कहा जा सकता है कि वर्तमान समय में विधि निर्माण संसद द्वारा नहीं वरन् मन्त्रिमण्डल द्वारा संसद के परामर्श और सहमति से होता है।"[1]

(३) **वित्तीय कार्य**—राष्ट्रीय आय व्यय का निर्धारण अर्थात बजट का निर्माण और उसे संसद में स्वीकृत कराना भी मन्त्रिमण्डल का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। वास्तव में वित्त पर मन्त्रिमण्डल का पूर्ण अधिकार होता है। वार्षिक आय-व्यय का विस्तृत ब्यौरा वित्तमन्त्री अपनी देख रेख में तैयार कराता है किन्तु बजट के मूल प्रस्ताव और आधार मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही निश्चित किय जाते हैं। मन्त्रि-मण्डल को लोकसदन के बहुमत का जो समर्थन प्राप्त होता है, उसके कारण किसी भी कर या अनुदान की माँग में कोई कटौती लोकसदन के द्वारा मन्त्रिमण्डल की सहमति के बिना नहीं की जा सकती। इसीलिए मुनरो का कहना है कि—"यदि मन्त्रिमण्डल का अनुमोदन प्राप्त करने के तुरन्त बाद सदन में भेजे बिना ब्रिटिश बजट को लागू कर दिया जाय, तो इसके अन्तिम आँकड़ों में कोई विशेष अन्तर नहीं होगा।"[2] इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र में मन्त्रिमण्डल को असाधारण शक्ति प्राप्त है और इस दृष्टि से ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल अमरीकी राष्ट्रपति से अधिक शक्तिशाली है क्योंकि अमरीकी राष्ट्रपति वित्तीय क्षेत्र में काँग्रेस की दया पर निर्भर करता है।

1 'It has come to have so much to do with legislation that it may b remarked with undue exaggeration that nowadays it is the Cabinet that legislates with advice and consent of the Parliament '
—Zink *Modern Governments*

2 If the British budget were put directly into effect as soon as it has been approved by the Cabinet without going to the House at all its final figures would not b appreciably changed
—M

अन्य कार्य—उपरोक्त के अतिरिक्त भी मन्त्रिमण्डल अन्य अनेक कार्य करता है। प्रथम, राजा क्षमा के विशेषाधिकार का प्रयोग मन्त्रिमण्डल, विशेषतया गृहमन्त्री, के परामर्श पर ही करता है। द्वितीय, राजा द्वारा उपाधियों का वितरण भी प्रधान मन्त्री के परामर्श पर ही किया जाता है। तृतीय, ब्रिटिश सम्राट द्वारा देश और विदेश में की जाने वाली समस्त नियुक्तियाँ मन्त्रिमण्डल के परामर्श के आधार पर ही की जाती हैं। चतुर्थ, महत्त्वपूर्ण न्यायालयों के न्यायाधीश लॉर्ड चांसलर (मन्त्रिमण्डल के एक सदस्य) के परामर्शानुसार ही सम्राट द्वारा नियुक्त किये जाते हैं।

वास्तव में मन्त्रिमण्डल के अधिकार और कार्य बहुत ही व्यापक हैं, वह उन सभी कार्यों को करता है, जो वैधानिक दृष्टि से सम्राट के अधिकार बताये जाते हैं। वर्तमान समय की प्रवृत्ति मन्त्रिमण्डल को और अधिक शक्तियाँ तथा कार्य प्रदान करने की है।

मन्त्रिमण्डल व संसद (लोकसदन) का सम्बन्ध

मन्त्रिमण्डल और संसद का सम्बन्ध ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सिद्धान्त और व्यवहार के अन्तर का ही एक उदाहरण है। सैद्धान्तिक दृष्टि से स्थिति एक प्रकार की है और व्यावहारिक दृष्टि से दूसरे प्रकार की। इसी कारण इन दोनों संस्थाओं के पारस्परिक सम्बन्धों के विषय पर विभिन्न लेखकों द्वारा अलग अलग विचार व्यक्त किये गये हैं। डायसी ने सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से विचार करते हुए **'संसद की प्रभुसत्ता'** का प्रतिपादन किया है लेकिन **रैम्जे म्योर तथा लास्की** ने व्यावहारिक दृष्टिकोण के आधार पर कहा है कि **'संसद की नहीं वरन् मन्त्रिमण्डल की सत्ता ही सर्वोच्च है।'**

वैधानिक दृष्टिकोण के अनुसार स्थिति

वैधानिक दृष्टिकोण के अनुसार मन्त्रिमण्डल और संसद के पारस्परिक सम्बन्धों में संसद की सत्ता सर्वोच्च है। व्यवस्थापन और प्रशासन दोनों ही क्षेत्रों में संसद की सर्वोच्चता स्पष्टतया देखी जा सकती है।

व्यवस्थापन सम्बन्धी सर्वोच्चता—वैधानिक दृष्टि से ब्रिटिश संसद को सर्वोच्चता प्राप्त है और कानून निर्माण के क्षेत्र में उसकी सत्ता की समानता करने वाली अन्य कोई भी संस्था नहीं है। ब्रिटेन में एकात्मक शासन व्यवस्था है अतः ब्रिटेन में ब्रिटिश संसद एकमात्र कानून निर्मात्री संस्था है। संविधान लचीला होने के कारण ब्रिटिश संसद सामान्य बहुमत से ही संवैधानिक कानूनों का भी निर्माण कर सकती है। संसद की व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्ति इसलिए भी सर्वोच्च है कि ब्रिटेन में **'न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था'** नहीं है, इसलिए संसद द्वारा निर्मित कानूनों को किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।

सन् १९११ और १९४९ के संसदीय अधिनियम के द्वारा लार्ड सभा की शक्तियाँ बहुत कम कर दी गई हैं और आज संसद का अभिप्राय लोकसदन से ही हो गया है।

यद्यपि व्यवहार में संसद के द्वारा कानूनों का निर्माण करते समय प्रथाओं, परम्पराओं, धार्मिक और नैतिक मान्यताओं, जनमत और व्यावहारिक परिस्थितियों आदि सभी बातों को ध्यान में रखना होता है तथापि वैधानिक स्थिति यही है कि संसद कानून निर्माण के क्षेत्र में सर्वोच्च सत्तावान् है।

कार्यपालिका पर नियन्त्रण सम्बन्धी सर्वोच्चता

ब्रिटेन की संसदात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत ब्रिटिश संसद को न केवल कानून निर्माण सम्बन्धी सर्वोच्चता प्राप्त है, वरन वास्तविक कार्यपालिका (मन्त्रिमण्डल) पर भी लोकसदन के द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है। मन्त्रिमण्डल लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होता है और लोकसदन अविश्वास का प्रस्ताव पास कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत कर सकता है। लोकसदन निम्न साधनों के आधार पर मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखता है

प्रश्न—लोकसदन द्वारा मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण का प्रथम और सर्वाधिक प्रभावशाली उपाय प्रश्न पूछना है। ये प्रश्न संसद के किसी भी सदस्य द्वारा मन्त्री से उसके विभाग से सम्बन्धित कार्यों के विषय में पूछे जा सकते हैं। प्रश्न पूछे जाने की आशंका मन्त्रियों को सदैव भयग्रस्त रखती है क्योंकि इन प्रश्नों से उनके दोष प्रकाश में आ जाते हैं और उनकी विभागीय नीति की आलोचना होती है। यदि कोई मन्त्री संसद सदस्यों के प्रश्नों का उत्तर सन्तोषजनक ढंग से नहीं दे पाता, तो इससे जनता, संसद और अपने राजनीतिक दल में उसका सम्मान कम हो जाता है और इस बात का उसके राजनीतिक भविष्य पर भी प्रभाव पड़ता है।

वाद विवाद—वाद विवाद भी संसद के हाथ में मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण का एक उपाय है। यह विवाद संसद के सदनों में मन्त्रिमण्डल की नीति और कार्यों पर किया जाता है। इसमें प्रशासन के दोष प्रकाश में आते हैं और लोकमत सतर्क होता है। इस वाद विवाद में मन्त्रियों को अपनी नीति और कार्यों का औचित्य सिद्ध करना होता है और आलोचना का भय मन्त्रियों को सदैव सचेत किये रहता है।

निन्दात्मक प्रस्ताव—मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखने का एक अन्य उपाय निन्दात्मक प्रस्ताव है। इसमें व्यक्तिगत मन्त्रियों पर प्रहार किया जाता है और इसका ध्येय किसी विषय विशेष की नीति के प्रति असन्तोष व्यक्त करना होता है। इसे किसी भी सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है किन्तु निन्दात्मक प्रस्ताव का पास होना कठिन होता है क्योंकि मन्त्रिमण्डल के सदस्य अपने सहयोगी मन्त्री को बचाने की पूरी चेष्टा करते हैं।

काम स्थगन प्रस्ताव—लोकसदन द्वारा मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखने तथा उसकी आलोचना करने का एक अन्य उपाय 'काम स्थगन प्रस्ताव' (Adjournment Motion) है। इस प्रकार का प्रस्ताव शासन की किसी विशेष समस्या या दोष के सम्बन्ध में रखा जाता है। यह प्रस्ताव लोकसदन के किसी भी सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है और यदि उसे ४० सदस्यों का समर्थन प्राप्त हो

अन्य कार्य—उपरोक्त के अतिरिक्त भी मन्त्रिमण्डल अन्य अनेक कार्य करता है। **प्रथम** राजा क्षमा के विशेषाधिकार का प्रयोग मन्त्रिमण्डल, विशेषतया गृहमन्त्री, के परामर्श पर ही करता है। **द्वितीय,** राजा द्वारा उपाधियों का वितरण भी प्रधान मन्त्री के परामर्श पर ही किया जाता है। **तृतीय,** ब्रिटिश सम्राट द्वारा देश और विदेश में की जाने वाली समस्त नियुक्तियां मन्त्रिमण्डल के परामर्श के आधार पर ही की जाती है। **चतुर्थ,** महत्त्वपूर्ण न्यायालयों के न्यायाधीश लार्ड चांसलर (मन्त्रिमण्डल के एक सदस्य) के परामर्शानुसार ही सम्राट द्वारा नियुक्त किये जाते हैं।

वास्तव में मन्त्रिमण्डल के अधिकार और कार्य बहुत ही व्यापक हैं, वह उन सभी कार्यों को करता है, जो वैधानिक दृष्टि से सम्राट के अधिकार बताये जाते हैं। वर्तमान समय की प्रवृत्ति मन्त्रिमण्डल को और अधिक शक्तियां तथा कार्य प्रदान करने की है।

मन्त्रिमण्डल व संसद (लोकसदन) का सम्बन्ध

मन्त्रिमण्डल और संसद का सम्बन्ध ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सिद्धान्त और व्यवहार के अन्तर का ही एक उदाहरण है। सैद्धान्तिक दृष्टि से स्थिति एक प्रकार की है और व्यावहारिक दृष्टि से दूसरे प्रकार की। इसी कारण इन दोनों संस्थाओं के पारस्परिक सम्बन्धों के विषय पर विभिन्न लेखकों द्वारा अलग अलग विचार व्यक्त किये गये हैं। डायसी ने सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से विचार करते हुए 'संसद की प्रभुसत्ता का प्रतिपादन किया है लेकिन रेम्जे म्योर तथा लास्की ने व्यावहारिक दृष्टिकोण के आधार पर कहा है कि **संसद की नहीं, वरन मन्त्रिमण्डल की सत्ता ही सर्वोच्च है।'**

वैधानिक दृष्टिकोण के अनुसार स्थिति

वैधानिक दृष्टिकोण के अनुसार मन्त्रिमण्डल और संसद के पारस्परिक सम्बन्धों में संसद की सत्ता सर्वोच्च है। व्यवस्थापन और प्रशासन दोनों ही क्षेत्रों में संसद की सर्वोच्चता स्पष्टतया देखी जा सकती है।

व्यवस्थापन सम्बन्धी सर्वोच्चता—वैधानिक दृष्टि से ब्रिटिश संसद को सर्वोच्चता प्राप्त है और कानून निर्माण के क्षेत्र में उसकी सत्ता की समानता करने वाली अन्य कोई भी संस्था नहीं है। ब्रिटेन में एकात्मक शासन व्यवस्था है, अतः ब्रिटेन में ब्रिटिश संसद एकमात्र कानून निर्मात्री संस्था है। संविधान लचीला होने के कारण ब्रिटिश संसद सामान्य बहुमत से ही संवैधानिक कानूनों का भी निर्माण कर सकती है। संसद की व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्ति इसलिए भी सर्वोच्च है कि ब्रिटेन में **न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था** नहीं है, इसलिए संसद द्वारा निर्मित कानूनों को किसी भी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।

सन् १९११ और १९४९ के संसदीय अधिनियम के द्वारा लॉर्ड सभा की शक्तियां बहुत कम कर दी गई हैं और आज संसद का अभिप्राय लोकसदन से ही हो गया है।

यद्यपि व्यवहार में संसद के द्वारा कानूनों का निर्माण करते समय प्रथाओं, परम्पराओं, धार्मिक और नैतिक मान्यताओं, जनमत और व्यावहारिक परिस्थितियों आदि सभी बातों को ध्यान में रखना होता है तथापि वैधानिक स्थिति यही है कि संसद कानून निर्माण के क्षेत्र में सर्वोच्च सत्तावान है।

कार्यपालिका पर नियन्त्रण सम्बन्धी सर्वोच्चता

ब्रिटेन की संसदात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत ब्रिटिश संसद को न केवल कानून निर्माण सम्बन्धी सर्वोच्चता प्राप्त है, वरन् वास्तविक कार्यपालिका (मन्त्रिमण्डल) पर भी लोकसदन के द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है। मन्त्रिमण्डल लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होता है और लोकसदन अविश्वास का प्रस्ताव पास कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत कर सकता है। लोकसदन निम्न साधनों के आधार पर मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखता है

प्रश्न—लोकसदन द्वारा मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण का प्रथम और सर्वाधिक प्रभावशाली उपाय प्रश्न पूछना है। ये प्रश्न संसद के किसी भी सदस्य द्वारा मन्त्री से उसके विभाग से सम्बन्धित कार्यों के विषय में पूछे जा सकते हैं। प्रश्न पूछे जाने की आशंका मन्त्रियों को सदैव भयग्रस्त रखती है क्योंकि इन प्रश्नों से उनके दोष प्रकाश में आ जाते हैं और उनकी विभागीय नीति की आलोचना होती है। यदि कोई मन्त्री संसद सदस्यों के प्रश्नों का उत्तर सन्तोषजनक ढंग से नहीं दे पाता, तो इससे जनता, संसद और अपने राजनीतिक दल में उसका सम्मान कम हो जाता है और इस बात का उसके राजनीतिक भविष्य पर भी प्रभाव पड़ता है।

वाद विवाद—वाद विवाद भी संसद के हाथ में मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण का एक उपाय है। यह विवाद संसद के सदनों में मन्त्रिमण्डल की नीति और कार्यों पर किया जाता है। इससे प्रशासन के दोष प्रकाश में आते हैं और लोकमत सतर्क होता है। इस वाद विवाद में मन्त्रियों को अपनी नीति और कार्यों का औचित्य सिद्ध करना होता है और आलोचना का भय मन्त्रियों को सदैव सचेत किये रहता है।

निन्दात्मक प्रस्ताव—मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखने का एक अन्य उपाय निन्दात्मक प्रस्ताव है। इनमें व्यक्तिगत मन्त्रियों पर प्रहार किया जाता है और इसका ध्येय किसी विषय विशेष की नीति के प्रति असन्तोष व्यक्त करना होता है। इसे किसी भी सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है, किन्तु निन्दात्मक प्रस्ताव का पास होना कठिन होता है क्योंकि मन्त्रिमण्डल के सदस्य अपने सहयोगी मन्त्री को बचाने की पूरी चेष्टा करते हैं।

काम स्थगन प्रस्ताव—लोकसदन द्वारा मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखने तथा उसकी आलोचना करने का एक अन्य उपाय 'काम स्थगन प्रस्ताव' (Adjournment Motion) है। इस प्रकार का प्रस्ताव शासन की किसी विशेष समस्या या दोष के सम्बन्ध में रखा जाता है। यह प्रस्ताव लोकसदन के किसी भी सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है और यदि उसे ४० सदस्यों का समर्थन प्राप्त हो

जाय, तो सदन की उस दिन की बैठक का अन्य कार्य स्थगित कर प्रस्ताव के विषय पर ही वाद विवाद किया जाता है। कार्य स्थगन प्रस्ताव को मन्त्रिमण्डल के प्रति अविश्वास का ही पूर्व रूप समझा जाता है और यदि यह प्रस्ताव बहुमत से पारित हो जाय, तो मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना होता है।

कटौती प्रस्ताव—लोकसदन विशेष विभाग के कार्यों व नीतियों के प्रति अपना असन्तोष व्यक्त करने के लिए सम्बन्धित मन्त्री के वेतन पर कटौती प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकता है। ऐसे कटौती प्रस्ताव का उद्देश्य मन्त्री विशेष के प्रति अविश्वास व्यक्त करना होता है और सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के कारण इस प्रकार के कटौती प्रस्ताव के पारित होने से सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना होता है।

अविश्वास का प्रस्ताव—लोकसदन के पास मन्त्रिमण्डल में अविश्वास व्यक्त करने के अनेक साधन होते हैं। कानून निर्माण के क्षेत्र में मन्त्रिमण्डल की इच्छा के विरुद्ध कार्य करके भी मन्त्रिमण्डल में अविश्वास व्यक्त किया जा सकता है। किन्तु अनेक बार किसी विधेयक पर मन्त्रिमण्डल को पराजित करने का उपाय प्रभावशाली नहीं होता क्योंकि सम्भव है कि मन्त्रिमण्डल इस हार को महत्वपूर्ण न समझे। ऐसी स्थिति में मन्त्रिमण्डल के कार्यों से असन्तुष्ट होने पर लोकसदन को अविश्वास का प्रस्ताव पारित करना होता है। ऐसा प्रस्ताव पारित हो जाने पर जरूरी है कि मन्त्रिमण्डल या तो त्यागपत्र दे दे या सम्राट को परामर्श देकर लोकसदन को विघटित करवा दे।

वित्तीय क्षेत्र में लोकसदन की सर्वोच्चता—प्रतिनिधित्व के बिना कर नहीं (No Taxation without Representation) ब्रिटिश प्रजातन्त्र का मूल आधार है और ब्रिटेन में यह सिद्धान्त मान्य है कि जनता से कर वसूल करने या कर के रूप में प्राप्त धनराशि को व्यय करने का कार्य लोकसदन के द्वारा ही किया जा सकता है। लोकसदन द्वारा बजट को स्वीकार किये बिना मन्त्रिमण्डल के द्वारा आय-व्यय से सम्बन्धित कोई कार्य नहीं किया जा सकता।

सैद्धान्तिक दृष्टि से मन्त्रिमण्डल पर लोकसदन की सर्वोच्चता के कारण ही अनेक विद्वान मन्त्रिमण्डल को 'संसद की एक समिति' मानते हैं और कहते हैं कि **'मन्त्रिमण्डल का विकास संसद की सम्प्रभुता को वास्तविक बनाने वाली संस्था के रूप में ही हुआ है।'**

व्यावहारिक दृष्टिकोण के अनुसार स्थिति

सैद्धान्तिक दृष्टि से मन्त्रिमण्डल को भले ही संसद की एक समिति कहा जाता हो व्यवहार में स्थिति नितान्त विपरीत ही है। मन्त्रिमण्डल जो कि सिद्धान्त में लोकसदन का दास है व्यवहार में उसका स्वामी हो गया है। जेनिंग्ज का यह मत नितान्त सत्य है 'राजनीतिक दलों के प्रभाव के कारण वास्तव में मन्त्रि

वित्तीय क्षेत्र—लोकसदन द्वारा बजट मे कटौती करने की बात सैद्धान्तिक ही है। जहा तक व्यवहार का सम्बन्ध है, लोकसदन यह कार्य कभी भी नही करता। आय-व्यय और अन्य सभी वित्तीय प्रश्नो के सम्बन्ध मे अन्तिम निर्णायक शक्ति व्यवहार मे, मन्त्रिमण्डल को ही प्राप्त होती है।

मन्त्रिमण्डल की महत्ता के कारण

वर्तमान समय मे मन्त्रिमण्डल और लोक सदन के पारस्परिक सम्बन्ध सैद्धान्तिक स्थिति के प्रतिकूल हो गये हैं। वस्तुस्थिति यह है कि लोकसदन मन्त्रिमण्डल को नियन्त्रित नही करता वरन स्वयं मन्त्रिमण्डल द्वारा नियन्त्रित होता है। मन्त्रिमण्डल, लोकसदन या अन्य किसी भी सस्था की तुलना मे बहुत अधिक शक्तिशाली हो गया है। व्यावहारिक प्रशासन मे मन्त्रिमण्डल को इतनी अधिक महत्ता प्राप्त हो जाने के कारणो की विवेचना निम्न रूपो मे की जा सकती है

(१) **द्विदल पद्धति**—द्विदल पद्धति ब्रिटिश राजनीति की एक विशेषता है और वर्तमान समय मे भी ब्रिटिश राजनीति मे प्रमुखतया दो ही राजनीतिक दल हैं अनुदार दल और मजदूर दल। इनके अतिरिक्त उदार दल, साम्यवादी दल और अन्य छोटे-छोटे दल हैं, लेकिन उनका ब्रिटिश राजनीति मे कोई महत्त्व नही है। इगलण्ड मे द्विदल पद्धति होने के कारण एकदलीय मन्त्रिमण्डल का निर्माण होता है। जिस राजनीतिक दल का मन्त्रिमण्डल होता है, उसे लोकसदन मे स्पष्ट बहुमत प्राप्त रहता है और अपने बहुमत के बल पर मन्त्रिमण्डल के द्वारा प्रशासन और कानून निर्माण के क्षेत्र मे साहसपूर्वक कार्य किया जा सकता है। यदि इगलण्ड मे फ्रास की भाति बहुदलीय पद्धति होती, तो मन्त्रिमण्डल कभी भी इतनी महत्ता प्राप्त नही कर सकता था और ऐसी स्थिति मे मन्त्रिमण्डल सदैव ही व्यवस्थापिका की दया पर निर्भर करते।

(२) **कठोर दलीय अनुशासन**—मन्त्रिमण्डल को शक्तिशाली बनाने मे सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योग राजनीतिक दलो के निरन्तर बढते हुए कठोर दलीय अनुशासन ने दिया है। १८वी सदी तक दलीय अनुशासन बहुत कठोर नही था और उन दिनो अनेक बार स्वतन्त्र मतदान तथा 'दलमुक्त मतदान' (Cross voting) के कारण मन्त्रिमण्डल लोकसदन मे पराजित हो जाते थे। लेकिन अब स्वतन्त्र सदस्य का युग समाप्त हो गया है और उसके पुनर्जीवन की भी कोई आशा नही है। आजकल दल का अनुशासन इतना कठोर हो गया है कि प्रत्येक सदस्य को दल के आदेशो का पालन करना ही होना है। यदि वह ऐसा न करे, तो उसे दल से बहिष्कृत किया जा सकता है जिसका सामान्यतया तात्पर्य होता है—राजनीतिक जीवन का अन्त। लोकसदन मे प्रत्येक दल का 'सचेतक' (Whip) होता है जो किसी विधेयक पर मतदान के समय अपने दल के सदस्यो को निर्देश देता है कि उन्हें सम्बन्धित विधेयक का समर्थन करना है या विरोध। बहुमत दल का सचेतक प्रधानमन्त्री के निर्देश के

अनुसार कार्य करता है और सदस्यों के लिए सचेतक के निर्देशों का पालन करना आवश्यक होता है।

(३) सुधार कानूनों का परिणाम—१८३२ के प्रथम सुधार कानून के पूर्व तक सदस्यों की अपने राजनीतिक दलों के प्रति भक्ति सामान्य और परिवर्तनशील होती थी और इसका कारण यह था कि चुनाव व्यक्तिगत आधार पर जीते जाते थे। मतदाताओं की संख्या कम होती थी, इसलिए निर्वाचकों को मतदाताओं से स्वयं सम्पर्क स्थापित करना सरल होता था। जब सदस्य व्यक्तिगत आधार पर चुनकर आते थे, तो वे अपने आपको दल से आबद्ध नहीं समझते थे और किसी विशेष विषय पर दल से असहमत होने पर उनके द्वारा दल के विरुद्ध मतदान कर दिया जाता था या किन्हीं विशेष बातों से प्रभावित होकर दल परिवर्तन कर लिया जाता था जिससे मन्त्रिमण्डल लोकसदन में पराजित हो जाता था। इस प्रकार मन्त्रिमण्डल पर लोकसदन का नियन्त्रण बना रहता था। सन् १८३२ और उसके बाद १८६७ व १८८४ आदि के सुधार कानूनों से स्थिति एकदम परिवर्तित हो गई। मतदाताओं की संख्या बढ़ जाने के कारण व्यक्तियों के लिए व्यक्तिगत आधार पर चुनाव में विजय प्राप्त करना सम्भव नहीं रहा। जब व्यक्ति राजनीतिक दलों की सहायता से चुनकर आने लगे, तो उनके लिए राजनीतिक दलों के अनुशासन को स्वीकार करना स्वाभाविक हो गया। इस प्रकार सुधार कानूनों ने सुसंगठित राजनीतिक दलों और दलीय अनुशासन को जन्म दिया।

(४) लोकसदन पर अत्यधिक कार्य भार—लोकसदन द्वारा मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण न रखे जा सकने का एक कारण यह भी है कि लोकसदन के पास पहले से ही इतना अधिक भार होता है कि लोकसदन मन्त्रिमण्डल के कार्यों पर विचार करने में असमर्थ रहता है। वर्तमान समय में राज्य का कार्यक्षेत्र बढ़ जाने के कारण लोकसदन का कार्य भार बहुत अधिक हो गया है। इसके अतिरिक्त वर्ष में लगभग ६ महीने तो लोकसदन की बैठक ही नहीं चलती। इस कारण लोकसदन अपने कार्य समय पर नहीं कर पाता है। ऐसी स्थिति में कैबीनेट पर नियन्त्रण रखने के बजाय लोकसदन कैबीनेट का अनुसरण करने में ही सन्तुष्टि अनुभव करता है।

(५) शासन कार्य की जटिलता—वर्तमान समय में शासन कार्य बहुत अधिक जटिल हो गया है और कानून निर्माण तथा शासन क्षेत्र में ऐसी पेचीदी समस्याएँ उत्पन्न होने लगी हैं, जिन्हें भलीभाँति समझना संसद सदस्यों के लिए साधारणतया सम्भव नहीं होता। ये संसद सदस्य इस योग्य नहीं होते हैं कि राजनीतिक, प्रशासनिक, आर्थिक और तकनीकी मामलों में मन्त्रिमण्डल का पथप्रदर्शन कर सकें। मन्त्रिमण्डल के सदस्य उनकी तुलना में अधिक योग्य होते हैं और प्रशासनिक अधिकारियों से निरन्तर और निकट सम्पर्क होने के कारण वे ही कानून निर्माण और प्रशासनिक कार्य उचित प्रकार से करने की स्थिति में होते हैं। इस प्रकार लोकसदन के सदस्य प्रशासन सम्बन्धी जटिल बातों को पूर्णतया न समझ सकने और

अपेक्षाकृत अधिक योग्य होने के कारण लोकसदन की अपेक्षा मन्त्रिमण्डल को अधिक महत्ता प्राप्त हो गई है।

(६) प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation)—ससद के काय भार की अधिकता और कानून निर्माण म निरतर बढती हुई जटिलता ने एक अन्य प्रवृत्ति को जन्म दिया है जिसे 'प्रदत्त व्यवस्थापन' के नाम से जाना जाता है। ससद के पास सभी विषयो के सम्बन्ध मे कानून निर्माण के लिए आवश्यक समय और ज्ञान न होने के कारण ससद कानून की केवल मोटी रूपरेखा पारित कर देती है और इन कानूनो के आधीन नियम तथा उपनियम बनाने और आदेश जारी करने की शक्ति प्रशासनिक विभागो को दे देती है। यही प्रदत्त व्यवस्थापन है और इसके कारण मन्त्रिमण्डल को कानून निर्माण के क्षेत्र मे बहुत अधिक शक्ति प्राप्त हो गइ है।

(७) ससद की कायवाही के नियम—ससद की कायवाही के नियमो ने भी मन्त्रिमण्डल की शक्ति बढाने मे योग दिया है। मन्त्रिमण्डल की शिफारिश पर ही सम्राट ससद का अधिवेशन बुलाते हैं और ससदीय अधिवेशन का समय घटाने-बढाने का निणय मन्त्रिमण्डल ही करता है। मन्त्रिमण्डल ही इस बात का निणय करता है कि ससद के विचार हेतु कौन से विषय रखे जायँ और उन पर कितना समय दिया जाय। इसके अतिरिक्त ससद का अधिकाश समय मन्त्रियो द्वारा प्रस्तावित विधेयको पर ही चला जाता है और निजी सदस्यो के विधेयको पर विचार के लिए बहुत ही कम समय शेष रहता है। ससदीय कायवाही के इन नियमो के कारण कानून निर्माण का काय मन्त्रिमण्डल की इच्छानुसार होता है।

(८) राष्ट्रीय आपात—बीसवी सदी के इगलैण्ड मे बार-बार आने वाले राष्ट्रीय आपातो ने भी मन्त्रिमण्डल की शक्ति बढाने मे बहुत योग दिया है। प्रथम और द्वितीय विश्वयुद्ध तथा १६३० के आर्थिक सकट का सामना करने के लिए ससद के द्वारा मन्त्रिमण्डलो को बहुत अधिक व्यापक शक्तिया प्रदान कर दी गयी और इन अवसरो पर ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलो की स्थिति तानाशाहो जसी हो गई। राष्ट्रीय आपात की समाप्ति पर भी मन्त्रिमण्डल के हाथ मे इन विशेष शक्तियो मे से कुछ बनी ही रही। इसके अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल के द्वारा एक के बाद दूसरे राष्ट्रीय आपात का जिस सफलता के साथ सामना किया गया उससे लोकसदन की तुलना मे मन्त्रिमण्डल की प्रतिष्ठा और शक्ति म वृद्धि हुई है।

(९) राष्ट्रीय वित्त पर मन्त्रिमण्डल का नियन्त्रण—समस्त प्रशासनिक व्यवस्था के सचालन मे वित्तीय शक्ति बहुत अधिक महत्त्व रखती है और वतमान समय मे राष्ट्रीय वित्त पर मन्त्रिमण्डल के नियन्त्रण ने मन्त्रिमण्डल के प्रभाव को बढ़ाने म बहुत योग दिया है। राष्ट्रीय आय व्यय के स्रोतो का निश्चय मन्त्रिगण ही करते हैं और लोकसदन के साधारण सदस्यो का राष्ट्रीय धन पर बहुत कम

अधिकार रहता है। राष्ट्रीय वित्त पर नियन्त्रण से मन्त्रिमण्डल के हाथों में पर्याप्त शक्ति आ गई है।

(१०) मन्त्रिमण्डल के पास लोकसदन के विघटन की शक्ति—लोकसदन पर मन्त्रिमण्डल का नियन्त्रण स्थापित होने का एक बड़ा कारण मन्त्रिमण्डल के पास लोकसदन को विघटित करने की शक्ति है। वर्तमान समय में यदि कभी मन्त्रिमण्डल यह अनुभव करे कि उसकी नीति और कार्यों को राष्ट्र का समर्थन प्राप्त है लेकिन लोकसदन इसे पूरा करने के लिए आवश्यक समर्थन प्रदान नहीं कर रहा है तो प्रधानमन्त्री के द्वारा सम्राट को परामर्श देकर लोकसदन को विघटित करवा दिया जाता है। लोकसदन के विघटन के परिणामस्वरूप सदन के सदस्यों को एक निश्चित समय के पूर्व ही चुनाव सम्बन्धी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। यह बात उनके लिए बहुत अधिक अरुचिकर होती है और वे इससे बचने के लिए मन्त्रिमण्डल के अधिकाधिक समर्थन का मार्ग अपना लेते हैं। इस प्रकार विघटन की शक्ति लोकसदन को अपने नियन्त्रण में रखने का प्रभावशाली साधन सिद्ध हुई है। जैनिंग्ज ने ठीक ही कहा है कि, "लोकसदन भयभीत रहता है कि कहीं सरकार पराजित न हो जाय और लोकसदन को विघटित न करवा दिया जाय। यह भय ही सरकार द्वारा बहुसंख्या पर अपना नियन्त्रण स्थापित करने में सर्वाधिक सहायक होता है।"[1] कीथ तो लिखते हैं कि, "मन्त्रिमण्डल ने अपनी इस शक्ति के आधार पर न केवल अपने राजनीतिक दल, वरन् विरोधी दल के सदस्यों पर भी नियन्त्रण स्थापित कर लिया है।"[2]

क्या मन्त्रिमण्डल अधिनायक है ?

मन्त्रिमण्डल की निरन्तर बढ़ती हुई इन शक्तियों को देखकर कुछ लेखकों ने यह विचार व्यक्त किया है कि ब्रिटेन के संसदीय प्रजातन्त्र में मन्त्रिमण्डल की स्थिति आज एक अधिनायक जैसी हो गई है। रैम्जे म्योर के द्वारा अपनी पुस्तक *'How England is Governed'* में विशेष रूप से इस प्रकार का विचार व्यक्त किया गया है। वे लिखते हैं, "इस संस्था के पास ऐसे अधिकार हैं कि इसे सर्वशक्तिमान कहा जा सकता है, चाहे यह अपने अधिकारों का प्रयोग करने में कितनी भी असमर्थ क्यों न हो। जहाँ इसके पास बहुमत का समर्थन होता है, वहाँ इसकी स्थिति एक तानाशाह जैसी होती है। यह तानाशाही दो पीढ़ी पहले की तानाशाही से कहीं

1 'It is the fear of defeat and threat of dissolution of the House that supply the most effective elements of the Government's power over its majority —Jennings *The British Constitution* p 458

2 'Apart from party loyalty, the Cabinet possesses over its followers and to some extent over the opposition a powerful weapon in the possibility of securing a dissolution of Parliament
—*A B Keith*

अधिक निरकुश है।"[1] कुछ सीमा तक कीथ[2], हैरीसन[3] और फाटर के द्वारा भी इसी मत का समथन करत हुए कहा गया है कि ब्रिटन म केबीनेट की तानाशाही स्थापित होती जा रही है।

मन्त्रिमण्डल अधिनायक नहीं—आधुनिक परिस्थितिया म निस्सदेह मन्त्रिमण्डल की शक्तिया म अपूव विस्तार हुआ है और प्रशासन, विधि तथा वित्त इन तीनो ही क्षेत्रो मे मन्त्रिमण्डल का नियन्त्रण स्थापित हो गया है, किन्तु इसे मन्त्रिमण्डल का अधिनायकत्व नही कहा जा सकता। मन्त्रिमण्डल की शक्ति पर कुछ प्रभावी प्रतिबन्ध हैं और मन्त्रिमण्डल इस बात के लिए बाध्य होता है कि वह इन सीमाओ को दृष्टि मे रखते हुए काय करे। मन्त्रिमण्डल पर ये प्रतिबन्ध निम्न प्रकार ह

(१) विरोधी दल का अस्तित्व—मन्त्रिमण्डल की शक्ति पर सर्वाधिक प्रभाववाला प्रतिबन्ध विरोधी दल का अस्तित्व है। यदि मन्त्रिमण्डल कभी भी मनमानी करने का प्रयत्न करता है तो वह तुरन्त ही विरोधी दल की आलोचना का विषय बन जाता है और विरोधी दल मन्त्रिमण्डल के पतन के लिए सक्रिय हो उठता है। ब्रिटन मे मन्त्रिमण्डल जितना अधिक शक्तिशाली है, विरोधी दल भी उतना ही अधिक प्रभावशाली है और विरोधी दल के कारण मन्त्रिमण्डल कभी भी अधिनायक नही हो सकता। जनिग्ज न लिखा है, "ब्रिटेन और अधिनायकवादी देशो मे प्रमुख अन्तर यह है कि ब्रिटेन मे केवल एक ही दल नहीं है जो शक्ति या धोखे या सहमति अथवा अच्छे या बुरे उपायो द्वारा सत्तारूढ बना रहना चाहता हो, बल्कि वहा कम से कम दो दल है और प्रत्येक दल समझाने बुझाने अथवा सहमति और समझौते के आधार पर सत्ता प्राप्त करना चाहता है।"[4]

[1] 'A body which wields such powers as these may fairly be described as omnipotent in theory however incapable it may be of using its omnipotence Its position whenever it commands majority is a dictatorship only qualified by publicity This dictatorship is more absolute than it was two generations ago —*Ramsay Muir*

[2] 'The position of the cabinet towards parliament has unquestionably come to assume more or less a dictatorial character

—Keith *The British Cabinet System* p 204

[3] If a Cabinet has a stable House of Commons majority, there are no formal limits to its powers

—W Harrison *The Government of Britain* p 6

[4] 'The Real difference between Britain and the dictatorship countries is that with us there is not one faction seeking to maintain itself in power by persuation fraud or force but atleast two *factions each trying to achieve and maintain powers by persuation* —I Jennings *Parliament* p 504

(२) जनमत की शक्ति—मन्त्रिमण्डल के अधिनायकत्व पर एक दूसरा प्रभावशाली प्रतिबन्ध जनमत की शक्ति है। मन्त्रिमण्डल सत्ता में उसी स्थिति में रह सकता है जबकि वह जनमत के प्रति सचेत हो। ब्रिटेन में सरकार जनमत पर ही आश्रित होती है और जनमत का सरकार पर पर्याप्त प्रभाव होता है। निस्सन्देह एक निश्चित अवधि के बाद जिन्हें जनता के पास मतों की भीख मांगने के लिए जाना पड़ता है, वे जनमत की अवहेलना स्वयं अपने राजनीतिक अस्तित्व के मूल्य पर ही कर सकते हैं। यह एक ऐसा तथ्य है जिससे मन्त्रिमण्डल तानाशाह नहीं हो सकता। ऐसे अनेक उदाहरण हैं जबकि प्रबल बहुमत वाली सरकार को जनमत के आगे झुकना पड़ता है। १९३४ में रैम्जे मैक्डानल्ड की राष्ट्रीय सरकार को विशाल बहुमत प्राप्त था, फिर भी 'बेकारी सहायता विनियमों' (Unemployment Assistance Regulations) के प्रश्न पर उसे झुकना पड़ा था। सन १९३५ में ब्रिटिश विदेशमन्त्री सर सैम्युअल होर ने अबीसीनिया के प्रश्न पर फ्रांस के विदेश मन्त्री के साथ समझौता किया। लेकिन यह समझौता समाचारपत्रों में प्रकाशित हो गया और इस समझौते का ऐसा देशव्यापी विरोध हुआ कि ब्रिटिश कैबीनेट को ये प्रस्ताव अस्वीकार करने पड़े और विदेशमन्त्री को त्यागपत्र देना पड़ा। सन् १९४० में प्रबल जनमत की मांग पर चैम्बरलेन सरकार को त्यागपत्र देना पड़ा था और जनमत के कारण ही सन १९४६ में सरकार को इस्पात उद्योग की शक्तियों में काफी परिवर्तन करना पड़ा था। सन् १९५७ में स्वेज नहर के प्रश्न पर तत्कालीन प्रधानमन्त्री ईडन को त्यागपत्र देना पड़ा और १९६३ में प्रोफ्यूमो काण्ड के कारण देश में जो बवण्डर उठा, उसने मैकमिलन सरकार के आधार पर भारी प्रहार किया। वस्तुस्थिति यह है कि ब्रिटिश कैबीनेट को जनमत का सम्मान करना ही पड़ता है। ऐसी स्थिति में जेनिंग्ज के शब्दों में कहा जा सकता है कि, 'मन्त्रिमण्डल की समस्त सत्ता एकमात्र जन समर्थन पर निर्भर करती है और इसे तानाशाही नहीं कहा जा सकता।"

(३) सदन की परम्पराएँ और अपने ही दल के सदस्यों की प्रतिक्रियाएँ—सदन की परम्पराएँ और मन्त्रिमण्डल के बाहर अपने ही राजनीतिक दल के सदस्यों की प्रतिक्रियाएँ भी मन्त्रिमण्डल के तानाशाह बनने के मार्ग में बाधक होती हैं। ब्रिटेन में लोकतन्त्र की जड़ें बहुत गहरी हैं और सदन की परम्पराएँ ऐसी हैं कि यदि कोई मन्त्रिमण्डल इन परम्पराओं का अनादर करता है तो उसे इस दुस्साहस का भारी मूल्य चुकाना होता है। कैबीनेट का लोकसदन पर नियन्त्रण होता है लेकिन लोकसदन को मन्त्रिमण्डल का मूक अनुसरणकर्त्ता नहीं कहा जा सकता। लोकसदन मन्त्रिमण्डल के कार्यों पर पैनी दृष्टि रखता है और इसे मनमानी नहीं करने देता। इस सम्बन्ध में हरबर्ट मोरिसन ने लिखा है—"मन्त्रिमण्डल अपनी बात मनवा लेता है। इसका अभिप्राय यह नहीं है कि वह लोकसदन के सदस्यों के ऊपर अपनी

इच्छा को मनचाहे ढंग से आरोपित कर सकता है। उसे यह बात समझनी चाहिए। उसे लोकसदन के प्रति आदर भाव रखना चाहिए।"[1]

अभी नवम्बर १९७२ की एक घटना मे हरबर्ट मॉरिसन के कथन की पुष्टि हुई है। नवम्बर १९७२ में एडवर्ड हीथ मन्त्रिमण्डल द्वारा 'आव्रजन नियमों' (Immigration Laws) का जो प्रस्ताव लोकसदन मे रखा गया उनके ही दल के एनोक पावेल और ६ अन्य सदस्यो ने इसके विरुद्ध मतदान किया और ३५ दक्षिण पन्थी पिछली पंक्ति के सदस्य सदन मे अनुपस्थित रहे। परिणामत सदन मे अनुदार दल का बहुमत होते हुए भी प्रस्ताव के पक्ष मे २४० और विपक्ष मे २७५ मत पड़े और हीथ मन्त्रिमण्डल की प्रतिष्ठा को ठेस पहुची। यद्यपि प्रधानमन्त्री ने अपनी इस हार को अमहत्त्वपूर्ण कहकर त्यागपत्र की माग अस्वीकार कर दी लेकिन इसके साथ ही लोकसदन के प्रति सम्मान व्यक्त करते हुए उन्होने कहा कि 'वे कुछ महत्त्वपूर्ण रियायतो की घोषणा कर दल के असन्तुष्ट सदस्यो का सहयोग, समर्थन और विश्वास प्राप्त करने का प्रयत्न करेगे। यदि हीथ अपने दल के असन्तुष्ट सदस्यो को सन्तुष्ट नही कर पाये, तो उनके अस्तित्व के लिए बहुत बड़ा खतरा पैदा हो सकता है।"

लास्की अपनी पुस्तक 'इंग्लैण्ड में संसदीय शासन' (*Parliamentary Government in England*) मे नितान्त उचित रूप से यह विचार व्यक्त करते हैं कि **"मन्त्रिमण्डल शासन व्यवस्था का केन्द्र अवश्य है और उसकी प्रमुखता भी है किन्तु उसकी स्थिति अधिनायक जैसी नहीं है।"** वस्तुत स्थिति का यह सही मूल्यांकन है।

मन्त्रिमण्डल के नियन्त्रण की वाछनीयता

लास्की ने रैम्जे म्योर की धारणा को *अस्वीकार* करते हुए विचार व्यक्त किया है कि शासन मे मन्त्रिमण्डल की प्रमुखता वाछनीय और संसदीय शासन प्रणाली के सफल संचालन के लिए आवश्यक भी है। उनका विचार है कि जब एक राजनीतिक दल निश्चित कार्यक्रम के आधार पर लोकसदन मे बहुमत प्राप्त कर लेता है, तो उसका यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह अपने इस कार्यक्रम को पूरा करे। कार्यक्रम की क्रियान्विती मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही की जा सकती है, लोकसदन के द्वारा नही और मन्त्रिमण्डल भी यह कार्य तभी कर सकता है जबकि उसे लोकसदन के बहुमत का विश्वास प्राप्त हो। ऐसी स्थिति मे यदि मन्त्रिमण्डल पूर्व निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पूरी शक्ति के साथ कार्य करता है, तो इसमे बुराई क्या है? वस्तुस्थिति तो यह है कि यदि मन्त्रिमण्डल ऐसा न करे तो जनसाधारण का लोकतन्त्र मे विश्वास ही डगमगाने लगेगा। अत शासन मे मन्त्रिमण्डल की यह प्रमुखता लोकतन्त्र की प्रवृत्ति के नितान्त

[1] 'The Cabinet seeks to get its own way that does not mean however that it can impose its will upon the members of the House of Commons clumsily in an arbitrary fashion It must be persuasive It must be respectful to the House of Commons

—Lord Herbert Morrison, *British Parliamentary Democracy* p 65

दिनमान ३ दिसम्बर १९७२ पृ० ३२-३५।

अनुकूल है। मन्त्रिमण्डल की यह प्रमुखता इस दृष्टि से भी स्वाभाविक और वाछनीय है कि न केवल इगलैण्ड वरन विश्व के सभी आधुनिक प्रजातन्त्रो मे व्यवस्थापिका की तुलना मे कार्यपालिका के अधिक शक्तिशाली होने की प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

प्रधानमन्त्री

मन्त्रिमण्डल ब्रिटेन की वास्तविक कार्यपालिका है और प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का प्रधान। इस प्रकार प्रधानमन्त्री शासन व्यवस्था का केन्द्र है और उसकी स्थिति सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। शासन म प्रधानमन्त्री की स्थिति इतनी अधिक महत्त्वपूर्ण और केन्द्रीय है कि वर्तमान समय म कुछ पक्षो द्वारा ब्रिटिश सरकार को 'मन्त्रिमण्डलीय सरकार' (Cabinet Government) के स्थान पर 'प्रधानमन्त्रीय सरकार' (Prime Ministerial Government) कहा जाने लगा है।[1]

प्रधानमन्त्री की नियुक्ति—सद्धान्तिक रूप मे प्रधानमन्त्री की नियुक्ति सम्राट द्वारा की जाती है किन्तु व्यवहार मे लोकसदन म बहुमत दल के नेता को ही सम्राट के द्वारा प्रधानमन्त्री पद पर नियुक्त किया जाता है। यद्यपि अब तक ऐसे कुछ अवसर हुए हैं जबकि प्रधानमन्त्री की नियुक्ति म सम्राट के द्वारा अपने विवेक का प्रयोग किया गया। लेकिन १९६३ म जब हैरल्ड मकमिलन के द्वारा त्यागपत्र दिया गया और मैकमिलन का स्पष्ट उत्तराधिकारी न होने के कारण लार्ड सभा के सर अलेक डगलस होम को प्रधानमन्त्री पद प्रदान किया गया, तो इस नियुक्ति पर तीव्र विवाद उत्पन्न हुआ और उस समय से मजदूर दल के द्वारा भी इस परम्परा को अपना लिया गया कि महानिर्वाचन के बाद और उसके बाद जब कभी दलीय नेता का पद रिक्त हो, तब लोकसदन के दलीय सदस्यो द्वारा स्वय अपना नेता चुनने का काय किया जायगा। इस प्रकार दोनो प्रमुख राजनीतिक दलो द्वारा दलीय नेता के स्वय चुनाव की परम्परा को अपना लिए जाने से प्रधानमन्त्री की नियुक्ति म सम्राट द्वारा अपने विवेक का प्रयोग किये जाने के अवसर लगभग समाप्त हो गये है।

प्रधानमन्त्री के लिए ससद सदस्य होना अनिवाय है। इस सम्बन्ध म यह भी परम्परा स्थापित हो गई है कि प्रधानमन्त्री लोकसदन मे से ही होना चाहिए, लाड सभा म से नही। १९०२ ई० म लॉर्ड सलिसबरी द्वारा त्यागपत्र दिये जाने के बाद कोई भी कुलीन पुरुष प्रधानमन्त्री नही बना है। १९२४ मे लाड कजन के स्थान पर बाल्डविन को प्रधानमन्त्री पद प्राप्त होने का एक कारण यह भी था कि लॉर्ड कजन लॉर्ड सभा के सदस्य थे। १९६३ मे मकमिलन द्वारा त्यागपत्र दिए जाने के बाद जब मकमिलन के परामर्श पर सम्राट के द्वारा लॉर्ड सभा के सदस्य सर एलक डगलस होम को प्रधानमन्त्री पद के लिए चुना गया तो उन्होंने प्रधानमन्त्री पद

[1] The current thesis is that Cabinet Government has given way to 'Prime Ministerial Government'

—S E Finer, *Comparative Government* (1970 Edition) p 171

ग्रहण करने के पूर्व लॉर्ड सभा से त्यागपत्र दे दिया था और पद ग्रहण के बाद वे लोकसदन के लिए निर्वाचित हुए थे। अतः कीथ के शब्दों में कहा जा सकता है कि "प्रधानमन्त्री पद के लिए किसी कुलीन पुरुष का चुना जाना अब एक असाधारण सी बात हो गई है।"

प्रधानमन्त्री पद की अनौपचारिकता

प्रधानमन्त्री पद की एक विशेषता यह है कि इसका कोई कानूनी आधार नहीं है और यह पद अनौपचारिक ही है। प्रधानमन्त्री पद की स्थापना किसी संसदीय कानून के आधार पर नहीं हुई वरन यह स्वतः विकसित हुआ है। जब सम्राट जार्ज प्रथम ने कैबीनेट की बैठकों में सम्मिलित होना बन्द कर दिया, तो कैबीनेट की अध्यक्षता के लिए एक पदाधिकारी की आवश्यकता अनुभव की गई। यह पदाधिकारी कैबीनेट का प्रधान ही हो सकता था और इसी से प्रधानमन्त्री पद का उदय हुआ। इस प्रकार १७२१ ई० में नियुक्त वालपोल ब्रिटेन का प्रथम प्रधानमन्त्री था। इस पद का सर्वप्रथम उल्लेख १८७८ ई० में हुआ, जबकि लॉर्ड बीकन्सफील्ड ने बर्लिन सन्धि पर हस्ताक्षर करते हुए अपने आपको 'राजकीय कोष का प्रथम लार्ड, इंगलैण्ड का प्रधानमन्त्री (First Lord of His Majesty's Treasury Prime Minister of England) लिखा जिससे विदेशी लोग हस्ताक्षरकर्त्ता की स्थिति को समझ सकें। बाद में, सन् १९०६ ई० में उसका स्थान निर्धारित करते हुए उसे याक के आर्कबिशप के बाद राज्य का चौथा नागरिक माना गया। इसके बाद सन् १९३७ ई० के 'राजमुकुट के मन्त्रियों से सम्बन्धित कानून (Ministers of the Crown Act) में सबसे पहले 'प्रधानमन्त्री व राजकीय कोष के प्रथम लार्ड' के पद का अस्तित्व स्वीकार किया गया और उसके अधिकारी के लिए १० हजार पौण्ड वार्षिक वेतन निर्धारित किया गया। लेकिन इस कानून में भी प्रधानमन्त्री के कार्यों और शक्तियों का उल्लेख नहीं किया गया है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रधानमन्त्री की शक्तियों का कोई कानूनी आधार नहीं है। ग्लैडस्टन ने इस बात को लक्ष्य करते हुए ही कहा है कि 'इतने बड़े पदार्थ की इतनी छोटी छाया, इतने बड़े संसार में कहीं देखने को नहीं मिलती, अधिकारों व विशेषाधिकारों के औपचारिक दिखावे के बिना इतना अधिक शक्तिशाली व्यक्ति कहीं दिखाई नहीं देता।"[1]

प्रधानमन्त्री के कार्य और शक्तियाँ

ब्रिटेन की शासन व्यवस्था में प्रधानमन्त्री की स्थिति निश्चित रूप से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। जनिंग्ज ने इसी कारण प्रधानमन्त्री को सम्पूर्ण संविधान का

1 'Nothing in the wide world does so great a substance cast so small a shadow, nowhere is there a man who has so much power with so little to show for it in the way of formal title or prerogative.' —*Gladostone*

आधारशिला' बताया है। सर सिडनी लो ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के सम्बन्ध में लिखते हैं कि, "संसद में निश्चित बहुमत के रहते इंगलैण्ड का प्रधानमन्त्री वह कार्य कर सकता है जिसको जर्मनी का सम्राट और अमरीका का राष्ट्रपति भी नहीं कर सकता क्योंकि वह कानूनों में परिवर्तन कर सकता है, करारोपण कर सकता और उसे समाप्त कर सकता है, वह राज्य की सभी शक्तियों का निर्देशन कर सकता है।"[1]

प्रशासन में प्रधानमन्त्री को जो व्यापक शक्तियां प्राप्त है उनकी विवेचना निम्न रूपों में की जा सकती है

मन्त्रिमण्डल का निर्माण—वैधानिक शब्दावली के अनुसार मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की नियुक्ति प्रधानमन्त्री के परामर्श से सम्राट द्वारा की जाती है, किन्तु जहां तक वास्तविकता का सम्बन्ध है, मन्त्रियों की नियुक्ति में सम्राट का कोई हाथ नहीं होता और प्रधानमन्त्री जिन किन्हीं व्यक्तियों को मन्त्रिपद पर नियुक्त करने की शिफारिश करता है सम्राट उसे स्वीकार कर लेता है। यद्यपि प्रधानमन्त्री को अपने सहयोगियों का चुनाव करने में अपने दल के अन्दर विभिन्न व्यक्तियों की स्थिति, विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों और समुदायों को प्रतिनिधित्व सदस्यों की दक्षता और उनकी समाज सेवा की भावना आदि का ध्यान रखना होता है लेकिन अन्तिम रूप में इस सम्बन्ध में प्रधानमन्त्री की इच्छा ही सर्वोपरि होती है। व्यावहारिक अनुभव के आधार पर कहा जा सकता है कि इस सम्बन्ध में न तो संसद और न ही दलीय कार्यपालिका ने उसके ऊपर कोई दबाव डाला है।

यद्यपि सामान्यतया ब्रिटेन में एकदलीय मन्त्रिमण्डल की परम्परा है लेकिन प्रधानमन्त्री अपने दल से बाहर का व्यक्ति भी मन्त्रिमण्डल में ले सकता है वह संसद से बाहर के व्यक्ति को भी मन्त्रिमण्डल में ले सकता है यदि किसी विशेष कार्य को करने के लिए उसकी दृष्टि में वही सर्वाधिक उपयुक्त हो। उदाहरणस्वरूप १९०३ में बालफर ने लार्ड मिलनर को उस समय उपनिवेश मन्त्री का पद दिया था जबकि वह दक्षिण अफ्रीका में उच्चायुक्त था और उसे संसदीय अनुभव बिल्कुल नहीं था। मेक-डानल्ड ने सन् १९२४ में किसी भी दल से असम्बद्ध भारत के अवकाशप्राप्त वाइसराय लार्ड चैम्सफोर्ड को नौसेनिक मन्त्री का पद दे दिया। इससे भी अधिक उल्लेखनीय उदाहरण वह है जिसमें बाल्डविन ने १९२४ में चर्चिल को वित्तमन्त्री नियुक्त

[1] An English Prime Minister with his majority in Parliament can do what the German Emperor and American President cannot do for he can alter the laws he can propose taxation or repeal it and he can direct all the forces of the state

—*Sir Sidney Low*

[2] The British Prime Minister has never been under any sort of direct dictation either from Parliament or from a party executive in making up his government

—L S Amery, *Thoughts on the Constitution* p 18

कर दिया। १९६६ मे हैरल्ड विल्सन ने पैट्रिक गार्डन वाकर को विदेश विभाग के सचिव जैसा महत्त्वपूर्ण पद प्रदान कर दिया यद्यपि वह आमचुनाव मे हार गया था। ये घटनाएँ सहयोगियो के चुनाव मे प्रधानमन्त्री द्वारा अपनाये गये स्वविवेक की प्रतीक है।

न केवल सहयोगियो के चुनाव, वरन उनके बीच विभागो के वितरण मे भी प्रधानमन्त्री का निर्णय अन्तिम होता है। इस सम्बन्ध मे प्रधानमन्त्री जो निर्णय करता है, सामान्यत उसे अस्वीकार नही किया जाता। क्योकि पद अस्वीकृति का तात्पर्य न केवल ससद के उस कार्यकाल के लिए पदहीनता, वरन सदैव के लिए ही मन्त्रिपद से वंचित रहना और कभी कभी तो राजनीतिक जीवन की समाप्ति होता है। सर राबर्ट हार्न व्यापार मन्त्रालय तथा वित्तमन्त्रालय के प्रधान के रूप मे अत्यन्त सफलता के साथ कार्य कर चुके थे लेकिन जब उन्होने १९२४ मे बाल्डविन द्वारा दिये गये श्रम सचिव का पद अस्वीकार कर दिया, तो भविष्य मे कभी किसी पद के लिए उनके नाम पर विचार ही नही किया गया। इसी प्रकार के अन्य भी कुछ उदाहरण है लेकिन चर्चिल और एमरी जैसे कुछ अपवाद भी हुए हैं।

मन्त्रिमण्डल का कार्य सचालन—प्रधानमन्त्री न केवल मन्त्रिमण्डल का निर्माण वरन उसकी समस्त कार्यवाही का सचालन भी करता है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल की बैठको का सभापतित्व करता है और मन्त्रिमण्डल की कार्य विधि (agenda) पर उसका नियन्त्रण होता है। व्यवहारत प्रत्येक मन्त्री किसी मुख्य प्रस्ताव को प्रस्तुत करने के पूर्व प्रधानमन्त्री की राय अवश्य ही लेता है और यह बात उसे 'मन्त्रिमण्डल का पथप्रदर्शक' बना देती है। मन्त्रिमण्डल के निर्णय तथा नीति निर्धारण मे प्रधान मन्त्री का सर्वोपरि हाथ रहता है। यद्यपि मन्त्रिमण्डल के अन्तर्गत विभिन्न विषयो पर गोपनीय किन्तु स्वतन्त्र विचार विमर्श की प्रक्रिया को अपनाया जाता है और विवादास्पद विषय पर मतदान की प्रक्रिया को भी अपनाया जा सकता है, किन्तु सामान्यतया प्रधानमन्त्री का विचार ही निर्णायक होता है और मन्त्रिमण्डल उसे अपने निर्णय के रूप मे स्वीकार कर लेता है।

मन्त्रिमण्डल का अन्त—विधि के अनुसार मन्त्रियो को पदच्युत करने का अधिकार सम्राट का विशेषाधिकार है, लेकिन व्यवहारत यह परम्परा स्थापित हो गई है कि इस अधिकार का प्रयोग वह प्रधानमन्त्री की मन्त्रणा पर करेगा। प्रधान मन्त्री को अधिकार है कि वह अपने एक या अधिक सहयोगियो की पदच्युति या सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल के अन्त की सिफारिश सम्राट से कर सकता है। यदि प्रधानमन्त्री स्वय त्यागपत्र दे दे, तो उसके त्यागपत्र के साथ स्वत ही पूरी मन्त्रिपरिषद भग हो जायगी। प्रधामन्त्री से अन्तिम रूप से असहमत मन्त्री को भी त्यागपत्र देना ही होता है। राबर्ट पील के शब्दो मे "सामान्यत यदि प्रधानमन्त्री तथा उसके एक मन्त्री में गहरा मतभेद उत्पन्न हो जाय और यदि यह मतभेद मन्त्रियो मे बातचीत द्वारा तय न हो सके, तो इसके परिणामस्वरूप मन्त्री को हटना पडेगा, प्रधानमन्त्री को नहीं।'

मन्त्रिमण्डल के अन्त के अन्तगत ही मन्त्रिमण्डल के पुनगठन की शक्ति भी सम्मिलित है। लास्की के शब्दो मे 'वह अपने मन्त्रिमण्डल मे जब चाहे तब और जैसे चाहे वैसे परिवतन कर सकता है।'[1] लास्की के कथन की पुष्टि मे जुलाई १९६२ मे हैरल्ड मैकमिलन द्वारा किये गए कैबीनट के पुनगठन का उदाहरण दिया जा सकता है, जो नितान्त आकस्मिक और नाटकीय था और जिसमे उन्होने वित्तमन्त्री सेल्विन लायड सहित मन्त्रिमण्डल के सात वरिष्ठ साथियो को पदमुक्त कर दिया था। प्रधान मन्त्री की यह शक्ति मन्त्रिमण्डल पर प्रधानमन्त्री का नियन्त्रण बनाये रखने म सहायक होती है। मन्त्रिमण्डल म प्रधानमन्त्री को प्राप्त इस स्थिति के आधार पर लास्की लिखते हैं कि, "प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का केन्द्र बिन्दु है। वह उसके निर्माण, उसके जीवन और उसके अन्त मे केन्द्रीय स्थिति रखता है।"[2]

शासन पर नियन्त्रण—सिद्धान्त रूप मे देश का शासन प्रमुख राजा है, किन्तु व्यवहार म शासन प्रमुख के सभी अधिकारो का प्रयोग प्रधानमन्त्री के द्वारा ही किया जाता है। शासन पर सर्वोच्च नियन्त्रण रखते हुए उसके द्वारा शासन के विभिन्न विभागो म समन्वय स्थापित किया जाता है। उसके द्वारा यह काय विभिन्न विभागो के मन्त्रियो म मध्यस्थता करते हुए और विभिन्न विभागो को आदेश निर्देश देते हुए किया जाता है।

राजकीय सम्मान प्रदान करने का काय सम्राट के द्वारा प्रधानमन्त्री के परामश के आधार पर ही किया जाता है। इसी प्रकार सभी महत्त्वपूण राजकीय पदो पर नियुक्तियाँ या तो प्रधानमन्त्री द्वारा स्वय की जाती है यह उसके परामश के आधार पर सम्राट द्वारा की जाती है। बिशप, राजदूत न्यायाधीश विभागीय प्रमुखगण उपनिवेशो के गवनर स्थायी आयोगो और बोर्डों के मुख्य अधिकारी प्रधानमन्त्री के ही कृपापात्र होते है यद्यपि नियुक्तियो के सम्बन्ध म विभागीय मन्त्रियो की राय ली जाती है फिर भी प्रधानमन्त्री का ही निणय अन्तिम होता है। अन्त मे, कोष का प्रथम लार्ड और कोष के 'संस्थापन मण्डल' (Establishment Board) का अध्यक्ष होने के कारण कोष के उच्च पदाधिकारियो के चयन मे भी प्रधानमन्त्री की सहमति आवश्यक होती है।

परराष्ट्र सम्बन्धो का सचालन—प्रधानमन्त्री का एक महत्त्वपूण अधिकार और काय परराष्ट्र सम्बन्धो का सचालन है। परराष्ट्र मन्त्रालय चाहे उसके पास हो या न हो, परराष्ट्र सम्बन्धो के सुचारु सचालन का अन्तिम दायित्व उसका ही समझा जाता है और व्यवहार मे १९४५ ५० के काल को छोडकर जबकि मजदूर दलीय शासन के अन्तगत प्रधानमन्त्री एटली और विदेशमन्त्री बेविन थे, प्रधानमन्त्री

[1] "He may shuffle his pack as he likes and when he likes —*Laski*

[2] "The key stone of the cabinet arch is the Prime Minister He is central to its formation central to its life and central to its death —*Laski*

सदैव ही वदेशिक मामलो पर प्रभावपूर्ण नियन्त्रण रखता रहा है। दूसरे देशो के साथ किये जाने वाले महत्त्वपूर्ण समझौतो पर ब्रिटेन की ओर से परराष्ट्रमन्त्री के द्वारा नही, वरन प्रधानमन्त्री के द्वारा ही हस्ताक्षर किये जाते हैं। परराष्ट्र सम्बन्धो के सचालन मे प्रधानमन्त्री स्वय को कैसे शक्तिशाली बना सकता है इसका एक उदाहरण १९६७ म मिला है। प्रधानमन्त्री विल्सन शस्त्र सामग्री के दक्षिण अफ्रीका भेजे जाने पर लगी हुई रोक को जारी रखना चाहते थे लेकिन सुरक्षा और वदेशिक विषयो सम्बन्धी समिति इस रोक को समाप्त करने के पक्ष मे थी। ऐसी स्थिति म प्रधानमन्त्री न विशेष पद्धति का आश्रय लेते हुए दलीय सचेतको को निर्देश दिया कि वे शस्त्र सामग्री के दक्षिण अफ्रीका भेजे जाने पर लगी हुई रोक के पक्ष में हस्ताक्षर एकत्रित करें। इस प्रकार उन्होने केबीनेट के सहयोग के विरुद्ध सामान्य ससद सदस्यों का समर्थन प्राप्त किया।[1]

लोकसदन का नेतृत्व—लोकसदन के बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री पद प्राप्त होता है और उसके द्वारा शासन प्रमुख के साथ-साथ लोकसदन के नेता के रूप म भी कार्य किया जाता है। प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रियो के साथ ससद मे सम्पूर्ण व्यवस्थापन काय का सचालन करता है। वह व्यवस्थापन के सम्बन्ध म नीति निर्धारित कर ससद का पथप्रदर्शन करता है। समस्त सरकारी विधेयक उसके निरीक्षण म तथा उसके परामर्श के अनुसार ही तैयार किये जाते हैं और वार्षिक आय व्यय तयार करने मे भी प्रधानमन्त्री का प्रमुख हाथ रहता है। सदन के अध्यक्ष तथा विरोधी दल के नेता के परामर्श से वह सदन का समय विभाजन तथा कार्यक्रम तयार करता है और दलीय सचेतको के माध्यम से वह दल के सदस्यो को आवश्यक आदेश देता है। सदन मे शासन की नीति से सम्बन्धित अन्तिम तथा अधिकृत घोषणा प्रधानमन्त्री के द्वारा ही की जाती है। लोकसदन के नेता के रूप मे उसकी एक अन्य महत्त्वपूर्ण शक्ति लोकसदन को विघटित करने की है। प्रधानमन्त्री सम्राट को लोकसदन विघटित करने की सिफारिश करता है और सम्राट साधारणतया उसे अस्वीकार नही कर सकता। प्रधानमन्त्री के हाथ म यह बहुत ही शक्तिशाली अस्त्र होता है जिसके आधार पर वह लोकसदन के सदस्यो को अनुशासित और नियन्त्रित रखता है।

प्रधानमन्त्री द्वारा लोकसदन का नेतृत्व किये जाने के कारण बजट सहित व्यवस्थापन का समस्त कार्य प्रधानमन्त्री की इच्छानुसार ही सम्पन्न होता है और इसी कारण ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को अमरीकी राष्ट्रपति से भिन्न और उच्च स्थिति प्राप्त हो जाती है। अमरीका मे अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था होने कारण राष्ट्रपति व्यवस्थापन कार्य से कोई सम्बन्ध नही रखता और अनेक बार कानून निर्माण के सम्बन्ध म उसकी स्थिति नितान्त असहाय होती है, लेकिन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री न केवल शासन वरन् कानून निर्माण के क्षेत्र म भी नेतृत्व करता है। इसी आधार पर

[1] S E Finer, *Ibid* p 175

प्रधानमन्त्री के सम्बन्ध म रैम्जे म्योर लिखते है, "उसको इतनी अधिक शक्तिया प्राप्त हैं जितनी कि ससार मे अन्य किसी भी सवधानिक शासक को, यहा तक कि सयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति को भी प्राप्त नहीं है। जब तक लोकसदन मे उसके दल का बहुमत रहता है, वह ऐसे काय कर सकता है जो कि एक राष्ट्रपति भी नहीं कर सकता। वह विश्वास के साथ पहले से ही यह वचन दे सकता है कि अमुक सधि करली जायगी और उसे सम्पुष्टि प्रदान की जायगी कि ससद द्वारा अमुक कानून पास किया जायगा अथवा अमुक धनराशि को स्वीकृति दे दी जायगी।"[1]

मन्त्रिमण्डल और सम्राट के बीच सम्पक स्थापित करना—प्रधानमन्त्री सम्राट का मुख्य परामशदाता तथा मन्त्रिमण्डल और सम्राट के बीच सम्पक स्थापित कर्त्ता होता है। मन्त्रिमण्डल के निश्चयो और शासन सम्बन्धी अन्य निणयो की सूचना प्रधानमन्त्री सम्राट को देता है और इनके सम्बन्ध म सम्राट द्वारा दिये गये परामश को वह मन्त्रिमण्डल तक पहुचाता है। १९वी सदी तक प्रधानमन्त्री की उपेक्षा करके अन्य मन्त्री सम्राट स सीधा सम्पक स्थापित कर लेते थे, लेकिन आजकल यह परम्परा स्थापित हो गई है कि अन्य मन्त्री प्रधानमन्त्री की सहमति से ही सम्राट स भेट कर सकते है। प्रधानमन्त्री का यह सामान्य सा प्रतीत होने वाला काय व्यवहार मे पर्याप्त महत्त्व रखता है।

अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनो मे ब्रिटेन का प्रतिनिधित्व—राजनीतिक, आर्थिक और अन्य महत्त्वपूण अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनो मे ब्रिटेन का प्रतिनिधित्व प्रधानमन्त्री के द्वारा ही किया जाता है। सन १९२९ ई० मे मकडानल्ड न अमरीकी राष्ट्रपति हूवर के साथ बार बार वार्तालाप करके इगलण्ड तथा अमरीका के बीच सम्बन्ध स्थापन म प्रशसनीय योग दिया था। चैम्बरलन न हिटलर से वार्तालाप करके म्यूनिख समझौते पर हिटलर के हस्ताक्षर कराये थे, यद्यपि उस समय विदेशमन्त्री पद पर लाड हेलीफैक्स थे। इसी प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान विस्टन चर्चिल के ६ बार अमरीकी राष्ट्रपति रूजवेल्ट तथा दो बार रूसी प्रधानमन्त्री स्टालिन स मिलने के परिणामस्वरूप ही मित्रराष्ट्रों की युद्ध नीति निश्चित हो सकी थी।

राष्ट्रमण्डलीय देशो के साथ सम्बन्ध—ब्रिटिश प्रधानमन्त्री का यह भी काय है कि वह राष्ट्रमण्डलीय देशो से सम्पर्क स्थापित रखे और महत्त्वपूण विषयो म उनस परामश लेता रहे। अभी १९७३ के प्रारम्भ मे ब्रिटेन के द्वारा 'यूरोपियन आर्थिक

[1] He is endowed with such a plentitude of powers as no other constitutional ruler in the world possesses not even the President of the United States For so long as his party commands a majority in the House of Commons he can do what no President can ever do He can give a pledge before-hand that such and such a treaty will be signed and retified that such a law will be passed, or that such and such moneys will be voted by Parliament.

—*Ramsay Muir*

समुदाय (E C M) की जो सदस्यता प्राप्त की गई है, उसके लिए ब्रिटिश प्रधानमन्त्रियों हैरल्ड विल्सन और एडवर्ड हीथ के द्वारा अनेक बार राष्ट्रमण्डलीय देशों से सम्पर्क स्थापित किया गया, जिससे आर्थिक समुदाय की सदस्यता के साथ राष्ट्रमण्डलीय हितों की भी रक्षा की जा सके। राष्ट्रमण्डलीय देशों में विचार विमर्श के लिए प्रधानमन्त्री समय समय पर उनका सम्मेलन बुलाते रहते हैं। इन सम्मेलनों की अध्यक्षता भी ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ही करते है।

प्रधानमन्त्री राष्ट्र का नायक—इन सबके अतिरिक्त, एक तथ्य जो प्रधानमन्त्री को ब्रिटिश राजनीति में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बना देता है, यह है कि वर्तमान समय में सामान्य निर्वाचन प्रधानमन्त्री का ही निर्वाचन होता है। राजनीतिक दलों के द्वारा अपनी नीतियों के आधार पर नही, वरन अपने नेता के व्यक्तित्व के आधार पर चुनाव लडे जाते हैं। १९४५ का आमचुनाव अनुदार दल के द्वारा चर्चिल के नाम पर ही लडा गया था और अनुदार दल का प्रमुख नारा था उसको युद्ध का अधूरा काम पूरा करने दो (Help him to finish job)। यह बात बीसवी सदी के सभी ब्रिटिश चुनावों के सम्बन्ध में कही जा सकती है। जून १९७० के आमचुनाव में ब्रिटिश जनता को इस बात का निर्णय करना था कि वह विल्सन को प्रधानमन्त्री के रूप मे चाहती है या एडवर्ड हीथ को। जेनिंग्ज के शब्दों में "सामान्य निर्वाचन प्रधानमन्त्री का ही निर्वाचन है। ढुलमुल मतदाता जो चुनाव परिणाम निश्चित करते हैं, वे न तो किसी दल का समर्थन करते हैं और न किसी नीति का ही वरन वे एक नेता का समर्थन करते हैं।"[1] लास्की ने इन चुनाव परिणामों के सम्बन्ध मे लिखा है कि, 'इस प्रकार की चुनावबाजी से प्रधानमन्त्री राष्ट्र का प्रतीक बन जाता है और इसलिए जब तक वह प्रधानमन्त्री रहता है उसका कोई सहयोगी उसका मुकाबला करने का साहस नहीं कर सकता।

इस प्रकार हम कह सकते है कि 'प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का प्रधान, संसद का नेता, सामान्य नीति से सम्बन्धित विषयो पर सम्राट से विचार विनिमय करने का माध्यम, देश मे दल का सर्वमान्य नेता और सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति का मूर्तिमान स्वरूप होता है।"[3]

मन्त्रिमण्डल मे प्रधानमन्त्री की स्थिति

प्रधानमन्त्री पद के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि मन्त्रिमण्डल में या अपने सहयोगियो के बीच प्रधानमन्त्री को क्या स्थिति प्राप्त होती है। इस सम्बन्ध में परम्परागत रूप से प्रधानमन्त्री को समकक्षो से प्रधान' (*primus inter*

[1] ' A General Election is primarily an election of a Prime Minister The wavering voters who decides election support neither a party nor policy they support a leader
—Gennings *Cabinet Govt* p 185

[2] H J Laski *Parliamentary Govt in England* p 242

[3] Finer, *The Theory and Practice of Modern Governments* p 58

pares) कहा जाता रहा है। लॉर्ड मार्ले ने इसी विचार का प्रतिपादन करते हुए कहा था कि "यद्यपि प्रधानमन्त्री तथा उसके सहयोगी सामान्यत एक समान होते हैं, उनके सभी निश्चय एक मत से किये जाते हैं और वे भाईचारे से मिलकर काम करते हैं तथापि प्रधानमन्त्री की एक विशेष स्थिति होती है। वह अपने समान पद वाले सहयोगियो में प्रमुख होता है और जब तक वह अपने पद पर आसीन रहता है, वह विशेष स्थिति तथा अधिकार सत्ता का प्रयोग करता है।" लेकिन प्रधानमन्त्री की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए मार्ले के वाक्यांश 'समकक्षो मे प्रथम' को वतमान समय म उपयुक्त नही समझा जाता है। वतमान दृष्टिकोण यह है कि प्रधानमन्त्री को मन्त्रिमण्डल म जो महत्त्वपूण स्थिति प्राप्त होती है, उसे देखत हुए प्रधानमन्त्री को समकक्षो म प्रथम' नही, वरन् मन्त्रिमण्डल का अधिपति' ही कहा जाना चाहिए। रम्जे म्योर इसी दृष्टिकोण को व्यक्त करते हुए कहते है कि प्रधानमन्त्री को समकक्षो में प्रथम कहना सवथा भ्रममूलक है। प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल का अधिपति होता है उसे जोवन देता है और उसका सहार करता है, वह बहुमत दल का नेतत्व करता है उच्च पदाधिकारियो को नियुक्त करता है और लोक सदन का नेतत्व करता है। इन सब कारणो से अन्य मन्त्री उसकी बराबरी नहीं कर सकते।[1] मार्ले के विवरण को उपयुक्त न मानकर सर विलियम हारकोर्ट ने लैटिन वाक्यांश मे प्रधानमन्त्री को 'नक्षत्रो के बीच चन्द्रमा'[3] कहा है, लेकिन डॉ जनिंग्ज इस वाक्यांश को भी पर्याप्त प्रभावपूण न मानते हुए कहते हैं कि, "प्रधानमन्त्री केवल सामान्य श्रेणी वालो मे प्रथम ही नहीं है और न केवल हारकोट के शब्दो मे सितारो के बीच चन्द्रमा ही है, वह सूय के सदृश्य है जिसके चारो ओर अन्य नक्षत्र घूमते रहते हैं।"

वतमान समय मे यह बात देखने म आई है कि ब्रिटिश मतदाता अपने मताधिकार का प्रयोग राजनीतिक दलो की नीतियों के आधार पर नही, वरन उनके नेता के व्यक्तित्व क आधार पर करते हैं। इस प्रकार सामान्य निर्वाचन प्रधानमन्त्री का निर्वाचन हो गया है और इससे प्रधानमन्त्री को अपन साथियो पर छा जाने का अवसर मिलता है। मन्त्रिमण्डल मे प्रधानमन्त्री की स्थिति नक्षत्रो के बीच सूय जसी ही होती है।

क्या प्रधानमन्त्री अधिनायक है ?

प्रधानमन्त्री के विशाल अधिकार और ब्रिटिश शासन पद्धति म उसके अत्यन्त महत्त्वपूण स्थान को देखते हुए यह प्रश्न उपस्थित होता है कि क्या प्रधानमन्त्री

[1] Inter stella luna Minores (a moon among the lesser stars)
—*Sir William Harcourt*

[2] 'He is not merely *primus inter pares* He is not even as Harcourt said 'a moon among the stars He is rather a sun round which planets revolves ' —Jennings, *Cabinet Government*, p 150

अधिनायक है ? रम्जे म्योर के द्वारा प्रधानमन्त्री पद के सम्बन्ध मे कुछ ऐसा ही विचार व्यक्त किया गया है। लेकिन प्रधानमन्त्री की अधिनायक के रूप मे कल्पना करना वस्तुत निराधार है। प्रधानमन्त्री के सहयोगियो मे से कुछ को निश्चित रूप से ब्रिटिश राजनीति मे महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त होता है और यद्यपि अधिकाश बातो के सम्बन्ध मे मन्त्रिमण्डल प्रधानमन्त्री की बात स्वीकार कर लेता है लेकिन कुछ बातो के सम्बन्ध मे प्रधानमन्त्री को मन्त्रिमण्डल के अन्य सदस्यो की बात स्वीकार करनी पड सकती है। यह बात आन्तरिक प्रशासन और परराष्ट्र सम्बन्धो के सचालन दोनो के ही सम्बन्ध मे सत्य है। उदाहरण के लिए, १९६७ मे प्रधानमन्त्री विल्सन और उनके सहयोगी ब्राउन मिस्र द्वारा तिरान की खाडी बन्द किये जाने के विरुद्ध कठोर कार्यवाही करना चाहते थे, लेकिन मन्त्रिमण्डल के अन्य सदस्यो की विचारधारा इसके पक्ष मे नही थी और विल्सन ऐसा नही कर सके। प्रधानमन्त्री द्वारा अत्यधिक मनमानी किए जाने पर उसे पदच्युत भी किया जा सकता है। डॉ० फाइनर लिखते हैं कि, 'प्रधानमन्त्री सीजर (Caesar) नहीं होता, वह ऐसी दैवी शक्ति नहीं है जिसे चुनौती न दी जा सके। उसके विचार भी अनुलघनीय नहीं हैं। उसकी सत्ता का एकमात्र आधार यह है कि वह राष्ट्र की सेवा कितनी कर सकता है। किसी भी समय उसका प्रतिद्वन्द्वी उसका स्थान ग्रहण कर सकता है।'[1]

प्रधानमन्त्री चुनाव के आधार पर एक निश्चत समय के लिए ही सत्ता प्राप्त करता है और यदि वह अपने कार्यकाल मे अनुचित कार्य करता है तो निर्वाचक अगले चुनाव मे उसे सत्ताहीन कर सकते है। उसके कार्य अधिक अनुचित होने पर उसे चुनाव के पूर्व भी लोकसदन या उसके दल द्वारा पदच्युत किया जा सकता है। प्रधानमन्त्री को अधिनायक इसलिए भी नही कहा जा सकता कि ससद के अन्दर और बाहर दोनो ही क्षेत्रो मे उसकी आलोचनाएँ होती रहती हैं। एक अधिनायक के समान वह आलोचको को नष्ट करने का प्रयत्न नही करता, वरन् एक प्रजातान्त्रिक नेता के समान सहनशीलता का परिचय देते हुए वह आलोचको की शकाओ का समाधान करने की चेष्टा करता है। प्रधानमन्त्री अधिनायक इसलिए भी नही कहा जा सकता कि उसकी शक्तिया मौलिक नही होती। वे लोकसदन मे उसके दल के बहुमत और दल मे उसके नेता पर निर्भर करती हैं और दोनो मे से एक भी स्थिति के समाप्त हो जाने पर वह कुछ भी नही रहता है। इन्ही बातो के आधार पर कार्टर और अन्य लेखको का मत है कि प्रधानमन्त्री अधिनायक नही हो सकता। कार्टर लिखते हैं कि, 'प्रधानमन्त्री कुछ अवसरो पर अपनी शक्तियो का भले ही मनमाने रूप से प्रयोग करे और आलोचना पर क्रुद्ध होने का भाव भी प्रकट करे, किन्तु मूलभूत रूप में यह मान्यता सदैव विद्यमान रहती है कि वह जनता का सेवक है और जनता

[1] Finer *The Theory and Practice of Modern Governments*, p 58

को उसकी आलोचना करने तथा उसे पदच्युत करने का अधिकार है। उसकी यह स्थिति किसी भी रूप मे अधिनायक के अनुरूप नहीं कही जा सकती।"[1]

प्रधानमन्त्री की वास्तविक स्थिति और उसके निर्धारक तत्व

यह तो नितान्त स्पष्ट है कि ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे प्रधानमन्त्री की स्थिति बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसके साथ ही कुछ अवसरो पर भले ही वह बहुत अधिक शक्तिशाली रूप मे कार्य करे किन्तु वह किसी भी रूप मे अधिनायक नही है। व्यवहार मे ऐसा देखा गया है कि प्रधानमन्त्री पद कभी तो बहुत अधिक प्रभावशाली और शक्तिशाली हो जाता है लेकिन कभी यह पद निर्बल ही दिखाई देता है। स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उपस्थित होता है कि प्रधानमन्त्री की स्थिति को प्रभावित करने वाले तत्व कौन से हैं। इन तत्वो की विवेचना निम्न रूपो मे की जा सकती है

प्रधानमन्त्री का व्यक्तित्व—प्रधानमन्त्री पद की स्थिति सबसे प्रमुख रूप मे इस पद को धारण करने वाले व्यक्ति के व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। लार्ड एसक्विथ के कथनानुसार, 'प्रधानमन्त्री का पद वैसा हो बन जाता है, जैसा कि इस पद का अधिकारी उसे बनाना चाहता है।'[2] एक ओर सर रॉबर्ट पील, ग्लैडस्टन, डिजरैली, लायड जार्ज और विंस्टन चर्चिल जैसे व्यक्ति प्रधानमन्त्री हो चुके हैं, जिनके समय मे प्रधानमन्त्री पद ने नवीन ऊँचाइयो का स्पर्श किया। दूसरी ओर बाल्डविन तथा एटली जैसे प्रधानमन्त्री हो चुके है जो सहयोगियो पर अपना प्रभाव स्थापित करने मे असफल रहे। कहा जाता है कि ग्लैडस्टन के अधिकार को उसके किसी सहयोगी ने चुनौती नही दी और डिजरैली उस समय अपना दृष्टिकोण मनवाने मे सफल रहा, जब एक सहयोगी के अतिरिक्त सभी ने उसका विरोध किया था। अत जैनिंग्ज का यह कथन सर्वथा सत्य है कि 'प्रधानमन्त्री के पद की स्थिति वही होती है जो उस पद को ग्रहण करने वाला बनाना चाहता है और मन्त्री उसे बनाने देते हैं।"

लोकसदन मे उसके दल और दल मे उसकी स्थिति—प्रधानमन्त्री का पद निश्चित रूप स बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है लेकिन इसके साथ ही, जैसा कि लास्की ने कहा है, 'उसकी स्थिति दलीय प्रणाली से बँधी हुई है।' जब तक उसके राजनीतिक दल का लोकसदन म बहुमत रहता है और वह अपने राजनीतिक दल का नेता है, तभी तक उसे राष्ट्रीय महत्त्व की स्थिति प्राप्त रहती है। दल के समर्थन से

[1] 'He may, at times uses his powers in an autocratic fashion and he may show his irritation at criticism but fundamentally there is always the recognition that he is the servant of the people that they have right both to criticise and to discharge him This is of course, an attitude which no dictator can comprehend

G M Carter and Others, *Government of Great Britain*, p 176

[2] 'The office of the Prime Minister is what its holder chooses to make it —*Lord Oxford and Asquith*

वचित हो जाने पर उसका समस्त महत्त्व समाप्त हो जाता है और उसका हाल रैम्जे मकडानल्ड जसा हो जाता है।

तत्कालीन परिस्थितिया—प्रधानमन्त्री की स्थिति इस बार पर भी निभर करती है कि उसके कायकाल के समय परिस्थितिया किस प्रकार की हैं। सामान्य परिस्थितिया होने पर प्रधानमन्त्री को अपन पद की सीमाएँ दृष्टि मे रखनी ही होती हैं किन्तु युद्ध, आर्थिक सकट या अन्य प्रकार के विपम काल मे वह बहुत अधिक सीमा तक केवल अपने ही विवेक के आधार पर काय कर सकता है। लायड जाज और चर्चिल के बहुत अधिक शक्तिशाली प्रधान मन्त्री के रूप मे काय करने का एक कारण उनके कायकाल के समय विद्यमान युद्धकालीन स्थिति रहा है।

जनिग्ज के शब्दो मे "प्रधानमन्त्री की शक्ति तथा उसका महत्त्व कुछ उसके व्यक्तित्व पर, कुछ उसकी व्यक्तिगत प्रतिष्ठा पर तथा कुछ उसके दल के समथन पर निभर करता है।"[1]

प्रश्न

१ ब्रिटिश सविधान मे मन्त्रिमण्डल के गठन, कृत्यो तथा शक्तिया का वणन कीजिए। (पटना, १६६१)

२ "वतमान युग मे लोकसदन मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण नही रखता, वरन मन्त्रिमण्डल ही लोकसदन पर नियन्त्रण रखता है।" इस कथन की व्याख्या कीजिए व कारण बताइए। (कानपुर, १६७१, राजस्थान, १६७१)

३ ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की शक्तियो, कार्यों और स्थिति का वणन कीजिए। क्या उसे 'समान व्यक्तियो म प्रथम' कहना उचित है।

४ "प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल रूपी महराव का मुख्य प्रस्तर है।" इस कथन की विवेचना कीजिए। (आगरा, १६६५, ६१)

५ 'ब्रिटिश प्रधानमन्त्री अपने समकक्षो म प्रथम से अधिक और तानाशाह से कम है।' इस कथन की समीक्षा कीजिए।

६ सम्राट्, मन्त्रिमण्डल और लोकसदन के साथ प्रधानमन्त्री के सम्बन्ध का निरूपण कीजिए।
(बिहार, १६६१, आगरा, १६७१, विक्रम, १६६३, ६६)

७ क्या ब्रिटेन म मन्त्रिमण्डल का अधिनायकत्व है? अपने उत्तर के पक्ष म तक दीजिए। (आगरा १६६१)

---

[1] His power and importance depend in part on his personality in part on his own personal prestige and in part upon his party support —*The British Constitution* p 197

ब्रिटिश प्रधानमन्त्री तथा अमरीकी राष्ट्रपति के पद की तुलना अमरीकी संविधान के अन्तर्गत 'राष्ट्रपति' अध्याय म की गई है।

८ ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की मुख्य विशेषताओ का वणन कीजिए। क्या ब्रिटिश प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल रूपी मेहराब की आधारशिला है ? (मेरठ, १९६८)

९ इगलण्ड म मन्त्रिपरिषद के सम्राट् तथा लोकसदन के साथ सम्बन्धो का वणन कीजिए। (कानपुर, १९७२)

१० मुनरो के इस कथन की विवेचना कीजिए कि ब्रिटन मे लोकसदन केबीनेट के नेतृत्व और मागदशन मे काय करता है। (विक्रम, १९६८)

११ इगलैण्ड मे केबीनट प्रणाली का विकास कैसे हुआ। लिखिए और इसके मुख्य कार्यों का वणन कीजिए। (विक्रम, १९६८)

१२ क्या यह कहना उचित है कि इगलैण्ड मे केबीनेट की तानाशाही है। कारण बताइए। (राजस्थान, १९६९)

6

लोक सेवा

(CIVIL SERVICE)

"मुझे सदेह है कि आप लोग (लोक सेवा के सदस्यगण) हमारे (अर्थात् मन्त्रिमण्डल के) बिना विभाग का प्रशासन कर सकते हैं, किन्तु मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास है कि हम लोग (मन्त्रिगण) आप लोगो (लोक सेवा के सदस्यों) के बिना विभाग का कार्य नहीं कर सकेंगे।"[1]

— जोजेफ चेम्बरलेन

मन्त्रिमण्डल ब्रिटेन की कार्यपालिका है, और प्रशासन के क्षेत्र मे मन्त्रिमण्डल के कार्य तथा शक्तियां निश्चित रूप से बहुत अधिक व्यापक हैं लेकिन व्यवहार मे मन्त्रिमण्डल की इन समस्त शक्तियो का प्रयोग मन्त्रिगण ही नही करते हैं वरन इन कार्यों का एक बहुत बडा भाग लोक सेवाओ के द्वारा किया जाता है। मन्त्रिमण्डल तो उच्चतम स्तर पर शासन सम्बन्धी नीति को ही निर्धारित करता है। इस नीति को कार्यरूप देने और इसके अनुसार शासन व्यवस्था का सचालन सम्भव बनाने के लिए मन्त्रिगणो के अधीन लोक सेवको का एक विशाल समूह होता है और शासन के सचालन का अधिकाश कार्य इन लोक सेवको के द्वारा ही किया जाता है। इस दृष्टि मे लोक सेवाएँ ब्रिटिश शासन व्यवस्था का निश्चित रूप से एक महत्वपूर्ण अग हैं।

लोक सेवा का सामान्य परिचय

ब्रिटेन की लोक सेवाएँ अपने वर्तमान रूप मे लगभग एक सदी पुरानी ही हैं। वर्तमान समय मे इन सेवाओ का जो स्वरूप है वह 'ट्रेवेलियन नार्थकोट रिपोर्ट' की सिफारिशो और उनके आधार पर स्थापित की गई 'मुक्त प्रतियोगात्मक परीक्षाओ

1 I have a shrewd suspicion that you (Civil Servants) can do without us (Ministers) but I have an absolute conviction that we could not do without you (Civil Servants)

—Joseph Chamberlain (Quoted from L W Boyd ((Ed) *Mr Chamberlain s Speeches* Vol II, p. 7

पर आधारित है। १६वीं सदी तक इगलण्ड म लोक सेवका की नियुक्ति अनुग्रह (Patronage) के आधार पर होती थी। लेकिन यह कोई वज्ञानिक पद्धति नही थी और अनेक बार इसके कारण महत्त्वपूण पदा पर अयोग्य तथा अक्षम व्यक्ति आसीन हो जाते थे। बक, बेन्थम तथा कार्लायल आदि के द्वारा इस प्रकार की नियुक्ति प्रथा की आलोचना की गई। १८५३ ई० म नार्थकोट ट्रेवेलियन रिपोट के आधार पर ब्रिटिश लाक सेवाओ म सुधार शुरू हुए। १८५५ ई० ग्लडस्टन के अनुरोध पर 'लोक सेवा आयोग' की स्थापना की गई और १८७० ई० म नागरिक सेवाओ म प्रवेश के लिए प्रतियोगिता परीक्षाओ का श्रीगणेश हुआ। इसके बाद लाक सेवाओ के सगठन आदि म सुधार के लिए सन १८७५, १८८४ ६०, १६१०-१४, १६१८ और १६३१ म जाँच के लिए समितियाँ नियुक्त की गयी और इन समितिया की सिफारिशो के आधार पर अनक सुधारात्मक कानूना का निर्माण हुआ।

लोक सेवाओ का वर्गीकरण

प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र मे लोक सेवाओ की व्यवस्था की गई है और वतमान समय मे ब्रिटेन के समस्त लोक सेवा कमचारिया को ६ भागो म विभाजित किया जा सकता है। य मुख्य वग इस प्रकार हैं

(१) प्रशासनिक वग (Administrative Class)—प्रशासनिक वग समस्त लोक सेवा का आधार है। इस वग म स्थायी सचिव से लेकर सहायक प्रधान तक के सभी अधिकारी आते हैं। ये 'भारतीय प्रशासनिक सेवा' (I A S) के समान है। इस वग पर नीति निर्धारण तथा विभाग को सचालित करन का उत्तरदायित्व रहता है। इस वग मे नियुक्ति के लिए प्रत्येक वष कठिन प्रतियोगिता परीक्षा का आयोजन किया जाता है और इस परीक्षा के आधार पर विश्वविद्यालय के योग्यतम स्नातका को सेवा के लिए चुना जाता है। य २१ स २४ वष की आयु मे अपने पद पर नियुक्त किये जाते हैं। इस वग के २५ प्रतिशत पद नीचे के पदाधिकारिया का पदोन्नति दकर भरे जाते हैं। वतमान समय म इस वग म लगभग ४,००० अधिकारी है।

(२) अधिशासी वग (Executive Class)—इनकी नियुक्ति भी प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर होती है और इनकी समता भारत की 'अधीनस्थ सेवाओ (Subordinate Services) मे की जा सकती है। प्राय इस वग के सदस्य १७½ स १६ वष तक के युवक युवतियो म से बँटे जाते है जिन्होने उच्चतर माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राप्त कर ली हो तथा साथ ही जो प्रतियोगिता परीक्षा मे उत्तीण हो चुके हो। विशिष्ट प्रशासनिक कार्यों को पूरा करना, हिसाब किताब की जाच-पडताल करना, महत्त्वपूण मामला का आलोचनात्मक परीक्षण करना तथा प्रारम्भिक शोध करना इनके प्रमुख काय हैं। अधिशासी वग के राजकमचारियो की सख्या ७५,००० के लगभग है।

(३) विशिष्ट वग (Specialist Class)—शासन के क्षेत्र म प्रशासनिक और अधिशासी वग के अतिरिक्त अनेक व्यवसायी, शिल्प वज्ञानिक और तकनीकी

क्षेत्र के विभिन्न कार्यकर्त्ताओं की आवश्यकता होती है। इन पदों पर प्रतियोगी परीक्षाओं के आधार पर नहीं, वरन् मान्य योग्यता, विशिष्ट प्रशिक्षण या अनुभव के आधार पर प्रतियोगी के साक्षात्कार (interview) की पद्धति से चुनाव किया जाता है। इस वर्ग के अन्तर्गत बैरिस्टर, सोलिसीटर, डॉक्टर, शिल्पी, इंजीनियर, वैज्ञानिक आदि आते हैं। इस वर्ग के कर्मचारियों की संख्या लगभग १,१४,००० है।

(४) लिपिक वर्ग (Clerical Class)—चौथी श्रेणी में लिपिक वर्ग आता है जिसकी संख्या सबसे ज्यादा है। इसमें प्रतियोगिता परीक्षा के आधार पर १६-१७ वर्ष के युवक युवतियों को चुना जाता है। ये लोग अपने अधिकारी वर्ग के आदेशानुसार नित्य प्रति के काम करते, हिसाब-किताब रखते, दावे, परिलेख आदि की जाँच पड़ताल करते तथा आवश्यक तथ्य एवं आंकड़े एकत्रित करते हैं। इनका काम यांत्रिक होता है। वर्तमान समय मे इनकी संख्या १ लाख ६० हजार के लगभग है।

(५) लेखक सहायक वर्ग (Writing Assistant Class)—इस वर्ग में सहायक लिपिक, टाइप करने वाले, शार्टहैण्ड टाइप करने वाले, डुप्लीकेटर चलाने वाले आदि सम्मिलित होते हैं। इनकी संख्या लगभग १ लाख ६ हजार है।

(६) संदेशवाहक व निम्न वर्ग (Messengerial and Minor class)—इस वर्ग में संदेशवाहकों के अतिरिक्त कागज रखने वाले, कार्यालय साफ करने वाले तथा अन्य ऐसे ही कर्मचारी सम्मिलित है, जिनकी संख्या लगभग ३४,००० है।

इन सबके अतिरिक्त डाक विभाग, टेलीफोन विभाग और शिक्षा विभाग आदि में 'विभागीय वर्ग' भी होते हैं, जिनकी नियुक्ति सम्बन्धित विभागों द्वारा की जाती है। वर्तमान समय में ब्रिटेन में समस्त लोक कर्मचारियों की संख्या ७ लाख के लगभग है।

लोक सेवाओं के सम्बन्ध में कुछ सामान्य बातें

भर्ती की पद्धति—प्रारम्भ में लोक सेवकों की नियुक्ति शासक वर्ग के अनुग्रह के आधार पर की जाती थी, लेकिन विभिन्न पदों के लिए योग्य व्यक्तियों का चयन करते हुए १८५५ में लोक सेवा आयोग की स्थापना की गई। प्रारम्भ में इस आयोग के ३ सदस्य होते थे, किन्तु अब उनकी संख्या बढ़ाकर ६ कर दी गई है। आयोग के सदस्य लोक सेवा के पुराने और अनुभवी पदाधिकारी होते हैं। इनकी नियुक्ति राजमुकुट द्वारा की जाती है और ये अवकाश ग्रहण की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं।

लोक सेवा आयोग प्रतियोगिता परीक्षाओं का आयोजन करता है। इन परीक्षाओं में उम्मीदवारों की सामान्य योग्यता देखी जाती है और साक्षात्कार के आधार पर उनकी चतुराई, चरित्र गठन और नेतृत्व के गुणों का अनुमान लगाया जाता है। आयोग के प्रमुख कार्य इस प्रकार है

(1) सरकारी पदों पर नियुक्त होने वाले व्यक्तियों की योग्यता प्रमाणित करना,

(ii) नियुक्ति एव योग्यता सम्बन्धी नियमो का निधारण करना
(iii) नियुक्तिया एव पद वृद्धियो की सूचना लदन गजट' मे प्रकाशित करना।

आयोग यह सब काय वित्त विभाग की स्वीकृति से करता है। नियुक्ति काय वित्त विभाग के नियन्त्रण मे विविध विभागा द्वारा सम्पादित होता है, परन्तु स्वस्थ परम्परा के रूप मे आयोग की सिफारिश कभी भी अमान्य नही हाती।

प्रशिक्षण—द्वितीय महायुद्ध के पूव तक लोक कमचारियो के प्रशिक्षण पर विशेष ध्यान नही दिया जाता था। १९४४ मे नियुक्त की गई एक समिति न सुझाव दिया कि नये भर्ती किये गये कमचारियो के प्रशिक्षण की व्यवस्था होनी चाहिए। प्रशिक्षण का काय मुख्यत विभागो द्वारा होता है। कोष की ओर से भी एक प्रशिक्षण एव शिक्षा विभाग' की व्यवस्था की गई है। समस्त नियुक्तियाँ 'परिवीक्षाधीन' (under probation) होती है। सामान्यतया परिवीक्षा काल २ वष होता है और इसमे योग्य पाये जान पर उन्ह स्थायी कर दिया जाता है। योग्यता म कमी पाई जान पर परिवीक्षा का काल बढा दिया जाता है।

पदोन्नति (Promotion)—ब्रिटेन मे पदोन्नति का आधार वरिष्ठता एव योग्यता है। इसके लिए प्रत्येक विभाग मे एक पदोन्नति आयोग' होता है जिसमे विभाग के मुख्य अधिकारीगण हाते हैं जो वार्षिक प्रतिवेदन और आवश्यक समझने पर साक्षात्कार के आधार पर विभागीय अध्यक्ष के पास सिफारिश भेजते है। यदि कोई कमचारी पदोन्नति आयोग की सिफारिश से असन्तुष्ट हो तो वह अपील कर सकता है।

पदावधि—ब्रिटेन मे लोक सेवक स्थायी आधार पर नियुक्त किय जाते हैं और सरकार के परिवतन का उनकी स्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव नही पडता। सामान्यतया उनकी पद निवृत्ति आयु ६० स ६५ वष के बीच होती है। पद निवृत्ति होने पर उन्ह 'निवृत्ति वेतन' (Gratuity) मिलती है और उन्ह पेंशन दिये जान की भी व्यवस्था है।

लोक सेवाओ के कार्य और उनका महत्त्व

ब्रिटिश शासन व्यवस्था के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल को जो व्यापक अधिकार और शक्तियाँ प्राप्त हैं, व्यवहार मे उनके अधिकाश का प्रयोग लोक सेवाओ के द्वारा ही किया जाता है। एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि मन्त्रिगण अपने-अपने विभागो के अविशेषज्ञ हाते हैं, जबकि लोक सेवक विशेषज्ञ, स्वाभाविक रूप स मन्त्रियो के द्वारा लोक सेवको की सहायता स ही अपने कर्तव्यों का सम्पादन किया जाता है। लोक सेवाएं ब्रिटिश शासन व्यवस्था का एक महत्त्वपूर्ण अग हैं और उनके कार्यों की विवेचना निम्न रूपो म की जा सकती है

(१) नीति निर्धारण में मन्त्रियो को सहायता देना—यद्यपि शासन की नीति निर्धारित करने का काय मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही किया जाता है, लेकिन ...

निर्धारित करने के लिए आवश्यक ज्ञान, तथ्य और सूचनाएँ उच्च पदासीन स्थायी पदाधिकारियों के द्वारा उन्हें प्रदान की जाती है। ये स्थायी पदाधिकारी मन्त्रियों को बतलाते हैं कि एक विशेष प्रकार की नीति को अपनाने के परिणाम क्या हो सकते हैं। स्वयं प्रधानमन्त्री भी योग्यतम स्थायी पदाधिकारियों से नीति निर्धारण के सम्बन्ध में परामर्श प्राप्त करते हैं। लोक सेवा के कार्यों के सम्बन्ध में एफ० ई० डेल (F E Dale) ने कहा है कि, "महान स्थायी पदाधिकारी का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य मन्त्रियों द्वारा किये गये निर्णयों को क्रियान्वित करना नहीं है, वरन उन्हें यह परामर्श देना है कि वे क्या निर्णय लें।"[1]

(२) **मन्त्रियों द्वारा निर्धारित नीतियों को लागू करना**—मन्त्रिमण्डल द्वारा विभिन्न विभागों के सम्बन्ध में जो नीति निर्धारित की जाती है, उसे इन लोक सेवकों द्वारा ही क्रियान्वित किया जाता है। उच्च पदासीन लोक सेवक इन नीतियों के आधार पर अधीनस्थ कार्यालयों को आदेश जारी करते हैं और इन आदेशों के आधार पर ही प्रशासनिक कार्य सुचारु रूप से चलता है।

(३) **मन्त्रियों को परामर्श देना**—प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से शासन को विभिन्न विभागों में विभाजित किया गया है। प्रत्येक विभाग का अध्यक्ष कोई न कोई मन्त्री होता है और उसके नीचे राजनीतिक उपसचिव, फिर स्थायी सचिव और उनके नीचे अनेक सचिव, परामर्शदाता, सहायक सचिव और बहुत से क्लर्क होते हैं। नीचे की श्रेणी के ये सब लोग अपने-अपने कार्यों के विशेषज्ञ होते हैं। इन स्थायी पदाधिकारियों द्वारा मन्त्रियों की आज्ञाओं का पालन तो किया ही जाता है, वे शासन सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं के सम्बन्ध में मन्त्रियों को परामर्श भी देते हैं। वे अपना समस्त ज्ञान और अनुभव अपने राजनीतिक प्रधान के सामने रख देते हैं, चाहे मन्त्री उसे स्वीकार करे या न करे। सामान्यतया स्थायी पदाधिकारियों के इस परामर्श का मन्त्रियों पर वाछित प्रभाव पड़ता है।

(४) **विधि निर्माण सम्बन्धी कार्य**—ब्रिटेन में लोक सेवा के सदस्यों द्वारा विधि निर्माण के क्षेत्र में भी भूमिका अदा की जाती है। संसदात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण संसद में अधिकांश महत्त्वपूर्ण विधेयक मन्त्रियों द्वारा ही प्रस्तावित किये जाते हैं और मन्त्रियों द्वारा प्रस्तावित इन विधेयकों के प्रारूप (draft) या तो लोक सेवकों के द्वारा ही स्वयं या मन्त्रियों द्वारा लोक सेवकों की सहायता और परामर्श से तैयार किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त वर्तमान समय में 'प्रदत्त व्यवस्थापन' (delegated legislation) की प्रवृत्ति का विकास हुआ है, जिसका परिणाम यह

1 The most important function of the great permanent official is not to carry out decisions already taken by ministers *but to* advice them what decisions they should take
—F E Dale (Quoted from Alex N Dragnich *Major Governments of Europe*, p 131)

हुआ है कि संसद कानून की मोटी रूपरेखा तैयार कर नियम उपनियम बनाने का काय सम्बन्धित विभागों को सौंप देती है। सम्बन्धित विभागो म य नियम उपनियम तयार करने का काय लोक सवको के द्वारा ही किया जाता है।

(५) वित्त सम्बन्धी काय—वित्तमन्त्री के द्वारा अपने विभाग के लोक सेवको की सहायता से ही बजट तयार करने का काय किया जाता है। आय और व्यय से सम्बन्धित विभिन्न बातो के विस्तृत ब्यौरे को निश्चित करने के लिए वित्तीय विशेषज्ञता की आवश्यकता होती है और यह विशेषज्ञता विभाग के मन्त्री को नही वरन स्थायी पदाधिकारियों को ही प्राप्त होती है।

वस्तुस्थिति यह है कि लोक सेवको द्वारा पग पग-पर मन्त्रियो को सहायता और परामश देने का काय किया जाता है। मन्त्रियो को विभागो के कार्यो के बारे मे जिन प्रश्नो का उत्तर देना होता है उनको भी स्थायी सचिव ही तयार करते हैं। समस्त प्रशासनिक व्यवस्था म लोक सेवको के महत्त्व को स्वीकार करते हुए जोजेफ चेम्बरलेन ने कहा था कि, 'मुझे सन्देह है कि आप लोग (लोक सेवा के कमचारी) हम लोगो (मन्त्रियो) के बिना विभाग का प्रशासन कर सकते हैं किन्तु मुझे इस बात का विश्वास है कि हम लोग आप लोगो के बिना विभाग का काय नही कर सकेंगे।"

रम्जे म्योर जैसे कुछ लेखको का तो विचार है कि वतमान समय की प्रशासनिक व्यवस्था का सचालन वस्तुत लोक सेवाओ के द्वारा ही किया जाता है। व लिखते है कि "नौकरशाही पिछली शताब्दी मे और विशेषतया पिछली पीढ़ी मे हमारी सरकार की पद्धति मे जितना अधिक शक्तिशाली और महत्त्वपूण तत्व बना गया है, उसे पाठ्यक्रम की पुस्तकें उतना अनुभव नहीं करती हैं। यह वास्तव में हमारी पद्धति का प्रभावशाली और सक्रिय विभाग बन गया है। नौकरशाही (स्थायी लोक सेवा) की शक्ति न केवल प्रशासन में अपितु कानून निर्माण और वित्त के क्षेत्र मे भी दिखायी देती है। यह न केवल कानूनो को क्रियान्वित करती है बल्कि उनकी रूपरेखा भी बनाती है, यह न केवल करो से प्राप्त धन को खच करती है बल्कि यह भी निणय करती है कि कितने कर लगाये जायें और उन्हे कैसे वसूल किया जाय।"

लोक सेवाओ के विशेष लक्षण और राजनीतिक कार्यपालिका से उनका भेद

ब्रिटिश लोक सेवा के कुछ विशेश लक्षण हैं और [illegible] के आधार पर लोक सेवाओ को राजनीतिक कायपालिका से अलग किया [illegible] है। [illegible] विशेष लक्षण इस प्रकार है

(१) मन्त्री अविशेषज्ञ होते हैं और लोक [illegible] विशेषज्ञ—[illegible] ब्रिटेन मे मन्त्री राजनीतिक आधार पर नियु[illegible] राजनीतिक दल मे जिन व्यक्तियो को विशेष [illegible] राजनीतिक स्थिति के आधार पर मन्त्रि[illegible] कारण मन्त्री अपने विभागो के विशेषज्ञ [illegible]

अधिकारी प्रतियोगिता परीक्षाओं के आधार पर चुने जाते है, जिनमे चयन का आधार योग्यता ही होता है। इसके अतिरिक्त वे सेवा निवृत्ति की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं, अतः वे बहुत अनुभवी और विशेषज्ञ होते हैं। मन्त्रियो की अविशेषज्ञता के सम्बन्ध मे प्रो० मुनरो ने लिखा है, "युद्ध विभाग का मन्त्री एक दार्शनिक या पत्रकार हो सकता है, नौ सेना का अध्यक्ष कोई व्यापारी या बरिस्टर हो सकता है तथा व्यापार विभाग का मन्त्री कोई यूनीवर्सिटी का प्रोफेसर हो सकता है। वित्त विभाग का मन्त्री एक वकील या राजनीतिक हो सकता है।"[1] कहा जाता है कि पहली बार औपनिवेशिक विभाग सम्भालते समय मि० पामस्टन ने अपने सहायक से कहा था कि, 'जरा आधा घण्टे के लिए ऊपर आकर मुझे नक्शे में दिखाइए कि वे सम्भ्रमित करने वाले उपनिवेश कहाँ है।" अनेक बार मन्त्री कितने अधिक अविशेषज्ञ होते हैं, इसे स्पष्ट करते हुए सर सिडनी लो ने कहा है, "वित्त मन्त्रालय में द्वितीय श्रेणी के लिपिक का पद प्राप्त करने के लिए एक नवयुवक को अकगणित की परीक्षा मे अवश्य उत्तीर्ण होना पड़ेगा, पर वित्तमन्त्री अधेड़ उम्र का एक ऐसा व्यक्ति भी हो सकता है जो अंको के विषय की अपनी उस थोड़ी बहुत जानकारी को भी भूल चुका हो, जो उसने ईटन अथवा आक्सफोर्ड मे प्राप्त की हो और कोष के हिसाब मे प्रयुक्त किये गये दशमलव अंको का मतलब जानने के लिए उत्सुक हो।"[2]

(२) **लोक सेवा की राजनीतिक तटस्थता**—ब्रिटिश लोक सेवाओं की एक विशेषता यह है कि वे राजनीतिक दृष्टि से पूर्णतया तटस्थ होती है। चाहे किसी राजनीतिक दल की सरकार बने, वे पूरी निष्ठा के साथ पदासीन सरकार की सेवा करती है। इस सम्बन्ध मे १९५४ मे लोक सेवाओं के लिए एक संहिता का निर्माण किया गया है जिसके अनुसार मन्त्रियों के आधीन प्रशासकीय और व्यावसायिक वर्ग के लोक सेवक व उनके साथ कार्य करने वाले लिपिक आदि अन्य कर्मचारी देश की राजनीति मे भाग नही ले सकते। शेष कर्मचारी अपने विभाग से अनुमति व अवकाश लेकर स्थानीय व राष्ट्रीय स्तर पर सभी प्रकार की राजनीतिक गतिविधियो मे भाग

1 'The British war office has been headed at times by a philosopher or a journalist the admiralty by a merchant or a barrister and the board of trade by a university professor One would suppose that in the treasury atleast there should be a minister familiar *with the intricacies of public finance But no* the Chancellor of the Exchequer have often been lawyers county squires or professional politician —Munro *The Governments of Europe* p 114

2 'A youth must pass an examination in arithmatic before he can hold a second class clerkship in the treasury but the Chancellor of Exchequer may be a middle-aged man of the world who has forgotten what little he ever learned about figures and is innocently anxious to know the meaning of those confusing little dots when first confronted with the treasury accounts worked out in details' —Sir Sydney Low *The Government of England* pp 201 202.

ले सकते हैं। कोई भी कर्मचारी बिना त्यागपत्र दिये चुनाव नहीं लड़ सकता, क्योंकि 'लोकसदन निर्योग्यता अधिनियम, १९५७' के अनुसार लोक सेवक का पद लाभ का पद माना गया है। लोक सेवाओं की इस राजनीतिक तटस्थता का ब्रिटिश शासन व्यवस्था पर स्वस्थ प्रभाव पड़ा है। 'लोक सेवकों के राजनीतिक क्रियाकलाप के सर्वेक्षण के लिए नियुक्त समिति' ने अपने प्रतिवेदन में कहा था कि, 'लोक सेवा की राजनीतिक तटस्थता अंग्रेजी लोकतन्त्रात्मक शासन की एक आधारभूत विशेषता है तथा उसके कुशल संचालन के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है।" इस दृष्टि से ब्रिटिश लोक सेवाएँ अमरीकी लोक सेवाओं से नितान्त भिन्न हैं।

(३) लोक सेवकों का स्थायित्व—मन्त्री राजनीतिक आधार पर अपना पद प्राप्त करते हैं और पाँच वर्ष के बाद या इसके पूर्व जब भी राजनीतिक स्थिति में परिवर्तन हो जाय, उन्हें अपना पद त्यागना होता है। लेकिन लोक सेवाएँ राजनीतिक दृष्टि से तटस्थ होती हैं और एक राजनीतिक दल की सरकार के स्थान पर दूसरे राजनीतिक दल की सरकार का निर्माण होने से उनकी स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। लोक सेवक सेवा निवृति की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं। मुनरो ने लिखा है, **"मन्त्रिमण्डल और संसद आते और चले जाते हैं, परन्तु स्थायी कर्मचारी मण्डल टैनीसन की सरिता की तरह अपने मार्ग पर शान्तिपूर्वक चलता रहता है।"**[1]

(४) लोक सेवकों का अनुत्तरदायित्व—वास्तविक प्रशासन का कार्य भले ही लोक सेवा के सदस्यों द्वारा किया जाता हो, इन कार्यों के लिए लोक सेवा के सदस्य नहीं, वरन मन्त्री ही उत्तरदायी होते हैं। लोक सेवकों के द्वारा तो मन्त्रियों के आधीन रहते हुए उनके उत्तरदायित्व के अन्तर्गत ही समस्त कार्य किये जाते हैं।

मन्त्रियों व लोक सेवकों का सम्बन्ध

मन्त्रिगण और लोक सेवा के सदस्यों में एक महत्त्वपूर्ण भेद यह होता है कि मन्त्रिगण अपना पद राजनीतिक आधार पर प्राप्त करते हैं लेकिन लोक सेवा के सदस्य प्रशासनिक योग्यता के आधार पर। मन्त्रियों को अपना पद किसी विभाग विशेष के सम्बन्ध में प्राप्त विशेष ज्ञान और अनुभव के आधार पर नहीं, वरन् लोकसदन के बहुमत दल में उनकी विशेष राजनीतिक स्थिति के कारण ही प्राप्त होता है। नियुक्ति के बाद भी उन्हें प्रशासन की विभिन्न बारीकियों का विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने का अधिक अवसर नहीं मिलता, क्योंकि उन्हें अपने समय और शक्ति का एक बहुत बड़ा भाग संसद सम्बन्धी और जन सम्पर्क कार्यों में देना होता है। अनेक मन्त्री प्रशासनिक ज्ञान प्राप्त करने की ओर विशेष ध्यान भी नहीं देते, क्योंकि उन्हें इस बात का विश्वास नहीं होता कि वे इस विभाग के अध्यक्ष पद पर कब तक बने

[1] 'Cabinets and Parliaments come and go, but like Tennyson's brook the permanent staff keeps placidly on its way'
—W B Munro, *The Governments of Europe* p 116

रहेगे। उनकी रुचि विभाग विशेष के सम्बन्ध मे प्रशासनिक ज्ञान प्राप्त करने की अपेक्षा राजनीतिक दल म अपनी स्थिति प्रभावशाली बनाने की ओर ही रहती है। इन सब कारणो से मन्त्री अपने विभागो के विशेषज्ञ नही होते हैं।

इसके नितान्त विपरीत लोक सेवा के अधिकारियो की नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जाती है। नियुक्ति के बाद उन्हे प्रशिक्षण भी दिया जाता है। एक बार नियुक्त होने के बाद उनके सामने यह स्पष्ट हो जाता है कि अब उन्हे जीवन भर प्रशासनिक क्षेत्र मे ही कार्य करना है। स्वाभाविक रूप से उनके द्वारा शक्ति भर प्रशासनिक विशेषज्ञता प्राप्त करने का प्रयत्न किया जाता है। प्रशासनिक क्षेत्र मे लम्बे समय तक कार्य करते रहने के कारण भी उन्हे इस क्षेत्र का बहुत अधिक ज्ञान और अनुभव प्राप्त हो जाता है।

इस प्रकार मन्त्री अपने कार्य के सम्बन्ध मे अविशेषज्ञ किन्तु लोक सेवा के सदस्य अपने कार्य म विशेषज्ञ होते हैं। इसी कारण नीति निर्धारण व योजनाओ के प्रारूप बनाने से लेकर उनकी अन्तिम सफलता तक प्रत्येक पग पर मन्त्री लोगो को लोक सेवा के सदस्यो के सहयोग की आवश्यकता बनी रहती है। अत सभी लोग इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्रशासनिक व्यवस्था म लोक सेवको का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण होता है और उनके बिना मन्त्रियो के द्वारा शासन का सचालन सम्भव नही है। लेकिन कुछ लोगो द्वारा इससे आगे बढकर इस बात का प्रतिपादन किया गया है कि मन्त्री लोग लोक सेवको पर इतने अधिक निर्भर होते हैं कि उन्हें लोक सेवको के हाथो की कठपुतली कहा जा सकता है। **रम्जे म्योर** का मत है कि नीति निर्माण, निर्णय व उनके क्रियान्वय मे लोक सेवको का प्रभाव इतना अधिक रहता है कि मन्त्रियो को लोक सेवको के हाथ की कठपुतली मात्र समझा जाना चाहिए। उनका कहना है कि 'जब तक मन्त्री कोई स्वाभिमानी गधा न हो या वह असाधारण विवेक, शक्ति और साहस का व्यक्ति न हो (और सफल राजनीतिज्ञो मे इन दोनो ही प्रकार के लोग प्राय नही होते), सौ मे निन्यानवे मामलों मे वह कर्मचारियो के विचार को स्वीकार कर लेता है और अंकित पंक्ति पर हस्ताक्षर कर देता है।"[1] जार्ज बर्नार्ड शॉ का भी कहना है कि "हमारी राजनीतिक प्रणाली मे जो चीज बिलकुल गुडिया के समान होती ह, वह एक सार्वजनिक विभाग का प्रमुख मन्त्रिमण्डल का मन्त्री होता है।"

क्या मन्त्री लोक सेवको के हाथ की कठपुतली होते हैं ?

इस बात को तो अस्वीकार नही किया जा सकता कि लोक सेवक प्रशासन

1 Unless he (minister) is either a self important ass or a man of quite exceptional grasp power and courage (and both of thes types are uncommon among unsuccessful politicians) he will in ninetynine cases out of a hundred simply accept their officials view and sign on the dotted line

—Ramsay Muir *How Britain is Governed* p 43

मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और मन्त्रिगणो पर उनका पर्याप्त प्रभाव होता है लेकिन रैम्जे म्योर जैसे लेखको की इस बात को स्वीकार नही किया जा सकता कि मन्त्री लोक सेवको के हाथो की कठपुतली मात्र होते हैं। रैम्जे म्योर की धारणा त्रुटिपूर्ण है और उसके स्थान पर लास्की का यह विचार ही ठीक है कि 'मन्त्री लोग चाहे कितने ही अनभिज्ञ और अपने विभाग के लिए नये हो, नीति निर्धारण व निर्णय करने मे बहुत कुछ कर सकते व करते हैं।" रैम्जे म्योर की धारणा को स्वीकार नही किया जा सकता।

सर्वप्रथम, कोई भी व्यक्ति अचानक ही मन्त्री पद प्राप्त नही कर लेता है। सामान्यतया मन्त्री पद प्राप्त करने के पूर्व वह स्थायी और अस्थायी समितियो के सदस्य और ससदीय सचिव के रूप में काम कर चुका होता है। यदि पहले का विरोधी दल शासन सम्भालता है, तो अनेक मन्त्री लोग उसके 'छाया मन्त्रिमण्डल' (Shadow Cabinet) के सदस्य रह चुके होते है। इन पदो पर रहते हुए उन्हे शासन सम्बन्धी समस्याओ का पर्याप्त ज्ञान हो जाता है। इसके अतिरिक्त मन्त्री पद पर कार्य करने वाले व्यक्ति का सामान्य विवेक पर्याप्त विकसित होता है और अपने इस सामान्य विवेक के कारण वह लोक सेवको के हाथो की कठपुतली नही हो सकता। मोरिसन ने इस सम्बन्ध मे ठीक ही कहा है कि "यदि कोई मन्त्री यह जानता है कि वह क्या चाहता है तथा यदि उसमे उसे पूरा करने की बुद्धि है तो वह लोक सेवको की सदभावना उनका सहयोग तथा उनका समर्थन प्राप्त कर सकता है।"[1]

द्वितीय, प्रशासन कार्य सगीत या कला के समान ऐसी विशेष कला नही होती जिसमे दक्षता प्राप्त करने के लिए वर्षों साधना करनी पडती है। प्रशासनिक कार्य के सुचारु सचालन के लिए सामान्य बुद्धि और परिश्रम की आवश्यकता होती है और यह क्षमता मन्त्रियो मे भी लोक सेवको की ही भाति समान मात्रा मे होती है। लोक-सेवक भी साधारणतया एक विभाग से दूसरे विभाग का हस्तान्तरित होते रहते हैं। उन्हे भी एक विशेष विभाग मे आने के बाद उस विभाग की बारीकियो को परिश्रम-पूर्वक ही समझना होता है। यदि लोक सेवक किन्ही बातो के सम्बन्ध मे परिश्रम से ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं, तो मन्त्री लोग क्या नही कर सकते। वास्तव मे मन्त्री और लोक सेवक मे विशेषज्ञता और अविशेषज्ञता का जो अन्तर बतलाया जाता है वह केवल मात्रा का ही भेद होता है। ऐसा नही होता कि स्थायी पदाधिकारी पूर्ण विशेषज्ञ हो और मन्त्री नितान्त नौसिखिया। स्थायी पदाधिकारी मे यदि कुछ मात्रा मे प्रशासनिक ज्ञान अधिक होता है तो मन्त्री मे सामान्य बुद्धि, विवेक, व्यक्ति की पहचान, आदेश देने और उन्हे मनवाने की क्षमता अधिक मात्रा मे होने की आशा

[1] 'If a minister knows what he wants and is intelligent in going about it, he can command the understanding co-operation and support of his Civil Servants

—Herbert Morrison, *Government and Parliament* p 311

की जा सकती है। मन्त्री पद ब्रिटिश राजनीति का सर्वोच्च पद होता है राजनीति मे असाधारण योग्यता रखने वाले व्यक्ति ही सामान्यतया इस पद पर पहुच पाते हैं। यद्यपि कुछ अपवाद दोनो ही दिशाओ मे हो सकते है, लेकिन सामान्य नियम के रूप मे मन्त्री को लोक सेवको के हाथो की कठपुतली नही कहा जा सकता।

मन्त्री और लोक सेवक के पारस्परिक सम्बन्ध के विषय पर रम्ज म्योर की अपेक्षा लास्की का दृष्टिकोण ही ठीक है। उनके मतानुसार दोनो का सम्बन्ध वस्तुत उनके व्यक्तित्व पर निर्भर करता है। यदि मन्त्री प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला व्यक्ति है तो वह लोक सेवा के सदस्यो पर हावी रहेगा। यदि वह निर्बल व्यक्तित्व वाला है, तो उसे लोक सेवा सदस्यो के इशारो पर चलना पडेगा। मन्त्री सदैव और प्रत्येक मन्त्री लोक सेवा के हाथो की कठपुतली नही होता।

प्रो० लास्की ने इस दृष्टि से मन्त्रियों को तीन श्रेणियो मे बाँटा है। पहले प्रकार के मन्त्री वे होते है जिनका व्यक्तित्व अत्यन्त प्रभावशाली होता है। वे अपने सामान्य विवेक के आधार पर प्रशासनिक समस्याओ को समझकर और अवसर के अनुकूल निर्णय कर लोक सेवा के सदस्यो को उन्हे क्रियान्वित करने का आदेश दे देते है। लायड जार्ज, हाल्डेन और चर्चिल को इसी श्रेणी मे रखा जा सकता है। लोक सेवा पदाधिकारी ऐसे मन्त्रियो के सामने कभी भी मनमानी करने का साहस नहीं करते। उदाहरणार्थ चर्चिल के सम्बन्ध मे सर राबर्ट मोरेण्ट का कहना था कि, 'किसी विभाग में चर्चिल की उपस्थिति मात्र से विभाग के कर्मचारियो की भावनाएं बदल जाती हैं।'[1]

दूसरी श्रेणी के मन्त्री सामान्य व्यक्तित्व वाले ऐसे व्यक्ति होते हैं जिनमे लोकप्रियता की लगन होती है। यद्यपि ये लोक सेवा के सदस्यो पर हावी नही हो पाते लेकिन लोक सेवा के सदस्यो को जनता के दृष्टिकोण से सूचित करते रहते हैं। लोक सेवा के सदस्यो के प्रति उनका व्यवहार समान स्तर पर होता है और वे प्रशासन मे लोकतन्त्रीय तत्वो का समावेश करते हैं।

तीसरी श्रेणी के मन्त्री निर्बल व्यक्तित्व वाले होते हैं। उनमे न तो प्रतिभा होती है और न ही लोकप्रियता की लगन। वे तो किसी भी प्रकार मन्त्री पद पर बने रहना चाहते हैं। इन मन्त्रियो के लोक सेवको के हाथो की कठपुतली बन जाने की पूरी आशका रहती है।

इस प्रकार यदि कुछ मन्त्री लोक सेवा के सदस्यो के हाथो की कठपुतली जैसा आचरण करते है, तो दूसरी ओर कुछ मन्त्री लोक सेवा के सदस्यो पर हावी भी रहते हैं। मन्त्रियो को लोक सेवको के हाथो की कठपुतली नही कहा जा सकता। **उनके पारस्परिक सम्बन्ध व्यक्तिगत समीकरण (equation) पर ही निर्भर करते हैं।**

1 'The mere presence of Mr Churchill in a department transforms the spirit of the officials there
—*Sir Robert Morant*

क्या मन्त्री विशेषज्ञ होने चाहिए ?

सामान्य व्यक्तियो के द्वारा इस प्रकार की धारणा को अपना लिया जाता है कि मन्त्रियो के अविशेषज्ञ और लोक सेवा अधिकारियो के विशेषज्ञ होने के कारण मन्त्री लोक सेवा अधिकारियो के हाथो की कठपुतली बनकर रह जाते है। इसलिए वे ऐसा सोचते हैं कि मन्त्री विशेषज्ञ होने चाहिए। लेकिन वास्तव मे उनका इस प्रकार का विचार सही नही है।

सर्वप्रथम, सामान्य व्यक्तियो का मन्त्रिपरिषद के कार्यों के सम्बन्ध मे बहुत अधिक भ्रान्ति होती है। वे ऐसा सोचते है कि मन्त्री का काम स्वय ही प्रशासन करना है और इसके लिए प्रशासनिक विशेषज्ञता नितान्त आवश्यक है। लेकिन वस्तुत मन्त्री का काम प्रशासन करना नही होता मन्त्रिगणो का काम नीति निश्चित करना और यह देखना भर होता है कि उनका विभाग इस नीति के आधार पर ठीक प्रकार से सचालित हो। सर लिविस (Lewis) का प्रसिद्ध कथन है कि, "मन्त्री का काम विभाग का सचालन करना नहीं होता, वरन् यह देखना भर होता है कि विभाग ठीक प्रकार से सचालित हो।"[1] मन्त्रिपद के इस कार्य को सम्पादित करने के लिए प्रशासनिक विशेज्ञता की अपेक्षा सामान्य विवेक की ही आवश्यकता होती है।

द्वितीय, ससदीय लोकतन्त्र म मन्त्रिगणो का सर्वप्रमुख कार्य सार्वजनिक हित और लोकतन्त्र की साधना होता है। यदि मन्त्री प्रशासनिक विशेषज्ञ हो तो व जनता से निकट सम्पर्क स्थापित नही रख सकेंगे और शासन मे लोकतन्त्रीय तत्व समाप्त हो जायगा। अविशेषज्ञ कहे जाने वाले मन्त्री लोक सेवा के अधिकारियो को जनता के दृष्टिकोण स परिचित कराते ह और इसी आधार पर जनहित की दृष्टि से शासन व्यवस्था का सचालन सम्भव हो पाता है। शासन मे अविशेषज्ञ मन्त्रियो की उपयोगिता बतलाते हुए रम्जे मैकडानल्ड ने कहा है कि, "मन्त्रिमण्डल जनता व विशेषज्ञ तथा सिद्धान्त और व्यवहार को जोडने वाला पुल है।"[2]

तृतीय, कोई व्यक्ति मन्त्री के रूप मे सफलतापूर्वक कार्य कर सके इसके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उसका दृष्टिकोण व्यापक हो और उसमे समन्वयकारी प्रवृत्ति हो। इसी कारण प्रशासनिक विशेषज्ञ मन्त्री पद के लिए अधिक उपयुक्त नही हो सकते। ससदीय लोकतन्त्र मे कैबीनेट के एक सदस्य क दो व्यक्तित्व होते हैं—व्यक्तिगत और सामूहिक। व्यक्तिगत रूप से प्रत्येक मन्त्री अपने-अपने विभाग के प्रशासन के लिए उत्तरदायी होता है, पर मन्त्रिमण्डल का सदस्य होने के नाते सम्पूर्ण प्रशासन के सुचारु सचालन के लिए भी वह सामूहिक रूप से उत्तरदायी

1 'It is not the business of the Cabinet Minister to work the department His business is to see that it is properly worked

—*Sir Lewis*

2 ' The Cabinet is the bridge linking up the people with the expert joining principle to practice "
—*Ramsay MacDonald*

होता है । अत उसका दृष्टिकोण इतना व्यापक होना चाहिए कि वह विभागीय हितो से ऊपर उठकर समष्टि रूप से प्रशासनिक हितों का ध्यान रख सके । आग का कहना है कि "मन्त्री को इस योग्य होना चाहिए कि वह अपने विभाग को समष्टि रूप से भी देख सके और सरकार की अन्य शाखाओं व विभागा के सम्बन्धो की दृष्टि से भी देख सके। औचित्य व मा यताओं का उसे ऐसा ध्यान होना चाहिए कि वह अपने विभाग को उचित कार्यक्षेत्र तक सीमित रखने का काय भी कर सके।" विशेषज्ञा के सम्बन्ध मे इस प्रकार की बात देखी जाती है कि वे स्वय को प्राप्त ज्ञान की विशेष शाखा से सम्बद्ध होकर रह जाते हैं और सभी प्रशासनिक विषयो के सम्बन्ध म व्यापक, स तुलित तथा समन्वयकारी दृष्टिकोण नही अपना पाते । विशेषज्ञ की अपेक्षा अविशेषज्ञ मन्त्री यह काम अधिक सफलतापूवक करते हुए देखे गये हैं और ऐसा होना स्वाभाविक भी है ।

ब्रिटन म म त्री अविशेषज्ञ होते है और स्थायी पदाधिकारी विशेषज्ञ । मन्त्री निणय करते हैं कि जनहित के दृष्टिकोण से क्या किया जाना है और स्थायी पदाधिकारी विचार करते हैं कि प्रशासनिक काय कसे किया जाना है । वस्तुत य दानो एक दूसरे के पूरक हे । इस प्रकार विशेषज्ञ और अविशेषज्ञ तत्वा का यह मेल बहुत अधिक श्रेष्ठतापूवक काय कर रहा है और यह निश्चित रूप स कहा जा सकता है कि मन्त्रिया के विशेषज्ञ होने की कोई आवश्यकता नहीं है । इस सम्बन्ध म मुनरो न ठीक ही कहा है कि "प्रथम (अर्थात मन्त्रीगण) प्रशासन में लोकतन्त्रीय तत्व को, दूसरा (अर्थात् लाक सेवा) कमचारी तन्त्र के तत्व को व्यवस्था करता है। दोनो ही आवश्यक हें। एक सरकार को लोकप्रिय बनाने के लिए, दूसरा उसे काय कुशल बनाने के लिए और अच्छे प्रशासन की परख यही है कि लोकतन्त्र व कायक्षमता का सफल सम्मिश्रण हो जाय ।"[1]

क्या ब्रिटेन मे नौकरशाही शासन है ?

कुछ व्यक्तिया द्वारा वतमान समय के ब्रिटिश शासन त त्र पर यह आरोप किया गया है कि मन्त्रियो के अविशेषज्ञ और स्थायी पदाधिकारिया के विशेषज्ञ होने के कारण समस्त प्रशासनिक व्यवस्था पर स्थायी पदाधिकारियो ने एसा व्यापक प्रभाव स्थापित कर लिया है कि वे ही राष्ट्र की जीवन नौका के कर्णाधार बन गये हैं और ब्रिटन नौकरशाही शासन की ओर बढ रहा हे । प्रमुख रूप से रम्जे म्योर, सिडनी और बट्रिस वेब लाड होवट और सी के एलन ने नौकरशाही की बढती हुई प्रवत्ति के प्रति भय प्रकट किया, उसका विरोध किया और उसके विरुद्ध चेतावनी

1 The former provides the democratic element in administration the latter the bureaucratic Both are essential—one to make a government popular the other to make it efficient And the test of a good government is its successful combination of democracy with efficiency

—W B Munro *The Governments of Europe*, p 117

भी दी है । रैम्जे म्योर लिखते हैं कि अधिकाश विषयो म मन्त्री को अपने आधीन विभाग के पेचीदे तथा असीमित कार्यो को करने के लिए विशेष ज्ञात नही होता। उनका सम्बन्ध उन अधिकारियो से होता है जो उनसे अधिक योग्य होते हैं अथवा हो सकते हैं और जो अपना सम्पूण समय विभागीय समस्याओ के समाधान मे व्यतीत करते होते हैं जबकि मन्त्री ससार मे अपना स्थान बनाता होता है अथवा सभाओ मे लेक्चर झाडता होता है । वे उसके पास सकडो पचीदी समस्याओ को निणय के लिए लाते है और उनमे से अधिकाश के बारे मे मन्त्री कुछ नही जानता है । वे उसके सामने सुझाव रखते हैं और उनके समथन मे अत्यधिक निणयात्मक तक तथा तथ्य उपस्थित करते हैं । स्पष्ट है कि कोई भी मन्त्री ९९ प्रतिशत मामलो मे सहमति प्रकट करते हुए निर्दिष्ट स्थान पर हस्ताक्षर कर देता है। सौवें भाग म दलीय सिद्धात अथवा मन्त्री द्वारा दिये गये आश्वासन हो सकते हैं । इस प्रकार सदव कायालय की नीति ही विजयी होती है । रैम्जे म्योर आगे लिखते हैं कि—"हमारी शासन प्रणाली मे नौकरशाही की शक्ति बहुत अधिक है चाहे वह प्रशासन हो, विधायन हो या वित्त हो । वह मन्त्रीय उत्तरदायित्व के आवरण मे फ्रकस्टीन के दैत्य की भाँति पनपी और विकसित हुई है और अब यह अपने सृष्टा का ही भक्षण करना चाहती है।"[1] सिडनी और बैट्रिस वेब न लिखा है कि—"वास्तव मे इगलैण्ड का शासन मन्त्रिमण्डल या व्यक्तिगत रूप से मन्त्रियो द्वारा नहीं वरन लोक सेवाओ के द्वारा किया जाता है ।"

नौकरशाही प्रवृत्ति में वृद्धि के कारण—नौकरशाही की शक्ति निरन्तर बढती जा रही है और इस प्रवृत्ति मे वृद्धि के कारणो की विवेचना निम्न रूपो मे की जा सकती है

(१) मन्त्रिगण अविशेषज्ञ होते है और उनके पास विभाग के सूक्ष्म कार्यों के निरीक्षण का समय नही रहता । दूसरी ओर लोक सेवा के सदस्य अपने कार्यों के विशेषज्ञ होते हैं और उनका एकमात्र काय विभागीय कार्यो का प्रशासन और सचालन ही होता है । इस प्रकार मन्त्रियो के उत्तरदायित्व की आड मे लोक सेवा के सदस्यो द्वारा प्रशासन का सचालन किया जाता है ।

1 In our system of government, the power of bureaucracy is enormously strong, whether in administration in legislation or in finance Under the cloak of ministerial responsibility it has thriven and grown until like Frankenstein's monster it seems likely to devour its creator'

—Ramsay Muir, *How Britain is Governed* p 51

1 'The Government of Britain is in fact carried on not by the Cabinet, not even by individual minister, but by the civil service

—*Sydney and Beatrice Webb*

(२) दूसरा कारण प्रशासकीय न्याय की व्यवस्था है। वर्तमान समय में आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में मन्त्रियों तथा उनके विभागों को कतिपय न्यायिक अधिकार प्रदान कर दिये जाते हैं। इन न्यायिक अधिकारों का प्रयोग उच्च पदासीन स्थायी पदाधिकारी अपने विवेक के अनुसार करते हैं और उनके निर्णय के विरुद्ध किसी भी न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती। प्रशासनिक न्याय की इस प्रवृत्ति के कारण ही लॉर्ड होयट ने नौकरशाही की बढ़ती हुई शक्ति को 'नवीन अधिनायकवाद' की संज्ञा दी है, जिसने प्रशासनिक विभागों को संसदीय सम्प्रभुता से उच्च और न्यायालयों के क्षेत्राधिकार से परे स्थिति प्रदान कर दी है।'[1]

(३) वर्तमान समय में संसद का कानून निर्माण सम्बन्धी कार्य बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण प्रदत्त व्यवस्थापन का विकास हुआ है। प्रदत्त व्यवस्थापन की इस शक्ति का प्रयोग स्थायी पदाधिकारियों द्वारा ही किया जाता है और इसके कारण नौकरशाही कानून निर्माण के क्षेत्र में भी शक्तिशाली हो गई है।

(४) 'पुलिस राज्य' के स्थान पर 'लोक कल्याणकारी राज्य' की धारणा को अपना लिये जाने के कारण राज्य के द्वारा आर्थिक और सामाजिक जीवन के अनेक कार्य अपने हाथ में ले लिये गये हैं। ये कार्य वस्तुतः स्थायी पदाधिकारियों द्वारा ही किये जाते हैं और इससे भी नौकरशाही की शक्ति बढ़ी है।

(५) लोक सेवकों का पद स्थायी होने के कारण उन्हें व्यापक अनुभव और शक्ति प्राप्त होती है और इससे भी नौकरशाही की प्रवृत्ति का विकास हुआ है।

नौकरशाही का आक्षेप मिथ्या—वर्तमान समय में ब्रिटेन में भी लोक कल्याण की प्रवृत्ति को अपना लिये जाने के कारण ब्रिटिश लोक सेवा की शक्तियों में कुछ वृद्धि अवश्य ही हुई है किन्तु इसे नौकरशाही की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। प्रो० लास्की का कहना है कि, 'नौकरशाही शासन से अभिप्राय उस शासन व्यवस्था से होता है, जिसमें सम्पूर्ण नियन्त्रण लोक सेवा अधिकारियों के हाथों में रहता है और उनकी शक्ति इतनी अधिक होती है कि इससे नागरिक स्वतन्त्रता पर आघात पहुँचता है।'' इंगलण्ड में इस प्रकार की स्थिति नहीं है। वहाँ लोक सेवा के सदस्य स्वेच्छाचारी नहीं हो सकते, क्योंकि उनके ऊपर एक राजनीतिक अध्यक्ष होता है जो लोकसदन और जनता के प्रति उत्तरदायी होता है और इसी कारण अपने विभागीय कार्यों के लिए सदैव चौकन्ना रहता है। लोक सेवक भी इस बात से परिचित होते हैं कि यदि उनके द्वारा मनमाने तरीके से कार्य किये गये तो उनके कार्य संसदीय आलोचना के विषय बन जायेंगे और इसका स्वयं उनकी स्थिति पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। नौकरशाही की आशंका व्यक्त करने वाले रम्जे म्योर का कहना है कि,

[1] Lord Hewart *The New Despotism* p 14

"यह कहना बिलकुल गलत होगा कि हमारी व्यवस्था विशुद्ध या अनियन्त्रित नौकरशाही है।"[1]

इसके अतिरिक्त एक अन्य बात यह है कि लोक सेवाओ की शक्ति मे वृद्धि न केवल ब्रिटेन वरन् विश्व के लगभग सभी राज्यो म देखी जा सकती है। इसे न तो नौकरशाही शासन कहा जा सकता है और न ही इसमे भय करने के कोई कारण है। ब्रिटिश लोक सेवक कभी भी स्वेच्छाचारी नही हो सकते है। न्यूमन का कथन यथाथ है कि, "अधिनायकवाद या तानाशाही कहे जाने का कोई तथ्यपूण कारण नहीं है। यह स्मरण रहे कि ब्रिटिश लोक सेवा 'राज्य के अ तगत राज्य' नहीं है जैसी कि जमन लोक सेवा थी, अपितु यह एक प्रजातान्त्रिक तथा उत्तरदायी सरकार है, जिसके अन्तगत बडे पैमाने पर शक्ति के दुरुपयोग से सावजनिक प्रतिक्रिया उत्पन्न होगी और कुछ सिर लुढकते नजर आयेंगे। लोक सेवक के सिर पर उत्तरदायी मन्त्री होते हैं जिनका काम लोक सेवको को यह बताना है कि जनता क्या नहीं चाहती।"[2] हबट मारिसन[3] भी ब्रिटेन म नौकरशाही शासन की बात को अस्वीकार करते है।

प्रश्न

१ ब्रिटिश लोक सेवाओ के सगठन और कार्यों का वणन कीजिए।
(पटना, १९६१, बिहार, १९६४)

२ सिडनी लो क इस कथन की व्याख्या कीजिए कि ब्रिटिश शासन "अविशेषज्ञो का शासन है।" क्या आप इस स्थिति से सहमत है। उदाहरण सहित समझाइए।

३ "मन्त्रियो के उत्तरदायित्व के आवरण म नौकरशाही का बोलबाला है।" स्पष्ट कीजिए।

४ 'ब्रिटिश ससद मन्त्रियो के हाथो मे और मन्त्री स्थायी कमचारियो के हाथो मे कठपुतली के समान है।" इस कथन की समीक्षा कीजिए। (बिहार, १९६४)

५, ब्रिटिश सवैधानिक पद्धति मे स्थायी लोक प्रथा के कार्यों का वणन कीजिए। क्या इसे 'नौकरशाही की विजय' कहना उचित है?
(बिहार, १९६७, मगध, १९६४, ६८)

1 It would be wholly untrue to say that our system is a pure or uncontrolled bureaucracy —Ramsay Muir, *Ibid* p 44

2 'There is no factual reason as yet to speak of despotism or dictatorship It is important to remember, that the British Civil Service is not a state within the state as the German Civil Service used to be but is part of a democratic and responsible form of government in which large scale abuse of power would lead to a quick and drastic public reaction which would cause some heads to roll On top of the Civil Servant there is still the responsible minister, whose function it is to tell the Civil Service what the public won t stand ' —*R G Neumann*

3 Herbert Morrison *Parliament and Government* p 311

7
संसद
(PARLIAMENT)

"वैधानिक दृष्टि से ससद की प्रभुसत्ता हमारी राजनीतिक व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता है।"[1] —डायसी

ब्रिटिश ससद की सप्रभुता
(Sovereignty of the Parliament)

वैधानिक दृष्टि से ब्रिटिश ससद की प्रभुसत्ता ब्रिटिश सविधान की एक प्रमुख विशेषता है। ब्रिटिश ससद कानून निर्माण की सामान्य प्रक्रिया के आधार पर ही सभी विषयो के सम्बन्ध मे कानून का निर्माण कर सकती है और इसके द्वारा निर्मित कानून को किसी के भी द्वारा चुनौती नही दी जा सकती। सैद्धान्तिक दृष्टि से कानून निर्माण के क्षेत्र मे ब्रिटिश ससद को प्राप्त इस असीमित शक्ति को ही ससद की सप्रभुता कहा जाता है।

ब्रिटिश ससद की इस स्थिति के सम्बन्ध मे जे० ए० आर० मरीयट (J A R Marriot) ने कहा था कि "किसी दृष्टि से भी देखा जाय, ब्रिटिश विधानमण्डल विश्व मे सबसे अधिक मनोरजक और महत्त्वपूर्ण है। इससे प्रचीन कोई विधानमण्डल नहीं है इसका अधिकार क्षेत्र सबसे अधिक विस्तृत है और इसकी शक्ति असीमित है। यह धार्मिक तथा लौकिक सभी मामलो में कानून निर्माण की सर्वोच्च सत्ता है। इस सम्बन्ध मे सर एडवर्ड कोक ने लिखा है ससद की शक्ति तथा अधिकार क्षेत्र इतना सर्वोपरि और पूर्ण है कि इसकी कोई सीमाएँ नहीं बाधी जा सकतीं।" ब्लैकस्टोन ऑग, सर मथ्यू हेल, डी० लाम, डी० टाकविले ने भी ससद की सप्रभुता का बखान किया है।

1 Sovereignty of Parliament is from a legal point of view the dominant characteristic of our political institution —*Prof Dicey*

2 The power and jurisdiction of Parliament are so transcendent and absolute that it cannot be confined within any bounds' —*Sir Edward Coke*

डयसो न ससद की इस सप्रभुता पर विशेष बल दिया है। उनके अनुसार 'ब्रिटिश ससद वधानिक दृष्टि से इतनी शक्तिशाली है कि वह एक शिशु को प्रौढ करार दे सकती है। वह मृत्यु के बाद किसी भी व्यक्ति को राजद्रोही सिद्ध कर सकती है। वह गर-कानूनी सतान को कानून करार दे सकती है और यदि वह उचित समझे तो किसी व्यक्ति को अपने ही मामले में न्यायाधीश बना सकती है।[1]

सविधान लचीला होने के कारण ब्रिटिश ससद एक ऐसा प्रभुत्वशक्ति सम्पन्न निकाय है, जो सविधान निर्मात्री और कानून निर्मात्री दोनों ही प्रकार की शक्तियों का उपभोग करता है। ब्रिटिश ससद की इस सम्प्रभुता से अभिप्राय यह है कि

(क) ब्रिटिश ससद कोई भी कानून बना सकती है।

(ख) किसी भी कानून को भग कर सकती है।

(ग) ब्रिटिश सविधान मे कोई ऐसा सीमा चिह्न नही है, जिससे यह निणय हो सके कि कौनसा कानून मौलिक है और कौनसा अमौलिक।

(घ) किसी व्यक्ति या सस्था को यह अधिकार नही है कि वह ससद द्वारा निर्मित कानूनों को अस्वीकार कर सके।

ब्रिटिश ससद द्वारा अब तक निर्मित कानूनों के आधार पर भी ससद की सम्प्रभुता स्पष्ट हो जाती है। सन १७०१ के उत्तराधिकार सम्बन्धी अधिनियम (Act of Settlement) द्वारा सम्राट पद के उत्तराधिकार सम्बन्धी नियम निर्धारित किये गये। सन १७१७ के 'सप्तवर्षीय कानून' (Septennial Act) द्वारा लोक-सदन की अवधि ३ वर्ष से बढाकर ७ वर्ष कर दी गई और १९११ व १९४९ के ससदीय अधिनियम द्वारा ससद की शक्तियों को सीमित कर दिया गया।

ससदीय सप्रभुता पर सीमाएँ—यद्यपि वैधानिक दृष्टि से ब्रिटिश ससद पूर्ण प्रभुसत्ता सम्पन्न है और उसके द्वारा किसी प्रकार के कानून का निर्माण किया जा सकता है, किन्तु प्रत्येक वधानिक तथ्य राजनीतिक सत्य नही होता। व्यवहार मे ससद की प्रभुसत्ता पर अनेक प्रतिबन्ध है, जिनकी विवेचना निम्न रूपों मे की जा सकती है

(१) **जनमत**—जनमत ससदीय सम्प्रभुता पर एक महत्त्वपूर्ण प्रतिबन्ध है। वर्तमान समय मे १९११ और १९४९ के अधिनियम द्वारा लार्ड सभा की शक्तियाँ बहुत अधिक सीमित हो गई है और आज ससद की प्रभुसत्ता का तात्पर्य लोकसदन की प्रभुसत्ता से ही होता है। लोकसदन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होता है और इसके द्वारा जनमत के विरुद्ध किसी कानून के निर्माण का साहस नहीं किया

[1] The British Parliament is so omnipotent legally speaking that it can adjudge an infant of full age, it may attain a man of treason after death it may legitimise an illegitimate child or if it sees fit make a man a judge in his own case."
—Dicey *The Law of the Constitution*

जा सकता। ससद समाचारपत्र और जनमत निर्माण के अन्य साधनो पर पूरी पूरी दृष्टि रखती है, उसके लिए जनमत के उल्लघन का अर्थ आत्मघात ही होता है।

(२) **नैतिक बन्धन**—वैधानिक दृष्टि से ससद प्रभुसत्तावान है लेकिन व्यवहार मे ससद के द्वारा नैतिक धारणाओ के विरुद्ध किसी कानून का निर्माण नही किया जा सकता। जेनिंग्ज ने इस सम्बन्ध मे कहा है कि, **"यदि कोई विधानमण्डल यह निर्णय करे कि नीली आखो वाले बच्चो की हत्या कर दी जाय, तो ऐसे बच्चो को बचा रखना गैर-कानूनी काम होगा, परन्तु कोई पागल विधानमण्डल ही ऐसा करेगा और पागल जनता ही उसे मानेगी।"**

(३) **परम्पराएँ**—ब्रिटेन के राजनीतिक जीवन मे परम्पराओ को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। बदलती हुई परिस्थितियो के कारण यदि किसी परम्परा की उपयोगिता समाप्त हो जाती है, तो कानून के द्वारा उसमे परिवर्तन किया जा सकता है। लेकिन जब तक ऐसा न हो, ससद के द्वारा सुस्थापित परम्पराओ के विरुद्ध कानूनो का निर्माण नही किया जा सकता। यदि प्रमुख परम्पराओ का उल्लघन किया जाता है, तो ब्रिटिश शासन व्यवस्था का आधार ही नष्ट हो जायगा और इसके परिणामस्वरूप जनता भी ससद के विरुद्ध हो जायगी।

(४) **विधि का शासन**—विधि का शासन ब्रिटिश शासन और जीवन का एक मूलाधार है और इसका अर्थ है कि कानून के समक्ष सभी व्यक्ति समान हैं। विधि का शासन और ससद की सम्प्रभुता परस्पर आश्रित तथा सम्बन्धित हैं और विधि का शासन ससद की सम्प्रभुता पर एक प्रतिबन्ध भी है। यदि ब्रिटिश ससद विधि के शासन का उल्लघन करती है, तो लगभग वैसी ही गम्भीर जन प्रतिक्रिया होगी जैसी गम्भीर प्रतिक्रिया किसी देश मे शासन द्वारा मौलिक अधिकारो का उल्लघन किये जाने पर हो सकती है।

(५) **वेस्टमिनिस्टर परिनियम, १९३१ (Statute of Westminister)**—१९३१ के वेस्टमिनिस्टर परिनियम से भी ससद की प्रभुसत्ता सीमित होती है। इस परिनियम मे उल्लेख है कि १९३१ के बाद ब्रिटिश ससद अधिराज्यो के लिए कोई भी अधिनियम उस समय तक नही बनायेगी, जब तक कि किसी अधिराज्य (Dominion) की ससद द्वारा ब्रिटिश ससद से इस हेतु प्रार्थना न की जाय। इसी परिनियम के आधार पर यह भी अनिवार्य हो गया है कि राजा के उत्तराधिकार नियमो मे परिवर्तन करते समय या राजा के पद और उपाधि आदि मे कोई परिवर्तन करते समय ब्रिटिश ससद अधिराज्यो के विधानमण्डलो की भी स्वीकृति प्राप्त करे।

(६) **प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated legislation)**—ब्रिटेन मे ससद का कानून निर्माण सम्बन्धी कार्य बहुत अधिक बढ जाने के कारण इस प्रकार के व्यवहार का अपनाया जाना गया है कि ससद कानूनो की केवल मोटी रूपरेखा निर्धारित करती है और विस्तृत नियम तथा उपनियम बनाने का कार्य प्रशासकीय विभागो को।

दिया जाता है, यही प्रदत्त व्यवस्थापन है। यद्यपि यह सब ससद के अधिनियम के अनुसार होता है, परन्तु ब्रिटेन मे कई हजार नियम तथा उपनियम प्रदत्त व्यवस्थापन के आधीन बनाये जाते हैं। व्यवहार मे इतनी अधिक सख्या मे बनने वाले नियमो तथा उपनियमो पर ससद का कोई नियन्त्रण नही रहता और इसी कारण प्रदत्त व्यवस्थापन मे भी ससद की प्रभुसत्ता सीमित हो जाती है।

(७) **अन्तरराष्ट्रीय कानून और सगठन**—अन्तरराष्ट्रीय कानून के द्वारा भी ब्रिटिश ससद की सम्प्रभुता सीमित हो जाती है। ब्रिटेन मे **'वेस्ट रैण्ड गोल्ड माईनिंग कम्पनी बनाम सम्राट** (West Rand Gold Mining Co v the King) नामक विवाद मे यह निर्णय हो चुका है कि अन्तरराष्ट्रीय कानून राष्ट्रीय कानून का ही एक भाग है और जिस कानून ने सभ्य राष्ट्रो की सहमति प्राप्त कर ली है उसने हमारे देश की भी सहमति प्राप्त कर ली है। अत ब्रिटिश ससद अन्तरराष्ट्रीय कानून के विरुद्ध भी किन्ही नियमो का निर्माण नही कर सकती। ब्रिटेन सयुक्तराष्ट्र सघ, उससे सम्बद्ध अन्तरराष्ट्रीय श्रम सगठन आदि विविध एजेन्सियो और अन्य अन्तरराष्ट्रीय सगठनो का भी सदस्य है और इस बात की आशा की जा सकती है कि इन अन्तरराष्ट्रीय सगठनो के नियमो का सम्मान करते हुए ब्रिटिश ससद उनके विरुद्ध किन्ही कानूनो का निर्माण नही करेगी।

ब्रिटिश ससद

ब्रिटेन को द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका का जन्मस्थान कहा जा सकता है क्योकि द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका सर्वप्रथम ब्रिटेन मे ही अपनायी गयी। वर्तमान समय मे नार्वे के अतिरिक्त विश्व के अन्य सभी राज्यो द्वारा द्विसदनीय व्यवस्थापिका को अपना लिया गया है। ब्रिटिश ससद का अर्थ सम्राट सहित लोकसदन (House of Commons) और लॉर्ड सभा (House of Lords) है। लोकसदन ब्रिटिश ससद का प्रथम और लॉर्ड सभा द्वितीय सदन है। ऐतिहासिक दृष्टि से लॉर्ड सभा इन दोनो सदनो मे पुरानी है। उसे नामन ऐंजिवन काल की 'महान परिषद' (Magnum Concilium) की उत्तराधिकारिणी कहा जा सकता है।

लार्ड सभा—लॉर्ड सभा को इगलण्ड की लोकतन्त्रात्मक प्रणाली मे एक कुलीनतन्त्रीय सस्था कहा जा सकता है, क्योकि इसकी सदस्यता का प्रमुख आधार वशगत है। ब्रिटेन के रूढिवादी लोग लार्ड सभा को राष्ट्रीय परम्परा का प्रतीक मान कर उस पर गर्व करते हैं, लेकिन प्रगतिशील विचारधारा के लोगो द्वारा इसका विरोध किया जाता है। उन्नीसवी सदी के अन्त तक ब्रिटिश राजनीति मे लॉर्ड सभा को लोकसदन से अधिक महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त था, किन्तु अब स्थिति परिवर्तित हो गयी है और अब लार्ड सभा न केवल द्वितीय, वरन द्वितीय महत्त्व का सदन हो गया है।

लॉर्ड सभा की रचना

लार्ड सभा की सदस्य सख्या निश्चित नही है और यह उत्तरोत्तर बढती

रही है क्योकि इसमे सम्राट प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर जितने नवीन सदस्य आवश्यक समझे, नियुक्त कर सकता है। अवकाशप्राप्त प्रधानमन्त्रियो, लोकसदन के अवकाशप्राप्त अध्यक्ष, अवकाशप्राप्त सेनापति और वायसराय, उच्चकोटि के न्यायवेत्ताओ और साहित्य, विज्ञान तथा कला मे प्रसिद्धि प्राप्त व्यक्तियो को ही सामान्यतया प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर सम्राट द्वारा सदस्यता प्रदान की जाती है। वर्तमान समय मे इसकी सदस्य सख्या १,०६१ है, जिनमे १,०३५ लौकिक और २६ आध्यात्मिक लॉर्ड हैं। लॉर्ड सभा के ये सदस्य निम्न ६ प्रकार के हैं

(१) **राजवश के राजकुमार**—राजवश के होने के नाते इन्हे लार्ड सभा की सदस्यता प्राप्त होती है और इनकी सख्या सदव ही बहुत थोडी होती है। वर्तमान समय मे राजवश से सम्बन्धित राजकुमार ४ हैं। ये सदस्य लार्ड सभा की बैठको मे प्राय भाग नही लेते है।

(२) **वश परम्परागत पियर**—लार्ड सभा के सदस्यो मे सबसे अधिक सख्या इस श्रेणी के सदस्यो की ही है। इनकी सख्या समस्त सदस्य सख्या की ६० प्रतिशत के लगभग है। इनकी सख्या निश्चित नहीं है क्योकि समय समय पर नये पियर (Peer) बनते रहते हैं। यह पियर पद वश परम्परा के आधार पर चलता रहता है और एक पियर की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारी को यह पद प्राप्त हो जाता है। परन्तु उसकी आयु कम से कम २१ वर्ष अवश्य ही होनी चाहिए। पियर शब्द का अर्थ समान होता है, किन्तु पियर लोग ५ स्तर के होते हैं, जो इस प्रकार हैं—ड्यूक्स (Dukes), मारक्यूइस (Marquis), अर्ल्स (Earls), विस्काउण्टस (Viscounts) और बरन्स (Barans)।

(३) **स्कॉटलैण्ड के प्रतिनिधि पियर**—१७०७ के 'यूनियन ऐक्ट' द्वारा इगलैण्ड तथा स्कॉटलैण्ड को एक कर दिया गया और यह व्यवस्था की गयी थी कि स्काटलैण्ड के सब पियर लोग अपने मे से १६ पियर प्रत्येक ससद के लिए चुना करेंगे। किन्तु १९६३ से अब ऐसी व्यवस्था कर दी गयी है कि स्काटलैण्ड के सभी पियर लार्ड सभा मे बैठ सकते है। इसके साथ ही अधिनियम मे इस श्रेणी के नवीन पियरो की व्यवस्था नही की गयी है। परिणामस्वरूप पुराने पियर धीरे धीरे समाप्त होते जा रहे है और एक ऐसा समय आयेगा जब वे बिलकुल समाप्त हो जायेंगे।

(४) **आजीवन पियर (Life Peers)**—१९५८ के 'आजीवन पियरेज अधिनियम' (Life Peerage Act, 1958) के अन्तर्गत सार्वजनिक जीवन मे अत्यन्त प्रसिद्ध और अनुभवी व्यक्तियो को लॉर्ड सभा की सदस्यता प्रदान की जाती है।

(५) **कानून के लॉर्ड (Law Lords)**—इन्हे सम्राट के द्वारा जीवनपर्यन्त के लिए नियुक्त किया जाता है। इनकी सख्या ९ है। इन्हे १८७६ के अपीलीय क्षेत्राधिकार अधिनियम (Appellate Jurisdiction Act) के द्वारा सदन के न्याय कार्यों मे सहायता देने के लिए नामजद किया जाता है। ये कानून लार्ड उच्चकोटि के न्यायवेत्ताओ मे से लिये जाते हैं। लॉर्ड सभा अपील का अन्तिम न्यायालय भी है

और लार्ड सभा का यह न्याय सम्ब धी काय कानून के इन लार्डों द्वारा ही अन्य न्याय वेत्ताओ के साथ मिलकर किया जाता है।

कानून के लार्डों म से प्रत्येक को वेतन दिया जाता है जिसकी राशि १९५४ में ९ हजार पौण्ड प्रति वप निश्चित की गयी थी। ब्रूमहैड के अनुसार कानून के लॉर्डों द्वारा भी सदन के सामान्य वाद विवाद मे भाग लेना घटता जा रहा है।

(६) आध्यात्मिक लाड (Spiritual Lords)—आध्यात्मिक लार्डों की सख्या २६ है। इनमे एक केन्टरबरी का आर्कबिशप एव यार्क का आर्कबिशप एव लन्दन का आर्कबिशप एक डरहम का बिशप और विन्चेस्टर का बिशप अवश्य सम्मिलित किये जाते है। शेष २१ इगलैण्ड की विभिन्न चर्चों के वरिष्ठ बिशप होते है। ये आध्यात्मिक लाड भी लाड सभा की कायवाही म सामान्यतया कम ही भाग लेते है।

उपरोक्त ६ श्रेणियो के अतिरिक्त १९६० तक लॉड सभा के सदस्यो की एक अन्य श्रेणी भी होती थी और वे थे आयरलण्ड के प्रतिनिधि पियर। १८०१ के यूनियन एक्ट' द्वारा आयरलैंण्ड व इगलण्ड को एक कर दिया गया था और यह व्यवस्था की गयी थी आयरलण्ड के पियर लोग अपने म म २८ पियरो का लाड सभा के लिए निर्वाचन करेंगे, जो जीवनपयन्त इसके सदस्य रहेंगे। १९२२ मे स्वतन्त्र आयरिश राज्य स्थापित होने के बाद से आयरलण्ड के नवीन पियरो का मनोनयन बन्द हो गया। अत लाड सभा म आयरलण्ड क प्रतिनिधि पियरो की सख्या कम होती गयी और जनवरी १९६१ म अर्ल किल्मोरे का देहान्त हो जाने पर उनका अन्तिम प्रतिनिधि भी लाड सभा से चल बसा।

१९५८ के पूव लॉड सभा एक पूर्णतया पुरुष सदन था और कोई भी महिला लाड सभा की सदस्य नही हो सकती थी, लेकिन १९५८ के लाइफ पीयरेज अधिनियम' के अनुसार सम्राट महिलाओ को जीवनकालीन पियर बनाकर लाड सभा की सदस्यता प्रदान कर सकता है। अब तक ७ महिलाओ को लाड सभा की सदस्यता प्राप्त हो चुकी है। लेकिन वे महिलाएँ जिन्हे उत्तराधिकार म पियर पद प्राप्त होता है लाड सभा की सदस्य नही हो सकती।

१९६२ के पूव तक लाड सभा की सदस्यता के सम्बन्ध म एक विचित्र बात यह थी कि यदि कोई वशागत आधार पर पियर बन जाय, तो वह सदस्य बनने से इन्कार नही कर सकता था। अत सदस्यता सम्बन्धी नियमो म सुधार की आवश्यकता थी। सन १९६२ म ससदीय समिति की सिफारिश के आधार पर यह निणय किया गया कि पियर की उपाधि वकल्पिक होगी और जो व्यक्ति इस उपाधि का त्याग करना चाहे, उन्हे इसे ग्रहण करने के लिए विवश नही किया जा सकता। इस व्यवस्था के अनुसार ही एन्थनी वेजवुड बेन, लॉड हैलशम और लॉड होम के द्वारा सदन की सदस्यता का त्याग किया गया।

सदस्यो के विशेषाधिकार—लॉड सभा के सदस्यो के अनेक परम्परागत विशेषाधिकार यद्यपि समाप्त कर दिये गये हैं, लेकिन अब भी उन्हे कुछ विशेषाधिकार

प्राप्त हैं। लार्ड सभा के सभी सदस्यों को भाषण की स्वतन्त्रता प्राप्त है और उनके द्वारा सदन में कही गई किसी भी बात के आधार पर उन पर मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। संसद के सत्र के समय उन्हें गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। लोकसदन के सदस्य केवल स्पीकर के माध्यम से सम्राट तक सामूहिक रूप में पहुंच सकते हैं लेकिन लार्ड सभा के सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से सम्राट से सार्वजनिक विषयों पर वार्ता करने का अधिकार प्राप्त है। उन्हें यह भी अधिकार है कि लॉर्ड सभा के बहुमत के निर्णय के विरुद्ध अपना विरोध 'जर्नल्स' में लिखवा सकें और अपने विशेषाधिकारों के उल्लंघन पर अभियोग चला सकें। पियर पद की प्राप्ति से एक ओर यदि कुछ विशेषाधिकार प्राप्त होते हैं तो दूसरी ओर कुछ अयोग्यताएं (disqualifications) भी जुड़ जाती हैं। उदाहरणार्थ, किसी भी पियर को लोक सदन के चुनाव में मताधिकार और लोकसदन के चुनाव में उम्मीदवार होने का अधिकार प्राप्त नहीं है। यदि कोई पियर लाभ सदा अधिकारी है, तो उसे लार्ड सभा में बैठने का तो अधिकार है, किन्तु वह न तो भाषण दे सकता है और न ही मतदान में भाग ले सकता है।

लॉर्ड सभा के अधिकारी और इसकी कार्यप्रणाली

लार्ड सभा के प्राय सभी अधिकारी नियुक्त किये जाते हैं उनका निर्वाचन नहीं होता। सभा का अध्यक्ष लार्ड चान्सलर होता है जिसे प्रधानमन्त्री द्वारा नियुक्त किया जाता है और जो मन्त्रिमण्डल का भी सदस्य होता है। लार्ड चान्सलर सदन की कार्यवाही का संचालन करता है लेकिन उसे लोकसदन के अध्यक्ष के समान सदन के सदस्यों को अनुशासित और नियन्त्रित रखने का अधिकार प्राप्त नहीं है। वास्तव में सदन में कभी अव्यवस्था होती ही नहीं है लेकिन यदि कभी ऐसी स्थिति उत्पन्न हो, तो सदन में व्यवस्था स्थापित करने का कार्य सदन ही करता है। लार्ड सभा के सदस्य अपने भाषणों में अध्यक्ष को सम्बोधित नहीं करते, वरन 'My Lords' कहकर सदस्यों को ही सम्बोधित करते हैं। उसे एक ही मत देने का अधिकार होता है, निर्णायक मत देने का अधिकार नहीं होता। वह सदन के वाद-विवाद में भाग ले सकता है, परन्तु उस समय उसे अपनी गद्दी का परित्याग करना होता है। लार्ड चान्सलर ब्रिटिश न्यायपालिका का भी अध्यक्ष होता है और न्यायिक कार्य करता है। वह काउण्टी कोर्ट के न्यायाधीश तथा जस्टिस ऑफ पीस को नियुक्त करता और हटा सकता है। लॉर्ड चान्सलर के अतिरिक्त सभा के ... अधिकारी भी होते हैं, यथा समितियों का लॉर्ड सभापति, रिकार्ड रखने ... , जैण्टलमन अशर ऑफ दि ब्लैक राड (C... ...sher of th...) और सारजण्ट एट आर्म्स आदि।

लॉर्ड सभा वस्टमि... ... बभवशाि ... होती और इसका अधिवेशन लोकस... ... इस ... बैठकें मंगल, बुध और ...

जाती हैं। बैठकें साधारणतया १-२ घण्टे चलती हैं और इनमे भी उपस्थिति कम ही रहती है। बैठक के लिए गणपूर्ति (Quorum) ३ सदस्यो की उपस्थिति है, परन्तु किसी विधेयक पारित करने के लिए कम से कम ३० सदस्य अवश्य ही होने चाहिए।

लॉर्ड सभा में सम्पूर्ण सदन की समिति के अतिरिक्त प्रवर तथा सत्रीय समितियो का प्रयोग किया जाता है। प्रत्येक सत्र के आरम्भ मे, लोकसदन से आये विधेयको पर पुनर्विचार के लिए एक स्थायी समिति का भी निर्माण किया जाता है। सत्र समितियो मे मुख्य ये हैं—विशेषाधिकार समिति, अपील समिति, स्थायी आदेश समिति, चयन समिति, लार्ड सभा द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओ की समिति आदि। प्रवर समितियो के सदस्यो के नाम सदन तय करता है किन्तु ये समितिया अपने अध्यक्ष स्वय नियुक्त करती हैं।

लॉर्ड सभा मे वाद विवाद को सीमित करने के 'समापन प्रस्ताव' (Closure motion) का प्रयोग नही किया जाता है। इस सम्बन्ध मे केवल दो स्थायी आदेश हैं। प्रथम के अनुसार कोई सदस्य एक ही विषय पर दो बार नही बोल सकता और द्वितीय के अनुसार वाद विवाद विषय से असम्बद्ध नही हो सकता। कभी कभी लार्ड सभा के वाद-विवाद बहुत उच्च स्तरीय होते हैं।

१९११ के ससदीय अधिनियम के पूर्व ब्रिटिश राजनीति मे लॉर्ड सभा की स्थिति

१८वी सदी तक लार्ड सभा की शक्तिया लोकसदन के ही समान थी। इसके अतिरिक्त १८३२ के सुधार अधिनियम के पारित होने के पूर्व तक दोनो सदनो के पारस्परिक सम्बन्ध मनोपूर्ण थे। इस प्रकार के मनोपूर्ण सम्बन्धो का एक प्रमुख कारण यह था कि दोनो ही सदनो के सदस्य समाज के उच्च वर्ग से सम्बन्धित थे और उनमे कोई वर्ग विभेद नही था। जैसा कि मरियट ने लिखा है, 'सामाजिक दृष्टिकोण से अधिकाश नाइटस (लोकसदन के सदस्य) उसी वर्ग के थे जिस वर्ग के लॉर्डस थे। वे बहुधा लॉर्ड सभा के सदस्यो के पुत्र अथवा भ्राता होते थे।'

सन १८३२ के प्रथम सुधार अधिनियम द्वारा लोकसदन के लिए कुछ व्यापक मताधिकार की व्यवस्था की गई और इसके साथ ही लोकसदन के सदस्यो तथा लार्डस मे जो वर्ग समानता थी, वह समाप्त हो गई। लोकसदन अब उत्तरोत्तर पूजीपति तथा व्यापारी वर्ग का प्रतिनिधि हो गया, लेकिन लार्ड सभा मूल रूप से भूमिपतियो की सभा बनी रही। इस वर्ग विभेद के कारण दोनो सदनो के बीच की मैत्री तथा सहृदयता समाप्त हो गई। वर्ग विभेद ने मौलिक मतभेद उत्पन्न किए जो लोकसदन मे उदारवादी बहुमत होने की स्थिति मे और भी अधिक स्पष्ट तथा उग्र हो गये। १८६० मे लॉर्ड सभा ने ग्लैडस्टन का वह विधेयक अस्वीकार कर दिया, जिसका उद्देश्य कागज पर लगाई गई चुंगी को रद्द करना था। १८६७ और १८८४ के सुधार अधिनियमो ने इस वर्ग विभेद को और भी अधिक तीव्र कर दिया।

१८६० मे लाडस द्वारा किये गये काय की घोर निन्दा हुई, क्योकि यह लगभग दो सदी से स्थापित इस परम्परा के विरुद्ध था कि वित्तीय मामलो म लोकसदन की स्थिति सर्वोपरि है। इस घटना से उत्तेजित होकर ही ग्लैडस्टन ने आगामी अधिवेशन मे सब कर प्रस्तावो को एक ही विधेयक म सम्मिलित करने की युक्ति अपनाई, क्योकि सभी का निषेध करना लॉडस के लिए असम्भव होता। इस प्रकार १८६० के बजट, १८६७ के सुधार अधिनियम, १८६९ के आयरलण्ड के चच क उच्छेदन विधेयक तथा १८८४ के सुधार अधिनियम आदि पर लाड सभा का लोकसदन म सघष हुआ और प्रत्येक बार उसे पराजय ही मिली। किन्तु १८९५ १९०५ क काल मे लाड सभा के विरोध के कारण कई विधेयक असफल हो गये। इस प्रकार लाड सभा की शक्ति का पुनरोदय हुआ और इससे लॉड सभा को कुछ दम्भ भी हो गया।

१९०५ मे जब उदार दल सत्तारूढ हुआ तो दोनो सदनो म निरतर तनातनी चल रही थी। अत लॉडस ने सरकार के अनेक महत्त्वपूण विधेयकों पर कुठाराघात कर दिया। सरकार बहुल मताधिकार का अन्त करना चाहती थी, करा के हेतु भूमि के मूल्याकन के लिए एक नवीन योजना शुरू करना चाहती थी, सावजनिक शिक्षा के प्रशासन की पुन व्यवस्था करना चाहती थी और मद्य व्यापार पर अधिक फीस लगाना चाहती थी, लेकिन लाड सभा के विरोध ने इन सब योजनाओं का असफल बना दिया। इस क्रम म १९०९ म लाडस ने सम्पूण वित्त विधेयक अस्वीकृत करने का दुस्साहस किया जिससे एक गम्भीर सवधानिक सकट उठ खडा हुआ। अब सत्तारूढ उदारवादी दल इस निश्चय पर अटल हो गया कि लाड सभा के अधिकार सदव के लिए मर्यादित कर दिये जायें। १९११ का ससदीय कानून इस निश्चय का ही परिणाम था, जो एक लम्बे सघष के उपरान्त १८ अगस्त, १९११ को सम्राट के हस्ताक्षर प्राप्त कर सका।

१९११ के ससदीय अधिनियम की मुख्य धाराएँ

(१) यदि कोई वित्तीय विधेयक लोकसदन से पारित होकर लॉड सभा मे भेजा जाता है और वहाँ एक मास के अन्दर बिना किसी सशोधन के पास नहा कर दिया जाता, तो वह बिना लाडस की सहमति के ही सम्राट् के पास हस्ताक्षर हेतु भेज दिया जायगा और सम्राट के हस्ताक्षर से कानून बन जायगा।

(२) अधिनियम मे वित्तीय विधेयक की परिभाषा दी गई थी और साथ ही यह व्यवस्था की गयी थी कि यदि किसी विधेयक के सम्बन्ध मे सन्देह हो कि वह वित्त विधेयक है अथवा नही तो इसका निणय लोकसदन का स्पीकर करेगा, जो कि सवमान्य होगा।

(३) वित्तीय विधेयक अथवा ऐसे विधेयको को छोडकर, जिनका उद्देश्य लोकसदन के कायकाल म वद्धि करना है अन्य सभी सावजनिक विधेयक लोकसदन ... निरन्तर तीन अधिवेशनो मे पारित होने पर बिना लॉड सभा की सहमति के भी

सम्राट के पास भेजा जा सकेगा और कानून बन सकेगा, यदि पहले अधिवेशन मे दूसरे वाचन और तीसरे अधिवेशन मे पारित होने के बीच दो वर्ष का समय व्यतीत हो चुका हो।

(४) ससद की अवधि ७ वर्ष मे घटाकर ५ वर्ष कर दी गई।

१९४९ का ससदीय अधिवेशन—सन् १९११ के ससदीय अधिनियम के पारित हो जाने के बाद लार्ड सभा की शक्तिया बहुत कम हो गई थी। किन्तु अब भी वह पूर्णतया शक्तिहीन नही थी और उसके द्वारा एक साधारण विधेयक को दो वर्ष के लिए विलम्बित किया जा सकता था। इस बात का पूरा भय था कि लार्ड सभा अपनी इस शक्ति का प्रयोग प्रगतिशील कानूनो का विरोध करने के लिए करेगी। अत १९४५ के आम चुनाव म मजदूर दल ने यह स्पष्ट घोषित किया कि वह लॉर्ड सभा द्वारा जनता की इच्छाओ का विरोध सहन नहीं करेगी। १९४५ मे मजदूर दल सत्तारूढ हुआ और जब इस बात की शका हुई कि लार्ड सभा लोहे और इस्पात उद्योग के राष्ट्रीयकरण मे बाधक होगी तो लार्ड सभा की शक्ति को और भी कम करने का निश्चय किया गया। लोकसदन द्वारा १० दिसम्बर, १९४७ को एक विधेयक पारित किया गया और लार्ड सभा द्वारा लगातार तीन अधिवेशनो म अस्वीकार किये जाने के बावजूद यह १९४९ म कानून बन गया। इस अधिनियम को ही '१९४९ के ससदीय अधिनियम' के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम द्वारा यह उपबन्धित किया गया कि यदि कोई अवित्तीय विधेयक लोकसदन द्वारा १ वर्ष की अवधि म दो बार पारित कर दिया जाय, तो वह लार्ड सभा के विरोध करने पर भी पारित समझा जायगा और सम्राट के हस्ताक्षर से कानून का रूप प्राप्त कर लेगा। इस प्रकार लार्ड सभा को अवित्तीय विधेयको के सम्बन्ध म पहले जो दो वर्ष की विलम्बकारी शक्ति प्राप्त थी, उसे घटाकर अब एक वर्ष कर दिया गया है।

वर्तमान समय मे लॉर्ड सभा के कार्य तथा शक्तियाँ

लार्ड सभा की शक्तिया सदव ही परिवर्तित होती रही हैं। १७वी सदी के अन्त तक लार्ड सभा को लोकसदन की अपेक्षा अधिक शक्तिया प्राप्त थी, फिर उसकी शक्तिया लोकसदन के बराबर हुइ और १९११ तथा १९४९ के ससदीय अधिनियम पारित होने के बाद लार्ड सभा लोकसदन की तुलना मे बहुत अधिक शक्तिहीन हो गई है। शक्ति की दृष्टि से वर्तमान लार्ड सभा को १९११ के पूर्व की लार्ड सभा की छायामात्र ही कहा जा सकता है। ऑग तथा जिंक के शब्दो म, 'आज लॉर्ड सभा दूसरा सदन ही नहीं, वरन दूसरे दर्जे का सदन हो गया है। लेकिन फिर भी लार्ड सभा को कुछ कार्य तथा शक्तियाँ अवश्य ही प्राप्त हैं, जिनका उल्लेख निम्न रूपो म किया जा सकता है

विधायी शक्तिया—वित्त विधेयक के अतिरिक्त अन्य सभी विधेयक ब्रिटिश ससद के किसी भी सदन म प्रस्तावित किय जा सकते हैं। अनेक अवसरों

अवित्तीय विधेयक लॉड सभा म पहले प्रस्तावित भी किय गये और इस सभा न उन पर बडा उपयोगी काय किया है । उदाहरणाय, मन् १९४७ का कम्पनी विधयक सवप्रथम लॉड सभा मे प्रस्तुत किया गया था और लॉड सभा ने ३४७ सशोधनों के साथ उसे लोकसदन को भेजा। लोकसदन मे पारित होने के बाद भेज गय विधेयकों पर भी लॉड सभा पूणरूपेण विचार करती है और इनमे वह अनेक बार ऐसे सशोधन करती है, जिन्ह लोकसदन औचित्य के कारण स्वीकार कर लेता है ।

किन्तु विधेयकों के सम्बन्ध म अन्तिम निणय की शक्ति लोकसदन को ही प्राप्त है । १९११ और १९४९ के ससदीय अधिनियम पारित होने के बाद अब स्थिति यह है कि लॉड सभा अवित्तीय विधेयक को एक बार अस्वीकार कर उसे एक वप क लिए कानून बनने से रोक सकती है । यदि लॉड सभा द्वारा अस्वीकृत विधेयक को लोकसदन दुबारा पारित कर दे और इस बीच एक वप का समय व्यतीत हो गया हो, तो यह विधेयक राजा की स्वीकृति के पश्चात् कानून बन जाता है, चाह लार्ड सभा ने उस स्वीकार किया हो या न किया हो । एक वप का यह समय विधेयक को लोकसदन म पहले पारायण के दूसरे वाचन की तिथि से लेकर उसके पारायण के तीसरे वाचन की तिथि तक नगाया जाता है ।

इस प्रकार लॉड सभा विधेयकों को प्रस्तावित करने, एक वप की अवधि के लिए उन्हे रोके रखने और अपने विचारो के आधार पर सरकार तथा जनता को प्रभावित करने का काय करती है ।

वित्तीय शक्तिया—वित्तीय क्षेत्र म लॉड सभा की स्थिति लोक सदन की तुलना मे बहुत निबल हैं। वित्तीय विधेयक न तो पहले लाड सभा म प्रस्तावित किय जा सकते हैं और न ही लाड सभा विचार करने की प्रक्रिया मे उन्हे अनिश्चित काल तक रोके रख सकती है । वह वित्त विधेयक को केवल एक माह तक रोके रखने का ही काय कर सकती है । वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध म लाड सभा सुझाव दे सकती है लेकिन इन सुझावो को स्वीकार या अस्वीकार करना लोकसदन के विवेक पर ही निभर करता है ।

कायपालिका से सम्बन्धित शक्तिया—ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के लगभग ४ सदस्य लॉड सभा मे से लिये जाते हैं और लाड सभा का अध्यक्ष, जिसे लॉड चासलर कहते हैं, आवश्यक रूप से ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल का सदस्य होता है । लोकसदन की भाँति ही लॉड सभा को भी अधिकार प्राप्त है कि मन्त्रिमण्डल के सदस्यो से प्रश्न पूछकर प्रशासनिक विषयो के सम्बन्ध म सूचनाएँ प्राप्त कर सके । वह शासन की नीतियो तथा कार्यों पर खुला वाद विवाद तथा आलोचना भी कर सकती है । इसके अतिरिक्त लॉड सभा विभिन्न प्रशासनिक विभागो द्वारा किये गये 'प्रदत्त व्यवस्थापन' की जाँच कर सकती है । लाड सभा के अनेक सदस्य विभिन्न व्यवसायो मे दक्ष और विधि ... होते हैं तथा इस सभा के पास समयाभाव भी नही होता इसलिए लाड सभा

लोकसदन की तुलना मे भी यह काय अधिक अच्छे प्रकार से कर सकती है । इस प्रकार लॉड सभा को कायपालिका पर नियन्त्रण की कुछ शक्तिया प्राप्त हैं, लेकिन अविश्वास का प्रस्ताव पास कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत करने का काय लोकसदन के द्वारा ही किया जा सकता है, लाड सभा के द्वारा नही ।

न्यायिक शक्तिया—लॉड सभा को न केवल व्यवस्थापन वरन न्याय के क्षेत्र मे भी कुछ शक्तिया प्राप्त है । न्याय के क्षेत्र मे उसकी शक्तिया निश्चित रूप से महत्त्वपूण हैं । इसके द्वारा ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैण्ड के लिए अपील के उच्चतम न्यायालय के रूप म काय किया जाता है । लाड सभा जब अपील न्यायालय के रूप मे काय करती है, तब उसके सब सदस्य कायवाही मे भाग नही लेते, वरन उस समय ६ कानूनी लाड तथा अन्य न्यायिक विशेषज्ञ लॉड चासलर की अध्यक्षता म न्याय समिति के रूप मे काय करते हैं । लॉड सभा का निणय अन्तिम होता है जिसे ससद कानून के द्वारा ही बदल सकती है, इसमे कोई न्यायालय परिवतन नही कर सकता ।

लॉड सभा को उच्च सरकारी पदाधिकारियो पर लोकसदन द्वारा लगाये गये महाभियोगो की सुनवाई का भी अधिकार था । अपने इस अधिकार के अन्तगत सभा न १७८७ मे वारेन हेस्टिग्ज तथा १८०५ मे लाड मेलवाइल जस प्रसिद्ध व्यक्तियो पर लगाये गय महाभियोग का निणय किया था । किन्तु अब यह प्रथा प्राय्य लुप्त हो गई है और १८०५ के बाद लाड सभा के पास महाभियोग का कोई विवाद नही आया है ।

उपर्युक्त विवेचन से यह नितान्त स्पष्ट है कि १६११ और १६४६ के ससदीय अधिनियम के पारित होने के बाद लॉड सभा ने विधायी और वित्तीय क्षेत्र म अपने सभी महत्त्वपूण अधिकार खो दिय हैं । लाड सभा का उपयोग अब एक विचारात्मक निकाय के रूप मे ही शेष रह गया है । रम्जे म्योर के अनुसार, 'अब तो लाड सभा केवल एक पुनर्विचारक और पुनरीक्षण सदन मात्र रह गया है और इस कार्य के लिए भी वह सम्भवत अधिक सक्षम नहीं है ।'

ब्रिटिश लॉर्ड सभा की अमरीकी सीनेट से तुलना

यदि ब्रिटिश लॉर्ड सभा के कार्यों और शक्तियो की अमरीकी व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन (सीनेट) से तुलना की जाय, तो यह नितान्त स्पष्ट हो जाता है कि लाड-सभा जितनी निबल है, सीनट उतनी ही अधिक शक्तिशाली है । रचना की दृष्टि से लॉड सभा प्रमुखतया उत्तराधिकार व्यवस्था पर आधारित एक कुलीनतन्त्रीय सदन है लेकिन इसके नितान्त विपरीत सीनट जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित सदन है । ब्रिटेन और अमरीका दानो ही देशो मे प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था है और प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था के अन्तगत यह नितान्त स्वाभाविक है कि जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित सदन उत्तराधिकार व्यवस्था पर आधारित सदन से अधिक शक्तिशाली व्यवहार मे वस्तुत ऐसा ही है । इसके अतिरिक्त सीनेट और लॉड सभा की

सख्या म बहुत ही अधिक (लगभग १ और १० का) अनुपात है। सीनट की सदस्य सख्या १०० है लेकिन लाड सभा की १,००० से भी अधिक है। सीनेट की इस कम सदस्य सख्या न भी सीनट को एक सुसगठित इकाई का रूप प्रदान कर उस शक्ति शाली बनान का ही काय किया है। लॉड सभा और सीनट की शक्तियो की तुलना प्रमुखतया निम्नलिखित रूपो मे की जा सकती है

विधायी क्षेत्र में—अवित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे अमरीकी सीनट की शक्तिया प्रतिनिधि सभा के समान हैं। अवित्तीय विधेयक प्रतिनिधि सभा या सीनेट दोनों म से किसी मे भी प्रस्तावित किय जा सकते हैं और जब तक दोना सदनो द्वारा इन्हे पारित न कर दिया जाय, य कानून का रूप ग्रहण नही कर सकते। दोना सदना के परस्पर असहमत होन की स्थिति मे, दोना सदनों के समान सख्या म सदस्यो की 'सम्मेलन समिति' की व्यवस्था की गई है। इस प्रकार वैधानिक दृष्टि से दोना सदना की शक्ति समान है, लेकिन व्यवहार मे अमरीकी राजनीति के अन्तगत प्रति निधि सभा के सदस्यो की अपेक्षा सीनट के सदस्यो को अधिक प्रभाव प्राप्त होने क कारण सम्मेलन समिति मे सीनेट की ही बात अधिकाशतया मान्य होती है।

इगलैण्ड मे यद्यपि अवित्तीय विधेयक लोकसदन या लॉड सभा किसी म भी प्रस्तावित किये जा सकते है, लेकिन लाड सभा को केवल यह अधिकार प्राप्त ह कि वह लोकसदन से असहमत होने पर अवित्तीय विधेयक को एक वप तक रोक रख सके। इस प्रकार अवित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे अमरीकी सीनेट को 'पूण निषेधाधिकार' (absolute veto) प्राप्त है, लेकिन लॉड सभा को एक वप के लिए 'विलम्बकारी निषेधाधिकार' (suspensive veto) ही प्राप्त है।

वित्त विधेयक ब्रिटिश लाड सभा या अमरीकी सीनेट दोनो मे ही प्रस्तावित नही किये जा सकत लेकिन इनके सम्बन्ध मे भी लाड सभा की स्थिति सीनट की तुलना मे बहुत निबल है। सीनेट वित्त विधेयक मे सभी प्रकार के सशोधन करने म सक्षम है और वित्त विधेयक काग्रेस से तभी पारित समझा जाता है जबकि प्रतिनिधि सभा और सीनट दोनो इसे स्वीकार कर ले। लेकिन ब्रिटेन मे लाड सभा वित्त विधेयक को केवल एक माह तक रोके रखने का ही काय कर सकती है। एक महीने का समय बीत जाने पर लोकसदन के द्वारा लॉड सभा की सहमति के बिना ही, वित्त विधेयक सम्राट के पास हस्ताक्षर के लिए भेज दिया जाता है।

कार्यपालिका क्षेत्र मे—ब्रिटिश लाड सभा के द्वारा कायपालिका अर्थात मन्त्रिमण्डल के सदस्यो से प्रश्न पूछे जा सकते हैं और मन्त्रिमण्डल की आलोचना की जा सकती है, लेकिन इससे अधिक लाड सभा कुछ नही कर सकती। मन्त्रिमण्डल लोकसदन के ही प्रति उत्तरदायी होता है लाड सभा के प्रति नही। लेकिन अमरीकी सीनेट को कायपालिका के क्षेत्र म कुछ प्रभावशाली शक्तिया प्राप्त हैं। अमरीकी राष्ट्रपति द्वारा की गई सभी महत्त्वपूण नियुक्तिया और सन्धिया पर सीनेट का अनुसमथन प्राप्त करना आवश्यक है और सीनेट अपनी जाच समितियो क माध्यम

से विभिन्न प्रशासनिक विभागों के कार्यों की जाँच भी कर सकती है। इस प्रकार कार्यपालिका क्षेत्र में भी सीनेट की तुलना में लॉर्ड सभा बहुत निर्बल है। लॉर्ड सभा कार्यपालिका को केवल प्रभावित ही कर सकती है और वह भी केवल कुछ ही सीमा तक, लेकिन सीनेट अमरीकी संघ की कार्यपालिका (राष्ट्रपति) का प्रभावशाली ढंग से नियन्त्रित रखती है।

न्यायिक क्षेत्र में—ब्रिटिश लार्ड सभा और अमरीकी सीनेट दोनों के ही द्वारा महाभियोग की जाँच करने का कार्य किया जाता है, लेकिन न्यायिक क्षेत्र में एक दृष्टि से ब्रिटिश लार्ड सभा अमरीकी सीनेट की तुलना में अधिक शक्तिशाली है। ब्रिटिश लार्ड सभा (लार्ड सभा की न्यायिक समिति) के द्वारा ग्रेट ब्रिटेन और उत्तरी आयरलैण्ड के लिए अपील के सर्वोच्च न्यायालय के रूप में भी कार्य किया जाता है, लेकिन अमरीकी सीनेट को इस प्रकार की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है।

इस प्रकार न्यायिक क्षेत्र में लार्ड सभा सीनेट से अधिक शक्तिशाली है लेकिन कानून निर्माण और कार्यपालिका के क्षेत्र में सीनेट की स्थिति लार्ड सभा से बहुत उच्च है। अमरीकी राजनीतिक व्यवस्था में आज सीनेट को वही स्थिति प्राप्त है, जो स्थिति लार्ड सभा को ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था में १८वीं सदी में प्राप्त थी। स्टण्डर्ड हैराल्ड के शब्दों में कहा जा सकता है कि—"**संयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट आधुनिक विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली और ब्रिटिश लार्ड सभा सबसे अधिक निर्बल द्वितीय सदन है।**"[1]

लॉर्ड सभा की आलोचना

वंशानुगत आधार पर संगठित होने के कारण बीसवीं सदी के प्रारम्भ से ही लार्ड सभा निरन्तर आलोचना की पात्र रही है और वर्तमान समय में लार्ड सभा की जितनी अधिक आलोचना की जाती है उतनी ब्रिटिश राजनीतिक व्यवस्था की अन्य किसी भी संस्था की नहीं। ब्रिटिश राजनीति के एक प्रमुख दल (मजदूर दल) के द्वारा तो १९०७ से ही यह कहा जाता रहा है कि लॉर्ड सभा की कोई आवश्यकता ही नहीं है। जे० आर० क्लाइन्स के शब्दों में मजदूर दल का मत है कि, "**लॉर्ड सभा एक ऐसी संस्था है जिसको ठीक से सुधारा नहीं जा सकता है, यदि उसे सुधारा नहीं जा सकता, तो उसे समाप्त कर दिया जाना चाहिए।**"

लॉर्ड सभा की आलोचना के प्रमुख आधार इस प्रकार हैं

(१) **अलोकतन्त्रीय संस्था**—लार्ड सभा के लगभग ९० प्रतिशत सदस्य वंशानुगत आधार पर अपना पद प्राप्त करते हैं, जो लोकतन्त्रीय प्रणाली के पूर्णतया विरुद्ध है। लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों के अनुसार व्यवस्थापिका का द्वितीय सदन भी

1 The United States Senate is the strongest and the House of Lords the weakest of all upper houses in the world today
—Standard Harold, *The Two Constitutions*, p 112

प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से निर्वाचित होना चाहिए, पर लॉर्ड सभा के गठन का आधार निर्वाचन व योग्यता न होकर उत्तराधिकार और मनोनयन है। इस प्रकार लॉर्ड सभा की रचना लोकतन्त्रीय प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं है। सिडनी और बिट्रस वेब का कथन है कि "लॉर्ड सभा के निर्णय उसकी रचना से दूषित होते हैं। यह समस्त निर्मित प्रतिनिधि संस्थाओं में सबसे बुरी है, उसमें शारीरिक श्रम करने वाले वर्ग का कोई प्रतिनिधि नहीं है, न दुकानदार, क्लर्क तथा अध्यापक वर्ग का, न उस आधी जनता का जो कि नारी वर्ग कहलाता है और न कला, विज्ञान अथवा साहित्य का।"[1] आगस्टाइन बिरेल के शब्दों में, "लॉर्ड सभा अपने अतिरिक्त और किसी का प्रतिनिधित्व नहीं करती और इसे अपने सदस्यों का भी पूर्ण विश्वास प्राप्त नहीं है।" रचना की दृष्टि से त्रुटिपूर्ण होने के कारण लास्की ने लिखा है कि 'यह एक ऐसी समय विरुद्ध रचना है, जिसका पक्ष नहीं लिया जा सकता।'[2]

(२) निहित स्वार्थों का दुर्ग—प्रतिनिधि संस्था के द्वारा समाज के सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व किया जाना चाहिए, लेकिन लॉर्ड सभा समाज के केवल एक ही वर्ग (धनी-मानी वर्ग) का प्रतिनिधित्व करती है, जबकि अन्य देशों के उच्च सदनों के सदस्य विभिन्न वर्गों और हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं। लार्ड सभा की सदस्यता सामान्यतया उच्च वर्गों के व्यक्तियों को ही प्रदान की जाती है और इस सभा में बड़े-बड़े भूमिपति, उद्योगपति, जहाजों, मोटर कारखानों और छापाखानों के स्वामी तथा बड़े बड़े निगमों के संचालक होते हैं जो अपने वर्गीय हितों का ही प्रतिपादन करते हैं। इसी कारण लार्ड सभा को 'धनिकों की सभा' (Plutocratic House) कहा जाता है, न कि कुलीन जनों का सदन। कार्टर के शब्दों में— 'लॉर्ड सभा केवल सम्पत्ति और विशेषाधिकारों का प्रतिनिधित्व ही नहीं करती वह तो वास्तव में स्वयं सम्पत्ति और विशेषाधिकारों का गढ़ है।'[3] केवल धनीमानी वर्ग की प्रतिनिधि होने कारण लार्ड सभा ने अधिकांशतया प्रगतिशील और जनहितकारी नीतियों का विरोध ही किया है।

(३) अनुदार दल की स्थायी प्रभुता—प्रतिनिधि संस्थाएँ जन भावनाओं के

1 'Its decisions are violated by its composition It is the worst representative assembly ever created in that it contains absolutely no members of the manual working class none of the great class of shop keepers clerks teachers none of the half of all citizens who are of female sex and practically none of religious non-conformity of art science or literature —Sydney & Beatrice Webb

2 For as the second chamber of political democracy it is by almost universal consent an indefensible anarchronism

—H J Laski *Parliamentary Government In England* p 111

3 The House of Lords is not only a representative of wealth and privilege It is wealth and privilege personified

—G M Carter & Others *The Government of Great Britain*

प्रतिबिम्ब होनी चाहिए और जन भावनाओ म परिवर्तन होने के साथ-साथ इन सस्थाओ के अन्तगत दलीय स्थिति म भी परिवतन होना चाहिए लेकिन लाड सभा के सम्बध म ऐसा नही है। लॉड सभा के १,०६१ सदस्या मे से ६२ सदस्य उदार दल और ५८ सदस्य श्रमिक दल के हैं, ५०० सदस्य अनुदार दल के हैं और शेप अनुदार दल से ही सहानुभूति रखने वाले है। इस दलीय स्थिति के कारण ही लॉड सभा के सम्बध म कहा जाता है कि "आम चुनावो में किसी भी दल को बहुमत प्राप्त हो, लॉड सभा पर अनुदार दल का स्वामित्व सदैव ही बना रहता है।"[1]

इस प्रकार जसा कि लॉड बालफोर ने कहा है, 'लॉड सभा का काय केवल यह देखना है कि रूढिवादी दल का प्रभुत्व सदव बना रहे, चाहे उसकी सरकार हो या न हो।'[2] व्यवहार मे जब अनुदार दल की सरकार होती है तब लाड सभा सभी बातो म लोकसदन का समथन करती है, लकिन जब उदार दल या मजदूर दल का सरकार पर प्रभुत्व होता है, तो यह लोकसदन की लगभग प्रत्येक बात का उग्र विरोध करती है। लॉड सभा के इस व्यवहार पर टिप्पणी करत हुए मेरीयट न लिखा है "जब अनुदार दल की सरकार होती है तो लॉड सभा गूगे कुत्ते की भाति व्यवहार करती है और अन्य अवसरो पर उसका आचरण खूखार भेडिये का सा हो जाता है।"[3] एसी स्थिति म उदार दल और मजदूर दल के द्वारा लॉड सभा के अस्तित्व का विरोध किया जाना नितात स्वाभाविक है।

(४) **सदस्यो की उदासीनता**—लॉड सभा के विरुद्ध सबसे बडा आरोप यह है कि यह ऐसे व्यक्तियो की एक सस्था है जिसके अधिकाश सदस्य प्राय अनुपस्थित रहते हैं और सदन के कार्यों मे कोई रुचि नही लेते। यद्यपि लाड सभा के सदस्यो की सख्या १,००० से ऊपर है, लेकिन साधारणतया ५० से अधिक सदस्य सदन मे उपस्थित नही होते। काटर के शब्दो मे 'अपने विधायी कत्तव्यों का निभाना तो दूर रहा, लाडस लोग सदन मे आने तक का कष्ट नहीं उठाते।'[4] अनेक पियर लॉर्ड सभा मे इतने कम आते हैं कि सदन के सेवक भी उनको पहचान नही पाते। १८६३ म जब ग्लडस्टन के होमरूल विधेयक को रद्द करने के उद्देश्य से लॉड सभा की बडी

[1] 'No matter which party is in majority in the House of Commons the conservative party has an unchallenged mastery of the upper House —Carter *Ibid* p 150

[2] 'The House of Lords is intended to see that in office, or out of it the conservative party is permanently in power" —*Lord Balfour*

[3] 'The House of Lords behaves like dumb dog while a conservative government were in office and ravening wolf at other times —*Marriot*

[4] 'Far from taking their legislative duties seriously, the great majority of the Peers conscientiously abstain from regular attendance at the Lords deliberations' —G M Carter & Others, *Ibid* p 1

रैली हुई, तब एक पियर को रोककर द्वारपाल ने पूछा कि 'क्या आप वास्तव में पियर है ?' उत्तर दिया गया कि 'क्या तुम सोचते हो कि यदि मैं पियर न होता, तो इस वाहियात जगह में आता।' स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उपस्थित होता है कि जिस सदन के सदस्य ही उसे एक वाहियात जगह मानते हो, उस सदन का क्या उपयोग हो सकता है ?

(५) **दोषपूर्ण प्रक्रिया**—लार्ड सभा के प्रक्रिया सम्बन्धी दोषो ने भी इसे एक महत्त्वहीन संस्था बना दिया है। १,००० से अधिक सदस्य संख्या वाले इस सदन की गणपूर्ति केवल ३ है, जबकि लोकसदन की गणपूर्ति ४० है। विश्व के किसी भी विधायी सदन में इतने कम सदस्यो की उपस्थिति में विधायी कार्य नहीं किये जा सकते। लार्ड सभा की कार्यवाही के निश्चित नियम नहीं हैं और सदन के अध्यक्ष का अधिकार नहीं है कि वह सदस्यो को अनुशासित रखने के लिए आवश्यक कार्यवाही कर सके। लार्ड सभा के सदस्य लोकसदन के सदस्यो की भाति दलीय आधार पर भी संगठित नहीं हैं, इसलिए आलोचको ने इसे एक नियमबद्ध सदन नहीं, वरन् एक **'गड़बड़ घोटाला सदन'** कहा है।

(६) **विधायी और कार्यकारी शक्तियों की निरर्थकता**—१९११ और १९४९ के संसदीय अधिनियम के परिणामस्वरूप कानून निर्माण के क्षेत्र में लार्ड सभा की स्थिति बहुत निर्बल हो गई है। लार्ड सभा का कार्यपालिका पर कोई नियन्त्रण नहीं है क्योकि मन्त्रिमण्डल लोकसदन के ही प्रति उत्तरदायी होता है। आलोचको का कथन है कि जब लॉर्ड सभा कानून निर्माण और प्रशासन के क्षेत्र में प्रभावशाली रूप से कार्य करने में समर्थ ही नहीं है तो ऐसे सदन के अस्तित्व का क्या लाभ है ?

(७) **द्वितीय सदन के रूप में अनुपयोगिता**—अनेक लेखको के अनुसार द्वितीय सदन के रूप में लॉर्ड सभा अनुपयोगी और हानिकारक संस्था है। ग्रीव्ज के मत में लॉर्ड सभा की अनुपयोगिता के तीन कारण हैं प्रथम, अब व्यवहार में लोकसदन स्वयं विधि निर्माण कार्य के लिए एक द्वितीय सदन है। प्रथम सदन तो केबीनेट और प्रशासन है, जो विधेयको का प्रारूप तैयार करता है। दूसरे, शासन कार्य में समय का बहुत महत्त्व है और संसदीय पद्धति में वैसे ही किसी प्रस्ताव पर विचार करने में लम्बा समय लगता है। ऐसी स्थिति में लॉर्ड सभा अनावश्यक विलम्ब करने का ही कार्य करती है। तीसरे, जहाँ तक विधेयको को दोहराने का सम्बन्ध है, यह कार्य लार्ड सभा जैसे विशालकाय सदन की अपेक्षा विधेयको का प्रारूप बनाने वाले और कानून के विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा अधिक अच्छे प्रकार से किया जा सकता है। लार्ड सभा तो राजनीतिक रूप से समय के नितान्त विरुद्ध संस्था है। लास्की द्वारा भी इन्ही आधारो पर लॉर्ड सभा की अनावश्यकता और अनुपयोगिता बतायी गई है।

भूतपूर्व प्रधानमन्त्री चर्चिल के शब्दों में लार्ड सभा 'अप्रतिनिधिक, अनुत्तरदायी एवं अनुपस्थित' संस्था है।[1]

लॉर्ड सभा की उपयोगिता

यद्यपि शक्तियों की दृष्टि से लार्ड सभा बहुत अधिक निर्बल है और रचना के आधार पर इसे बहुत अधिक दोषपूर्ण कहा जाता है, फिर भी सामान्य विचार यही है कि लार्ड सभा में परिस्थितियों के अनुसार आवश्यक सुधार करते हुए इसे बनाये रखा जाय। लार्ड सभा की उपयोगिता के आधार इस प्रकार हैं :

(१) **लोकसदन की स्वेच्छाचारिता पर अंकुश**—लोकतन्त्र की रक्षा के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि व्यवस्थापन पर किसी एक दल या संस्था का एकाधिकार स्थापित न हो सके। अतः प्रथम सदन की स्वेच्छाचारिता पर रोक लगाने के लिए द्वितीय सदन का अस्तित्व नितान्त आवश्यक है। लार्ड सभा के न होने पर लोकसदन स्वेच्छाचारी हो सकता है और उसके द्वारा जनता की स्वतन्त्रता के साथ मनमाने तरीके से खिलवाड़ किया जा सकता है। अतः लोकसदन की अधिनायकवादी मनोवृत्ति पर रोक लगाने के लिए लार्ड सभा का अस्तित्व आवश्यक है। इस सम्बन्ध में मर्केजी ने ठीक ही कहा है "इतनी अद्वितीय व व्यापक शक्तियों को एक सदन के अस्थिर बहुमत के मनमाने निर्णयों पर छोड़कर लोकतन्त्र की सुरक्षा नहीं रह सकती, चाहे किसी प्रकार के निर्वाचन के आधार पर उसका निर्वाचन हुआ हो और चाहे किन्हीं भी सिद्धान्तों के आधार पर वह अपना कार्य करता हो।"

(२) **लोकसदन द्वारा पारित विधेयकों पर पुनर्विचार**—लार्ड सभा की उपयोगिता का सर्वप्रमुख आधार यह है कि यह लोकसदन द्वारा पारित विधेयकों पर पुनर्विचार करता है। वर्तमान समय में लोकसदन के पास कार्य भार बहुत अधिक हो गया है, इस सदन के पास समय का बहुत अभाव रहता है और वादविवाद को नियन्त्रित करने के लिए 'गिलोटीन' जैसे नियमों की व्यवस्था होने के कारण अनेक बार विधेयकों पर पूर्ण विचार नहीं हो पाता तथा विधेयक की भाषा में अनेक प्राविधिक कमियाँ रह जाती हैं। लार्ड सभा में अपेक्षाकृत स्वतन्त्र वादविवाद होते हैं और लॉर्ड सभा द्वारा इन विधेयकों पर पूर्ण विचार कर उनकी त्रुटियों को दूर किया जा सकता है। लॉर्ड सभा द्वारा किये जाने वाले इस कार्य के महत्त्व को लोकसदन भी स्वीकार करता है। आधुनिक काल में लार्ड सभा द्वारा किये गये १,४०० संशोधनों में से केवल ४० को ही लोकसदन ने स्वीकार नहीं किया है। ओग और जिंक लिखते हैं, 'इतिहास के विद्यार्थियों को यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि कई विभिन्न अवसरों पर उच्च सदन ने राष्ट्र की इच्छा और राजनीतिक स्थिति की वास्तविकता

[1] 'Unrepresentative, irresponsible, absentee' —Churchill

का विश्लेषण निम्न सदन की तुलना मे ठीक-ठीक किया है और कई बार इसने देश को जल्दबाजी और कम विचार के आधार पर पारित विधेयको से बचाया है।"[1]

ब्रिटेन म सविधान के लचीला होने या स्विटजरलण्ड के समान लोकनिणय या अमरीका के समान न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था न होने के कारण इस प्रकार के पुनर्विचारक सदन की आवश्यकता और भी अधिक हो जाती है। आग तथा जिक ने इस तथ्य को इन शब्दो मे प्रकट किया है, "क्योंकि ब्रिटेन मे कानून बनाने मे वसा कोई प्रतिबन्ध नहीं है, जैसा कि कठोर सविधान वाले देशों में होता है, न वहाँ स्विटजरलैण्ड के समान लोकनिणय या अमरीका के समान न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था है, अत इस आधार पर यह प्रतिपादित किया जाता है कि ब्रिटेन मे अय राज्यो की अपेक्षा एक ऐसे द्वितीय सदन को कहीं अधिक आवश्यकता है, जिसे कि विचार-विमर्श और दोहराने की शक्ति प्राप्त हो।"[2]

(३) सभी वर्गों की प्रतिनिधि सस्था और योग्यता का भण्डार—लोकसदन के सदस्य जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होते हैं, इस कारण समाज मे बहुमत रखने वाल निम्न वर्गों को ही इसमे प्रतिनिधित्व मिल पाता है। लॉर्डसभा समाज के विशिष्ट स्वार्थों और वर्गों को प्रतिनिधित्व प्रदान करती है और ब्रिटिश ससद मे सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व प्रदान कर इसे एक आदश व्यवस्थापिका का रूप देती है।

इसके अतिरिक्त देश मे अनेक ऐसे योग्य, अनुभवी और विद्वान व्यक्ति हात हैं जिनका ससद म होना देश के लिए बहुत लाभकारी होता है, किन्तु जो सकीण गुटबादिता और चुनाव के गन्द दलदल से बचना चाहते हैं। इन सदस्यो को लाड सभा म मनोनीत कर देश उनकी योग्यता से लाभान्वित हो सकता है। ब्रिटिश लाड सभा म कुछ महत्त्वपूण प्रधानमन्त्री, अनेक भूतपूव मन्त्री, प्रसिद्ध न्यायवेत्ता और उद्योगपति श्रमिक सघो के ख्यातिप्राप्त नता, समाजसेवी और ज्ञान विज्ञान तथा कला के क्षेत्र मे उच्चतम स्तर पर काय कर चुके व्यक्ति होते हैं और इस दृष्टि स लाड सभा को 'योग्यता का भण्डार' कहा जा सकता है।

1 'No student of history needs be told that upon sundry occasions the upper house has interpreted the will of the nation or the realities of a political situation more correctly than a lower and that more than once it has saved the country from hasty and ill considered legislation

—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 230

2 'Indeed on the ground that Britain has none of the safeguards afforded by rigid constitution by referendum procedure like that of Switzerland or by judicial review like that of the United States it is sometimes contended that she beyond most other states has need of second chamber with full deliberative and revisory powers

—Ogg & Zink, *Modern Foreign Governments* p 231

(४) **लोक सदन के व्यवस्थापन काय मे सहायक**—जनकल्याणकारी राज्य की धारणा को अपना लिये जाने के कारण लोकसदन का कानून निमाण सम्बधी काय बहुत अधिक बढ गया है और ऐसी स्थिति मे अकेले लोकसदन के द्वारा यह समस्त काय नही किया जा सकता। लॉड सभा के द्वारा लोकसदन के कायभार को कम किया जा सकता है। निजी विधेयको और बहुत अधिक महत्त्वपूण किन्तु अवि वादग्रस्त विधेयको को पहले लॉड सभा म प्रस्तावित किया जा सकता है और लॉड सभा मे इन विधेयको पर गम्भीरता के साथ विचार किये जाने के बाद इ है लोकसदन मे भेजा जा सकता है। इस प्रकार लोकसदन के समय और शक्ति की बचत होती है। इस सम्बध म लॉर्ड सभा की उपयोगिता स्वीकार करते हुए मॉटिन लिण्डसे ने कहा है, **"लॉड सभा के व्यवस्थापन सम्बधी कार्यों की समाप्ति से लोक सदन का काय बहुत अधिक (लगभग दुगुना) हो जायगा।"**[1]

(५) **जनमत को प्रभावित करने का साधन**—लोकसदन के वाद-विवाद दल गत निष्ठा से आबद्ध होते हैं और सदस्यो के सिर पर दलीय अनुशासन का चाबुक मँडराता रहता है। इस कारण लोकसदन के विवादो मे उच्च स्तर का अभाव रहता है। परन्तु लॉड सभा मे दलीय अनुशासन और वाद विवाद पर प्रतिबध की व्यवस्था न होने के कारण सावजनिक महत्त्व के नीति सम्बधी विषयो पर मुक्त विचार-विनिमय होता है। व्यवहार के अ तगत भी यह देखा गया है कि लाड सभा के विवाद अधिक उच्चस्तरीय होते है। १९४५-५० के काल म ससद की कायवाही का मूल्याकन करते हुए **'इकॉनोमिस्ट'** (Economist) ने लिखा था कि **"सुरक्षा, औपनिवेशिक नीति और राष्ट्रमण्डल के विषयों और साधारण आर्थिक नीति पर उच्च सदन मे प्रथम ससद की अपेक्षा अधिक अधिकृत रूप से और विशेष जानकारी युक्त विवाद हुआ है।"** लॉड सभा अपने इन उच्च स्तरीय विवादो के आधार पर जनमत को प्रभावित करने का काय सफलतापूवक करती है। एण्ड्र मॅथिओट (Andre Mathiot) के अनुसार **'लॉड सभा लोकमत को निर्धारित करने मे महत्त्वपूण प्रभाव रखती है।'**[2]

(६) **ब्रिटिश जाति के स्वभाव के अनुकूल**—लाड सभा इस दृष्टि से भी उप- योगी है कि वह ब्रिटिश जाति के स्वभाव के अनुकूल है। ब्रिटिश जाति स्वभाव से ही रूढिवादी है और अतीत से चली आ रही परम्परागत सस्थाओ के प्रति स्नेह रखती है। स्वाभाविक रूप से सदियो से चली आ रही सस्था (लाड सभा) का अन्त ब्रिटिश जनता के द्वारा स्वीकार नही किया जा सकता। हैरीसन ने इस तथ्य को

[1] 'The abolition of the legislative functions of the House of Lords would greatly increase indeed almost double the work of the House of Commons " —*Martin Lindsay*

[2] The House of Lords is an important influence in moulding opinion —*Andre* ʼ

इन शब्दा म व्यक्त किया है कि 'ब्रिटेन मे द्वितीय सदन कायम है क्योकि वह सदा ही रहा है।'

लॉड सभा इस दृष्टि से भी ब्रिटिश जाति के स्वभाव के अनुकूल है कि ब्रिटिश जनो मे युक्ति विरुद्ध सस्थाओ से भी काम निकाल लेने की पर्याप्त क्षमता है। जब तब किसी चीज से काम चलता रहता है, तब तक वे उसी अच्छी ही समयत हैं या कम मे कम उसके प्रति सहिष्णु बने रहते हैं।

ब्रिटिश राजनीति और व्यवस्थापन के क्षेत्र के लाड सभा की उपयोगिता बतलाते हुए डा० फाइनर ने लिखा है कि, "यह सावजनिक वाद विवाद के लिए विश्व के विशिष्टतम स्थलो मे से एक है, क्योकि इसे विधेयक, नीति या प्रशासन पर किसी भी स्थिति मे वादविवाद करने का अधिकार है, और इसकी सदस्यता का एक बडा भाग ज्ञान और राजनीतिक, सामाजिक तथा व्यावसायिक अनुभवों मे अपेक्षाकृत श्रेष्ठ है। यह जन सेवाभावी विशेषज्ञों का एक ऐसा निकाय है जो पर्याप्त बुद्धि, ज्ञान तथा पक्षपातपूण राजनीति से पृथकता के साथ विभिन्न विषयो पर बोल सकते हैं, क्योकि वे अपनी स्थिति के लिए सामान्य निर्वाचन पर आश्रित नही होते और लोकसदन की अपेक्षा कायभार के कम दबाव के कारण उन्हें विचार विनिमय के लिए पर्याप्त समय मिलता है।"[1]

लॉर्ड सभा का सुधार

(Reform of the House of Lords)

लाड सभा के सम्बन्ध मे सामान्य धारणा यह है कि इगलण्ड जसे प्रजातन्त्रात्मक देश मे लाड सभा को समय के अनुकूल नही कहा जा सकता है लेकिन इसके साथ ही लाड सभा की अपनी कुछ उपयोगिताएँ हैं, इसलिए लाड सभा का अन्त करने के बजाय इसे समय के अनुकूल रूप प्रदान करने का प्रयत्न किया जाना चाहिए।

१८३२ मे प्रथम सुधार कानून पारित होने के बाद से ही लोकसदन और लॉड सभा के मैत्रीपूण सम्बन्ध समाप्त हो गये और तभी से यह सोचा जाने लगा कि लॉड सभा मे सुधार किया जाना चाहिए। पिछले लगभग १०० वर्षों म इस प्रश्न

1 It remains one of the most distinguished forms of public deba[te] in the world for it has the right to discuss any phase of legislatio[n] policy and administration and as will be seen a substantial p[art] of its membership is of exceptional distinction in intellect an[d] political social and business experience These constitute a body of public spirited experts and to talk with great intellig[ence] and knowledge and ready to do so with an aloofness from imm[e]diate partisan politics because they are not dependent for th[eir] status on appeals for popular election, and with abundant time [to] deliberate as the lords are far less pressed with decisive business than the Commons —Herman Fi[ner]

पर अनेक व्यक्तियो और समितिया द्वारा विचार किया गया और उनके द्वारा अनेक सुझाव दिये गये। इस प्रकार की सुधार योजनाओ म से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं

(१) लॉर्ड रसेल का प्रस्ताव (१८६९)—लार्ड रसेल ने सुझाव दिया कि वश परम्परागत पियर समाप्त करके उनके स्थान पर आजीवन पियरो की व्यवस्था की जानी चाहिए, लेकिन यह प्रस्ताव स्वीकृत नही हुआ।

(२) लार्ड सलिसबरी का प्रस्ताव (१८८८)—लॉर्ड सलिसबरी न अपनी सुधार योजना ससद मे प्रस्तावित करते हुए कहा कि अवाछनीय पियरा को लार्ड सभा मे मतदान क अधिकार से वचित कर दिया जाना चाहिए, किन्तु यह प्रयास सफल नही रहा।

(३) लॉर्ड लेंसडाउन की योजना (१९०९)—लॉर्ड लसडाउन ने लार्ड सभा के सभी सदस्यो की सख्या ३३० रखने का सुझाव दिया था, जिसम १०० सदस्य पियरो के प्रतिनिधि, १०० यक्ति सम्राट द्वारा नियुक्त, १२५ सदस्य लोकसदन द्वारा प्रादेशिक आधार पर निर्वाचित एव ५ सदस्य बिशपा द्वारा निर्वाचित होत। परन्तु यह योजना भी स्वीकृत नही हुई।

(४) ससदीय अधिनियम (१९११)—यह केवल एक सुधार योजना ही नही रहा, वरन् व्यवहार म इसके आधार पर लॉर्ड सभा की शक्तियो को सीमित कर दिया गया। अधिनियम का अध्ययन इसी अध्याय म किया जा चुका है।

(५) ब्राइस समिति के सुझाव (१९१८)—१९११ के ससदीय अधिनियम द्वारा लार्ड सभा की शक्तिया तो सीमित कर दी गयी, लेकिन उसकी रचना मे कोई परिवतन नही किया गया, अत लार्ड सभा की आलोचना की जाती रही। १९११ के ससदीय अधिनियम की प्रस्तावना मे कहा गया था कि वतमान समय की वश क्रमानुगत लार्ड सभा के स्थान पर लोकतन्त्रीय द्वितीय सदन की रचना की जानी चाहिए, पर एसा परिवतन तुरन्त क्रियान्वित नही किया जा सका। अत प्रस्तावना मे निहित सिद्धान्त के आधार पर योजना तयार करने के लिए १९१७ मे एक समिति नियुक्त की गई, जिसके अध्यक्ष लॉर्ड ब्राइस थे। समिति की रिपोर्ट १९१८ मे प्रकाशित हुई जिसम निम्न सुझाव दिये गये थे

(i) लार्ड सभा को बनाये रखा जाय, किन्तु उसकी सदस्य सख्या घटाकर ३२७ कर दी जानी चाहिए।

(ii) इस सदन के सदस्य दो प्रकार के हो प्रथम, ८१ सदस्य पियर वग के हो, जिन्हे ससद के दोना सदना के पियरो की एक सयुक्त समिति चुने। द्वितीय, शेष २४६ सदस्यो को लोकसदन १३ प्रादेशिक क्षेत्रा मे विभक्त होकर चुने, जिससे देश के प्रत्येक भौगोलिक क्षेत्र को लॉर्ड सभा म प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके।

(iii) लॉर्ड सभा के सदस्यो का कायकाल १२ वष हो, किन्तु इनमे स एक तिहाई सदस्य प्रति ४ वष बाद अपना स्थान रिक्त कर दें।

ब्राइस समिति के सुझाव उपयोगी थे, लेकिन क्रियान्वित नही हो सके। अनुदार दल आरम्भ से ही इस समिति की रचना और उसके सुझावो स सहमत नही था और उसने इसे क्रियान्वित नही होने दिया।

(६) **लायड जार्ज की योजना (१९२२)**–१९२२ मे लायड जार्ज की सरकार ने ब्राइस योजना म कुछ परिवर्तन करके लॉर्ड सभा की रचना म सुधार के लिए एक नवीन योजना प्रस्तुत की, जिसमे निम्न बाते थी

(i) राजवश के पियर, आध्यात्मिक पियर और विधि विशेषज्ञ पहले की भाति लॉर्ड सभा के सदस्य बने रहे।

(ii) लार्ड सभा की कुल सदस्य सख्या ३५० हो और लार्ड सभा के शेष सदस्य ३ वर्गो के हो लार्ड सभा द्वारा अपने मे से ही निर्वाचित सदस्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष पद्धति से लॉर्ड सभा के बाहर से चुने गये सदस्य और सम्राट द्वारा मनोनीत सदस्य।

(iii) निर्वाचित सदस्यो का कार्यकाल ८ वर्ष हो।

परन्तु यह योजना भी सभी पक्षो द्वारा स्वीकृत न हो सकी।

(७) **लार्ड सैलिसबरी के प्रस्ताव (१९३२)**—१९३२ मे लार्ड सलिसबरी ने लार्ड सभा मे सुधार के लिए एक विधेयक प्रस्तावित किया, जिसम निम्नलिखित प्रावधान थे

(i) लॉर्ड सभा की कुल सदस्य सख्या ३२० हो।

(ii) १५० सदस्य पियर वर्ग द्वारा १२ वर्ष के लिए निर्वाचित हो।

(iii) १५० सदस्य लोकसदन द्वारा १२ वर्ष के लिए निर्वाचित हो।

(iv) शेष २० सदस्य राजवश के पियर, आध्यात्मिक पियर और विधि विशेषज्ञ लार्डो म से हो।

परन्तु यह योजना भी अन्य योजनाओ की भाति स्वीकृत न हो सकी।

(८) **ससदीय अधिनियम (१९४९)**—१९४५ मे पदारूढ मजदूर दल की सरकार द्वारा १९४९ मे एक ससदीय अधिनियम पारित कर लॉर्ड सभा की शक्तियाँ और सीमित कर दी गयी। अब लार्ड सभा को साधारण विधेयको के सम्बन्ध मे दो वर्ष की विलम्बकारी शक्ति के स्थान पर एक वर्ष की ही विलम्बकारी शक्ति प्रदान की गई।

(९) **सर्वदलीय सम्मेलन के सुझाव (१९४९)**–१९४९ के संसदीय अधिनियम द्वारा लॉर्ड सभा की रचना मे कोई सुधार नही किया गया था। यह सोचा गया कि सभी दलो की सहमति म लार्ड सभा मे सुधार के लिए योजना तैयार की जानी चाहिए। अत १९४९ म एक सर्वदलीय सम्मेलन का आयोजन किया गया और उसके द्वारा लॉर्ड सभा म सुधार के लिए सर्वसम्मति से निम्न सुझाव दिये गये

(i) वर्तमान समय की वश परम्परागत सदस्यता का अन्त कर दिया जाय।

(ii) व्यक्तिगत प्रतिष्ठा और सार्वजनिक सेवा के आधार पर संसदीय लार्ड नियुक्त किये जायें। ये संसदीय लार्ड योग्यतानुसार वंश परम्परागत लार्डों में से भी लिये जा सकते हैं।

(iii) संसदीय लार्डों में कुछ राजवंश के सदस्य और आध्यात्मिक लार्ड भी सम्मलित हों।

(iv) संसदीय लार्डों को लोकसदन के सदस्यों की भांति ही वेतन दिया जाय।

(v) महिलाओं को भी लार्ड सभा की सदस्यता प्रदान की जाय।

(vi) वर्तमान समय के जो पियर संसदीय लार्डों की श्रेणी में नहीं आ सकें, उन्हें लोकसदन के लिए मतदान का अधिकार और निर्वाचित होने का अधिकार प्रदान किया जाय।

लेकिन यह योजना भी कायरूप में परिणत नहीं हो सकी।

(१०) श्रमिक दलीय सरकार द्वारा प्रस्तावित सुधार योजना (१९६८)—लॉर्ड सभा में श्रमिक दल को स्थायी बहुमत प्राप्त है और लॉर्ड सभा श्रमिक दल का निरन्तर विरोध करती रही है, अतः श्रमिक दल लार्ड सभा में सुधार करने के लिए विशेष उत्सुक रहा है। १९६६ में श्रमिक दल के पदारूढ होने के बाद भी ऐसी ही स्थिति उत्पन्न हुई। दक्षिण रोडेशिया के प्रधानमन्त्री स्मिथ द्वारा काले अफ्रीकियों के हितों की निरन्तर उपेक्षा की जा रही थी, अतः संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपने सदस्यों से रोडेशिया के विरुद्ध कठोर प्रतिबन्ध लागू करने के लिए कहा। संघ के प्रस्ताव की भावना के अनुसार हेरल्ड विल्सन की मजदूर दलीय सरकार ने रोडेशिया सरकार पर कठोर प्रतिबन्ध लागू करने का प्रस्ताव रखा। लोकसदन द्वारा प्रस्ताव पारित कर दिये जाने पर यह प्रस्ताव लॉर्ड सभा में रखा गया किन्तु लॉर्ड सभा ने १८ जून, १९६८ को यह प्रस्ताव रद्द कर दिया। ऐसी स्थिति में प्रधानमन्त्री विल्सन ने कहा कि १८ जून, १९६८ को उनकी सरकार की हार लोकतन्त्र तथा संविधान की भावना का पूर्ण उल्लंघन है और कोई सरकार इसे सहन नहीं कर सकती है।

३१ अक्टूबर, १९६८ को ब्रिटिश साम्राज्ञी एलिजाबेथ द्वितीय ने संसद के संयुक्त अधिवेशन में यह घोषणा की कि मजदूर दल की सरकार लार्ड सभा में महत्वपूर्ण परिवर्तन लाने के लिए उदार, अनुदार और मजदूर दल की एक सर्वदलीय समिति का निर्माण करेगी। इन परिवर्तनों का मुख्य लक्ष्य होगा लॉर्ड सभा को आधुनिक संसदीय पद्धति के अनुकूल बनाना। इस दृष्टि से सदस्यता का वंश परम्परागत आधार समाप्त कर दिया जायगा और सदस्यों की संख्या घटाकर ३०० के लगभग कर दी जायगी। लेकिन इस योजना के आधार पर कोई कदम नहीं उठाया जा सका।

उपरोक्त योजनाओं में लॉर्ड सभा के सुधार के लिए जो सुझाव दिये गये हैं, उनमें से कुछ अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण सुझावों को स्वीकार किया जा चुका है।

शक्तियो के सम्बन्ध मे १९११ और १९४९ के ससदीय अधिनियम द्वारा लार्ड सभा को लोकसदन की तुलना मे गौण स्थिति प्रदान कर दी गई है और यह स्थिति बहुत कुछ सीमा तक सन्तोषजनक है। रचना की दृष्टि से इसमे सुधार के लिए दो प्रयत्न १९५८ और १९६३ मे किये गये, जो इस प्रकार हैं

१९५८ का जीवनपर्यन्त पियर अधिनियम

इस अधिनियम के आधार पर प्रमुखतया तीन सुधार किये गये—(i) लार्ड सभा म कुछ सीमित सख्या के जीवनपर्यन्त पियर (Life Peers) रखे गये, (ii) महिलाओ को भी पियर बनाया गया और (iii) लॉर्ड सभा के सदस्यो को कुछ दैनिक भत्ता दिया जाने लगा।

जीवनपर्यन्त पियर रखने का प्रमुख उद्देश्य यह था कि सरकार राष्ट्र के विभिन्न क्षेत्रो के प्रतिष्ठित और अनुभवी व्यक्तियो को लार्ड सभा म स्थान दे सके। ऐसे व्यक्तियो के लार्ड सभा की कार्यवाही मे निरन्तर सक्रिय रहने की भी आशा की जा सकती है। लॉर्ड सभा एक दल का गढ न बन सके, इस दृष्टि से सरकार ने यह आश्वासन दिया कि पियर बनाने के पूर्व विरोधी दल की स्वीकृति ले ली जायगी।

सन १९६३ का पियरेज एक्ट—सन् १९६२ मे लॉर्ड सभा म सुधार का प्रस्ताव फिर आया जिसके फलस्वरूप सन १९६३ का पियरेज एक्ट बना। इस अधिनियम के अन्तर्गत (i) पैतृक लॉर्ड अपने जीवन के लिए अपना लार्ड पद त्याग सकते है, परन्तु उत्तराधिकारी को लार्ड पद फिर से मिल सकता है। लॉर्ड वैजवुड वेन, लॉर्ड हैलशम और लॉर्ड होम के द्वारा इस अधिनियम के अन्तर्गत ही अपनी सदस्यता का त्याग किया गया, (ii) स्काटलैण्ड के सभी पियर लार्ड सभा के सदस्य हो गये, (iii) आयरलैण्ड के पियर लोकसदन के लिए चुनाव लड सकते हैं। (iv) महिला लॉर्ड को भी ये सब अधिकार प्राप्त हो गये।

लॉर्ड सभा मे सुधार के लिए कुछ व्यावहारिक सुझाव

ब्रिटेन म सामान्य भावना यही है कि लॉर्ड सभा जैसी सस्था को नष्ट नही किया जाना चाहिए, जो पुरातन महत्त्व की है और इतनी शक्तिहीन हो चुकी है कि अब कोई विशेष हानि नही पहुचा सकती। लेकिन रचना की दृष्टि से लार्ड सभा अब भी दोषपूर्ण है और इसे वर्तमान समय की राजनीतिक प्रवृत्तियो के अनुकूल नही कहा जा सकता। लॉर्ड सभा म सुधार के लिए स्वय अपने विवेक के आधार पर निम्न सुझाव दिये जा सकते हैं

(१) वर्तमान समय म वश परम्परागत सदस्यता की जो व्यवस्था है, उसका कोई औचित्य नही बतलाया जा सकता अत उसका अन्त कर दिया जाना चाहिए। १९४९ के सर्वदलीय सम्मेलन मे इस बात पर सभी दल सहमत थे।

(२) वर्तमान समय म लॉर्ड सभा की सदस्य सख्या १,००० से अधिक है और इतने बडे आकार वाले किसी सदन से उचित रूप मे कर्त्तव्यो का सम्पादन किये जाने

की आशा नही की जा सकती। लार्ड सभा एक सुसगठित सदन के रूप म काय कर सके उसके लिए इसकी सदस्य सख्या ३०० के लगभग ही रखी जानी चाहिए।

(३) सदस्यो की नियुक्ति के लिए आशिक रूप से अप्रत्यक्ष निर्वाचन और आशिक रूप से मनोनयन की पद्धति को अपनाया जाना चाहिए। लगभग १५० सदस्य लोकसदन के द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति के आधार पर निर्वाचित किये जाने चाहिए। शेष लगभग १५० सदस्यो को सम्राट के द्वारा नियुक्त किया जाना चाहिए। ये ऐसे व्यक्ति होने चाहिए, जिन्होने ब्रिटिश सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रो—राजनीतिक, विधि, वाणिज्य, कला, विज्ञान साहित्य, श्रमिक सगठन, स्थानीय स्वशासन आदि—मे विशेष योग्यता का परिचय दिया हो। सदस्य नियुक्त किये जाते समय इस बात का दृष्टि म रखा जाना चाहिए कि सभी वर्गों को उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो जाय और लाड सभा मे किसी राजनीतिक दल को स्थायी बहुमत न हो। सम्राट द्वारा नियुक्त किये जाने वाले ये सदस्य न केवल योग्य, वरन् व्यवस्थापन तथा प्रशासन के क्षेत्र म सक्रिय रुचि रखने वाले भी होने चाहिए। इन सदस्यो म १० से लेकर २० प्रतिशत तक महिलाओ को भी प्रतिनिधित्व प्राप्त होना चाहिए।

(४) लाड सभा के सदस्यो को भी लोकसदन के सदस्यो के समान ही वतन और भत्ते प्राप्त होने चाहिए, इससे व्यवस्थापन काय के प्रति उनकी उदासीनता दूर करने मे सहायता मिलेगी।

(५) जहा तक शक्तियो का सम्बन्ध है, वतमान समय की प्रवृत्ति यही है कि द्वितीय सदन को प्रथम सदन की तुलना म कम शक्तियां ही प्राप्त होनी चाहिए। इस दृष्टि से दोनो सदनो के पारस्परिक सम्बन्धो की वतमान स्थिति को बनाये रखना ही उचित कहा जा सकता है।

लाड सभा म सुधार के सम्बन्ध म एक बाधा यह है कि पहले ब्रिटिश राजनीति के दो प्रमुख दलो (अनुदार दल और उदार दल) म मतभेद थे और वतमान समय मे ब्रिटिश राजनीति के दो प्रमुख दलो (अनुदार दल और मजदूर दल) म इस सम्बन्ध म गम्भीर मतभेद है। अनुदार दल जहा इसकी सदस्यता के आधार को कुछ सुधारने लेकिन इसे वतमान समय की अपेक्षा अधिक शक्तियाँ प्रदान करने के पक्ष मे है, वहा मजदूर दल इसे समाप्त करने के ही पक्ष म या इसका मूल आधार ही परिवर्तित करने के पक्ष म है। अनुमान यही लगाया जा सकता है कि भविष्य मे मजदूर दल को शासन शक्ति प्राप्त होने पर लाड सभा की रचना मे महत्त्वपूण परिवतन किए जायँगे।

लोकसदन
(House of Commons)

ब्रिटिश शासन व्यवस्था के अन्तगत 'ससद की प्रभुसत्ता' (Sovereignty of the Parliament) का जो उल्लेख किया जाता है, उसका तात्पय लोकसदन और लाड सभा की प्रभुसत्ता स नही, वरन केवल 'लोकसदन की प्रभुसत्ता से ही होता है।

वैसे तो १८वी सदी मे सर राबर्ट वाल्पोल ने कहा था कि "जब कोई मत्री सम्राट से परामर्श लेता है, तो वह लोकसदन से ही परामर्श लेता है। जब सम्राट ससद को विघटित करता है, तब वह लोकसदन को ही विघटित करता है।" सर वाल्पोल के समय तो स्थिति सदिग्ध ही थी, कि तु १६११ और १६४६ के ससदीय अधिनियम के पारित होने के बाद वर्तमान समय मे जो स्थिति है, उसके सम्बन्ध में न्यूमन के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'ससद की प्रभुसत्ता लोकसदन में निवास करती है।'

लोकसदन की रचना

लोकसदन की सदस्य सख्या मे समय समय पर परिवर्तन होता रहा है। १६५५ मे निर्वाचन क्षेत्रो मे किये गये परिवर्तनो के अनुसार वर्तमान समय म यह सदस्य सख्या ६३० है, जिनमे ५११ इगलैण्ड के, ७१ स्काटलण्ड के व १२ उत्तरी आयरलण्ड के प्रतिनिधि होते हैं। लोकसदन के ये समस्त सदस्य वयस्क मताधिकार और प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर चुने जाते हैं। पहले ब्रिटेन मे २१ वर्ष की आयु प्राप्त व्यक्ति वयस्क समझा जाता था, किन्तु जून १६७० मे किये गये परिवर्तन के अनुसार १८ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नर नारी को मताधिकार प्रदान कर दिया गया है। जून १६७० मे ब्रिटिश लोकसदन के जो चुनाव हुए उसम मतदाताओ की सख्या ४ करोड थी। ब्रिटेन मे पहले कुछ बहुल सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र भी थे किन्तु १६५५ मे निर्वाचन क्षेत्रो मे किये गये परिवर्तन से सभी निर्वाचन क्षेत्र एकल सदस्यीय कर दिये गये है। लोकसदन के एक सदस्य द्वारा लगभग ७५ हजार मतदाताओ का प्रतिनिधित्व किया जाता है।

वयस्क मताधिकार की इस व्यवस्था के अन्तर्गत विदेशियो, देशद्रोह तथा घोर अपराध के लिए दण्डित व्यक्तियो तथा पागल या दिवालिये प्रमाणित व्यक्तियो को मताधिकार प्राप्त नही है। इसके अतिरिक्त चुनाव मे गर कानूनी काय करने वाले व्यक्तियो को ५ वर्ष के लिए मताधिकार से वचित कर दिया जाता है। जून १६७० के आम चुनाव के बाद निर्मित लोकसदन मे दलीय स्थिति इस प्रकार है अनुदार दल ३३०, मजदूर दल २८७, उदार दल ६, अन्य ७।[1]

सदस्यों के लिए योग्यताएँ—लोकसदन का सदस्य निर्वाचित होने के लिए निम्न योग्यताएँ होनी आवश्यक हैं

(१) वह ग्रेट ब्रिटेन का नागरिक हो।

(२) उसकी आयु कम से कम २१ वर्ष अवश्य हो।

(३) मतदाताओ की सूची म उसका नाम सम्मिलित हो।

उत्तरी आयरलण्ड, इगलण्ड तथा स्काटलैण्ड चर्च के पादरी, रोमन कैथोलिक चर्च के पादरी, स्काटलैण्ड तथा ब्रिटेन के पियर, सरकार से ठेका लेने वाले व्यक्ति तथा राजमुकुट के आधीन पद धारण करने वाले व्यक्ति १६५७ के

[1] *Britannica Book of the Year*, p 754

'लोक्सदन अयोग्यता अधिनियम' के अनुसार लोक्सदन के चुनाव मे उम्मीदवार नही हो सक्त हैं। इसी प्रकार शरिफ तथा कुलीन जन भी लोरसदन या चुनाव नही लड सवते हैं।

ब्रिटन मे भारत के ही समान कोई भी उम्मीदवार किसी भी चुनाव क्षेत्र से चुनाव लड सकता है। उसके लिए आवश्यक नही है कि वह उसी निर्वाचन क्षेत्र का निवासी हो, जिससे वह चुनाव लड रहा है। इस सम्बन्ध मे आधारभूत विचार यह है कि लोकसदन के सदस्य किसी निर्वाचन क्षेत्र विशेष के ही नहीं, वरन् सम्पूण राष्ट्र के प्रतिनिधि होते है।

लोक्सदन के सदस्यो के वेतन भत्ते और विशेषाधिकार—लोक्सदन के सदस्यो का वतन २,००० पौण्ड वार्षिक होता है और उन्हे १,२५० पौण्ड वार्षिक अन्य व्यय के लिए भत्ता मिलता है। उन्हे बिना किराये के रेल यात्रा की सुविधा भी प्राप्त है। पर ब्रिटिश लोकसदन के सदस्यो को अमरीकी काग्रेस के सदस्या के समान दफ्तर या क्लब आदि की सुविधा प्राप्त नही है। इसके अतिरिक्त लोकसदन के सदस्या को निम्न विशेषाधिकार प्राप्त हैं

(१) सदस्या को सदन म भाषण की पूण स्वतन्त्रता प्राप्त है और उनके द्वारा सदन म कही गई किसी भी बात के लिए उनके विरुद्ध कोई कायवाही नहीं की जा सकती।

(२) सदन क अधिवेशन स ४० दिन पूव और ४० दिन बाद तक उन्हे किसी भी दीवानी मुकद्दमे म गिरफ्तार नही किया जा सकता।

(३) लोकसदन के सदस्यो को सामूहिक रूप से ब्रिटिश सम्राट के पास पहुच का अधिकार है अर्थात स्पीकर के माध्यम से वे अपनी बात सम्राट तक पहुचा सकते हैं।

(४) लोकसदन के सदस्यो का अपनी कायवाही पर नियन्त्रण का अधिकार है यदि सदन चाहे, तो अपनी गुप्त कायवाही भी चला सकता है।

(५) यदि कोई व्यक्ति सदन के विशेषाधिकारो का उल्लघन करता है तो सदन स्वय उसे दण्डित कर सकता है।

(६) सदन किसी सदस्य की अयोग्यताओ के विषय म निणय दे सकता है और इस आधार पर चुनाव रद्द कर सकता है।

कायकाल—लोकसदन का कायकाल ५ वष है, किन्तु आवश्यकतानुसार इस कायकाल म वृद्धि की जा सकती है जैसा कि प्रथम व द्वितीय विश्वयुद्ध के काल मे किया गया। प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर सम्राट के द्वारा लोकसदन को पाच वष की अवधि व्यतीत होने के पूव भी विघटित किया जा सकता है।

लोकसदन के पदाधिकारी

लोकसदन का सबसे प्रमुख अधिकारी अध्यक्ष होता है, जिसे नवीन ससद क निर्माण के बाद लोकसदन के सदस्यो द्वारा निर्वाचित किया जाता है। अन्य ससदीय

अधिकारियों में साधन समिति' (Committee of the Ways and Means) का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष प्रमुख होते हैं, जिनका चुनाव भी लोकसदन के सदस्यों द्वारा ही किया जाता है। अध्यक्ष की अनुपस्थिति में 'साधन समिति' का अध्यक्ष और उसकी भी अनुपस्थिति में साधन समिति का उपाध्यक्ष सदन की अध्यक्षता करता है। असंसदीय स्थायी अधिकारियों में सदन का लिपिक, सारजेण्ट एट आर्म्स तथा चपलेन प्रमुख होते हैं। क्लर्क सदन का सारा रिकार्ड रखता है और सारजेण्ट लोक सदन के अध्यक्ष को शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने में सहायता देता है।

सदन का अधिवेशन—लोकसदन का अधिवेशन लॉर्ड सभा के साथ ही प्रारम्भ होता है। ग्रेट ब्रिटेन में यह परम्परा है कि वर्ष में एक अधिवेशन अवश्य ही बुलाया जाय आवश्यकतानुसार अधिक अधिवेशन बुलाये जा सकते हैं। सदन की बैठकें सप्ताह के प्रथम चार दिन सोमवार से गुरुवार तक पौने तीन बजे दोपहर के बाद आरम्भ होती है। शुक्रवार निजी प्रस्तावों और याचिकाओं के लिए सुरक्षित होता है और इस दिन दोपहर के पूर्व ११ बजे सदन की बैठक होती है। सप्ताह के प्रथम चार दिन दोपहर से पूर्व का समय समितियों के कार्य के लिए रखा जाता है। गणपूर्ति के लिए सदन में ४० सदस्य होने चाहिए।

लोकसदन का अध्यक्ष
(Speaker)

इंगलैण्ड में लोकसदन के अध्यक्ष को 'स्पीकर' कहा जाता है। प्रारम्भ में अध्यक्ष द्वारा लोकसदन के विचार सम्राट के सम्मुख प्रस्तुत करने का कार्य किया जाता था, इसी से इसका नाम 'स्पीकर' हो गया। लेकिन राजतन्त्र के स्थान पर लोकतन्त्र की स्थापना के बाद से अध्यक्ष पद पर आसीन यह पदाधिकारी बहुत ही कम बोलता है। ब्रिटेन में स्पीकर पद का ऐतिहासिक महत्त्व है, क्योंकि यह १३६६ से चला आ रहा है जबकि थामस हगरफोर्ड ब्रिटेन के प्रथम स्पीकर बने थे।

अध्यक्ष को ५ हजार पौण्ड वार्षिक वेतन व निवास के लिए वेस्टमिनिस्टर भवन मिलता है। पद निवृत्त होने पर उसे ४ हजार पौण्ड वार्षिक पेंशन मिलती है और उसे पियर पद प्रदान किया जाता है। १९१९ के लन्दन गजट द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार उसका पद 'लार्ड प्रेसीडेण्ट' के बाद आता है।

अध्यक्ष का चुनाव—लोकसदन के अध्यक्ष पद का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्षण उसकी निर्दलीयता और निष्पक्षता है और इसी कारण उसका चुनाव प्रायः सर्वसम्मति से होता है। एक बार अध्यक्ष पद पर कार्य कर चुकने के बाद यह व्यक्ति जब तक चाहे, तब तक पुनर्निर्वाचित हो सकता है। इस सम्बन्ध में यह भी परम्परा है कि महानिर्वाचन के अवसर पर अध्यक्ष को उसके निर्वाचन क्षेत्र से निर्विरोध ही लोकसदन का सदस्य निर्वाचित किया जाता है। किसी नवीन सदस्य को अध्यक्ष पद पर निर्वाचित करने का ढंग यह है कि प्रधानमन्त्री व विरोधी दल का नेता

परस्पर विचार करके, किसी ऐसे व्यक्ति को अध्यक्ष पद के लिए खडा करते हैं, जो बहुमत दल और विरोधी पक्ष दोनो को ही मान्य हो। सामान्यतया ऐसे व्यक्ति का नाम निश्चित किया जाता है जो अत्यन्त बुद्धिमान तथा कुशल हो और जिसे सदन के सभी पक्षो की सद्भावना और सम्मान प्राप्त हो। इस प्रकार जब अनौपचारिक रूप से किसी व्यक्ति के विषय मे निश्चय कर लिया जाता है, तो सदन मे बहुमत दल के एक साधारण सदस्य द्वारा उसका नाम अध्यक्ष पद के लिए प्रस्तावित किया जाता है और प्रतिपक्ष का एक साधारण सदस्य ही उसका अनुमोदन करता है। साधारण सदस्य द्वारा अध्यक्ष पद के लिए नाम का प्रस्ताव व अनुमोदन का कारण बतलाते हुए मुनरो ने लिखा है— साधारण सदस्यो द्वारा प्रस्ताव व अनुमोदन केवल यह बतलाने के लिए किये जाते हैं कि चयन मन्त्रियो द्वारा न होकर पूरे सदन का हुआ है।"[1] इसके बाद अध्यक्ष पद पर निर्वाचित व्यक्ति के लिए सम्राट की सहमति प्राप्त की जाती है। यह सहमति अब मात्र औपचारिकता ही है, क्योंकि सम्राट के द्वारा अन्तिम बार अपनी सहमति १६८७ में एडवर्ड सेमयर के सम्बन्ध मे व्यक्त की गई थी। उसके बाद सम्राट के द्वारा कभी भी इस सम्बन्ध मे असहमति व्यक्त नही की गई।

अध्यक्ष की शक्तियाँ और कार्य

इगलैण्ड की राजनीतिक व्यवस्था मे लोकसदन के अध्यक्ष का पद बहुत अधिक सम्मान तथा शक्ति का प्रतीक है। लोकसदन के अध्यक्ष की शक्तियो और कार्यों की विवेचना निम्न रूपो मे की जा सकती है

(१) **लोकसदन का सभापतित्व**—अध्यक्ष लोकसदन के अधिवेशनो का सभापतित्व करता है और सभापति के रूप मे सदन की समस्त कार्यवाही का सचालन करता है। वह इस बात का निर्णय करता है कि सदन के विचारार्थ कौन से प्रस्ताव रखे जाय। सशोधनो को भी वही छाटता और स्वीकार करता है। जब किसी विषय पर मत लिये जाते हैं तो वही उसके परिणाम की घोषणा करता है। लोक सदन की प्रत्येक बैठक के प्रारम्भ मे वह यह देखता है कि गणपूर्ति अर्थात् आवश्यक सख्या मे सदस्य उपस्थित हैं अथवा नही।

(२) **वादविवाद का सचालन**—सदन के वादविवाद का सचालन अध्यक्ष के द्वारा ही किया जाता है। क्योकि वर्तमान समय मे लोकसदन का कार्य भार बहुत बढ गया है और सदन के पास समय कम रहता है इसलिए अध्यक्ष की यह शक्ति बहुत महत्त्वपूर्ण हो गई है। यद्यपि वादविवाद के सम्बन्ध मे सदन की कुछ निश्चित परम्पराएँ है, किन्तु इस सम्बन्ध मे अन्तिम निर्णय अध्यक्ष ही करता है कि वादविवाद

1 The nominations then are made and recommended by the private members in order to perpetuate the fiction that the choice is the whole house and not that of the ministers' —M

मे किन सदस्यो द्वारा भाग लिया जाय। मन्त्रिमण्डल की ओर से किसी मन्त्री के बोल चुकने के बाद अध्यक्ष विरोधी दल के मुख्य प्रवक्ता को बोलने के लिए आमन्त्रित करता है। यद्यपि दल के सचेतक या नेता वक्ताओ की सूची पहले ही तयार कर लेते है जिसे अध्यक्ष स्वीकार कर लेता है, फिर भी वह इस बात का ध्यान रखता है कि स्वतन्त्र प्रकृति के सदस्यो, उच्चकोटि के वक्ताओ और अल्पमत वग के सदस्यो को अपनी बात कहने का पूरा अवसर मिले। इस सम्बन्ध मे वह न्याय और निष्पक्षता के साथ आचरण करते हुए सदन के वादविवाद के श्रेष्ठ स्तर को बनाये रखने का प्रयत्न करता है।

(३) **वादविवाद को सीमित करना**—सदन के समय का अधिकाधिक श्रेष्ठ उपयोग करने की दृष्टि से अध्यक्ष को वादविवाद सीमित करने का अधिकार भी प्राप्त होता है। यदि वह ऐसा समझे कि किसी विषय पर पर्याप्त वादविवाद हो चुका है, तो वह उस विषय पर वादविवाद समाप्त करने की आज्ञा दे सकता है। अध्यक्ष को इस सम्बन्ध मे 'कगारू समापन' (kangaroo closure) का महत्वपूर्ण अधिकार प्राप्त है, जिसका तात्पय यह है कि अध्यक्ष सम्पूर्ण सदन की समिति के अध्यक्ष के साथ मिलकर समस्त विधेयक और उस पर प्रस्तावित सभी सशोधनो के बजाय विधेयक के महत्त्वपूर्ण अशो और सशोधनो को ही वादविवाद के लिए चुन सकता है। सदन के काय को तीव्र गति से चलाने की दृष्टि से यह व्यवस्था की गई है।

(४) **सदन मे व्यवस्था और अनुशासन बनाये रखना**—सदन के सभापति के रूप मे उसका एक महत्वपूर्ण काय सदन मे व्यवस्था और अनुशासन बनाये रखना है। उसके पास न घण्टी होती है और न मुगरी (gavel) किन्तु व्यवस्था स्थापित करने मे उसे कोई कठिनाई नही होती। अशान्त सदन मे यदि अध्यक्ष खडा हो जाय, तो पूर्ण शान्ति छा जाती है, क्योकि परम्परा के अनुसार जब अध्यक्ष खडा हो, तो कोई अन्य सदस्य खडा नही रह सकता। डिजरायली के शब्दो मे, "अध्यक्ष की पोशाक की खडखडाहट ही गडबड को शान्त करने के लिए पर्याप्त होती है।"[1] अध्यक्ष किसी सदस्य का नाम लेकर सदन का ध्यान इस ओर आकर्षित कर सकता है कि वह सदस्य अनुशासनहीनता का आचरण कर रहा है। अध्यक्ष द्वारा ऐसा किये जाने पर सदन निश्चय करता है कि सम्बन्धित सदस्य के विरुद्ध क्या कायवाही की जाय। अध्यक्ष स्वय भी किसी सदस्य को कुछ दिनो तक के लिए सदन से निलम्बित कर सकता है। यदि कोई सदस्य अध्यक्ष की आज्ञानुसार सदन न छोडे, तो वह सार्जेण्ट से उसे बाहर निकलवा सकता है। सदन मे अत्यधिक अनुशासनहीनता होने पर वह सदन की कायवाही को निलम्बित कर सकता है लेकिन सामान्यतया ऐसा

1 Even the rustle of the Speaker's robe was enough to check an incipient riot —Disraeli

अवसर नहीं आते हैं। यदि कोई सदस्य सदन में असंसदीय भाषा का प्रयोग करे, तो वह उससे शब्द वापस लेने के लिए कह सकता है।

(५) **नियमों की व्याख्या**—अध्यक्ष वादविवाद तथा सुव्यवस्था के नियमों की व्याख्या करता तथा उन्हें लागू करता है। यदि कोई सदस्य 'व्यवस्था का प्रश्न (point of order) उपस्थित करता है तो अध्यक्ष को अपना निर्णय देना होता है। किन्हीं विषयों के सम्बन्ध में एक अध्यक्ष द्वारा दी गई व्यवस्थाएँ दूसरे अध्यक्षों के लिए परम्पराएँ बन जाती हैं और उन्हें भी वे मान्य होती हैं। अध्यक्ष ही [illegible] स्थगन प्रस्ताव' को नियमित या अनियमित घोषित करता है। सदन के [illegible] नियम के बारे में अध्यक्ष की व्याख्या अंतिम होती है। इसी आधार पर [illegible] ने चुटकी लेते हुए कहा था कि, स्पीकर भी पोप की तरह कोई [illegible] सकता।'

(६) **वित्त विधेयक को प्रमाणीकृत** (certify) करने का [illegible] के संसदीय अधिनियम के अनुसार लोकसदन के अध्यक्ष को [illegible] है कि यदि किसी विधेयक पर यह विवाद खड़ा हो जाए कि [illegible] अथवा नहीं, तो इस विषय पर लोकसदन के अध्यक्ष का [illegible] विधेयक वह है, जिसे अध्यक्ष 'वित्त विधेयक' प्रमाणित [illegible] १९४९ के संसदीय अधिनियम के अनुसार यदि [illegible] अधिवेशनों में पारित कर दे और वह लार्ड सभा [illegible] अध्यक्ष इस सम्बन्ध में सिफारिश कर सकता है कि [illegible] कारण मौलिक विधेयक में कौन से परिवर्तन [illegible] हित की दृष्टि से ही अपनी इस शक्ति का प्रयोग [illegible]

तथा १६३८ म फिट्जराय क निर्वाचन मे विरोध हुआ था । १६५० और १६६६ म भी चुनाव मे विरोध हुआ था । अध्यक्ष का निर्वाचन चाहे निर्विरोध हो या विरोध के आधार पर, निर्वाचित हो जाने पर जीवनपर्यन्त वह अपने आपको दलीय राजनीति से नितान्त पृथक और तटस्थ रखता है ।

निर्वाचित हो जाने पर वह अपने राजनीतिक दल से सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है और अपने सभी कष्टसाध्य कर्तव्यों को एक निष्पक्ष न्यायाधीश की भाँति सम्पादित करता है । उसकी निष्पक्षता का वर्णन करते हुए आग और जिंक ने लिखा है कि "वह सभा के अन्दर ही नहीं, अपितु बाहर भी दलबन्दी की छाया से अलग रहता है । सार्वजनिक रूप से वह दलगत प्रश्नो पर अपना विचार व्यक्त नहीं करता, वह अपने दल की सभा में कभी नही जाता और दल के पतो से कोई सम्पर्क नहीं रखता । वह राजनीतिक क्लबो में कभी कदम नहीं रखता । यहाँ तक कि वह अपने पुनर्निर्वाचन के लिए भी अभियान नहीं करता ।"[1] मुनरो के शब्दों मे "जहा तक मनुष्य के लिए सम्भव है यह अपने सभी कार्यों मे पूर्णत निष्पक्ष और दलबन्दी से परे होता है ।"[2] १६४५ म क्लिफ्टन ब्राउन ने अध्यक्ष के रूप म अपने सम्बन्ध मे कहा भी था कि ' अध्यक्ष के रूप मे म न तो सरकार का आदमी हूँ और न विरोधी दल का । म तो लोकसदन का आदमी हूँ और उससे बढकर म पीछे बठने वालो का आदमी हूँ ।"[3]

अध्यक्ष पद की इस निर्दलीयता क कारण ही अध्यक्ष का पद महान प्रतिष्ठा और गौरव का पद समझा जाता है और सदन के सभी पक्ष उसका पूर्ण सम्मान करते हैं । फाइनर लिखता ह कि "पिछले १५० वर्षों का यही प्रयत्न रहा है कि अध्यक्ष को लोकसदन के नियम और विधियो का मूर्तिमान रूप बनाया जाय और उसमें रत्तीमात्र भी दलबन्दी नही रहने दी जाय ।"[4] इस दृष्टि स ब्रिटिश लोकसदन के अध्यक्ष की स्थिति अमरीका की प्रतिनिधि सभा क अध्यक्ष से नितान्त भिन्न है,

[1] Ogg and Zink *Modern Foreign Governments* p 250
He is absolutely non-partisan in all his actions as it is possible for any human being to be ' —*Munro*

[3] As Speaker I am not the Government s man nor the oppositions man I am the House of Common s man and I believe above all the back benchers man '—(Quoted from N Hill and Others *The Background of European Governments* p 12)

[4] ' The endeavour of the last 150 years have been to make the Speaker the objective enbodiment of the rules and laws of the commons purging from him the last milligram of partisanship
—Finer, *The Major Governments of Modern Europe* p 105

लोकसदन के अध्यक्ष की अमरीकी प्रतिनिधि सभा क अध्यक्ष से तुलना अमरीकी सविधान के प्रतिनिधि सभा अध्याय के अन्तगत की गई है ।

क्योंकि प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष बहुमत दल द्वारा निर्वाचित व्यक्ति होता है और वह अपने कर्तव्यों का निर्वहन दलीय आधार पर ही करता है।

दलीय सचेतक
(The Party Whips)

'संसदीय पद्धति की प्रभावदायकता लोकसदन के अध्यक्ष के समान ही दलीय सचेतकों पर भी निर्भर करती है'[1] जो अपने-अपने दल के सदस्यों को अनुशासन में बनाये रखते हैं। 'ह्विप' शब्द का सम्बन्ध शिकार से है और इस शब्द का प्रयोग 'कुत्तों के प्रबन्धक' के लिए किया जाता है जो कोड़ा के द्वारा शिकारी कुत्तों को सही मार्ग पर रखते हैं। दलीय सचेतक अपने अपने दल के सदस्यों को अनुशासन और नियन्त्रण में रखते हैं। सत्तारूढ़ दल का मुख्य सचेतक संसदीय सचिव होता है और उसे राजकोष से वेतन मिलता है। अन्य सचेतकों को कोई वेतन नहीं मिलता। सत्तारूढ़ दल का मुख्य सचेतक प्रधानमन्त्री के निकट सम्पर्क में रहता है और उसके द्वारा किये जाने वाले महत्वपूर्ण कार्य की दृष्टि से उसे केर (W M Kerr) के शब्दों में 'प्रधानमन्त्री की बाहें, आँख और कान' कहा जा सकता है।

सचेतकों के मुख्य कार्य—(१) वे सदन में गणपूर्ति (Quorum) अर्थात् आवश्यक संख्या में उपस्थिति बनाये रखने का कार्य करते हैं। (२) उनके द्वारा अपने दल के सदस्यों को उनकी उपस्थिति के सम्बन्ध में आवश्यक आदेश जारी किये जाते हैं। विचारणीय प्रश्नों के महत्त्व के अनुसार इन आदेशों पर एक, दो या तीन रेखाएँ अन्कित होती हैं। तीन रेखाओं वाले आदेश का अर्थ होता है कि सदन में उनकी उपस्थिति अनिवार्य है, (३) वे सदस्यों को यह भी सूचित करते हैं कि उन्हें किस प्रकार मत देना है (४) वे मन्त्रियों तथा दलीय सचेतकों के बीच सम्पर्क स्थापित रखते हैं तथा मन्त्रियों को दलीय सदस्यों की भावनाओं से सूचित रखते हुए दल में आकस्मिक विस्फोट होने से बचाते हैं, (५) वे वादविवाद को सुव्यवस्थित करने का प्रयत्न करते हैं और अध्यक्ष को सूचित करते हैं कि उनके दल की ओर से किन्हें बोलने के लिए आमन्त्रित किया जाय (६) दोनों प्रमुख दलों के सचेतक मिलकर सदन की कार्यवाही के सम्बन्ध में योजना बनाते हैं, जिससे कि सीमित समय का अधिकाधिक श्रेष्ठ उपयोग किया जा सके।

लोकसदन की शक्तियाँ

ब्रिटेन में 'संसद की प्रभुसत्ता' की बात कही जाती है और वर्तमान समय में 'संसद की प्रभुसत्ता से आशय लोकसदन की प्रभुसत्ता' से ही है। लोकसदन के अधिकार और शक्तियों का उल्लेख निम्न रूपों में किया जा सकता है

[1] G M Carter & Others *op cit* p 113
W M Kerr *Foreign Governments and their Background* p 74

(१) विधायी शक्तिया—ब्रिटिश ससद मे दो सदन हैं लोकसदन और लाड सभा। ससद की प्रभुसत्ता की धारणा के अनुसार ब्रिटिश ससद किसी भी कानून का निर्माण कर सकती है, उसे रद्द कर सकती या सशोधित कर सकती है। १९११ के पूर्व तक तो ससद के दोनो सदनो (लॉर्ड सभा और लोकसदन) को समान शक्तियाँ प्राप्त थी, किन्तु १९११ और १९४९ के ससदीय अधिनियम पारित होने के पश्चात् अब इस सम्बन्ध मे अन्तिम शक्ति लोकसदन को ही प्राप्त है। लोकसदन द्वारा जब किसी विधेयक को पारित कर लाड सभा के पास भेजा जाता है और लाड सभा उसे अस्वीकार कर देती है तो लोकसदन द्वारा यह विधेयक दुबारा पारित किया जा सकता है और यदि दूसरे वाचन की तिथि तथा दूसरी बार विधेयक के तीसरे वाचन की तिथि मे एक वर्ष का समय हो चुका है, तो लॉड सभा द्वारा पारित किये जाने के बिना ही इसे दोनो सदनो द्वारा पारित समझा जाता है। इस तरह लाड सभा किसी विधेयक को केवल एक वर्ष के लिए रोक सकती है और अन्तिम शक्ति लोकसदन के ही पास है।

(२) वित्तीय शक्तियाँ—वित्तीय क्षेत्र मे लोकसदन की स्थिति और भी सुदृढ है। १९११ के ससदीय अधिनियम मे वित्त विधेयक की परिभाषा की गई है और लोकसदन का अध्यक्ष जिसे वित्त विधयक प्रमाणित कर, वही वित्त विधेयक समझा जायगा। वित्त विधेयक लोकसदन मे ही प्रस्तावित किया जा सकता है, लॉड सभा मे नही। लोकसदन द्वारा पारित किये जाने के बाद लाड सभा द्वारा एक माह की अवधि तक वित्त विधेयक पर विचार करने का काय किया जा सकता है। एक माह की अवधि बीत चुकने के बाद वित्त विधेयक या बजट दोनो सदनो द्वारा उसी रूप मे पारित समझा जायगा, जिस रूप मे लोकसदन ने उसे पारित किया था, चाहे लाड सभा उसे अस्वीकार करे या उसमे कोई सशोधन प्रस्तावित करे। इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र मे लाड सभा की स्थिति बहुत अधिक निबल है और लोकसदन को इस सम्बन्ध मे पूर्ण नियन्त्रण प्राप्त है।

(३) कार्यपालिका शक्तिया—इगलण्ड मे ससदात्मक प्रजातन्त्र है और ब्रिटिश कार्यपालिका पर पूर्ण नियन्त्रण लोकसदन का ही है, लाड सभा का नही। कार्यपालिका अर्थात मन्त्रिमण्डल लोकसदन के प्रति पूर्ण रूप मे उत्तरदायी होता है। लोकसदन के सदस्य मन्त्रियो से प्रश्न तथा पूरक प्रश्न पूछ सकते है। वे उनके विरुद्ध काम रोको प्रस्ताव तथा निन्दा प्रस्ताव पारित कर सकते हैं और इन सबके अतिरिक्त अविश्वास प्रस्ताव पारित कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत किया जा सकता है। लाड सभा के सदस्य मन्त्रिमण्डल से प्रश्न तथा पूरक प्रश्न तो पूछ सकते हैं, किन्तु अविश्वास प्रस्ताव पारित कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत नही कर सकते। यह काय केवल लोकसदन के द्वारा ही किया जा सकता है।

लोकसदन की स्थिति का मूल्याकन और उसके वास्तविक कार्य

सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटेन मे 'ससद की प्रभुसत्ता' है किन्तु जहाँ तक वह

आवश्यक समर्थन न दिये जाने पर प्रधानमन्त्री द्वारा लोकसदन को विघटित करवाया जा सकता है। केबीनेट पर यदि कोई नियन्त्रण है तो वह लोकसदन का नहीं, वरन् जैसा कि कार्टर लिखते हैं "दलीय नेताओं पर अन्तिम नियन्त्रण लोकसदन में पराजय का नहीं, वरन इस भय का होता है कि उनके द्वारा अपनाई गई नीतियों से दल में फूट पड़ जायगी और अगले चुनाव में उन्हें पराजित होना पड़ेगा।"[1]

वर्तमान समय में लोकसदन को व्यवस्थापन वित्त और प्रशासनिक नीति के निर्माण में अन्तिम स्थिति प्राप्त नहीं है, इससे यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए कि शासन व्यवस्था के समस्त चक्र में लोकसदन महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा नहीं करता। आज की स्थिति में, लोकसदन द्वारा किये जाने वाले महत्त्वपूर्ण कार्यों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) शासन को मर्यादित रखकर लोकतन्त्र की रक्षा—*व्यवस्थापन, वित्त और प्रशासन सभी क्षेत्रों में केबीनेट की स्थिति सर्वोपरि है, लेकिन लोकसदन के द्वारा* अपनी आलोचना के आधार पर शासन को मर्यादित रखने का कार्य किया जाता है। लोकसदन में की गई आलोचना सरकार को पदच्युत नहीं कर सकती, लेकिन इसका अपना महत्त्व है। शासन की आलोचना करते हुए विरोधी दल जनता को सम्बोधित करता है और सरकार को लोकमत के प्रति जागरूक करता है। कुछ निश्चित सीमाओं के अन्तर्गत रहते हुए शासक दल के सदस्यों द्वारा भी सरकार का ध्यान उसकी त्रुटियों के प्रति आकर्षित किया जा सकता है।

लोकसदन के द्वारा शासन को मर्यादित रखने के लिए प्रश्न पूछने, निन्दा प्रस्ताव और आलोचना प्रस्ताव का आश्रय लिया जाता है। प्रश्न शासक को जनमत के प्रति जागरूक बनाने का महत्त्वपूर्ण साधन है और इसके आधार पर सरकार तथा लोकसेवकों दोनों पर प्रभावशाली नियन्त्रण रखा जा सकता है। लास्की के शब्दों में "प्रश्न पूछने की प्रक्रिया के महत्त्वपूर्ण परिणाम होते हैं। इससे मन्त्रियों और विभागों के कार्यों को प्रकाश में लाया जाता है। प्रश्नों के कारण मन्त्री और प्रशासकीय कर्मचारी चौकन्ने रहते हैं और उन्हें ज्ञान रहता है कि उनके प्रत्येक कार्य पर विरोधी दल की आँखें लगी हैं और सर्वसाधारण उनकी कार्यक्षमता तथा ईमानदारी की परीक्षा कर रहा है।'[2]

1 The ultimate check on party leaders is not the fear of a defeat in the House of Commons but the fear that the policies they favour will split their party or that these policies will loose them the next election —G M Carter and Others *The Government of Great Britain* p 120

2 "The process of questioning has important results It brings the work of the departments of state into public view It makes them realize that they are functioning under a close public scrutiny which will continuously test their efficiency and honesty

—H J Laski, *Parliamentary Government in England* p 151

(३) कंगारू समापन (Kangaroo Closure)—आस्ट्रेलिया में एक पशु कंगारू होता है जो चलने के बजाय एक स्थान से दूसरे स्थान पर छलांग लगाता रहता है, उसी के नाम पर इस प्रक्रिया का नाम 'कंगारू समापन' रखा गया है। इस प्रक्रिया का प्रयोग किसी विधेयक पर प्रस्तावित किये गये संशोधनों का निबटारा करने के लिए किया जाता है। जब किसी विधेयक पर इतने अधिक संशोधन प्रस्तावित किये जाते हैं कि सदन के लिए इन सभी संशोधनों पर विचार करना सम्भव नहीं होता, तो सदन का अध्यक्ष सम्पूर्ण सदन की समिति के चेयरमैन के साथ मिलकर कुछ महत्त्वपूर्ण संशोधनों को विवाद के लिए चुन लेता है और शेष को छोड़ देता है। केवल इन छोड़े हुए महत्त्वपूर्ण संशोधनों पर ही विचार किया जाता है। इस तरह कंगारू की भांति विधेयक के संशोधनों पर छलांग लगाने का जो कार्य किया जाता है उसे 'कंगारू समापन' कहते हैं।

इंगलैण्ड की समिति प्रणाली

वर्तमान समय में कानून निर्माण का कार्य बहुत अधिक बढ़ गया है और इसके साथ ही यह कार्य बहुत अधिक जटिल हो गया है। ऐसी स्थिति में सदन के साधारण बुद्धि वाले सदस्यों से इस बात की आशा नहीं की जा सकती कि उनके द्वारा अपने सीमित समय में सभी विषयों पर उचित प्रकार के कानूनों का निर्माण किया जा सके। कानून निर्माण के कार्य में वृद्धि और कार्य की जटिलता की इस दोहरी कठिनाई को दूर करने के लिए सभी देशों में 'समिति प्रणाली' (Committee System) को अपनाया जाता है। विधेयकों पर विस्तृत और पूर्ण वादविवाद का कार्य समितियों द्वारा कर लिया जाता है, जिससे सदन का बहुमूल्य समय बच जाता है और विचाराधीन विधेयकों पर बहुत अधिक अच्छे प्रकार से विचार करने का कार्य सम्पन्न हो जाता है।

वर्तमान समय में तो विश्व के सभी देशों द्वारा समिति प्रणाली को अपना लिया गया है लेकिन इस प्रणाली का प्रादुर्भाव इंगलैण्ड में ही हुआ। इसका उदय रानी एलिजाबेथ प्रथम के समय में हुआ जब विधेयकों पर अच्छे प्रकार से विचार करने के लिए उन्हें प्रवर समितियों के सुपुर्द किया जाता था। समिति प्रणाली को संगठित और व्यवस्थित रूप १८८२ में प्रदान किया गया। वर्तमान समय में लोक कल्याणकारी राज्य की धारणा को अपनाने से राज्य के कार्य बढ़ जाने के कारण समिति प्रणाली का महत्त्व और भी बढ़ गया है।

समितियों का कार्य

वर्तमान समय में व्यवस्थापन के क्षेत्र में समितियों के द्वारा बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण इकाई के रूप में कार्य किया जाता है इस कारण कुछ क्षेत्रों द्वारा इस धारणा को अपना लिया गया है कि वास्तविक व्यवस्थापन समितियाँ ही करती हैं या इस क्षेत्र में समितियों का कार्य मुख्य व सदन का कार्य गौण है। लेकिन वस्तुतः

स्थिति ऐसी नही है। इगलैण्ड म विधेयक के आधारभूत सिद्धात निश्चित करन का काय सदन के द्वारा ही किया जाता है और समितियाँ तो केवल विधयक के प्रारूप म आवश्यक सुधार करने का ही काय करती हैं। समिति यदि विधेयक के मूल रूप स सहमत नही है, तो भी उसके द्वारा विधेयक के जीवन का अत नही किया जा सकता। वे अपनी सिफारिशो के साथ विधेयक वापस सदन म भेजने के लिए बाध्य होती हैं। समिति द्वारा की गयी सिफारिशो के सम्बध म भी अन्तिम निणय सदन के ही द्वारा किया जाता है। सदन इन सिफारिशो पर विचार कर उन्ह स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है। इस प्रकार व्यवस्थापन काय म समितियो की स्थिति सदन के प्रति आधीनता की ही है। इस प्रकार समितियो का काय विधयक के सम्बध म परामश देना ही है निणय करना नही। डॉ० हरमन फाइनर ने इस सम्बध मे कहा है कि 'अपनी स्थिति और काय की दृष्टि से समितियो की स्थिति सम्पूण सदन के प्रति आधीनता की है। उनकी शक्ति इतनी नहीं कि है कि विधेयको को जीवित रख सकें या उन्ह समाप्त कर सकें। उनकी स्थिति सहायक परिचारिकाओ जसी ही है जो विधेयक के सशोधनो की सफाई करती हैं।'[1]

समितियों के प्रकार—ब्रिटिश लोकसदन म पाच प्रकार की समितिया हैं, जिनका उल्लेख निम्न प्रकार से है

(१) *सम्पूण सदन की समिति* (Committee of the whole House)—जसा कि नाम म ही स्पष्ट है इस समिति म सदन के सभी सदस्य होते हैं, किन्तु यह समिति सदन से अनेक बातो म भिन्न है। प्रथमत समिति की अध्यक्षता लोकसदन का अध्यक्ष नही करता वरन समिति का अपना अलग अध्यक्ष होता है जो कि प्रत्यक नवीन लोकसदन के प्रारम्भ मे नये सिरे स चुना जाता है। इसका चुनाव समिति स्वय ही करती है और वह बहुमत दल का वरिष्ठ सदस्य होता है। द्वितीयत सम्पूण सदन की समिति का चेयरमन स्पीकर की कुर्सी पर नही बठता, वरन क्लक के पास ही एक अन्य कुर्सी पर बठ जाता है। अध्यक्ष की सत्ता का प्रतीक 'मेस' (Mace) मेज पर से हटाकर नीचे रख दिया जाता है। तृतीयत और सर्वाधिक महत्त्वपूण अन्तर यह है कि जब सदन सम्पूण सदन की समिति के रूप मे बठता है तो सदन की प्रक्रिया के नियमो को लचीला कर दिया जाता है जिसस कि सम्बन्धित विषय पर सुविधा के साथ पूण वादविवाद किया जा सके। कोई भी सदस्य एक ही प्रश्न या विषय पर एक से अधिक बार बोल सकता है, सम्पूण सदन की समिति म प्रस्तावो के अनुमोदन की आवश्यकता नही पडती और न ही विषय पर समान प्रस्ताव को अपनाकर विवाद समाप्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त जिस विषय पर बहस बन्द हो चुकी

[1] Committees are utterly subordinate to the whole House in their status and role They do not possess the power of life and death over bills they are lowly brand maidens to help clean up amendments —*Herman Finer*

है, आवश्यक समझे जाने पर उस पर दुबारा बहस प्रारम्भ की जा सकती है। ऑग और जिंक के शब्दों में 'सदन की तुलना में समिति में कार्यविधि कम औपचारिक तथा कम कठोर होती है। कार्यवाही के इस लचीलेपन से महत्त्वपूर्ण और पेचीदे मामलों को सुलझाना सम्भव हो जाता है, यद्यपि कार्य की गति धीमी हो जाती है।"

सम्पूर्ण सदन की समिति के द्वारा मुख्यतया वित्त विधेयकों पर विचार किया जाता है। वित्त विधेयकों के प्राय दो भाग होते हैं आय से सम्बन्धित भाग और व्यय से सम्बन्धित भाग। समिति जब आय से सम्बन्धित भाग पर विचार करती है तब उसे **'साधन समिति'** (Committee of ways and means) कहा जाता है और जब वह व्यय से सम्बन्धित भाग पर विचार करती है, तब उसे पूर्ति समिति (Committee of supply) कहा जाता है। इसके अतिरिक्त बहुत महत्त्वपूर्ण और आवश्यक समझे जाने वाले विधेयक भी सदन के द्वारा प्रस्ताव पास कर सम्पूर्ण सदन की समिति के सम्मुख रखे जा सकते है।

जब समिति किसी विषय पर पूर्ण रूप से विचार कर चुकती है तब यह प्रस्ताव रखा जाता है कि समिति उठे और अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करे। इसके पश्चात् स्पीकर अपनी कुर्सी पर बैठ जाता है और समिति का चेयरमैन सदन के सम्मुख अपनी रिपोर्ट प्रस्तावित करता है।

(२) **स्थायी समितियां** (Standing Committees)—लोकसदन में ५ स्थायी समितियां हैं और लार्ड सभा में केवल एक। लोकसदन की इन स्थायी समितियों के नाम अमरीकी प्रतिनिधि सभा की समितियों के समान विषयवार नहीं हैं। चार समितियों के नाम A, B, C, D है और पांचवी समिति है 'स्काटिश स्थायी समिति'। अधिकांश विधेयक द्वितीय वाचन के बाद स्थायी समिति के पास ही भेजे जाते हैं। प्रत्येक समिति में लगभग २० स्थायी सदस्य होते हैं और प्रत्येक विधेयक पर विचार करने के लिए लगभग २८-३० सदस्यों को समिति में सम्मिलित कर लिया जाता है। समिति के ये सदस्य सदन में विभिन्न दलों के अनुपात के अनुसार रहते हैं यद्यपि सदस्यों के चुनाव में उनकी व्यक्तिगत अभिरुचियों योग्यताओं और भौगोलिक प्रतिनिधित्व का भी ध्यान रखा जाता है। सदस्यों की नामजदगी 'चयन समिति' (Committee of selection) द्वारा की जाती है। चयन समिति सदन द्वारा चुने गये सदस्यों की एक समिति होती है जिसमें ११ सदस्य होते है। स्थायी समिति के सभापति को लगभग एक दर्जन सदस्यों की सूची या पनल (जिसे अध्यक्ष नियुक्त करता है) में से लिया जाता है। सभापति की नियुक्ति एक विधेयक विशेष पर विचार करने के लिए ही होती है और कार्य समाप्ति पर वह हट जाता है।

स्काटलैण्ड की स्थायी समिति में स्काटलैण्ड के चुनाव क्षेत्रों द्वारा नामजद किये गये ३० सदस्य होते हैं। इसके अतिरिक्त २० अन्य सदस्य इसमें मनोनीत किये जाते हैं। यह समिति स्काटलैण्ड से सम्बन्धित विधेयकों पर ही विचार करती है।

इगलैण्ड के अ तगत वतमान समय म स्थायी समितिया म सुधार की आव श्यकता अनुभव की जा रही है। ऐसा कहा जाता है कि ५० सदस्यो की इस समिति मे किन्ही भी विपया पर आवश्यक गम्भीरता के साथ विचार करना सम्भव नहीं होना। अत समिति के सदस्या की सख्या कम की जानी चाहिए। व्यवस्थापन काय बहुत अधिक वढ जाने क कारण यह भी सोचा जा रहा है कि वतमान समय की ५ स्थायी समितियो क स्थान पर १० स्थायी समितिया की स्थापना की जानी चाहिए। एक सुझाव यह भी दिया जा रहा है कि इगलैण्ड मे भी स्थायी समितियो का गठन अमरीका के समान विपयवार किया जाना चाहिए, जिसस विशेपज्ञा का इस समिति मे स्थान दिया जा सके।

(३) प्रवर समितिया (Select Committees)—य समितिया ऐस विषयका पर विचार करने के लिए बनाई जाती है जिनका विषय एकदम नया हो, जिन पर विचार करन के लिए विशेपज्ञता की आवश्यकता हो, या जिनक द्वारा बहुत अधिक महत्त्वपूण परिवतन (लगभग आमूल परिवतन) किया जाने वाला हो। प्रत्येक प्रवर समिति मे प्राय १५ सदस्य होते हैं और य उन विपयो के विशेपज्ञ होते हैं, जिनसे सम्बन्धित विधेयक समिति को सौपे जाते हैं। प्रवर समितिया व्यक्तियो को गवाही के लिए बुला सकती है और आवश्यक पत्र तथा रिकार्डो को भी मँगा सकती है। सौंपे गये विषय की छानवीन और परीक्षा करके यह अपनी रिपोट सदन को देती हैं जो इसकी सिफारिशो को स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है। व्यवहार मे, सदन प्रवर समिति की रिपोट को बहुत अधिक महत्व देता है। प्रवर समिति स्थायी समिति की अपक्षा अधिक स्वतन्त्र होती है, क्योकि इसके सदस्य अधिक प्रभावशाली और विशेपज्ञ होते हैं और दलीय सचेतको को उनके काय म हस्तक्षेप का अवसर कम ही मिलता है।

(४) सत्रीय समितिया (Sessional Committees)—कुछ प्रवर समितिया प्रत्यक सत्र के आरम्भ म सम्पूण सत्र के लिए बनाई जाती हैं और इन्हे विशिष्ट विषय सौपे जाते हैं, इन्हे ही 'सत्रीय समितिया' कहा जाता है। इनकी सख्या ८ स १० तक होती है जिनम कुछ उल्लेखनीय सत्रीय समितियाँ य है चयन समिति, विशेपाधिकार समिति, अनुमान समिति, स्थायी आदेश समिति, सावजनिक लेखा समिति व परिनियम व्यवस्थापन समिति। इन समितिया मे सबसे प्रमुख चयन समिति होती है जिसम ११ सदस्य होते हैं। चयन समिति मे सभी दलो का प्रति निधित्व रहता है। चयन समिति ही स्थायी समितिया, प्रवर समितिया व अनुमान समिति आदि के लिए सदस्य नामजद करती है।

(५) निजी विधेयक समितियाँ (Private Bills Committees)—निजी विधेयक समितिया केवल निजी विधेयको पर ही विचार करन का काय करती है। लोकसदन म निजी विधेयक समिति के सदस्यो की सख्या चार और लॉड सभा म पाँच होती है। इनके सदस्य चयन समिति द्वारा उस सूची म से लिए जात हैं जिसे

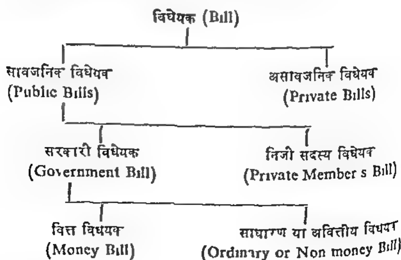
दलो के सचेतक तयार करते हैं। समिति का चेयरमेन समिति के सस्दया म स ही चयन समिति द्वारा नामजद किया जाता है।

यह समिति एक 'अद्ध न्यायिक सस्था' (Half Judicial Body) का भाति काय करती है। इसके सदस्या को यह घोषण करनी होती है कि उनका किसी विधेयक मे कोई निजी स्वाथ नही है। समिति निजी विधेयक से प्रभावित होन वाले सभी व्यक्तियो, सस्थाओ और हितो को सुनती है और वकील भी समिति के सम्मुख प्रस्तुत होकर अपनी युक्तिया दे सकते हैं। समिति सभी बाता पर विचार करके पूण निष्पक्षता क साथ अपना प्रतिवेदन तयार करती है। यद्यपि सदन समिति का प्रतिवेदन स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है किन्तु व्यवहार म सदन के द्वारा इसके प्रतिवेदन का प्राय स्वीकार कर लिया जाता है

सयुक्त समितियाँ (Joint Committees)—उपरोक्त समितिया के अतिरिक्त कभी कभी किसी विशेष प्रश्न पर विचार करने के लिए दोनो सदना की एक सयुक्त समिति नियुक्त कर दी जाती है। इसका सभापति साधारणतया कोइ पियर होता है और इसकी रिपोट दोनो सदनो मे प्रस्तुत की जाती है। उदाहरणस्वरूप, १९०३ म 'भारतीय शासन अधिनियम' मे सुधार के लिए 'सयुक्त प्रवर समिति' नियुक्त की गई थी। इस प्रकार की समितिया ग्रेट ब्रिटन म बहुत ही कम बनाई जाती हैं।

विधि निर्माण की प्रक्रिया
(Law Making Procedure)

विधेयको के प्रकार—ब्रिटेन म विधेयक कई प्रकार के होत हैं जिनका सुविधाजनक रूप मे अध्ययन निम्न प्रकार से किया जा सकता है



इगलण्ड और अमरीका का समिति व्यवस्था का तुलना अमरीकी सविधान के सम्बन्ध अध्याय म की गई है।

सावजनिक विधेयक (Public Bills)—सार्वजनिक विधयक का सम्बन्ध सवसाधारण से होता है जसे शिक्षा पद्धति या करो म कोई सशोधन या परिवतन लाने वाला विधेयक । मुनरो के अनुसार "ब्रिटेन मे सावजनिक विधेयक उसको कहा जाता हे जो साधारण जनता के हितो को प्रभावित करता है और समस्त जनता से सम्बन्धित होता है । उदाहरणस्वरूप, मताधिकार पद्धति मे परिवतन करने वाला या बच्चो के लिए अनिवाय शिक्षा की आयु मे परिवतन करने वाला अथवा किसी सावजनिक विभाग को स्थापना करने वाला विधेयक सावजनिक विधेयक कहलाता है।"[1]

असावजनिक विधेयक (Private Bills)—असावजनिक विधेयक किसी विशेष स्थान, सस्था या व्यक्ति से सम्बन्ध रखता है। अगर कोई विधेयक किसी को जमीन खरीदने या व्यापार करने का अधिकार देता है या किसी नगरपालिका के अधिकारो को बढाता है, तो उसे समुदाय विशेष या स्थान विशेष से सम्बन्धित होने के कारण असार्वजनिक विधेयक कहा जाता है । मुनरो के अनुसार "एक असावजनिक विधेयक वह है जो किसी नियम अथवा स्थानीय क्षेत्र या नगरपालिका अथवा किसी विशेष व्यक्ति समूह से सम्बन्धित है।"[2]

सावजनिक विधेयक दो प्रकार के होते है

(अ) सरकारी विधेयक (Government Bills)—जिन सावजनिक विधेयको को मन्त्रिमण्डल के सदस्यों द्वारा सरकार के नाम से सदन मे प्रस्तुत किया जाता है, उन्हे सरकारी विधेयक कहते हैं । अधिकाश सावजनिक विधेयक सरकारी ही होते हैं।

(ब) निजी सदस्य विधेयक (Private Member's Bills)—ये वे सावजनिक विधेयक होते हैं, जिन्हे मन्त्रियो के अतिरिक्त सदन के अन्य किसी सामान्य सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जाता है ।

सरकारी विधेयको को पुन दो भागो म बाटा जा सकता है

(अ) वित्त विधेयक (Money Bills)—जिन विधेयको का सम्बन्ध वित्त अर्थात् आय व्यय, कर आदि से होता है, उन्हे वित्त विधेयक कहते हैं । वित्त विधेयक सरकारी तौर पर ही प्रस्तुत किये जाते हैं, निजी तौर पर सदन के सदस्यो द्वारा उन्हे प्रस्तुत नही किया जा सकता ।

(ब) साधारण विधेयक (Ordinary Bills)—वित्तीय विधेयको के अतिरिक्त अन्य विधेयक साधारण विधेयक कहलाते हैं । इस प्रकार के विधेयक जब मन्त्रियो द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, तो उन्हे सरकारी विधेयक और निजी तौर पर सामान्य सदस्य द्वारा रखे जाने पर उसे निजी सदस्य विधेयक कहते है ।

सार्वजनिक विधेयक के पारित होने की प्रक्रिया
(Procedure of Public Bills)

साधारणतया कोई भी विधेयक ससद के दोनो म से किसी भी सदन मे

[1] Munro, *Governments of Europe* p 182
[2] Munro, *Ibid* p 182

प्रस्तावित किया जा सकता है, परन्तु कोई भी वित्त विधेयक लोकसभा में ही प्रस्तावित किया जा सकता है। प्रत्येक विधेयक को कानून का रूप ग्रहण करने के लिए निम्न अवस्थाओं में होकर गुजरना होता है

प्रस्तुतीकरण व प्रथम वाचन—व्यवस्थापन की प्रक्रिया में प्रथम स्तर विधेयक के प्रस्तुतीकरण व प्रथम वाचन का होता है। कोई भी सार्वजनिक विधेयक सिद्धान्ततः किसी भी संसद सदस्य द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है, किन्तु व्यवहार में सभी महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक विधेयक सरकार की ओर से किसी मन्त्री द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं।

विधेयकों को प्रस्तुत करने की तीन विधियाँ प्रचलित हैं। पहला विधि 'साधारण प्रस्तुतीकरण' की है। इसके अन्तर्गत विधेयक के प्रस्तावक को विधेयक प्रस्तुत करते हुए किसी प्रकार का भाषण नहीं देना होता। सम्बन्धित सदस्य विधेयक को प्रस्तुत करने की लिखित सूचना सदन के लिपिक को देता है। अध्यक्ष विधेयक को विधिवत प्रस्तुत करने के लिए उसे बुलाता है। वह आकर विधेयक सदन के लिपिक के पास जमा कर देता है तथा वह स्वयं या सदन का लिपिक विधेयक का शीर्षक पढ़कर सुना देता है। इसके बाद प्रस्ताव किया जाता है कि विधेयक का प्रथम वाचन हुआ समझा जाय और विधेयक को छपवाने की आज्ञा दी जाय। इस प्रस्ताव के स्वीकार होने पर, जो कि साधारणतया स्वीकार हो ही जाता है, विधेयक का प्रस्तुतीकरण व प्रथम वाचन समाप्त हो जाता है।

प्रस्तुतीकरण की दूसरी विधि 'दस मिनट के नियम का प्रस्तुतीकरण' है, जिसे महत्त्वपूर्ण और विवादग्रस्त विधेयकों के सम्बन्ध में अपनाया जाता है। इस विधि के अन्तर्गत विधेयक के प्रस्तावक को अवसर दिया जाता है कि वह विधेयक का उद्देश्य और उसका महत्त्व बतला सके। तब विपक्ष के एक सदस्य को विधेयक की आलोचना सदन के समक्ष रखने का अवसर दिया जाता है। इसके बाद प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाता है कि विधेयक का प्रथम वाचन पूरा समझा जाय और उसे छपवाने की आज्ञा दी जाय। इस प्रस्ताव के स्वीकृत होने पर विधेयक का प्रस्तुतीकरण व प्रथम वाचन पूरा हो जाता है।

प्रस्तुतीकरण की तीसरी विधि को **'विधेयक की व्यवस्था पर प्रकाश डालने वाला प्रस्तुतीकरण'** कहते हैं। इस विधि के अन्तर्गत प्रस्तावक अपने विधेयक के सिद्धान्तों व लाभों को बतलाते हुए एक विस्तृत भाषण देता है और प्रस्ताव करता है कि उसे विधेयक प्रस्तुत करने की अनुमति दी जाय। विपक्ष विधेयक के सिद्धान्तों का विरोध करते हुए प्रस्ताव का विरोध करता है। अन्त में, निर्णय मतदान द्वारा होता है। यदि निर्णय प्रस्ताव के पक्ष में होता है तो फिर प्रस्ताव रखा जाता है कि विधेयक का प्रथम वाचन पूर्ण समझा जाय और उसे छपवाने की अनुमति दी जाय। इस विधि को अपनाने पर विधेयक के प्रति लोकमत का निर्माण सरलता से

हो जाता है, लेकिन इस विधि मे बहुत अधिक समय व्यय होता है और इसीलिए वतमान समय मे इसका प्रयोग बहुत कम किया जाता ह ।

द्वितीय वाचन—किसी भी विधेयक के जीवन म सबम महत्त्वपूण अवस्था द्वितीय वाचन की होती है । इरस्काइन (Erskine) का कथन है कि 'द्वितीय वाचन विधेयक के जीवन म अत्यत महत्त्वपूण स्थिति होती है, क्योकि इस अवस्था पर इसके आधारभूत सिद्धान्ता की परीक्षा होती ह और सदन विधेयक पर अपना मत प्रकट कर इस स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है ।" जब निश्चित तिथि पर विधेयक प्रस्तावित किया जाता है तो उसक उद्देश्यो और सिद्धान्ता पर व्यापक वादविवाद किया जाता है । यह वादविवाद इस पर वात केन्द्रित होता है कि विधेयक की आवश्यकता है अथवा नही और विधेयक के उद्देश्य तथा सिद्धान्त उचित है अथवा नही । इस वादविवाद के पश्चात विधेयक पर सदन म मतदान होता ह । बहुमत द्वारा विधेयक का स्वीकार किये जाने पर उस सम्बन्धित समिति के पास भेज दिया जाता है और अस्वीकार किये जाने पर विधेयक के जीवन का अन्त हो जाता है । निजी सदस्यो के विधेयक साधारणतया इस स्तर पर समाप्त हो जाते ह, किन्तु सरकारी विधेयक सदन स पारित हो जाते हैं, क्योकि उन्ह लोकसदन के बहुमत दल का समथन प्राप्त होता है । यदि कोई सरकारी विधेयक लोकसदन स स्वीकृत नही हो पाता, तो इसका आशय यह लिया जाता है कि मन्त्रिमण्डल लोकसदन का विश्वास खो चुका है और उसे त्यागपत्र देना होता है । कई बार ऐसा होता है कि जब द्वितीय वाचन मे विधेयक का तीव्र विरोध होता है, तो मन्त्रिमण्डल स्थिति को दृष्टि म रखते हुए स्वय ही विधेयक को वापस ले लेता है ।

द्वितीय वाचन के सम्बन्ध म महत्त्वपूण बात यह है कि इसके अन्तगत विधेयक के उद्देश्यो और सिद्धान्तो पर ही वादविवाद किया जाता है, विधेयक की धाराओ पर विस्तृत रूप से वादविवाद नहीं किया जाता और न विधेयक पर सशोधन ही प्रस्तावित किय जा सकते है । सावजनिक विधेयको म यदि विरोधी दल बाधा पहुचाना चाहे, तो वह प्रस्ताव कर सकता है कि इस विधेयक का द्वितीय वाचन ६ मास पश्चात किया जाय या ऐसी तिथि निश्चित कर सकता है जिस दिन ससद का अधिवेशन न हो । ऐसी स्थिति म विधेयक अनिश्चित काल के लिए टल सकता है । यह काय वादविवाद के पहले किया जा सकता ह ।

समिति स्तर—द्वितीय वाचन म विधेयक के सिद्धान्त सदन द्वारा स्वीकृत हो जाने पर विधेयक समिति के पास जाता है । यदि वह वित्त विधेयक है तो उसे सम्पूण सदन की समिति मे भेजा जाता है अन्यथा स्थाई समितियो म स किसी एक सम्बन्धित समिति के पास भेज दिया जाता है । विधेयक पर विचार हेतु विशेषज्ञता की जरूरत होने पर उसे 'प्रवर समिति' म भेज दिया जाता है, पर प्रवर समिति म विधेयक पर विचार किये जाने के बाद भी उसे किसी न किसी स्थायी समिति या सम्पूण सदन की समिति के पास विचाराथ भेजा जाता है ।

विधेयक के जीवन मे समिति स्तर का बडा महत्व है, क्योकि इस अवस्था मे विधेयक की प्रत्येक धारा पर विस्तारपूर्वक विचार होता है और उसे स्वीकार किया जा सकता, सशोधित किया जा सकता या रद्द किया जा सकता है। विधेयक के आधारभूत सिद्धात तो सदन द्वारा पहले से स्वीकार किय जा चुकत है, समिति अवस्था मे विधेयक की प्रारूप सम्बन्धी त्रुटियो को दूर करने का काय किया जाता है। समिति स्तर पर विधेयक पर पूण रूप स और अनौपचारिक ढग स वादविवाद किया जाता है।

प्रतिवेदन स्तर—अमरीका की समितियो की तरह इगलण्ड की समितियो को विधेयक को अस्वीकार करने या बिना कुछ किये उसे रख छोडने का अधिकार नही है। समितिया विधेयक को अपन प्रतिवेदन के साथ सदन को लौटाती हैं और सदन समिति के प्रतिवेदन को स्वीकार या अस्वीकार कर सकता है या उस सशो धित कर सकता है। सदन विधेयक को समिति के पास पुन विचार के लिए भी भेज सकता है। उन विधेयको के विषय मे, जिन पर सम्पूण सदन की समिति म विचार किया गया था, प्रतिवेदन स्तर औपचारिक ही होता है तथा सदन बिना किसी विशेष वादविवाद के प्रतिवेदन स्वीकार कर लेता है। अ य विधेयको के लिए प्रतिवेदन स्तर महत्वपूण होता है क्योकि विधेयक के प्रारूप तथा उसकी धारा, प्रतिधारा पर पूण विचार प्रतिवेदन स्तर म ही किया जाता है।

ततीय वाचन—प्रतिवेदन स्तर के बाद विधेयक तृतीय वाचन म प्रवेश करता है। तृतीय वाचन म अध्यक्ष प्रस्ताव करता है कि विधेयक तीसरी बार पढा जाय। ततीय वाचन मे भी विधेयक के सिद्धातो पर ही विचार होता है उस पर शब्द प्रति शब्द या वाक्य प्रति वाक्य विचार नही होता। इस वाचन म विधेयक मे नियमित सशोधन नही किय जाते और न ही कोई सारभूत परिवतन किया जाता है। अत म, यदि आवश्यक होता है, तो मतदान होता है और सदन द्वारा विधेयक स्वीकार किये जाने पर वह दूसरे सदन मे भेज जाने के योग्य हो जाता है।

दूसरे सदन मे प्रक्रिया—प्रथम सदन म विधेयक के पारित हो जाने के बाद उस पर अध्यक्ष के हस्ताक्षर होते हैं और उसे दूसरे सदन म भेजा जाता है। वहाँ फिर से विधेयक इन्ही पाच अवस्थाओ से होकर गुजरता है। यदि दूसरा सदन भी इस विधेयक को पारित कर दे, तो विधेयक सम्राट की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है और सम्राट के हस्ताक्षर से यह विधेयक कानून का रूप ग्रहण कर लेता है।

दोनो सदनो मे मतभेद—यदि दूसरा सदन विधेयक म सशोधन करता है तो विधयक पुन प्रारम्भिक सदन के पास भेजा जाता है। विधेयक को आरम्भ करने वाला सदन यदि सशोधन स्वीकार कर ले, तो विधेयक सम्राट के पास हस्ताक्षर के लिए भेज दिया जाता है। यदि विधेयक प्रारम्भ करने वाला सदन दूसरे सदन के सशोधनो को अस्वीकार करता है और यदि लॉर्ड सभा आरम्भ करने वाला सदन है

तो विधयक का अन्त कर दिया जाता है। यदि विधेयक लोकसदन म प्रस्तावित हुआ और लाड सभा न विधेयक मे ऐसे सशोधन किये हैं, जो लोकसदन को स्वीकार नही है तो १९११ और १९४९ के ससदीय अधिनियम पारित होने के बाद स्थिति यह है कि यदि लोकसदन उसे दो लगातार सत्रो म पारित कर द और यदि पहली बार विधेयक के दूसर वाचन की तिथि और दूसरी बार विधेयक क तीसरे वाचन की तिथि म कम स कम एक वष का समय बीत चुका हो, तो विधेयक दोना सदना द्वारा पारित समझा जाता है और उसे सम्राट् के पास हस्ताक्षर के लिए भेज दिया जाता है। इस तरह मतभेद की स्थिति म लाड सभा किसी साधारण विधयक को केवल एक वर्ष के लिए रोक सकती है।

वित्त विधेयको के पारित होने की प्रक्रिया
(Procedure for Money Bills)

वित्त विधेयका का सम्बन्ध आर्थिक विषया म होता है। ऐसे विधेयक लोकसदन म ही प्रस्तावित किय जा सकते है। १९११ के ससदीय अधिनियम के अनुसार कोई विधेयक वित्त विधेयक है अथवा नही, इस सम्बन्ध म सन्देह अथवा विवाद उत्पन्न होने पर उसका निणय लोकसदन के अध्यक्ष द्वारा किया जाता है और लोकसदन के अध्यक्ष द्वारा प्रमाणीकृत विधेयक ही वित्त विधेयक समझे जाते है।

सभी वित्त विधेयक सरकार के द्वारा ही प्रस्तुत किय जाते ह और निजी सदस्यो क द्वारा कोई वित्त विधेयक प्रस्तुत नही किया जा सकता। ब्रिटेन मे राजकोष पर लोकसदन का पूण नियन्त्रण है। प्रतिवष ससद आय व्यय का लेखा पारित करती है। यह लेखा, जिसे बजट कहा जाता है, राजकोष विभाग के द्वारा तयार किया जाता है। सभी विभागो से आय व्यय के प्रस्ताव प्राप्त कर लिए जाते हैं और उनका एकीकरण करके बजट की मोटी रूपरखा मन्त्रिमण्डल के सम्मुख रखी जाती है और मन्त्रिमण्डल द्वारा इस स्वीकार कर लिए जान पर इसके आधार पर व्यापक बजट तैयार कर वित्तमन्त्री द्वारा फरवरी मास म लोकसदन क सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है।

लोकसदन के सम्मुख बजट को दो भागो म प्रस्तुत किया जाता है प्रथम भाग व्यय (Appropriation measure) स सम्बन्धित होता है और दूसरा आय (Revenue measure) स। सवप्रथम बजट का व्यय भाग जनवरी क अन्त या फरवरी क प्रारम्भ मे लोकसदन के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है। द्वितीय वाचन के बाद इसे 'लोकसदन की सम्पूण समिति' क पास भेजा जाता है। सम्पूण सदन की समिति जब व्यय प्रस्तावो पर विचार करती है तो इसे 'पूर्ति समिति (Committee of Supply) कहा जाता है। इसम विभागो की माँगो पर आम बहस होती है, जिसका सम्बन्ध आर्थिक पक्ष से ही नही, वरन विभागीय नीतियो स भी होता है। विरोधी दल कटौती प्रस्ताव रखत हैं, जिन पर कडी बहस के बाद मतदान होना

है। जब तक मन्त्रिमण्डल को बहुमत का समर्थन प्राप्त है, कटौती प्रस्ताव पारित नहीं हो पाता।

बजट के इस भाग पर बहस के लिए २६ दिन दिये जाते हैं। समस्त बजट को पारित करने में देर लग जाती है, इसलिए पूर्ति समिति कुछ माह के लिए सरकार को खर्च करने की अग्रिम स्वीकृति दे देती है।

बजट का दूसरा भाग आय से सम्बन्धित होता है। इसे प्रस्तुत करते हुए वित्तमन्त्री अपना बजट भाषण देता है। द्वितीय वाचन के बाद इसे सम्पूर्ण सदन की समिति में भेज दिया जाता है। जब यह समिति आय के भाग पर विचार करती है, तो इसे साधन समिति कहते हैं।

बजट के दोनों भागों पर पूर्ति समिति व साधन समिति द्वारा विचार किये जाने के बाद उसे पुनः लोकसदन में प्रस्तुत किया जाता है। तत्पश्चात् लोकसदन में अवित्तीय सार्वजनिक विधेयक की भाँति ही उस पर विचार किया जाता है और लोकसदन द्वारा पारित कर दिये जाने पर इसे लार्ड सभा में भेज दिया जाता है। लॉर्ड सभा को वित्त विधेयक के सम्बन्ध में उसे एक माह तक रोके रखने का अधिकार प्राप्त है। लार्ड सभा चाहे उसे स्वीकार करे या न करे, एक महीने के बाद उसे सम्राट की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है और सम्राट की स्वीकृति से वह कानून बन जाता है।

सचित निधि
(Consolidated Fund)

ब्रिटिश बजट का यह एक विशेष भाग होता है। इस निधि के आधीन होने वाले व्यय प्रतिवर्ष नये सिरे से निश्चित नहीं किये जाते, वरन पूर्व निश्चित होते हैं। संसद को इस निधि के आधीन होने वाले व्यय में परिवर्तन करने का अधिकार अवश्य है किन्तु साधारणतया वह उसमें परिवर्तन नहीं करती। सम्राट से सम्बन्धित व्यय, न्यायाधीशों के वेतन, संसद का चुनाव सम्बन्धी खर्च और राष्ट्रीय ऋण का ब्याज इसी के अन्तर्गत आते हैं।

निजी सदस्यों के विधेयक
(Private Member s Bills)

निजी सदस्यों के विधेयक भी सार्वजनिक विधेयक ही होते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि सरकारी सार्वजनिक विधेयक मन्त्रियों के द्वारा सदन में प्रस्तुत किये जाते हैं लेकिन निजी सदस्यों के विधेयक सदन के किसी साधारण सदस्य द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। लोकसदन का अधिकांश समय सरकारी विधेयकों पर ही चला जाता है और निजी सदस्यों के विधेयकों के लिए बहुत कम समय बचता है। इनके लिए सप्ताह में एक दिन (शुक्रवार) निश्चित होता है। अधिवेशन के पूर्व साधारण सदस्य अनेक विधेयक पुनः स्थापन के लिए प्रस्तुत करते हैं। अधिवेशन के पूर्व उनकी एक सूची तैयार कर ली जाती है और लाटरी के आधार पर विधेयकों को विचार के लिए चुना जाता है। जिस प्रस्तावक का नाम पहले निकलता है, उसके विधेयक को

पहला शुक्रवार और दूसरे को दूसरा शुक्रवार मिलता है। अधिवशन के दिना म जितने शुक्रवार पडते हैं, उतने विधयक क्रम क अनुसार ले लिए जाते है और शेष रद्द हो जाते हैं। अत कुछ भाग्यशाली सदस्या के प्रस्ताव ही विचार के लिए स्थान पाते हैं।

निजी सदस्या के विधयको का भविष्य सरकार के समथन पर निभर करता है। यदि मन्त्रिमण्डल उसका विरोध करता है तो विधेयक द्वितीय वाचन तक भी नही पहुच पाता। निजी सदस्या के विधयक द्वितीय वाचन के बाद गर सरकारी विधेयक समितिया के पास पहुचत है। निजी सदस्यो के विधेयक पारित होन की भी प्रक्रिया वही है जो सार्वजनिक सरकारी विधेयका की होती है।

असार्वजनिक विधेयक के पारित होने की प्रक्रिया
(Procedure of Private Bills)

असावजनिक विधयक पारित किय जान की प्रक्रिया सावजनिक विधयका स भिन है। असावजनिक विधेयक व होत हैं, 'जिनका उद्देश्य किसी स्थान विशेष सम्बन्धी विधि को परिवर्तित करना है या किसी व्यक्ति विशेष या वग विशेष को कोई अधिकार देना है या उसका कोई उत्तरदायित्व हटाना है।" इगलण्ड म प्रतिवप अनेक असावजनिक विधेयक पारित किय जाते हैं।

असावजनिक विधेयक का श्रीगणेश ससद म न होकर उसक बाहर होता है। जिस व्यक्ति या सस्था को किसी विशेष कानून की आवश्यकता होती है, उसके द्वारा ससद को इस आशय का प्रार्थना पत्र दिया जाता है और इसके साथ सम्बन्धित विधेयक की प्रति सलग्न की जाती है। आवेदनकर्ता के लिए यह जरूरी है कि वह उन सभी समुदायो और स्वार्थों को, जिनके हिता पर प्रस्तावित कानून का विपरीत प्रभाव पड सकता है, लिखित सूचना द, जिससे व आवश्यक समझ, तो प्रस्तावित विधयक का विरोध कर सक। आवेदनपत्र और विधेयक के साथ इन सूचनाओं की प्रतिया व विधयक स सम्बन्धित अन्य आवश्यक सूचनाए जस नक्शे, आकडे, विज्ञापन आदि भी होने आवश्यक हैं। यदि इन आवश्यक पत्रो म कोई कमी हो, तो ससद विधयक पर विचार नहीं करती है।

सवप्रथम ये विधेयक 'असावर्जनिक विधेयको को याचिकाओं के परीक्षक' (Examiner of Petitions for Private Bills) के पास जाते है। असावजनिक विधेयको की याचिकाओ के साथ कुछ प्रकाशित विज्ञापन होत हैं जिसमे कि सम्बन्धित पक्षों को आने वाले कानून का ज्ञान हो जाय। प्रस्तावित विधेयक की प्रतिलिपियाँ सरकार के सम्बन्धित विभागो को पहले ही भेज दी जाती ह, जिसस यदि य विभाग चाह, तो अपनी ओर से ज्ञापन दे सकें। परीक्षक यह देखते ह कि वास्तव म विज्ञापन प्रकाशित किय गय और प्रतिलिपियाँ भेजी गई है। यदि व आश्वस्त हो जाय कि समस्त औपचारिकताओ का पालन किया गया है, तो व विधयक प्रमाणित करते हैं और विधेयक ससद के किसी भी सदन म प्रस्तुत किया जा सकता है।

ममद के किसी मदन मे प्रस्तावित किये जाने के पश्चात उस विधेयक का अन्य किसी असावजनिक विधेयक की भाति प्रथम और द्वितीय वाचन होना है। यदि द्वितीय वाचन के पश्चात् उसका विरोध नही होता है, तो उस विधेयक को **'निर्विरोध विधेयको की समिति' (Committee on Unopposed Bills)** के पास भेज दिया जाता है। यदि विधेयक का विरोध हो तो उसे असावजनिक विधेयक समिति' म भेज दिया जाता है। इन समितियो के अन्तगत असावजनिक विधेयका पर विचार करने म सावजनिक विधेयका से भिन्न प्रक्रिया अपनाई जाती है। असावजनिक विधेयका के सम्बन्ध मे समिति **'अर्द्ध यायिक सस्था'** के रूप म काय करती है। समिति विधेयक के उद्देश्य की छानबीन करती है और उसके पश्चात समथक तथा विरोधी, दोनो ही पक्षो की युक्तिया सुनती है। प्रत्येक पक्ष की ओर से वकील खडे किये जाते व गवाहिया प्रस्तुत की जाती हैं। इस प्रकार की समस्त कायवाही निष्पक्षता के साथ की जाती है और यदि इस प्रकार की समस्त कायवाही के पश्चात् समिति विधेयक सम्बन्धी बातो से सन्तुष्ट होती है, तो वह विधेयक आगे बढता है, अन्यथा समिति स्तर पर ही समाप्त हो जाता है। जिस विधयक के पक्ष म समिति ने अपना प्रतिवेदन दे दिया है वह सामान्यतया लोकसदन मे वादविवाद के बाद पारित हो जाता है और दूसरे सदन मे भेज दिया जाता है।

जब विधयक दूसरे सदन मे जाता है, तब यद्यपि दूसरे सदन को अधिकार होता है कि वह विधेयक को अस्वीकार कर सके या उसमे सशोधना का सुझाव दे, किन्तु सामान्यतया यही दृष्टिकोण अपनाया जाता है कि समिति के द्वारा विधेयक पर पूण विचार कर लिया गया है और समिति का निणय यायालय के समान है, अत सदन के द्वारा उसे स्वीकार कर लिया जाना चाहिए। इस प्रकार असावजनिक विधेयका का भविष्य उनके गुणावगुण और समितिया के विवेक पर ही निभर करता है।

दोना सदना द्वारा पारित कर दिय जाने के उपरान्त इसे सम्राट के पास हस्ताक्षर के लिए भेजा जाता है और इस औपचारिकता के बाद वह विधेयक कानून का रूप ग्रहण कर लेता है।

प्रदत्त व्यवस्थापन
(Delegated Legislation)

प्रदत्त व्यवस्थापन क्या है ?—प्रारम्भिक काल मे जबकि प्रशासनिक काय क्षेत्र बहुत अधिक सीमित था कानून निर्माण के क्षेत्र मे कोई गम्भीर समस्या नहीं थी। जनता का प्रतिनिधि व्यवस्थापिका कानूनो का निर्माण करता था और विभागों के द्वारा उन्हे क्रियान्वित किया जाता था। इस प्रकार व्यवस्थापिका और प्रशासन म स्पष्ट काय विभाजन था और प्रजातन्त्र के हित म इस आवश्यक भी समझा जाता था। लेकिन वतमान परिस्थितियो म व्यवस्थापिका और प्रशासन म इस प्रकार का स्पष्ट और कठोर काय विभाजन सम्भव नहीं रहा है। वतमान समय म राज्य के

कायक्षेत्र म बहुत अधिक वृद्धि हो जाने के कारण कानून निर्माण का काय मात्रा की दृष्टि स बहुत अधिक बढ गया है और इस काय म अत्यधिक जटिलता ने प्रवेश कर लिया है। सभी विषयों के सम्बन्ध म कानूनो का निर्माण करने के लिए व्यवस्थापिका के पास न तो आवश्यक समय है और न ही ज्ञान। ऐसी स्थिति म इस प्रवृत्ति को अपना लिया गया है कि ससद व्यापक रूप म परिनियम पारित कर देती है और इस परिनियम के उद्देश्य को पूरा करने के लिए मन्त्रियों तथा उनके विभागों को व्यापक नियम-उपनियम निर्मित करने का अधिकार दे दिया जाता है, जिनका प्रभाव कानून के समान ही होता है। इस प्रकार ससद के द्वारा कानून का अस्थिपजर मात्र तयार किया जाता है और इस आवश्यकतानुसार रक्त-मास प्रदान करने का काय प्रशासनिक विभागों द्वारा किया जाता है। दूसरे शब्दों म, ससद अपनी कानून निर्माण की सत्ता प्रशासनिक विभागों को प्रदत्त कर देती है और प्रशासनिक विभागों को प्रदत्त इस शक्ति के आधार पर उनके द्वारा जिन नियम उपनियमों का निर्माण किया जाता है, उस ही 'अधीनस्थ व्यवस्थापन' (subordinate legislation) या 'प्रदत्त व्यवस्थापन' कहते हैं।

प्रदत्त व्यवस्थापन का विकास—ससद द्वारा कार्यपालिका को व्यवस्थापन के अधिकार का प्रदत्तीकरण करना, इगलण्ड के सवधानिक इतिहास म कोई नवीन वस्तु नहीं है। इसके कुछ उदाहरण ट्यूडर सम्राट हेनरी अष्टम के समय म भी मिलते हैं और इसी कारण उसी समय से हेनरी अष्टम धारा (Henry VIII Clause) प्रसिद्ध हो गई है। हेनरी अष्टम धारा मन्त्री को शक्ति प्रदान करती है कि वह परिनियम के किसी भी उपबन्ध को उस प्रकार स परिवर्तित कर सके, जिस प्रकार से वह आवश्यक और उचित समझता है। १९वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक प्रदत्त व्यवस्थापन बहुत कम प्रचलित था, क्योंकि उस समय तक राज्य का कायक्षेत्र सीमित था और ससद शासन के लिए आवश्यक लगभग सभी नियम बना सकती थी। इसके बाद शासन के कार्यों म वृद्धि के परिणामस्वरूप प्रदत्त व्यवस्थापन की प्रवृत्ति अधिक बढ गई। आधुनिक युग म यह प्रथा बहुत व्यापक रूप से प्रयुक्त की जाती है। इसका अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि सन १९१९ म ससद द्वारा निर्मित ६० परिनियमों मे से २० परिनियमो ने प्रशासनिक विभागो को प्रदत्त व्यवस्थापन का अधिकार प्रदान किया था। इसी प्रकार सन् १९२७ मे ससद ने ४३ परिनियम पारित किये, जबकि विभागो ने इन ४३ परिनियमो के अन्तगत ही १,३४९ विनियम निर्मित किये। १९४५ मे प्रशासनिक विभागो के द्वारा ससदीय परिनियमो के अन्तगत १,७०९ विनियम (Regulations) जारी किये गये। सामान्य काल म भी प्रदत्त व्यवस्थापन की मात्रा और महत्त्व बहुत अधिक है और युद्धकाल म तो यह अत्यधिक बढ जाता है। ससदीय परिनियमो के लिए यह एक सामान्य प्रथा सी बन गई है कि सम्बद्ध विभाग के मन्त्री को न केवल आदेश जारी करने का, वरन् 'अष्टम हेनरी की धारा' के अन्तगत परिनियम के उपबन्धो को उस सीमा तक

संशोधित करने का भी अधिकार दे दिया जाता है, जहाँ तक कि वह उन्हें आवश्यक और उचित समझे। प्रदत्त व्यवस्थापन के महत्त्व के सम्बन्ध में सेसिल कार का ठीक ही कहना है कि 'कानून की पुस्तक उस समय तक अधूरी ही नहीं, वरन् भ्रमात्मक भी रहती है जब तक कि उसे उस प्रदत्त व्यवस्थापन के साथ मिलाकर न पढ़ा जाय, जिसके द्वारा कानून का बहुत विस्तार व परिष्कार हो जाता है।"

प्रदत्त व्यवस्थापन के विकास के कारण

ग्रेट ब्रिटेन में प्रदत्त व्यवस्थापन के विकास के कारणों की विवेचना निम्न रूपों में की जा सकती है :

(१) कल्याणकारी राज्य का उदय—ब्रिटेन में बीसवीं सदी में 'पुलिस राज्य' की धारणा को छोड़कर जन कल्याणकारी राज्य की धारणा को अपना लिया गया है, जिसके परिणामस्वरूप राज्य के कार्यों में बहुत अधिक वृद्धि हो गई है। संसद के पास इतना समय, प्राविधिक जानकारी और ज्ञान नहीं होता कि उसके द्वारा इन सभी विषयों पर विस्तारपूर्वक कानूनों का निर्माण किया जा सके। अतः इस मार्ग को अपनाया गया है कि संसद कानून की मोटी रूपरेखा पारित कर देती है और इसके आधार पर नियम-उपनियम बनाने का अधिकार प्रशासनिक विभागों को दे देती है। आग के शब्दों में, 'राज्य के बढ़ते हुए कार्यक्षेत्र ने प्रदत्त व्यवस्थापन को अनिवार्य बना दिया है।'

(२) कानून निर्माण में जटिलता का प्रवेश—कानून निर्माण के कार्य में वृद्धि के साथ साथ औद्योगिक सभ्यता और वैज्ञानिक उन्नति आदि तत्त्वों के कारण कानून निर्माण का कार्य बहुत अधिक जटिल भी हो गया है। संसद सदस्यों के लिए यह सम्भव नहीं रहा है कि वे कानून की जटिलताओं और बारीकियों को समझ सकें। संसद सदस्य इस सम्बन्ध में अपनी सीमाओं से परिचित भी हैं। अतः वे विधि के केवल सामान्य सिद्धान्त निश्चित करते हैं और विस्तार की बातें विशेषज्ञों को सौंप देते हैं।

(३) कानूनों को लागू करने में कठिनाई—संसद सदस्य चाहे कितना ही प्रयत्न क्यों न करें, उनके द्वारा उन सभी कठिनाइयों के सम्बन्ध में ठीक प्रकार से विचार नहीं किया जा सकता, जो बदलती हुई परिस्थितियों के कारण कानूनों को लागू करने के मार्ग में भविष्य में उत्पन्न हो सकती हैं। तुरन्त ही संसद का अधिवेशन बुलाकर कानूनों में परिवर्तन का प्रयत्न किया जाय, यह बात व्यवहार में सम्भव नहीं है। अतः विभिन्न क्षेत्रों तथा विभिन्न समयों पर उत्पन्न होने वाली आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रशासनिक विभागों को विभिन्न नियमों और उपनियमों के निर्माण का अधिकार दे दिया जाता है।

(४) संकटकालीन स्थिति का सामना करने के लिए—अनेक बार संकटकालीन स्थिति के कारण नियमों के निर्माण में बहुत अधिक शीघ्रता की आवश्यकता

होती है। उदाहरणार्थ, युद्ध या आर्थिक संकट आदि की स्थिति में संसद द्वारा विधियों का निर्माण करने में बहुत अधिक विलम्ब हो सकता है। कार्यपालिका द्वारा संकट का सामना करने के लिए नियमों का निर्माण बहुत शीघ्रतापूर्वक किया जा सकता है, अतः संकट के समय संसद स्वयं कार्यपालिका को यह शक्ति सौंप देती है। उदाहरणार्थ, १९३९ में 'संकटकालीन शक्ति सुरक्षा कानून' (Emergency Power Defence Act) के द्वारा युद्ध सम्बन्धी आवश्यक कार्यवाही के लिए नियम बनाने का अधिकार कार्यपालिका को दिया गया था।

प्रदत्त व्यवस्थापन की आलोचना

प्रदत्त व्यवस्थापन की कटु आलोचना करते हुए अनेक लेखकों ने इसे शासन विभाग की निरंकुशता को बढ़ाने वाला बताया है। इंगलैण्ड के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधिपति लॉर्ड होवर्ट ने १९२९ में प्रकाशित अपनी पुस्तक 'नव अधिनायकवाद' (The New Despotism) में प्रदत्त व्यवस्थापन की कड़ी आलोचना की है। उन्होंने लिखा है कि "संसद प्रदत्त व्यवस्थापन को न तो नियन्त्रित कर सकती है और न ही इसकी जाँच कर सकती है। इसलिए यह संसद की प्रभुसत्ता का गम्भीर अतिक्रमण है। दूसरे, प्रशासनिक न्यायाधिकरण (Administrative Tribunals) न्यायालयों के अधिकारों को सीमित करते हैं इसलिए यह कानून के शासन के लिए बहुत बड़ा भय है। तीसरे, कार्यपालिका के हाथ में अत्यधिक शक्तियाँ देना लोकतन्त्र के लिए घातक है।"

रैम्जे म्योर भी प्रदत्त व्यवस्थापन के प्रति बहुत अधिक चिन्ता की दृष्टि से देखते हैं। वे इसे 'नौकरशाही की विजय' (Bureaucracy Triumphant) बतलाते हुए कहते हैं प्रदत्त व्यवस्थापन के आधार पर संसद ने अपने अधिकार उस नौकरशाही को समर्पित कर दिये हैं जो प्रच्छन्न रूप में उनका यथार्थ उपयोग करती है।" आलोचकों के अनुसार प्रदत्त व्यवस्थापन की पद्धति ने कार्यपालिका को असीम अधिकार प्रदान कर दिये हैं और प्रशासनिक अधिकारियों को 'राज्य के अन्दर राज्य' (State within a State) बना दिया है। जी० बी० एडम्स (G B Adams) और सर एफ० पोलक के द्वारा इसी प्रकार की आलोचना की गई है। जी० बी० एडम्स का कहना है कि "कुछ मामलों में कार्यपालिका को असाधारण शक्तियाँ प्रदान की गई हैं जिनमें से कुछ तो ऐसे ढंग और व्यापक व्यवहार की हैं कि कुछ विचारकों के मतानुसार वे कार्यपालिका को खतरनाक स्वविवेकीय अधिकार से सुसज्जित कर देती हैं जो व्यक्तिगत स्वाधीनता के लिए स्पष्ट धमकी बनी हुई है।"

आलोचनाओं का उत्तर और प्रदत्त व्यवस्थापन का औचित्य

प्रदत्त व्यवस्थापन के पक्ष में प्रमुखतया निम्नलिखित तर्क दिये जा सकते हैं

(१) संसद समयाभाव के कारण लोककल्याणकारी राज्य की आवश्यकताओं को पूरा करने वाले सभी कानूनों का निर्माण नहीं कर सकती। इसलिए कुछ कम

महत्त्व के कानूनों के निर्माण का अधिकार विभिन्न प्रशासनिक विभागों को दे देना नितान्त उचित है।

(२) आज के कानून इतने जटिल होते हैं कि उनकी बारीकियों की विस्तृत जानकारी संसद को नहीं हो सकती, अतः संसद के द्वारा अपने आपको मोटी बातों पर कानून निर्माण तक ही सीमित रखा जाना चाहिए।

(३) संकट के समय प्रदत्त व्यवस्थापन न केवल वांछनीय, वरन अनिवार्य भी होता है क्योंकि प्रथमतः संसद के अधिवेशन सदा होते नहीं और द्वितीयतः उसमें कानून निर्माण की प्रक्रिया अत्यधिक विलम्बकारिणी भी होती है। इसी आधार पर विश्वयुद्ध के दौरान 'देश की सुरक्षा के कानून' (Defence of the Realm Act) द्वारा संसद ने कार्यकारिणी को सार्वजनिक सुरक्षा के लिए उपनियम बनाने की विस्तृत शक्ति दे दी थी।

(४) प्रदत्त व्यवस्थापन के पक्ष में तर्क यह भी है कि इसके अन्तर्गत बने कानूनों में संसद द्वारा निर्मित कानूनों की अपेक्षा कहीं अधिक सुगमता और शीघ्रता से परिवर्तन किया जा सकता है। अतः प्रदत्त व्यवस्थापन से शासन में लोच के हितकारी तत्त्व का प्रवेश हो जाता है। कार्टर के शब्दों में, "प्रदत्त व्यवस्थापन न केवल संसद का मूल्यवान समय बचाता है वरन प्रशासन में एक लोच भी उत्पन्न करता है।"[1]

(५) प्रदत्त व्यवस्थापन की आलोचना करते हुए यह कहना गलत है कि इसमें प्रशासनिक अधिकारियों का अधिनायकवाद स्थापित हो जाता है। प्रदत्त व्यवस्थापन पर संसद का नियन्त्रण होता है और सामान्यतया न्यायालयों को यह अधिकार प्राप्त होता है कि वे प्रदत्त व्यवस्थापन के अन्तर्गत निर्मित उन नियमों को अवैध घोषित कर सकें, जिनमें प्रशासन ने संसद द्वारा निर्मित सीमाओं का उल्लंघन किया हो। इस सम्बन्ध में प्रशासनिक अधिकारियों ने सामान्यतया अपनी शक्तियों का दुरुपयोग नहीं किया है। प्रो० लास्की ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि 'यह सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य या प्रमाण नहीं मिलता है कि सरकारी अधिकारी अपनी स्वविवेकी शक्तियों का दुरुपयोग कर रहे हैं। ज्यों ही प्रदत्त व्यवस्थापन के प्रति की गई आलोचना की बारीकी से जाँच की जाय, आलोचना अपना महत्त्व खो देती है।"[2]

1 Not only therefore, does delegated legislation save the valuable time of Parliament it also makes for greater flexibility in the administration
—G M Carter and Others *Governments of Great Britain* p 193

2 There is no effective evidence to suggest that the departments are seeking to abuse the rule making powers which has thus been put in their hands Protests against the growth of delegated legislation collapses as soon as it is submitted to serious scrutiny."
—H J Laski, *Parliamentary Government in England* p 159.

१६३२ की मन्त्रियों की शक्ति समिति के अनुसार, 'चाहे अच्छा हो या बुरा हो, पर प्रदत्त व्यवस्थापन की परिपाटी का विकास अवश्यम्भावी है। यह सवधानिक कानून के क्षेत्र मे हमारे सरकार सम्बन्धी विचारो मे परिवर्तन का स्वाभाविक प्रतिबिम्ब है, जो राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक विचारो और वैज्ञानिक खोजो से हमारे जीवन की अवस्थाओ मे आये परिवर्तन के कारण उत्पन्न हुआ है।"

प्रदत्त व्यवस्थापन के दुरुपयोग के विरुद्ध सरक्षण (प्रदत्त व्यवस्थापन पर ससदीय नियन्त्रण)—लार्ड हीवर्ट ने प्रदत्त व्यवस्थापन की जो कड़ी आलोचना की थी उसकी जाँच १६२६ में ही मन्त्रियों की शक्तियों पर विचार करने के लिए जो समिति बैठी थी, उसने की। समिति ने अपने प्रतिवेदन में कहा कि इस प्रणाली (प्रदत्त व्यवस्थापन) से ससद की शक्तियों को कोई हानि या आघात नहीं पहुचा है। भविष्य में इस प्रणाली का दुरुपयोग न किया जा सके, इसके लिए निम्न सुझाव हैं

(i) प्रदत्त व्यवस्थापन का प्रारूप बहुत सावधानी से और ठीक तरह तैयार किया जाय। (ii) प्रशासनिक अधिकारियों की स्वविवेक या स्वच्छाचारी शक्तियों पर कुछ सीमाएं लगा दी जायें जिससे वे अपनी शक्ति का दुरुपयोग न कर सकें। ऐसी व्यवस्था की जानी चाहिए कि प्रशासनिक अधिकारियों के निर्णय के विरुद्ध न्यायालयों के सम्मुख अपील की जा सके, ताकि न्यायालय यह निश्चित करें कि अमुक अधिकारी ने अपनी स्वविवेक शक्ति का दुरुपयोग तो नहीं किया है। (iii) प्रशासनिक विनियमों (Administrative Regulations) को ससद की जानकारी के लिए भेजा जाय।

ग्रेट ब्रिटेन में इन सुझावों पर अमल किया जा रहा है।

१६४४ में ससद की एक प्रवर समिति स्थापित की गई थी जिसका नाम था 'सविधि नियमों सम्बन्धी प्रवर समिति (Select Committee on Statutory Instruments)। यह समिति प्रतिवर्ष नई नियुक्त की जाती है और प्रशासनिक विभागों के अधिकारियों द्वारा जारी किये गये सभी आदेशों, नियमों तथा विनियमों की जाँच-पड़ताल करती है और देखती है कि इनसे ससद की प्रभुसत्ता का कोई आघात तो नहीं पहुचा है या प्रशासनिक अधिकारी अपनी स्वविवेक शक्तियों का दुरुपयोग तो नहीं कर रहे हैं। यदि इन दोनों में से कोई भी बात हो, तो यह ससद का ध्यान उस ओर आकर्षित करती है।

आधुनिक काल में ससद तीन अन्य तरीकों से भी प्रदत्त व्यवस्थापन पर अपना नियन्त्रण रखती है।

(१) सरकारी विभागों द्वारा निर्मित कुछ आदेश, नियम तथा विनियम पर यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया है कि वे ससद के दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत होने पर ही लागू होंगे।

(२) कुछ इस प्रकार के आदेश, नियम तथा विनियम होते हैं कि उन्हें ससद

के सामने रखा जाना आवश्यक है और संसद का कोई भी सदन ४० दिन के अन्दर अपने एक प्रस्ताव द्वारा उन्हें रद्द कर सकता है, यदि वह उन्हें पसन्द न करे।

(३) कुछ छोटे आदेश, नियम तथा विनियम ऐसे होते हैं जो केवल संसद की मेज पर रख दिये जाते हैं। यदि कोई संसद सदस्य उनका विरोध करना चाहता है तो मन्त्री से प्रश्न पूछ सकता या काम रोको प्रस्ताव रख सकता है। इन तरीकों से प्रदत्त व्यवस्थापन पर संसदीय नियन्त्रण स्थापित किया गया है।

इनके अतिरिक्त प्रदत्त व्यवस्थापन पर न्यायिक नियन्त्रण की भी व्यवस्था है। प्रशासनिक विभागों द्वारा निर्मित ऐसे नियमों, विनियमों तथा आदेशों को न्यायालय अवैध घोषित कर सकते हैं, जो संसदीय कानूनों के विरुद्ध हों या जिनमें प्रशासनिक विभागों ने संसद द्वारा प्रदत्त शक्ति का उल्लंघन किया हो।

प्रदत्त व्यवस्थापन के सम्बन्ध में हरबर्ट मॉरिसन ने नितान्त औचित्यपूर्ण दृष्टिकोण अपनाते हुए कहा है कि "मेरे विचार से प्रदत्त व्यवस्थापन का सिद्धान्त ठीक है, किन्तु मैं यह कहना चाहूँगा कि संसद के द्वारा इस प्रकार के व्यवस्थापन के सभी स्तरों पर कड़ी नजर रखी जानी चाहिए।"[1]

ब्रिटेन में प्रदत्त व्यवस्थापन पर नियन्त्रण के प्रभावशाली उपाय अपनाये गये हैं और इस शक्ति का दुरुपयोग किये जाने की आशंका निश्चित रूप से बहुत कम है।

प्रश्न

१ ब्रिटिश संसद एक सर्वोच्च और सम्प्रभु निकाय है।' इस कथन की व्याख्या कीजिए और ब्रिटिश संसद की सर्वोच्चता पर प्रतिबन्धों का उल्लेख कीजिए।
(राजस्थान, १९६५, पटना, १९६६, आगरा, १९६१

२ लार्ड सभा की रचना, कृत्यों एवं शक्तियों का वर्णन कीजिए। ब्रिटिश संवैधानिक व्यवस्था में इसकी क्या उपयोगिता है?
(पटना, १९६२, राजस्थान, १९६६, विक्रम, १९६२, कानपुर १९७१

३ इंगलैण्ड की लार्ड सभा की उपयोगिताओं का वर्णन कीजिए।
(पटना, १९६२, विक्रम, १९६२ बिहार, १९६४, ६३)

४ १९११ के संसदीय अधिनियम का ब्रिटिश लॉर्ड सभा की स्थिति पर क्या प्रभाव पड़ा है?
(आगरा, १९६३)

५ ब्रिटिश लॉर्ड सभा तथा अमरीकी सीनेट की रचना, शक्तियों तथा स्थिति की तुलनात्मक विवेचना कीजिए।

1 The principle of delegated legislation is I think right but I must emphasise that it is well for Parliament to keep a watchful and jealous eye on all its stages
—Herbert Morrison *Government and Parliament* p 1..

६ क्या ब्रिटेन की संसद व्यवहार में सम्प्रभु है? कारण बताइए।
(मेरठ, १९६८, विक्रम, १९६४)

७ ब्रिटिश लार्ड सभा और लोकसदन की शक्तियों तथा पारस्परिक सम्बन्धों का वर्णन कीजिए। (कानपुर, १९६९, आगरा १९७०)

८ लार्ड सभा के गठन और शक्तियों का वर्णन कीजिए। इस सदन को [illegible] सदन क्यों कहा जाता है? (आगरा, १९६५, [illegible]

९ ब्रिटेन की लार्ड सभा के विषय में आपका क्या मत है? [illegible] जाना चाहिए अथवा वर्तमान रूप में कायम रहना [illegible] सुधार होना चाहिए? कारण सहित बतलाइए।

१० ब्रिटिश लोकसदन की रचना, अधिकारों तथा [illegible]
(बिहार, १९६३ ६६, [illegible]

११ ब्रिटिश लोकसदन के अध्यक्ष का निर्वाचन [illegible] तथा कार्यों का वर्णन कीजिए और उसकी [illegible] अध्यक्ष से कीजिए।
(पटना, १९६३, ६५ [illegible]
भागलपुर, १९६५, ६६ [illegible]

8

दल प्रणाली

"प्रकृति स्वय एक सगठन है । यदि इसमे एक प्रबल निर्देशन शक्ति न हो जो प्रत्येक वस्तु का नियन्त्रण, पथ प्रदर्शन एव प्रबन्ध करती है तो ज्वालामुखी पहाडो, भूकम्पों तथा बाढ़ों के अतिरिक्त कुछ भी शेष न रहे। सावजनिक जीवन में भी बिना सगठन के यही परिणाम होगे।" —डिजरेल

राजनीतिक दलो का महत्त्व

वतमान समय म शासन के विविध रूपो मे प्रजातन्त्र सर्वाधिक लोकप्रिय है और वतमान समय मे प्रजातन्त्र का प्रचलित रूप अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र या प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र ही है। प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र के अन्तगत जनता अपने प्रतिनिधि चुनती है और इन प्रतिनिधियो के द्वारा शासन किया जाता है। जनता द्वारा अपने प्रतिनिधियो के निवाचन और प्रतिनिधियो द्वारा शासन व्यवस्था के सचालन की इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को पूर्ण करने के लिए राजनीतिक दलो का अस्तित्व अनिवाय है। इसके अतिरिक्त प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था लोकमत पर आधारित होती है और राजनीतिक दल लोकमत के निर्माण और उसकी अभिव्यक्ति के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साधन होते हैं। मैकाइवर ने ठीक ही कहा है कि "बिना दलीय सगठन के किसी सिद्धान्त का एक होकर प्रकाशन नहीं हो सकता, किसी भी नीति का क्रमबद्ध विकास नहीं हो सकता, ससदीय चुनावो की वैधानिक व्यवस्था नहीं हो सकती और न ऐसी मान्य सस्थाओ की व्यवस्था ही हो सकती है जिनके द्वारा कोई भी दल शक्ति प्राप्त करता है और उसे स्थिर रखता है।"[1] इसी प्रकार ब्राइस ने भी लिखा है कि, 'राजनीतिक दल अनिवाय हैं। कोई भी बडा स्वतन्त्र देश उनके

1 Without such party organisation there can be no unified statement of principles no orderly evolution of policy no regular resort to constitutions by means of which a party seeks to gain or maintain power —MacIver *The Modern State* p 3??

बिना नहीं रह सका है। किसी व्यक्ति ने यह नहीं बताया कि प्रजातन्त्र उनके बिना कैसे चल सकता है। ये मतदाताओं के समूह को अराजकता में से व्यवस्था उत्पन्न करते हैं। यदि दल कुछ बुराइयां उत्पन्न करते है, तो वे दूसरी बुराइयों को दूर या कम भी करते हैं।"

साधारणतया एक देश के विधान या कानून के अन्तर्गत राजनीतिक दलों का उल्लेख नहीं होता है किन्तु व्यवहार में राजनीतिक दलों का अस्तित्व भी उतना ही आवश्यक और उपयोगी होता है, जितना कि विधान या कानून। प्रजातन्त्रीय शासन के अन्तर्गत केवल शासक दल का ही नहीं वरन विरोधी दल का भी महत्त्व होता है। वस्तुत आधुनिक राजनीतिक जीवन के लिए दलीय संगठनों का बड़ा महत्त्व है और इनके बिना लोकतन्त्र की सफलता सम्भव ही नहीं है। बर्क के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'दलीय प्रणाली चाहे पूर्ण रूप से भले के लिए हो या बुरे के लिए, प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था के लिए अपरिहार्य है।"

वैसे तो विश्व के सभी देशों में राजनीतिक दलों का महत्त्व है किन्तु ब्रिटिश संविधान और शासन व्यवस्था में राजनीतिक दलों का महत्त्व विशेष रूप से देखा जा सकता है। आधुनिक समय में ब्रिटिश संविधान का विकास जिन दिशाओं में हो रहा है, वह राजनीतिक दलों का ही परिणाम है। ब्रिटिश संविधान के सभी लेखकों ने इस बात को एक मत से स्वीकार किया है कि दल प्रणाली ब्रिटिश राजनीतिक जीवन की आधारशिला है। जेनिंग्ज ने तो इस सम्बन्ध में यहां तक कह दिया है कि "ब्रिटिश शासन राजनीतिक दलों से ही प्रारम्भ होता है और राजनीतिक दलों में ही समाप्त हो जाता है।"[1]

ब्रिटेन में राजनीतिक दलों का इतिहास

प्रजातन्त्र की जन्मभूमि होने के कारण ब्रिटेन स्वभावतः राजनीतिक दलों की भी जन्मभूमि रहा है। यों तो ब्रिटेन में राजनीतिक गुटबन्दियां बहुत पहले से रही हैं (जैसे—पन्द्रहवीं शताब्दी में लंकास्ट्रियन और यार्किस्ट या सत्रहवीं सदी में कवेलियर और राउण्डहेड थे,) परन्तु इन्हें सही अर्थों में राजनीतिक दल नहीं कहा जा सकता। विशुद्ध राजनीतिक दलों का उदय प्रजातन्त्रीय पद्धति के साथ ही सम्भव था और इसलिए १६८८ की क्रान्ति के बाद ही दो विशुद्ध राजनीतिक दलों की नींव पड़ी, जिन्हें 'ह्विग' (Whig) और 'टोरी' (Tory) का नाम दिया गया। १६८८ के बाद लगभग १५० वर्षों तक ये दोनों दल बारी बारी से शासन संचालन करते रहे। १८३२ का सुधार अधिनियम पारित किये जाने के बाद ह्विग और टोरी दलों के द्वारा क्रमशः उदार दल और अनुदार दल के नाम ग्रहण किये गये। १८३०

1 The British Government begins and ends with parties
—W I Jennings *The British Constitution*, p 31

के बाद कुछ विराम कालो को छोडकर १८७४ तक उदार दल पदारूढ रहा और उसके बाद कुछ संक्षिप्त अवकाशो को छोडकर १९०५ तक अनुदार दल के हाथ मे सत्ता रही। इसके बाद १९१५ तक पुन उदार दल सत्तारूढ रहा और युद्धकाल मे सभी दलो की संयुक्त सरकार बनी। समय समय पर अन्य समूह भी बने, किन्तु वे चिरस्थायी न हो सके। उदार और अनुदार दलो म विस्तार की बातो और कुछ सामयिक प्रश्नो को लेकर मतभेद रहा करता था, परन्तु देश क आर्थिक और राजनीतिक ढाचे पर दोनो मे मतैक्य था। दोनो ही दल व्यक्तिगत सम्पत्ति, पूजीवादी व्यवस्था और सविधान की मूल बातो पर सहमत थे और दोनो का नेतृत्व उच्चवर्गीय लोगो के हाथ मे था।

मजदूर दल का उदय—बीसवी सदी के प्रारम्भ म एक नवीन विचारधारा और दृष्टिकोण के साथ एक नय दल का प्रादुर्भाव हुआ जिसका नाम था मजदूर दल। १९०० मे 'मजदूर प्रतिनिधित्व समिति' नामक एक नया सगठन बना और १९०६ के चुनाव मे इसे लोकसदन म २४ स्थान मिले। इसके बाद इसने मजदूर दल का नाम ग्रहण किया। इस समय से लेकर प्रथम महायुद्ध के बाद तक लोक सदन मे मजदूर दल के सदस्यो की सख्या ४० ५० रहा करती थी और यह दल उदार दल के साथ सहयोग से काय करता था। इसका प्रमुख उद्देश्य श्रमिक वग की सुविधा हेतु कानूनो का निर्माण होता था।

प्रथम महायुद्ध ने वस्तुस्थिति म बहुत परिवतन कर दिया। युद्ध के कारण उत्पन्न असन्तोष, मताधिकार के विस्तार और सिडनी वेब तथा रैम्जे मक्डानल्ड जसे नेताओ के प्रयत्नो से मजदूर दल की शक्ति म तेजी से वृद्धि हुइ और १९२४ मे इसे अपना प्रथम मन्त्रिमण्डल बनाने का अवसर प्राप्त हुआ। १९२० ३५ के काल मे ब्रिटेन मे तीन राजनीतिक शक्तिया (उदार दल, अनुदार दल और मजदूर दल) देखी गयी। लेकिन मजदूर दल की शक्ति बढने के साथ साथ उदार दल का पतन प्रारम्भ हो गया और ब्रिटिश राजनीति म फिर से दो ही प्रमुख शक्तियाँ (अनुदार दल और मजदूर दल) रह गयी।

१९४५-५१ के काल म ब्रिटेन म मजदूर दल की सरकार बनी, लेकिन १९५१ से १९६४ तक अनुदार दल का प्रभुत्व रहा। १९६४ मे जो चुनाव हुए, उनमे मजदूर दल को बहुत थोडा बहुमत प्राप्त हुआ। १९६६ के चुनाव मे मजदूर दल ने अपने बहुमत म वृद्धि कर एक सुदृढ सरकार की स्थापना की, लेकिन १९७० के चुनाव के परिणामस्वरूप ब्रिटेन म मजदूर दल क स्थान पर अनुदार दल क नेता एडवर्ड हीथ आसीन हैं और विपक्षी मजदूर दल के नेता ह हैरल्ड विल्सन।

१९२२ के उपरान्त से लेकर अब तक विभिन्न दलो की स्थिति अग्र तालिका मे प्रकट की गयी ह

वर्ष	अनुदार दल	उदार दल	श्रमिक दल	अन्य
१९२२	३४६	११५	१४२	१२
१९२३	२५८	१५९	१९१	७
१९२४	४१९	४०	१५१	५
१९२९	२६०	५९	२८८	८
१९३१	५२१	३७	५२	५
१९३५	४३१	२१	१५४	९
१९४५	२१२	१२	३९३	२२
१९५०	२९८	९	३१५	३
१९५१	३२१	६	२९५	३
१९५५	३४६	६	२७७	१
१९५९	३६५	६	२५८	१
१९६४	३०४	९	३१७	एक भी नही
१९६६	२५३	१२	३६३	२
१९७०	३३०	६	२८७	७[1]

ब्रिटिश दलीय व्यवस्था की विशेषताएँ

ब्रिटिश दलीय लोकतन्त्र वास्तव में देश की दलीय प्रणाली की क्रियान्विति ही है। ब्रिटिश दलीय प्रणाली की अपनी कुछ विशेषताएँ हैं, जिनकी विवेचना निम्न रूपों में की जा सकती है

(१) द्विदल पद्धति—ब्रिटिश दलीय प्रणाली की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि देश में दो लगभग समान रूप से शक्तिशाली, सुसगठित एव राजनीतिक दल है और वे ही देश की राजनीति पर छाये हुए रहते हैं। सत्रहवी सदी के प्रारम्भ मे राजा और चर्च के समर्थक केवेलियर्स (Cavaliers) तथा धार्मिक सहिष्णुता और ससद के समर्थक राउण्डहेड्स (Roundheads) कहलाते थे, जिन्हे आज की भाषा मे राजतन्त्रवादी और गणतन्त्रवादी कह सकते हैं। ससद की सर्वोच्चता निश्चित रूप से स्थापित होने के बाद इन दलो के नये नाम टोरी और ह्विग (Tory and Whig) पड गये। सन् १८३२ के सुधार अधिनियम पारित होने के उपरान्त इन दलो के नाम अनुदार दल और उदार दल हो गये। अनुदार दल स्थापित व्यवस्था को बनाये रखने का समर्थक लेकिन उदार दल शासन पद्धति, उद्योग तथा सामाजिक कल्याण के क्षेत्र मे सुधारो का समर्थक था। बीसवी सदी मे मजदूर दल के उदय से ऐसा प्रतीत हुआ कि अब ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति के स्थान पर त्रिदलीय पद्धति स्थापित हो जायगी, किन्तु मजदूर दल की शक्ति बढने के साथ साथ उदार दल का

[1] *Britannica Book of the Year, 1971*

पतन हो गया और ब्रिटिश राजनीति मे दो ही दलो का प्रभुत्व बना रहा। १८८२ मे गिलबर्ट ने इस द्विदल पद्धति की ओर लक्ष्य करते हुए लिखा था कि "यह विधि का कैसा विधान है कि इस देश मे जो भी छोटा बालक या बालिका पैदा होती है और जीवित रहती है, वह या तो छोटा उदार दलीय बालक या अनुदार दलीय बालक होता है।"[1] यही स्थिति अब भी है, अन्तर केवल यह हुआ है कि उदार दलीय बालक ने मजदूर दलीय बालक का रूप ग्रहण कर लिया है।

द्विदल पद्धति के कारण—ब्रिटेन मे द्विदल पद्धति के उदय और विकास के कई कारण हैं। प्रथमत, अंग्रेजी भाषा भाषी व्यक्ति सिद्धान्तवादी होने के बजाय व्यवहारवादी होते हैं और वे सैद्धान्तिक मतभेदों में उलझकर नवीन राजनीतिक दलों को जन्म देने के बजाय उस द्विदल पद्धति को बनाये रखना चाहते हैं, जो व्यवहार मे ठीक प्रकार से कार्य कर रही है। सालवेडर डी० मडियागा के मतानुसार, 'द्विदल पद्धति ब्रिटिश जाति की उस मनोवृत्ति का परिणाम है, जो राजनीति को एक खेल मानती है और राजनीतिक जीवन को केवल खिलाडियो की दो टीमो के बीच सघर्ष।" द्वितीयत ब्रिटेन मे यूरोप के अन्य देशो के समान राष्ट्रीयता, धर्म और भाषा की समस्याएँ नही है जो देश को खण्डित करती हैं और जिन्होंने फ्रांस तथा इटली जैसे देशो मे बहुदलीय प्रणाली को जन्म दिया है। तृतीयत, द्विदल पद्धति को जन्म देने वाला एक प्रमुख कारण ब्रिटिश चुनाव पद्धति है। यूरोप के अन्य देशों की भाँति ब्रिटेन मे आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली नहीं वरन साधारण बहुमत की प्रणाली और एक सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र है और इसी कारण छोटे-छोटे राजनीतिक दलो का विकास नही हो सका है। ड्यूवजर (Duverger) के मतानुसार, "दो दलीय प्रणाली वास्तव मे इस निर्वाचन प्रणाली का फल है जिसके अनुसार सघर्षरत उम्मीदवारो में से वह विजयी माना जाता है जिसे सर्वाधिक मत प्राप्त होते हैं अर्थात उसके असफल प्रतिद्वन्द्वियो को प्राप्त मत व्यर्थ जाते हैं।"[2] चतुर्थत ब्रिटिश लोकसदन के सभा भवन और कार्य पद्धति ने भी द्विदल पद्धति को स्थायी बनाने मे ही योग दिया है। ब्रिटिश लोकसदन का आकार अनुप्रस्थाकार (horizontal) है और आमने-सामने बैठने की इस पद्धति मे कोई सदस्य सहज ही अपने दल की निष्ठा का त्याग नही कर सकता। इसके अतिरिक्त लोकसदन की कार्यविधि ही ऐसी है कि उसमे तीसरे दल के लिए कोई स्थान नही है। बहुमत वाला दल कार्यक्रम प्रस्तावित करता है, अल्पमत दल इसका विरोध करता है और सम्पूर्ण जीवन दो राजनीतिक दलो का सीधा सघर्ष हो गया है।

1 How nature always does contrive
That every boy and every girl born into this world alive
Is either a little liberal or else
A little conservative
—W S Gilbert

2 Duverger *Political Parties* p 217

द्विदल पद्धति ने ब्रिटिश संवैधानिक व्यवस्था को बहुत अधिक प्रभावित किया है। द्विदल पद्धति के कारण आम चुनाव में एक राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त होना अवश्यम्भावी है और यह स्पष्ट बहुमत सबल तथा स्थायी मन्त्रिमण्डल को जन्म देता है। इस द्विदल पद्धति के कारण ही ब्रिटिश संसद की शक्ति का ह्रास और मन्त्रिमण्डल की शक्ति में वृद्धि हुई है।

ब्रिटिश सन्दर्भ में द्विदलीय प्रणाली का विपक्ष और पक्ष

ब्रिटेन की यह द्विदलीय प्रणाली बहुत अधिक विवादास्पद रही है। एक ओर डॉ० फाइनर और लास्की जैसे विचारकों के द्वारा इसे ब्रिटिश प्रजातन्त्र की सफलता का आधार बतलाया गया है तो दूसरी ओर **रैम्जे म्योर** ने अपनी पुस्तक *'How Britain is Governed'* में द्विदलीय पद्धति की कटु आलोचना की है। द्विदलीय प्रणाली के विपक्ष में प्रमुख रूप से निम्नलिखित बातें कही जाती हैं

(१) मतदान की स्वतन्त्रता सीमित—रैम्जे म्योर ने कहा है कि 'प्रत्येक राष्ट्र में सदा दो से अधिक विचारधाराएँ होती हैं'[1] और इस कारण जब केवल दो राजनीतिक दल होते हैं, तो नागरिकों की मतदान की स्वतन्त्रता बहुत अधिक सीमित हो जाती है। व्यवहार में, एक समस्या के दो से अधिक पक्ष होने सम्भव हैं और ऐसा हो सकता है कि मतदाताओं का एक बड़ा भाग दोनों राजनीतिक दलों में से किसी भी राजनीतिक दल की विचारधारा से सहमत न हो। ऐसी स्थिति में दो ही राजनीतिक दल होने पर इन व्यक्तियों को या तो राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता में तटस्थ रहना होता है या छोटी बुराई को छाँटना होता है।

(२) बहुमत दल की निरंकुशता—द्विदल प्रणाली होने के कारण एक ही राजनीतिक दल के हाथ में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति रहती है और इसके परिणामस्वरूप एक ऐसे निरंकुश बहुमत का जन्म होता है जो सदा ही अल्पमत को कुचलता और उसकी माँगों की अवहेलना करता रहता है।

(३) व्यवस्थापिका के महत्त्व में कमी और मन्त्रिमण्डलीय तानाशाही—द्विदल प्रणाली के विरुद्ध रैम्जे म्योर और अन्य विचारकों की सबसे प्रमुख आपत्ति यही है कि इसके कारण ब्रिटेन में व्यवस्थापिका के महत्त्व और सम्मान में कमी तथा मन्त्रिमण्डल की तानाशाही का विकास हुआ है। व्यवस्थापिका के बहुमत दल को दलीय अनुशासन के कारण मन्त्रिमण्डल का सदैव ही समर्थन करना होता है। इससे व्यवस्थापिका की सत्ता सीमित हो जाती है, व्यवस्थापिका एक 'लेखा-संस्था' (Recording Institution) और दल के सदस्य कार्यपालिका की इच्छानुसार मत देने वाले यन्त्र मात्र बनकर रह जाते हैं। रैम्जे म्योर का विचार है कि द्विदल पद्धति

1 "There are always more than two schools of thought in the nation."
—*Ramsay Muir*

ने व्यवस्थापिका के महत्त्व, सम्मान और शक्ति में इतनी अधिक कमी कर दी है कि आज ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल ने एक अधिनायक का रूप ग्रहण कर लिया है और यह स्थिति ब्रिटेन में प्रजातन्त्र के लिए निश्चित रूप से चिन्ताजनक है।

(४) अनेक हित बिना प्रतिनिधित्व के—देश की राजनीति में जब केवल दो ही राजनीतिक दल होते हैं तो अनेक वर्गों और हितों को व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व ही प्राप्त नहीं हो पाता और यह स्थिति प्रजातन्त्र के लिए उचित नहीं कही जा सकती है।

द्विदल प्रणाली का पक्ष

द्विदल प्रणाली के विपक्ष में कुछ बातें कही जा सकती हैं लेकिन इसका पक्ष विपक्ष की तुलना में निश्चित रूप से बहुत अधिक सबल है। द्विदल प्रणाली के प्रमुख रूप से निम्नलिखित लाभ बतलाये जाते हैं :

(१) वास्तविक प्रतिनिधि सरकार की स्थापना—प्रजातन्त्र का वास्तविक अभिप्राय यह है कि जनता के द्वारा ही सरकार का निर्माण किया जाय। लेकिन बहुदलीय व्यवस्था के अन्तर्गत सरकार का निर्माण जनता द्वारा नहीं, वरन राजनीतिक दलों के पारस्परिक समझौतों द्वारा होता है। केवल द्विदल प्रणाली के अन्तर्गत ही सरकार जनता की इच्छाओं का प्रत्यक्ष परिणाम होती है, क्योंकि इसके अन्तर्गत वही दल शासन का संचालन करता है, जिसे मतदाताओं का बहुमत प्राप्त हो। यही स्थिति प्रजातान्त्रिक धारणा के अनुकूल है।

(२) सरकार का निर्माण सरल—ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति होने के कारण आम चुनाव में दो में से एक राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त होता है और बहुमत प्राप्त राजनीतिक दल के द्वारा सरकार का निर्माण किया जाता है। इस प्रकार सरकार का निर्माण सरल हो जाता है। इसके अतिरिक्त, यदि एक सरकार का पतन हो जाय, तो उसके स्थान पर विरोधी दल सरकार का निर्माण करने के लिए तैयार रहता है और कभी भी संवैधानिक गतिरोध की स्थिति उत्पन्न नहीं होती।

(३) शासन में स्थायित्व और निरन्तरता—शासन का सबसे अधिक आवश्यक तत्व सुदृढ़ एवं स्थायी शासन होता है और इस गुण को द्विदल प्रणाली के अन्तर्गत ही प्राप्त किया जा सकता है। मन्त्रिमण्डल को व्यवस्थापिका में एक शक्तिशाली दल का समर्थन प्राप्त होता है और इस समर्थन के आधार पर मन्त्रिमण्डल दृढ़तापूर्वक शासन कार्य का सञ्चालन कर सकता है। ब्रिटेन में द्विदलीय पद्धति है, के कारण साधारणतया सरकार स्थायी होती है और इसके द्वारा भावी कार्यक्रम एवं नीति को विचारपूर्वक कार्य रूप में परिणत किया जा सकता है।

(४) शासन में एकता और उत्तरदायित्व की व्यवस्था—शासन कार्य सम्पादन [illegible] पृथक् [illegible] आवश्यक होती है और शासन [illegible]

मे इस प्रकार की एकता द्विदल प्रणाली के अन्तर्गत ही सम्भव है। इसके अतिरिक्त द्विदल प्रणाली म शासन की कुशलता-अकुशलता का उत्तरदायित्व आसानी से स्थापित किया जा सकता है, क्योंकि जो राजनीतिक दल बहुमत म होता है, शासन सम्बन्धी सभी कार्यों का उत्तरदायित्व उसी पर होता है।

(५) सगठित विरोधी दल—राजनीतिक दल शासन सचालन का काम ही नही, वरन शासन को नियन्त्रित रखने का काय भी करते हैं। शासन को नियन्त्रित रखने का काय उसी समय भलीभाँति किया जा सकता है जबकि विरोधी राजनीतिक दल सुसगठित और पर्याप्त शक्तिशाली हो। ब्रिटेन म द्विदलीय पद्धति होने के कारण विरोधी दल सदैव ही इस स्थिति म होता है कि वह शासन को मर्यादित रख सके।

वस्तुत प्रतिनिधि शासन के सचालन के लिए द्विदलीय प्रणाली ही सर्वाधिक उपयुक्त है। द्विदल प्रणाली के लाभो का वणन करते हुए लास्की लिखते हैं, 'यही एकमात्र प्रणाली है जिसके द्वारा जनता निर्वाचन के समय अपने शासन का प्रत्यक्ष चुनाव कर सकती है। यह उस शासन को अपनी नीति के अनुसार कानून बनाने की क्षमता प्रदान करती है। यह उसकी असफलता के परिणामो को समक्ष में आने वाले रूप मे सामने लाती है। यह दूसरे दल के शासन की अविलम्ब स्थापना भी कर सकती है।" डा० फाइनर और ब्राइस आदि लेखकों के द्वारा भी ऐसे ही विचार व्यक्त किये गये हैं। इस कथन म कोई अतिशयोक्ति नही है कि एक विशाल देश म ससदीय जनतन्त्र द्विदलीय पद्धति के आधार पर ही सफलता प्राप्त कर सकता है और ब्रिटेन म ससदीय प्रजातन्त्र की सफलता का श्रेय इस द्विदल प्रणाली को ही है।

(२) सुदृढ़ सगठन और केन्द्रीकरण—ब्रिटेन के राजनीतिक दल बहुत अधिक सगठित और केन्द्रीयकृत हैं। ससदीय शासन पद्धति के अन्तगत व्यवस्थापिका और कार्यपालिका म निकट सम्पर्क आवश्यक होता है और इसे सुदृढ तथा केन्द्रीकृत राजनीतिक दलों के आधार पर ही प्राप्त किया जा सकता है। ब्रिटिश राजनीतिक दलों की वास्तविक शक्ति दल के शीर्ष सगठन म निवास करती है और वहीं से दलीय क्रियाकलापों का नियन्त्रण और सचालन होता है। ब्रिटेन मे नीचे से ऊपर तक समस्त राजनीतिक दल एक सूत्र म बँधा रहता है।

(३) कठोर शासन—ब्रिटेन मे सुदृढ और केन्द्रीकृत राजनीतिक दलों का स्वाभाविक परिणाम कठोर दलीय अनुशासन मे देखा जा सकता है। कार्टर और अन्य के कथनानुसार, 'ब्रिटिश दल पद्धति की सरलता तथा अनुशासन अमरीका वासियों के लिए प्रशसा तथा ईर्ष्या का विषय है।" अमरीका म अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण काग्रेस के किसी सदन म दिये गये मतदान का सरकार के स्थायित्व पर कोई प्रभाव नही पडता और इसी कारण अमरीका मे अनेक बार दल के सदस्य अपने दल के नेता के निर्देश के विरुद्ध काग्रेस मे मतदान करते हैं। लेकिन

ब्रिटेन मे सरकार का भविष्य लोकसदन के प्रागण म निश्चित होना है और इसी कारण ब्रिटिश लोकसदन मे दलीय सचेतको (party whips) की व्यवस्था की गयी है जो दलीय नेता के साथ सम्पर्क रखते हुए सदस्यो को निर्देश देते रहते हैं और सदस्यो के लिए निर्देशो का पालन आवश्यक होता है। न केवल अमरीका, वरन् अन्य देशो के राजनीतिक दलो की तुलना मे भी ब्रिटिश राजनीतिक दल निश्चित रूप से अधिक अनुशासित है।

(४) **नेता का सर्वोच्च महत्त्व**—सभी देशो के राजनीतिक दलो म दलीय नेता का महत्त्व होता है किन्तु ब्रिटेन मे यह महत्त्व सर्वोपरि है। उन्नीसवी सदी के उत्तरार्द्ध मे दो प्रभावशाली व्यक्तियो (ग्लैडस्टन और डिजरली) के बीच प्रतिद्वन्द्विता प्रारम्भ होने के समय से ब्रिटिश जनता दलीय कार्यक्रमो को नही, वरन दलीय नेता को अपना मत प्रदान करती है और जब **'चर्चिल या एटली'** अथवा **'हीथ अथवा विल्सन'** इस बात के आधार पर मतदान किया जाता है, तो स्वाभाविक रूप से दलीय नेता दलीय राजनीति मे सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर लेता है। सदस्य सदस्य यह समझ लेते है कि उनकी विजय का आधार नेता का व्यक्तित्व है और वे नेता को अपना पूर्ण समर्थन प्रदान करते है।

(५) **वर्ग प्रकृति** (Class Character)—ब्रिटिश दल पद्धति का एक लक्षण दलो की वर्ग प्रकृति है जिसका तात्पर्य यह है कि दोनो प्रमुख राजनीतिक दल अलग-अलग वर्गों का निश्चित समर्थन प्राप्त करते है। मजदूर दल मजदूरो का प्रतिनिधित्व करता है और अनुदार दल जमीदारो, उद्योगपतियो, धनिकों और व्यापारी वर्ग का। लेकिन इसके साथ ही यह भी तथ्य है कि न तो मजदूर दल अकेले मजदूर दल के समर्थन के आधार पर सत्ता प्राप्त कर सकता है और न ही अनुदार दल जमीदारो और व्यापारियो के उच्च वर्ग के समर्थन के आधार पर सत्ता प्राप्त कर सकता है। इसलिए दोनो राजनीतिक दल बुद्धिजीवी मध्यम वर्ग को, जो किसी एक राजनीतिक दल के साथ बँधा हुआ नही है, अपनी ओर आकर्षित करने तथा विरोधी वर्ग के भी कुछ मतदाताओ का समर्थन प्राप्त करने के लिए सक्रिय रहते है। यही कारण है कि चुनाव के समय मजदूर दल का समाजवाद नरम तथा समझौतावादी हो जाता है और अनुदार दल की अनुदारता प्रगतिशील रूप ग्रहण कर लेती है। न्यूमन के शब्दो मे, **"अनुदारवादियो को श्रमिको का ध्यान रखना होता है और मजदूर दल व्यापारी वर्ग की पूर्णरूपेण उपेक्षा नहीं कर सकता।"**[1]

(६) **निरन्तर सक्रियता**—अमरीका और अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था वाले अन्य देशो मे राजनीतिक दल चुनाव के बाद दो तीन वर्ष के लिए राजनीति के प्रति

1 'The conservatives have to be mindful of the working men and the labour cannot completely disregard business."
—R G Neumann *European and Comparative Government* p 117

उदासीन हो जाते है क्योंकि यह स्पष्ट हो जाता है कि एक निश्चित समय के पूर्व सरकार मे परिवर्तन नही किया जा सकता। लेकिन ब्रिटेन म ससदात्मक व्यवस्था होने के कारण विरोधी राजनीतिक दल सरकार के पतन हेतु और शासक दल सत्ता बनाये रखने हेतु सदव सक्रिय रहते हैं। राजनीतिक दलो के लिए सक्रिय रहना इसलिए भी जरूरी हो जाता है कि कभी भी तीन सप्ताह के नोटिस पर चुनाव की घण्टी बज सकती है जसे १९५० के बाद १९५१ म चुनाव हुए और १९६४ के बाद १९६६ म। इसके अतिरिक्त उप चुनावो का भी महत्त्व होता है और कई बार तो उन पर सरकार का अस्तित्व निभर करता है। अत राजनीतिक दल सभाएँ बुलाने, साहित्य तयार करने, स्थानीय शाखाओ का सगठित करने, स्थानीय स्वशासन सस्थाओ के चुनाव म भाग लेने, उप चुनावो मे भाग लेने और सामान्य जनता से सम्पर्क स्थापित करने के कार्यो मे निरन्तर सक्रिय रहते हैं।

(७) सयम और समझौते की प्रवृत्ति—ब्रिटिश राजनीतिक दलो का एक अन्य महत्त्वपूर्ण लक्षण सयम और समझौते की प्रवृत्ति है, जिसने ब्रिटिश प्रजातन्त्र को सफलता प्रदान की है। दोनो राजनीतिक दलो के गठन का आधार सद्धान्तिक भेद है, भाषा, जाति या धमगत भेद नहीं और दोनो ही राजनीतिक दलो का सवैधानिक साधनो म पूर्ण विश्वास है। इसके अतिरिक्त शासक दल इस बात को स्वीकार करता है कि विरोधी दल को शासन की आलोचना करने का अधिकार है और विरोधी दल मानता है कि बहुमत दल को जनता न शासन करने का उत्तरदायित्व सौंपा है। दोनो ही राजनीतिक दल इस बात के प्रति भी सचेष्ट हैं कि उनकी स्थिति मे परिवर्तन हो सकता है। आज यदि यह शासक दल है तो कल उसे विरोधी दल की स्थिति प्राप्त हो सकती है और आज के विरोधी दल को कल शासक दल की स्थिति। इसलिए न तो शासक दल मनमानी करता है और न ही विरोधी दल विरोध के लिए विरोध। दोनो एक दूसरे के प्रति सम्मान, सहिष्णुता और समझौते की प्रवृत्ति अपनाते है।

(८) लूट प्रथा का अभाव (Absence of Spoils System)—अमरीका म राष्ट्रपति के चुनाव के बाद स्थायी पदाधिकारियो की एक बडी सख्या म परिवर्तन होता है। पहले से काय कर रहे पदाधिकारियो के स्थान पर उन व्यक्तियो को इन पदो पर नियुक्त किया जाता है, जिन्होंने चुनाव के समय राष्ट्रपति को विजयी बनाने में योग दिया था। इसे ही लूट की पद्धति कहते हैं। लेकिन ब्रिटिश राजनीति मे राजनीतिक दलो के द्वारा इस प्रकार का आचरण नहीं किया जाता। प्रशासनिक अधिकारियो की नियुक्ति की निश्चित पद्धति है और चाहे जिस राजनीतिक दल की सरकार का निर्माण हो, प्रशासनिक अधिकारी स्थायी रूप से अपने पदो पर बने रहते हैं। ब्रिटेन की यह पद्धति अमरीकन पद्धति की तुलना मे निश्चित रूप से श्रेष्ठ है।

विरोधी दल महत्त्व और कार्य

विरोधी दल का महत्त्व—ब्रिटेन म ससदीय लोकतन्त्र की सफलता का श्रेय

श्रेष्ठ राजनीतिक आचरण की है और इस प्रकार के श्रेष्ठ राजनीतिक आचरण का एक उदाहरण है विरोधी दल की महत्त्वपूर्ण स्थिति को मान्यता। ब्रिटिश सवधानिक व्यवस्था को उचित रूप से समझने के लिए विरोधी दल के कार्य और उसके महत्वपूर्ण स्थान का ज्ञान प्राप्त करना नितान्त आवश्यक है। १८२६ म टियर्ने (Tierney) ने कहा था कि, "इगलैण्ड मे विरोधी दल शासन का ही एक भाग है" और आज की स्थिति के सम्बन्ध म विवण्टन हॉग के शब्दो म विरोधी दल ब्रिटिश सविधान के कार्यकरण का आवश्यक और अपरिहार्य अग है।' वस्तुत इगलण्ड म विरोधी दल को सरकारी मान्यता प्राप्त होती है। उसे 'सम्राट का राजभक्त विरोधी दल' (Her Majesty's Loyal Opposition) कहते ह और उस राज्य की सचित निधि से ३,००० पौण्ड वार्षिक वेतन प्राप्त होता है। उसे मन्त्रियो के कार्यालय की पक्ति मे ही एक कमरा मिला हुआ होता है। जिस समय सम्राट ससद का उद्घाटन करते हैं, उस समय विरोधी दल का नेता प्रधानमन्त्री के साथ खडा होता है और उसे 'सम्राट का वकल्पिक प्रधानमन्त्री' कहा जाता है। विरोधी दल के अनेक सदस्य भी कैबीनेट के सदस्यो की भाति ही प्रिवी परिषद के सदस्य होते हैं। सगठित और शासन से मान्यताप्राप्त विरोधी दल का अस्तित्व ब्रिटेन की अपनी विशेषता है और सयुक्त राज्य अमरीका फ्रास या यूरोप के अन्य देशो मे यह बात नही देखी जा सकती।

विरोधी दल का सगठन—ब्रिटेन म सम्राट का विरोधी दल उतना ही निश्चित, तथ्यपूर्ण और सगठित है जितना कि सम्राट का शासन। विरोधी दल का अपना नेता, अपना 'छाया मन्त्रिमण्डल', अपने सचेतक और अपनी दलीय बठकें होती हैं। विरोधी दल के नेता का कार्य कम महत्त्वपूर्ण नही है और सदन म उसकी उपस्थिति भी उतनी ही अपरिहार्य है जितनी कि सदन के नेता की। वह शासन का प्रमुख विरोधी और आलोचक होता ह और इस रूप म उसके द्वारा ससदीय कार्यों और शासन की नीतियो को प्रभावित किया जाता है। विरोधी दल के नेता की सहायता के लिए 'छाया मन्त्रिमण्डल' (shadow cabinet) होता है जिसके सदस्य विभिन्न प्रशासनिक विषयो पर विचार करते है। विरोधी दल न केवल शासन की आलोचना करता, वरन् राष्ट्रीय सकट के अवसरो पर उसके द्वारा शासक दल के साथ पूर्ण सहयोग किया जाता है और ऐसे अवसरो पर ब्रिटेन मे राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डलों की स्थापना की परम्परा रही है।

विरोधी दल के

बहुमत दल के [illegible] न स्पष्ट है [illegible] का सचालन उसके समर्थन के आधार पर [illegible] है। विरोधी [illegible] स्पष्ट न है [illegible]

The oppositio[illegible] d in [illegible] of [illegible] working constitut[illegible] rpo

पर भी शासक दल के समान ही महत्त्वपूर्ण है और उनकी विवेचना निम्न रूपों में की जा सकती है

(१) शासन की आलोचना—संसद के विरोधी दल का सबसे प्रमुख कार्य शासन की आलोचना करना है। ब्रिटिश शासन की सैद्धांतिक स्थिति और वास्तविक स्थिति में बहुत अधिक अन्तर आ गया है। सिद्धान्ततया संसद कानून निर्माण के क्षेत्र में सम्प्रभु और प्रशासन पर नियन्त्रण रखने वाली संस्था है, किन्तु व्यवहार में कानून निर्माण और प्रशासन दोनों ही शक्तियों का प्रयोग मन्त्रिमण्डल द्वारा किया जाता है एवं संसद का कार्य आलोचना करना मात्र रह गया है। जैनिंग्ज ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि, "संसद शासन नहीं कर सकती। वह आलोचना करने से अधिक और कुछ नहीं कर सकती' तथा "यदि संसद का मुख्य कार्य आलोचना है, तो विपक्ष उसका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग है।" यद्यपि शासक दल के द्वारा भी शासन की आलोचना करने का कार्य किया जा सकता है, लेकिन शासक दल की भावनात्मक और अनुशासन सम्बन्धी सीमाएँ होती हैं और विरोधी दल आवश्यक निर्भीकता तथा स्वतन्त्रता के साथ यह कार्य कर सकता है।

(२) सरकारी नीति को प्रभावित करना—विरोधी दल न केवल शासन की आलोचना वरन् अपनी विचारधारा के आधार पर शासन की नीति को भी प्रभावित करता है। ब्रिटेन जैसे राजनीतिक दृष्टि से जागरूक देश में शासक दल विरोधी दल के विचारों की नितान्त अवहेलना नहीं कर सकता, क्योंकि इसका तात्पर्य अगले निर्वाचन में पराजय हो सकती है। अतः शासक दल विरोधी दल के उपयोगी विचारों को ग्रहण करने के लिए तत्पर रहता है।

(३) लोकतन्त्र की सुरक्षा—विरोधी दल का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कार्य लोकतन्त्र की सुरक्षा है। यदि शक्तिशाली विरोधी दल न हो, तो लोकतन्त्र के अन्दर शासक दल अधिनायकवादी प्रवृत्ति अपना सकता है। विरोधी दल शासक दल को इस बात के लिए बाध्य करता है कि वह अपनी नीतियों को लोकमत के अनुरूप बनाये रखे। विरोधी दल के ही कारण लोकमत की अवहेलना का तात्पर्य शासन से पदच्युति होता है। जैनिंग्ज का मत है कि "यह जानने के लिए कि अमुक जाति राजनीतिक रूप से स्वतन्त्र है अथवा नहीं, केवल यह जान लेना आवश्यक है कि वहाँ विपक्ष है अथवा नहीं। जब तक विपक्ष विद्यमान है अधिनायकतन्त्र नहीं हो सकता।"[1] लावेल का यह कथन ब्रिटेन पर पूर्णतया चरितार्थ होता है कि, "एक मान्यताप्राप्त विरोधी दल की स्थायी उपस्थिति से निरंकुशता के मार्ग में बाधा पड़ती है।"[2]

1 'To find out whether a people is politically free it is necessary only to ask if there is an opposition There is no dictatorship, so long as there is opposition' —*Jennings*

2 The constant presence of a recognised opposition is an obstacle to despotism —*Lowell*

विरोधी दल की उपादेयता—ब्रिटिश संविधान के अधिकांश लेखक तो विरोधी दल की उपादेयता स्वीकार करते हैं लेकिन कुछ के द्वारा इस पर सन्देह व्यक्त किया गया है और कुछ ने इसे हानिकारक भी माना है। उदाहरणार्थ, फ्राउड (Froude) ने दलीय व्यवस्था पर आधारित शासन व्यवस्था को अप्रत्यक्ष गृहयुद्ध का स्थिति माना है। लेकिन वास्तव में ऐसा सोचना नितान्त त्रुटिपूर्ण है। वस्तुस्थिति यह है कि जब विरोधी दल का अस्तित्व होता है तो शासन की नीति से असहमत वर्ग अपने विचार व्यक्त कर वैधानिक ढंग से शासन को प्रभावित करने का प्रयत्न करता है और गृहयुद्ध की कोई आशंका नहीं रहती। विरोधी दल के न होने पर विरोध व्यक्त करने का एकमात्र मार्ग गृहयुद्ध ही रह जायगा। इस प्रकार विरोधी दल का अस्तित्व गृहयुद्ध का विकल्प प्रस्तुत करता है। विरोधी दल की उपादेयता के सम्बन्ध में एक पंक्ति में कहा जा सकता है कि 'विरोधी दल लोकतन्त्र को लोकतन्त्र बनाये रखता है और इससे भी अधिक उसे एक सजीव और वास्तविक लोकहितकारी लोकतन्त्र का रूप प्रदान करता है।"

प्रमुख राजनीतिक दल सिद्धान्त और संगठन

वर्तमान समय में ब्रिटिश राजनीति के दो प्रमुख राजनीतिक दल हैं अनुदार दल और मजदूर दल। इसके अतिरिक्त १९वीं सदी और बीसवीं सदी के प्रारम्भिक २० वर्षों में उदार दल की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही है और आज भी इसे लगभग ८ प्रतिशत ब्रिटिश जनता का समर्थन प्राप्त है। अतः इन तीनों राजनीतिक दलों के सिद्धान्त और संगठन का अध्ययन किया जायगा।

अनुदार दल
(Conservative Party)

अनुदार दल के सिद्धान्त—अनुदार दल, जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है ब्रिटेन के परम्परागत आचार विचार और संस्थाओं को बनाये रखने के पक्ष में है। उसका सिद्धान्त है कि इनमें परिवर्तन तभी किया जाना चाहिए, जबकि परिवर्तन करना आवश्यक हो जाय और तब भी यह परिवर्तन धीरे धीरे ही किया जाना चाहिए।

अनुदार दल निजी सम्पत्ति, संस्थापित चर्च, राजमुकुट, साम्राज्य और देश पर पूंजीपति व कुलीन वर्ग के प्रभुत्व का समर्थक है। डा० फाइनर का कथन है कि "अनुदारवाद का सार उस द्वारा समर्थित सामाजिक संस्थाओं व उसकी प्रगति सम्बन्धी धारणाओं से स्पष्ट हो जाता है। अनुदार दल जिन सामाजिक संस्थाओं का समर्थन करता है, उनमें राजमुकुट, राष्ट्रीय एकता, चर्च, एक शक्तिशाली शासक श्रेणी और व्यक्तिगत सम्पत्ति की राज्य नियन्त्रण से स्वतंत्रता है।[1] वैयक्तिक स्व

1 'The essence of conservatism is to be discovered in the soc[ial] institutions which it approves and its attitude to the id[e]a o[f] progress The social institutions favoured by conservatives ar[e] crown and national unity church a powerful governing class and the freedom of private property from state interference

—Dr Fi[ner]

मे अनुदार दल ब्रिटिश अह का समर्थक रहा है और भूतकाल म उसने ब्रिटिश साम्राज्य को बनाये रखने की अथक चेष्टा की है। उसने आयरलैण्ड की स्वतन्त्रता का बडा विरोध किया और भारत की स्वतन्त्रता का भी वह विरोधी ही रहा है। भूतकाल मे उसने इस विश्वास को अपनाया है कि अँग्रेज जाति का कर्त्तव्य ससार भर की पिछडी जातियो को सभ्य बनाना है, चाहे यह काय उनकी इच्छा के विरुद्ध ही क्यो न हो और चाहे इसके लिए पाशविक शक्ति का माग ही क्या न अपनाना पडे। अनुदार दल प्रबल नौकरशाही के पक्ष मे है और उसका विचार है कि लॉर्ड सभा के सगठन मे चाहे सुधार किया जाय, लेकिन वतमान समय की अपेक्षा उसे अधिक शक्तिशाली बनाया जाना चाहिए।

साम्राज्यवाद समाप्त हो चुका है और वतमान समय म अनुदार दल या मजदूर दल की विदेश नीति म कोई विशेष अन्तर नही रहा है, किन्तु दक्षिण रोडेशिया और आव्रजन नियमो (Immigration laws) आदि के सम्बन्ध म अपनायी गयी नीति से उसके अहवादी दृष्टिकोण का आभास मिलता है। अनुदार दल का विचार है कि अब भी ब्रिटेन के द्वारा अन्तरराष्ट्रीय राजनीति म महत्त्वपूण भूमिका अदा की जानी चाहिए। जून १९७० म पद ग्रहण के बाद अनुदार दलीय हीथ सरकार के द्वारा पश्चिमी यूरोप के राज्यो के साथ घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करने की नीति अपनायी गयी और इसी के अन्तगत ब्रिटेन ने 'यूरोपियन साझा बाजार' (E C M) की सदस्यता प्राप्त की। अनुदार दलीय सरकार अमरीका के साथ घनिष्ट मैत्री सम्बन्ध स्थापित करने और ब्रिटेन की परमाणु शक्ति के विकास हेतु भी प्रयत्नशील है। ३० जनवरी से ३ फरवरी १९७३ की अमरीका यात्रा म प्रधानमन्त्री हीथ ने इसमे आशिक सफलता भी प्राप्त की है।[1]

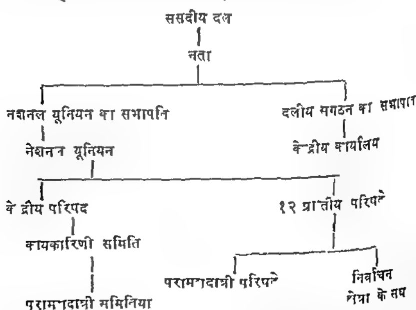
अनुदार दल की परम्परागत विचारधारा पूँजीवादी व्यवस्था का समथन करने की रही है, लेकिन द्वितीय महायुद्ध के बाद जब अनुदार दल के सम्मुख मजदूर दल की गम्भीर चुनौती उपस्थित हुई, तो अनुदार दल की नीति म प्रगतिशीलता के चिह्न दिखाई देने लगे हैं। सन १९४७ म रूढिवादी दल के सम्मेलन द्वारा स्वीकृत औद्योगिक प्रपत्र' (Industrial Charter) मे केन्द्रीय नियोजन को देश की प्रगति के लिए आवश्यक बतलाया गया। इसी प्रकार १९४९ मे प्रकाशित 'The Right Road for Britain' नामक नीति पत्र म राज्य की ओर से आवश्यक समाज सेवाओ व सभी के लिए रोजगार की व्यवस्था किये जाने पर जोर दिया गया। दल के सन् १९५१ के कायक्रम म 'गृह निर्माण योजना' अपनाने पर जोर दिया गया और इसके बाद भी दल निरन्तर सामाजिक सुरक्षा और लोक कल्याण की नीति अपनाता

1 दिनमान २५ फरवरी १९७३ पृ० ३१।

रहा है। अभी १६७२ में अनुदार दलीय सरकार द्वारा अधिनियम पारित कर ८० वर्ष से अधिक आयु वाले सभी व्यक्तियों के लिए पेंशन की व्यवस्था की गयी है।

अनुदार दल के सदस्यों में जमींदार, उद्योगपति, व्यापारी, साहूकार और पादरी आदि हैं। बौद्धिक वर्ग के व्यक्तियों के एक बड़े भाग का झुकाव भी अनुदार दल के प्रति है। यह भी देखने में आया है कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां और युवा आयु के व्यक्तियों की अपेक्षा प्रौढ़ आयु के व्यक्तियों और वृद्धों का झुकाव अनुदार दल की ओर अधिक होता है। वर्तमान समय में दल के सदस्यों की संख्या लगभग २५ लाख है।[1]

दल का संगठन—१८३२ के सुधार अधिनियम पारित होने के बाद जब मतदाताओं की संख्या बढ़ गयी, तो दल के द्वारा केन्द्रीय संगठन की आवश्यकता अनुभव की गयी। सन् १८६७ में 'कंजरवेटिवों तथा यूनियनिस्टों का राष्ट्रीय संघ' स्थापित हुआ। डिजरेली ने सन् १८७० में दल का केन्द्रीय कार्यालय खोला और दल का एक प्रबन्धक नियुक्त किया। उसके कुछ वर्षों बाद ही दल के केन्द्रीय संगठन में आवश्यक परिवर्तन हुए, निर्वाचन क्षेत्रों में इसकी शाखाएं स्थापित की गयीं और संगठन को व्यापक रूप प्रदान किया गया। वर्तमान समय में दलीय संगठन को निम्न चार्ट की सहायता से समझा जा सकता है



अनुदार दल का एक अखिल दलीय संगठन है, जिसका अधिवेशन वर्ष में एक बार होता है। इस अधिवेशन में वार्षिक क्रियाकलाप का सिंहावलोकन किया जाता

[1] S E Finer, *Comparative Government* p 158

व आगामी वर्ष के लिए कार्यक्रम तैयार किया जाता है। अनुदार दल का यह सम्मेलन मजदूर दलीय सम्मेलन से कम शक्तिशाली होता है, क्योंकि इसके द्वारा पारित प्रस्ताव मात्र परामर्शात्मक होते हैं और दलीय नेता द्वारा इन्हें अस्वीकार किया जा सकता है। राष्ट्रीय संघ की अपनी एक केन्द्रीय परिषद (Central Council) और एक कार्यकारिणी समिति होती है। केन्द्रीय परिषद दल की प्रशासनिक संस्था है लेकिन अपने बड़े आकार के कारण यह प्रभावदायक रूप में कार्य नहीं कर पाती। इसकी वर्ष में [illegible] बार बैठकें होती हैं। कार्यकारिणी परिषद की माह में एक बार बैठक होती है लेकिन इसके कार्य मात्र परामर्शात्मक ही हैं। दल पर नियन्त्रण और [illegible] की अन्तिम शक्ति दलीय नेता को प्राप्त होती है और केन्द्रीय परिषद तथा [illegible] समिति ऐसे साधन मात्र है, जिनके माध्यम से दल के सभी वर्गों [illegible] रखा जा सकता है। दल का प्रशासनिक संगठन और अनुशासन [illegible] कार्य लन्दन स्थित 'केन्द्रीय कार्यालय' द्वारा किया जाता है, जिसका [illegible] दल का अध्यक्ष होता है। केन्द्रीय कार्यालय दलीय उम्मीदवारों का [illegible] दल के वित्तीय मामलों का प्रबन्ध करता है। यह दल की [illegible] और दलीय उम्मीदवारों के लिए समर्थन जुटाता है। [illegible] नेता का ही नियन्त्रण होता है जिसे दलीय संगठन में [illegible]। दलीय कार्यक्रम के निर्धारण में नेता का महत्व सर्वोपरि [illegible] तो नीति घोषणा भी नेता के नाम से ही की जाती है [illegible] की नीति घोषणा'। लोकसदन का प्रत्यक्ष [illegible] होता है।

मजदूर दल
(Labour Party)

मजदूर दल की विधिवत् स्थापना सन् १८९९ में हुई ट्रेड यूनियन कांग्रेस के एक प्रस्ताव के आधार फरवरी १९०० में हुई। उस समय इसका नाम 'श्रमिक प्रतिनिधित्व समिति' (Labour Representation Committee) रखा गया और १९०६ में इसे बदलकर 'मजदूर दल' कर दिया गया।

मजदूर दल के सिद्धान्त—मजदूर दल की स्थापना मजदूरों तथा अन्य निम्न वर्ग के लोगों के हित साधन की दृष्टि से की गयी थी और मजदूर दल निश्चित रूप से समाजवादी विचारधारा वाला दल है। लेकिन मजदूर दल ने अपने समाजवाद की प्रेरणा मार्क्सवादी दर्शन से प्राप्त नहीं की है और यह दल मार्क्सवादी समाजवाद की अपेक्षा लोकतान्त्रिक समाजवाद में विश्वास करता है। मार्क्सवादी समाजवाद से उसका भेद मूलतः दो बातों में देखा जा सकता है। प्रथमतः मजदूर दल मार्क्सवाद के समान क्रान्ति की नीति में नहीं वरन् सुधार की नीति में विश्वास करता है। वह सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था में परिवर्तन हेतु शक्ति और बल प्रयोग के मार्ग को नहीं वरन् संवैधानिक और लोकतन्त्रात्मक मार्ग को अपनाने के पक्ष में है। डॉ० फाइनर के शब्दों में 'मजदूर दल दास कैपीटल (Das Kapital) की अपेक्षा बाइबिल से अधिक प्रभावित है।'[1] इसी प्रकार सन् १९५० में आयोजित अन्तरराष्ट्रीय समाजवादी सम्मेलन में अपनी स्थिति स्पष्ट करते हुए श्रमिक दलीय सचिव मार्गन फिलिप्स ने कहा था कि 'ब्रिटिश समाजवाद साम्यवाद की पद्धति पर नहीं, वरन् मैथोडिज्म (ईसाई धर्म के एक पन्थ) की पद्धति पर आधारित है।'

मजदूर दल के समाजवाद का साम्यवाद से दूसरा अन्तर यह है कि मजदूर दल के अनुसार आर्थिक नियोजन का संचालन तो लोकतन्त्रात्मक विधि से निर्वाचित सरकार द्वारा किया जाना चाहिए लेकिन आर्थिक नियोजन के नाम पर शासन द्वारा नागरिक स्वतन्त्रताओं का हनन नहीं किया जाना चाहिए। मजदूर दल साम्यवाद के समान नागरिक स्वतन्त्रताओं के मूल्य पर आर्थिक न्याय की प्राप्ति नहीं वरन् नागरिक स्वतन्त्रताओं के साथ आर्थिक न्याय की प्राप्ति करना चाहता है। इस प्रकार मजदूर दल लोकतान्त्रिक साधनों से समाजवादी समाज की स्थापना करना चाहता है।

इसके अतिरिक्त समाजवाद के प्रति मजदूर दल का झुकाव सिद्धान्तवादी नहीं वरन् यथार्थवादी है और उसने राष्ट्रीयकरण को उतनी ही सीमा तक अपनाया है जितनी सीमा तक इसे अपनाना आवश्यक था। १९४५-५१ के काल में मजदूर दलीय सरकार ने बैंक ऑफ इंगलैण्ड, कोयला उद्योग, यातायात उद्योग और

1 Labour Party is inspired by the Bible rather than Das Kapital —F

लोहा तथा इस्पात उद्योग का राष्ट्रीयकरण किया, लेकिन १९५१ के बाद मजदूर दल ने समझ लिया कि न तो राष्ट्रीयकरण आर्थिक क्षेत्र की सभी बुराइयों का हल है और न ही राष्ट्रीयकरण के नाम पर ब्रिटिश मतदाताओं को अपनी ओर आकर्षित किया जा सकता है। १९५१ के बाद से ही मजदूर दल ने राष्ट्रीयकरण के स्थान पर समाजीकरण (Socialization) पर बल देना प्रारम्भ किया है, जिसका तात्पर्य यह है कि उद्योग चाहे व्यक्तिगत स्वामित्व के क्षेत्र मे रहे, उनका संचालन सामाजिक हित की दृष्टि से होना चाहिए।

वैदेशिक क्षेत्र मे मजदूर दल साम्राज्यवाद विरोधी और शांतिवादी है और संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रति पूर्ण आस्था रखता है। अनुदार दल की अपेक्षा मजदूर दल रक्षा व्यय को सीमित रखने के पक्ष मे है।

वर्तमान समय मे आन्तरिक सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था और विदेश नीति के क्षेत्र म मजदूर दल और अनुदार दल म विशेष मतभेद नही है। इतना ही भेद बतलाया जा सकता है कि जहाँ अनुदार दल आर्थिक परिवर्तन की दिशा मे धीमी गति अपनाने के पक्ष मे है, मजदूर दल अपेक्षाकृत तीव्र गति अपनाना चाहता है।

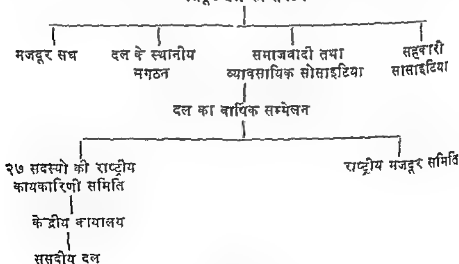
सदस्यता—मजदूर और उनके मजदूर संघ ब्रिटिश मजदूर दल की शक्ति के आधार हैं। मजदूर दल अपने व्यय का लगभग ७० प्रतिशत भाग मजदूर संघों (Trade Unions) से ही प्राप्त करता है। मजदूर वर्ग तो इस दल का समर्थक है ही, बुद्धिजीवी मध्यम वर्ग के भी एक भाग द्वारा इसका समर्थन किया जाता है और दल व्यापारी वर्ग को भी आकर्षित करने हेतु प्रयत्नशील है। ब्रिटेन के ३ करोड ७० लाख मतदाताओं म से मजदूर दल के द्वारा अपने सदस्यों की संख्या ६५ लाख बताई जाती है।[1]

दल का संगठन—सन १९१८ तक दल की सदस्यता केवल किसी सम्बद्ध संगठन की सदस्यता द्वारा ही प्राप्त की जा सकती थी, लेकिन अब सीधे ही मजदूर दल की सदस्यता प्राप्त की जा सकती है। लेकिन अब भी मजदूर दल की शक्ति का आधार ये सम्बद्ध संगठन ही है और सम्बद्ध संगठनों मे प्रमुख ये हैं (१) ६०० से अधिक लोकसदन की निर्वाचन क्षेत्रीय दल की इकाइयाँ, जिनके लगभग १० लाख व्यक्ति सदस्य हैं। ये दल के वार्षिक सम्मेलन म अपने प्रतिनिधि भेजती है और इन निर्वाचन क्षेत्रों के ११ क्षेत्रीय समूह बनाये गये हैं। (२) मजदूर संघ (Trade Unions)—जिनकी संख्या ७० से अधिक है और जिनम कुछ बहुत बडे हैं तथा कुछ बहुत छोटे। उदाहरण के लिए 'परिवहन और साधारण श्रमिकों के संघ' के १० लाख सदस्य हैं। ये बडे मजदूर संघ स्वयं अपने उम्मीदवार खडे करते हैं और इनकी सफलता निश्चित होती है। (३) सहकारी समितियां, जो निर्वाचन क्षेत्रों के संगठनों से

[1] S E Finer, *Comparative Government* (1971 Edition), p 159

सहयोग करती हैं। (४) समाजवादी सोसाइटिया, इनका गठन बुद्धिजीवी वर्ग का समर्थन प्राप्त करने के लिए किया गया है और इनमें कुछ प्रमुख हैं—फेबीयन सोसाइटिया, समाजवादी चिकित्सकों व शिक्षकों के संघ आदि।

दल की नीति निर्धारित करने वाला मुख्य अंग 'वार्षिक सम्मेलन' है, जिसमें प्रत्येक सम्बद्ध संगठन को ५,००० सदस्यों पर एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार होता है। संसद सदस्य और उम्मीदवार इसके पदेन सदस्य होते हैं। दल की नियन्त्रणकारी व प्रशासनिक सत्ता 'राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति' में निहित है। इसका चुनाव वार्षिक सम्मेलन द्वारा होता है और इसके २५ सदस्य होते हैं। संसदीय दल का नेता, उपनेता और कोषाध्यक्ष इसके पदेन सदस्य होते हैं। राष्ट्रीय सम्मेलनों के बीच के काल में नीति सम्बन्धी प्रश्नों का निर्णय करने, नियमों को लागू करने और अनुशासन बनाये रखने का काम इसी के द्वारा किया जाता है। राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति संसद के लिए उम्मीदवारों की छांट में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। दल के संसदीय अंग में सभी सदस्य सम्मिलित रहते हैं। इसके अधिकारियों में सभापति, उपसभापति, मुख्य सचेतक और सदस्यों द्वारा निर्वाचित एक समिति होती है।



उदार दल
(Liberal Party)

उदार दल, जो अपने आपको ह्विग (Whig) का उत्तराधिकारी मानता है, का अभ्युदय स्वेच्छाचारी शासन का विरोध करने के लिए हुआ। १९वीं सदी के अन्त और बीसवीं सदी के प्रारम्भिक चरण में उदार दल ने ग्रेट ब्रिटेन के राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक जीवन में अनेक सुधार किये हैं। आयरलैण्ड की स्वतन्त्रता मताधिकार सम्बन्धी सुधार और स्त्रियों को मताधिकार, मजदूरों की

स्थिति मे सुधार और लाड सभा की शक्तियो म कमी आदि महत्त्वपूण सुधार इस दल के नेतृत्व मे ही हुए।

भूतकाल मे उदार दल सभी प्रकार की स्वतन्त्रता का समथक रहा है और वतमान म वह परम्परागत वैयक्तिक स्वतन्त्रताओ के साथ-साथ आर्थिक समानता और स्वतन्त्रता का समथक है। वह मजदूरो के अधिकारो को मान्यता देता है और उनकी स्थिति सुधारने के पक्ष म है, किन्तु इसके साथ ही राष्ट्रीयकरण और समाजवाद का विरोधी है। उदार दल उद्योगो और आर्थिक जीवन के विकेन्द्रीकरण का समथक है। अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र म वह शान्ति का समथक है। वास्तव म आज उदार दल की विचारधारा बहुत स्पष्ट नही है और उदार दल के नेताओ म इस सम्बन्ध म मतभेद भी है। भूतकाल म उदार दल ने जिस विचारधारा को अपनाकर लोकप्रियता प्राप्त की थी, उसी को आज जोर शोर के साथ मजदूर दल द्वारा अपना लिए जाने के कारण ब्रिटिश राजनीति म उदार दल के लिए विशेष स्थान नही रहा है।

उदार दल के सदस्यो की सख्या लगभग १२ लाख ५० हजार है।[1] जून १९७० के चुनाव मे उदार दल ने कुल मतदाताओ के ७ ४ प्रतिशत मत प्राप्त किये, किन्तु साधारण बहुमत और एकल सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रो की व्यवस्था के कारण इस लोकसदन म केवल ६ स्थान ही प्राप्त हो सके। इसी कारण वतमान समय म उदार दल द्वारा इस बात पर जोर दिया जा रहा है कि ब्रिटेन मे चुनाव हेतु आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति को ग्रहण किया जाना चाहिए। अन्य दो प्रमुख दलो की तुलना मे उदार दल म अनुशासन निश्चित रूप से ढीला है।

अन्य दल

साम्यवादी दल—ब्रिटेन म साम्यवादी दल भी है, किन्तु इसे ब्रिटिश राजनीति म प्रभावपूण स्थान प्राप्त नही है। सन १९४५ के चुनावो म इसके दो प्रतिनिधि लोकसदन के लिए चुने गये थे और जून १९७० म भी इसका एक प्रतिनिधि चुना गया है। इसके सदस्यो की सख्या ५० हजार के लगभग है। साम्यवादी दल के सदस्यो ने मजदूर दल मे प्रवेश कर उस पर अपना प्रभुत्व स्थापित करने का प्रयत्न किया, किन्तु मजदूर दल ने इन प्रयत्नो को सफल नही होने दिया।

फासिस्ट दल—फासिस्ट दल की स्थिति साम्यवादी दल से भी बुरी है। इटली म मुसोलिनी के उत्थान के बाद ब्रिटेन म भी कुछ धनी घरानो के नवयुवक फासिस्ट बने और ओस्वाल्ड मोस्ले ने फासिस्टो का एक सघ बनाया। युद्ध काल मे मोस्ले को बन्दी बना लिया गया। जेल से छूटने पर मोस्ले ने फिर सगठन

[1] S E Finer *Ibid*, p 158

बनाया और एक पत्र भी निकाला । फासिस्ट दल का अब तक स्थानीय संस्थाओ या लोकसदन मे कोई प्रतिनिधित्व प्राप्त नही हुआ है ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के काल मे ब्रिटेन मे कुछ समय के लिए 'कामनवल्थ दल' का उदय हुआ था । इसी प्रकार 'स्वत त्र मजदूर दल' अब भी राजनीतिक प्रचार करता है और चुनाव मे भाग लेता है किंतु इन सभी दलो की शक्ति नगण्य सी है ।

प्रश्न

१ ब्रिटेन तथा अमरीका की दलबन्दी प्रथाओ की तुलना कीजिए और भेद बतलाइए । (विक्रम, १९६५, ६९)

२ इगलैण्ड तथा अमरीका के प्रसग मे राजनीतिक दलो का वर्णन कीजिए । (राजस्थान, १९७०)

३ ब्रिटेन मे राजनीतिक दलो के विकास का सक्षेप मे वर्णन कीजिए ।

४ ब्रिटेन मे द्विदलीय पद्धति के विकास और अस्तित्व के लिए क्या कारण उत्तरदायी रहे हैं ? इस पद्धति के गुणो और दोषो की परीक्षा कीजिए ।

५ ब्रिटेन मे राजनीतिक दलो के सगठन और उद्देश्यो का वर्णन कीजिए । (गोरखपुर, १९७०)

9

विधि और न्याय

(LAW AND JUSTICE)

"ब्रिटिश न्याय पद्धति श्रेष्ठता, निष्पक्षता, कार्यों में शीघ्रता तथा प्रशासन में स्वतन्त्रता के लिए देश तथा विदेशों में प्रसिद्ध है। इसकी श्रेष्ठता का प्रमाण यह है कि अन्य राष्ट्रों ने बहुत अधिक सीमा तक इसी पद्धति और प्रक्रिया को अपनाया है।"[1] —ऑग

ब्रिटिश विधि और न्याय व्यवस्था अपनी जिन विशेषताओं के लिए विख्यात है, सम्भवतया उनमें 'विधि का शासन' सबसे अधिक प्रमुख है।

विधि का शासन
(Rule of Law)

राजनीतिक दर्शन में ब्रिटिश संविधान और शासन व्यवस्था का नाम 'विधि के शासन' के साथ जुड़ा हुआ है। 'विधि के शासन' का आशय यह है कि इंगलण्ड के शासन का संचालन किन्हीं विशेष व्यक्तियों की इच्छा द्वारा नहीं, वरन् विधि के द्वारा ही किया जाता है। विधि सर्वोच्च है और कोई भी व्यक्ति विधि के नियन्त्रण से बच नहीं सकता। उच्चतम स्तर के व्यक्ति से लेकर निम्न स्तर के व्यक्ति तक सभी विधि के सम्मुख समान हैं। विधि के शासन में निरंकुश विशेषाधिकार और सरकारी मनमानेपन के लिए कोई स्थान नहीं है।

विधि के शासन की विशेषताएँ—प्रो० डायसी ने ब्रिटेन में विधि के शासन को संविधान का एक प्रमुख अंग माना है। उनके अनुसार विधि के शासन की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं

(१) विधि की सर्वोच्चता—ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सर्वोपरि स्थान विधि को प्राप्त है, किसी व्यक्ति अथवा सरकारी अधिकारी को नहीं। इसका तात्पर्य यह है

[1] It enjoys an enviable reputation both at home and abroad for its excellence and the impartiality, promptness and independence with which justice is administered Its excellence is proved by the fact that its methods and procedures have been adopted to a larger extent by other nations
—F A Ogg *English Government and Politics*, p 624

कि सरकारी अधिकारियों के द्वारा मनमाने तरीके से अपनी शक्तियों का प्रयोग नहीं किया जा सकता। उन्हें विधि द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्तर्गत रहते हुए ही अपना कार्य करना होता है। प्रशासन के सभी कार्यों के लिए आवश्यक है कि उनके किये जाने के लिए कानून द्वारा अधिकार प्रदान किया गया हो। इस सम्बन्ध में हेगन और पावेल (Hegan and Powell) लिखते हैं, "जो लोग सरकार बनाते हैं वे लोग मनमानी नहीं कर सकते। उनको अपनी शक्ति संसद द्वारा निर्मित नियमों के अनुसार ही प्रयोग में लानी होती है।"

(२) सभी नागरिकों के लिए एक ही प्रकार की विधि और न्यायालय—डायसी के अनुसार, विधि के शासन का दूसरा और अधिक महत्वपूर्ण तात्पर्य यह है कि सभी व्यक्ति चाहे उन्हें कोई भी पद या स्थिति प्राप्त क्यों न हो, विधि की दृष्टि में समान है और उनके लिए एक ही प्रकार के कानून तथा न्याय व्यवस्था की स्थापना की गयी है। प्रत्येक व्यक्ति राज्य के साधारण कानून के आधीन तथा साधारण न्यायालयों के न्याय क्षेत्र के अन्तर्गत है। 'विधि के शासन' की इस मान्यता के कारण ही ब्रिटेन में फ्रांस जैसे 'प्रशासनिक न्यायालय' (Administrative Courts) नहीं हैं, जिनके अन्तर्गत प्रशासनिक अधिकारियों के विरुद्ध उनके द्वारा किये गये उन कार्यों के लिए अभियोग चलाये जा सकते हैं, जो उन्होंने अपने पद पर रहते हुए किये हैं। ब्रिटेन की इस कानूनी समानता पर बल देते हुए डायसी ने कहा है, कि "हमारे लिए प्रधानमन्त्री से लेकर एक सिपाही या कर वसूल करने वाले तक, प्रत्येक कर्मचारी का दायित्व, प्रत्येक ऐसे कार्य के लिए जो कानून के अन्तर्गत न्याय्य न हो, उतना ही है जितना किसी साधारण नागरिक का होता है।"[1]

(३) विधि का शासन व्यक्ति के अधिकारों का रक्षक—डायसी के अनुसार विधि के शासन का तीसरा तात्पर्य यह है कि वहाँ विधि के सामान्य सिद्धान्त नागरिक स्वतन्त्रताओं के रक्षक और न्यायालय स्वतन्त्रता और अधिकारों के संरक्षक हैं। वहाँ व्यक्तियों के अधिकार और उनकी स्वतन्त्रताओं की सुरक्षा इसलिए नहीं है कि भारत या अमरीका की भाँति उनकी व्यवस्था संविधान के अन्तर्गत की गयी है, वरन् इसलिए है कि न्यायिक निर्णय उनकी रक्षा सदा से करते आये हैं। विधियाँ नागरिक स्वतन्त्रताओं और अधिकारों की किस प्रकार रक्षक हैं, इसे स्पष्ट करते हुए डायसी ने लिखा है कि, "केवल उस दशा को छोड़कर जब सामान्य न्यायिक विधि द्वारा यह निर्णय कर दिया गया हो कि कानून का स्पष्ट उल्लंघन हुआ है, किसी व्यक्ति को न कोई दण्ड दिया जा सकता है और न उसे विहित रूप से किसी प्रकार की शारी-

1 "With us every official from the Prime Minister to a constable or a collector of taxes is under the same responsibility for every act done without legal justification as any other citizen
—Dicey, *Introduction to the Study of the Law of the Constitution* (10th Edition 1959), p 19

रिक या आर्थिक हानि पहुचाई जा सकती ह। इस अथ मे विधि का शासन शासन की उस प्रत्येक व्यवस्था के विरुद्ध है, जो अधिकारी व्यक्तियो द्वारा औरो पर प्रतिबन्ध लगाने की शक्ति के व्यापक, स्वेच्छापूण तथा विवेकगत प्रयोग पर आधारित हो।"[1]

विधि के शासन की सीमाए

इगलण्ड क सविधान और शासन के अ तगत सिद्धा त और व्यवहार म भारी अन्तर पाया जाता है और विधि के शासन पर भी यही बात लागू होती है। सद्धान्तिक दृष्टि से विधि के शासन के अनुसार इगलैण्ड का प्रत्यक नागरिक कानून की दृष्टि म समान है। राजा से लकर निधनतम व्यक्ति तक सभी विधि के निय त्रण म है, सभी के लिए एक ही प्रकार के कानून और एक ही प्रकार के यायालय हैं, कि तु आचरण की दृष्टि से सभी बाते निमूल ह। कई एसी बातें है जो विधि क शासन से मेल नही खाती और उनके आधार पर हम डायसी के इस विचार से सह मत नही हो सकते कि इगलण्ड म विधि का शासन सर्वोच्च ह। विधि के शासन के अपवाद निम्नलिखित ह

(१) अधिकारियो की विवेकात्मक शक्ति—'विधि के शासन की व्याख्या करत हुए डायसी न प्रतिपादित किया ह कि विधि का शासन इस बात के विरुद्ध है कि अधिकारियो को 'शक्ति क व्यापक, स्वच्छापूण तथा विवेकगत प्रयोग का अधिकार प्राप्त हो।' डायसी के इस कथन के अनुसार ब्रिटन म विधि के शासन की व्यवस्था होने के कारण अधिकारी वग को कोई विवकात्मक शक्ति प्राप्त नही हानी चाहिए। कि तु वास्तविकता यह ह कि ब्रिटन म भी वतमान समय म राज्य का कायक्षेत्र बहुत अधिक व्यापक हो गया है और सरकारी अधिकारी अपन उत्तरदायित्वो को पूरा कर सके, इस दृष्टि स उ ह अपन विवक के अनुसार काय करने की छूट देना निता त आवश्यक हो गया है। ब्रिटेन म भी प्रशासनिक अधिकारियो को विवेकात्मक शक्ति प्राप्त होने क कारण विधि के शासन की धारणा सीमित हो गयी है।

(२) लोक अधिकारियो के सम्ब ध मे विशेष स्थिति—विधि के शासन का तात्पय यह है कि सामा य व्यक्तियो और लोक अधिकारियो म कोई भी अ तर नही किया जाना चाहिए, लेकिन ब्रिटन मे भी लोक अधिकारियो को कुछ सीमा तक विशेष स्थिति प्राप्त है। इगलैण्ड म १८९३ मे लोक अधिकारी सरक्षण अधिनियम' (The Public Authorities Protection Act) पारित किया गया, जिसके अनुसार किसी सरकारी कमचारी के विरुद्ध कोई भी कायवाही उसके द्वारा

[1] 'No man is punishable or can be lawfully made to suffer in body or goods except for a distinct breach of law established in the ordinary legal manner In this sense the rule of law is contrasted to every system of government based on the exercise by persons in authority of wide arbitrary or discretionary powers of constraint
—Dicey *Ibid* p 188

किये गये अपराध के ६ मास की अवधि के अन्दर ही की जानी चाहिए, अन्यथा वह काल-तिरोहित (Time barred) हो जाती है। साथ ही साथ, यदि सरकारी कर्मचारी पर चलाया गया अभियोग सत्य सिद्ध न हो सके, तो अभियोग चलाने वाले व्यक्ति को उसका खर्च देना होता है। ऐसी दशा में कोई भी व्यक्ति सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध अभियोग चलाने का साहस ही नहीं करता। सरकारी अधिकारियों को कुछ सीमा तक प्राप्त इस विशेष स्थिति के कारण विधि के शासन की धारणा सीमित हो गयी है।

(३) प्रदत्त व्यवस्थापन—इन सबके अतिरिक्त, पिछले लगभग ४०-५० वर्षों में राज्य के कार्यों और उसके परिणामस्वरूप कानूनों की संख्या बहुत अधिक बढ़ जाने के कारण व्यवस्थापिका के द्वारा अपनी कानून निर्माण की शक्ति का एक बड़ा भाग न्यायपालिका को सौंप दिया गया है, जिसे प्रदत्त व्यवस्थापन कहते हैं। यह प्रदत्त व्यवस्थापन भी विधि के शासन को सीमित ही करता है, क्योंकि डायसी द्वारा प्रतिपादित विधि के शासन का अर्थ यह है कि प्रशासन का प्रत्येक कार्य या तो सामान्य कानून अथवा संसदीय कानून द्वारा अधिकृत हो। किन्तु प्रदत्त व्यवस्थापन की उक्त व्यवस्था के अन्तर्गत प्रशासन स्वयं द्वारा निर्मित नियमों के अनुसार ही कार्य करता है। वर्तमान समय में प्रदत्त व्यवस्था की उपयोगिता सभी पक्षों के द्वारा स्वीकार कर ली गयी है और प्रदत्त व्यवस्थापन की इस व्यवस्था से 'विधि के शासन' को निश्चित रूप से बहुत आघात पहुँचा है।

(४) प्रशासनिक नियम और न्यायालय—विधि के शासन का एक पक्ष यह है कि सामान्य व्यक्ति और राजकीय पदाधिकारी दोनों के लिए एक ही प्रकार की विधि और एक ही प्रकार के न्यायालय हों। पर व्यवहार के अन्तर्गत वर्तमान समय में ऐसी बात नहीं है। अब ब्रिटेन में अनेक ऐसे प्रशासनिक न्यायालय हैं, जिनमें प्रशासन के अधिकारी न्यायाधिकारी होते हैं तथा सरकारी कर्मचारियों तथा साधारण नागरिकों के बीच उत्पन्न विवादों का निर्णय करते हैं। इसके अतिरिक्त इन विवादों का निर्णय साधारण कानूनों के आधार पर नहीं वरन् प्रशासन द्वारा निर्मित प्रशासनिक नियमों के आधार पर किया जाता है। श्रम न्यायालय और सामाजिक बीमे के न्यायालय इसी प्रकार के अर्द्ध न्यायिक निकाय हैं, जो सामान्य न्यायालयों के अधिकार क्षेत्र से अलग अपना कार्य करते हैं।

विधि के शासन की अन्य भी कुछ सीमाएँ हैं

(५) इंगलैण्ड के सम्राट के विरुद्ध किसी भी न्यायालय में कोई अभियोग नहीं चलाया जा सकता और उसे कभी भी किसी न्यायालय के सम्मुख पेश नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार सम्राट अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग करने में भी स्वतन्त्र है।

(६) विधि का शासन विदेशी शासकों तथा राजदूतों पर लागू नहीं होता। देश के कानून का उल्लंघन किये जाने पर भी उन पर किसी न्यायालय में अभियोग

नहीं चलाया जा सकता और न ही किसी विदेशी जहाज के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती है।

(७) गृहमन्त्री का यह अधिकार है कि वह किसी भी विदेशी नागरिक को ब्रिटिश प्रजा होने का प्रमाण पत्र दे सकता है, किसी के प्रमाण पत्र को रद्द कर सकता है या अवांछित विदेशी को देश से बाहर निकाल सकता है। इन सब कार्यों के लिए उसके विरुद्ध कोई अभियोग नहीं चलाया जा सकता।

(८) सैनिक दल के सदस्यों पर सैनिक विधियों का नियन्त्रण होता है। और उनका अभियोग सैनिक न्यायालय में ही निर्णीत होता है। चिकित्सक सर्वसाधारण चिकित्सा परिषद के अधीन होते हैं और प्रतिष्ठित धर्मोपदेशक धर्मपरक न्यायालयों के। ये सभी तथ्य सामान्य कानून और सामान्य न्यायालय के क्षेत्र को सीमित कर देते हैं।

वास्तव में, आज इंगलैण्ड में उस रूप में विधि का शासन विद्यमान नहीं है, जिस रूप में डायसी के द्वारा उसका चित्रण किया गया है। आज इंगलैण्ड में अनेक रूपों में इसका उल्लंघन किया जाता है और अब इंगलैण्ड में भी बहुत अधिक सीमा तक प्रशासकीय न्याय का विकास हो रहा है।

ब्रिटिश विधि का वर्गीकरण
(Classification of British Law)

ब्रिटेन में विधि का अर्थ उन नियमों से लिया जाता है, जिन्हें न्यायालय मान्यता प्रदान करते और व्यवहार में लाते हैं। उनके लिखित अथवा अलिखित होने का कोई विशेष महत्त्व नहीं है। ब्रिटेन की विधि का वर्गीकरण तीन रूपों में किया जा सकता है। **सामान्य विधि, नैसर्गिक या औचित्यपूर्ण विधि और परिनियम।** विधि के इन तीन रूपों की विवेचना निम्न प्रकार की जा सकती है

(१) सामान्य विधि (Common Law)—नार्मन विजय के पूर्व ब्रिटेन में विधियों के सम्बन्ध में कोई एकरूपता नहीं थी और न्यायाधीश स्थानीय रीतिरिवाजों को ही कानून के रूप में लागू करते थे। नार्मन तथा एन्जीवन राजाओं ने अनुभव किया कि सारे देश को सुसंगठित इकाई का रूप प्रदान करने के लिए समस्त देश में एकसमान कानून और न्याय पद्धति को अपनाना चाहिए। उन्होंने न्यायाधीशों को देश भ्रमण के लिए भेजना शुरू किया जिससे वे यह देख सकें कि समस्त देश में सम्राट के कानून ठीक प्रकार से लागू हों। इन न्यायाधीशों ने पहले-पहल तो स्थानीय प्रथाओं के आधार पर न्याय प्रदान किया, किन्तु धीरे धीरे भिन्न भिन्न स्थानों की प्रथाओं के भेद समाप्त होते गये और एकसमान सिद्धान्तों के आधार पर सामान्य न्याय पद्धति का विकास हुआ। इस प्रकार न्यायाधीशों के द्वारा विधियों की जो एकरूपता स्थापित की गयी उसी से सामान्य विधि का उदय हुआ। इस प्रकार सामान्य विधि उन विधियों को कहते हैं, जिनका सम्राट या संसद ने कभी निर्माण नहीं किया, वरन् जिनका विकास न्यायाधीशों के निर्णयों और अभिलेखों (Records) के आधार पर हुआ। वर्तमान समय में भी ब्रिटेन में सामान्य विधि

का विशेष महत्त्व है और संविदा नियम तथा सामाजिक अपराधों में सम्बन्धित नियम मुख्यतया इसी पर आधारित हैं।

(२) नैसर्गिक विधि या औचित्यपूर्ण विधि (Equity)—इगलैण्ड में नैसर्गिक विधि का विकास सामान्य विधि की त्रुटियों को दूर करने के नियमों के रूप में हुआ है। नैसर्गिक विधि अपने मूल रूप में सम्राट के विवेकाधारित नियमों पर आधारित है और इसका वहीं से उदय और विकास हुआ है। १३वीं सदी के मध्य में सामान्य विधि का विकास बन्द हो गया और सामान्य विधि पर्याप्त कठोर भी हो गयी। सामान्य विधि द्वारा अपने आपको परिस्थितियों के अनुसार न ढाल सकने के कारण अनेक मामलों में साधारण व्यक्तियों को न्याय न मिलने पाया। ऐसी स्थिति से दुःखी होकर लोग सम्राट के पास न्याय के लिए अपील भेजने लगे, क्योंकि सम्राट ही न्याय का स्रोत था। सम्राट के पास पहले से ही बहुत अधिक कार्य होने के कारण उसके लिए इस प्रकार की अपीलों के सम्बन्ध में निर्णय कर सकना सम्भव नहीं था। अतः उसने इन अपीलों को चांसलर के पास भेजना शुरू कर दिया जो कि उस समय सम्राट की परिषद् का कानूनी सदस्य होता था। उसके आधीन ही कानून तथा न्याय विभाग होता था और उसके द्वारा किये जाने वाले कार्यों से चांसरी न्यायालय का उदय हुआ। चांसरी न्यायालय का अध्यक्ष चांसलर ही बनाया गया और उसके द्वारा अपनी न्याय भावना, औचित्य, सद्विवेक और नैतिकता के आधार पर जो निर्णय दिये जाते थे, उससे 'नैसर्गिक विधि' का विकास हुआ। १९वीं सदी तक नैसर्गिक विधि के नियम पर्याप्त स्पष्ट हो गये। १८७३ के न्यायालय अधिनियम ने यह निश्चित किया कि सम्राट की बेंच और दीवानी के बेंच न्यायालय 'चांसरी' में न्याय व्यवस्था सामान्य विधि और नैसर्गिक विधि दोनों के नियमों के अनुसार होनी चाहिए। इसी अधिनियम में यह भी कहा गया कि सामान्य विधि और नैसर्गिक विधि में संघर्ष उत्पन्न होने पर नैसर्गिक विधि को लागू किया जाय।

(३) परिनियम विधि (Statute Law)—परिनियम विधि उन विधियों को कहा जाता है, जिनका निर्माण संसद द्वारा किया गया हो। १९वीं सदी तक इंगलैण्ड का अधिकांश कानून सामान्य कानून अथवा नैसर्गिक विधि पर आधारित था। उसके पश्चात् सामान्य विधि और नैसर्गिक विधि अपने आपको बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार नहीं ढाल सकीं और इन विधियों में अनेक त्रुटियाँ आ गयीं। ब्रिटेन तीव्र गति से लोक कल्याणकारी राज्य की ओर बढ़ रहा था, इसलिए कानून को निश्चित और व्यापक रूप प्रदान करने की आवश्यकता अनुभव की गयी। इसलिए संसद द्वारा प्रतिवर्ष अनेक विधेयक पारित किये जाने लगे, जिन्हें सम्राट की औपचारिक स्वीकृति से कानून का रूप प्राप्त हुआ। ये कानून समस्त देश में लागू होते हैं और संसद के सम्प्रभु होने के कारण न्यायालय भी इन्हें अवैध घोषित नहीं कर सकते। वर्तमान समय में परिनियम विधि का ही प्रचलन बढ़ता जा रहा है।

परिनियम विधि की शक्ति सामान्य विधि और नैसर्गिक विधि दोनों से अधिक है।

तुलना मे अधिक है। परिनियम विधि का सामान्य विधि या नैसर्गिक विधि से विरोध होने पर परिनियम विधि ही मान्य होती है और अन्य प्रकार की विधि अप्रभावी हो जाती है। परिनियम विधि का विधि के अन्य दो रूपों से महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि परिनियम विधि संसद द्वारा निर्मित हुई है लेकिन सामान्य विधि और नैसर्गिक विधि का विकास न्यायाधीशों के निर्णय से हुआ है।

कानून व न्याय व्यवस्था की विशेषताएँ

ग्रेट ब्रिटेन में विधि और न्याय की एक श्रेष्ठ व्यवस्था है और वहाँ के नागरिक अपनी इस व्यवस्था पर गर्व करते है। विधि और न्याय व्यवस्था की उल्लेखनीय विशेषताएँ इस प्रकार है

(१) **विधि का शासन और सभी व्यक्तियों के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय**—ब्रिटिश विधि और न्याय व्यवस्था की सर्वप्रमुख विशेषता निश्चित रूप से 'विधि का शासन' ही है जिसकी विस्तृत विवेचना इस अध्याय के प्रारम्भ में की जा चुकी है।

(२) **कानून का असंहिताबद्ध (Uncodified) रूप**—ब्रिटेन में विधान की ही भाँति विधि के अधिकांश भाग का विकास हुआ है, निर्माण नहीं। इसी कारण ब्रिटिश कानून का अधिकांश भाग असंहिताबद्ध ही है, भारत या अमरीका की भाँति संहिताबद्ध नहीं। ब्रिटिश कानून का अधिकांश भाग उस रूप में है जिसे 'सामान्य कानून' (Common Law) कहते हैं और जिसे न्यायालयों के अनेक निर्णयों में देखा जा सकता है। औचित्य की धारणा के आधार पर न्यायाधीशों द्वारा दिये गये निर्णय भी असंहिताबद्ध कानून का ही एक बड़ा भाग है। किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं लिया जाना चाहिए कि ब्रिटेन में संहिताबद्ध कानून हैं ही नहीं। संसद का अधिकार क्षेत्र बढ़ने के साथ साथ ब्रिटेन में संसदीय कानून और प्रदत्त व्यवस्थापन बढ़ता जा रहा है और कानून का यह रूप संहिताबद्ध ही है।

(३) **दीवानी व फौजदारी कानून मे भेद**—ब्रिटेन मे दीवानी व फौजदारी कानून तथा उनसे सम्बन्धित न्यायिक प्रक्रिया में भेद किया गया है। दीवानी कानून का सम्बन्ध समाज के सदस्यों अर्थात् उनके अधिकार, कर्त्तव्य तथा दायित्व सम्बन्धी विवादों से होता है और उनके अन्तर्गत व्यक्तियों के द्वारा स्वयं ही अभियोग चलाये जाते हैं राज्य के द्वारा नहीं। फौजदारी कानूनों का सम्बन्ध पूरे समाज अथवा राज्य के विरुद्ध किये गये अपराधों से होता है और उनके अन्तर्गत अभियोग का संचालन राज्य की ओर से किया जाता है। लेकिन दीवानी और फौजदारी कानून की यह विभाजन रेखा सूक्ष्म ही है और अनेक ऐसे विवाद होते है जिनका एक पक्ष दीवानी और दूसरा पक्ष फौजदारी कानूनों से सम्बन्धित होता है। दीवानी और फौजदारी विवादों में यह भी अन्तर है कि जूरी का प्रयोग सामान्यतया फौजदारी अभियोगों में ही किया जाता है।

(४) न्यायपालिका की स्वतन्त्रता—ब्रिटेन में न्यायपालिका को स्वतन्त्र और निष्पक्ष बनाये रखने का पूरा प्रयत्न किया गया है और इस सम्बन्ध में कई व्यवस्थाएँ की गयी हैं। न्यायाधीशों की नियुक्ति राजमुकुट द्वारा लार्ड चान्सलर अथवा प्रधानमन्त्री की सिफारिश पर की जाती है और न्यायाधीशों की छाँट अनुभवी बैरिस्टरों में से की जाती है। उनकी नियुक्ति सदाचरण काल तक के लिए होती है और उन्हें सम्राट के द्वारा उसी स्थिति में पदच्युत किया जा सकता है, जबकि संसद के दोनों सदन इस उद्देश्य से सम्राट की सेवा में सम्बोधन प्रस्तुत करें। पदोन्नति की व्यवस्था भी ऐसी नहीं है कि उसका न्यायाधीशों की निष्पक्षता पर विपरीत प्रभाव पड़े। उदाहरणार्थ, काउण्टी के न्यायाधीश को उच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने की कोई आशा नहीं होती, जिसके कारण न्यायाधीश प्रशासनिक अधिकारियों की कृपा प्राप्त करने का प्रयत्न करें। इस कारण न्यायाधीश न तो शासन के अधीन होते हैं और न ही कृपाकांक्षी। न्यायाधीशों के लिए पर्याप्त वेतन की व्यवस्था की गयी है जिससे वे घूस के प्रलोभन से बचे रहें। न्यायाधीशों का वेतन संचित निधि पर भारित होने के कारण मतदान से बाहर होता है और संसद द्वारा उसमें कोई कमी नहीं की जा सकती। संसद में अथवा उसके बाहर न्यायाधीशों के कार्यों की आलोचना नहीं की जा सकती, क्योंकि ऐसा करने वाले के विरुद्ध 'न्यायालय के अपमान' (Contempt of Court) की कार्यवाही की जा सकती है।

सभी व्यक्तियों को निष्पक्ष न्याय प्राप्त हो सके, इसके लिए कुछ अन्य व्यवस्थाएँ की गयी हैं। न्यायालय के द्वार सभी के लिए खुले हैं। वादी तथा प्रतिवादी दोनों ही अपना पक्ष प्रस्तुत करने के लिए वकील रख सकते हैं और उनके द्वारा जूरी की माँग की जा सकती है। न्यायिक कार्यवाही खुले तौर पर होती है और न्यायाधीश अपने निर्णय के पक्ष में तर्क प्रस्तुत करते हैं। नागरिकों को निर्णय के विरुद्ध अपील करने का भी अधिकार है। इस प्रकार ब्रिटिश न्याय व्यवस्था स्वतन्त्र और निष्पक्ष है तथा इस सम्बन्ध में जैनिंग्ज ने कहा है कि, "ब्रिटिश न्यायाधीशों के विरुद्ध कभी भी पक्षपात, भ्रष्टाचार या राजनीतिक प्रभाव का आरोप नहीं लगाया जाता।"[1]

(५) न्याय विभाग का सुव्यवस्थित संगठन—१९वीं सदी तक इंग्लैण्ड में न्याय विभाग सुव्यवस्थित रूप से संगठित नहीं था। वहाँ अनेक प्रकार के न्यायालय थे, जिनकी कार्यविधि भिन्न-भिन्न प्रकार की थी और अनेक बार इस सम्बन्ध में भी मतभेद उत्पन्न हो जाता था कि एक विशेष विवाद किस न्यायालय के सम्मुख प्रस्तुत किया जाना चाहिए। १८७३ से लेकर १८७६ के बीच इस सम्बन्ध में अनेक कानून पास किये गये, जिनके परिणामस्वरूप केवल 'जस्टिस ऑफ पीस' नाम के न्यायालय ही

1 "No allegation of partiality or corruption or political influence is ever made against British Judges
—Sir Ivor Jennings *The Queen's Government* p. 11

छोड़कर व्यावहारिक दृष्टि से सभी न्यायालय अब एक सूत्र में आ गये हैं तथा न्यायविधि व न्यायक्षेत्र आदि से सम्बन्धित कठिनाइयाँ दूर हो गयी हैं।

(६) न्यायिक पुनर्विलोकन (Judicial Review) का अभाव—भारत तथा संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्राप्त होता है जिसके आधार पर उच्चस्तरीय न्यायालय ऐसे कानूनों को अवैध घोषित कर सकते हैं जिनके द्वारा संविधान का उल्लंघन किया गया हो। इसी आधार पर न्यायपालिका को 'संविधान का संरक्षक' (Guardian of the Constitution) कहा गया है। लेकिन ब्रिटेन में संसद की सर्वोच्चता है और न्यायालयों को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह संसद द्वारा पारित अधिनियमों की वैधानिकता की जाँच कर सकें। संसद के द्वारा जब तत्कालीन संवैधानिक व्यवस्था के विपरीत किसी अधिनियम का निर्माण किया जाता है तो संविधान के उल्लंघन का प्रश्न नहीं उठता, वरन संविधान लचीला होने के कारण यही समझा जाता है कि संसद ने विधान में परिवर्तन कर दिया।

(७) जूरी प्रथा—ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता जूरी प्रथा है, जिसका प्रयोग दीवानी अभियोगों की अपेक्षा फौजदारी अभियोगों में अधिक किया जाता है। यह जूरी प्रथा १२वीं सदी से चली आ रही है। जूरी में १२ व्यक्ति होते हैं और वे मानवीय सिद्धान्तों के आधार पर अभियोग की सुनवाई करते हैं। अभियोग की पूरी सुनवाई के बाद वे न्यायाधीश के सम्मुख अपने विचार रखते हैं कि अभियुक्त दोषी है अथवा नहीं। न्यायाधीश सामान्यतया जूरी के परामर्श का बहुत सम्मान करते हैं। जब जूरी अभियुक्त के पक्ष में निर्णय देती है, तो पुलिस उसके विरुद्ध निगरानी की अपील नहीं कर सकती। जूरी प्रथा के कारण न्याय के साथ दया का सम्मिश्रण हो जाता है। जूरी ने अनेक बार दमनकारी तथा संकुचित कानून से नागरिकों की स्वातन्त्र्य रक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण कदम उठाये हैं। ब्रिटिश जूरी अपनी निष्पक्षता, निर्भयता और विवेकशीलता के लिए विश्व-विख्यात है।

(८) निःशुल्क कानूनी सहायता—ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की एक अन्य विशेषता निःशुल्क कानूनी सहायता की व्यवस्था है। कानूनी सहायता एवं परामर्श अधिनियम, १९४९ तथा कानूनी सहायता (स्काटलण्ड) अधिनियम, १९४९ के अन्तर्गत ऐसी व्यवस्था है कि आर्थिक दृष्टि से निर्बल व्यक्तियों को दीवानी के मामलों में उच्च न्यायालय तथा 'अपील के न्यायालयों' (Courts of Appeal) के मामलों में इंगलैण्ड व वेल्स में तथा दौरा न्यायालय व शरिफ न्यायालयों के मामलों में स्काटलण्ड में निःशुल्क कानूनी सहायता प्राप्त की जा सकती है। इंगलैण्ड व वेल्स में लॉर्ड सभा की अपील के मामलों में भी कानूनी सहायता की व्यवस्था है। इस व्यवस्था के आधार पर निर्धन वर्ग को न्याय प्राप्त करने में सुविधा रहती है।

(९) न्यायालय, नागरिकों की स्वतन्त्रता के रक्षक—ब्रिटिश न्यायालय नाग

रिक अधिकारा और स्वत त्रताओ के रक्षक हैं। ब्रिटेन म कोई लिखित सविधान व मौलिक अधिकार न होन पर भी वहाँ के नागरिको को अन्य देशो क नागरिको स कम स्वत त्रता प्राप्त नही ह। विधि का शासन तो नागरिक स्वत त्रताओ का रक्षक है ही, इसके अतिरिक्त न्यायालय बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus), परमादेश (Mandamus), उत्प्रेषण (Certiorari) तथा प्रतिषेध (Prohibition) आदि के लेख जारी करके नागरिको की स्वत त्रता की रक्षा करते और लोकतत्र को सुदृढता प्रदान करते हैं।

(१०) विकेन्द्रित न्याय व्यवस्था—ब्रिटिश न्यायिक पद्धति की एक विशेषता उसके 'सर्किट न्यायालय' (Circuit Courts) हैं। ये न्यायालय मुकदमो की सुनवाई एक निश्चित स्थान पर करने के बजाय स्थान स्थान पर जाकर करत हैं। इसन न्याय व्यव था विकेन्द्रित हो गयी है और व्यक्तियो को न्याय प्राप्त करन म सुविधा रहती है। काउण्टी न्यायालय, जि ह दीवानी विवादो के सम्बन्ध म विस्तृत अधिकार क्षेत्र प्राप्त है, लगभग ६० सर्किट समूहो मे विभक्त ह। इसी प्रकार अनेक फौजदारी मुकदमो की सुनवाई 'एसाइज न्यायालयो' (Assize Courts) द्वारा की जाती है और ऐसे न्यायालय वष म तीन चार बार अपने क्षेत्र के विभिन्न नगरो म मुकदमे सुनते है। इसीलिए इन्ह 'भ्रमणशील न्यायालय' भी कहा जाता है।

ब्रिटिश न्यायालयो का सगठन

(Organisation of British Judiciary)

सन १८७३ के पूव ब्रिटिश न्यायालयो का सगठन बहुत ही अधिक अव्यवस्थित था। देश मे विभिन्न प्रकार के न्यायालय थे जिनमे दीवानी, फौजदारी, धार्मिक उत्तराधिकार तथा तलाक सम्बधी आदि मुख्य थे। इन न्यायालयो की कार्यविधि मे स्पष्टता का अभाव था और इनम अधिकार क्षेत्र सम्बधी विवाद भी उत्पन्न होत रहते थे। अत १८७३ ७६ के काल म ब्रिटिश न्यायपालिका को पुनर्गठित करने के लिए विभिन्न अधिनियम पारित किय गये और ब्रिटिश न्यायपालिका का वतमान सगठन इन अधिनियमो पर ही आधारित है। अब ब्रिटिश न्यायपालिका को केवल दो प्रकार के न्यायालयो म बाट दिया गया है दीवानी और फौजदारी। दीवानी न्यायालयो के द्वारा लेन देन समझौते को भग करना, किसी की सम्पत्ति पर अधिकार कर लेना, उत्तराधिकार और मानहानि आदि स सम्बन्धित विवादो पर विचार किया जाता है। फौजदारी न्यायालयो के द्वारा चोरी, डकैती, मारपीट, जालसाजी हत्या आदि से सम्बन्धित विवादो पर विचार किया जाता है। इनके अतिरिक्त विशेष मुकदमो के न्यायालयो की व्यवस्था की गयी है।

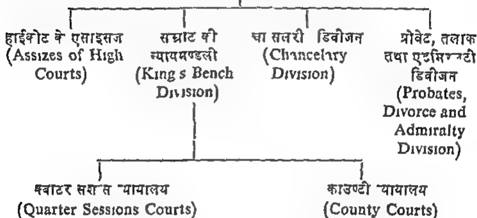
ब्रिटिश न्याय व्यवस्था के गठन को अग्र चित्रो की सहायता स समझा जा सकता है

दीवानी न्यायालय
(Civil Courts)

लॉर्ड सभा
(राज्य का सर्वोच्च अपीलीय न्यायालय)

अपील का न्यायालय
(Court of Appeal)

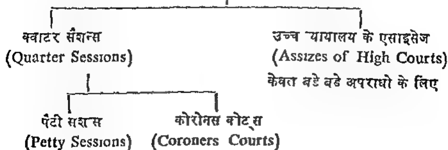
न्याय का उच्च न्यायालय
(High Court of Justice)



फौजदारी न्यायालय
(Criminal Courts)

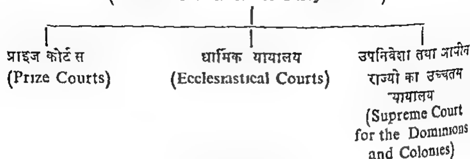
लॉर्ड सभा (राज्य का सर्वोच्च न्यायालय)

फौजदारी मामलों में अपील का न्यायालय
(Court of Criminal Appeal)



विशेष मुकदमो के न्यायालय
(Courts for Special Matters)

प्रिवी परिषद की न्यायिक समिति
(Judicial Committee of Privy Council)



दीवानी न्यायालय
(Civil Courts)

काउण्टी न्यायालय (County Courts)

दीवानी क्षेत्र मे सबसे प्रथम स्तर के न्यायालय को काउण्टी न्यायालय (County Courts) कहा जाता है। ब्रिटेन मे काउण्टियां उसी प्रकार के प्रादेशिक उपविभाग है जिस प्रकार भारत आदि देशो मे जिले हैं। २०० पौण्ड से कम धनराशि वाले विवादो की सुनवाई इन न्यायालयो मे की जाती है। न्याय की दृष्टि से इगलण्ड तथा वेल्स के क्षेत्र को ५०० विभागो मे विभाजित किया गया है और इन ५०० विभागो को ६० सर्किटो मे, जिनमे से प्रत्येक सर्किट मे ८ या ६ काउण्टी न्यायालय है। एक सर्किट का एक न्यायाधीश होता है जिसकी नियुक्ति लार्ड चान्सलर द्वारा की जाती है। सर्किट न्यायाधीश को अपनी सर्किट की प्रत्येक काउण्टी मे मास मे कम से कम एक बार अपना न्यायालय अवश्य ही लगाना होता है। प्रत्येक सर्किट न्यायालय मे एक पेशकार होता है जो मुकदमो का रजिस्टर करता है। इस पेशकार को यह अधिकार होता है कि वह छोटे छोटे विवादो का आपस मे समझौता करवा कर निर्णय करवा दे। सर्किट न्यायालय के निर्णय की अपील उच्च न्यायालय मे हो सकती है।

उच्च न्यायालय
(High Court)

काउण्टी न्यायालय के ऊपर उच्च न्यायालय के विभिन्न विभाग हैं। उच्च न्यायालय मे उन विवादो को सीधे प्रस्तुत किया जा सकता है जो काउण्टी न्यायालय के क्षेत्राधिकार से बाहर है। इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालय मे काउण्टी न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील की जा सकती है। उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपील अपील के न्यायालय मे उसकी अनुमति से ही की जा सकती है। उच्च न्यायालय के तीन विभाग कर दिये गये हैं

(i) सम्राट की न्याय मण्डली (King's Bench Division)—इसमे १६ न्यायाधीश तथा एक लार्ड प्रधान न्यायाधीश होता है। इन्ही मे से 'एसाइसज के न्यायाधीश' चुने जाते हैं, जो भ्रमण करते हुए न्याय कार्य करते है। जहाँ उनका न्यायालय होता है, उसे उच्च न्यायालय की अदालत माना जाता है। इनमे दीवानी तथा फौजदारी दोनो ही प्रकार के विवाद आते हैं तथा काउण्टी न्यायालयो के विरुद्ध अपील की सुनवाई भी इनके द्वारा की जाती है।

(ii) चान्सलरी डिवीजन—इसमे पाच न्यायाधीश होते है तथा लार्ड चान्सलर इसका अध्यक्ष होता है। इसमे 'नैसर्गिक न्याय' (Equity) से सम्बन्धित मुकदमो की सुनवाई की जाती है। इसमे मृत व्यक्तियो तथा नाबालिगो की जायदाद के प्रबन्ध और दिवालिये आदि से सम्बन्धित विवाद आते है।

(iii) प्रोबेट, तलाक तथा एडमिरलटी डिवीजन—इसमे उत्तराधिकार, तलाक या समुद्री यात्रा के समय जहाजो पर हुए अपराधो से सम्बन्धित विवादो पर विचार किया जाता है। यद्यपि इन विभिन्न विभागो के अलग अलग कार्यक्षेत्र हैं, लेकिन कोई भी न्यायाधीश किसी भी विभाग मे न्याय कर सकता है और विवादो को भी एक विभाग से दूसरे विभाग मे भेजा जा सकता है।

अपील का न्यायालय—उच्च न्यायालय के उपरोक्त तीनो विभागो के विरुद्ध अपीलें, 'अपील के न्यायालय' मे की जा सकती हैं जिसमे लार्ड न्यायाधीश, उच्च न्यायालय के तीनो विभागो के अध्यक्ष तथा कुछ अन्य न्यायाधीश होते हैं। लार्ड चान्सलर 'अपील के न्यायालय' का अध्यक्ष होता है।

लॉर्ड सभा—ग्रेट ब्रिटेन मे लॉर्ड सभा अपील का सर्वोच्च न्यायालय है, जिसके द्वारा दीवानी और फौजदारी दोनो ही प्रकार के विवादो की सुनवाई की जाती है। लार्ड सभा जब न्यायालय के रूप मे बठती है, तो उसके सभी सदस्य उसमे उपस्थित नही होते। सन १८७६ के एक अधिनियम और उस पर आधारित परम्परा के अनुसार केवल विधि लार्ड, लार्ड चान्सलर तथा लार्ड सभा के वे सदस्य, जिन्हे न्यायिक क्षेत्र मे उच्च स्थान प्राप्त है या उस पद पर रहे हैं, न्यायाधीशो के रूप मे बठते हैं। इनके निर्णय अन्तिम होते हैं और कही पर भी उनकी अपील नही की जा सकती।

फौजदारी न्यायालय
(Criminal Courts)

पटी सशन्स या कोर्ट ऑफ समरी जुरिस्डिक्शन्स (Petty Sessions Court of Summary Jurisdiction)—ये न्यायालय सबसे प्रथम स्तर के होते हैं और इनमे स्थानीय मजिस्ट्रेट, जिनको 'जस्टिस आफ पीस' कहा जाता है, न्याय करते हैं। न्यायालयो की सख्या २० हजार से अधिक है और ये इगलण्ड तथा वेल्स मे सर्वत्र विद्यमान है। सामान्यतया ये अवैतनिक कार्य करते हैं किन्तु लन्दन और बडे नगरों मे ये वैतनिक भी होते हैं। इनकी नियुक्ति लार्ड चान्सलर द्वारा की जाती है।

पैटी सेशन्स के न्यायालय मे एक या एक से अधिक न्यायाधीश मुकदमे सुनने के लिए हो सकते हैं। एक न्यायाधीश वाला न्यायालय साधारण फौजदारी मुकदमे सुनता है और उसे अधिक से अधिक एक पौण्ड तक जुर्माना तथा १४ दिन तक की सजा देने का अधिकार होता है। जब दो या अधिक न्यायाधीश मुकदमे सुनते हैं तो उसे 'कोर्ट ऑफ समरी जुरिस्डिक्शन' कहा जाता है और उन्हे ६ मास तक कारावास तथा ५० शिलिंग तक जुर्माना करने का अधिकार होता है। छोटी-छोटी चोरियाँ, आक्रमण, जानवरो के प्रति निर्दयता, आवारागर्दी आदि से सम्बन्धित विवाद यहाँ प्रस्तुत होते हैं।

कोरोनर्स न्यायालय (Coroners Courts)—यह न्यायालय, न्यायालय की वर्तमान व्याख्या की दृष्टि से न्यायालय नही है। इसमे एक कोरोनर होता है जो काउण्टी अथवा बरो परिषद द्वारा नियुक्त किया जाता है। यह कोरोनर प्राय डाक्टर या वकील होता है। वह जूरी की सहायता से अथवा उसके बिना भी कार्य करता है और इसका कार्य किसी व्यक्ति की रहस्यमय आकस्मिक अथवा अप्राकृतिक मृत्यु के कारण का पता लगाना होता है। वह जीवन भर के लिए नियुक्त किया जाता है। वर्तमान समय मे इगलण्ड मे कोरोनर्स न्यायालय के कार्य करने के तरीको की कम अधिक आलोचना की जाती है और इसमे सुधार की माग की जा रही है।

क्वाटर सेशन्स (Quarter Sessions)—क्वाटर सेशन्स के न्यायालय मे काउण्टी के सभी 'जस्टिसेज ऑफ पीस' मिलकर न्याय प्रदान करते हैं। किन्तु इन सब का आना अनिवार्य नही है, केवल दो के आने से ही कोरम पूरा हो जाता है। इसका सत्र वर्ष मे ४ बार होता है और इसका क्षेत्राधिकार निम्न है

(१) गम्भीर मामलो को सुनना—परन्तु हत्या, देशद्रोह व कपट सन्धि आदि से सम्बन्धित मामले इसके क्षेत्राधिकार मे नही आते।

(२) पैटी सेशन्स की अपील सुनना।

यह न्यायालय जूरी की सहायता से न्याय करता है।

एसाइसेज (Assizes)—एसाइसेज न्यायालयो मे उच्च न्यायालय के मत्री की न्याय मण्डली (King's Bench Division) के एक या दो न्यायाधीश कार्य करते हैं। यह न्यायालय समय समय पर प्रत्येक काउण्टी के प्रमुख नगर मे लगता है। अभियुक्त के द्वारा अपने मुकदमे की सुनवाई के लिए जूरी की माँग की जा सकती है। यदि जूरी की राय मे अभियुक्त निरपराध है तो उसे मुक्त कर दिया जाता है और दोषी पाये जाने पर न्यायाधीश उसे कानून के अनुसार दण्डित करता है। इसका कार्य पैटी या क्वाटर सेशन्स के न्यायालयो द्वारा भेजे गये भीषण अपराधो का सुनना तथा कुछ दीवानी मामलो जैसे बदचलन या किसी को बदनाम करने आदि से सम्बन्धित विवादो की सुनवाई [illegible]

अपील का न्यायालय
(Court of Criminal Appeal)

इस न्यायालय म लाड चान्सलर प्रधान न्यायाधीश और उच्च न्याय की सम्राट की न्याय मण्डली' के कम से कम तीन न्यायाधीश होते ह । इसम निम्न न्यायालय के निणय के विरुद्ध अपील की जा सकती है । इसके निणय के विरुद्ध अपील लाड सभा म की जा सकती है, किन्तु एसा तभी किया जा सकता है, जबकि एटार्नी जनरल इसके लिए अनुमति प्रदान करे । सामान्यतया लॉड सभा म अपील के लिए अनुमति ऐसे ही विवादो म प्रदान की जाती ह, जिनम कोई जटिल कानूनी समस्या उपस्थित हो ।

लॉड सभा—लाड सभा दीवानी क्षेत्र के समान ही फौजदारी क्षेत्र म भी अपील का अन्तिम न्यायालय है ।

प्रिवी परिषद की न्यायिक समिति (Judicial Committee of Privy Council)—इसका ब्रिटिश न्यायालयों स विशेष सम्बन्ध नही है परन्तु यह ब्रिटिश साम्राज्य तथा राष्ट्रमण्डल के अनेक देशो के लिए सर्वोच्च न्यायालय है । यह उन देशो के उच्चतम न्यायालयो के निणय के विरुद्ध अपीलें सुनता है । इसके अतिरिक्त अन्य भी निम्न प्रकार के विवाद इसके अन्तगत आते है

(१) ब्रिटन के उच्च न्यायालयो के निणय के विरुद्ध अपील ।

(२) आइलैण्ड ऑफ दि मैन और इगलिश चैनल के द्वीपो के न्यायालय द्वारा किये गये निणयो के विरुद्ध अपील ।

(३) प्राइज कोट के निणय के विरुद्ध अपील ।

इसम २० सदस्य होते हैं । लॉड चान्सलर, लॉड सभा के विधि लाड व अन्य श्रेष्ठ कानूनवेत्ता इसमे होते हैं ।

इस प्रकार ब्रिटिश न्यायालय का सगठन सम्पूण देश मे फला हुआ है ।

प्रश्न

१ 'विधि के शासन' का वणन कीजिए और वतमान समय मे इसकी सीमाएँ बतलाइए । (विक्रम, १९७०)

२ ब्रिटिश न्यायपालिका के लक्षणो और सगठन का वणन कीजिए । (कानपुर, १९७०)

३ इगलैण्ड की न्यायपालिका के सगठन का वणन कीजिए । (गोरखपुर, १९६६)

४ 'विधि का शासन ब्रिटिश सविधान का एक विशिष्ट लक्षण है' इस कथन की व्याख्या कीजिए । (गोरखपुर, १९६८, विक्रम, १९७२)

५ 'विधि के शासन' का क्या अथ है ? यह नागरिको के अधिकारो की कहा तक सुरक्षित करता है ? (विक्रम १९६४)

६ विधि के शासन की व्याख्या कीजिए । ब्रिटेन म विधि के शासन की स्थिति कहाँ तक बदल गयी है ? (विक्रम, १९७०)

७ ब्रिटिश सविधान मे विधि के शासन के महत्त्व को स्पष्ट कीजिए । (जीवाजी, १९७२)

10

स्थानीय स्वशासन

(LOCAL-SELF GOVERNMENT)

"नागरिकों की स्थानीय सभा नागरिक शक्ति का निर्माण करती है। ज्ञानोपार्जन के लिए जो महत्त्व प्रारम्भिक कक्षाओं का है, स्वतन्त्रता के लिए वही महत्त्व नगर सभाओं का है। उनके कारण वह (स्वतन्त्रता) लोगों को सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाती है, उन्हीं से लोग यह सीखते हैं कि स्वतन्त्रता का प्रयोग कैसे किया जाय तथा उसका आनन्द कैसे उठाया जाय।"[1] —डी० टाकविले

प्रजातन्त्र मे स्थानीय स्वशासन का महत्त्व

लोकतन्त्र की आधारभूत मान्यता है कि प्रभुत्व शक्ति समस्त जनता में निहित होनी चाहिए। यदि प्रभुत्व शक्ति का केन्द्रीयकरण हो तो प्रत्यक्ष रूप में केवल कुछ व्यक्तियों द्वारा प्रभुत्व शक्ति का उपयोग किया जा सकता है। इसलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि प्रभुत्व शक्ति का अधिक से अधिक विकेन्द्रीकरण होना चाहिए जिससे अधिकाधिक व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप में शासन कार्य से सम्बद्ध हो सकें। मतदान के अधिकार का उद्देश्य भी जनता को शासन कार्य से सम्बन्धित करना है लेकिन व्यवहार में, इस सम्बन्ध में स्थानीय स्वशासन संस्थाओं द्वारा अधिक अच्छे प्रकार से कार्य किया जा सकता है, क्योंकि इन संस्थाओं में अन्तर्गत नागरिकों को स्वयं ही प्रबन्ध कार्य करना होता है। इसी कारण इन स्थानीय स्वशासन संस्थाओं को लोकतन्त्र की ऐसी आधारशिलाएँ कहा जाता है जो जनता को लोकतन्त्र का प्रथम पाठ पढ़ाती है। वस्तुतः प्रजातन्त्र की सफलता स्थानीय स्वशासन की सफलता पर ही निर्भर करती है।

स्थानीय स्वशासन का ऐतिहासिक सिंहावलोकन

ब्रिटेन में स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था अत्यन्त प्राचीन है और इस ... में सर सिडनी ब्रुक के शब्दों में कहा जा सकता है कि, "स्थानीय स्वशासन इंग्लैण्ड ...

1 Local assembly of citizens constitutes strength of citizens. T... meetings are to liberty what primary classes are to science; t... bring it within the people's reach, they teach men how to u... how to enjoy it. —De Tocq...

प्राचीन है, जितने कि पहाड़।[1] ब्रिटेन में संसदीय प्रजातन्त्र की सफलता और स्वतन्त्रता के स्थायित्व का श्रेय भी स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था को ही दिया जा सकता है। ब्लैकस्टोन के शब्दों में, "इंगलैण्ड में स्वतन्त्रता होने का श्रेय सब वस्तुओं से अधिक उसकी स्थानीय संस्थाओं को है। अपने सैक्सन पूर्वजों के समय से ही उसके पुत्र अपने ही द्वारों पर नागरिक कर्तव्यों और दायित्वों की शिक्षा लेते आये हैं।"

स्थानीय स्वशासन का आधुनिक रूप यद्यपि लगभग १४० वर्ष ही पुराना है, तथापि स्थानीय स्वशासन की इकाइयों का अस्तित्व ऐंग्लो सैक्सन काल से देखा जा सकता है। ब्रिटिश संविधान की भाँति ही, इंगलैण्ड की स्थानीय स्वशासन व्यवस्था दीर्घ ऐतिहासिक विकास का परिणाम है जो बहुत कुछ सीमा तक पूर्व निर्दिष्ट और नियोजित नहीं रहा है।[2] सैक्सन राजाओं के समय में स्थानीय स्वशासन की संस्थाएँ शायर (Shire), हण्ड्रेड (Hundred) तथा बरो (Borough) थी। नार्मन काल में परिस्थितियाँ परिवर्तित हो जाने के कारण स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण बढ़ गया। इस समय शायर काउण्टी बन गये, हण्ड्रेड समाप्त हो गये, उपनगर सामन्ती 'मैनर' (Manor) बन गये और बरो नगरपालिकाएँ बन गयें।

१३वीं सदी में स्थानीय स्वशासन संस्थाओं के कार्यों में वृद्धि की आवश्यकता अनुभव की गयी और शान्ति व व्यवस्था बनाये रखने का कार्य भी स्थानीय संस्थाओं का हो गया। इस कार्य हेतु स्थानीय संस्थाओं में 'जस्टिस आफ पीस (Justice of Peace) पद की व्यवस्था की गयी। शान्ति और व्यवस्था की स्थापना और अपराधों की रोकथाम के लिए नियुक्त किये गये इन पदाधिकारियों को प्रशासनिक व न्यायिक दोनों ही क्षेत्रों में अधिकार प्राप्त थे। लगभग इसी समय स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में एक नवीन संस्था 'परिश' (Parish) का भी उदय हुआ।

आधुनिक युग—ब्रिटेन में स्थानीय स्वशासन की आधुनिक व्यवस्था का प्रारम्भ १८३२ के सुधार अधिनियम से माना जा सकता है। स्थानीय स्वशासन का पुनर्गठन १८३४ के 'पुअर ला एमेण्डमेण्ट ऐक्ट' (Poor Law Amendment Act) से हुआ, जिसके द्वारा पुअर ला आयुक्तों को यह अधिकार दिया गया था कि वे निर्धन वर्ग से सम्बन्धित कानूनों की क्रियान्वितो हेतु एक से अधिक पैरिशों को एक कर सकते थे। इस अधिनियम द्वारा निर्धन वर्ग की सहायता कार्य करने हेतु 'संरक्षक समितियों' (Board of Guardians) के निर्वाचन की भी व्यवस्था की गयी थी।

[1] 'It is as old as the hills —*Sydney Web*

[2] 'The liberties of England may be ascribed above all things to her local institutions Since the days of their Saxon ancestors her sons have learnt at their own gates the duties and responsibilities of citizens —*Blackstone*

इन स्थानीय संस्थाओं की विवेचना निम्न प्रकार है

(१) काउण्टी कौंसिल—इंगलैण्ड में स्थानीय प्रशासन की सबसे बड़ी इकाई काउण्टी कौंसिल' है। ये दो प्रकार की हैं—ऐतिहासिक तथा प्रशासनिक।

ऐतिहासिक काउण्टियाँ—इनकी कुल संख्या ५२ है, जो सैक्सन काल से चली आ रही हैं और 'शायर' का प्रतिरूप हैं। ये स्थानीय स्वशासन की इकाई नहीं हैं वरन इनका महत्त्व न्याय प्रबन्ध और लोकसदन के चुनाव की दृष्टि से है क्योंकि ये चुनाव क्षेत्र हैं। इनमें केवल तीन मुख्य अधिकारी होते हैं लार्ड लेफ्टीनेण्ट, शेरिफ और जस्टिस आफ पीस (Justice of the Peace)। प्रथम दो चुनाव अधिकारी हैं और तीसरा न्यायाधीश।

प्रशासनिक काउण्टियाँ—स्थानीय स्वशासन की दृष्टि से वास्तविक महत्व प्रशासनिक काउण्टियों का ही है, जिनकी स्थापना १८८८ के स्थानीय शासन अधिनियम द्वारा की गयी थी। प्रशासनिक काउण्टी का प्रशासन कार्य काउण्टी की परिषद के द्वारा किया जाता है।

काउण्टी परिषद में एक सभापति, एल्डरमैन और कुछ सदस्य (Councillors) होते हैं। सदस्यों का चुनाव एकल सदस्य निर्वाचन क्षेत्रों में पूर्ण वयस्क मताधिकार के आधार पर किया जाता है। सदस्य तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं। सदस्यों के द्वारा अपने में से या बाहर से 'एल्डरमैन' का चुनाव किया जाता है। एल्डरमैन का कार्यकाल ६ वर्ष होता है और उनमें से आधे प्रति तीन वर्ष बाद हट जाते हैं। सदस्य तथा एल्डरमैन (Aldermen) मिलकर सभापति का चुनाव करते हैं, जिसका कार्यकाल १ वर्ष होता है। प्रशासनिक काउण्टी का सभापति 'जस्टिस आफ पीस' का भी कार्य करता है। काउण्टी परिषद में कुछ अन्य कर्मचारी भी होते हैं जैसे इंजीनियर, स्वास्थ्य अधिकारी, कोषाध्यक्ष और क्लर्क आदि।

काउण्टी परिषद के मुख्य कार्य हैं—कर लगाना, देहाती क्षेत्र की परिषदों के कार्यों का निरीक्षण करना, काउण्टी की शासन सम्बन्धी नीति का निर्धारण करना तथा उपनियमों का निर्माण करना, बजट बनाना, केन्द्र से अनुदान प्राप्त करना, लाइसेंस प्रदान करना, प्राइमरी व सैकण्डरी शिक्षा की व्यवस्था करना, सार्वजनिक स्वास्थ्य की देखभाल करना, प्राचीन इमारतों की रक्षा करना, कृषि का विकास तथा कृषि शिक्षा की व्यवस्था करना, नगर व देहाती क्षेत्रों के विकास हेतु योजना बनाना, सड़क-पुल व मजदूरों के निवास हेतु मकान बनाना, अनाथालय, पागलखाना और निर्धन केन्द्रों (Poor houses) की व्यवस्था करना, पुलिस व आग बुझाने वाले इंजनों का प्रबन्ध करना, केन्द्रीय सरकार की अनुमति से ऋण की व्यवस्था करना, पशुपालन व पशु चिकित्सालयों की व्यवस्था करना, नाप व तौल के परिमाणों व मात्रा की देखभाल करना आदि।

काउण्टी परिषद की बैठकें वर्ष में कम से कम चार बार होना अनिवार्य है। यह परिषद अपना समस्त कार्य समितियों के माध्यम से करती है, जिनकी संख्या १२ से अधिक है।

(२) **काउण्टी बरो** (County Borough)—जिन नगरों की जनसंख्या ७५,००० से अधिक होती है, उनमें काउण्टी बरो की स्थापना की जाती है। इनकी स्थापना 'सपरिषद सम्राट' (The King in Council) द्वारा जारी किये गये अधिकारपत्र के आधार पर की जाती है। सन १९२६ के अन्तर्गत यह व्यवस्था की गयी है कि जब किसी नगर की जनसंख्या ७५ हजार से अधिक हो जाती है तो वह 'बरो' पद प्राप्ति हेतु सम्राट को प्रार्थनापत्र भेजता है। सम्राट इस प्रार्थनापत्र को प्रिवी कौंसिल की एक समिति के पास भेज देता है, जो इसकी जांच करती है। यदि वह यह निर्णय करे कि अमुक नगर को काउण्टी बरो बना दिया जाय तो लन्दन गजट में उसको अधिकार देने की अस्थायी घोषणा प्रकाशित कर दी जाती है। यदि घोषणा के प्रकाशित होने के बाद एक महीने के अन्दर प्रभावित होने वाले स्थान के करदाताओं का $\frac{1}{20}$ भाग उसके विरुद्ध कोई याचिका भेजता है तो यह प्रश्न संसद के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है और संसद बहुमत के आधार पर निर्णय करती है।

बरो का शासन एक परिषद की सहायता से चलाया जाता है जिसकी सदस्य संख्या बरो की जनसंख्या को दृष्टि में रखते हुए निश्चित की जाती है। बरो परिषद में एक अध्यक्ष, कुछ पार्षद तथा कुछ ऐल्डरमैन होते हैं। पार्षद मतदाताओं द्वारा तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं और उनमें से एक तिहाई प्रति वर्ष अपना पद छोड़ देते हैं। पार्षद अपनी संख्या के एक-तिहाई भाग के बराबर अपने में से या बाहर से 'एल्डरमैन' चुनते हैं। ये एल्डरमैन ६ वर्ष के लिए चुने जाते हैं और प्रति दो वर्ष बाद एक तिहाई सदस्य अवकाश ग्रहण कर लेते हैं। पार्षद तथा एल्डरमैन मिलकर एक वर्ष के लिए परिषद के अध्यक्ष को चुनते हैं, जिसे 'मेयर (Mayor) कहा जाता है। बरो कौंसिल अपने कार्य संचालन हेतु इन्जीनियर, स्वास्थ्य अधिकारी, कोषाध्यक्ष तथा चीफ कान्स्टेबल आदि की नियुक्ति करती है।

बरो परिषद को सामान्यतया स्थानीय स्वशासन संस्था के सभी अधिकार प्राप्त होते हैं। यह अपने क्षेत्र की शिक्षा की देखभाल, सड़कों का निर्माण, पुलिस व्यवस्था, मनोरंजन के साधन जुटाने, सफाई, रोशनी, जल पूर्ति, मकानों की व्यवस्था और आग बुझाने आदि का प्रबन्ध करती है। लोक कल्याण की दृष्टि से इसके कार्य बढ़ते जा रहे हैं। बरो परिषद वार्षिक बजट बनाती, कर लगाती और केन्द्रीय सरकार की अनुमति से अपनी साख पर ऋण ले सकती है। अपने कार्य के भली भांति संचालन हेतु यह उपनियम (Bye laws) बना सकती है।

(३) **नान-काउण्टी बरो या म्युनिसिपल बरो**—यह प्रशासनिक काउण्टी का ही एक भाग है, परन्तु अलग चार्टर मिल जाने से इसे काउण्टी की सब शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं और यह काउण्टी के नियन्त्रण से बाहर होता है। जब इसकी

इन स्थानीय सस्थाओ की विवेचना निम्न प्रकार है

(१) काउण्टी कौंसिल—इगलण्ड म स्थानीय प्रशासन की काउण्टी कासिल' है । य दो प्रकार की है—ऐतिहासिक तथा प्रशा

ऐतिहासिक काउण्टियाँ—इनकी कुल सख्या ४२ है, चली आ रही ह और 'शायर' का प्रतिरूप ह । ये स्थानीय नही है वरन इनका महत्त्व न्याय प्रबन्ध और लोकसदन के हे क्याकि य चुनाव क्षेत्र ह । इनम केवल तीन मुख्य अधि लेफ्टीनेण्ट शेरिफ और जस्टिस आफ पीस (Justice of the चुनाव अधिकारी ह और तीसरा न्यायाधीश ।

प्रशासनिक काउण्टिया —स्थानीय स्वशासन की प्रशासनिक काउण्टिया वा ही हे जिनकी स्थापना १८ अधिनियम द्वारा की गयी थी । प्रशासनिक काउण्टी का परिषद के द्वारा किया जाता है ।

काउण्टी परिषद म एक सभापति, एल्डरमैन lors) होते है । सदस्या का चुनाव एकल सदस्य मताधिकार के आधार पर किया जाता है । सदस्य सदस्या के द्वारा अपने म से या बाहर से 'एल्डरमैन एल्डरमैन का कार्यकाल ६ वष होता है और उन हट जाते हैं । सदस्य तथा एल्डरमैन (Alderm करते है, जिसका कार्यकाल १ वष होता है । जस्टिस आफ पीस' का भी काय करता है । का भी होते है जैसे इजीनियर स्वास्थ्य अधिकारी,

काउण्टी परिषद के मुख्य काय हैं—क कार्यों का निरीक्षण करना काउण्टी की शास तथा उपनियमो का निर्माण करना, बजट प्रदान करना, प्राइमरी व सकेण्डरी शिक्षा की देखभाल करना प्राचीन इमारतो की रक्षा व्यवस्था करना, नगर व देहाती क्षेत्रो के मजदूरो के निवास हेतु मकान बनाना (Poor houses) की व्यवस्था करना, क करना, केन्द्रीय सरकार की अनुमति से चिकित्सालयो की व्यवस्था करना, नाग

(६) पेरिश—पेरिश परिषदें और पेरिश सभाएँ—स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र की सबसे छोटी इकाई पेरिश होती है जिसके दो रूप हैं पेरिश परिषद और परिश सभाएँ। जिन ग्रामो की जनसख्या ३०० या उससे अधिक होती है वहा परिश परिषद का निर्माण होता है और जिनकी जनसख्या ३०० से कम होती है वहा पर पेरिश के सभी मामले कर देने वाले सभी व्यक्तियो की एक सभा द्वारा निबटाये जाते हैं और इसी को परिश सभा कहते हैं। परिश परिषद के सदस्यो की सख्या पेरिश की जनसख्या पर निर्भर करती है और यह प्राय ५ से १५ के बीच होती है। ये परिषदें वहाँ के समस्त मतदाताओ द्वारा तीन वर्ष के लिए चुनी जाती हैं। परिषदो को बहुत मामूली शक्तियाँ ही प्राप्त होती है और इनकी वर्ष म तीन-चार बठकें होती हैं। परिषदो के द्वारा अपने क्षेत्र मे रोशनी, सफाई, पार्क बनाने, वाचनालय और पुस्तकालय खोलने, श्मशानो के निर्माण, खेल-कूद के मैदान बनाने, छोटे छोटे मार्गों की मरम्मत और सुरक्षा, फुटपाथ बनवाने और सार्वजनिक स्नानगृहो की देखभाल की जाती है।

लन्दन शहर की स्वशासन व्यवस्था
(Local Government in London)

लन्दन शहर के स्वशासन की व्यवस्था अन्य क्षेत्रो के स्वशासन की व्यवस्था से नितान्त भिन्न है। लन्दन इगलैण्ड की राजधानी होने और स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र म उसकी आवश्यकताएँ भिन्न होने के कारण ही ऐसा किया गया है। स्थानीय स्वशासन की दृष्टि से लन्दन को तीन भागो म बाटा गया है (१) लन्दन का प्राचीन नगर, (२) लन्दन काउन्टी, (३) लन्दन मैट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट।

(१) लन्दन का प्राचीन नगर (The City of London)—लन्दन के इस प्राचीन नगर का विकास सोल्टिक काल मे प्रारम्भ हुआ और वर्तमान समय मे यह लन्दन का सर्वाधिक व्यस्त व्यापारिक केन्द्र है। लन्दन नगर का कुल क्षेत्रफल एक वर्गमील है। इसमे बैंक और सरकारी भवन है। दिन म हजारो लोग काम काज के लिए इस क्षेत्र मे आते हैं और काम-काज निबटा कर लौट जाते हैं। रात्रि के समय इस नगर की जनसख्या १५ हजार ही रह जाती है। इस क्षेत्र का स्थानीय प्रशासन एक मेयर और तीन परिषदो के द्वारा चलाया जाता है, जो इस प्रकार है

(i) कोर्ट आफ ऐल्डरमन (The Court of Aldermen)—इसके सदस्यो की सख्या २६ होती है, जिनका निर्वाचन जीवनपर्यन्त के लिए किया जाता है। लार्ड मेयर भी इसका सदस्य होता है। इसका प्रमुख कार्य दलालो को लाइसेन्स देना और नगर के अभिलेखो (Records) को सुरक्षित रखना है। लन्दन एक व्यापारिक केन्द्र होने के कारण इस क्षेत्र म दलालो का कार्य बडे महत्त्व का है।

(ii) कोर्ट आफ कॉमन कौंसिल (Court of Common Council)—लन्दन नगर के स्थानीय स्वशासन की वास्तविक प्रशासनिक सस्था यही है। इसमे कोर्ट ऑफ ऐल्डरमैन के ६ सदस्य तथा २०० अन्य कौंसिलर होने

जनसंख्या ७५ हजार से अधिक हो जाती है, तो यह सम्राट को प्रार्थनापत्र देकर काउण्टी बरो का पद प्राप्त कर लेता है। नॉन-काउण्टी बरो के कार्य काउण्टी बरो के समान ही होते हैं और नॉन काउण्टी बरो परिषद के चुनाव की व्यवस्था काउण्टी बरो की परिषद के समान ही है।

(४) शहरी जिला कौंसिल—जब काउण्टी के किसी भाग की जनसंख्या काफी बढ़ जाती है और उसे जलपूर्ति, आग से रक्षा और सफाई आदि के सम्बन्ध में विशेष सुविधाओं की आवश्यकता होती है, तो इन कार्यों को अधिक अच्छे रूप में सम्पादित करने के लिए काउण्टी परिषद उस क्षेत्र को शहरी जिला बना देती है।

शहरी जिले की एक परिषद होती है जिसमें उस जिले के आधीन प्रत्येक पेरिश से एक सदस्य मतदाताओं द्वारा चुना जाता है। परिषद के सदस्यों का कार्यकाल तीन वर्ष होता है, किन्तु उनमें से एक तिहाई सदस्य प्रति वर्ष अवकाश ग्रहण कर लेते हैं। शहरी जिला परिषद में कोई एल्डरमैन नहीं होता। जिला परिषद के सदस्य अपने में से या बाहर से एक अध्यक्ष चुन लेते हैं। अध्यक्ष को 'जस्टिस आफ पीस' के अधिकार प्राप्त होते हैं।

जिला परिषद के प्रमुख कार्य हैं—छोटी छोटी सड़कों और मकानों का निर्माण, सफाई और गन्दी बस्तियों को ठीक करना, जल पूर्ति और सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार, पुस्तकालय, वाचनालय, पार्क, खेल के मैदानों व सार्वजनिक स्नान गृहों की व्यवस्था करना। यदि शहरी जिले की जनसंख्या २० हजार से अधिक हो, तो उसे प्राथमिक शिक्षा पर नियन्त्रण का अधिकार भी प्राप्त हो जाता है और जनसंख्या २५ हजार से अधिक होने पर वैतनिक 'दण्ड न्यायाधीश' (Magistrate) की भी व्यवस्था की जाती है। शहरी जिला परिषद अपने इन कार्यों के सञ्चालन हेतु स्वास्थ्य अधिकारी, कोषाध्यक्ष, सफाई निरीक्षक और क्लर्क आदि नियुक्त करती है।

(५) ग्रामीण जिले—ग्रामीण जिला पुराने ग्राम पेरिशों का एक समूह होता है। ग्रामीण जिले की भी शहरी जिले की भाँति एक परिषद होती है जिसमें मतदाताओं द्वारा प्रत्येक पेरिश से एक सदस्य चुना जाता है। ये सदस्य तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं किन्तु एक तिहाई सदस्य प्रति वर्ष अवकाश ग्रहण कर लेते हैं। परिषद के सदस्य अपना एक अध्यक्ष चुनते हैं, जिसे 'जस्टिस आफ पीस' के अधिकार प्राप्त होते हैं।

ग्रामीण जिला परिषद अपने क्षेत्र में छोटी-छोटी सड़कों के निर्माण और मरम्मत, भवनों के निर्माण, रोशनी, जल पूर्ति और सार्वजनिक स्वास्थ्य आदि से सम्बन्धित कार्य करती है। यह छोटे-छोटे लाइसेंस भी देती है। शहरी जिला परिषद के समान ही इसके द्वारा भी अपने कार्य भलीभाँति सम्पादित करने के लिए कुछ वैतनिक अधिकारी नियुक्त किये जाते हैं।

(६) पेरिश—पेरिश परिषदें और पेरिश सभाएँ—स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र की सबसे छोटी इकाई पैरिश होती है जिसके दो रूप है परिश परिषद और पेरिश सभाएँ। जिन ग्रामो की जनसख्या ३०० या उससे अधिक होती है, वहा पेरिश परिषद का निर्माण होता है और जिनकी जनसख्या ३०० से कम होती है, वहा पर पेरिश के सभी मामले कर देने वाले सभी व्यक्तिया की एक सभा द्वारा निवटाये जाते हैं और इसी को परिश सभा कहते हैं। पेरिश परिषद के सदस्या की सख्या परिश की जनसख्या पर निभर करती है और यह प्राय ५ से १५ के बीच होती है। ये परिषदें वहा के समस्त मतदाताओं द्वारा तीन वष के लिए चुनी जाती हैं। परिषदो को बहुत मामूली शक्तिया ही प्राप्त होती है और इनकी वष म तीन चार बठकें होती हैं। परिषदा के द्वारा अपने क्षेत्र मे रोशनी, सफाई, पाक बनान, वाचनालय और पुस्तकालय खोलने, श्मशाना के निर्माण, खेल-कूद के मकान बनान, छोटे छोटे मार्गों की मरम्मत और सुरक्षा, फुटपाथ बनवान और सावजनिक स्नानगृहा की देखभाल की जाती है।

लन्दन शहर की स्वशासन व्यवस्था
(Local Government in London)

लन्दन शहर के स्वशासन की व्यवस्था अन्य क्षेत्रो के स्वशासन की व्यवस्था से नितान्त भिन है। लन्दन इगलैण्ड की राजधानी होने और स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र म उसकी आवश्यकताएँ भिन्न होने के कारण ही ऐसा किया गया है। स्थानीय स्वशासन की दृष्टि स लन्दन को तीन भागो मे बाटा गया है (१) लन्दन का प्राचीन नगर, (२) लन्दन काउण्टी, (३) लन्दन मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट।

(१) लन्दन का प्राचीन नगर (The City of London)—लन्दन के इस प्राचीन नगर का विकास सेल्टिक काल मे प्रारम्भ हुआ और वतमान समय मे यह लन्दन का सर्वाधिक व्यस्त व्यापारिक केन्द्र है। लन्दन नगर का कुल क्षेत्रफल एक वगमील है। इसम बक और सरकारी भवन है। दिन म हजारा लोग काम काज के लिए इस क्षेत्र मे आते है और काम-काज निवटा कर लौट जाते हैं। रात्रि के समय इस नगर की जनसख्या १५ हजार ही रह जाती है। इस क्षेत्र का स्थानीय प्रशासन एक मेयर और तीन परिषदो के द्वारा चलाया जाता है, जो इस प्रकार है

(i) कोट ऑफ ऐल्डरमैन (The Court of Aldermen)—इसके सदस्या की सख्या २६ होती है, जिनका निर्वाचन जीवनपयन्त के लिए किया जाता है। लाड मेयर भी इसका सदस्य होता है। इसका प्रमुख काय दलालो को लाइसेन्स देना और नगर के अभिलेखो (Records) को सुरक्षित रखना है। लन्दन एक व्यापारिक केन्द्र होने के कारण इस क्षेत्र मे दलाला का कार्य बडे महत्त्व का है।

(ii) कोट ऑफ कॉमन कौंसिल (Court of Common Council)—लन्दन नगर के स्थानीय स्वशासन की वास्तविक प्रशासनिक सस्था यही है। इसमे कोट आफ ऐल्डरमैन के ६ सदस्य तथा २०० अन्य कौंसिलर होते

हैं, जो प्रति वर्ष चुने जाते हैं। इनका कार्य नगर के लिए उप विधियां बनाना, पुलों की देखभाल करना और पुलिस, दीवानी न्यायालय तथा फौजदारी न्यायालय का निरीक्षण करना है। इसके द्वारा अपना अधिकांश कार्य समितियों के माध्यम से किया जाता है।

(iii) कोर्ट आफ कामन हाल (Court of Common Hall)—इसमें कोर्ट आफ एल्डरमैन के सदस्य तथा सिटी कम्पनियों के लिवरीमन (Livearyman) होते हैं। यह प्रतिवर्ष एक शैरिफ (Sheriff) और दो एल्डरमनों को चुनता है जिसमें से कोर्ट आफ एल्डरमन एक लार्ड मेयर चुनता है।

(२) लन्दन काउण्टी (London County)—लन्दन काउण्टी एक प्रशासनिक काउण्टी है जिसका निर्माण १८८५ के काउण्टी अधिनियम के अन्तर्गत हुआ। लन्दन काउण्टी कौंसिल में जनसाधारण द्वारा चुने गये १२४ कौंसलर होते हैं, जो २० एल्डरमनों का चुनाव करते हैं। कौंसलर तीन वर्ष के लिए चुने जाते हैं और एल्डरमैन ६ वर्ष के लिए, परन्तु इनमें से आधे तीन वर्ष बाद पद निवृत्त हो जाते हैं। कौंसलर तथा ऐल्डरमैन मिलकर एक अध्यक्ष का निर्वाचन करते हैं। इसका कार्य शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, मनोरंजन स्थल, गलियों व बाजारों की सफाई और पार्कों की व्यवस्था करना है।

(३) लन्दन मेट्रोपोलिटन पुलिस जिला (London Metropolitan Police District)—लन्दन के चारों ओर मेट्रोपोलिटन पुलिस जिला है जिसका क्षेत्रफल लगभग ७०० वर्गमील है। लन्दन नगर की पुलिस अलग है। पुलिस लन्दन की समस्त काउण्टियों की देखभाल करती है और इसका प्रधान एक पुलिस कमिश्नर है। इस जिले में पुलिसमैन्स की संख्या लगभग २० हजार है। इस पुलिस जिले की स्थापना सर रॉबर्ट पील ने १८२९ में की थी।

स्थानीय स्वशासन पर केन्द्रीय नियन्त्रण

स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र में यह समस्या बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है कि केन्द्रीय सरकार का स्थानीय संस्थाओं से कैसा सम्बन्ध होना चाहिए ? इस बात को तो सभी व्यक्ति स्वीकार करते हैं कि स्थानीय स्वशासन संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार को अन्तिम नियन्त्रण प्राप्त होना चाहिए, जिससे इन संस्थाओं की संकुचित मनोवृत्ति पर रोक लगाई जा सके, दलबन्दी, भ्रष्टाचार और स्वार्थलिप्सा जैसी बुराइयों को सीमित रखा जा सके और विविध स्थानीय संस्थाओं के कार्यों में समन्वय और सामंजस्य स्थापित किया जा सके। लेकिन इसके साथ ही यह नियन्त्रण इतना कठोर नहीं होना चाहिए कि स्थानीय संस्थाएँ स्वतन्त्रतापूर्वक का[illegible] न कर सकें।

ब्रिटेन में स्थानीय संस्थाओं के केन्द्रीय सरकार के साथ सम्बन्ध के प्रश्न पर मध्यम मार्ग को अपनाया गया है। फ्रांस में स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय शासन को अत्यधिक नियन्त्रण प्राप्त है और इसी कारण स्थानीय संस्थाएं केन्द्र के

पूर्णतया आधीन हो गयी है। इसके नितान्त विपरीत अमरीका में स्थानीय संस्थाओं को इतनी अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है कि अनेक बार ये संस्थाएँ केन्द्र का खुला विरोध करने लग जाती है और इन संस्थाओं के विद्रोह को कुचलने के लिए केन्द्र को कठोर कार्यवाही करनी होती है। ये दोनों ही स्थितियाँ सन्तोषप्रद नहीं हैं। ब्रिटेन में स्थानीय स्वशासन संस्थाओं पर न तो फ्रांस के समान केन्द्र का बहुत अधिक नियन्त्रण है और न अमरीका के समान स्थानीय संस्थाओं को अत्यधिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। इस सम्बन्ध में डॉ० फाइनर ने कहा है, "केन्द्रीय सरकार अनावश्यक रूप से झगड़ालू बनकर नहीं रहती, वह स्थानीय प्रशासन की इकाइयों की स्वतन्त्रता का आदर करती है तथा अच्छा यही समझती है कि हस्तक्षेप की आवश्यकता के बिना वे अपनी स्वतन्त्रता का उचित प्रयोग कर सकें।"[1]

केन्द्रीय शासन द्वारा स्थानीय स्वशासन की इकाइयों पर निम्न रूपों में नियन्त्रण रखा जाता है :

विधायी नियन्त्रण—स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था पर नियन्त्रण का सबसे प्रमुख उपाय संसदीय कानून हैं। संसद के द्वारा कानूनों का निर्माण कर नवीन स्थानीय संस्थाओं के उदय, वर्तमान समय की स्थानीय संस्थाओं के क्षेत्र, कार्यक्षेत्र या स्वरूप में परिवर्तन अथवा वर्तमान इकाइयों में से कुछ इकाइयों के अन्त का कार्य किया जा सकता है। यदि संसद समझे कि स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय शासन के नियन्त्रण की वर्तमान व्यवस्था पर्याप्त नहीं है तो संसद कानून के आधार पर इन संस्थाओं पर अधिक कठोर नियन्त्रण की व्यवस्था भी कर सकती है।

वित्तीय नियन्त्रण—ब्रिटेन में भी स्थानीय संस्थाएँ वित्तीय दृष्टि से आत्मनिर्भर नहीं हैं और उनके द्वारा अपने कार्य सम्पादित करने के लिए केन्द्रीय शासन से वित्तीय सहायता प्राप्त की जाती है। केन्द्रीय सरकार जब इन संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करती है तो स्वाभाविक रूप से उसे यह देखने का अधिकार प्राप्त हो जाता है कि उसके द्वारा दी गयी सहायता का उचित रूप में प्रयोग हो रहा है अथवा नहीं। इस दृष्टि से केन्द्रीय शासन के प्रतिनिधि स्थानीय सरकारों के कार्यों का निरीक्षण करते और अपनी रिपोर्ट सरकार को देते हैं। यदि प्रतिवेदन में सरकार को प्रतीत हो कि किसी स्थानीय संस्था द्वारा गम्भीर वित्तीय अनियमितताएँ या धन का गबन किया जा रहा है तो 'स्थानीय शासन अधिनियम १६५८ (Local Govt Act, 1958) के आधार पर केन्द्र को यह अधिकार है कि वह सम्बन्धित स्थानीय संस्था को अर्थ सम्बन्धी अनियमितताएँ दूर करने का निर्देश दे। यदि अब भी वह संस्था आर्थिक गड़बड़ी करना न छोड़े, तो केन्द्रीय सरकार को यह भी अधिकार है कि वह उस संस्था का आर्थिक प्रबन्ध अपने हाथ में ले ले अथवा उस विशेष स्थानीय संस्था को ही निलम्बित कर उसके प्रबन्ध हेतु अपनी ओर से प्रबन्धक, आयुक्त या आयोग, जैसी भी आवश्यकता हो, नियुक्त कर दे।

प्रशासनिक नियन्त्रण—स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार द्वारा

1 'The Central Government is not unnecessarily meddlesome it respects the freedom of the Local Government bodies and would prefer to see this exercised properly without the need to intervene
—Dr Finer

1

सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान का उदय
(ORIGIN OF THE CONSTITUTION OF THE UNITED STATES OF AMERICA)

"हम इन सत्यो को स्वयसिद्ध मानते है कि सभी मनुष्य जन्म से समान हैं, सभी मनुष्यो को ईश्वर ने कुछ ऐसे अधिकार प्रदान किये हैं जिन्हे छीना नहीं जा सकता और इन अधिकारो मे जीवन, स्वतन्त्रता तथा अपनी समद्धि के लिए प्रयत्नशील रहने के अधिकार भी सम्मिलित हैं।" —स्वतन्त्रता की घोषणा (४ जुलाई, १७७६)

भौगोलिक पृष्ठभूमि

लॉर्ड ब्राइस ने एक स्थान पर लिखा है कि "प्रत्येक देश की भौतिक परिस्थितियो तथा परम्परागत सस्थाओ का प्रभाव राष्ट्र के राजनीतिक विकास पर ऐसा पडता है कि इससे उसके शासन का एक अलग ही रूप बन जाता है।" अमरीका इसका कोई अपवाद नही है और वहाँ के राजनीतिक विकास पर भी भौगोलिक परिस्थितियो तथा सामाजिक जीवन की परम्पराओ का गम्भीर प्रभाव पडा है। अमरीका का क्षेत्रफल ३६,१५,२२२ वर्ग मील है और १९७२ मे इसकी जनसख्या २० करोड के लगभग है। प्राकृतिक साधनो से परिपूर्ण इस विशाल क्षेत्र और जनसख्या ने अमरीका को एक महाशक्ति का रूप प्रदान करने मे योग दिया है। वर्तमान समय में अमरीका की अधिकाश जनसख्या उन लोगो की सतान है जो औपनिवेशिक युग मे इगलण्ड तथा यूरोप के अन्य देशो से आकर यहा बसे। जनसख्या का एक छोटा भाग उन काले लोगो का भी है, जो वहाँ के आदिवासियो की सतान या नीग्रो है।

1 We hold these truths to be self evident that all men are created equal that they are endowed by their creator with certain inalienable rights that among these are life liberty and pursuit of happiness —*Declaration of Independence*, 4 July 1776

प्रशासनिक नियन्त्रण भी रखा जाता है। स्थानीय सस्थाओ के ये काय इतने विविध प्रकार के हैं कि यह नियन्त्रण केन्द्रीय शासन के लगभग ६ विभागो द्वारा रखा जाता है। उदाहरण के लिए, स्थानीय सस्थाओ के शान्ति और व्यवस्था से सम्बन्धित कार्यो पर गृह मन्त्रालय, स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्यों पर स्वास्थ्य मन्त्रालय और शिक्षा सम्बन्धी कार्यो पर शिक्षा मन्त्रालय नियन्त्रण रखता है। इसी प्रकार अन्य कई विभाग भी स्थानीय सस्थाओ के अपने विभाग से सम्बन्धित कार्यों पर नियन्त्रण रखते हैं। ये विभाग स्थानीय सस्थाओ को तत्सम्बन्धी कार्यों के विषय म निर्देश देते हैं, सस्थाओ के विरुद्ध शिकायतो को सुनते हैं और व्यक्तियो तथा सस्थाओं के बीच विवादों को निबटाते हैं। ये विभाग इस बात को भी ध्यान मे रखते हैं कि स्थानीय सस्थाएँ अपनी शक्ति का दुरुपयोग न करें।

इसके अतिरिक्त केन्द्रीय शासन के अन्तगत पृथक से एक स्थानीय स्वशासन मन्त्रालय और उससे सम्बद्ध मन्त्री होता है, जिसके द्वारा ब्रिटेन की समस्त स्थानीय स्वशासन सस्थाओ पर सामान्य नियन्त्रण रखने का काय किया जाता है। 'टाउन एण्ड काउण्टी ऐक्ट, १९६२' (Town and County Act, 1962) द्वारा की गयी व्यवस्था के अन्तगत स्थानीय सस्थाओ से सम्बन्धित विकास योजनाओ पर अन्तिम निणय स्वायत्त शासन मन्त्री द्वारा ही किया जाता है। स्थानीय सस्थाओ द्वारा पारित उपविधियों (Bye Laws) पर भी स्वायत्त मन्त्रालय का नियन्त्रण रहता है।

वतमान समय म शासन काय की जटिलता बढते जाने के कारण स्थानीय सरकारों पर केन्द्रीय शासन का नियन्त्रण क्रमश बढता ही जा रहा है।

न्यायिक नियन्त्रण—विधायी, वित्तीय और प्रशासनिक नियन्त्रण की भाँति स्थानीय सस्थाओ पर न्यायिक नियन्त्रण भी रहता है। स्थानीय स्वशासन की इकाइयों का भी एक कानूनी व्यक्तित्व होता है और उन पर सामान्य व्यक्तियों की भाँति ही साधारण कानून लागू होते हैं। यदि स्थानीय सस्थाएँ ससद द्वारा दी गयी शक्तियों के बाहर किन्हीं उपविधियो का निमाण करती हैं, तो न्यायालय उनके विरुद्ध आदेश जारी कर इन विधियों को अप्रभावी कर देते हैं। साधारण व्यक्ति भी स्थानीय सस्थाओ के विरुद्ध साधारण कानून के अन्तगत मुकदमा चला सकता है तथा इन सस्थाओ के कमचारियो के कारण जो क्षति या दुघटनाएँ होती है न्यायालयों के माध्यम से उनके लिए इन सस्थाओ से क्षतिपूर्ति प्राप्त की जा सकती है।

इस प्रकार स्थानीय स्वशासन सस्थाओ पर केन्द्रीय सरकार के नियन्त्रण की व्यवस्था की गयी है, लेकिन इसके बावजूद स्थानीय सस्थाएँ अपने काय म पर्याप्त स्वतन्त्र हैं।

प्रश्न

१ प्रजातन्त्र मे स्थानीय स्वशासन का महत्त्व बतलाइए और ब्रिटेन म स्थानीय स्वशासन के विकास पर एक सक्षिप्त लेख लिखिए।

२ ब्रिटेन म स्थानीय स्वशासन के मुख्य अग क्या हैं? स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था पर केन्द्रीय सरकार किस प्रकार नियन्त्रण रखती है?

(आगरा, १९६४, ७१)

1

सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान का उदय

(ORIGIN OF THE CONSTITUTION OF THE UNITED STATES OF AMERICA)

"हम इन सत्यों को स्वयसिद्ध मानते हैं कि सभी मनुष्य जन्म से समान हैं, सभी मनुष्यो को ईश्वर ने कुछ ऐसे अधिकार प्रदान किये हैं जिन्हें छीना नहीं जा सकता और इन अधिकारों मे जीवन, स्वतन्त्रता तथा अपनी समृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहने के अधिकार भी सम्मिलित हैं।" —स्वतन्त्रता की घोषणा (४ जुलाई, १७७६)

भौगोलिक पृष्ठभूमि

लॉर्ड ब्राइस ने एक स्थान पर लिखा है कि "प्रत्येक देश की भौतिक परिस्थितियों तथा परम्परागत सस्थाओं का प्रभाव राष्ट्र के राजनीतिक विकास पर ऐसा पडता है कि इससे उसके शासन का एक अलग ही रूप बन जाता है।" अमरीका इसका कोई अपवाद नही है और वहाँ के राजनीतिक विकास पर भी भौगोलिक परिस्थितियो तथा सामाजिक जीवन की परम्पराओ का गम्भीर प्रभाव पडा है। अमरीका का क्षेत्रफल ,६,१५ २२२ वर्ग मील है और १९७२ मे इसकी जनसख्या २० करोड के लगभग है। प्राकृतिक साधनो से परिपूर्ण इस विशाल क्षेत्र और जनसख्या ने अमरीका को एक महाशक्ति का रूप प्रदान करने मे योग दिया है। वर्तमान समय मे अमरीका की अधिकाश जनसख्या उन लोगो की सतान है जो औपनिवेशिक युग मे इगलण्ड तथा यूरोप के अन्य देशो से आकर यहा बसे। जनसख्या का एक छोटा भाग उन काले लोगों का भी है, जो वहाँ के आदिवासियो की सतान या नीग्रो है।

1 We hold these truths to be self evident that all men are created equal that they are endowed by their creator with certain inalienable rights that among these are life liberty and pursuit of happiness —*Declaration of Independence*, 4 July 1776

संविधान का उदय

संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान का निर्माण १७८९ मे हुआ, परन्तु इस संविधान का निर्माण एकायक नही हो गया, वरन इसके पीछे लगभग १५० वर्षो का संघर्षपूर्ण इतिहास रहा है, जिसके अन्तर्गत यूरोपवासी अमरीका मे जाकर बसे, उन्होने स्वतन्त्रता की घोषणा की और अपने लिए एक संविधान का निर्माण किया। इस प्रकार अमरीकी संविधान का उदय चार चरणो मे हुआ है औप-निवेशिक युग, स्वतन्त्रता की घोषणा, परिसंघ की स्थापना और संविधान का निर्माण।

औपनिवेशिक युग—संयुक्त राज्य अमरीका आज विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली, समुन्नत और समृद्ध लोकतन्त्र है। परन्तु इतिहास की दृष्टि से यह संसार के नवीनतम देशो मे से एक है। १४९२ मे स्पेन निवासी कोलम्बस ने 'पश्चिमी हिन्द द्वीपो (West Indies Islands) की खोज की और इस तरह उसने यूरोप के लिए अमरीका के द्वार खोल दिये। सत्रहवी सदी मे यूरोप के लोग बहुत बडी संख्या मे अमरीका जाकर बसने लगे। उनके अमरीका जाकर बसने के प्रमुख कारण आर्थिक और धार्मिक थे। यूरोप से अमरीका का यह निष्क्रमण इतनी तीव्र गति से हुआ कि अमरीका की जनसंख्या जो १६९० मे ढाई लाख थी १७७५ मे लगभग दस गुना अर्थात् ३५ लाख हो गयी। यूरोप से अमरीका गये हुए ये व्यक्ति, जिनकी काफी बडी संख्या अंग्रेजो की थी, अपने साथ सामाजिक तथा सांस्कृतिक जीवन की परम्पराएँ और शासन सम्बन्धी विचार भी ले गये थे। व्यवस्थाप्रिय होने के नाते उनके द्वारा यह आवश्यक समझा गया कि उपनिवेशो की स्थापना के लिए ब्रिटिश सरकार से विधिवत् आज्ञापत्र प्राप्त किया जाय। अत ब्रिटिश सम्राट के द्वारा आज्ञापत्र प्रदान किया गया और १७७५ तक अमरीका मे अलग अलग एम १३ उपनिवेशो की स्थापना हो गयी। इन उपनिवेशो की शासन व्यवस्था मे परस्पर कुछ अन्तर अवश्य था, किन्तु इन सभी उपनिवेशो की शासन व्यवस्था के सम्बन्ध मे यह सामान्य बात थी कि आन्तरिक प्रशासन सम्बन्धी मामलो मे पर्याप्त सीमा तक स्वतन्त्रता प्राप्त होते हुए भी वैदेशिक तथा सेना सम्बन्धी मामलो का संचालन ब्रिटिश सरकार द्वारा किया जाता था।

स्वतन्त्रता की ओर—अमरीका मे बसे हुए ये व्यक्ति मूलत यूरोपियन और इनमे भी अधिकांशतया अंग्रेज थे, किन्तु समय बीतने के साथ साथ इन उपनिवेशो की अपनी एक संस्कृति और राष्ट्रीयता का विकास होने लगा। इनमे अपने मातृ देश के प्रति भावनात्मक एकता कम होने लगी और वे स्वशासन की दिशा मे सोचने लगे। तत्कालीन अंग्रेज शासको की अदूरदर्शिता ने इस निर्बल प्रवृत्ति को स्वतन्त्रता के प्रति अदम्य इच्छा मे परिणत कर दिया। सन १७५७ से लेकर १७६३ तक फ्रास और ब्रिटेन के बीच जो सप्तवर्षीय युद्ध चला, उसमे इंगलैण्ड विजयी हुआ लेकिन इस लम्बे युद्ध ने इंगलैण्ड की आर्थिक स्थिति को सोचनीय कर दिया। इंगलैण्ड

ने अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ करने के लिए अमरीकन उपनिवेशो पर अनेक कर लगाने तथा ऐसे कठोर व्यापारिक कानून पारित करने शुरू किये जिनसे केवल इगलण्ड को ही लाभ होना था। अमरीकन उपनिवेशो ने इन कानूनो का विरोध किया तथा नये अनुचित कर देने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। उनके द्वारा ब्रिटिश जनता के ही नारे 'प्रतिनिधित्व के बिना कर नहीं' (No Taxation without Representation) की घोषणा की गयी जिसका तात्पर्य यह था कि ब्रिटिश ससद मे उनका कोई प्रतिनिधि न होने के कारण ब्रिटिश ससद के द्वारा उन पर कोई कर नहीं लगाया जा सकता है। इगलण्ड ने कठोरता के साथ अमरीकी जनता की आवाज को दबा देने का निश्चय किया और इगलण्ड ने जितनी कठोरता प्रदर्शित की, उतनी ही सीमा तक ये १३ उपनिवेश एक दूसरे के निकट आते गये और उनमे सामान्य अमरीकी राष्ट्रीयता का विकास स्पष्ट होता गया।

इसी समय अर्थात् १६ दिसम्बर १७७३ को मसाचुटस के बोस्टन नगर मे चाय दुघटना हुई, जिसमे बोस्टनवासियो ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के चाय से भरे हुए तीन जहाजो को नष्ट कर दिया। ब्रिटिश सरकार ने इस सत्ता का उल्लघन समझा और विद्रोहियो का दमन करने के लिए अनेक कानून बनाये। इन कानूनों से मैसाचुटस मे बहुत रोष फला और दूसरे उपनिवेशो ने भी मैसाचुटस को सहायता देने का वचन दिया। वर्जीनिया उपनिवेश के सुझाव पर उपनिवेशो की वतमान शोचनीय स्थिति पर विचार करने के लिए उपनिवेशो के प्रतिनिधियो को ५ सितम्बर, १७७४ को फिलाडेल्फिया मे एकत्रित होने के लिए निमन्त्रित किया गया। यह सभा महाद्वीप की 'प्रथम कांग्रेस' कहलाती है। इस कांग्रेस ने दमनकारी कानूनो को रद्द करने के लिए सम्राट के पास एक याचिका भेजी तथा एक एसोसियेशन बनाया जिसका मुख्य काय विदेशी माल का बहिष्कार करना और दमनकारी कानूनो के विरुद्ध जन भावना जाग्रत करना था। बजामिन फ्रेंकलिन जसे सम्मानित नेताओ ने ब्रिटेन के साथ समझौते की चेष्टा की, किन्तु उन्हे इसमे सफलता प्राप्त न हुई और जाज तृतीय ने इस याचिका को ठुकरा दिया। इसके बाद अमरीका मे विद्रोह की भावना बहुत तीव्र हो गयी और १८ अप्रैल, १७७५ को ब्रिटिश जनरल गेज तथा मसाचुटस के विद्रोहियो के बीच भिड़न्त हो गयी, जिसमे अनेक व्यक्ति मारे गये। विद्रोह की यह भावना अन्य १२ उपनिवेशो मे भी फैल गयी।

इसी स्थिति मे १० मई १७७५ को फिलाडेल्फिया मे 'दूसरी महाद्वीपीय कांग्रेस' हुई। इस महाद्वीपीय कांग्रेस मे इगलण्ड से युद्ध का प्रस्ताव पेश किया गया और जाज वाशिगटन को अमरीका की नागरिक सेना का सर्वोच्च सेनापति भी नियुक्त कर दिया गया। इतना सब कुछ किये जाने के बावजूद अनेक अमरीकी प्रतिनिधि इगलैण्ड से पूर्णतया सम्बन्ध विच्छेद करने के पक्ष मे नही थे और जाज वाशिगटन भी इसी विचारधारा के थे। अब भी उनकी प्रमुख माँग यही थी कि उनके परामर्श बिना ब्रिटिश ससद को उन पर कर लगाने का अधिकार नहीं होना चाहिए अ[illegible]

ब्रिटेन ने समझौते का कोई प्रयत्न नही किया। इसके बाद ४ जुलाई, १७७६ को औपचारिक रूप से 'अमरीका की स्वतन्त्रता की घोषणा' कर दी गयी, जिसम कहा गया था कि—

"हम इन सत्यो को स्वयसिद्ध मानते हैं कि सभी मनुष्य समान उत्पन्न हुए हैं और उनके स्रष्टा ने इन्हे कुछ ऐसे अधिकार दिये हैं जो उनसे छीने नहीं जा सकते। इनमे जीवन, स्वतन्त्रता और सुख प्राप्ति के लिए प्रयत्न करने का अधिकार भी है। इन अधिकारों की रक्षा हेतु ही मनुष्यो में सरकारों की स्थापना होती है और उन्हे शासन करने का अधिकार भी जनता की अनुमति से ही प्राप्त होता है। जब कभी कोई शासन इन उद्देश्यो के लिए घातक बन जाये, तब लोगों को अधिकार होता है कि वे उसे बदल दें या समाप्त करदें और ऐसे नवीन शासन की स्थापना करें जिससे उनको अपनी सुरक्षा और सुख समृद्धि स्थायी रहने की सबसे अधिक आशा हो।"

२० अगस्त १७७५ को सम्राट जार्ज तृतीय ने घोषणा की कि उपनिवेशों ने विद्रोह कर दिया गया है। ब्रिटिश सरकार ने सैनिक शक्ति के बल पर विद्रोह को कुचलने का निश्चय किया। ग्रेट ब्रिटेन तथा अमरीकन उपनिवेशो म ६ वर्ष तक युद्ध चला, जिसके अन्त मे १६ अक्टूबर, १७८१ को अमरीकन उपनिवेशो की जीत और ब्रिटिश सेनापति कार्नवालिस की पराजय हुई। ब्रिटिश लोकसदन ने युद्ध समाप्त करने के लिए मतदान किया और लॉर्ड नार्थ की सरकार ने अपना त्यागपत्र दे दिया। सम्राट जार्ज तृतीय ने नवीन सरकार गठित की, जिसने अमरीका की स्वतन्त्रता को मान्यता दे दी। १७८३ म ब्रिटेन और अमरीका के बीच सन्धि सम्पन्न हो गयी।

परिसघ (Confederation) की स्थापना—४ जुलाई, १७७६ को स्वतन्त्रता की घोषणा करने के साथ ही अमरीकी उपनिवेशो ने सगठित होने और एक इकाई के रूप मे काय करने की आवश्यकता अनुभव की। महाद्वीपीय कांग्रेस के द्वारा पर्याप्त वादविवाद के बाद १७ नवम्बर १७७७ को परिसघ की स्थापना का प्रस्ताव पास किया गया। डेलवेयर और मैरीलण्ड के अतिरिक्त शेष ११ राज्यो ने इस प्रस्ताव को तत्काल स्वीकार कर लिया। डेलवेयर ने १७७९ मे और मैरीलण्ड ने १ मार्च, १७८१ को यह प्रस्ताव स्वीकार किया और इसके बाद अमरीकी परिसघ (American Confederation) की स्थापना हुई। परिसघ की स्थापना के प्रलेख (Articles of Confederation) को सयुक्त राज्य अमरीका का प्रथम सविधान कहा जा सकता है। परिसघ की कांग्रेस को यद्यपि वैदेशिक सम्बन्धो के सचालन, युद्ध की घोषणा, डाक, तार मुद्रा नाप और तौल के साधनो की व्यवस्था आदि के सम्बन्ध मे शक्ति प्रदान की गयी थी लेकिन परिसघ की कांग्रेस किसी भी रूप म राष्ट्रीय व्यवस्थापिका नही थी। विधान के द्वारा सम्प्रभुता राज्यो म ही निहित की गयी थी और यद्यपि विधान मे एक से अधिक बार परिसघ को स्थायी बताया गया था लेकिन राज्यो ने यही विचार ग्रहण किया था कि वे जब चाहें, परिसघ की सदस्यता

का त्याग कर सकते हैं। परिसंघ के सम्बन्ध में प्रो० मुनरो ने लिखा है कि, "यह संघटन विशेष रूप से निबल था और इसमें चार बातों की कमी थी, जो कि प्रत्येक दृढ़ राष्ट्रीय सरकार के पास होनी आवश्यक है। ये चार बातें हैं करों द्वारा धन प्राप्त करना, ऋण लेना, व्यापार को नियमित करना और राष्ट्र की रक्षा के लिए सेना गठित करना।" वुडरो विल्सन ने इन विधान को सत्य रूप में 'मिट्टी की रस्सी कहा है जो किसी को बांधकर नहीं रख सकती।'[1]

वर्तमान संविधान का निर्माण—परिसंघ के आधार पर इंगलैण्ड के विरुद्ध युद्ध जीत लिया गया, किन्तु प्रारम्भ से ही परिसंघ की व्यवस्था और उसके विधान की त्रुटियां नितान्त स्पष्ट हो गयी थीं। अतः एलेक्जण्डर हैमिल्टन के सुझाव पर यह प्रस्ताव पारित किया गया कि १७७७ के विधान पर दुबारा विचार किया जाना चाहिए। इस प्रस्ताव के आधार पर २५ मई १७८७ को फिलाडेल्फिया में एक सभा प्रारम्भ हुई। इसमें १३ राज्यों के योग्य प्रतिनिधि सम्मिलित हुए और जार्ज वाशिंगटन ने इसकी अध्यक्षता की। यह सभा निश्चित रूप से योग्यतम व्यक्तियों की सभा थी और जफरसन ने इसे 'देवताओं की सभा' कहा है। सम्मेलन में प्रत्येक राज्य द्वारा ३ से ७ तक प्रतिनिधि भेजे गये थे। सम्मेलन में ७२ प्रतिनिधि नामजद किये गये, किन्तु केवल ५५ प्रतिनिधियों के द्वारा ही भाग लिया गया। कार्यप्रणाली के सम्बन्ध में निश्चय किया गया कि प्रस्तावों पर निर्णय मतदान द्वारा हो, जिसमें प्रत्येक राज्य को एक मत देने का अधिकार हो और बहुमत से स्वीकृत प्रस्ताव पारित समझे जायें। सम्मेलन की कार्यवाही गुप्त रखने का निश्चय किया गया। इसमें भाग लेने वाले कुछ अधिक प्रसिद्ध व्यक्ति थे—जेम्स मेडीसन, बेंजामिन फ्रेंकलिन, एलेक्जेण्डर हैमिल्टन, जार्ज मेसन, जेम्स विल्सन, राबर्ट मारिस और जान डिकिन्सन आदि।

नवीन संविधान के निर्माण में अनेक कठिनाइयां उत्पन्न होना नितान्त स्वाभाविक था। प्रारम्भ में ही विलियम पटरसन ने प्रस्ताव रखा कि सम्मेलन को परिसंघ का विघटन कर संघ राज्य की स्थापना करने का अधिकार नहीं है। रुडोल्फ, मेडीसन और हैमिल्टन इस मत से सहमत नहीं थे। उन्होंने कहा कि सम्मेलन को इस आपात काल में राष्ट्रीय एकता के लिए नवीन संविधान निर्मित करने का पूरा अधिकार है। अन्त में संघवादी पक्ष की विजय हुई और परिसंघ के स्थान पर नवीन संघ राज्य की स्थापना के प्रारूप तैयार किये जाने लगे।

सम्मेलन के सम्मुख अनेक समस्याएँ थीं। संघ के स्थायित्व हेतु केन्द्रीय सरकार को पर्याप्त सुदृढ़ बनाना आवश्यक था, लेकिन दूसरी ओर राज्यों की स्वाधीनता के

[1] Confederation was a rope of sand which could bind no one —Woodrow Wilson quoted from C F Strong *Modern Political Constitutions*, p 108

समर्थकों को भी सन्तुष्ट करना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त बड़े और छोटे राज्यों के परस्पर विरोधी दृष्टिकोणों में समन्वय करना भी जरूरी था। बड़े राज्य व्यवस्थापिका में जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व चाहते थे और उनके द्वारा **'वर्जीनिया योजना'** में यही प्रस्ताव रखा गया था। लेकिन छोटे राज्य सभी राज्यों के लिए समान प्रतिनिधित्व और विशेष तौर पर समान मत चाहते थे और इस हेतु पेटरसन के द्वारा **'न्यूजर्सी योजना'** प्रस्तुत की गयी। एक अवसर पर तो बड़े और छोटे राज्यों का पारस्परिक विरोध इतना प्रबल हो गया कि सम्मेलन भंग होने की स्थिति उत्पन्न हो गयी। लेकिन अध्यक्ष जार्ज वाशिंगटन ने अपने प्रभाव और बुद्धिमत्ता से सम्मेलन भंग होने से बचा लिया। अन्त में कनेक्टीकट राज्य के प्रतिनिधि मण्डल द्वारा प्रस्तुत योजना के आधार पर दस दिन की बहस के बाद महान समझौता (Great Compromise) सम्पन्न हुआ। इस समझौते के अनुसार केन्द्र में व्यवस्थापिका के दो सदनों की व्यवस्था की गयी। यह निश्चित किया गया कि निम्न सदन (प्रतिनिधि सभा) में जनसंख्या के आधार पर राज्यों के प्रतिनिधि चुने जायेंगे, लेकिन दूसरे सदन (सीनेट) में बड़े छोटे सभी राज्यों को समान प्रतिनिधित्व होगा। सम्मेलन में भाग लेने वाले सदस्य माण्टस्क्यू के शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त से बहुत अधिक प्रभावित थे और इसी कारण उनके द्वारा इंगलैण्ड की शासन व्यवस्था से नितान्त भिन्न अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया। अन्त में २६ जुलाई, १७८७ तक संविधान के प्रमुख सिद्धान्तों पर समझौता हो गया और २६ प्रस्तावों के रूप में भावी संविधान को स्वीकार कर लिया गया। ८ सितम्बर, १७८७ को इस सम्मेलन में अपनाये गये प्रस्तावों को विधान का रूप देने के लिए मि० मौरिस की अध्यक्षता में एक समिति बठाई गयी, जिसने १५ सितम्बर तक संविधान का प्रारूप तैयार कर दिया। १७ सितम्बर, १७८७ को ५५ में से ३९ प्रतिनिधियों ने इस पर अपने हस्ताक्षर कर दिये और इसके बाद सम्मेलन स्थगित हो गया।

संविधान का अनुसमर्थन (Ratification of the Constitution)—फिलाडेल्फिया सम्मेलन एक सम्प्रभु संविधान सभा नहीं थी और इसके द्वारा किये गये निर्णय तभी प्रभावशाली होते जबकि दो तिहाई राज्यों अर्थात १३ में से ९ राज्यों के द्वारा उन्हें स्वीकार किया जाता। सम्मेलन द्वारा स्वीकृत विधान को स्वीकार करने में राज्यों ने उत्साह का परिचय नहीं दिया। सन १७८७ के अन्त तक केवल ३ राज्यों के सम्मेलन ने इसे स्वीकार किया। संविधान में की गयी व्यवस्था को लेकर गम्भीर मतभेद उत्पन्न हो गये और देश दो दलों में बंट गया। एक ओर संघवाद के विरोधी (Anti-federalist) थे, जो केन्द्र को अधिक शक्तिशाली बनाने के विरोधी और राज्यों के लिए अधिकाधिक स्वायत्तता के समर्थक थे। दूसरा दल संघ के समर्थकों (Federalists) का था, जो एक ऐसे संघ की स्थापना चाहते थे, जिसमें राज्यों को स्वशासन के अधिकार हों लेकिन केन्द्र भी पर्याप्त शक्तिशाली हो। संघवाद के विरोधियों द्वारा इस आधार पर भी विधान का विरोध किया गया कि संविधान में अधिकारपत्र की व्यवस्था नहीं

है। दोनों ही पक्षों द्वारा अपने-अपने पक्ष का तीव्र प्रचार प्रारम्भ कर दिया गया। अन्त में संघवादियों ने स्वीकार किया कि संविधान में अधिकारपत्र की व्यवस्था होनी आवश्यक है और उन्होंने आश्वासन दिया कि नयी सरकार की स्थापना के तुरन्त बाद अधिकारपत्र की व्यवस्था कर दी जायगी। अपने इस आश्वासन को उन्होंने संविधान में प्रथम दस संशोधन करके पूरा किया। संघवाद के विरोधियों द्वारा केन्द्र सरकार के सम्बन्ध में संघवादियों के दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया गया।

२१ जून, १७८८ तक ११ में से ९ राज्यों के सम्मेलनों द्वारा इस संविधान को स्वीकार कर लिया गया। परिसंघ की सरकार ने निश्चय किया कि संविधान के अनुसार निर्वाचन होकर नयी सरकार ४ मार्च, १७८९ से कार्य प्रारम्भ कर देगी। २६ जुलाई, १७८८ को न्यूयार्क राज्य ने संविधान स्वीकार कर लिया और उसके बाद २९ मई, १७९० तक सभी १३ राज्यों की स्वीकृति संविधान को प्राप्त हो गयी। इस प्रकार प्रथम निर्मित और लिखित संविधान का उदय हुआ। अमरीका की वर्तमान शासन व्यवस्था का संचालन १७८७ में निर्मित और १७८९ में लागू किये गये इस संविधान के आधार पर ही किया जा रहा है, यद्यपि अब तक इसमें २५ संशोधन किये जा चुके हैं।

प्रश्न

१ अमरीकी संविधान के निर्माण का वर्णन कीजिए।

समर्थकों को भी सन्तुष्ट करना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त बड़े और छोटे राज्यों के परस्पर विरोधी दृष्टिकोणों में समन्वय करना भी जरूरी था। बड़े राज्य व्यवस्थापिका में जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व चाहते थे और उनके द्वारा 'वर्जीनिया योजना' में यही प्रस्ताव रखा गया था। लेकिन छोटे राज्य सभी राज्यों के लिए समान प्रतिनिधित्व और विशेष तौर पर समान मत चाहते थे और इस हेतु पेटरसन के द्वारा 'न्यूजर्सी योजना' प्रस्तुत की गयी। एक अवसर पर तो बड़े और छोटे राज्यों का पारस्परिक विरोध इतना प्रबल हो गया कि सम्मेलन भंग होने की स्थिति उत्पन्न हो गयी। लेकिन अध्यक्ष जार्ज वाशिंगटन ने अपने प्रभाव और बुद्धिमत्ता से सम्मेलन भंग होने से बचा लिया। अन्त में कैनेक्टीकट राज्य के प्रतिनिधि मण्डल द्वारा प्रस्तुत योजना के आधार पर दस दिन की बहस के बाद 'महान समझौता (Great Compromise) सम्पन्न हुआ। इस समझौते के अनुसार केन्द्र में व्यवस्थापिका के दो सदनों की व्यवस्था की गयी। यह निश्चित किया गया कि निम्न सदन (प्रतिनिधि सभा) में जनसंख्या के आधार पर राज्यों के प्रतिनिधि चुने जायेंगे, लेकिन दूसरे सदन (सीनेट) में बड़े छोटे सभी राज्यों का समान प्रतिनिधित्व होगा। सम्मेलन में भाग लेने वाले सदस्य माण्टेस्क्यू के शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त से बहुत अधिक प्रभावित थे और इसी कारण उनके द्वारा इंगलैण्ड की शासन व्यवस्था से नितान्त भिन्न अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया। अन्त में २६ जुलाई, १७८७ तक संविधान के प्रमुख सिद्धान्तों पर समझौता हो गया और २६ प्रस्तावों के रूप में भावी संविधान को स्वीकार कर लिया गया। ८ सितम्बर, १७८७ को इस सम्मेलन में अपनाये गये प्रस्तावों को विधान का रूप देने के लिए मि० मौरिस की अध्यक्षता में एक समिति बठाई गयी, जिसने १५ सितम्बर तक संविधान का प्रारूप तयार कर दिया। १७ सितम्बर, १७८७ को ५५ में से ३९ प्रतिनिधियों ने इस पर अपने हस्ताक्षर कर दिये और इसके बाद सम्मेलन स्थगित हो गया।

संविधान का अनुसमर्थन (Ratification of the Constitution)—फिलाडेल्फिया सम्मेलन एक सम्प्रभु संविधान सभा नहीं थी और इसके द्वारा किये गये निर्णय तभी प्रभावशाली होते जबकि दो तिहाई राज्यों अर्थात् १३ में से ९ राज्यों के द्वारा उन्हें स्वीकार किया जाता। सम्मेलन द्वारा स्वीकृत विधान को स्वीकार करने में राज्यों ने उत्साह का परिचय नहीं दिया। सन १७८७ के अन्त तक केवल ३ राज्यों के सम्मेलन ने इसे स्वीकार किया। संविधान में की गयी व्यवस्था को लेकर गम्भीर मतभेद उत्पन्न हो गये और देश दो दलों में बट गया। एक ओर संघवाद के विरोधी (Anti-federalist) थे, जो केन्द्र को अधिक शक्तिशाली बनाने के विरोधी और राज्यों के लिए अधिकाधिक स्वायत्तता के समर्थक थे। दूसरा दल संघ के समर्थकों (Federalists) का था, जो एक ऐसे संघ की स्थापना चाहते थे, जिसमें राज्यों को स्वशासन के अधिकार लेकिन केन्द्र भी पर्याप्त शक्तिशाली हो। संघवाद के विरोधियों द्वारा इस आधार पर भी विधान का विरोध किया गया कि संविधान में अधिकारपत्र की व्यवस्था

है। दोनों ही पक्षों द्वारा अपने-अपने पक्ष का तीव्र प्रचार प्रारम्भ कर दिया गया। अन्त में संघवादियों ने स्वीकार किया कि संविधान में अधिकारपत्र की व्यवस्था होनी आवश्यक है और उन्होंने आश्वासन दिया कि नयी सरकार की स्थापना के तुरन्त बाद अधिकारपत्र की व्यवस्था कर दी जायगी। अपने इस आश्वासन को उन्होंने संविधान में प्रथम दस संशोधन करके पूरा किया। संघवाद के विरोधियों द्वारा केन्द्र सरकार के सम्बन्ध में संघवादियों के दृष्टिकोण को स्वीकार कर लिया गया।

२१ जून, १७८८ तक ११ में से ९ राज्यों के सम्मेलनों द्वारा इस संविधान को स्वीकार कर लिया गया। परिसंघ की सरकार ने निश्चय किया कि संविधान के अनुसार निर्वाचन होकर नयी सरकार ४ मार्च १७८९ से कार्य प्रारम्भ कर देगी। २६ जुलाई, १७८८ को न्यूयार्क राज्य ने संविधान स्वीकार कर लिया और उसके बाद २९ मई, १७९० तक सभी १३ राज्यों की स्वीकृति संविधान को प्राप्त हो गयी। इस प्रकार प्रथम निर्मित और लिखित संविधान का उदय हुआ। अमरीका की वर्तमान शासन व्यवस्था का संचालन १७८७ में निर्मित और १७८९ में लागू किये गये इस संविधान के आधार पर ही किया जा रहा है, यद्यपि अब तक इसमें २५ संशोधन किये जा चुके हैं।

प्रश्न

१ अमरीकी संविधान के निर्माण का वर्णन कीजिए।

2

अमरीकी सविधान का महत्त्व और उसकी विशेषताएं
(IMPORTANCE OF AMERICAN CONSTITUTION AND ITS SAILENT FEATURES)

"यह (अमरीकी सविधान) एक महान् भावना है एक उत्कृष्ट एव उदात्त घोषणा है तथा वास्तव मे, शासन की नैतिकता की विजय है। यह राज्य का समुचित कार्यक्षेत्र राज्य को समर्पित करती है, किन्तु जनता के मूलभूत नैतिक अधिकारो को सुरक्षित रखकर ईश्वर के विषय को ईश्वर के पास ही रहने देती है।"[1]—जेम्स बेक

सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान का महत्त्व

वर्तमान समय मे समस्त विश्व के अन्तर्गत राजनीति विज्ञान के विद्यार्थियो द्वारा जिन थोडे से सविधानो का अध्ययन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समझा जाता है, उनमे निश्चित रूप से एक सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान है। अनेक बातो ने इस अध्ययन को महत्ता प्रदान की है जिनमे से कुछ इस प्रकार हैं

विश्व का प्रथम लिखित सविधान—अमरीकी सविधान की रचना के पूर्व यही समझा जाता था कि सविधानो का विकास होता है और वे अलिखित होते हैं। लेकिन फिलाडेल्फिया सम्मेलन ने सविधान की लिखित रूप मे रचना कर एक नवीन परम्परा का सूत्रपात किया जो शीघ्र ही बहुत अधिक लोकप्रिय हो गयी। वर्तमान समय मे ब्रिटेन को छोडकर विश्व के लगभग सभी देशो के सविधान लिखित हैं और उन्होंने इस प्रवृत्ति को अमरीका से ही अपनाया है। अमरीकी सविधान के इस लक्षण को दृष्टि मे रखते हुए ग्लैडस्टन ने एक बार कहा था 'अमरीकी सविधान

1 'It is a great spirit a high and noble assertion and indeed a vindication of the morality of government It renders unto Caesar the things that are Caesar's but in safeguarding the fundamental moral rights of the people it renders unto God, the things that are God's —James Beck

मानव जाति की आवश्यकता तथा मस्तिष्क से उत्पन्न किसी निश्चित समय की सर्वाधिक आश्चर्यपूर्ण कृति है।"[1]

संघात्मक शासन व्यवस्था—अमरीकी संविधान ने न केवल लिखित संविधान की प्रवृत्ति वरन् समस्त विश्व को एक नवीन प्रकार की शासन व्यवस्था प्रदान करने का कार्य भी किया है। न्यूमन के शब्दों में "ब्रिटिश संसद को जिस प्रकार से संसदों की जननी कहा जाता है, उसी प्रकार संयुक्त राज्य अमरीका को संघात्मक शासन व्यवस्था का पिता कहा जा सकता है।"[2] अमरीका ने संघीय पद्धति के रूप में एक ऐसी शासन व्यवस्था को अपनाया जिसके अन्तर्गत कुछ विषय के सम्बन्ध में केन्द्र को शक्तियां प्रदान कर एकता की स्थापना की गयी तथा दूसरी ओर राज्यों की स्वायत्तता को भी बनाये रखा गया। एकता की स्थापना और स्वायत्तता की रक्षा के समन्वय का यह सफल प्रयोग था और इसने विश्व के अन्य राज्यों को इस दिशा में प्रेरित किया।

शक्ति पृथक्करण पर आधारित संविधान—अमरीकी संविधान सभा के सदस्यों पर लॉक और माण्टेस्क्यू के दर्शन का बहुत अधिक प्रभाव था और इस दर्शन से प्रभावित होकर उनके द्वारा शासन के तीनों विभागों को एक दूसरे से पृथक रखने का प्रयत्न किया गया। अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था इस विचार का ही परिणाम थी। माण्टेस्क्यू ने भ्रान्तिवश ही ब्रिटिश संविधान को शक्ति पृथक्करण पर आधारित संविधान बताया था वास्तव में यदि किसी संविधान द्वारा इस बात का दावा किया जा सकता है, तो वह अमरीकी संविधान ही है। लेकिन अमरीका में भी इस सिद्धान्त को पूरे पूरे तौर पर नहीं अपनाया जा सका है और इस संविधान ने न केवल शक्ति विभाजन के सिद्धान्त का महत्त्व वरन् उसकी सीमाएँ भी स्पष्ट कर दी हैं।

अमरीका एक महान देश—वर्तमान समय की अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में अमरीका निस्सन्देह एक महान शक्ति है। १७८९ में इस संविधान को अपनाने के लगभग १५० वर्ष बाद ही अमरीका आर्थिक और सैनिक दृष्टि से विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली देश बन गया और आज भी उसे यह स्थिति प्राप्त है। अमरीका को इस महान शक्ति का रूप प्रदान करने में जहाँ उसकी भौगोलिक स्थिति, प्राकृतिक साधनों, सामाजिक जीवन की श्रेष्ठ परम्पराओं और नागरिकों के आचार विचार का योग है, वहाँ संविधान का योग भी कुछ कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। अमरीकी संविधान का

[1] 'The American Constitution is the most wonderful work ever struck off at a given time by the brain and purpose of man
—*Gladostone*

"As the British Parliament has been the mother of parliaments, so the United States has been the father of federations
—R G Neumann *European and Comparative Governments* p 601

अध्ययन कर हमारे द्वारा विश्व राजनीति को प्रभावित करने वाले इस देश का संवैधानिक रहस्य ज्ञात किया जा सकता है।

भारतीयो के लिए महत्त्वपूर्ण—भारतीय सविधान यद्यपि मूल रूप में इंग्लैण्ड की ससदात्मक व्यवस्था पर आधारित है, किन्तु हमारे सविधान पर अमरीकी सविधान का भी प्रभाव स्पष्टतया अकित है। सघात्मक शासन व्यवस्था सविधान की सर्वोच्चता की धारणा, मौलिक अधिकार और सर्वोच्च न्यायालय के गठन आदि से सम्बन्धित प्रावधान हमारे द्वारा बहुत अधिक सीमा तक अमरीकी सविधान में से ग्रहण किये गये हैं। अमरीकी सविधान के अध्ययन से हम अपने सविधान की इन बातो को अधिक अच्छे रूप में समझ सकते हैं और सम्बन्धित प्रश्नो को पूर्णता दे सकते हैं।

कठोर सविधान, मौलिक अधिकार और न्यायपालिका की सर्वोच्चता की धारणाएँ भी राजनीतिक चिन्तन को अमरीका की ही देन हैं। पारिभाषिक दृष्टि से कठोर होते हुए भी स्वयं को बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार ढालकर इस सविधान ने अपनी श्रेष्ठता का ही परिचय दिया है। ब्रोगन के अनुसार 'यह सविधान अभी तक जीवित और गतिशील है, लोग इसकी सराहना करते हैं और अमरीकावासी तो इसे गौरवास्पद मानते हैं। ऐसा मानना सर्वथा औचित्यपूर्ण है क्योंकि इस सविधान के अन्तर्गत स्थापित शासन पद्धति के द्वारा अमरीकी राष्ट्र समृद्धशाली और सुदृढ बना है, उसने अपनी स्वतन्त्रता और सुरक्षा को मजबूत बनाये रखा है और विश्व इतिहास पर अमिट प्रभाव डाला है। अमरीकी शासन पद्धति का आधारभूत तथ्य यह है कि विकृत होकर भी यह न कभी आततायी बनी है और न ही अराजक। इस पद्धति के अन्तर्गत लगभग यूरोप के बराबर क्षेत्र में एकता स्थापित हुई है और यह बदलती हुई दशाओ में आशा से कहीं अधिक ढलती चली गयी।'

अमरीकी सविधान के स्रोत
(Sources of American Constitution)

सामान्य व्यक्ति के अनुसार १७८७ में फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित प्रलेख ही अमरीकी सविधान है। लेकिन राजनीति विज्ञान के विद्यार्थी के लिए यह सोचना उचित नही होगा कि वर्तमान समय में अमरीकी शासन व्यवस्था का सचालन इस एकमात्र प्रलेख के आधार पर ही किया जाता है। जिस समय अमरीकी सविधान का निर्माण हुआ, उस समय अमरीका एक कृषि प्रधान देश था और उसकी जनसंख्या केवल कुछ लाख थी। लेकिन आज औद्योगिक दृष्टि से अमरीका विश्व का अत्यन्त विकसित राष्ट्र है, अमरीकी सघ में १३ के स्थान पर ५० इकाइयाँ हो गयी हैं और उसकी जनसंख्या २० करोड है। नवीन परिस्थितियों के अनुकूल सविधान में परिवर्तन होना आवश्यक था और यह परिवर्तन हुआ भी है। ब्राइस के अनुसार "जैसे राष्ट्र बदला है, वैसे ही आवश्यक रूप से सविधान भी बदला है।' उन्होंने इस दृष्टि से ब्रिटिश सविधान को विकसित और अमरीकी सविधान को निर्मित

सविधान की श्रेणी म रखा जाता है लेकिन इसका तात्पय यह नही लिया जाना चाहिए कि अमरीकी सविधान का विकास नही हुआ। राष्ट्रपति विल्सन ने अमरीकी सविधान की विकासशीलता पर बल देते हुए कहा है कि 'सविधान निर्माताओ ने एक जीवित हृदय को सगमरमर के पात्र मे ब द नहीं कर दिया, वरन उ होने एक ऐसे सविधान को जन्म दिया जो ब्रिटिश सविधान की भाति ही जीवित और निर तर विकसित है।" मुनरो के शब्दों म यह सविधान १७८७ का तिथि चिह्न रखते हुए भी इन गुजरे हुए वर्षों मे निरन्तर परिवर्तित, विकसित विस्तृत और नवीन परिस्थितियो के अनुकूल होता रहा है।'[1]

अमरीकी सविधान के स्रोतो का अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित सविधान—अमरीकी सविधान का आज बहुत अधिक विकास हो गया है लेकिन सविधान का मूल ढाचा अब भी वही है जिसे १७८७ म फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा तयार किया गया था। यह ढाचा सविधान का वह अस्थिपजर है जिस पर सवैधानिक सशोधनो, व्यवस्थापन, न्यायिक निणयो और परम्पराओ ने आवश्यक चर्बी चढाने का काय किया है।

(२) सवधानिक सशोधन—अमरीकी सविधान म हुए सवैधानिक सशोधनो ने भी सविधान के विकास म योग दिया है और अमरीकी सविधान म १९७३ के प्रारम्भ तक २५ सवधानिक सशोधन हो चुके है जिनम से कुछ अधिक प्रमुख सशोधनो का उल्लेख किया जा सकता है। प्रथम दस सशोधनो द्वारा नागरिको के अधिकारपत्र को सम्मिलित किया गया है, सशोधन १३, १४ और १५ गृहयुद्ध जनित सशोधन है, १७वे सशोधन द्वारा सीनट के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचन की पद्धति को अपनाया गया है १९वे सशोधन द्वारा स्त्रियो के विरुद्ध मताधिकार सम्ब धी भेद भाव का अ त कर दिया गया है और २२वे सशोधन द्वारा राष्ट्रपति का कायकाल दो अवधि के लिए सीमित कर दिया गया है।

(३) व्यवस्थापन या कांग्रेस के अधिनियम—१७८९ मे लागू किये गये सविधान ने नवीन सरकार के मूल ढाचे मात्र की ही व्यवस्था की है और सविधान निर्माताओ ने विस्तार की बातो के सम्बन्ध मे व्यवस्था करने का भार कांग्रेस पर छोडा है। कांग्रेस ने अनेक ऐसे अधिनियम पारित किये है जिनके आधार पर सरकार के अनेक अगो क गठन, कार्यों और कायपद्धति को निश्चित किया गया है। उदाहरण के लिए सविधान म राष्ट्रपति की केबीनेट के सम्बन्ध मे कुछ भी नही कहा गया है और प्रसगवश 'कायपालिका विभागो के अध्यक्षो' (Heads of Executive

[1] 'The Constitution although bearing the date mark of 1787 has been steadily changing, developing expanding adapting itself to new conditions throughout all the intervening years
—W B Munro *The Government of the United States*, p 66

Departments) शब्दा का ही प्रयोग किया गया है। विभिन्न कार्यपालिका विभागों के गठन और कार्य कांग्रेस द्वारा पारित अधिनियमों के आधार पर ही निश्चित किये गये हैं। इसी प्रकार कांग्रेस के द्वारा अधीनस्थ संघीय न्यायालयों के गठन और कार्य पद्धति को निश्चित किया गया है। बजट और विधि निर्माण की प्रक्रिया भी कांग्रेस ने ही निश्चित की है। इस प्रकार व्यवस्थापन निश्चित रूप से संविधान के विकास का एक प्रमुख आधार रहा है।

(४) कार्यपालिका द्वारा विकास—अमरीकी संघ की कार्यपालिका अर्थात् राष्ट्रपति पद ने भी संविधान के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। जैक्सन, लिंकन, थियोडर रूजवेल्ट और फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट की संविधान पर उतनी ही स्पष्ट छाप देखी जा सकती है, जितनी कि संविधान निर्माताओं में से किसी की है। इन राष्ट्रपतियों ने अपनी कार्यपालिका शक्तियों का प्रभावपूर्ण ढंग से प्रयोग करके व्यवस्थापिका और प्रशासन दोनों पर ही अपना नेतृत्व स्थापित किया है। संविधान में कहीं पर भी मन्त्रिमण्डल का उल्लेख नहीं है, किन्तु प्रथम राष्ट्रपति वाशिंगटन ने मन्त्रिमण्डल की रचना की और वे उससे परामर्श करने लगे, तभी से मन्त्रिमण्डल शासन का एक आवश्यक अंग हो गया है। संविधान ने युद्ध की घोषणा करने की शक्ति राष्ट्रपति को दी है, लेकिन वुडरो विल्सन और फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट जैसे राष्ट्रपतियों ने कांग्रेस से अधिकार प्राप्त किये बिना ही सेनाओं को युद्ध में लड़ने या युद्ध की तैयारी दिखाने के लिए भेज दिया। फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट ने इस संविधान के आधार पर एक नितान्त भिन्न प्रकार की आर्थिक नीति सफलतापूर्वक अपनाई। इन राष्ट्रपतियों ने इस बात पर जोर दिया कि उन्हें प्रशासनिक अधिकारियों को पदच्युत करने की शक्ति प्राप्त है और कांग्रेस का इस पर कोई नियन्त्रण नहीं है। इन राष्ट्रपतियों का दृष्टिकोण था कि संविधान वैसा ही है, जैसा वे कहते और करते हैं और उनका विचार मान्य हुआ।

(५) न्यायिक व्याख्याएँ (Judicial Interpretations)—न्यायिक व्याख्याओं ने अमरीकी संविधान के विकास में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। कांग्रेस या राज्य की व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून या प्रशासनिक सत्ता के किसी कार्य को जब सर्वोच्च न्यायालय या अन्य किसी संघीय न्यायालय में इस आधार पर चुनौती दी जाती है कि यह संविधान के प्रतिकूल है, तो न्यायालय निर्णय देने के पूर्व संविधान से सम्बन्धित प्रावधान की व्याख्या करता है और अपनी प्रत्येक नवीन व्याख्या से परोक्ष रूप में संविधान को संशोधित कर दिया जाता है। मुनरो इसी आधार पर कहते हैं कि **'प्रत्येक सोमवार को सुबह जब सर्वोच्च न्यायालय अपने निर्णय देता है, संविधान संशोधित हो जाता है।'**

सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान को महत्त्वपूर्ण दिशाएँ प्रदान करने का कार्य किया है। **'निहित शक्तियों का सिद्धान्त'** (Doctrine of Implied Powers) जिसने कि संघीय कांग्रेस को इतना शक्तिशाली बनाया, सर्वोच्च न्यायालय की ही देन है।

सर्वोच्च न्यायालय ने ही अपने लगभग १०० निर्णयों मे वाणिज्य से सम्बन्धित धारा की व्याख्या की और सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गयी व्याख्याओ के परिणामस्वरूप रेल, तार टेलीफोन, हवाई और जलीय यातायात और एक से अधिक राज्यो मे काम करने वाले सामान्य औद्योगिक प्रतिष्ठान भी कांग्रेस के विधायी क्षेत्राधिकार मे आ गये हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी व्याख्या के आधार पर ही **'संविदा की पवित्रता के सिद्धान्त'** (Sanctity of Contract Theory) का प्रतिपादन किया। वुडरो विलसन के शब्दो म, **'सर्वोच्च न्यायालय एक प्रकार की निरन्तर बठने वाली संविधान सभा है जो संविधान के मूलभूत नियमो की व्याख्या कर उन्हे विकसित करती है।'**[1] न्यायिक निर्णयो का संविधान म इतना अधिक महत्त्व है कि बीसवी सदी के प्रारम्भ मे ही मुख्य न्यायाधीश ह्यूज (Charles E Hughes) ने कोलम्बिया विश्वविद्यालय मे भाषण देते हुए कहा था कि **'हम संविधान के अन्तगत है, परन्तु संविधान वैसा ही है जसा न्यायाधीश कहते है।'**[2]

(६) परम्पराएँ—अमरीकी संविधान म परम्पराओ को उतना महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त नही है जितना कि ब्रिटिश संविधान म, लेकिन यह स्वीकार करना होगा कि अमरीकी संविधान मे न केवल परम्पराओ का अस्तित्व है, वरन उन्हे महत्त्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त है। प्रथाओ और परम्पराओ ने कुछ बातो के सम्बन्ध मे अमरीका के संविधान को एक ऐसा रूप प्रदान किया है, जो संविधान के लिखित प्रावधानो के नितान्त विपरीत है। इसका सबसे प्रमुख उदाहरण राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल से सम्बन्धित उपबन्ध है। संविधान निर्माताओ की इच्छा यह थी कि निर्वाचक मण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के निर्वाचन मे अपने विवेक का प्रयोग करें और राष्ट्रपति का निर्वाचन न केवल कहने के लिए वरन वास्तव म अप्रत्यक्ष हो। लेकिन आज स्थिति परिवर्तित हो गई है और निर्वाचक मण्डल के सदस्य चुने जाने के पूव ही अपने राजनीतिक दल के उम्मीदवारो का समथन करने के लिए वचनबद्ध होते हैं और इस परम्परा के कारण अमरीका का राष्ट्रपति व्यवहार म प्रत्यक्षत निर्वाचित हो गया है। परम्पराओ के कारण ही राष्ट्रपति को न केवल प्रमुख कायपालिका' वरन अपने राजनीतिक दल का 'सामान्य राजनीतिक नेता' भी समझा जाता है। राष्ट्रपति की केबीनेट पूणतया परम्पराओ का ही परिणाम है और परम्पराओ ने ही यह निर्धारित किया है कि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति न केवल अलग-अलग राज्यो से वरन देश के अलग अलग क्षेत्रो से होंगे। इसी प्रकार संविधान के अनुसार प्रतिनिधि सभा के सदस्य के लिए उस राज्य का निवासी होना जरूरी है, जिससे वह चुना गया है लेकिन परम्परा के अनुसार उसके लिए उस जिले का निवासी होना जरूरी है, जहा

[1] 'A kind of continuous constitutional convention —Wilson
Quoted in Ogg & Ray s *Essentials of American Governmen* p 38

[2] We are under the constitution, but the constitution is what the judges says it is' —*Justice Hughes*

से वह चुनाव लडता है। 'सोनेट की शिष्टता' परम्पराओ का ही परिणाम है। इसी प्रकार की अन्य भी कुछ परम्पराओ के उदाहरण दिये जा सकते हैं, जिन्होने सविधान को विकास प्रदान किया है।

इस प्रकार १७८७ म निर्मित प्रलेख मे निरन्तर वृद्धि और उसका निरन्तर विकास होता रहा है। लॉर्ड ब्राइस ने स्वय कहा है कि, "जसे अमरीका के राष्ट्रीय जीवन मे परिवर्तन हुआ है, वैसे ही अमरीका का सविधान भी बदल गया है। जनता की उस भावना मे भी परिवर्तन हो गया हे, जिससे कि वह सविधान को देखती थी और इसलिए सविधान की अन्तर्निहित भावना भी बदल गयी है।"[1]

सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान की विशेषताएँ

फ्रेंच राजनीतिशास्त्री डी० टाकविले का कथन है कि सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान एक आदर्श प्रजातन्त्रात्मक राज्य की स्थापना करता है। यह सविधान सरल और सक्षिप्त है तथा इसम आवश्यक स्पष्टता और निश्चितता भी है। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान की प्रमुख विशेषताओ का अध्ययन निम्न रूप मे किया जा सकता है

(१) निर्मित और लिखित सविधान—सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान निर्मित और विश्व का प्रथम लिखित सविधान है। ब्रिटिश सविधान की भाति इसका क्रमिक विकास नहीं हुआ, वरन सविधान के मूल ढाचे का फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्माण किया गया है। यह एक निश्चित समय की कृति है। यद्यपि न्यायिक व्याख्याओ, प्रशासनिक कार्यों और परम्पराओ के आधार पर सविधान का निरन्तर विकास होता रहा है, किन्तु सविधान की अधिकाश धाराएँ और उसका मूल ढाँचा लिपिबद्ध है। अमरीका ने लिखित सविधान की उपयोगिता स्पष्ट कर विश्व के अन्य राज्यो को इसे अपनाने की ओर प्रेरित किया है। ब्राइस के अनुसार, 'अमरीका का सविधान विश्व के लिखित सविधानो मे सर्वोच्च है।'

(२) सर्वाधिक सक्षिप्त सविधान—अमरीकी सविधान विश्व के लिखित सविधानो मे सर्वाधिक सक्षिप्त प्रलेख है। मुनरो के अनुसार, 'सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान मे केवल ४,००० शब्द हैं जो १० या १२ पृष्ठो में मुद्रित हैं और जिन्हें आधे घण्टे मे पढ़ा जा सकता है। अमरीकी सविधान मे केवल ७ अनुच्छेद हैं जबकि आस्ट्रेलिया के सविधान मे १२८ अनुच्छेद, कनाडा के सविधान म १४७ अनुच्छेद दक्षिणी अफ्रीका के सविधान मे १५३ अनुच्छेद तथा भारतीय सविधान में ३९५ अनुच्छेद तथा ६ अनुसूचियां हैं।

सविधान निर्माता इस बात मे परिचित थे कि भविष्य की समस्त व्यव— के सम्बन्ध म वे ठीक प्रकार से नहीं सोच सकते, इसलिए उन्होने सभी बातो क

1 The American constitution has necessarily changed as the nation has changed has changed in the spirit with which men regard it and therefore its spirit —Lord Bryce

सम्बन्ध में स्वयं व्यवस्था करने के बजाय संविधान का केवल मूल ढाँचा तैयार किया और उसमें रेखाएँ भरने का कार्य आगे आने वाले समय पर छोड़ दिया। क्लाडियस जॉनसन लिखते हैं, '**संविधान का ढाँचा बनाने वालों ने हमें अच्छा श्रीगणेश कराया, परन्तु आवश्यकतावश उन्होंने शेष बातों को भविष्य पर छोड़ दिया।**'[1] संविधान की इस अत्यधिक संक्षिप्तता के कारण अनेक आवश्यक बातों का संविधान में उल्लेख होने से रह गया है। उदाहरणार्थ बैंकों की व्यवस्था, विधि और बजट निर्माण, कृषि, श्रम, उद्योगों के संचालन और शिक्षा आदि विषयों के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा गया है। संविधान में यह भी नहीं बतलाया गया है कि कांग्रेस के दोनों सदनों के अध्यक्षों की शक्तियाँ क्या होंगी या दोनों सदनों में विवाद उत्पन्न होने पर उसका निर्णय कैसे किया जायेगा।

संविधान की इस संक्षिप्तता का उसके आगामी विकास पर भी महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। इसका एक प्रभाव विभिन्न प्रकार के संवैधानिक विवादों का उदय और परिणामस्वरूप न्यायपालिका के महत्त्व में वृद्धि हुआ है। आग और रे स्वीकार करते हैं कि, '**हमारे बड़े से बड़े संवैधानिक विवादों का मूल शंकास्पद अर्थ वाले प्रावधान न होकर उनका छोड़ दिया जाना है।**'

संविधान की इस संक्षिप्तता का दूसरा परिणाम '**निहित शक्तियों के सिद्धान्त**' (Doctrine of Implied Powers) के रूप में सामने आया है। संविधान अत्यन्त संक्षिप्त होने के कारण अनेक विषयों के सम्बन्ध में यह नहीं बतलाया गया है कि उन पर केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकार में से किसका अधिकार होगा। परिणामस्वरूप ऐसे विषयों पर क्षेत्राधिकार के सम्बन्ध में विवाद उत्पन्न हुआ और १८१९ में **मैक क्लोच बनाम मेरीलैण्ड** के विवाद में मुख्य न्यायाधीश मार्शल ने 'निहित शक्तियों के सिद्धान्त' को कानूनी मान्यता प्रदान की।

इसी प्रकार **लाभ प्रदान करने की प्रणाली** (*Spoils System*) को भी संविधान की संक्षिप्तता का ही एक परिणाम कहा जा सकता है। संविधान इस सम्बन्ध में मौन है कि संघीय अधिकारियों को किन परिस्थितियों में उनके पद से हटाया जा सकता है। इस स्थिति से लाभ उठाते हुए राष्ट्रपति ने इस सम्बन्ध में अपने विवेक के आधार पर कार्य करना प्रारम्भ कर दिया और प्रत्येक नवीन निर्वाचन के बाद राष्ट्रपति, पहले के राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त उन संघीय अधिकारियों को हटाने लगा, जो उसके समर्थक न हों और उनके स्थान पर अपने समर्थकों को नियुक्त किया जाने लगा। इस प्रकार राजनीतिक आधार की दृष्टि से लाभ प्रदान करने की प्रणाली चल पड़ी। यदि भारतीय या अन्य देशों के संविधानों की भाँति संघीय

[1] The framers of constitution gave us a good start but perforce left the rest to the future. —Claudius O Johnson & Associates, *American National Government* p 46

न्यायपालिका के स्थायी पदाधिकारियों को पद की सुरक्षा प्रदान की गया होती और इनकी पदच्युति की विशेष परिस्थितियों का उल्लेख कर दिया जाता, तो 'लाभ प्रदान करने की प्रणाली' का उदय सम्भव नही था।

उपरोक्त कारणों से संक्षिप्तता को जहाँ संविधान म अपूर्णता उत्पन्न करने वाला तत्त्व कहा जा सकता है, वहाँ एक अन्य दृष्टि से संक्षिप्तता को श्रेष्ठ भी माना गया है। हेराल्ड जिक तो कहते हैं कि, 'अमरीकी संविधान को स्थायित्व प्रदान करने का बहुत कुछ श्रेय उसकी संक्षिप्तता को ही है।'

(३) लोकप्रिय सम्प्रभुता (Popular Sovereignty) पर आधारित संविधान—अमरीका के संविधान की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमे लोकप्रिय सम्प्रभुता के सिद्धान्त का स्वीकार किया गया है। १७७७ म 'परिसंघ के विधान' (Articles of Confederation) मे इस सिद्धान्त का अभाव था, क्योंकि उनमें सम्प्रभुता राज्यो मे निहित थी। लेकिन वर्तमान संविधान म इस त्रुटि को दूर कर दिया गया है। संविधान की प्रस्तावना में घोषणा की गयी है कि "हम संयुक्त राज्य अमरीका के लोग अधिक शक्तिशाली संघ बनाने, न्याय की स्थापना, आन्तरिक शान्ति की प्राप्ति, सामान्य प्रतिरक्षा की व्यवस्था और सार्वजनिक कल्याण में बढोत्तरी करने तथा अपने और अपनी सन्तान हेतु स्वतन्त्रता के वरदान को सुरक्षित रखने के लिए, संयुक्त राज्य अमरीका के लिए इस संविधान को अपनाते हैं।" अमरीका का संविधान स्वतन्त्रता और आत्मनिर्णय का प्रतीक है। संविधान का निर्माण जन प्रतिनिधियो द्वारा किया गया है और संविधान के द्वारा अन्तिम सत्ता जनता को ही प्रदान की गयी है।

(४) संविधान की सर्वोच्चता—फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित प्रलेख संयुक्तराज्य अमरीका का सर्वोच्च कानून है और राष्ट्रपति, कांग्रेस, सर्वोच्च न्यायालय तथा संघ की इकाइयां सब इसके आधीन है और किसी के भी द्वारा इसका उल्लंघन नहीं किया जा सकता है। अमरीका के संविधान के अनुच्छेद ६ म कहा गया है "यह संविधान और इसके अनुसार बनाये गये सभी कानून तथा संयुक्त राज्य अमरीका के प्राधिकार के आधीन की गयी अथवा भविष्य मे की जाने वाली सभी संधियाँ, देश का सर्वोच्च कानून होगा और प्रत्येक राज्य के न्यायाधीश उनसे बाध्य होगे। किसी भी राज्य के संविधान अथवा कानून की कोई भी बात, जो इस संविधान के विरुद्ध होगी, अवैध समझी जायगी।"[1] ह्वीयर लिखते हैं कि

[1] 'This Constitution and the laws of the United States which shall be made in pursuance thereof and all treaties made or which shall be made under the authority of the United States shall be the supreme law of the land and the judges in every State shall be bound thereby anything in the Constitution or laws of any State to the contrary notwithstanding (Article VI)

'व्यवहार में भी अमरीकी अपने संविधान के प्रति जितना सम्मान रखते हैं, उतना अन्य किसी भी देश के नागरिक अपने संविधान के प्रति नहीं।"[1]

(५) कठोर संविधान (Rigid Constitution)—संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान कठोर है अर्थात् अमरीकी कांग्रेस के द्वारा जिस प्रक्रिया के आधार पर सामान्य कानूनों का निर्माण किया जाता है, उसी प्रक्रिया के आधार पर संवैधानिक कानूनों का निर्माण अर्थात् संविधान में संशोधन का कार्य नहीं किया जा सकता। संवैधानिक संशोधन के लिए साधारण कानूनों के निर्माण से भिन्न प्रक्रिया को अपनाया जाना आवश्यक है। संघात्मक शासन व्यवस्था स्थापित किये जाने के कारण अमरीका के लिए कठोर संविधान को अपनाना आवश्यक भी था। अमरीकी संविधान न केवल पारिभाषिक दृष्टि से कठोर है, वरन् व्यवहार में भी संविधान में परिवर्तन किया जाना बहुत अधिक कठिन है। इसी कारण लगभग १८५ वर्षों के संवैधानिक इतिहास में संविधान में केवल २८ संशोधन ही हुए हैं और इनमें भी प्रथम दस संशोधन तो एक साथ संविधान निर्माण के तुरन्त बाद नागरिकों को मौलिक अधिकार प्रदान करने हेतु प्रस्तावित किये गये थे।

संविधान में संशोधन की पद्धति (Amendment Procedure)—संविधान में संशोधन की प्रक्रिया पांचवीं धारा द्वारा निर्धारित की गयी है। इस सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि **संविधान की प्रथम धारा की नवीं उपधारा के पहले व चौथे उपबन्धों को** संशोधित नहीं किया जा सकता और न ही सम्बन्धित राज्य की अनुमति के बिना किसी राज्य को उसे सीनेट में प्राप्त प्रतिनिधित्व व मताधिकार से वंचित किया जा सकता है।

संविधान में संशोधन की प्रक्रिया के दो चरण हैं—(i) **संशोधन की प्रस्तावना** और (ii) **संशोधन का अनुसमर्थन या इसकी पुष्टि।**

संशोधन की प्रस्तावना—संशोधन दो में से किसी एक पद्धति के आधार पर प्रस्तावित किया जा सकता है। प्रथम, कांग्रेस के दोनों सदन अपने दो तिहाई बहुमत से संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तावित कर सकते हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में स्पष्ट कर दिया है कि यह दो तिहाई बहुमत संशोधन पर मत देने वाले सदस्यों का होना चाहिए, न कि समस्त सदस्यों का। दूसरी पद्धति यह है कि अमरीकी संघ की कम से कम दो तिहाई राज्यों की विधानसभाएँ कांग्रेस से संशोधन की प्रार्थना करें। ऐसी प्रार्थना की जाने पर कांग्रेस संविधान में संशोधन करने के लिए एक सम्मेलन (Convention) आमन्त्रित करती है और इस सम्मेलन द्वारा संशोधन प्रस्तावित किया जा सकता है।

1 'There can indeed be no other people anywhere in the world, who regard their constitution with greater respect than do the Americans. —K. C. Wheare *Modern Constitutions* p. 113

संशोधन की पुष्टि—संशोधन प्रक्रिया का दूसरा चरण संशोधन की पुष्टि का है। संविधान में संशोधन के लिए प्रस्तावित प्रस्ताव तभी पारित समझा जाता है जब या तो (i) संघ के तीन चौथाई राज्यों के विधानमण्डल उसकी पुष्टि कर दें, या (ii) इस कार्य के लिए राज्यों में आमन्त्रित किये गये सम्मेलनों में से तीन चौथाई राज्यों के सम्मेलनों द्वारा संशोधन की पुष्टि की जाय। संशोधन की पुष्टि के लिए उपर्युक्त दो विधियों में से कौन सी विधि प्रयोग में लाई जाय, इसका निर्णय कांग्रेस करती है।

संशोधन प्रक्रिया में निम्नलिखित बातें महत्त्वपूर्ण हैं

(i) संशोधन प्रक्रिया में राष्ट्रपति का कोई भाग नहीं है। केवल १३वें संशोधन की पुष्टि राष्ट्रपति लिंकन द्वारा की गयी, परन्तु उसी वर्ष सीनेट ने यह घोषणा कर दी कि संशोधन पर राष्ट्रपति की स्वीकृति आवश्यक नहीं है।

(ii) संविधान में संशोधन के प्रस्ताव पर अपनी पुष्टि प्रदान करने के बाद कोई राज्य अपनी स्वीकृति वापस नहीं ले सकता। परन्तु कोई भी राज्य किसी प्रस्ताव को अस्वीकार करके बाद में अपनी स्वीकृति दे सकता है।

(iii) कांग्रेस के द्वारा संविधान के संशोधन के प्रस्ताव की पुष्टि के लिए कोई अवधि निर्धारित की जा सकती है। उदाहरणार्थ, १८वें, २०वें और २१वें संशोधन के लिए ७ वर्ष की अवधि रखी गयी थी। लेकिन यदि कांग्रेस संशोधन की पुष्टि के लिए अवधि निश्चित न करे, तो सम्बन्धित प्रस्ताव पुष्टि के लिए अनिश्चित काल तक राज्य के पास पड़ा रह सकता है। कांग्रेस ने सन् १९२४ में बाल श्रम अधिनियम प्रस्तावित किया था, परन्तु संशोधन प्रस्ताव न तो समाप्त हुआ है और न ही अब तक संविधान का अंग बन सका है क्योंकि अभी तक आवश्यक संख्या के राज्यों द्वारा इसे पुष्टि प्रदान नहीं की गयी है।

व्यवहार में २१वें संशोधन के अतिरिक्त सभी संशोधन कांग्रेस के ⅔ बहुमत से प्रस्तावित किये गये हैं और ¾ राज्यों के विधानमण्डलों द्वारा उनकी पुष्टि की गयी है। केवल २१वां संशोधन ही राज्यों की प्रार्थना पर बुलाये गये संविधान सम्मेलन द्वारा प्रस्तावित किया गया और केवल इसे ही राज्यों के संविधान संशोधन सम्मेलनों द्वारा पुष्टि प्रदान की गयी।

संशोधन की इस प्रक्रिया से यह नितान्त स्पष्ट है कि संघ की इकाइयों को उचित महत्त्व प्रदान कर इसे अधिकाधिक संघीय बनाने का प्रयत्न किया गया है। राज्यों को संविधान में संशोधन प्रस्तावित करने का अधिकार प्राप्त है और कोई भी संशोधन तब तक पारित नहीं समझा जा सकता, जब तक कि तीन चौथाई राज्यों के द्वारा उसे अपनी स्वीकृति न प्रदान कर दी जाय। इसके अतिरिक्त संविधान में कोई ऐसा संशोधन नहीं किया जा सकता है जिससे राज्यों को सीनेट में प्राप्त प्रतिनिधित्व से वंचित किया जाय। इस प्रकार संविधान में संशोधन की पद्धति निश्चित रूप से संघात्मक व्यवस्था के अनुकूल है।

लेकिन मुख्य आधारों पर संशोधन प्रक्रिया की आलोचना की जाती है

(i) संशोधन की प्रक्रिया निश्चित रूप से बहुत अधिक क्लिष्ट और जटिल है और इसके आधार पर संशोधन सरलतापूर्वक नहीं हो सकते। संशोधन प्रक्रिया की जटिलता के कारण कई बार आवश्यक संशोधन समय पर नहीं हो पाये हैं। संशोधन प्रक्रिया की जटिलता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि १७८६ से १६७० तक कांग्रेस के सम्मुख संशोधन के लिए ५ हजार से अधिक प्रस्ताव आये हैं लेकिन उनमें से केवल २५ ही स्वीकृत हो सके हैं। १६वाँ संशोधन ८० बार कांग्रेस के समक्ष रखा गया और ४३वीं बार ही उसे दोनों सदनों का दो तिहाई बहुमत मिल सका और १७वाँ संशोधन १६८ असफल प्रयत्नों के बाद ही पारित हो सका है। संशोधन प्रक्रिया की इस जटिलता के कारण ही बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार संविधान को विकसित करने के लिए अन्य मार्ग (न्यायिक निर्णय, प्रशासनिक कार्य या परम्पराएँ) खोजने पड़े हैं। मुनरो के शब्दों में "यह विरोधाभास लगता है, लेकिन यह सत्य है कि अमरीकी संविधान में अधिकतर संशोधन संवैधानिक उपबन्धों में बिना कोई संशोधन किये हुए ही हो गये हैं।"[1] यह कोई सुखद स्थिति नहीं है। न्यायाधीश मार्शल ने इस संशोधन पद्धति को सत्य रूप में ही 'अत्यधिक कठिन और कष्टकारी' (Unwieldy and Cumbrous) बताया है।

(ii) एक आपत्ति यह भी की जाती है कि देश की जनता का संशोधन की प्रस्तावना या उसकी पुष्टि में कोई हाथ नहीं है। संशोधन प्रणाली इस दृष्टि से भी अप्रजातान्त्रिक है कि संशोधन के प्रस्ताव को ३५ सीनेटर रोक सकते हैं या १३ राज्य, जिनकी जनसंख्या चाहे कितनी ही कम क्यों न हो, संशोधन प्रस्ताव की पुष्टि न करके उसे समाप्त कर सकते हैं। इसे बहुमत की प्रगति के विरुद्ध अल्पमत को प्राप्त विशेषाधिकार का ही एक उदाहरण कहा जा सकता है।

(iii) संशोधन की पुष्टि के सम्बन्ध में राज्यों पर समय का कोई प्रतिबन्ध नहीं है और इसी कारण कभी कभी वर्षों तक संशोधन के भाग्य का निपटारा नहीं हो पाता। इस दोष को अनुभव करते हुए ही कांग्रेस ने पुष्टि के समय को सीमित करने का प्रावधान किया है और १८वें, २०वें और २१वें संशोधन में यह समय ७ वर्ष का रखा गया है।

विदेशी लेखकों के द्वारा संशोधन प्रक्रिया को जटिल बतलाकर उसकी आलोचना की गयी है लेकिन अमरीकी लेखक इसे उचित प्रकार की पद्धति मानते हैं। संविधान सभा के प्रमुख सदस्य मेडीसन ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा था कि "अमरीका में संविधान के संशोधन का ढंग उस अत्यधिक सरलता के विरुद्ध

[1] 'It may sound like paradox, but it is true that most of the amending has been done without adding amendments.'
—W. B. Munro, *The Government of the United States*,

भी सचेत है, जिसके कारण संविधान को अत्यधिक सरलता से नष्ट किया जा सकता है और उस अत्यधिक कठिनाई के विरुद्ध भी सचेत है, जिसके कारण जाने हुए दोष भी दूर न किये जा सकें।" अमरीकी लेखकों और सामान्य जनता का दृष्टिकोण अब भी यही है। ग्रिफिथ लिखता है 'इस कठोर संविधान ने व्यवहार में आश्चर्यजनक लचीलापन प्रदर्शित किया है।"[1]

सवैधानिक संशोधनों पर एक दृष्टि—संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान में अब तक जो २५ संशोधन हुए, वे इस प्रकार हैं

संविधान में प्रथम १० संशोधन नागरिकों के अधिकारपत्र से सम्बन्ध रखते हैं। इन संशोधनों के आधार पर ही संविधान को राज्यों द्वारा पुष्टि प्रदान की गयी थी, इसलिए ये १० संशोधन संविधान का मूल अंग ही समझे जाते हैं।

११वें और १२वें संशोधन संविधान की अपूर्णताओं को दूर करने के लिए किये गये। ११वें संशोधन द्वारा किसी राज्य के विरुद्ध नागरिक द्वारा अभियोग चलाने का अधिकार समाप्त कर दिया गया और १२वें संशोधन द्वारा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के अलग-अलग चुनाव की व्यवस्था की गयी।

संशोधन १३, १४ और १५ गृहयुद्ध के परिणामस्वरूप किये गये। १३वें संशोधन द्वारा दास प्रथा समाप्त हुई, १४वें द्वारा नागरिकता परिभाषित की गयी और यह स्पष्ट किया गया कि राजद्रोह या अन्य भीषण अपराध के अतिरिक्त अन्य किसी अपराध पर कोई भी नागरिकता से वंचित नहीं किया जायगा। १५वें संशोधन द्वारा भी जाति, वर्ण तथा दासत्व के आधार पर किसी को नागरिकता से वंचित न करने की व्यवस्था की गयी।

१६वें संशोधन द्वारा सीनेट को आय कर लगाने का अधिकार मिला जिसकी राशि वह राज्यों में बाँटने के लिए बाध्य नहीं थी। १७वें संशोधन द्वारा सीनेट का प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रारम्भ हुआ। १८वें संशोधन द्वारा राष्ट्रीय मद्य निषेध किया गया और २०वें संशोधन द्वारा इसे समाप्त कर दिया गया। १९वें संशोधन द्वारा स्त्रियों को मताधिकार मिला तथा २१वें संशोधन में राष्ट्रपति के पद ग्रहण की तिथि २० जनवरी निश्चित की गयी और कांग्रेस के 'लेम डक अधिवेशन' (Lame Duck Session) को समाप्त कर दिया गया।

१९५१ में २२वाँ संशोधन हुआ, जिसके द्वारा निश्चित किया गया कि राष्ट्रपति पुनः चुनाव लड़ सकता है परन्तु उसका कार्यकाल १० वर्ष से अधिक नहीं हो सकता। २३वें संशोधन (१९६१) के द्वारा कोलम्बिया जिले को राष्ट्रपति के चुनाव में भाग लेने का अधिकार दिया गया। २४वें संशोधन (१९६४) के अनुसार

1 This rigid constitution has in practice shown a surprising flexibility
—E S Griffith, *The American System of Government* p 1[?]

किसी भी नागरिक को कर न देने के कारण किसी भी पद पर चुने जाने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।

अब तक स्थिति यह थी कि राष्ट्रपति की शारीरिक या मानसिक अस्वस्थता या मृत्यु के कारण उपराष्ट्रपति को राष्ट्रपति के रूप में कार्य करना होता, और उपराष्ट्रपति का पद अगले राष्ट्रपति के चुनाव तक के लिए रिक्त हो जाता था, लेकिन **२५वें संशोधन** (१९६७) के अनुसार ऐसी स्थिति में राष्ट्रपति पद पर कार्य करने वाले व्यक्ति को अधिकार होगा कि वह किसी को उपराष्ट्रपति पद पर नियुक्त कर सके।

(६) **गणतन्त्र की स्थापना**—संयुक्त राज्य अमरीका में संविधान द्वारा अमरीका में गणतन्त्र की स्थापना की गयी है, जिसका तात्पर्य यह है कि अमरीकी लोकतन्त्र का अध्यक्ष ब्रिटेन के प्रधान (सम्राट) की भाँति अपना पद ग्रहण नहीं करता है, वरन् वह निर्वाचित है। संयुक्त राज्य अमरीका के संघ का अध्यक्ष राष्ट्रपति है जो जनता द्वारा निर्वाचित निर्वाचक मण्डल के सदस्यों द्वारा चुना जाता है। न केवल संघ, वरन् इकाइयों में भी गणतन्त्र की स्थापना की गयी है। संविधान की **धारा ४ के चौथे उपबन्ध** में कहा गया है कि संयुक्त राज्य की संघीय सरकार इस संघ के प्रत्येक राज्य में गणतन्त्रीय सरकार की स्थापना की गारण्टी देगी।

(७) **संघात्मक शासन की स्थापना**—१७८७ में फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित संविधान के द्वारा संयुक्त राज्य अमरीका में एक संघ राज्य की स्थापना की गयी है। १७७७ के विधान द्वारा एक परिसंघ (Confederation) की स्थापना की गयी थी, किन्तु शीघ्र ही परिसंघ की निर्बलता स्पष्ट हो गई और नवीन संविधान के द्वारा एकता और सुदृढ़ता प्राप्त करने के लिए परिसंघ के स्थान पर संघ को अपनाया गया। १७८९ में इस अमरीकी संघ की १३ इकाइयाँ थीं, किन्तु नवीन राज्यों ने संघ में प्रवेश किया और आज अमरीकी संघ में ५० इकाइयाँ या राज्य हैं।

संविधान के द्वारा विश्व के प्रथम और पूर्ण संघ राज्य की स्थापना की गयी है और संघ राज्य के सभी प्रमुख लक्षण इसमें विद्यमान हैं। प्रथम, संघ राज्य के संविधान द्वारा संघीय सरकार तथा राज्य सरकारों में शक्ति का विभाजन किया जाना चाहिए। संविधान द्वारा यह शक्ति विभाजन किया गया है और इसका उल्लेख अनुच्छेद १ के उपभाग ८, ९ और १० में है। द्वितीय 'संविधान की सर्वोच्चता' की धारणा को स्वीकार करते हुए अनुच्छेद ६ में संविधान को राज्य का सर्वोच्च कानून घोषित किया गया है। तृतीय, संघात्मक व्यवस्था के अनुकूल कठोर संविधान को अपनाया गया है। चतुर्थ, संघ की आवश्यकता के अनुकूल एक सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना की गयी है जो संघीय सरकार तथा राज्य सरकारों के मध्य उत्पन्न होने वाले संवैधानिक विवादों का निर्णय करता है। संघ के अन्य लक्षणों (दोहरी नाग

ग्किला और संघीय व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन में इकाइयों के समान प्रतिनिधित्व को भी अपनाया गया है।

अमरीकी संघ में राज्यों की शक्तियाँ मौलिक हैं और केन्द्र की शक्तियाँ प्रदत्त हैं। केन्द्र की शक्तियों का वर्णन संविधान में कर दिया गया है और केन्द्र को केवल वे ही शक्तियाँ प्राप्त हैं। अवशेष शक्तियाँ संविधान ने राज्यों को प्रदान की हैं। संविधान निर्माता पृथक-पृथक राज्यों की सत्ता के प्रति अधिक सचेत थे और उनके द्वारा राज्यों को अधिक शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं। लेकिन संविधान द्वारा किया गया यह शक्ति विभाजन बदलती हुई परिस्थितियों से बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। न्यायिक व्याख्याओं, निहित शक्तियों के सिद्धान्त, राष्ट्रीय संकट और अन्य परिस्थितियों के कारण आज केन्द्र अधिक शक्तिशाली हो गया है और राज्य की तुलना में निर्बल है।

(८) प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र की स्थापना—लोकतन्त्रात्मक शासन के दो भेद होते हैं (१) प्रत्यक्ष लोकतन्त्र और (२) अप्रत्यक्ष या प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र। अमरीकी संविधान निर्माता इस तथ्य से परिचित थे कि संयुक्त राज्य अमरीका जैसे विशाल राज्य में प्रत्यक्ष लोकतन्त्र को अपनाना सम्भव नहीं हो सकता। इसलिए उनके द्वारा प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र को ही अपनाया गया जिसके अन्तर्गत सामान्य जनता अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से शासन कार्य में भाग लेती है।

इस सम्बन्ध में विशेष बात यह है कि अमरीकी संघ के कुछ राज्यों में लोक निर्णय (Referendum) आरम्भक (Initiative) और प्रत्यावहन (Recall) जैसी प्रत्यक्ष लोकतन्त्रात्मक पद्धतियों को अपनाया गया है पर यह सब इतने सीमित रूप में है कि उसकी तुलना स्विट्जरलैण्ड के प्रत्यक्ष लोकतन्त्र से नहीं की जा सकती और यही कहना होगा कि संविधान के द्वारा केन्द्र और राज्यों में प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र की स्थापना की गयी है।

(९) न्यायिक सर्वोच्चता—सभी संघात्मक राज्यों के अन्तर्गत एक स्वतन्त्र न्यायालय की व्यवस्था की जाती है, जिसका कार्य संविधान की व्याख्या एवं रक्षा करना होता है। संयुक्त राज्य अमरीका में संघात्मक व्यवस्था को अपनाने के कारण स्वाभाविक रूप से न्यायिक सर्वोच्चता के सिद्धान्त को अपनाया गया है। इस प्रकार ब्रिटेन में जहाँ संसद की सर्वोच्चता है वहाँ अमरीका में न्यायिक सर्वोच्चता है। न्यायिक सर्वोच्चता का तात्पर्य यह है कि सर्वोच्च न्यायालय संविधान का उल्लंघन करने वाले कांग्रेस के कानूनों, राष्ट्रपति की आज्ञाओं अथवा राज्य सरकारों के कानूनों और कार्यों को अवैध घोषित कर सकता है। इसी को 'न्यायिक पुनर्विलोकन' (Judicial Review) का अधिकार भी कहते हैं। इस शक्ति के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारों को अपने-अपने क्षेत्रों तक सीमित रखता है। सन् १८०३ में मुख्य न्यायाधीश मार्शल ने 'मारबरी बनाम मेडीसन' नामक विवाद

मे न्यायिक सर्वोच्चता के सिद्धात का प्रतिपादन करते हुए स्पष्ट कहा था कि सब प्रकार के कानूनो की सवधानिकता की जाच करने का एकमात्र अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त है ।

(१०) अध्यक्षात्मक शासन की स्थापना—प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र के भी दो भेद होते हैं—(१) ससदात्मक या मन्त्रिमण्डलात्मक शासन और (२) अध्यक्षात्मक शासन । अमरीकी सविधान के निर्माता लॉक और माण्टेस्क्यू के दशन से प्रभावित थे और शक्ति विभाजन के सिद्धात को नागरिक स्वतन्त्रताओ की रक्षा का साधन मानते थे, इसलिए उनके द्वारा ब्रिटेन जसी ससदात्मक व्यवस्था के स्थान पर अध्यक्षात्मक व्यवस्था को अपनाया गया है जिसके अन्तगत कायपालिका विभाग व्यवस्थापन विभाग से सवथा पृथक होता है कायपालिका विभाग के प्रधान का कायकाल निश्चित होता और वह अपनी नीति तथा कार्यों के लिए व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नही होता ।

ब्रिटेन की ससदात्मक व्यवस्था और अमरीका की अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था मे भेद—ससदीय व्यवस्था ब्रिटिश शासन का और अध्यक्षात्मक व्यवस्था अमरीकी शासन का मूल आधार है, अत हमारे द्वारा ब्रिटेन की ससदात्मक व्यवस्था तथा अमरीका की अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था का भेद स्पष्टता क साथ समझ लिया जाना चाहिए ।

ब्रिटेन की ससदात्मक शासन व्यवस्था—यह शासन की वह व्यवस्था है जिसके अन्तर्गत व्यवस्थापिका और कार्यपालिका परस्पर सम्बन्धित होती है और कायपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी होती है । गानर के अनुसार "ससदात्मक शासन, वह शासन प्रणाली है जिसमे वास्तविक कायपालिका, अर्थात् मन्त्रिमण्डल, व्यवस्थापिका अथवा उसके लोकप्रिय सदन के प्रति, तथा अन्तिम रूप मे निर्वाचक मण्डल के प्रति, अपनी राजनीतिक नीतियो तथा कार्यों के लिए कानूनी रूप से उत्तरदायी होता है और राज्य का प्रधान नाममात्र का तथा अनुत्तरदायी होता है ।" इस शासन व्यवस्था को मन्त्रिमण्डलात्मक या उत्तरदायी शासन के नाम से भी पुकारा जाता ह । इस शासन व्यवस्था के प्रमुख रूप से तीन लक्षण होते ह

१ नाममात्र की वास्तविक कायपालिका का भेद

२ व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के बीच घनिष्ट सम्बन्ध,

३ कायपालिका के कायकाल की अनिश्चितता ।

ब्रिटेन म सम्राट कायपालिका का औपचारिक प्रधान है और मन्त्रिपरिषद कायपालिका का वास्तविक प्रधान । सम्राट उत्तराधिकार के आधार पर पद ग्रहण करता है और वह किसी के भी प्रति उत्तरदायी नही होता । शासन के निर्माण की प्रजातन्त्रीय प्रक्रिया के अन्तगत सवप्रथम प्रति ५ वष बाद लोकसदन के चुनाव होते हैं और लोकसदन म जिस राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त हो, उसके नेता को सम्राट के द्वारा प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करन के लिए आमन्त्रित किया जाता है

प्रधानमन्त्री के द्वारा अपनी मन्त्रिपरिषद का निर्माण किया जाता है। इस सम्बन्ध में कानूनी प्रतिबन्ध केवल यह है कि मन्त्रिपरिषद के सदस्यों को संसद सदस्य होना चाहिए, यदि वे पद ग्रहण के समय संसद सदस्य न हों, तो उन्हें ६ माह के भीतर संसद की सदस्यता प्राप्त कर लेनी चाहिए। मन्त्रिमण्डल सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के आधार पर प्रधानमन्त्री के नेतृत्व में कार्य करता है और लोकसदन के प्रति उत्तरदायी होता है अर्थात् यह उसी समय तक अपने पद पर रहता है, जब तक उसे लोकसदन के बहुमत का विश्वास प्राप्त हो। मन्त्रिपरिषद के सदस्य संसद के कानून निर्माण के कार्य में पूर्ण रूप से भाग लेते हैं और संसद प्रश्न पूछकर, निन्दा या आलोचना प्रस्ताव और काम रोको प्रस्ताव आदि के आधार पर मन्त्रिपरिषद पर नियन्त्रण रखती है। लोकसदन के द्वारा बजट में कटौती या अन्तिम रूप से अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर कार्यपालिका को पदच्युत किया जा सकता है। इसके साथ ही यदि प्रधानमन्त्री यह समझे कि लोकसदन जनता के हितों का उचित रूप में प्रतिनिधित्व नहीं कर रहा है, तो वह सम्राट को परामर्श देकर लोकसदन को समय के पूर्व भंग करवा सकता है। इस प्रकार लोकसदन और मन्त्रिमण्डल एक दूसरे से सम्बन्धित और कार्यकाल के लिए परस्पर आश्रित होते हैं। भारत, आस्ट्रेलिया, कनाडा, न्यूजीलैण्ड और जापान आदि अन्य कुछ देशों में भी इसी प्रकार की संसदात्मक व्यवस्था है।

संयुक्त राज्य अमरीका की अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था—जिस शासन व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यपालिका विभाग व्यवस्थापन विभाग से सर्वथा पृथक होता है और कार्यपालिका विभाग का प्रधान एक ऐसा व्यक्ति होता है जो व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं होता, उसे अध्यक्षात्मक शासन कहते हैं। डा० गार्नर के अनुसार "अध्यक्षात्मक सरकार वह होती है जिसमें कार्यपालिका अर्थात् राज्य का अध्यक्ष तथा उसके मन्त्री अपनी अवधि के बारे में संविधान की दृष्टि से विधानमण्डल से स्वतन्त्र होते हैं और अपनी राजनीतिक नीतियों के बारे में भी उसके प्रति अनुत्तरदायी होते हैं।" अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था की प्रमुखतया तीन विशेषताएं हैं

१ कार्यपालिका और व्यवस्थापिका का पृथक्करण,
२ नाममात्र की और वास्तविक कार्यपालिका अलग अलग नहीं,
३ कार्यपालिका के कार्यकाल की अनिश्चितता।

संयुक्त राज्य अमरीका में कार्यपालिका के औपचारिक और वास्तविक प्रधान राष्ट्रपति को वैधानिक दृष्टि से देश के नागरिकों द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किया जाता है, परन्तु व्यवहार में इस पद्धति ने प्रत्यक्ष निर्वाचन का रूप ग्रहण कर लिया है। निर्वाचित होने के बाद राष्ट्रपति किन्हीं भी व्यक्तियों को मन्त्रि पद पर नियुक्त कर सकता है और इस प्रकार मन्त्रिपरिषद का निर्माण होता है। ये मन्त्री व्यक्तिगत रूप में राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी होते हैं और मन्त्रिपरिषद का अस्तित्व

तथा काय सम्पूणतया राष्ट्रपति पर ही निभर करते है। राष्ट्रपति काग्रेस के नियन्त्रण स पृथक रहकर शासन शक्ति का सचालन करता है। राष्ट्रपति या मन्त्रिपरिषद के सदस्य व्यवस्थापिका की कायवाहियो मे भाग नही लेते है और ससदीय शासन के समान कायपालिका व्यवस्थापिका को विघटित भी नही कर सकती है। ब्राजील और दक्षिण अमरीका के अन्य कुछ राज्यो म भी इसी प्रकार की शासन व्यवस्था है।

ब्रिटन और अमरीका की शासन व्यवस्था की उपरोक्त विवेचना के आधार पर इन दोनो शासन व्यवस्थाओ के भेदो का अध्ययन निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) कायपालिका प्रधान की स्थिति मे अन्तर—ब्रिटेन म सम्राट काय पालिका का औपचारिक प्रधान है, मन्त्रिपरिषद कायपालिका की वास्तविक प्रधान। सद्धान्तिक दृष्टि म सम्राट पूण शक्तिसम्पन्न होता है, लेकिन व्यवहार म उसकी इन शक्तियो का प्रयोग मन्त्रिपरिषद क द्वारा ही किया जाता है, जिसका प्रधान प्रधान मन्त्री होता है। अमरीका की अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था मे राष्ट्रपति कायपालिका का न केवल औपचारिक वरन् वास्तविक प्रधान भी होता ह। वस्तुत अमरीकी राष्ट्र पति के पद म ब्रिटिश प्रधानमन्त्री और सम्राट पद दोनो ही एकरूप हो गये हैं। राष्ट्रपति ही मन्त्रिपरिषद के सदस्यो को नियुक्त करता है और ये सदस्य पूणतया उसके ही आधीन होते हैं।

(२) व्यवस्थापिका और कायपालिका के पारस्परिक सम्बध के विषय में अन्तर—ब्रिटिश शासन व्यवस्था म वास्तविक कायपालिका अर्थात् मन्त्रिपरिषद का निमाण ससद मे स ही किया जाता ह और मन्त्रिपरिषद लोकसदन के प्रति उत्तर-दायी हाती है। ब्रिटिश ससद कानून निर्माण सम्बन्धी कार्य करने के साथ-साथ कायपालिका द्वारा किय गय कार्यो की जाँच करती है। मन्त्रिपरिषद क सदस्य ससद म उपस्थित होते और कानून निमाण सम्बन्धी कार्यो मे भाग लेते हैं। लेकिन अमरीका की अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त पर आधारित है। इसके अन्तगत कायपालिका का प्रधान (राष्ट्रपति) अमरीकी काग्रेस स स्वतन्त्र रूप म अपना पद ग्रहण करता है। राष्ट्रपति या मन्त्रिपरिषद के सदस्य सामान्यतया कांग्रेस म उपस्थित नही हो सकते और कानून निमाण सम्बन्धी कार्यो मे भाग नहीं ले सकते।

इस प्रकार व्यवस्थापिका और कायपालिका के बीच घनिष्ट सहयोग ब्रिटिश शासन व्यवस्था का महत्त्वपूण तत्त्व है, तो व्यवस्थापिका और कायपालिका के बीच पृथकता अमरीकी शासन व्यवस्था का महत्त्वपूण तत्त्व। ब्रिटिश व्यवस्था के अन्तगत जिस राजनीतिक दल को लोकसदन मे बहुमत प्राप्त होता है, कायपालिका शक्ति पर भी उसी का अधिकार होता है। लेकिन अमरीकी व्यवस्था के अन्तगत ऐसा होना सम्भव है कि व्यवस्थापिका अर्थात् काग्रेस मे एक राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त हो लेकिन कायपालिका शक्ति पर दूसरे राजनीतिक दल का अधिकार हो। १६७२ मे अमरीका म जो चुनाव हुए उसम रिपब्लिकन नेता रिचड निक्सन राष्ट्रपति पद

निर्वाचित हुए, लेकिन अमरीकी कांग्रेस के दोनों ही सदनों में डेमाक्रेटिक दल को बहुमत प्राप्त है। ऐसी स्थिति में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में पारस्परिक तनाव विरोध होने की आशंका बनी रहती है।

(३) कार्यकाल सम्बन्धी अन्तर—ब्रिटिश व्यवस्था में कार्यपालिका अर्थात् मन्त्रिमण्डल का कार्यकाल निश्चित नहीं होता, वरन लोकसदन के विश्वास पर निर्भर करता है। लेकिन अमरीकी व्यवस्था में कार्यपालिका का कार्यकाल निश्चित होता है और महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से कार्यपालिका के प्रधान (राष्ट्रपति) को पदच्युत नहीं किया जा सकता। मन्त्रिपरिषद के सदस्य केवल राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी होते हैं, कांग्रेस के प्रति नहीं। इसी प्रकार ब्रिटेन में कार्यपालिका के द्वारा लोकसदन को समय के पूर्व विघटित किया जा सकता है लेकिन अमरीका राष्ट्रपति कांग्रेस के किसी भी सदन को समय के पूर्व विघटित नहीं कर सकता।

व्यवहार में इस स्थिति का परिणाम यह हुआ है कि ब्रिटिश लोकसदन आवश्यकतानुसार प्रधानमन्त्री पदधारी में परिवर्तन कर सकता है जैसा कि १९४० में चम्बरलेन के स्थान पर चर्चिल को प्रधानमन्त्री पद प्रदान करके किया गया। इसी प्रकार यदि प्रधानमन्त्री समझे कि लोकसदन राष्ट्रीय हितों का उचित रूप में प्रतिनिधित्व नहीं कर रहा है, तो वह सम्राट् को परामर्श देकर लोकसदन को विघटित करवा सकता है जैसा कि १९६६ और १९७० में प्रधानमन्त्री विल्सन के द्वारा किया गया। लेकिन अमरीका में कांग्रेस या राष्ट्रपति निश्चित अवधि के पूर्व एक दूसरे में परिवर्तन नहीं कर सकते, यह कार्य सम्बन्धित सत्ता का कार्यकाल समाप्त होने के बाद निर्वाचन द्वारा ही किया जा सकता है।

(४) मन्त्रियों की स्थिति से सम्बन्धित अन्तर—यद्यपि ब्रिटेन और अमरीका दोनों ही देशों की शासन व्यवस्था में मन्त्रिमण्डल का अस्तित्व होता है, लेकिन इन दोनों देशों के मन्त्रिमण्डलों की स्थिति में मूलभूत अन्तर है।

ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सामान्यतया मन्त्री पद उन्हीं व्यक्तियों को प्राप्त होता है जिन्हें संसदीय जीवन का पर्याप्त अनुभव हो या जीवन के अन्य किसी क्षेत्र में विशेष ख्याति प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त उन्हें लोकसदन के बहुमत दल में महत्त्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त होना चाहिए। लेकिन अमरीका में मन्त्री पद किन व्यक्तियों को प्रदान किया जाय, यह बात पूर्णतया राष्ट्रपति के विवेक पर निर्भर करती है और व्यवहार में अनेक बार ऐसे व्यक्ति मन्त्री पद पर नियुक्त किये जाते हैं, जिन्हें देश के सार्वजनिक जीवन में कोई स्थान प्राप्त नहीं होता। इसका कारण और परिणाम यह है कि ब्रिटिश व्यवस्था में कार्यपालिका की वास्तविक प्रधान कैबीनेट होती है, जबकि अमरीकी व्यवस्था में राष्ट्रपति। अमरीकी राष्ट्रपति 'सात मत विपक्ष में, एक मत पक्ष में, इसलिए पक्ष वालों की विजय हुई' (Naes Seven, Ayes one th Ayes have it) कहते हुए समस्त मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अपने निर्णय को लागू कर सकता है जैसा कि अब्राहम लिंकन ने किया था, लेकिन ब्रिटिश शासन-व्यवस्था में ऐसा उदाहरण नहीं

प्रधानमन्त्री चाहे वह कितना ही अधिक शक्तिशाली क्यों न हो मन्त्रिमण्डल के एक बड़े भाग के विरुद्ध अपने निर्णय को लागू करने का साहस नहीं कर सकता। अमरीका में राष्ट्रपति का 'व्यक्तिगत सहायक वर्ग' (Personal Staff) मन्त्रिमण्डल की तुलना में अनेक बार अधिक शक्तिशाली हो जाता है जैसे कि वर्तमान समय में डा० हेनरी कीसिंजर अमरीकी मन्त्रिमण्डल के किसी भी अन्य सदस्य की तुलना में अमरीका के परराष्ट्र सम्बन्धों के संचालन में अधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। लेकिन ब्रिटिश शासन व्यवस्था में प्रधानमन्त्री द्वारा केबीनेट के सदस्यों को शासन के महत्त्वपूर्ण निर्णयों से पृथक नहीं रखा जा सकता और यदि ऐसा किया जाय तो उसके परिणाम स्वयं प्रधानमन्त्री के लिए घातक हो सकते हैं। ब्रिटिश शासन व्यवस्था में मन्त्री पद सर्वोच्च राजनीतिक पुरस्कार है और मन्त्रिमण्डल राज्य तथा शासन का भाग्य-विधाता, लेकिन अमरीकी व्यवस्था में मन्त्रीपद एक सामान्य पद है और मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के सहायक मात्र हैं इससे अधिक कुछ नहीं।

अनेक बार इस प्रश्न पर विचार करने का प्रयत्न किया जाता है कि ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था या अमरीका की अध्यक्षीय व्यवस्था में कौनसी व्यवस्था श्रेष्ठ है, लेकिन इस प्रश्न का उत्तर सम्बन्धित देश की परिस्थितियों और समय पर ही निर्भर करता है। इस सम्बन्ध में रूसो ने ठीक ही कहा है कि "केवल यह बात नहीं है कि भिन्न भिन्न लोगों के लिए भिन्न भिन्न प्रकार की सरकारें अच्छी होती हैं, वरन् भिन्न-भिन्न समयों में एक ही लोगों को भिन्न भिन्न संविधानों की आवश्यकता पड़ती है।"[1]

व्यवहार के अन्तर्गत ब्रिटेन में संसदीय व्यवस्था पूर्ण सफलता के साथ कार्य कर रही है और समय समय पर अनुभव की जाने वाली साधारण कठिनाइयों के बावजूद अमरीका की अध्यक्षीय व्यवस्था के संचालन में कोई बाधा उपस्थित नहीं हुई है। इतना अवश्य ही कहा जा सकता है कि ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था अमरीकी व्यवस्था की तुलना में लोकतन्त्रीय धारणा और आदर्शों के अधिक अनुकूल है।

(११) **सीमित शासन का सिद्धान्त**—अमरीकी संविधान निर्माताओं ने स्वयं ब्रिटिश सम्राट जार्ज तृतीय के अत्याचारों को सहन किया था और वे चाहते थे कि आगे आने वाली पीढ़ियों को अमर्यादित शासन की बुराइयों से बचाने के लिए आवश्यक प्रयत्न किये जायँ। इसके अतिरिक्त वे लाक के व्यक्तिवादी दर्शन से प्रभावित थे और शासन को एक 'न्यास' (trust) मात्र मानते थे। जेम्स बेक के मतानुसार संविधान निर्माता सरकार की शक्ति से अत्यन्त सशंक थे। उनका विश्वास था कि, 'यह शक्ति जितनी अधिक होगी, उसके दुरुपयोग का उतना ही अधिक खतरा होगा।' अतः उनके द्वारा सीमित शासन के सिद्धान्त को अपनाया गया और इस दृष्टि से

1 But as countless events may change the relations of people not only may different governments be good for different peoples but also for the same people at different time

—Rousseau *Social Contract*, Vol III p 47

निर्वाचित हुए, लेकिन अमरीकी कांग्रेस के दोनों ही सदनों में डेमोक्रेटिक दल को बहुमत प्राप्त है। ऐसी स्थिति में व्यवस्थापिका और कार्यपालिका में पारस्परिक तनाव विरोध होने की आशंका बनी रहती है।

(३) कार्यकाल सम्बन्धी अन्तर—ब्रिटिश व्यवस्था में कार्यपालिका अर्थात् मन्त्रिमण्डल का कार्यकाल निश्चित नहीं होता, वरन लोकसदन के विश्वास पर निर्भर करता है। लेकिन अमरीकी व्यवस्था में कार्यपालिका का कार्यकाल निश्चित होता है और महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से कार्यपालिका के प्रधान (राष्ट्रपति) को पदच्युत नहीं किया जा सकता। मन्त्रिपरिषद के सदस्य केवल राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी होते हैं, कांग्रेस के प्रति नहीं। इसी प्रकार ब्रिटेन में कार्यपालिका के द्वारा लोकसदन को समय के पूर्व विघटित किया जा सकता है, लेकिन अमरीकी राष्ट्रपति कांग्रेस के किसी भी सदन को समय के पूर्व विघटित नहीं कर सकता।

व्यवहार में इस स्थिति का परिणाम यह हुआ है कि ब्रिटिश लोकसदन आवश्यकतानुसार प्रधानमन्त्री पदधारी में परिवर्तन कर सकता है जैसा कि १९४० में चैम्बरलेन के स्थान पर चर्चिल को प्रधानमन्त्री पद प्रदान करके किया गया। इसी प्रकार यदि प्रधानमन्त्री समझे कि लोकसदन राष्ट्रीय हितों का उचित रूप में प्रतिनिधित्व नहीं कर रहा है, तो वह सम्राट को परामर्श देकर लोकसदन को विघटित करवा सकता है जैसा कि १९६६ और १९७० में प्रधानमन्त्री विल्सन के द्वारा किया गया। लेकिन अमरीका में कांग्रेस या राष्ट्रपति निश्चित अवधि के पूर्व एक दूसरे में परिवर्तन नहीं कर सकते, यह कार्य सम्बन्धित संस्था का कार्यकाल समाप्त होने के बाद निर्वाचन द्वारा ही किया जा सकता है।

(४) मन्त्रियों की स्थिति से सम्बन्धित अन्तर—यद्यपि ब्रिटेन और अमरीका दोनों ही देशों की शासन व्यवस्था में मन्त्रिमण्डल का अस्तित्व होता है, लेकिन इन दोनों देशों के मन्त्रिमण्डलों की स्थिति में मूलभूत अन्तर है।

ब्रिटिश शासन व्यवस्था में सामान्यतया मन्त्री पद उन्हीं व्यक्तियों को प्राप्त होता है जिन्हें संसदीय जीवन का पर्याप्त अनुभव हो या जीवन के अन्य किसी क्षेत्र में विशेष ख्याति प्राप्त हो। इसके अतिरिक्त उन्हें लोकसदन के बहुमत दल में महत्त्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त होना चाहिए। लेकिन अमरीका में मन्त्री पद किन व्यक्तियों को प्रदान किया जाय, यह बात पूर्णतया राष्ट्रपति के विवेक पर निर्भर करता है और व्यवहार में अनेक बार ऐसे व्यक्ति मन्त्री पद पर नियुक्त किये जाते हैं, जिन्हें दल में सार्वजनिक जीवन में कोई स्थान प्राप्त नहीं होता। इसका कारण और परिणाम यह है कि ब्रिटिश व्यवस्था में कार्यपालिका की वास्तविक प्रधान केबीनेट होती है, लेकिन अमरीकी व्यवस्था में राष्ट्रपति। अमरीकी राष्ट्रपति 'सात मत विपक्ष में, एक मत पक्ष में, इसलिए पक्ष वालों की विजय हुई' (Naes Seven, Ayes one, the Ayes have it) कहते हुए समस्त मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अपने निर्णय को लागू कर सकता है जैसा कि अब्राहम लिंकन ने किया था, लेकिन ब्रिटिश शासन-व्यवस्था के अन्तर्गत ऐसा

प्रधानमन्त्री, चाहे वह कितना ही अधिक शक्तिशाली क्यों न हो, मन्त्रिमण्डल के एक बडे भाग के विरुद्ध अपने निणय को लागू करने का साहस नही कर सकता। अमरीका म राष्ट्रपति का 'व्यक्तिगत सहायक वग' (Personal Staff) मन्त्रिमण्डल की तुलना म अनेक बार अधिक शक्तिशाली हो जाता है, जसे कि वतमान समय म डॉ० हेनरी कीसिजर अमरीकी मन्त्रिमण्डल के किसी भी अन्य सदस्य की तुलना मे अमरीका के परराष्ट्र सम्बन्धो के सचालन म अधिक महत्त्वपूण भूमिका अदा कर रहे है। लेकिन ब्रिटिश शासन व्यवस्था मे प्रधानमन्त्री द्वारा केबीनेट के सदस्यो को शासन के महत्त्वपूण निणयो से पृथक नही रखा जा सकता और यदि एसा किया जाय तो उसके परिणाम स्वय प्रधानमन्त्री के लिए घातक हो सकते हैं। ब्रिटिश शासन व्यवस्था म मन्त्री पद सर्वोच्च राजनीतिक पुरस्कार है और मन्त्रिमण्डल राज्य तथा शासन का भाग्य-विधाता, लेकिन अमरीकी व्यवस्था मे मन्त्रीपद एक सामान्य पद है और मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के सहायक मात्र है इससे अधिक कुछ नही।

अनेक बार इस प्रश्न पर विचार करने का प्रयत्न किया जाता है कि ब्रिटेन की ससदीय व्यवस्था या अमरीका की अध्यक्षीय व्यवस्था म कौनसी व्यवस्था श्रेष्ठ है, लेकिन इस प्रश्न का उत्तर सम्बन्धित देश की परिस्थितियो और समय पर ही निभर करता है। इस सम्बन्ध म रूसो ने ठीक ही कहा है कि "केवल यह बात नहीं है कि भिन्न भिन्न लोगो के लिए भिन्न भिन्न प्रकार की सरकारें अच्छी होती हैं, वरन् भिन्न-भिन्न समयो म एक ही लोगो को भिन्न भिन्न सविधानो की आवश्यकता पडती है।"[1]

व्यवहार के अन्तगत ब्रिटेन म ससदीय व्यवस्था पूण सफलता के साथ काय कर रही है और समय समय पर अनुभव की जाने वाली साधारण कठिनाइयो के बावजूद अमरीका की अध्यक्षीय व्यवस्था के सचालन म कोई बाधा उपस्थित नही हुई है। इतना अवश्य ही कहा जा सकता है कि ब्रिटेन की ससदीय व्यवस्था अमरीकी व्यवस्था की तुलना म लोकतन्त्रीय धारणा और आदर्शों के अधिक अनुकूल है।

(११) सीमित शासन का सिद्धान्त—अमरीकी संविधान निर्माताओ ने स्वय ब्रिटिश सम्राट जाज तृतीय के अत्याचारो को सहन किया था और वे चाहते थे कि आगे आने वाली पीढियो को अमर्यादित शासन की बुराइयो से बचाने के लिए आवश्यक प्रयत्न किये जायें। इसके अतिरिक्त वे लाक के व्यक्तिवादी दशन से प्रभावित थे और शासन को एक 'न्यास' (trust) मात्र मानते थे। जेम्स बेक के मतानुसार सविधान निर्माता सरकार की शक्ति से अत्यन्त सशक थे। उनका विश्वास था कि, 'यह शक्ति जितनी अधिक होगी, उसके दुरुपयोग का उतना ही अधिक खतरा होगा।' अत उनके द्वारा सीमित शासन के सिद्धान्त को अपनाया गया और इस दृष्टि से

1 'But as countless events may change the relations of people not only may different governments be good for different peoples but also for the same people at different time

—Rousseau *Social Contract*, Vol III p 47

उनके द्वारा अनेक उपाय किये गये हैं, यथा संविधान की सर्वोच्चता, अधिकारपत्र की व्यवस्था, शक्ति पृथक्करण और न्यायपालिका की स्वतन्त्र सत्ता आदि।

(१२) मौलिक अधिकारों की व्यवस्था—शासन को सीमित रखने और नागरिक स्वतन्त्रताओं की रक्षा के उपाय के रूप में अमरीकी संविधान में मौलिक अधिकारों को अपनाया गया है। फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित संविधान के मूल प्रलेख में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था नहीं की गयी थी, लेकिन संविधान के अनुसमर्थन हेतु विविध पक्षों के बीच जो परस्पर समझौता हुआ, उस समझौते के अंग के रूप में संविधान में १७९१ में प्रथम दस संशोधन करते हुए मौलिक अधिकारों को अपनाया गया। संविधान का १३वां, १४वां और १५वां संशोधन भी नागरिक अधिकारों से ही सम्बन्धित है। नागरिक अधिकारों का लेखबद्ध रूप में उल्लेख शासन कला को अमरीकी संविधान की एक मुख्य देन है, जिसका अनुकरण आयरलैण्ड, जापान, भारत और अन्य अनेक देशों द्वारा किया गया है।

संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदत्त ये अधिकार इस प्रकार हैं

संविधान के पहले संशोधन द्वारा धर्म की स्वतन्त्रता, भाषण और प्रेस की स्वतन्त्रता तथा आवेदन पत्र देने का अधिकार प्रदान किया गया है।

दूसरे संशोधन द्वारा नागरिकों को शस्त्र रखने और धारण करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

तीसरे संशोधन में कहा गया है कि शान्तिकाल में कोई भी सैनिक किसी मकान में उसके स्वामी की अनुमति के बिना नहीं रखा जा सकता और युद्ध काल में राज्य यह कार्य विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के आधार पर ही कर सकता है।

चौथे संशोधन द्वारा व्यक्तियों को स्वयं की, अपने घर और सामान की अनुचित तलाशी और जब्ती से स्वतन्त्रता प्रदान की गयी है।

पांचवें संशोधन से आठवें संशोधन तक व्यक्ति स्वातन्त्र्य, निष्पक्ष न्याय और सम्पत्ति के अधिकार की व्यवस्था की गयी है। पांचवें संशोधन में कहा गया है कि उचित कानूनी प्रक्रिया का अनुसरण किये बिना किसी के जीवन अथवा सम्पत्ति का अपहरण नहीं किया जा सकता। बिना मुआवजा दिये राज्य किसी की सम्पत्ति को हस्तगत नहीं कर सकता। एक अपराध के लिए व्यक्ति को एक ही बार दण्डित किया जा सकता है और व्यक्ति को स्वयं के विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

छठे संशोधन में कहा गया है कि सभी फौजदारी अभियोगों में अभियुक्त को तुरन्त और सार्वजनिक न्यायिक कार्यवाही का अधिकार प्राप्त होगा। उसे निष्पक्ष जूरी की मांग करने तथा वकील की सहायता प्राप्त करने का भी अधिकार होगा।

सातवें संशोधन के अनुसार बीस डालर से अधिक मूल्य के दीवानी विवादों में व्यक्तियों को जूरी की माँग करने का अधिकार प्राप्त है।

आठवें संशोधन में कहा गया है कि व्यक्तियों को अत्यधिक जमानत, अत्यधिक जुर्माने या अत्यन्त कठोर दण्ड से सुरक्षा प्राप्त होगी।

भारतीय नागरिकों को केवल वे ही अधिकार प्राप्त हैं जिनका उल्लेख संविधान में किया गया है, किन्तु अमरीकी नागरिकों के सम्बन्ध में स्थिति भिन्न है। इस सम्बन्ध में संविधान के नवें संशोधन में कहा गया है कि संविधान में कुछ अधिकारों के उल्लेख का आशय यह नहीं लिया जायगा कि नागरिकों को वर्तमान समय में प्राप्त अन्य अधिकारों से वंचित कर दिया गया है।

दसवें संशोधन द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि संविधान में जो शक्तियाँ संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार को नहीं दी गयी हैं और राज्यों को मना नहीं की गयी हैं, वे राज्यों या जनता के लिए सुरक्षित हैं।

१३वें संशोधन द्वारा दासता का निषेध किया गया है, १४वें संशोधन द्वारा सभी व्यक्तियों को कानून का समान संरक्षण प्रदान किया गया है और १५वें संशोधन में कहा गया है कि राज्यों द्वारा जाति व रंग भेद के आधार पर अथवा प्राचीन दासत्व के कारण व्यक्ति को नागरिक अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता और न इस आधार पर किसी व्यक्ति को मताधिकार से ही वंचित किया जा सकता है।

उपर्युक्त वर्णन से यह नितान्त स्पष्ट है कि अमरीकी संविधान में किये गये संशोधनों द्वारा नागरिकों को वे सभी अधिकार प्रदान कर दिये गये हैं, जिनकी आशा एक सभ्य और श्रेष्ठ राज्य से की जा सकती है।

(१३) शक्ति विभाजन और नियन्त्रण तथा सन्तुलन के सिद्धान्त पर आधारित—अमरीकी संविधान के निर्माता अमरीका में एक सीमित शासन की स्थापना करना चाहते थे और इस बात के लिए प्रयत्नशील थे कि शासन अत्यधिक शक्तिशाली होकर नागरिक स्वतन्त्रताओं को आघात न पहुँचा सके। इस हेतु उनके द्वारा न केवल संघीय शासन व्यवस्था को अपनाया गया, संविधान में प्रथम दस संशोधन करते हुए मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गयी, वरन् अपने संविधान को शक्ति विभाजन पर आधारित किया गया।

यह विचार कि शासन के तीन प्रमुख कार्य (कानून निर्माण, प्रशासन और न्याय) तीन अलग-अलग सत्ताओं द्वारा किये जाने चाहिए, राजनीतिक दर्शन में अरस्तू के समय से चला आ रहा है। लेकिन इसे एक विधिवत् धारणा का रूप प्रदान करने और लोकप्रिय बनाने का कार्य लाक, माण्टेस्क्यू और ब्लैकस्टोन के द्वारा किया गया, जिनमें सर्वाधिक प्रमुख रूप में माण्टेस्क्यू का नाम ही इस धारणा के साथ जुड़ा हुआ है। संविधान निर्माता माण्टेस्क्यू के सिद्धान्त से प्रभावित थे और इसे मानवीय स्वतन्त्रता का रक्षक मानते थे, इसका प्रमाण यह है कि क्रान्तिकाल में

निर्मित सभी संविधानों में इसका विस्तार से उल्लेख किया गया और इसे अपनाने की घोषणा की गयी है। इसके बाद 'परिसंघ के विधान' (Articles of Confederation) में यद्यपि शक्ति विभाजन के सिद्धान्त का उल्लेख नहीं किया गया, लेकिन परिसंघ का विधान तो अन्य अनेक बातों में भी अपूर्ण था।

१७८७ में फिलाडेल्फिया सम्मेलन के द्वारा जब नवीन संविधान के निर्माण का कार्य प्रारम्भ किया गया, तो संविधान निर्माताओं ने शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को संविधान का आधारभूत सिद्धान्त बनाने का निश्चय किया। संविधान सभा का एक प्रमुख सदस्य मेडीसन बार बार कहा करता था कि 'हम निरन्तर माण्टेस्क्यू की अदृश्य छाया से प्रेरणा ग्रहण करते रहे हैं।'[1] डॉ० फाइनर ने तो लिखा है कि, "अमरीका का संविधान जान बूझकर एवं प्रयास करके शक्तियों के पृथक्करण पर एक विस्तृत निबन्ध बनाया गया था। यह संविधान इस सिद्धान्त पर चलने वाला विश्व में सर्वाधिक प्रसिद्ध राज्य शासन है।"

संविधान में शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को अपनाने की कोई घोषणा नहीं की गयी है, लेकिन संविधान के प्रथम तीन अनुच्छेदों से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह संविधान शक्ति विभाजन के सिद्धान्त पर आधारित है। संविधान की पहली धारा में व्यवस्था की गयी है कि 'संविधान में प्रदान की गयी सब व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियाँ एक कांग्रेस में निहित होंगी। दूसरी धारा में कहा गया है कि 'कार्यपालिका शक्ति संयुक्त राज्य अमरीका के एक राष्ट्रपति में निहित होगी।' इसी प्रकार तीसरी धारा में यह व्यवस्था की गयी है कि "न्याय सम्बन्धी शक्ति एक सर्वोच्च न्यायालय तथा उन नीचे के न्यायालयों में निहित होगी, जिन्हें कांग्रेस समय समय पर प्रतिष्ठित व स्थापित करेगी।'

संविधान के द्वारा न केवल शासन के तीन पृथक् पृथक् अंगों की व्यवस्था की गयी है, वरन् वह इन अंगों को एक दूसरे से बहुत अधिक स्वतन्त्रता भी प्रदान करता है। अमरीकी राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित होता है और अपनी शक्ति तथा कार्यकाल के सम्बन्ध में कांग्रेस से स्वतन्त्र होता है। कांग्रेस केवल महाभियोग के आधार पर ही राष्ट्रपति को पदच्युत कर सकती है जो एक अपवाद स्वरूप प्रक्रिया है और जिसे व्यवहार में अब तक कभी भी सफलतापूर्वक नहीं अपनाया जा सका है। इसी प्रकार राष्ट्रपति भी कांग्रेस के किसी सदन को समय के पूर्व भंग नहीं कर सकता। कांग्रेस सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या और उनके

1 The oracle who is always consulted and cited on the subject
—*The Federalist* No 47

The American Constitution was consciously and elaborately ... an essay in the separation of powers and is today the most im... tant policy in the world which operates upon this princip...
—Finer *The Theory and Practice of Modern Government* ...

निश्चित कर सकती है और न्यायाधीशों की नियुक्ति सीनेट की सहमति से राष्ट्रपति द्वारा की जाती है, किन्तु एक बार नियुक्त होने के बाद उन पर कांग्रेस या राष्ट्रपति का कोई नियन्त्रण नहीं होता और महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से उन्हें पदच्युत नहीं किया जा सकता। शक्ति विभाजन के सिद्धान्त के ही अनुरूप अमरीकी शासन के प्रत्येक अंग का कार्यकाल भी भिन्न भिन्न है। राष्ट्रपति ४ वर्ष, प्रतिनिधि सभा के सदस्य २ वर्ष और सीनेट के सदस्य ६ वर्ष के लिए निर्वाचित होते हैं और न्यायाधीश जीवन पर्यन्त अपने पद पर कार्य करते रहते हैं।

अमरीकी न्यायपालिका भी शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को अमरीकी संविधान का एक प्रमुख आधार मानती है और इसकी रक्षा के लिए सदैव प्रयत्नशील रही है। किलबोर्न बनाम थाम्पसन के विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णय में कहा था कि 'अमरीका के लिखित संवैधानिक कानून का यह मुख्य गुण है कि इसके अनुसार राज्यों अथवा राष्ट्र से सम्बन्धित जो शक्तियाँ सरकार को दी गई हैं वे तीन विशाल भागों में बँटी हुई हैं कार्यपालिका, विधान मण्डल और न्यायपालिका सरकार के इन तीनों विभागों से सम्बन्धित कार्य सार्वजनिक राज्य कर्मचारियों के तीन अलग वर्गों द्वारा किये जायेंगे तथा इस प्रणाली की पूर्णता के लिए यह आवश्यक है कि इन तीनों विभागों के कार्यक्षेत्रों को सुनिश्चित एवं स्पष्ट रूप से पृथक पृथक रखा जाए।"

नियन्त्रण और सन्तुलन (Checks and Balances)—संविधान निर्माताओं ने शासन को मर्यादित रखने और व्यक्ति स्वातन्त्र्य की रक्षा हेतु शक्ति विभाजन सिद्धान्त को अपनाया, लेकिन इसके साथ ही वे शक्ति विभाजन सिद्धान्त की सीमाओं से भी परिचित थे। शक्ति विभाजन के सबसे प्रमुख समर्थक मेडीसन ने अपने पत्र *Federalist* में लिखा था कि 'शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त का आशय यह नहीं है कि व्यवस्थापिका और न्यायपालिका का एक दूसरे से कोई सम्बन्ध न रहे।" उन्होंने आगे लिखा कि "जब तक ये तीनों अंग एक दूसरे से सम्बद्ध न किये जायेंगे और इस तरह नहीं मिला दिया जायेंगे कि एक का नियन्त्रण दूसरे पर स्थापित हो जाए, तब तक स्वतन्त्र सरकार की स्थापना कदापि नहीं हो सकती है।"

इसके अतिरिक्त संविधान निर्माताओं द्वारा यह भी सोचा गया कि शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को पूरी पूरी सीमा तक अपनाने पर शासन का प्रत्येक अंग अपने निश्चित क्षेत्र में असीमित शक्तियाँ प्राप्त कर शक्ति का दुरुपयोग कर सकता है। अतः उनके द्वारा यह निश्चय किया गया कि तीनों अंगों की शक्तियाँ अलग-अलग करने के साथ साथ ऐसी व्यवस्था कर दी जाय कि एक अंग दूसरे अंग को नियन्त्रित करता रहे और शक्ति सन्तुलन स्थापित कर दिया जाय कि कोई भी अंग अधिक शक्तिशाली न हो सके। इस प्रकार एलेक्जेण्डर हेमिल्टन के शब्दों में 'शक्ति को प्रतिद्वन्द्वी शक्ति' (Power as the rival of Power) का निर्माण किया गया और शक्ति विभाजन सिद्धान्त के सहायक रूप में एवं उसे व्यावहारिक रूप

प्रदान करने हेतु नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त को अपनाया गया है। के शब्दों में "नियन्त्रण और सन्तुलन की व्यवस्था सोच समझ कर की गयी है, शासन की कोई शाखा पागलपन न कर बैठे।"[1]

नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त को अपनाने का रूप यह है कि श तीनों अंगों (व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका) में से प्रत्येक अ अन्य दो अंगों के द्वारा नियन्त्रण रखते हुए ऐसा शक्ति सन्तुलन स्थापित किया कि कोई भी अंग बहुत अधिक शक्तिशाली न हो जाय। नियन्त्रण और सन्तु इस सिद्धान्त को अमरीकी कांग्रेस और राष्ट्रपति के पारस्परिक सम्बन्धों में प्रमुखता के साथ अपनाया गया है और न्यायपालिका के सम्बन्ध में स्वा रूप से अपेक्षाकृत सीमित रूप में। कानून निर्माण की शक्ति कांग्रेस को प्राप्त है, कांग्रेस की इस शक्ति पर राष्ट्रपति और सर्वोच्च न्यायालय का प्रतिबन्ध है। द्वारा पारित विधेयकों पर राष्ट्रपति को 'विलम्बकारी निषेधाधिकार' (Suspe Veto) और 'जेबी निषेधाधिकार' (Pocket Veto) प्राप्त होता है। व्यव अन्तर्गत राष्ट्रपति के द्वारा कांग्रेस को सन्देश भेजकर, राष्ट्र के नाम अपील प्र करके, कांग्रेस सदस्यों पर विभिन्न अनुग्रह करके एक विशेष राजनीतिक दल के के रूप में भी कानून निर्माण के कार्य को प्रभावित किया जा सकता है। कां कानून निर्माण की शक्ति सर्वोच्च न्यायालय से भी प्रतिबन्धित होती है। सं की व्याख्या करते हुए सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा ऐसे कानूनों को अवैधानिक किया जा सकता है, जो उनके विचार में संविधान के प्रतिकूल हैं। इस कांग्रेस को कानून निर्माण की शक्ति प्राप्त है लेकिन इस सम्बन्ध में उसके मनमानी नहीं की जा सकती है।

इसी प्रकार राष्ट्रपति देश की कार्यपालिका का प्रधान है, लेकिन प्रशासनिक क्षेत्र में मनमानी करते हुए तानाशाह नहीं बन सकता। कांग्रेस अनेक रूपों में राष्ट्रपति की शक्ति पर अंकुश रखा जाता है। सर्वप्रथम, वित्त पर कांग्रेस का अधिकार है और कांग्रेस राष्ट्रपति द्वारा चाहे गये स्वीकृति देने से इन्कार कर राष्ट्रपति की शक्ति पर अंकुश लगा सकता है। में अनेक बार कांग्रेस ने अपनी इस शक्ति का प्रभावशाली रूप में प्रयोग कि इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति देश की सेना का अध्यक्ष है और वह परराष्ट्र का संचालन करता है, लेकिन कांग्रेस राष्ट्रपति की इस शक्ति पर दो नियन्त्रण रखती है। प्रथमतः संविधान के अनुसार यह आवश्यक है कि द्वारा की गयी युद्ध की घोषणा की पुष्टि कांग्रेस करे। इसी प्रकार राष्ट्र

1 The constitution was carefully designed to provide a syste checks and balances to prevent any branch of the gov running amuck.

—D C Coyle *The United States Political System*

किये गये समझौता और संधियों की पुष्टि सीनेट के द्वारा अपने ⅔ बहुमत से की जाना आवश्यक है, इस पुष्टि के अभाव में संधियाँ और समझौते व्यर्थ हो जाते हैं। यह सर्वविदित है कि कांग्रेस द्वारा पुष्टि प्रदान न किये जाने के कारण ही राष्ट्रपति विल्सन अमरीका को राष्ट्रसंघ का सदस्य नहीं बना सके थे। इसी प्रकार राष्ट्रपति को बड़े बड़े पदों पर नियुक्तियाँ करने का अधिकार प्राप्त है, लेकिन राष्ट्रपति अपनी इस शक्ति का दुरुपयोग न कर सके, इसके लिए यह व्यवस्था की गयी है कि नियुक्तियों पर सीनेट की स्वीकृति आवश्यक है। कांग्रेस के द्वारा राष्ट्रपति पर महाभियोग भी लगाया जा सकता है। राष्ट्रपति की शक्ति को न्यायपालिका द्वारा भी नियन्त्रित किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय राष्ट्रपति के कार्यों का सर्वेक्षण कर सकता है और यदि वे कार्य संविधान की व्यवस्था के प्रतिकूल हों, तो उन्हें अवैध घोषित कर सकता है।

न्यायपालिका पर भी व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है। कांग्रेस के द्वारा न्यायाधीशों की संख्या और उनका वेतन निश्चित किया जाता है और राष्ट्रपति सीनेट की सहमति से न्यायाधीशों को नियुक्त करता है। कांग्रेस के द्वारा संघीय न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार सीमित किया जा सकता है और कांग्रेस महाभियोग के आधार पर न्यायाधीशों को पदच्युत कर सकती है।

इस प्रकार शासन के तीनों अंग एक दूसरे का नियन्त्रण करते हुए शक्ति सन्तुलन स्थापित करते हैं। इसी बात को लक्ष्य करते हुए सन् १८१४ में **जॉन एडम्स ने अपने एक पत्र में जॉन टेलर को लिखा कि आरम्भ से अन्त तक अमरीकी संविधान में एक अंग दूसरे अंग पर प्रतिबन्ध रूप है। आग और रे लिखते हैं कि 'अमरीकी शासन का कोई लक्षण इतना प्रमुख नहीं है, जितना कि नियन्त्रण और सन्तुलन की धारणा के साथ अपनाया गया शक्ति विभाजन सिद्धान्त।'**[1]

नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त की आलोचना—अमरीकी शासन व्यवस्था नियन्त्रण और सन्तुलन की प्रणाली पर आधारित है, जहाँ इसका यह लाभदायक पक्ष है कि शासन का कोई भी अंग बहुत अधिक शक्तिशाली होकर नागरिक स्वतन्त्रताओं के लिए घातक नहीं हो पाता, वहाँ इसका एक अन्य पक्ष भी है जिसके कारण इसकी आलोचना की जाती है

प्रथमतः शक्ति विभाजन और नियन्त्रण तथा सन्तुलन के सिद्धान्त के कारण अमरीकी शासन में एकता का अभाव है। इंगलैण्ड की शासन व्यवस्था के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री को पूरे शासन के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, परन्तु अमरीका में किसी एक अंग को पूरे शासन के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। एक

[1] 'No feature of American government is more characteristic than this separation of powers combined with the precautionary checks and balances'

—Ogg & Ray, *Essentials of American Government*, p 31

विशेष समय पर उत्पन्न कुव्यवस्था के लिए राष्ट्रपति और काग्रेस एक दूसरे पर उत्तरदायित्व डालने का प्रयत्न कर सकते हैं।

द्वितीयत, नियन्त्रण और सन्तुलन के कारण अनेक बार राष्ट्रपति और काग्रेस के बीच पारस्परिक विरोध की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। यह स्थिति विशेष तौर पर उस समय देखने म आती है जबकि राष्ट्रपति एक राजनीतिक दल का हो और काग्रेस के दोनो सदनो मे दूसरे राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त हो। १९७३ म इसी प्रकार की स्थिति है। ऐसी स्थिति म पारस्परिक विरोध और विभाजित उत्तरदायित्व की स्थिति उत्पन्न होती है कार्य की गति धीमी पड जाती है और नेतृत्व को निराशा होती है। राष्ट्रपति और काग्रेस के बीच अनेक बार उत्पन्न होने वाले पारस्परिक विरोध को देखते हुए समय समय पर अमरीका म इस बात की माग की जाती रही है कि शक्ति की एकता और केबीनट मे उत्तरदायित्व के केन्द्रीयकरण वाली ब्रिटिश पद्धति को अपना लिया जाना चाहिए।

शक्ति विभाजन और नियन्त्रण तथा सन्तुलन सिद्धान्त का प्रभाव कम होना— एक अन्य बात यह है कि वतमान समय मे अमरीकी शासन व्यवस्था के अन्तर्गत शक्ति पृथक्करण और नियन्त्रण तथा सन्तुलन के सिद्धान्त का प्रभाव पर्याप्त सीमा तक कम हो गया है। अमरीकी शासकों द्वारा व्यवस्थापिका और कार्यपालिका म परस्पर नियन्त्रण के स्थान पर उनम परस्पर सद्भाव का औचित्य और उसकी आवश्यकता अनुभव की गयी है और वतमान समय मे 'सीनेट का सद्भाव' (Senatorial Courtesy) जसी परम्पराओं और राजनीतिक दलो जसी व्यवस्था ने शासन के इन दोनो अगो के बीच सहयोग और सद्भाव उत्पन्न करने का काय किया है। सकटकाल मे तो नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त का पालन होने की अपेक्षा उसकी अवहेलना ही अधिक देखी गयी है और राष्ट्रपति के हाथो मे बहुत कुछ सीमा तक शक्तियो का केन्द्रीयकरण हो जाता है। इस सम्बन्ध म मुनरो ठीक ही लिखते हैं कि "परम्पराओ द्वारा यह नियन्त्रण और सन्तुलन की प्रणाली 'पारस्परिक उत्तरदायित्व' मे बदल गयी है। साथ ही यद्यपि शक्ति विभाजन का सिद्धान्त अमरीकी सवधानिक सिद्धान्त के रूप मे चल रहा है और अमरीकी सरकार व्यवहार मे उसे सामान्यत मान्यता देती है, परन्तु जब सकटकाल आता है तो इसे शीघ्र और समय कार्यवाही के माग मे नहीं आने दिया जाता।"[1]

(१४) दोहरी नागरिकता—सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान म सघात्मक व्यवस्था को अपनाने के साथ-साथ दोहरी नागरिकता को अपनाया गया है। वहाँ प्रत्येक नागरिक दोहरी नागरिकता प्राप्त करता है प्रथम, सयुक्त राज्य अमरीका की नागरिकता और द्वितीय उस राज्य की नागरिकता, जिसम वह निवास करता है। उदाहरण के लिए न्यूयाक म रहने वाला नागरिक न्यूयाक का नागरिक है और सयुक्त

1 W B Munro *The Government of the United States*, p 60

राज्य अमरीका का भी। संयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय ने १८५७ के 'ड्रेड स्काट' नामक विवाद में निर्णय देते हुए कहा था कि प्रत्येक नागरिक को दोहरी नागरिकता प्राप्त है क्योंकि संघ बनने के पूर्व सभी राज्यों को नागरिकता प्रदान करने का अधिकार था और उन्होंने संघ को यह अधिकार नहीं सौंपा है। इस सम्बन्ध में भारत की स्थिति भिन्न है। भारत में संघात्मक व्यवस्था को अपनाते हुए भी दोहरी नागरिकता को नहीं, वरन् एकहरी नागरिकता को अपनाया गया है।

(१५) **व्यक्तिवादी दर्शन पर आधारित संविधान**—जिस प्रकार सोवियत रूस का संविधान और राज्य साम्यवादी दर्शन पर आधारित है, उसी प्रकार संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान को व्यक्तिवादी दर्शन पर आधारित सबसे प्रमुख संविधान और राज्य कहा जा सकता है। फिलाडेल्फिया सम्मेलन के सदस्य लॉक के व्यक्तिवादी दर्शन से अत्यधिक प्रभावित थे और सम्पत्ति के अधिकार को जीवन तथा स्वतन्त्रता के समान ही पवित्र और अनुल्लंघनीय मानते थे। व्यक्तिवादी विचारधारा के प्रभाव के कारण अमरीकी संविधान में **'स्वतन्त्र आर्थिक नीति'** (doctrine of laissez faire) को अपनाया गया और संविधान में यह उद्घोषणा की गयी कि कानून की उचित प्रक्रिया के बिना किसी भी व्यक्ति को उसकी सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता और यदि सार्वजनिक हित के लिए भी सम्पत्ति को हस्तगत किया जाय, तो उचित मुआवजा दिया जायगा। संविधान का निर्माण हो चुकने के बाद भी व्यक्तिवादी दर्शन का प्रभाव देखा जा सकता है, क्योंकि संविधान के चौदहवें संशोधन के द्वारा निगम, श्रम, व्यापार आदि की चर्चा कर सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार को अधिक व्यापक बनाया गया और आर्थिक व्यक्तिवाद की नींव सुदृढ़ की गयी। अमरीकी संविधान के इसी लक्षण के कारण ब्रोगन और चार्ल्स बियर्ड जैसे लेखकों के द्वारा इसे **'अमीरों की आवश्यकताओं की परिपूर्ति करने वाला और दरिद्रों की आवश्यकता पूर्ति में बाधा उपस्थित करने वाला संविधान'** बताया गया है, लेकिन वास्तव में यह बात अधिक से अधिक आंशिक रूप में ही सत्य है। अमरीकी नागरिकों का वैयक्तिक सम्पत्ति अधिकार पूर्णतया अमर्यादित नहीं है और सार्वजनिक हित में इसे सीमित किया जा सकता है। फ्रेंकलिन रूजवेल्ट जैसे राष्ट्रपतियों के द्वारा तो **'नव निर्माण आर्थिक नीति'** (New Deal Economic Policy) के आधार पर अमरीकी शासन को प्रगतिशील रूप प्रदान करने का सफल प्रयत्न किया गया।

(१६) **संविधान में कुछ महत्त्वपूर्ण बातों का उल्लेख नहीं**—भारतीय संविधान निर्माताओं द्वारा जहाँ अपने संविधान को अधिकाधिक व्यापक बनाने का प्रयत्न किया गया है, वहाँ अमरीकी संविधान के निर्माताओं द्वारा अनेक आवश्यक और महत्त्वपूर्ण बातों का भी संविधान में उल्लेख नहीं किया गया है। उदाहरण के लिए, संविधान में कर, निगम, शिक्षा, लोक सेवा, बजट, कृषि, श्रम, उद्योग और राजनीतिक दल आदि के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा गया है। संविधान में प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष की शक्तियों का उल्लेख नहीं किया है और न ही संघीय सरकार तथा

इकाइयों की सरकारों के बीच शक्ति विभाजन उतना स्पष्ट है, जितना कि अपेक्षित होता है। मुनरो का मत है कि 'संयुक्त राज्य अमरीका की विशिष्टता इसमें दत्त बातों के कारण ही नहीं, वरन् इसलिए भी है कि इसमें कई महत्वपूर्ण बातें छोड़ दी गयी हैं।' संविधान निर्माताओं द्वारा ऐसा भूलवश नहीं किया गया है, वरन् उनका विचार था कि भविष्य में उत्पन्न होने वाली सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का सामना करने के लिए संविधान को स्वतन्त्र छोड़ दिया जाना चाहिए, जिससे समय की मांगों को पूरा करने के लिए उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके।

अमरीकी संविधान की ये विशेषताएँ यद्यपि राजनीतिक दर्शन की दृष्टि से नवीन नहीं हैं, लेकिन फिर भी इन्हें इस दृष्टि से मौलिक कहा जा सकता है कि लिखित संविधान, सीमित शासन के सिद्धान्त, अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था, संघात्मक शासन व्यवस्था और मौलिक अधिकार जैसी बातों को सर्वप्रथम अमरीका में ही कार्यरूप प्रदान किया गया। संवैधानिक दर्शन और राज्य सम्बन्धी धारणा को अमरीकी संविधान की ये महत्वपूर्ण देन हैं।

प्रश्न

१ संयुक्त राज्य अमरीका की शासन व्यवस्था में शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त के स्वरूप और व्यवहार की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए।
(आगरा, १९६५, ६६, ७२)

२ संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान के विशिष्ट लक्षण बतलाइए और स्पष्ट कीजिए कि उसमें संशोधन किस प्रकार हो सकता है?
(आगरा, १९६७, गोरखपुर, १९६८)

३ संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान में 'नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त' की व्याख्या कीजिए।
(कानपुर, १९६९)

४ शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त समझाइए। अमरीका में इस सिद्धान्त की विवेचना कीजिए।
(विक्रम, १९६३, ६६, मेरठ, १९६८, कानपुर, १९७०, विक्रम, १९६९, जीवाजी, १९७१)

५ संसदात्मक तथा अध्यक्षात्मक शासन प्रणालियों का भेद इंगलैण्ड तथा अमरीका के संविधानों को दृष्टि में रखते हुए स्पष्टतया समझाइए।
(मेरठ, १९६८, राजस्थान, १९६६, विक्रम, १९७३)

६ शक्ति पृथक्करण का क्या अर्थ है? अमरीका तथा ब्रिटेन में इसे कहाँ तक अपनाया गया है?
(राजस्थान १९७०)

७ 'संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान में शक्ति पृथक्करण की अपेक्षा नियन्त्रण और सन्तुलन की प्रणाली का अधिक समावेश है।' विवेचना कीजिए।
(राजस्थान, १९६५, ६७, विक्रम, १९६५, ६७, ७१)

८ 'सयुक्त राज्य अमरीका का सविधान शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त पर आधारित है।' इस कथन की व्याख्या कीजिए। (गोरखपुर, १९६६)

९ सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए। (गोरखपुर, १९६६, विक्रम, १९६५)

१० अमरीकी सविधान की विशेषताएँ समझाइए। (विक्रम, १९७२)

११ 'अमरीका के सविधान मे शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त और नियन्त्रण तथा सन्तुलन सिद्धान्त दोनो का समावेश है।' व्याख्या कीजिए। (जीवाजी, १९६७)

१२ अमरीका के सविधान मे 'नियन्त्रण और सन्तुलन का सिद्धान्त' किस सीमा तक पाया जाता है? (जीवाजी, १९७२)

3

अमरीका की संघीय व्यवस्था

(FEDERAL SYSTEM OF AMERICA)

"अमरीकी संविधान में कहीं पर भी 'संघीय' (Federal) या संघ (Federation) शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है, लेकिन फिर भी इसे संघीय संविधान कहा जाता है और वर्तमान समय में सभी व्यक्ति संयुक्त राज्य अमरीका को संघीय शासन का एक आदर्श उदाहरण मानते हैं।"[1]

—ह्वीयर

संघीय शासन

संघीय शासन, शासन व्यवस्था के अन्तर्गत एक नवीन देन है। 'संघ' शब्द का अंग्रेजी पर्यायवाची 'फेडरेशन' (Federation) लैटिन भाषा के शब्द 'फोएडस' (Foedus) से निकला है जिसका अर्थ है संधि या समझौता। अतः शब्द व्युत्पत्ति के दृष्टिकोण से समझौते द्वारा निर्मित राज्य को संघ राज्य कहा जा सकता है। संवैधानिक दृष्टिकोण से संघात्मक शासन का तात्पर्य एक ऐसे शासन से होता है जिसमें संविधान द्वारा ही केन्द्रीय सरकार और इकाइयों की सरकारों के बीच शक्ति विभाजन कर दिया जाता है और ऐसा प्रबन्ध कर दिया जाता है कि इन दोनों पक्षों में से कोई एक अकेला इस शक्ति विभाजन में परिवर्तन न कर सके। संघ राज्य की परिभाषा करते हुए डायसी लिखते हैं कि 'एक संघात्मक राज्य, एक ऐसे राजनीतिक उपाय के अतिरिक्त कुछ नहीं है जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय एकता तथा राज्य अधिकारों में मेल स्थापित करना है।"

1 The words federal or federation occur nowhere in the American constitution None the less it has always been called the Federal Constitution and now-a days everybody regards the United States as an example of federal government

—K C Wheare, *Federal Government* p 1

डा० गानर अधिक स्पष्टता के साथ संघ की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि "संघ एक ऐसी प्रणाली है जिसमे केंद्रीय तथा स्थानीय सरकारें एक ही प्रभुत्व शक्ति के आधीन होती हैं। ये सरकारें अपने-अपने क्षेत्र मे जिसे संविधान अथवा संघ का कोई कानून निश्चित करता है, सर्वोच्च होती हैं। संघ सरकार जैसा कि प्राय कह दिया जाता है अकेली केन्द्रीय सरकार नहीं होती, वरन् वह केंद्रीय और स्थानीय सरकारों को मिलाकर बनती है। स्थानीय सरकारें उसी प्रकार संघ का भाग हैं, जिस प्रकार केन्द्रीय सरकार। ये केन्द्र द्वारा निर्मित अथवा नियंत्रित नहीं होतीं।"

अमरीका मे संघीय व्यवस्था क्यों ?

संघीय व्यवस्था संयुक्त राज्य अमरीका की एक प्रमुख विशेषता है और विश्व म सबसे पहले संयुक्त राज्य अमरीका के द्वारा ही इसे अपनाया गया। फिलाडेल्फिया सम्मेलन के द्वारा जब अमरीकी संविधान का निर्माण किया जा रहा था, उसके पूर्व अमरीकी क्षेत्र के १३ उपनिवेश पृथक् पृथक् रहते हुए अपना राजनीतिक जीवन व्यतीत कर रहे थे। लम्बे समय से अलग रहने के कारण उनमे अपनी पृथक सत्ता के प्रति स्वाभाविक रूप से तीव्र मोह उत्पन्न हो गया था और वे इसे छोडने के लिए तयार नही थे। लेकिन इसके साथ ही ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध विद्रोह करने वाले इन १३ राज्यो को इस बात का पूरा भय था कि ब्रिटेन या यूरोप का अन्य कोई देश उन्हे पुन पराधीन करने के लिए प्रयत्न कर सकता है। अत बाहरी दबाव का सफलतापूर्वक मुकाबला करने के लिए उनका एक होना आवश्यक था। उनके सामने समस्या यह थी कि विविध राज्य अपनी पृथक पृथक सत्ता बनाये रखते हुए भी एक हो जायँ और ऐसा केवल संघीय व्यवस्था को अपनाकर ही किया जा सकता था। बर्न्स और पेल्टासन के शब्दों म "सन १७८७ मे अमरीका के समक्ष संघीय व्यवस्था को अपनाने के अतिरिक्त दूसरा कोई व्यावहारिक विकल्प नहीं था।"[1]

तत्कालीन परिस्थितियों के अतिरिक्त अमरीका के विशाल क्षेत्रफल और जनसंख्या को दृष्टि मे रखते हुए भी कहा जा सकता है कि इतने बड़े देश मे एकात्मक शासन नही चल सकता। संघीय व्यवस्था ही उसके लिए स्वाभाविक और उपयुक्त हो सकती है। जेम्स ब्राइस के शब्दों म "अत्यन्त प्राचीन काल से अमरीका के सब लोग इस बात पर एकमत हैं कि उनके देश मे शासन का केवल संघीय रूप ही सम्भव है। यह सब समझते हैं कि इतने बडे भूखण्ड के लिए केन्द्रीयकृत (एकात्मक) व्यवस्था यदि असम्भव नहीं, तो अव्यावहारिक अवश्य ही होगी।"

संविधान द्वारा स्थापित संघात्मक व्यवस्था ने न केवल तत्कालीन समस्याओं को हल किया, वरन् आगे भी अमरीका को प्रगति के मार्ग पर बढ़ाकर अपने आपको सफल और उपयोगी सिद्ध किया। अमरीकी संघ की सफलता का प्रमाण यह है कि

[1] Burns and Peltason, *Government of the People*, p 83

3

अमरीका की सघीय व्यवस्था

(FEDERAL SYSTEM OF AMERICA)

"अमरीकी सविधान में कहीं पर भी 'सघीय' (Federal) या सघ (Federation) शब्दो का प्रयोग नहीं किया गया है, लेकिन फिर भी इसे सघीय सविधान कहा जाता है और वतमान समय में सभी व्यक्ति सयुक्त राज्य अमरीका को सघीय शासन का एक आदश उदाहरण मानते ह ।"[1]

—ह्वीयर

सघीय शासन

मघीय शासन, शामन व्यवस्था क अन्तगत एक नवीन देन है। 'सघ' शब्द का अग्रेजी पर्यायवाची 'फेडरेशन' (Federation) लटिन भाषा के शब्द फोएडस' (Foedus) से निकला है जिसका अथ है सधि या समझौता। अत शब्द व्युत्पत्ति के दृष्टिकोण से समझौते द्वारा निर्मित राज्य को सघ राज्य कहा जा सकता है। सवैधानिक दृष्टिकोण से सघात्मक शासन का तात्पय एक एस शासन से होता है जिसम सविधान द्वारा ही केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारो के बीच शक्ति विभाजन कर दिया जाता है और ऐसा प्रब ध कर दिया जाता है कि इन दोनो पक्षो में से कोई एक अकेला इस शक्ति विभाजन मे परिवतन न कर सके। सघ राज्य की परिभाषा करते हुए डायसी लिखते हैं कि "एक सघात्मक राज्य, एक ऐसे राजनीतिक उपाय के अतिरिक्त कुछ नहीं है जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय एकता तथा राज्य अधिकारो में मेल स्थापित करना है।"

1 "The words federal or federation occur nowhere in the American constitution None the less it has always been called the Federal Constitution and now-a days everybody regards the United States as an example of federal government

—K C Wheare, *Federal Government* p 1

डॉ० गानर अधिक स्पष्टता के साथ सघ की परिभाषा करते हुए कहते हैं कि "सघ एक ऐसी प्रणाली है जिसमे केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारें एक ही प्रभुत्व शक्ति के आधीन होती हैं। ये सरकारें अपने अपने क्षेत्र मे जिसे सविधान अथवा सघ का कोई कानून निश्चित करता है, सर्वोच्च होती हैं। सघ सरकार जसा कि प्राय कह दिया जाता है अकेली केन्दीय सरकार नहीं होती, वरन् वह केन्द्रीय और स्थानीय सरकारों को मिलाकर बनती है। स्थानीय सरकारें उसी प्रकार सघ का भाग हैं, जिस प्रकार केन्द्रीय सरकार। वे केन्द्र द्वारा निर्मित अथवा नियन्त्रित नहीं होतीं।"

अमरीका मे सघीय व्यवस्था क्यो ?

सघीय व्यवस्था सयुक्त राज्य अमरीका की एक प्रमुख विशेषता है और विश्व म सबस पहले सयुक्त राज्य अमरीका के द्वारा ही इसे अपनाया गया। फिलाडेल्फिया सम्मेलन के द्वारा जब अमरीकी सविधान का निर्माण किया जा रहा था, उसके पूव अमरीकी क्षेत्र क १३ उपनिवेश पृथक पृथक रहते हुए अपना राजनीतिक जीवन व्यतीत कर रह थे। लम्बे समय से अलग रहन के कारण उनमे अपनी पृथक सत्ता के प्रति स्वाभाविक रूप से तीव्र मोह उत्पन्न हो गया था और वे इस छोडने के लिए तैयार नही थे। लेकिन इसके साथ ही ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध विद्रोह करने वाले इन १३ राज्यो को इस बात का पूरा भय था कि ब्रिटेन या यूरोप का अन्य कोई देश उन्हें पुन पराधीन करने के लिए प्रयत्न कर सकता है। अत बाहरी दबाव का सफलतापूवक मुकाबला करने के लिए उनका एक होना आवश्यक था। उनके सामने समस्या यह थी कि विविध राज्य अपनी पृथक पृथक सत्ता बनाये रखते हुए भी एक हो जायँ और ऐसा केवल सघीय व्यवस्था को अपनाकर ही किया जा सकता था। बन्स और पेल्टासन के शब्दो मे सन १७८७ मे अमरीका के समक्ष सघीय व्यवस्था को अपनाने के अतिरिक्त दूसरा कोई व्यावहारिक विकल्प नहीं था।"[1]

तत्कालीन परिस्थितियो के अतिरिक्त अमरीका के विशाल क्षेत्रफल और जनसख्या को दृष्टि म रखते हुए भी कहा जा सकता है कि इतने बडे देश मे एकात्मक शासन नही चल सकता। सघीय व्यवस्था ही उसके लिए स्वाभाविक और उपयुक्त हो सकती है। जेम्स ब्राइस के शब्दो मे "अत्यन्त प्राचीन काल से अमरीका के सब लोग इस बात पर एकमत हैं कि उनके देश मे शासन का केवल सघीय रूप ही सम्भव है। यह सब समझते हैं कि इतने बडे भूखण्ड के लिए केन्द्रीयकृत (एकात्मक) व्यवस्था यदि असम्भव नहीं, तो अव्यावहारिक अवश्य ही होगी।"

सविधान द्वारा स्थापित सघात्मक व्यवस्था ने न केवल तत्कालीन समस्याओ को हल किया, वरन आगे भी अमरीका को प्रगति के माग पर बढाकर अपने आपको सफल और उपयोगी सिद्ध किया। अमरीकी सघ की सफलता का प्रमाण यह है कि

[1] Burns and Peltason, *Government of the People*, p 83

अमरीकी संघ में आज १३ के स्थान पर ५० इकाइयां हो गयी हैं और विश्व के अन्य अनेक राज्यों (कनाडा, स्विट्जरलैण्ड, मैक्सिको, आस्ट्रेलिया और भारत आदि) के द्वारा संघात्मक व्यवस्था को ग्रहण किया गया है।

अमरीकी व्यवस्था में संघीय तत्व

अमरीकी संविधान में कहीं पर भी 'संघीय' (Federal)' या 'संघ' (Federation) शब्दों का प्रयोग नहीं किया गया है, लेकिन अमरीकी संविधान में संघीय शासन के तत्व नितान्त स्पष्ट हैं और उन्हें निम्न रूपों में देखा जा सकता है :

(१) प्रभुत्व शक्ति का दोहरा प्रयोग—यद्यपि सम्प्रभुता का विभाजन नहीं हो सकता और संघ राज्य में भी सम्प्रभुता अविभाज्य होती है किन्तु संघ राज्य में सम्प्रभुता की अभिव्यक्ति अवश्य ही केन्द्रीय सरकार और इकाइयों की सरकारें (राज्य सरकारें) इन प्रकार दो साधनों द्वारा होती है। अमरीकी संविधान के अन्तर्गत प्रभुत्व शक्ति के इस दोहरे प्रयोग की ही व्यवस्था की गयी है। केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकारें, दोनों ही संविधान से मान्यता प्राप्त हैं और अपने अपने क्षेत्र में कार्य करने के लिए स्वतन्त्र हैं। संघीय शासन के इस तत्व को अमरीकी संविधान के अन्तर्गत विस्तृत और पूर्ण रूप में अपनाया गया है।

(२) शक्तियों का विभाजन—शक्तियों का विभाजन संघीय व्यवस्था का निश्चित रूप से सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है। संघीय शासन के अन्तर्गत संविधान द्वारा केन्द्रीय सरकार और इकाइयों की सरकारों के बीच शक्ति का विभाजन कर दिया जाता है।

अमरीकी संविधान के अनुच्छेद एक की आठवीं, नवीं और दसवीं उपधाराओं में केन्द्रीय सरकार तथा राज्यों की सरकारों में शक्तियों का बँटवारा किया गया है। शक्ति विभाजन के सम्बन्ध में अमरीकी संविधान के अन्तर्गत 'गणना व अवशेष के सिद्धान्त' (*Principle of Enumeration and Residuam*) को अपनाया गया है, जिसके अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार और इकाइयों की सरकारें इन दो पक्षों में से किसी एक पक्ष की शक्तियों की गणना करके उन्हें निश्चित कर दिया जाता है और अवशेष सभी शक्तियां दूसरे पक्ष को दे दी जाती हैं। संविधान के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार की शक्तियों की गणना की गयी है और अवशेष सभी शक्तियां राज्यों को प्रदान कर दी गयी हैं। इस सम्बन्ध में स्थिति स्पष्ट करते हुए संविधान के दसवें संशोधन में कहा गया है कि "वे शक्तियाँ जो कि संविधान द्वारा संयुक्त राज्य अमरीका की सरकार को नहीं दी गयी हैं और न ही राज्यों को मना की गयी हैं वे राज्यों के लिए या जनता के लिए सुरक्षित हैं।" शक्ति विभाजन में अपनाये गये इस ढंग के आधार पर कहा जाता है कि केन्द्रीय सरकार की शक्तियां प्रदत्त हैं और राज्यों व जनता की शक्तियां मौलिक। लेकिन संविधान का आगे चलकर जिस दिशा में विकास हुआ, उसमें मौलिक और प्रदत्त शक्तियों के इस अन्तर का कोई महत्व नहीं रहा है।

केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ

प्रथम अनुच्छेद की आठवी उपधारा मे काग्रेस अर्थात् केन्द्रीय सरकार को निम्न विषयो के सम्बन्ध म शक्तिया प्रदान की गयी है

(१) कर लगाने तथा एकत्रित करने का अधिकार।

(२) सयुक्त राज्य अमरीका का विदेशो मे, राज्य मे परस्पर और भारतीय कबीलो से व्यापार का नियमन करना।

(३) सयुक्त राज्य अमरीका की साख पर ऋण लेना।

(४) सयुक्त राज्य अमरीका मे विदेशिया द्वारा नागरिकता प्राप्ति और दिवालियेपन के सम्बन्ध म एक जैसे नियमा का निर्माण करना।

(५) मुद्रा का निर्माण तथा उसका मूल्य निर्धारित करना व माप और तौल का स्तर निर्धारित करना।

(६) नकली मुद्रा बनाने तथा नोट छापने के लिए दण्ड विधान की व्यवस्था करना।

(७) डाक और तार इत्यादि का प्रबन्ध करना।

(८) विज्ञान तथा उपयोगी कलाओ को उन्नत करना और इस हेतु सीमित समय के लिए लेखको तथा आविष्कारको को अपनी कृतियो तथा आविष्कारो का एकमात्र अधिकार देना।

(९) सर्वोच्च न्यायालय के आधीन अन्य न्यायालयो का गठन करना।

(१०) समुद्री डाकुओ और लुटेरो के विरुद्ध तथा अन्तरराष्ट्रीय कानून का उल्लघन करने वालो को दण्ड देने के लिए कानून की व्यवस्था करना।

(११) युद्ध की घोषणा करना।

(१२) सेना की स्थापना तथा उसकी व्यवस्था करना।

(१३) जल सेना की स्थापना तथा व्यवस्था करना।

(१४) स्थलीय तथा जल सेना के नियमन के लिए नियम बनाना।

(१५) सयुक्त राज्य अमरीका के कानूनो को लागू करने, विद्रोहो को दबाने तथा आक्रमण का प्रतिकार करने के लिए 'मिलिशिया' का सगठन करना, उसके सगठन, शस्त्रीकरण तथा अनुशासन के लिए नियम बनाना।

(१६) सघीय जिले का निर्माण करना और सार्वजनिक हित व अन्य आवश्यक कार्यो हेतु भवनो का निर्माण करने के लिए भूमि प्राप्त करना—इस शक्ति के आधार पर कोलम्बिया जिले का निर्माण किया गया और उसे 'वाशिंगटन' का नाम देकर अमरीका की राजधानी बनाया गया है।

(१७) उपरोक्त शक्तियो की क्रियान्विति हेतु सभी आवश्यक और उचित कानूनो का निर्माण करना अथवा सविधान द्वारा सयुक्त राज्य अमरीका की सरकार अथवा उसके किसी विभाग या अधिकारी को दी हुई शक्तियो को लागू करने के लिए कोई कानून बनाना।

आठवी उपधारा के अन्तिम शब्दो म काग्रेस को उपरोक्त शक्तियो की क्रियान्विती हेतु 'आवश्यक और उचित' कानूनो का निर्माण करने की जो शक्ति प्रदान की गयी, उसकी व्याख्या करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने निहित शक्तियो के सिद्धान्त को जन्म दिया और आज केन्द्रीय सरकार को सविधान मे वर्णित उपरोक्त विषयो के अतिरिक्त कुछ अन्य विषयो म भी निहित शक्तियाँ प्राप्त ह । य विषय इस प्रकार हैं—बैंक व अन्य कारपोरेशन स्थापित करना, सडकें, स्कूल, स्वास्थ्य व बीमे आदि पर खर्च करना सनिक व नौ प्रशिक्षणशालाए खोलना, विद्युत उत्पादन करना, कृषि का सचालन करना व उसे सहायता देना ।

राज्यो की शक्तियाँ—सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान म केवल केन्द्रीय सरकार की शक्तियो का उल्लेख किया गया है और शेष सभी शक्तियाँ, जो सविधान द्वारा राज्यो के लिए निषिद्ध नही है राज्यो को प्रदान की गयी हैं । अमरीकी सविधान के प्रसिद्ध लेखक **मुनरो** न राज्यो की कुछ शक्तियो का उल्लेख किया है, जो इस प्रकार है—स्थानीय कर लगाना स्थानीय स्वशासन की सस्थाएँ स्थापित करना, राज्य की साख पर ऋण लेना, शिक्षा का सचालन करना, अनुदान तथा दान देना, सडकें और यातायात नियमो की स्थापना तथा नियन्त्रण, दीवानी तथा फौजदारी कानूनो का निर्माण, लोगो की सम्पत्ति तथा जीवन की सुरक्षा लोगो के स्वास्थ्य तथा नैतिक जीवन को उन्नत करना, सघीय सविधान के सशोधनो का अनुमोदन करना, राज्यो के सविधान म सशोधन करना और चुनावो का सचालन करना ।

अमरीकी सविधान द्वारा किय गय शक्ति विभाजन की एक विशेषता यह ह कि एक ओर तो सविधान मे उन विषयो का उल्लेख किया गया है, जिनके सम्बन्ध म क्रमश केन्द्रीय सरकार तथा इकाइयो की सरकारो द्वारा काय किया जायगा तथा दूसरी ओर केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारो के लिए निषिद्ध शक्तियो का उल्लेख किया गया ह ।

केन्द्रीय सरकार के लिए निषिद्ध शक्तियाँ—प्रथम अनुच्छेद की नवी उपधारा मे केन्द्रीय सरकार के लिए निषिद्ध शक्तियो का उल्लेख किया गया ह अर्थात् केन्द्रीय सरकार इन विषयो के सम्बन्ध म काय नही कर सकती । य विषय इस प्रकार हैं—*केन्द्रीय सरकार बन्दी प्रत्यक्षीकरण के अधिकार पर रोक नही लगा सकती भाषण* की स्वतन्त्रता पर प्रतिबन्ध नही लगा सकती, नागरिको को मताधिकार से वचित नहीं कर सकती और सम्मानसूचक उपाधियो का वितरण नही कर सकती। केन्द्रीय सरकार किसी राज्य म बाहर जाने वाली वस्तुओ पर कोई कर *अथवा* प्रशुल्क नही लगा सकती और राष्ट्रीय कोष मे से कोई भी धन तब तक खर्च नही कर सकती, *जब तक कि कानून द्वारा स्वीकृति न मिल जाय ।*

राज्य सरकारो के लिए निषिद्ध शक्तियाँ—प्रथम अनुच्छेद की दसवी उपधारा म राज्य सरकारो के लिए निषिद्ध शक्तियो का उल्लेख किया गया है जो इस प्रकार हैं—राज्यो के द्वारा विदेशो के साथ सधि या समझौते नही किये जा सकते शान्ति के

समय वे सेना और युद्धपोत नही रख सकते और न वे तब तक युद्ध म ही प्रवेश कर सकते हैं, जब तक किसी राज्य द्वारा उन पर आक्रमण न किया जाय। कांग्रेस की सहमति के बिना राज्यो के द्वारा निर्यात तथा आयात कर नही लगाया जा सकता, राज्य अपने क्षेत्र मे स्थित राष्ट्रीय सरकार की सम्पत्ति पर कोई कर नही लगा सकते, राज्य सरकारे नोट या मुद्रा नही चला सकती और अपने ऋण चुकाने के लिए सोने और चाँदी की मुद्राओ के अतिरिक्त अ य किसी प्रकार की मुद्रा का प्रयोग नही कर सकती। इसके अतिरिक्त राज्य सरकारे दास प्रथा नही रख सकती और जाति अथवा रग भेद के आधार पर अपने नागरिको को मताधिकार से वंचित नही कर सकती।

सविधान के द्वारा के द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारो के लिए शक्तियो का जो निषेध किया गया है उससे यह स्पष्ट है कि सविधान के द्वारा सम्प्रभुता केन्द्रीय सरकार या राज्य सरकारो को सौपने के बजाय लोक प्रभुता (Popular Sovereignty) के सिद्धान्त को अपनाया गया है। राज्य की अन्तिम सम्प्रभुता जनता म ही निहित है।

(३) **सविधान की सर्वोच्चता**—सघ शासन समझौते द्वारा स्थापित शासन होता है। यह समझौता सविधान म निहित होता है और सघ राज्य का यह सविधान सर्वोच्च होता है। केन्द्रीय सरकार इकाइयो की सरकारे तथा सरकार के विभिन्न अग सविधान के प्रतिकूल किसी प्रकार का काय नही कर सकते।

सयुक्त राज्य अमरीका मे 'सविधान की सर्वोच्चता' के सिद्धात को अपनाया गया है। फिलाडेल्फिया सम्मेलन द्वारा निर्मित प्रलेख, उसमे किय गय सशोधनो सहित सयुक्त राज्य अमरीका का सर्वोच्च कानून है और राष्ट्रपति कांग्रेस, सर्वोच्च न्यायालय तथा सघ की इकाइया सब इसके अधीन हैं और किसी के भी द्वारा इसका उल्लघन नही किया जा सकता है। अमरीकी सविधान के अनुच्छेद ६ म कहा गया है 'यह सविधान और इसके अनुसार बनाये गये सभी कानून तथा सयुक्त राज्य अमरीका के प्राधिकार के अधीन की गयी अथवा भविष्य मे की जाने वाली सभी सन्धिया देश का सर्वोच्च कानून होगा और प्रत्येक राज्य के न्यायाधीश उससे बाध्य होगे। किसी भी राज्य के सविधान अथवा कानून की कोई भी बात, जो इस सविधान के विरुद्ध होगी अवध समझी जायगी।"

(४) **न्यायपालिका की सर्वोच्चता**—सभी सघात्मक राज्यो के अन्तर्गत एक सर्वोच्च न्यायालय की व्यवस्था की जाती है, जिसका काय सविधान की व्याख्या एव रक्षा करना होता है। यह सर्वोच्च न्यायालय केन्द्रीय सरकार प्रान्तीय सरकार या सरकार के किसी अग द्वारा सविधान के प्रतिकूल किय गय कार्यो को अवैधानिक घोषित कर सकता है और यही न्यायिक सर्वोच्चता है। चाल्स बियड तो न्यायिक सर्वोच्चता को ही सघात्मक शासन प्रणाली की सवप्रमुख विशेषता मानते हैं।

अमरीका मे न्यायिक सर्वोच्चता के सिद्धान्त को ही अपनाया गया है और सर्वोच्च न्यायालय सविधान का उल्लघन करने वाले काग्रेस के कानूनो, राष्ट्रपति की आज्ञाओ अथवा राज्य सरकारो के कानूनो और कार्यों को अवैध घोषित कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय अपनी इस शक्ति के माध्यम से केन्द्रीय सरकार तथा राज्य सरकारो को अपने अपने क्षेत्र तक सीमित रखता है और इनमे से किसी भी पक्ष के द्वारा सविधान का उल्लघन नही किया जा सकता। सन् १८०३ में मुख्य न्यायाधीश मार्शल ने 'मारबरी बनाम मेडीसन' नामक विवाद मे न्यायिक सर्वोच्चता के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए स्पष्ट कहा था कि सब प्रकार के कानूनो की सवैधानिकता की जाच करने का एकमात्र अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त है।

(५) दोहरी नागरिकता—दोहरी नागरिकता को भी सामान्यतया सघ राज्य का एक तत्त्व समझा जाता है, जिसका तात्पर्य है कि प्रत्येक व्यक्ति केन्द्रीय सरकार का तथा उस राज्य सरकार का नागरिक होगा, जिसमे वह रहता है।

सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान मे दोहरी नागरिकता को अपनाया गया है। यहा प्रत्येक व्यक्ति को दो नागरिकताएँ प्राप्त होती है प्रथम सयुक्त राज्य अमरीका की नागरिकता और द्वितीय उस राज्य की नागरिकता, जिसमे वह निवास करता है। उदाहरण के लिए, न्यूयार्क राज्य मे रहने वाला नागरिक न्यूयार्क का नागरिक है और इसके साथ ही सयुक्त राज्य अमरीका का भी। सर्वोच्च न्यायालय ने ड्रेड स्कॉट नामक विवाद मे प्रत्येक नागरिक की दोहरी नागरिकता को स्वीकार किया है।

(६) सघीय व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन मे इकाइयो को समान प्रतिनिधित्व—सघ राज्य के उपरोक्त प्रमुख लक्षणो के अतिरिक्त अन्य कुछ गौण लक्षण भी माने जाते हैं। सयुक्त राज्य अमरीका की सघीय व्यवस्था मे इन गौण लक्षणो मे एक यह है कि केन्द्रीय व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन मे प्रतिनिधित्व सघीय आधार पर प्रदान किया जाना चाहिए जनसख्या के आधार पर नही। सयुक्त राज्य अमरीका मे ऐसा ही किया गया है। काग्रेस के प्रथम सदन (प्रतिनिधि सभा) मे प्रतिनिधित्व जनसख्या के आधार पर प्रदान किया गया है और इस सदन मे बडे राज्यो को अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हुआ है और छोटे राज्यो को कम, लेकिन द्वितीय सदन (सीनेट) मे छोटी बडी सभी इकाइयो को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। इसमे प्रत्येक इकाई के द्वारा अपने दो प्रतिनिधि भेजे जाते है। सविधान मे यह भी व्यवस्था की गयी है कि सम्बन्धित राज्य की अनुमति के बिना किसी राज्य को उसे सीनेट मे प्राप्त प्रतिनिधित्व से वचित नही किया जा सकता है।

(७) राज्यों की प्रादेशिक अखण्डता अनुल्लघनीय—सघ राज्य का एक सिद्धान्त यह माना जाता है कि सघ को इकाइयो के क्षेत्र मे परिवर्तन का अधिकार नही होना चाहिए। सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान मे ऐसा ही किया गया है। सविधान के अनुच्छेद ४ की उपधारा ३ मे स्पष्ट रूप मे कहा गया है कि काग्रेस नवीन

राज्यो को सघ मे प्रवेश दे सकेगी, परन्तु कोई नया राज्य दूसरे राज्य के क्षेत्राधिकार मे स्थापित नही किया जायगा और न ही दो या अधिक राज्यो या उनके भागो को मिलाकर उन राज्यो के विधानमण्डल तथा काग्रेस की सहमति के बिना किसी नवीन राज्य का निर्माण किया जा सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि राज्यो की सीमाओ मे उनकी सहमति से ही परिवर्तन किया जा सकता है।

इन सबके अतिरिक्त अमरीकी सघ की इकाइयो को सविधान सशोधन सम्बन्धी काय के विषय मे पूरी पूरी शक्ति प्राप्त है। सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया के दो चरण हैं सशोधन की प्रस्तावना और सशोधन की पुष्टि। सशोधन की पुष्टि का काय तो इकाइयो के द्वारा किया ही जाता है, इकाइयो को सशोधन प्रस्तावित करने के सम्ब ध म भी शक्ति प्राप्त है।

अमरीका मे सघीय सविधान से अलग राज्यो के अपने अलग अलग सविधान हैं। राज्यो के सविधान पर दात केवल यह है कि वह सविधान सघीय सविधान के विरुद्ध नही होना चाहिए और उसम गणतन्त्रीय शासन प्रणाली के अतिरिक्त अ य किसी प्रकार की शासन प्रणाली नही अपनाई जानी चाहिए। अमरीका मे राज्यो के गवनरो की नियुक्ति भारत के समान राष्ट्रपति द्वारा नही की जाती है, वरन वे सम्ब धित राज्य के नागरिको द्वारा चुने जाते है। राज्य के इन गवनरो को राष्ट्रपति पदच्युत भी नही कर सकते, सम्ब धित राज्य का विधानमण्डल ही उन्ह महाभियोग के आधार पर पदच्युत कर सकता है।

उपरोक्त विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि अमरीकी सविधान के द्वारा न केवल एक सघ राज्य' वरन ह्वीयर के शब्दो मे एक 'आदर्श सघ' की स्थापना की गयी है। स्ट्राग के द्वारा भी सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान को विश्व का सर्वाधिक पूण सघात्मक विधान कहा गया है।[1]

निहित शक्तियो का सिद्धान्त
(Doctrine of Implied Powers)

अमरीकी सविधान सक्षिप्तता का एक उदाहरण है और सविधान के अन्तगत सघीय शक्तियो की जो सूची है, वह बहुत अधिक सक्षिप्त और सामान्य है। उसम ऐसी शक्तियो का उल्लेख भी नही किया गया है, जिनका प्रयोग किये बिना न तो सघ अपने उत्तरदायित्व पूरे कर सकता है और न ही सघीय व्यवस्था को बनाये रख सकता है। ऐसी स्थिति मे सघीय शासन द्वारा इस धारणा को अपनाया गया है कि सविधान द्वारा सौंपी गयी शक्तियों और उत्तरदायित्वो को पूरा करने के लिए जिन किन्ही शक्तियो का प्रयोग किया जाना आवश्यक हो, सघीय शासन द्वारा उन शक्तियो का प्रयोग किया जा सकता है। सघीय शासन द्वारा उन शक्तियो को इस आधार पर अपने हाथ मे लिया जा सकता है कि य शक्तियाँ सविधान म दी गयी

[1] 'The constitution of the United States is the most completely federal constitution in the world'
—C F Strong *Modern Political Constitution* p 103

मूल शक्तियो की क्रियान्विती हेतु आवश्यक है और इस दृष्टि से सविधान मे निहित हैं। इसी आधार पर निहित शक्तियो के सिद्धान्त का उदय हुआ।

सिद्धान्त का सवैधानिक आधार

निहित शक्तियों के सिद्धान्त का उदय किसी कानून के अन्तर्गत नही, वरन एक ऐसी परम्परा के रूप मे हुआ है, जिसे बाद मे सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार मान्यता प्रदान की गयी और जो अब अमरीका की सवैधानिक व्यवस्था का एक प्रमुख आधार बन गया है। सिद्धान्त के इस परम्पराजनित उदय के कारण सविधान की सकुचित रूप मे व्याख्या करने वाले पक्ष के द्वारा निरन्तर यह बात कही जाती रही है कि निहित शक्तियो के सिद्धान्त का कोई सवैधानिक आधार नही है। लेकिन वास्तव मे ऐसी धारणा को अपनाना उचित नही है। इस सिद्धान्त का परम्पराजनित उदय होते हुए भी इसका सवैधानिक आधार है और यह आधार अनुच्छेद १ की उपधारा ८ मे देखा जा सकता है जिसमे कहा गया है कि, 'उपरोक्त शक्तियो की क्रियान्विती हेतु सभी आवश्यक और उचित कानूनो का निर्माण करने की शक्ति काग्रेस को प्राप्त होगी।' निहित शक्तियो के सिद्धान्त का उदय इसी आधार पर हुआ है। जानसन ने इसी तथ्य की ओर सकेत करते हुए कहा है कि, 'निहित शक्तियाँ वे शक्तियाँ हैं जो सविधान के ढाचे के परिणामस्वरूप विकसित हुई हैं।'

सिद्धान्त का उदय और इतिहास

अमरीका की सविधान निर्मात्री सभा फिलाडेल्फिया सम्मेलन मे दो पक्ष थे प्रथम सघवादी (Federalists) और द्वितीय सघवाद के विरोधी (Anti federa lists)। सघवादी सविधान की उदार व्याख्या करते हुए केन्द्रीय सरकार को अधिक शक्तिया सौपने के पक्ष मे थे सघवाद के विरोधी सविधान का अक्षरश पालन करते हुए केन्द्रीय सरकार का कार्यक्षेत्र सीमित रखने के पक्ष मे थे। प्रथम पक्ष का प्रतिनिधित्व हैमिल्टन और मैडीसन द्वारा किया जा रहा था और द्वितीय पक्ष का प्रतिनिधित्व जेफरसन द्वारा। सविधान को कार्यरूप मे अपनाने के बाद जार्ज वाशिगटन के नेतृत्व मे जिस पहली सरकार का गठन हुआ, उसमे भी इन दोनो पक्षो का यही पारस्परिक विरोध देखा गया। १८१० मे ही हैमिल्टन ने 'सयुक्त राज्य के एक बैंक' की स्थापना का प्रस्ताव किया। जेफरसन ने इसका विरोध करते हुए कहा कि ऐसा करना सविधान के प्रतिकूल होगा, क्योकि सविधान ने राष्ट्रीय सरकार को ऐसी कोई शक्ति प्रदान नही की है। जेफरसन के आरोप का उत्तर देते हुए हैमिल्टन ने कहा था कि यद्यपि एक केन्द्रीय बैंक स्थापित करने का अधिकार सविधान ने राष्ट्रीय सरकार को स्पष्ट रूप मे नही दिया है लेकिन सविधान ने राष्ट्रीय सरकार को विदेशो के साथ व परस्पर राज्यो के व्यापार का प्रबन्ध करने की शक्ति दी है और सविधान मे यह भी कहा गया है कि सघ सरकार को उन समस्त कानूनों के निर्माण का अधिकार होगा, जो अनुच्छेद १ की उपधारा ८ मे दिये गये कार्यों को करने के लिए आवश्यक तथा उचित हो। राष्ट्रीय सरकार द्वारा व्यापार का प्रबन्ध करने की

शक्ति का प्रयोग किया जा सके, इसके लिए केन्द्रीय बंक की स्थापना नितान्त आवश्यक है। अन्त में हेमिल्टन का विचार मान्य हुआ और एक केन्द्रीय बंक की स्थापना हुई।

बैंक की स्थापना की शक्ति से सम्बन्धित निर्णय विषय विशेष से सम्बन्धित निर्णय था और इसने किसी नीति या सिद्धान्त को जन्म नहीं दिया। अतः अब भी इस बात पर विवाद किया जाता रहा कि निहित शक्ति की बात सिद्धान्त रूप में मान्य है अथवा नहीं। अन्त में १८१९ में मक्कलोच बनाम मेरीलेण्ड' के विवाद में मुख्य न्यायाधीश मार्शल के द्वारा जो निर्णय दिया गया, उससे निहित शक्तियों के सिद्धान्त को मान्यता प्राप्त हुई। उन्होंने अपने इस ऐतिहासिक निर्णय में कहा कि "सरकार की शक्तियाँ सीमित हैं और उनका अतिक्रमण नहीं किया जा सकता। पर हमारा विचार है कि संविधान के स्वस्थ ढाँचे में राष्ट्रीय व्यवस्थापिका को उन साधनों के विषय में विवेक से काम लेने की अनुमति अवश्य होनी चाहिए जिनके द्वारा उन शक्तियों को क्रियान्वित किया जाना है जो संविधान ने राष्ट्रीय व्यवस्थापिका को प्रदान की हैं, जिससे यह संस्था अपने लिए निर्धारित महान कर्तव्यों को ऐसे ढंग से पूरा कर सके, जो जनसाधारण के लिए सबसे अधिक लाभकारी हो।" उन्होंने आगे कहा कि "यदि उद्देश्य उचित है और वह संविधान की सीमाओंके अनुकूल है, तो वे सभी साधन जो कि उपयुक्त हैं, जो कि स्पष्ट रूप से उद्देश्य के अनुकूल हैं, जिनका कि संविधान ने निषेध नहीं किया है तथा जो संविधान के शब्द और भाव के अनुकूल हैं, संवैधानिक हैं।"[1]

इस प्रकार निहित शक्तियों का तात्पर्य उन शक्तियों से है जो संविधान द्वारा प्रदत्त मूल शक्तियों को पूरा किया जाने के लिए आवश्यक हैं। इस दृष्टि से निहित शक्तियाँ मौलिक शक्तियों का ही अंग हैं और मौलिक शक्तियाँ यदि साध्य हैं तो निहित शक्तियों को उन्हें पूरा करने का साधन माना जा सकता है। किसी भी शक्ति को निहित शक्ति तभी माना जा सकता है, जबकि उसका प्रयोग मूल शक्ति को कार्य रूप में परिणित करने के लिए आवश्यक हो। कोई कार्य निहित शक्तियों के अन्तर्गत आता है अथवा नहीं, इसका निर्णय कांग्रेस अथवा राष्ट्रपति द्वारा नहीं, वरन न्याय-

1 The powers of the Government are limited and its powers are not to be transcended But we think the sound construction of constitution must allow to the national Lgislature that discretion with respect to the means by which the powers it confers are to be carried into execution which will enable that body to perform high duties assigned to it in a manner most beneficial to the people

He added Let the end be legitimate let it be within the scope of the constitution and all means which are appropriate which are plainly adopted to that end which are not prohibited but consist with the letter and spirit of constitution are constitutional

—*Chief Justice Marshal in McCulloch v Maryland*

पालिका के द्वारा किया जायगा। इस सम्बन्ध मे यह भी उल्लेखनीय है कि निहित शक्तियो का यह सिद्धात राष्ट्रीय सरकार के सम्बन्ध मे ही है, राज्य सरकार के सम्बन्ध मे नही। सर्वोच्च न्यायालय ने अपने एक निर्णय मे प्रतिपादित किया है कि "यह शक्ति राज्यो के साथ बँटी हुई नहीं है, वरन् यह केवल राष्ट्रीय सरकार मे निहित है।"[1]

निहित शक्तिया के सिद्धात को स्पष्ट रूप से समझने के लिए निहित शक्तियो के कुछ उदाहरणो का अध्ययन किया जा सकता है, जो इस प्रकार हैं

(१) सविधान ने काग्रेस को विदेशो के साथ व परस्पर राज्यो के व्यापार का प्रबन्ध करने की शक्ति दी है। व्यापार के प्रबन्ध हेतु बैंकिंग प्रणाली, यातायात और सचार के साधनो पर नियन्त्रण आवश्यक होता है। अत काग्रेस ने रेल व सडक यातायात टेलीग्राफ व टेलीफोन की कम्पनियो, वायुयान, भापयान, वस्तु प्रणाली, विनिमय केन्द्र व रेडियो के सम्बन्ध मे शक्ति प्राप्त कर ली है।

(२) सविधान ने काग्रेस को सेना तथा जल सेना की स्थापना की शक्ति प्रदान की है, इसके अन्तगत सैनिक तथा जल सेना अकादमियो की स्थापना की शक्ति निहित मान ली गयी है।

(३) सविधान के अनुसार सामान्य कल्याण की साधना का दायित्व काग्रेस का है और काग्रेस ने अपनी इस शक्ति के अन्तगत रोजगार, वृद्धावस्था पेंशन की व्यवस्था और अन्य अनेक कार्य अपने हाथ मे ले लिये हैं।

(४) सविधान के अनुसार काग्रेस को सयुक्त राज्य अमरीका की साख पर ऋण लेने का अधिकार प्राप्त है काग्रेस ने अपने इस अधिकार के अन्तगत सघीय बैंक व सहयोगी ऋण समितियों की स्थापना और राष्ट्र के ऋणो की देखभाल करने की शक्ति अपने हाथ मे लेली है।

(५) निहित शक्तिया के सिद्धान्त का सबसे अधिक प्रयोग अन्तरराष्ट्रीय सम्बन्धो के क्षेत्र मे हुआ। सविधान के द्वारा काग्रेस को युद्ध की घोषणा की शक्ति प्रदान की गयी है और काग्रेस ने इसके आधार पर सन्धियो, समझौतो व कूटनीतिक नियुक्तियो आदि से सम्बन्धित समस्त शक्तिया प्राप्त कर ली हैं।

निहित शक्तियो के प्रतिबन्ध—निहित शक्तियो के सिद्धात ने केन्द्रीय सरकार की शक्ति मे पर्याप्त वृद्धि की है, लेकिन यह नही समझा जाना चाहिए कि काग्रेस या केन्द्रीय सरकार इस सिद्धात के आधार पर मनमानी शक्तियो का प्रयोग कर सकती है। इस सिद्धात के आधार पर केन्द्रीय सरकार केवल उन्ही शक्तियो का प्रयोग कर सकती है जो सविधान द्वारा केन्द्रीय शासन को प्रदत्त शक्तियो से सम्बद्ध और उन पर आधारित है। इसके अतिरिक्त अन्य किन्ही शक्तियो का प्रयोग उनके द्वारा नही किया जा सकता।

केन्द्रीय शासन द्वारा इस सिद्धात के दुरुपयोग किये जाने के विरुद्ध एक प्रभावशाली प्रतिबन्ध न्यायपालिका की शक्ति का है। कोई शक्ति निहित शक्ति है

1 "This power is not shared by the states it is vested in the national government exclusively —S C in *United States v Pink*

अथवा नही, इसका अन्तिम निर्णय काग्रेस या राष्ट्रपति के द्वारा नही, वरन सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा किया जाता है। जब कभी केन्द्रीय सरकार ने मनमानी शक्तियो की माग की, तो सर्वोच्च न्यायालय ने उसे अस्वीकार कर दिया। उदाहरणार्थ, केन्द्रीय सरकार ने व्यापार का प्रबन्ध करने की शक्ति के नाम पर बीमा सम्बन्धी शक्ति को अपने हाथ मे लेना चाहा, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने इसे अस्वीकार कर दिया। इसी प्रकार राष्ट्रपति थियोडर रूजवेल्ट के द्वारा जब इस मत का प्रतिपादन किया गया कि समस्त राष्ट्र से सम्बद्ध सभी विषय सघीय शासन के अन्तर्गत हैं, चाहे सविधान के द्वारा उन्हे सघीय नियन्त्रण मे न दिया गया हो, तो सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा केन्सास बनाम कोलोराडो (Kansas *vs* Colorado) के विवाद मे इसे अस्वीकार कर दिया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने घोषित किया कि सविधान निर्माताओ की यह इच्छा कदापि नही थी। इस सम्बन्ध मे मुनरो ने कहा है "अपनी निहित शक्तियो की निर्णायक काग्रेस नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ऐसे विषयो का अन्तिम निर्णायक है और अनेक अवसरो पर निहित शक्ति सम्बन्धी काग्रेस के दावे को उसने अस्वीकार भी कर दिया है।"[1]

वस्तुस्थिति यह है कि जिस प्रकार राजनीतिज्ञो मे हेमिल्टन और जैफरसन के द्वारा दो परस्पर नितान्त विरोधी दृष्टिकोणो का प्रतिपादन किया गया, उसी प्रकार न्यायाधीशो मे भी विचार और दृष्टिकोण का भेद रहा है। मार्शल जैसे मुख्य न्यायाधीश के द्वारा जहा सविधान की व्यापक रूप से व्याख्या की गयी, वहा टौनी जसे न्यायाधीश ने सविधान की अक्षरश व्याख्या करने के जफरसन के दृष्टिकोण को अपनाया और निहित शक्ति सम्बन्धी काग्रेस के दावो को अस्वीकार कर दिया। यह तथ्य है कि न्यायपालिका निहित शक्तियो के सिद्धान्त पर एक प्रभावशाली प्रतिबन्ध है और काग्रेस या राष्ट्रपति इस सिद्धान्त के आधार पर मनमानी नही कर सकते है।

सिद्धान्त का प्रभाव—निहित शक्तियो के सिद्धान्त ने अमरीकी सवैधानिक व्यवस्था को महत्त्वपूर्ण रूप मे प्रभावित किया है और इससे अमरीकी सविधान और शासन व्यवस्था को महत्त्वपूर्ण दिशाएँ प्राप्त हुई हैं। सर्वप्रथम, इसने अमरीकी सविधान को बदलती हुई परिस्थितियो के अनुरूप विकसित होने मे सहायता प्रदान की है। आज से लगभग १८५ वर्ष पूर्व निर्मित सविधान मे अब तक केवल २५ सशोधन हुए हैं और इतने कम सशोधनो से, घोडे बग्घियो के समय मे निर्मित सविधान, आज के रॉकेट के युग मे भी भलीभाति कार्य कर रहा है इसका बहुत कुछ श्रेय निहित शक्तियो के सिद्धान्त को जाता है।

द्वितीय, इस सिद्धान्त ने केन्द्रीय सरकार को उन उत्तरदायित्वो को पूरा

[1] The Congress is not the judge of its own implied powers The Supreme Court is the final arbiter in such matters and on several occasions it has denied congressional claims to implied authority
—*W B Munro*

करने की क्षमता प्रदान की है, जो सविधान ने उसे सौंपे थे। केन्द्रीय सरकार ने इस सिद्धान्त के आधार पर उन शक्तियों को प्राप्त कर लिया, जो उसके मूल कर्तव्यों को पूरा करने के लिए आवश्यक थी। इस सिद्धान्त के अभाव में अमरीकी सघीय व्यवस्था के सचालन मे निश्चित रूप से बाधा पहुचती।

तृतीय, इस सिद्धान्त ने सघीय केन्द्रीयकरण को जन्म दिया है। सविधान निर्माता इकाइयो की सत्ता के प्रति अधिक जागरूक थे और इसी कारण उनके द्वारा अवशेष शक्तियाँ इकाइयो को प्रदान की गयी थी, लेकिन आज केन्द्र इकाइयो की तुलना मे अधिक शक्तिशाली हो गया है और जिन कारणो से ऐसा हुआ है, उनमे निहित शक्तियो का सिद्धान्त एक प्रमुख तत्त्व है।

चतुर्थ इस सिद्धान्त ने न्यायपालिका की स्थिति को और अधिक महत्त्वपूर्ण बना दिया है, क्योकि कोई कार्य निहित शक्तियों के अन्तर्गत आता है अथवा नही, इसका अन्तिम निर्णय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा ही किया जाना है।

निहित शक्तियो के सिद्धान्त ने अमरीकी सविधान के विकास मे निश्चित रूप से उपयोगी भूमिका अदा की है। इसकी उपयोगिता का प्रमाण यह है कि इस मान्यता के सबसे प्रबल विरोधी जेफरसन १८०१ मे जब राष्ट्रपति निर्वाचित हुए, तो उन्होने १८०१ से १८०६ के अपने राष्ट्रपति काल मे कुछ ऐसे कार्य किये, जो निहित शक्तियो पर आधारित कहे जा सकते है। १८०३ मे लुईसियाना को अपने आधीन करने और १८०७ मे विदेशी व्यापार पर प्रतिबन्ध लगाने के जो कार्य उन्होंने किये, वे निहित शक्तियो की मान्यता के ही अनुरूप थे।

सघीय केन्द्रीयकरण
(Federal Centralisation)

अमरीकी सघ का निर्माण करते समय अमरीकी सघ की १३ इकाइयो को अपने अपने राज्यो की सत्ता के प्रति बहुत अधिक मोह था। इस कारण उनके द्वारा एक ऐसे सघ का निर्माण किया गया, जिसमे केन्द्रीय सरकार को सीमित शक्तियाँ प्रदान की गयी थी और इस बात का पूरा ध्यान रखा गया कि केन्द्र अधिक शक्तिशाली होकर राज्यो पर अपना पूर्ण नियन्त्रण स्थापित न कर ले। लेकिन अनेक बार सविधानो का विकास सविधान निर्माताओ द्वारा सोची गयी दिशा मे ही नही होता। अमरीकी सविधान के अन्तर्गत भी सघीय व्यवस्था के सम्बन्ध मे ऐसा ही हुआ है। सविधान को कार्यरूप प्रदान करने के थोडे समय बाद से ही सयुक्त राज्य अमरीका की आन्तरिक स्थिति और विदेशो के साथ उसके सम्बन्धो की स्थिति मे इस प्रकार परिवर्तन हुआ कि केन्द्र की स्थिति अधिकाधिक प्रभावशाली होती गयी और इकाइयो का महत्त्व कम होता गया। अमरीकी सविधान और राज्य मे क्रियाशील इसी प्रवृत्ति को 'सघीय केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति' कहा जा सकता है।

संघीय केन्द्रीयकरण के उत्तरदायी तत्त्व

स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उपस्थित होता है कि संघीय केन्द्रीयकरण की इस प्रवृत्ति के कारण क्या हैं? संघीय केन्द्रीयकरण के लिए उत्तरदायी तत्त्वों की विवेचना निम्न रूपों में की जा सकती है

(१) भौतिक, आर्थिक व सामाजिक परिवर्तन—संघीय केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति का सम्भवतया सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण भौतिक, आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन कहा जा सकता है। संविधान लागू किये जाने के समय से लेकर आज तक के १८५ वर्षों में अमरीकी राष्ट्र की स्थिति में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं और इन परिवर्तनों ने केन्द्र-राज्य सम्बन्धों को स्वाभाविक रूप से प्रभावित किया है। १७८९ में अमरीका, जो कि एक छोटा, अंतरराष्ट्रीय राजनीति के प्रति उदासीन और सीधी-सादी कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाला राज्य था उसने विकसित होकर अत्यधिक औद्योगीकृत और सम्भवतया विश्व के सबसे अधिक शक्तिशाली राष्ट्र का [illegible] कर लिया है। अमरीकी क्षेत्र के विस्तार, जनसंख्या की वृद्धि, आर्थिक और [illegible] जिक संगठन की बढ़ती हुई जटिलता आदि तत्त्वों ने राष्ट्रीय सरकार के पक्ष में [illegible] सन्तुलन स्थापित कर दिया है। इन परिवर्तनों के परिणामस्वरूप [illegible] किये जाने के समय जो तत्त्व स्थानीय प्रकृति के थे, वे अपने [illegible] दृष्टि से राष्ट्रीय प्रकृति के बन गये हैं। यातायात, संचार के [illegible] के व्यापक विकास, महान यान्त्रिक प्रगति और अंतर्राष्ट्रीय [illegible] ऐसी समस्याओं को जन्म दिया, जिन्हें नियमित और नियन्त्रित [illegible] द्वारा प्रयत्न किया गया, लेकिन वे असफल रहे। नागरिकों के [illegible] की मांग की जाने लगी, जिन्हें प्रदान करने में राज्य [illegible] इच्छुक। क्रम-क्रम से राष्ट्रीय सरकार के द्वारा उन [illegible] किया गया, जिन्हें राज्य नहीं कर सकते थे और यहीं [illegible] केन्द्रीयकरण होता गया।

पुनर्निर्माण मे राष्ट्रपति और काग्रेस के कार्यों ने बढी हुई शक्तियो की परम्परा स्थापित की और बाद मे इन शक्तियो को कभी नहीं छोडा गया।"[1]

(३) निहित शक्तियो का सिद्धान्त और अय न्यायिक निणय—सघीय केद्रीयकरण की प्रवृत्ति को जन्म देने वाला एक सर्वाधिक महत्त्वपूण तत्त्व सर्वोच्च न्यायालय के निणय रहा है। केन्द्रीय सरकार द्वारा अपनी अधिकाश अतिरिक्त शक्ति सवैधानिक सशोधनो के माध्यम से नही, वरन सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गयी सवैधानिक व्याख्या से प्राप्त की गयी है और केन्द्रीय सरकार की शक्ति बढाने वाला एक महत्त्वपूण तत्त्व उनके द्वारा की गयी निहित शक्तियों के सिद्धान्त की खोज रहा है। केन्द्रीय सरकार को 'निहित शक्तियो के सिद्धान्त' के नाम पर अपनी शक्तिया बढाने का अवसर मिला और इसने शक्ति सन्तुलन निश्चित रूप से केन्द्र के पक्ष मे कर दिया। निहित शक्तिया के सिद्धान्त के अतिरिक्त भी सामान्यतया सर्वोच्च न्यायालय का दृष्टिकोण सविधान की उदार व्याख्या करते हुए केन्द्रीय शासन के पक्ष का समथन करने का ही रहा है।

(४) सहायता अनुदान (Grants in aid)—वतमान समय मे अमरीकी सघ के राज्यो की स्वायत्तता पर यदि प्रत्यक्ष रूप से किसी तत्त्व के द्वारा आघात किया गया है, तो वे केन्द्र द्वारा राज्यो को दिये जाने वाले सशत सहायता अनुदान ही है। १९वी सदी के अन्त तक अमरीकी सघ की इकाइया वित्तीय दृष्टि से लगभग आत्मनिभर थी और केन्द्र के द्वारा राज्यो को जो थोडी बहुत सहायता दी जाती थी, वह बिना किसी शत के होती थी। लेकिन वतमान समय मे केन्द्र द्वारा राज्यो को दिये जाने वाले सहायता अनुदानो की मात्रा बहुत बढ गयी है। १९०१ मे केन्द्र द्वारा राज्यो को ३ मिलियन डालर की सहायता दी गयी थी लेकिन १९५२ मे ३ हजार मिलियन डालर की आर्थिक सहायता प्रदान की गयी और इस प्रकार ५१ वर्षों मे यह सहायता एक हजार गुना हो गयी है। इसके अतिरिक्त वतमान समय मे यह सहायता शर्तों के साथ दी जाती है। उदाहरणाथ यह शत लगाई जाती है कि धनराशि उसी काय मे व्यय की जाय, जिसके लिए ली गयी है। केन्द्र द्वारा राज्यो के सम्बन्धित कार्यों का निरीक्षण और हिसाब की जाच की जा सकती है और केन्द्र को यह भी अधिकार रहता है कि यदि राज्य केन्द्र के आदेशो के अनुसार न चले, तो वह वित्तीय सहायता पर रोक लगा दे। 'नियन्त्रण डालर का अनुगमन करता है' (Control follows the dollar) यह बात इस सम्बन्ध मे पूणतया लागू होती है और राज्यो की केन्द्र पर वित्तीय निभरता बढने के साथ साथ उन पर सघीय नियन्त्रण भी बढता ही जा रहा है। लियोनाड ने तो इस सम्बन्ध मे यहा तक कहा है कि "जहाँ धन होता है वहा

1 'The broad acts of the President and Congress in carrying on the war and in the reconstruction that followed left a heritage of expanded federal powers never subsequently to be surrendered
—Griffith Ernest S, *The American System of Government* p 22

शक्ति होती है और जहा अधिक परिमाण मे धन होता है, वहा शक्ति भी अधिक होनी चाहिए। वित्तीय निभरता इस प्रकार की भी हो सकती है कि शक्ति का सवैधानिक विभाजन समाप्त हो जाय।"[1]

(५) अ तरराष्ट्रीय स्थिति—प्रथम महायुद्ध के पूव तक अमरीका यूरोपियन राजनीति के प्रति लगभग पूण उदासीन था, लेकिन महायुद्ध के समय मे ही स्थिति परिवर्तित होन लगी और द्वितीय महायुद्ध ने अ तरराष्ट्रीय राजनीति म अमरीका को प्रथम श्रेणी के राष्ट्र के रूप म प्रतिष्ठित किया। महायुद्ध के बाद शीतयुद्ध की जिस राजनीति का उदय हुआ, उसमे सयुक्त राज्य और सावियत रूस, एक दूसरे का विरोध करन के लिए तत्पर थे और सैनिक तत्परता की इस स्थिति मे केन्द्रीय सत्ता का शक्तिशाली होना अवश्यभावी था। लियोनार्ड ने कहा था कि 'रूसी भालू ही स्पष्ट रूप से वह राक्षस है जो हमे केन्द्र की ओर बढा रहा है।'[2] १९६४-७० तक अमरीका द्वारा वियतनाम युद्ध म भाग लिये जान के कारण सघीय केन्द्रीयकरण देखा गया और वतमान समय म राष्ट्रपति निक्सन ने साम्यवादी चीन आदि के प्रति विदेश नीति मे जो विस्मयकारी परिवतन किये, उनका भी प्रभाव सघीय केन्द्रीयकरण की वृद्धि म ही देखा गया है।

(६) केन्द्र के प्रति जनता का परिवर्तित दृष्टिकोण—अमरीकी सविधान का निर्माण होने के समय अमरीकी जनता म राज्यो की सत्ता के प्रति बहुत अधिक सम्मान था, लेकिन सविधान को कार्यरूप प्रदान करने के बाद जब जब अमरीकी राष्ट्र के जीवन मे सकट के अवसर आय, उस समय केन्द्र के द्वारा ही इन सकटो का सफलता पूवक सामना किया गया। १९३० के आर्थिक सकट के समय बेरोजगारी आदि की समस्याओ को राज्यो के द्वारा हल नही किया जा सका। राष्ट्रपति रूजवेल्ट न 'नव निर्माण आर्थिक नीति' (New Deal Economic Policy) अपनाकर ही इन्हे हल किया। इसी प्रकार प्रथम महायुद्ध मे राष्ट्रपति विल्सन और द्वितीय महायुद्ध मे फ्रैंकलिन डी० रूजवेल्ट ने अमरीकी राष्ट्र का सफलतापूवक नतृत्व किया। इन बातो के परिणामस्वरूप वतमान समय मे अमरीकी नागरिक राज्यो की अपेक्षा केन्द्र के प्रति ही श्रद्धा और सम्मान रखते हैं और प्रजातन्त्रात्मक व्यवस्था मे जनता की इस प्रवृत्ति न केन्द्र को और सबलता प्रदान की है।

इस प्रकार सयुक्त राज्य अमरीका के सघ मे केन्द्रीय सरकार की शक्तियो म निरन्तर वृद्धि होती रही है और श्वेमन ने तो इस सम्बन्ध मे कहा है कि 'सयुक्त

[1] Where there is money there is power, and where there is money on this scale there is substantial power There can be a type of fiscal dependence which can erase the constitutional division of power —D Leonard *The States and the Nation* p 18

[2] The most obvious giant pushing us towards the centre is the Russian bear —D Leonard *Ibid* p 24

राज्य अमरीका का सवधानिक इतिहास राज्यों की महत्वपूर्ण शक्तियो के केन्द्रीय सरकार को हस्तातरण की लम्बी प्रक्रिया है।"[1]

सघात्मक व्यवस्था का मूल्याकन

सयुक्त राज्य अमरीका मे सघीय केन्द्रीयकरण की इस प्रवृत्ति को देखकर अनेक पक्षा द्वारा यह विचार व्यक्त किया गया है कि अमरीका मे सघात्मक व्यवस्था सकट म पड गई है। सघीय केन्द्रीयकरण की इस प्रवृत्ति को देखते हुए लियोनार्ड ने भविष्य के सम्बन्ध मे कहा है कि "आगामी चौथाई शताब्दी मे राज्य खाली खोखले बन जायेंगे जो मुख्यतया सघीय विभागो के ग्रामीण जिलो के रूप मे काय करेंगे तथा जो अपने भरण पोषण के लिए सघीय कोष पर निभर करेंगे।"[2] रोसे ड्रमण्ड का तो विचार है कि सघीय व्यवस्था समाप्त ही हो चुकी है। उनके ही शब्दो म "वास्तविक रूप मे हमारी सघीय व्यवस्था अब अस्तित्व में नही है और उसे पुन अस्तित्व मे लाने की अब कोई सम्भावना भी नहीं है।"[3]

लेकिन लियोनाड या रोसे ड्रमण्ड जस लेखको द्वारा किया गया अमरीकी राजनीतिक व्यवस्था का यह मूल्यांकन सही नही है। राज्य अमरीकी राजनीतिक व्यवस्था क महत्वपूण तत्व हैं और वे इस रूप म बने रहग। वस्तुस्थिति यह है कि अमरीका जैसे विशाल और आर्थिक तथा भौतिक विविधताओ से परिपूण देश म एकात्मक व्यवस्था कभी भी काय कर ही नहीं सकती। अमरीकी सघ के राज्य सघात्मक व्यवस्था की स्वायत्त प्रशासनिक इकाइया बनी रहेगी, यह इस मनोवैज्ञानिक आधार पर भी कहा जा सकता है कि यद्यपि अमरीकी नागरिको मे केन्द्र के प्रति सम्मान बढा है, किन्तु अपने अपने राज्यो के प्रति सम्मान और लगाव की भावना अब भी उनमे बनी हुई है। सघीय केन्द्रीयकरण हुआ है, लेकिन इसके साथ ही यह भी तथ्य है कि स्थानीय, राज्यिक और राष्ट्रीय सभी स्तरो पर शासन की शक्तियो म वृद्धि हुई है और राज्य सरकारो न भी अपने लिये कुछ नवीन कायक्षेत्र ढूढ लिये है। राज्य सरकारो के भी कायक्षेत्र म वृद्धि हुइ है, इसका प्रमाण यह है

1 American constitutional history has been one long process of transferring the more important functions of government from the states to the Union
—D W Brogan *The American Political System* p 12

2 In another quarter century the states may be left hollow shells operating primarily as field districts of federal departments and dependent upon *the federal treasury for the support*
—White Leonard, D *The States and the Nation*, p 3

3 In point of fact our federal system no longer exists and has no more chance of being brought back into existence than an apple pie can be put back on the apple tree —*R Drummand Are We Maintaining our Federal System in State Governments* Vol XXII, No 1

कि १९१५ मे सभी राज्यो के द्वारा किया जाने वाला कुल व्यय ५०० मिलियन डालर था, जो १९६० मे बढकर १५ हजार मिलियन डालर हो गया, अर्थात ३० गुना बढ गया है। चुनाव व्यवस्था और पुलिस प्रशासन पर राज्या को ही नियन्त्रण प्राप्त है, दीवानी और फौजदारी कानूनो पर उनका ही नियन्त्रण है और शिक्षा भी वे ही प्रदान करती हैं। स्थानीय स्वशासन का सचालन उन्ही के द्वारा किया जाता है और सुसगठित राजनीतिक दलो की जड राज्यो म ही है। वस्तुत जैसा कि मुनरो न कहा है—"राज्य अब भी वे धुरी हैं जिनके आसपास अमरीका का सम्पूण राजनीतिक चक्र घूमता है।"[1] सघीय केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति सघात्मक व्यवस्था के लिए भय का कारण नही है यह इस आधार पर भी कहा जा सकता है कि वतमान समय म न केवल अमरीकी सघ वरन विश्व के सभी सघ राज्यो म यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है।

सघात्मक व्यवस्था में केन्द्र और राज्या के पारस्परिक सम्बन्धो का रूप परिवर्तित होता रहता है और वस्तुस्थिति यह है कि अमरीकी सघ उस स्थिति से गुजर चुका है, जिसमे केन्द्र और इकाइयो को एक दूसरे का प्रतिद्वन्द्वी समझा जाता था, अब अमरीकी सघ ने सहयोगात्मक सघात्मकता' (Co operative Federalism) की स्थिति म प्रवेश किया है, जिसम केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारो ने अपन साझी वित्तीय साधनो के बल पर अनेक योजनाओ को अपनाया है। इन योजनाओ की वास्तविक क्रियान्विती म पर्याप्त विकेन्द्रीकरण है और इन योजनाओ के आधार पर राज्य सरकारो ने केन्द्रीय सरकार के अनुभव और व्यवस्था से लाभ उठाया है। यह स्थिति केन्द्र राज्य सम्बन्धो को एक नया और पारस्परिक सहयोगात्मक रख प्रदान कर सघात्मक व्यवस्था को सबलता प्रदान करने वाली है। अमरीकी राजनीति मे सघात्मक व्यवस्था पूणतया सुरक्षित है और राज्यों की स्वायत्तता या सघात्मक व्यवस्था के लिए भय का कोई कारण नहीं है।

अमरीकी और स्विस सघीय व्यवस्था की तुलना

अमरीकी सघीय व्यवस्था की स्विस सघीय व्यवस्था से तुलना सर्वाधिक उपयुक्त और ज्ञानप्रद कही जा सकती है। इन दोनो देशो की सघात्मक व्यवस्थाओ मे निम्न समानताएँ देखी जा सकती ह

(१) सयुक्त राज्य अमरीका और स्विटजरलण्ड दोना ही राज्यो मे सघात्मक व्यवस्था को एक समान परिस्थितियो म और एक ही भावना—सुरक्षा की भावना—के साथ अपनाया गया। अमरीका क मूल १३ राज्य जिस प्रकार ब्रिटेन और स्पेन के साम्राज्यवादी प्रभाव स बचने के लिए एकता के सूत्र मे बधे थे, उसी प्रकार स्विस कण्टन यूरोप के पडौसी राज्यो के प्रभाव से बचने के उद्देश्य स एक सघ म बध गय।

[1] The states are still the pivots around which the whole American political system revolves
—W B Munro, *The Government of the United States* p 58

(२) दोनों राज्यों में संघ की स्थापना के पूर्व परिसंघ (Confederation) की स्थापना की गई थी और परिसंघ की निर्बलता को देखकर ही उनके द्वारा संघ को अपनाया गया।

(३) दोनों राज्यों में संघ की स्थापना के पूर्व आज के संघ की इकाइयाँ सम्प्रभुतासम्पन्न राज्य थी और उनके द्वारा केन्द्रोन्मुखी (Centripetal) प्रवृत्ति के आधार पर संघ का निर्माण किया गया। इस प्रकार दोनों संघ राज्य और दोनों संघ राज्यों के संविधानों में किया गया शक्ति विभाजन इकाइयों द्वारा किये गये स्वच्छिक समझौते का परिणाम है। दोनों संघ राज्यों में अवशिष्ट शक्तियाँ इकाइयों को प्रदान की गई हैं, संघ को नहीं।

(४) दोनों संघ राज्यों में इकाइयों के द्वारा संघ से सम्बन्ध विच्छेद नहीं किया जा सकता, किन्तु इसके साथ ही दोनों संघ राज्यों में केन्द्रीय सरकार को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि उसके द्वारा इकाइयों की सीमाओं में परिवर्तन किया जा सके। इस आधार पर इन दोनों ही संघ राज्यों को 'अक्षुण्ण इकाइयों का अक्षुण्ण संघ' (Indestructible Union of Indestructible Units) कहा जा सकता है। भारत में इकाइयाँ तो संघ से सम्बन्ध विच्छेद नहीं कर सकतीं, लेकिन केन्द्र इकाइयों की सीमाओं में परिवर्तन कर सकता है।

(५) अमरीकी संघीय व्यवस्था के समान ही स्विस संघीय व्यवस्था में भी इकाइयों की समानता के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है। अमरीकी सीनेट में जिस प्रकार प्रत्येक इकाई के द्वारा अपने दो प्रतिनिधि भेजे जाते हैं, उसी प्रकार स्विट्जरलैण्ड की राज्यपरिषद में प्रत्येक पूर्ण कैण्टन के द्वारा दो और अर्द्ध-कैण्टन के द्वारा अपना एक प्रतिनिधि भेजा जाता है।

(६) यद्यपि दोनों राज्यों के संविधानों की संशोधन प्रक्रिया में कुछ भेद है, लेकिन दोनों संघ राज्यों के संविधान में संशोधन के प्रत्येक प्रस्ताव पर इकाइयों की पुष्टि प्राप्त होना आवश्यक है।

असमानताएँ—स्विस और अमरीकी सघीय व्यवस्था मे कुछ समानताएँ अवश्य हैं, लेकिन ये एक दूसरे के प्रतिरूप नही हैं। इन दोनो राज्यो की सघात्मक व्यवस्था मे निम्न असमानताएँ प्रमुख हैं

(१) अमरीकी और स्विस सघ की दोनो इकाइया को अपने पृथक पृथक सविधान बनाने का अधिकार दिया गया है, किन्तु अमरीकी सघ मे इस सम्बन्ध मे इकाइयो पर दो प्रतिबन्ध हैं, जबकि स्विस इकाइयो पर तीन प्रतिबन्ध है। दोनो सघ राज्या मे जरूरी है कि इकाइयो के विधान मे सघीय विधान के विरुद्ध कोई बात न हो और इकाइया द्वारा गणतन्त्रात्मक व्यवस्था को अपनाया जाय। लेकिन स्विटजरलण्ड म इकाइया के सविधान पर यह भी प्रतिबन्ध है कि इकाइयो का सविधान जनता द्वारा स्वीकृत और सशोधित होना चाहिए।

(२) दोनो सघ राज्या म एक महत्त्वपूण भेद न्यायपालिका की शक्ति के सम्बन्ध मे है। सयुक्त राज्य अमरीका की न्यायपालिका को सघीय काग्रेस तथा इकाइया के विधानमण्डलो द्वारा निर्मित विधियो की सवधानिकता की जाच करने, तथा यदि वे सविधान के प्रतिकूल हो, तो उन्हे अवैधानिक घोषित करने का अधिकार प्राप्त है, लेकिन स्विटजरलैण्ड के सघीय न्यायालय द्वारा केवल कण्टनो के विधान-मण्डलो द्वारा निर्मित कानूनो की वैधानिकता की ही जाच की जा सकती है, सघीय विधानमण्डल द्वारा निर्मित कानूनो की वैधानिकता की जाँच सघीय न्यायालय नही कर सकता।

(३) यद्यपि दोनो ही देशो के सविधाना द्वारा शक्ति विभाजन किया गया है, किन्तु जहाँ अमरीकी सविधान मे शक्ति विभाजन एक सूत्र म किया गया है, वहाँ स्विस सविधान मे सघीय सरकार के अधिकारो का उल्लख यत्र-तत्र किया गया है।

(४) सयुक्त राज्य अमरीका मे सभी सघीय विषयो के प्रशासन का काय सघीय सरकार के पदाधिकारियो द्वारा ही किया जाता है, परन्तु इस सम्बन्ध म स्विट्जरलण्ड की व्यवस्था भारत के ही समान है। स्विट्जरलैण्ड मे माप-तौल, अन्न भण्डारो की व्यवस्था और विशुद्ध भोजन स्तर आदि सघीय विषयो का प्रशासन कण्टन के लोक सेवको द्वारा होता है। सघीय सरकार इन विषयो के प्रशासन पर केवल देख रेख ही रखती है।

(५) यद्यपि दोना सघ राज्या मे सवैधानिक सशोधन की पुष्टि इकाइयो द्वारा की जाना आवश्यक है, लेकिन सवैधानिक सशोधन के विषय म अमरीकी सघ को इकाइयों को अधिक शक्ति प्राप्त है। अमरीका मे सशोधन की पुष्टि तो इकाइयो द्वारा की जाना आवश्यक है ही, इकाइयो के द्वारा सशोधन प्रस्तावित करने का कार्य भी किया जा सकता है। स्विस सघ मे इकाइयाँ सशोधन प्रस्तावित नही कर सकती है।

(६) अमरीकी सघ की न्यायपालिका के अन्तगत सर्वोच्च न्यायालय के आधीन सघीय अपील न्यायालयो और सघीय जिला न्यायालयो की व्यवस्था की गई

है, लेकिन स्विटजरलण्ड मे सघीय यायपालिका के रूप मे सघीय न्यायालय ही है, अमरीका की भाँति यहा कैण्टनो मे उपसघीय न्यायालय नही है।

(७) अमरीकी सघ म दोहरी नागरिकता की व्यवस्था की गई है—सघ की नागरिकता और राज्य की नागरिकता। स्विस सघ मे प्रत्येक व्यक्ति को तीन नागरिकताएँ प्राप्त होती हैं—सघ की नागरिकता, कैण्टन की नागरिकता और कम्यून की नागरिकता।

प्रश्न

१ सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान के मुख्य सघीय लक्षण बतलाइए। सघ राज्य मे प्रभुता कहाँ निवास करती है? (आगरा, १९६३)

२ निहित शक्ति के सिद्धान्त का उदाहरण सहित वणन और स्पष्टीकरण कीजिए। (राजस्थान, १९६९)

३ स्विस सघीय शासन की तुलना अमरीकी सघीय शासन से कीजिए। (विक्रम, १९६७)

४ अमरीकी सघवाद की क्या मुख्य विशेषताएँ हैं? (गोरखपुर, १९७०)

4

संघीय कार्यपालिका—अमरीका का राष्ट्रपति
(FEDERAL EXECUTIVE—THE PRESIDENT OF U S A)

'मंगल ग्रह से आने वाला व्यक्ति अमरीका के संविधान को पढ़ते हुए समझेगा कि राष्ट्रपति एक निर्बल कार्यपालिका है जो बहुत सीमा तक कांग्रेस की इच्छा के आधीन है। वह अमरीका की शासन प्रणाली को कांग्रेस की सरकार कहेगा। परन्तु उन शक्तिशाली व्यक्तियों (जफरसन, जक्सन, लिंकन, क्लीवलैण्ड, थियोडर रूजवेल्ट, विल्सन और फ्रेंकलिन रूजवेल्ट) जिन्होंने इस पद को धारण किया, इस पद को अत्यन्त शक्तिशाली कार्यपालिकाओं में से एक बना दिया है।'[1]

—फरगुसन और मक हेनरी

राष्ट्रपति पद

अमरीकी संविधान में राष्ट्रपति की शक्ति का उल्लेख संविधान के अनुच्छेद २ के एक छोटे से वाक्य में किया गया है जिसमें कहा गया है कि 'अमरीकी संघ की कार्यपालिका शक्ति एक राष्ट्रपति में निहित होगी।'[2] लेकिन संविधान के इस वाक्य से राष्ट्रपति की स्थिति स्पष्ट नहीं होती। 'वस्तुतः कोई भी महत्त्वपूर्ण संस्था वैसी ही नहीं रहती, जैसी कानून उसे बनाता है' यह कथन सबसे अधिक प्रमुख रूप में अमरीकी राष्ट्रपति के सम्बन्ध में कहा जा सकता है। फिलाडेल्फिया सम्मेलन के सदस्य नागरिक अधिकारों तथा स्वतन्त्रता और राज्यों की सत्ता को बनाये रखने के बहुत अधिक इच्छुक थे और राष्ट्रपति पद को बहुत अधिक शक्तिशाली नहीं बनाने

1 "The man from Mars reviewing the American constitution, might see the President as a weak executive subject to a large extent to the will of Congress He might call our system as did the young Woodrow Wilson, Congressional Government but the forceful men who have held Presidency—Jefferson Jackson Lincoln, Cleveland Theodore Roosevelt Wilson and Franklin Roosevelt—have built the office into one of the most powerful executive posts in the modern world"
—Fergerson and McHenry
The American Federal Government p 310

2 'The executive powers shall be vested in a President
—*Article 2 of the American Constitution*

देना चाहते थे। लेकिन सविधान लागू किये जाने के बाद से लेकर अब तक राष्ट्रपति की शक्ति म निरन्तर वृद्धि होती रही है और श्लेसिंगर के शब्दो मे कहा जा सकता है कि "वाशिंगटन के समय से लेकर अब तक प्रत्येक राष्ट्रपति पदधारी ने इसे अधिक शक्तिशाली बनाने मे योग दिया है।"[1] और ऑग के शब्दो मे, "अमरीका का राष्ट्रपति ससार का सबसे महान शासक हो गया है।"[2] इसी प्रकार मुनरो ने लिखा है कि "अब तक एक लोकतन्त्र में किसी भी व्यक्ति ने इतनी अधिक सत्ता का प्रयोग नहीं किया जितनी कि अमरीकी राष्ट्रपति करता है।"[3]

राष्ट्रपति पद के लिए योग्यताएँ

राष्ट्रपति पद की योग्यताओं का उल्लेख सविधान के अनुच्छेद २ की उपधारा १ मे किया गया है, जिसम कहा गया है कि राष्ट्रपति पद के लिए वही व्यक्ति पात्र होगा जो (i) सयुक्त राज्य अमरीका का जन्मजात नागरिक हो, (ii) उसकी आयु ३५ वर्ष से कम न हो और (iii) वह सयुक्त राज्य अमरीका का कम से कम १४ वर्ष तक निवासी रहा हो। इस सम्बन्ध मे उसके लिए लगातार १४ वर्ष तक अमरीका मे रहना आवश्यक नही है, वरन कुल मिलाकर उसके द्वारा अपने जीवन के १४ वर्ष अमरीका मे व्यतीत किये हुए होने चाहिए।

व्यावहारिक स्थिति के सम्बन्ध मे लार्ड ब्राइस ने लिखा है कि राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार कोई ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो सार्वजनिक जीवन के किसी क्षेत्र मे कोई विशेष कार्य करने के लिए प्रसिद्ध रहा हो। वह कांग्रेस का सदस्य, राज्य का गवर्नर, किसी बडे नगर का मेयर, मन्त्रिमण्डल का सदस्य, राजदूत, न्यायाधीश अथवा असाधारण रूप से प्रसिद्ध पत्रकार हो सकता है।" व्यवहार मे अन्तर्गत महत्त्वपूर्ण और घनी आबादी वाले राज्य के निवासी के इस पद पर चुने जाने के अवसर अधिक रहते हैं।

वेतन, भत्ते और अन्य सुविधाएँ—राष्ट्रपति के वेतन भत्ते निर्धारित करने का अधिकार कांग्रेस को प्राप्त है। राष्ट्रपति के कार्यकाल मे उसके वेतन भत्तो मे कमी या बढोत्तरी नहीं की जा सकती है। इस विषय म जो भी परिवर्तन करने हो, वे नवीन राष्ट्रपति के कार्यकाल के प्रारम्भ से ही किये जा सकते हैं। १९०९ और १९४९ के बीच मे राष्ट्रपति का वार्षिक वेतन ७५ हजार डालर था जिसम क्रमश बढोत्तरी की गई और जनवरी १९६९ मे निक्सन द्वारा राष्ट्रपति पद ग्रहण करने

1 From Washington s time onward each conceived of the office in heroic proportions and each left it more powerful and influential than he found it' —*Arthur M Schlesinger, Quoted* from William H Riker *Democracy in the U S A*, p 201

2 The American President has become the greatest ruler of the world' —*Ogg*

3 ' The President of U S A exercises the largest amount of authority ever wielded by any man in a democracy —W B Munro, *Government of the United States*, p 164

की तिथि से कानून द्वारा २ लाख डालर वार्षिक वेतन निश्चित किया गया है। यह वार्षिक वेतन कर मुक्त नही है। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति को अपने पद के सम्मान के अनुकूल अन्य अनेक सुविधाएँ भी प्राप्त होती हैं, जिसमे निजी हवाई जहाज और छोटे से समुद्री जहाज की सुविधा भी सम्मिलित है। राष्ट्रपति के निवास स्थान के खर्च हेतु बजट मे अलग व्यवस्था की जाती है।

उन्मुक्तियाँ (Immunities)—अन्य देशो के कार्यपालिका प्रधानो की भाति ही राष्ट्रपति को कुछ उन्मुक्तिया भी प्राप्त होती हैं। यद्यपि सविधान मे इस सम्बन्ध मे कुछ नहीं कहा गया है, फिर भी परम्परा के अनुसार उसे किसी भी अपराध के आरोप पर गिरफ्तार नही किया जा सकता। उसके विरुद्ध परमादेश (Mandamus) या आदेश (Injunctions) भी जारी नही किये जा सकते हैं। उसे किसी न्यायालय मे साक्षी या प्रतिवादी के रूप मे उपस्थित होने के आदेश नही दिये जा सकते, केवल सीनेट मे उसे महाभियोग के समय बुलाया जा सकता है। एक बार राष्ट्रपति जैफरसन को साक्षी के लिए बुलाया गया था, परन्तु उन्होने उपस्थित होने से इन्कार कर दिया। राष्ट्रपति स्वेच्छा से किसी न्यायालय मे साक्षी के रूप मे उपस्थित हो सकते है।

कार्यकाल—फिलाडेल्फिया सम्मेलन मे राष्ट्रपति पद के कार्यकाल पर बहुत अधिक मतभेद थे, अन्त मे पर्याप्त वादविवाद के बाद सविधान के अनुच्छेद २ की उपधारा १ मे निश्चित किया गया कि राष्ट्रपति का कार्यकाल ४ वर्ष होगा तथा पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध नही होगा। लेकिन प्रथम राष्ट्रपति वाशिंगटन ने तीसरी बार राष्ट्रपति पद का चुनाव लडने से इन्कार कर दिया और इस प्रकार यह परम्परा स्थापित की गयी कि राष्ट्रपति दो अवधियो से अधिक अपने पद पर नही रहेगा। राष्ट्रपति जफरसन (१८०१ १८०६), जेम्स मेडीसन (१८०६-१८१७), जेम्स मुनरो (१८१७-२५) तथा एण्ड्रयू जक्सन (१८२६-३७) ने भी तीसरी अवधि का विरोध किया। ये सभी व्यक्ति इतने लोकप्रिय थे कि तीसरी बार भी राष्ट्रपति चुने जा सकते थे। राष्ट्रपति थियोडर रूजवेल्ट (१९०१ १९०९) ने इस परम्परा को तोडने का प्रयत्न किया, किन्तु तीसरी बार वे चुनाव मे पराजित हो गये। इस प्रकार यह परम्परा भलीभाँति स्थापित हो गयी थी कि राष्ट्रपति तीसरी बार चुनाव नही लडेगा। परन्तु राष्ट्रपति फ्रेंकलिन डी० रूजवेल्ट ने १९४० मे तीसरी बार और १९४४ मे चौथी बार चुनाव लडकर इस परम्परा को तोडा। परन्तु चौथी अवधि पूरी करने के पूर्व ही अप्रैल १९४५ मे उनका निधन हो गया। १९४६ में कांग्रेस के चुनाव मे रिपब्लिकन पार्टी को बहुमत प्राप्त हुआ और उस दल ने राष्ट्रपति की तीसरी अवधि के विरुद्ध सविधान मे सशोधन विधेयक रखा। कांग्रेस द्वारा पारित करने और राज्यो द्वारा अनुसमर्थन कर दिये जाने पर १ मार्च, १९५१ को सविधान मे यह २२वां सशोधन हो गया। २२वें सशोधन के अनुसार एक ही व्यक्ति तीसरी बार राष्ट्रपति पद पर नही चुना जा सकता है। इसके साथ ही यदि कोई व्यक्ति

जब उपराष्ट्रपति पद पर कार्य कर रहा था, तभी राष्ट्रपति पद रिक्त हो गया और उसी समय उसके द्वारा राष्ट्रपति पद पर कार्य किया गया, जैसा कि फ्रेंकलिन डी० रूजवेल्ट के निधन पर ट्रूमैन द्वारा और कनेडी के निधन पर लिंडन बी० जॉनसन द्वारा पद धारण किया गया, तो उसका कुल कार्यकाल १० वर्ष से अधिक नहीं हो सकता है। इसी संशोधन के अनुसार युद्धकाल में कांग्रेस के द्वारा राष्ट्रपति से चुनाव लड़कर तीसरी बार राष्ट्रपति पद धारण करने के लिए आग्रह किया जा सकता है।

राष्ट्रपति का निर्वाचन

ब्रिटिश राजनीति का सर्वाधिक आकर्षक तत्त्व यदि सम्राट का पद और व्यक्तित्व है, तो अमरीकी राजनीति का सर्वाधिक रंगीन और आकर्षक तत्त्व अमरीकी राष्ट्रपति का निर्वाचन है। राष्ट्रपति पद पर आसीन व्यक्ति से लेकर साधारण से साधारण व्यक्ति द्वारा इसमें रुचि ली जाती है और इस चुनाव के राष्ट्रव्यापी प्रचार एवं भव्यता का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि **१९७२ में उम्मीदवारों द्वारा इस पद के चुनाव अभियान में ४० करोड़ डालर की धनराशि का व्यय किया गया।**

राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रक्रिया पर अमरीकी संविधान सभा में बहुत अधिक मतभेद था। इस सम्बन्ध में प्रमुख रूप से दो सुझाव दिये गये थे। प्रथम, राष्ट्रपति जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित हो, किन्तु संविधान सभा द्वारा इसे अस्वीकार कर दिया गया, क्योंकि प्रत्यक्ष निर्वाचन राजनीतिक दलबन्दी में फंसे बिना सम्भव नहीं था और संविधान निर्माता राजनीतिक दलबन्दी को देश के लिए घातक मानते थे तथा कम से कम देश की कार्यपालिका के प्रधान को दलबन्दी से बाहर रखना चाहते थे। दूसरा सुझाव यह था कि राष्ट्रीय व्यवस्थापिका राष्ट्रपति का निर्वाचन करे। किन्तु इसे इस दृष्टि से उचित नहीं समझा गया कि राष्ट्रपति व्यवस्थापिका के हाथों का खिलौना बन जायगा। इसके अतिरिक्त अमरीकी संविधान सभा के सदस्य शक्ति विभाजन के सिद्धान्त से अत्यधिक प्रभावित थे और यह पद्धति शक्ति विभाजन सिद्धान्त के विरुद्ध होती। संविधान सभा के द्वारा अन्त में यह निश्चित किया गया कि राष्ट्रपति का निर्वाचन जनता द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से हो। इस अप्रत्यक्ष निर्वाचन के अन्तर्गत जनता द्वारा एक निर्वाचक मण्डल का चुनाव किया जाय और निर्वाचक मण्डल के द्वारा राष्ट्रपति का। संविधान में राष्ट्रपति के निर्वाचन के सम्बन्ध में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य अपनी व्यवस्थापिका के आदेशानुसार निर्वाचक चुने, जिनकी संख्या उस राज्य की सीनेट और प्रतिनिधि सभा के प्रतिनिधियों के बराबर हो। समय आने पर ये निर्वाचक अपने-अपने राज्य में एक स्थान पर एकत्रित हों और लिखित रूप में अपने मत दो व्यक्तियों को दें, जिसमें से कम से कम एक उस राज्य का निवासी न हो, जिस राज्य की ओर से वे निर्वाचक नियुक्त किये गये हैं। उसके बाद मतों को एक पटिका में मुहर लगाकर सीनेट के

अध्यक्ष के पास भेज दिया जाय, जो कांग्रेस के दोनो सदनो की उपस्थिति मे उन्हे गिनकर परिणाम की घोषणा करे। जिस व्यक्ति को सबसे अधिक मत प्राप्त हो, वह राष्ट्रपति निर्वाचित होगा, बशर्ते कि उसे मतो का पूर्ण बहुमत भी प्राप्त हो। उससे कम मत पाने वाला व्यक्ति उसी प्रकार बहुमत पाने पर उपराष्ट्रपति निर्वाचित हो।"

सविधान द्वारा की गयी इस व्यवस्था मे कुछ सशोधन हो गये हैं और व्यवहार मे तो यह पद्धति नितान्त परिवर्तित हो गयी है। प्रथमत, सविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के लिए एक साथ मतदान की व्यवस्था की गयी थी, लेकिन १८०० मे इस सम्बन्ध मे कठिनाई उत्पन्न हुई। १८०० के चुनाव मे यद्यपि निर्वाचको ने स्पष्ट कर दिया था कि जफरसन राष्ट्रपति और बर उपराष्ट्रपति होने चाहिए, किन्तु दोनो को निर्वाचक मण्डल के ७३ ७३ मत मिले और टाई पड गई। अत सविधान के १२वें सशोधन द्वारा दोनो के लिए अलग अलग मतदान की व्यवस्था कर दी गयी।

इस प्रक्रिया म दूसरा परिवर्तन सविधान के २३वें सशोधन द्वारा किया गया। इस सशोधन द्वारा कोलम्बिया जिले को भी निर्वाचक मण्डल के ३ सदस्य चुनने का अधिकार दिया गया। यद्यपि कोलम्बिया जिले को कांग्रेस मे प्रतिनिधित्व प्राप्त नही है, क्योकि कोलम्बिया एक जिला है राज्य नही। इस प्रकार वर्तमान समय मे निर्वाचक मण्डल के सदस्य ५३८ है (३ कोलम्बिया के प्रतिनिधि तथा वर्तमान समय म कांग्रेस मे ५३५ सदस्य है, ४३५ सदस्य प्रतिनिधि सभा म और १०० सीनेट मे)।

सविधान निर्माताओ द्वारा उपरोक्त पद्धति अपनाते हुए आशा की गयी थी कि राष्ट्रपति का निर्वाचन शान्त वातावरण म सम्भव हो सकेगा, किन्तु १८०० म ही अमरीका म राजनीतिक दलो का उदय हो गया और इन दलो ने निर्वाचक मण्डल के लिए अपने उम्मीदवार खडे करने शुरू कर दिये। राजनीतिक दलो के समर्थन स निर्वाचक मण्डल के जो सदस्य चुन जाते हैं, वे राष्ट्रपति पद हेतु अपने ही राजनीतिक दल के उम्मीदवार का समर्थन करने के लिए वचनबद्ध होते है। इस तथ्य ने राष्ट्रपति के निर्वाचन को अप्रत्यक्ष निर्वाचन से प्रत्यक्ष निर्वाचन मे परिवर्तित कर दिया है। इस प्रकार वर्तमान समय मे राष्ट्रपति का निर्वाचन न तो शान्त वातावरण मे सम्पन्न होता है और न ही यह निर्वाचन वस्तुत अप्रत्यक्ष निर्वाचन रहा है। लास्की ने इस सम्बन्ध म लिखा है कि 'सविधान निर्माताओ ने राष्ट्रपति के निर्वाचन की जो विधि अपनायी थी, उस पर उन्हे विशेष रूप से गर्व था परन्तु उनकी आशाओ मे से इससे अधिक और कोई आशा भग नहीं हुई है।"[1]

[1] The founders of the constitution were especially proud of the method they adopted for choosing the President but none of expectations has been more decisively disappointed
—Laski, Harold J *The American Presidency*

वर्तमान समय मे राष्ट्रपति के निर्वाचन मे अपनाई जाने वाली पद्धति के प्रमुखतया पाच चरण है, जिनका उल्लेख इस प्रकार है

(१) **उम्मीदवारो का मनोनयन** (Nomination of the Candidates)—राष्ट्रपति के निर्वाचन का प्रथम चरण देश के विविध राजनीतिक दलो द्वारा राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारो का मनोनयन है। १८४० के पूर्व राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारो का ममोनयन दल विशेष के सीनेटर और प्रतिनिधि सभा के सदस्य अपनी अनौपचारिक बैठक (Caucus) मे कर लेते थे। परन्तु इस पद्धति मे दल के सामान्य सदस्यो की राय का कोई महत्त्व नही रहता था और इससे उन राज्यो की भी इच्छाएँ नही जानी जा सकती थीं, जहा दल अल्पमत म होता था। १८२४ मे जब इस 'काकस' ने लोकप्रिय उम्मीदवार एण्ड्रयू जक्सन को नामजद करना अस्वीकार कर दिया, तो उम्मीदवार छाँटने की इस पद्धति का विरोध प्रारम्भ हुआ, जो क्रमश बढता ही गया। अत १८४० से रिपब्लिकन और डेमोक्रेटिक दोनो राजनीतिक दलो के उम्मीदवारो का मनोनयन विविध राजनीतिक दलो के अखिल देशीय सम्मेलनो द्वारा किया जाने लगा।

उम्मीदवारो के मनोनयन की यह पद्धति परम्परा के आधार पर अपनाई गई है और इस सम्बन्ध म सविधान म कुछ भी नही कहा गया है। प्रत्येक दल की राष्ट्रीय समिति अपने अपने दल के सम्मलन के लिए समय और स्थान का निर्णय करती और प्रारम्भिक व्यवस्था करती है। प्रत्येक दल के राष्ट्रीय सम्मेलन के लिए प्रतिनिधि विभिन्न उपायो के द्वारा चुने जाते है। कुछ प्रारम्भिक क्षेत्रो से, कुछ राज्य सम्मेलनो से और कुछ केन्द्रीय समितियो द्वारा। इन प्रतिनिधियो की सख्या सामान्यतया १,५०० और ३,००० के बीच होती है। चुनाव वर्ष के जुलाई या अगस्त के महीने म एक बडे हाल म यह सम्मेलन होता है। सम्मेलन बहुत अधिक उत्तेजना और शोर शराब के वातावरण मे होता है और सम्मेलन मे ही दल के प्रमुख नेतागण परस्पर सौदेबाजी करते रहते हैं।

सम्मेलन म प्रत्येक उम्मीदवार का नाम उसके किसी समर्थक द्वारा ओजस्वी भाषण के साथ प्रस्तावित किया जाता है फिर कोई अन्य व्यक्ति इसका समर्थन करता है और सभी उम्मीदवारो के सम्बन्ध म ऐसा ही होता है। सम्मेलन म नियमित प्रतिनिधियो के अतिरिक्त कुछ वकल्पिक प्रतिनिधि भी होते हैं जो नियमित प्रतिनिधियो की अनुपस्थिति मे मतदान म भाग लेते हैं। दल के द्वारा उम्मीदवार चुने जाने के लिए आवश्यक है कि वह प्रतिनिधियो के मतो का पूर्ण बहुमत प्राप्त करे। यदि किसी भी उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो, तो जिन उम्मीदवारो को पहले मतदान मे बहुत थोडे मत प्राप्त हुए थे उनको छोड दिया जाता है और पुन मतदान होता है। मतदान की प्रक्रिया किसी उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत प्राप्त होने तक जारी रहती है। कई बार मतदान के अनेक दौर होते हैं। उदाहरण स्वरूप, १८८० मे रिपब्लिकन दल के राष्ट्रीय सम्मेलन म गारफील्ड के मनोनयन

हेतु ३६ बार मतदान हुआ और १६२४ मे डेमोक्रेटिक दल के राष्ट्रीय सम्मेलन मे जान डेविड के मनोनयन हेतु १०३ बार मतदान करना पडा।

उपराष्ट्रपति पद के लिए मनोनयन—उपराष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवारो की नामजदगी भी राष्ट्रपति पद के समान ही होती है। सयुक्त राज्य अमरीका म अब इस सम्बन्ध मे यह परम्परा स्थापित हो गयी है कि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति पद के उम्मीदवार न केवल अलग-अलग राज्यो वरन दो अलग-अलग क्षेत्रो स होने चाहिए। इसका अथ यह है कि यदि राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार उत्तरी राज्यो से है तो उपराष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार दक्षिणी राज्यों से होना चाहिए। उपराष्ट्रपति पद के लिए प्राय कडा सघप नही होता और शीघ्र ही कोई न कोई उम्मीदवार स्पष्ट बहुमत प्राप्त कर इस पद के लिए दल का उम्मीदवार बन जाता है।

(२) चुनाव अभियान (Election Campaign)—सम्मेलन समाप्त होने के पूव राष्ट्रपति पद के लिए मनोनीत उम्मीदवार द्वारा अपन दल की एक राष्ट्रीय समिति चुनी जाती है। यह समिति अपना एक प्रधान और एक कोषाध्यक्ष चुनती है। यह समिति अपने दल के उम्मीदवार के परामश से राज्यो मे अपने दल के उम्मीदवार क पक्ष म तीव्र अभियान चलाती है। यद्यपि चुनाव कानून के अनुसार राष्ट्रपति के चुनाव अभियान पर अधिकतम खच ३० लाख डालर ही हो सकता है, परन्तु इसका उल्लघन करने वाला के विरुद्ध कोई कानूनी कायवाही नही की जाती। चुनाव अभियान की भव्यता का अनुमान इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि अनुमानत १६७२ मे राष्ट्रपति के चुनाव पर ४० करोड डालर की धनराशि का व्यय किया गया।[1] चुनाव अभियान के प्रमुख साधन टलीविजन, रेडियो, ट्रेन, समाचार पत्र और अपने उम्मीदवार के पक्ष म विविध प्रकार के साहित्य का प्रकाशन है।

(३) निर्वाचक मण्डल का चुनाव (Election of the Electoral College)—इसके बाद दोनो दलो द्वारा निर्वाचक मण्डल के लिए अपने उम्मीदवार खडे किये जात है। निर्वाचक मण्डल के इन उम्मीदवारो को शपथ लेनी होनी है कि चुने जाने पर व राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव म अपन ही दल के उम्मीदवारा को मत देंगे। २३वें सशोधन द्वारा कोलम्बिया जिले को निर्वाचक मण्डल के लिए तीन सदस्य चुनन का अधिकार प्राप्त होन से अब निर्वाचक मण्डल के सदस्यो की सख्या ५३८ हो गयी है। निर्वाचक मण्डल का चुनाव 'लीप वप' (Leap Year) या चुनाव वप के नवम्बर महीने के पहले मगलवार को या सरकार द्वारा निर्धारित अन्य किसी तिथि को होना है। निर्वाचको को प्रत्यक्ष रूप स मतदाताओ द्वारा चुना जाता है। निर्वाचको के चुनाव और अन्य चुनावो मे किन व्यक्तियो को मत देने का अधिकार होगा, इस सम्बन्ध म १६७० मे 'मतदान अधिकार अधिनियम' मे सशोधन

[1] दिनमान, २६ अक्टूबर, १६७२ पृ० ७३।

किया गया है। १९७० के पूर्व २१ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नर-नारी को मत देने का अधिकार प्राप्त था, किन्तु अब १८ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नर-नारी को मताधिकार प्रदान कर दिया गया है। दूसरा परिवर्तन यह हुआ है कि इसके पूर्व अमरीका में कम से कम ३० राज्य ऐसे थे, जहाँ वही व्यक्ति मतदान कर सकता था, जो कम से कम १ वर्ष राज्य में लगातार रहा हो। अब यह अवधि ३० दिन कर दी गयी है अर्थात अब वे व्यक्ति भी मतदान कर सकेंगे, जो चुनाव के ३० दिन पूर्व विदेश से स्वदेश लौट आयेंगे। तीसरे, १९७० के संशोधन के पूर्व मतदाता को अपना नाम पंजीकृत कराने से पूर्व एक साक्षरता परीक्षा देनी होती थी, अब यह प्रतिबन्ध भी हटा दिया गया है। नीग्रो नागरिकों को भी मतदान का अधिकार प्राप्त हो सके, इस दृष्टि से ऐसा किया गया है। १९७० में किये गये इन संशोधनों के आधार पर १९७२ के राष्ट्रपति चुनाव में १ करोड़ १० लाख अतिरिक्त व्यक्तियों को मताधिकार प्राप्त हुआ है।

राज्यों में निर्वाचक मण्डल के सदस्यों का चुनाव सूची प्रणाली (List System) के आधार पर होता है अर्थात् मत किसी उम्मीदवार के लिए नहीं, वरन दल की सूची के पक्ष में डाले जाते हैं। संविधान में यह भी कहा गया है कि कांग्रेस का कोई सदस्य या संयुक्त राज्य अमरीका में लाभ के पद पर आसीन कोई व्यक्ति निर्वाचक मण्डल का सदस्य नहीं बन सकता है। इस निर्वाचक मण्डल का कार्य राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति चुनने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। मतदान के एक दिन पूर्व राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार मतदाताओं से रेडियो या टेलीविजन पर अंतिम अपील करते हैं। निर्वाचक मण्डल के सदस्यों का चुनाव व्यक्तिगत न होकर सामूहिक होता है अर्थात जिस दल को किसी राज्य में मतदाताओं का बहुमत प्राप्त हो जाता है उसी दल के सब उम्मीदवार राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल के सदस्य चुने जाते हैं। उदाहरण के लिए यदि न्यूयार्क राज्य में रिपब्लिकन निर्वाचन सूची को ,०,०० ००० मत मिलते हैं और डेमोक्रेटिक निर्वाचन सूची को ३०,००,०१० मत, तो न्यूयार्क राज्य से निर्वाचक मण्डल के सभी ४३ सदस्य डेमोक्रेटिक दल से चुन लिए जायेंगे। राष्ट्रपति पद का जो उम्मीदवार ५३८ निर्वाचकों में से २७० स्थान प्राप्त कर लेता है, उसे राष्ट्रपति पद प्राप्त होने का विश्वास हो जाता है।

(४) निर्वाचक मण्डल द्वारा राष्ट्रपति का चुनाव (Election of the President by the Electoral College)—निर्वाचक मण्डल द्वारा राष्ट्रपति का चुनाव मात्र एक औपचारिकता है क्योंकि आग और रे के शब्दों में, निर्वाचक मण्डल के सदस्य अपने राजनीतिक दल की रिकार्डिंग मशीन मात्र होते हैं।"[1] चुनाव वर्ष के

1 "*Voting by the electors remains little more than a formality, the electoral college having become a mere recording machine*
—Ogg & Ray, *Essentials of American Government* p 175

दिसम्बर मास के दूसरे बुधवार को निर्वाचक मण्डल के सदस्य अपने-अपने राज्यों की राजधानियों में एकत्रित होते हैं और राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति पद के लिए विभिन्न उम्मीदवारों के पक्ष में मतदान करते है। मतों की गणना की जाती है और उन्हें प्रमाणीकृत करने के बाद सीनेट के अध्यक्ष के पास भेज दिया जाता है। सीनेट का अध्यक्ष कांग्रेस के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक में मतों की गणना करता है और कानूनी तौर पर जीतने वाले व्यक्ति की घोषणा करता है।

जब किसी उम्मीदवार को स्पष्ट बहुमत नहीं मिलता—यदि राष्ट्रपति पद के दो उम्मीदवारों को बराबर मत प्राप्त हों अथवा किसी को भी मतदाताओं का पूर्ण या निरपेक्ष बहुमत (Absolute Majority) प्राप्त न हो, तो प्रतिनिधि सभा सबसे अधिक मत प्राप्त करने वाले प्रथम तीन उम्मीदवारों में से किसी एक को राष्ट्रपति निर्वाचित कर सकती है। प्रतिनिधि सभा जब इस प्रकार राष्ट्रपति को निर्वाचित करती है, तब प्रतिनिधि सभा में प्रत्येक राज्य का केवल एक मत होता है। प्रत्येक राज्य के सदस्य बहुमत से निर्णय करते हैं कि उनके राज्य का मत किस उम्मीदवार के पक्ष में गिना जाय। यदि किसी राज्य के प्रतिनिधि समान रूप से इस विषय पर बट जायें तो उनका मत गिना नहीं जाता है। अब तक प्रतिनिधि सभा द्वारा केवल दो राष्ट्रपति निर्वाचित किये गये हैं सन् १८०० में जफरसन और १८२४ में क्विन्सी एडम्स। इसी तरह यदि किसी भी उम्मीदवार को उपराष्ट्रपति पद के लिए स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं हो पाता, तो सर्वाधिक मत प्राप्त करने वाले दो उम्मीदवारों में से सीनेट किसी एक उम्मीदवार को चुन लेती है। इस हेतु गणपूर्ति कुल सीनेटरों का दो तिहाई बहुमत चाहिए। इस चुनाव में प्रत्येक सीनेटर का एक मत होता है और जिस उम्मीदवार को निरपेक्ष बहुमत प्राप्त हो जाय, वह उपराष्ट्रपति चुना जाता है।

(५) नवीन राष्ट्रपति का पद ग्रहण—१९३३ के पूर्व तक निर्वाचित होने के लगभग ४ मास पश्चात् ४ मार्च को नवीन राष्ट्रपति द्वारा पद ग्रहण किया जाता था, किन्तु बीसवें संशोधन (१९३३) के अनुसार राष्ट्रपति ४ मार्च के बजाय २० जनवरी को अपना पद ग्रहण करता है। इस संशोधन में यह भी निश्चित किया गया है कि यदि नव निर्वाचित राष्ट्रपति की अपने पद पर आसीन होने के पूर्व मृत्यु हो जाती है, तो उपराष्ट्रपति राष्ट्रपति बन जायगा।

पद ग्रहण के समय राष्ट्रपति को शपथ लेनी होती है जो उसे सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश द्वारा दिलाई जाती है। शपथ इस प्रकार है, **'मैं गम्भीरता-पूर्वक शपथ लेता हूँ कि अमरीका के राष्ट्रपति पद पर निष्ठापूर्वक कार्य करूँगा और अपनी योग्यता भर अमरीका के संविधान का संरक्षण, परिरक्षण और प्रतिरक्षण करूँगा।'**[1]

[1] 'I do solemnly swear (or affirm) that I shall faithfully execute the office of the President of the United States and will do the best of my ability preserve, protect and defend the constitution of the U S A"

१९७२ के राष्ट्रपति चुनाव

१९७२ के राष्ट्रपति चुनाव में दो प्रमुख उम्मीदवार थे—**रिचर्ड निक्सन** (रिपब्लिकन पार्टी) और जार्ज मैकगवन (डेमोक्रेटिक पार्टी)। इनके अतिरिक्त अल्पसंख्यक दलों के १० अन्य उम्मीदवार थे, लेकिन उनका अमरीकी राजनीति में महत्त्व नहीं है।

इस चुनाव में रिचर्ड निक्सन ४ वर्ष के लिए फिर राष्ट्रपति चुन लिये गये हैं। पिछली बार १९६८ में उन्होंने ह्यूबर्ट हम्फ्री को बहुत कम मतों से पराजित किया था, जबकि इस बार उन्हें ६४ प्रतिशत मत प्राप्त हुए और वे प्रचण्ड बहुमत से जीते हैं। निक्सन उन कुछ चुनिंदा राष्ट्रपतियों में आ गये हैं, जिन्हें इस प्रकार का प्रचण्ड बहुमत प्राप्त हुआ है। अन्य राष्ट्रपतियों में फ्रैंकलिन रूजवेल्ट (१९३६) और लिण्डन बी० जानसन (१९६४) आते हैं। राष्ट्रपति निक्सन को कुल ५३८ निर्वाचक मतों में से ५२१ मत प्राप्त हुए हैं, जबकि सिनेटर जॉर्ज मैकगवन को केवल १७। ५० राज्यों में से ४९ राज्यों ने निक्सन के पक्ष में मतदान किया, केवल एक राज्य (मैसाचुएट्स) ने मैकगवन के पक्ष में मतदान किया। १९६८ के राष्ट्रपति चुनाव में जहाँ ७३ प्रतिशत मतदाताओं ने अपने मत का प्रयोग किया था इस चुनाव में ५५ प्रतिशत मतदाताओं ने ही अपने मत का प्रयोग किया। वियतनाम समस्या के समाधान हेतु नवीन उपाय अपनाने से ही निक्सन इतने बहुमत से जीते हैं क्योंकि इन प्रयासों से मैकगवन के चुनाव प्रचार का सबसे प्रमुख मुद्दा कमजोर पड़ गया था।

१९७२ के चुनाव में निक्सन की विजय को बहुत कुछ सीमा तक उनकी व्यक्तिगत विजय कहा जा सकता है। रिपब्लिकन पार्टी ने इसमें किसी भी तरह का उल्लेखनीय योग नहीं दिया। अगर रिपब्लिकन पार्टी का योगदान हुआ होता, तो सीनेट, प्रतिनिधि सभा, राज्य के गवर्नरों और राज्य की प्रतिनिधि सभाओं में भी उसे (रिपब्लिकन दल) पूर्ण बहुमत प्राप्त हो गया होता लेकिन स्थिति ऐसी नहीं है। चुनाव परिणामों के विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि जिन मतदाताओं ने १९७२ के ही चुनाव में प्रतिनिधि सभा और सीनेट के चुनाव में डेमोक्रेटिक उम्मीदवारों का समर्थन किया था, उनके लगभग एक तिहाई ने राष्ट्रपति के चुनाव में डेमोक्रेटिक उम्मीदवार जार्ज मैकगवन का समर्थन नहीं किया। २० जनवरी, १९७३ को मि० रिचर्ड निक्सन राष्ट्रपति पद पर और मि० एग्न्यू उपराष्ट्रपति पद पर आरूढ़ हुए हैं।

निर्वाचन प्रणाली की आलोचना

अमरीकी राष्ट्रपति के निर्वाचन में जिस प्रणाली को अपनाया जाता है, उसकी कई आधारों पर आलोचना की जाती है

प्रथमतः निर्वाचक मण्डल के सदस्य दलीय आधार पर चुने जाते हैं, लेकिन चुने जाने के बाद वे इस बात के लिए कानूनन स्वतन्त्र हैं कि वे किसी भी उम्मीद

वार को मत दे । साधारणतया वे अपने राजनीतिक दल का समथन करते हैं किन्तु कई बार ऐसा भी हुआ है कि किसी दल के निर्वाचक मण्डल के सदस्य ने किसी अन्य दल के उम्मीदवार को अपना मत दिया । सन् १९४८ के चुनाव म डेमोक्रेटिक दल के टनसी राज्य के एक निर्वाचक ने रिपब्लिकन दल के उम्मीदवार स्ट्रोम थमण्ड को मत दिया जबकि उस राज्य की जनता ने अपना बहुमत डेमोक्रेटिक दल के पक्ष मे दिया था और उसके उम्मीदवार हेनरी ट्रूमैन थे । इसी प्रकार १९५२ के निर्वाचन म टक्सास राज्य के गवनर व अन्य डेमोक्रेटिक दल के नेताओ ने रिपब्लिकन उम्मीदवारो आइजनहावर और निक्सन को अपना समथन दिया ।

द्वितीय त्रुटि निश्चित रूप से अधिक गम्भीर है और वह निर्वाचन प्रणाली की इस बात मे निहित है कि एक राज्य विशेष म जिस राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त होता है उसे उस राज्य के सभी निर्वाचकों का चुनने का अधिकार प्राप्त हो जाता है । इस बात के कारण चुनाव परिणाम बहुत त्रुटिपूण रूप मे सामने आते हैं। उदाहरण के लिए अभी १९७२ के राष्ट्रपति चुनाव मे निक्सन ने ६४ प्रतिशत जनता का समथन प्राप्त कर निर्वाचक मण्डल के लगभग ९७ प्रतिशत स्थान (५३८ मे स ५२१) प्राप्त किय और लगभग ३४ प्रतिशत मत प्राप्त करने वाले मकगवन को निर्वाचक मण्डल के लगभग ३ प्रतिशत स्थान (५३८ म स १७) ही प्राप्त हुए । इस त्रुटि के कारण ऐसा उम्मीदवार भी राष्ट्रपति निर्वाचित हो जाता है जिसे निर्वाचक मण्डल के सदस्यों का बहुमत तो प्राप्त होता है, लेकिन देश की जनता का बहुमत नही । सन १८६० और १९१२ मे क्रमश अब्राहम लिंकन और वुडरो विल्सन जब राष्ट्रपति चुने गये, तो उन्हे देश की जनता का बहुमत नही मिला था । इसी प्रकार १८७६ म रिपब्लिकन दल का उम्मीदवार हज निर्वाचित घोषित हुआ था, यद्यपि उसे पराजित उम्मीदवार टिल्डन से तीन लाख मत कम मिले थे और १८८८ मे रिपब्लिकन उम्मीदवार हैरीसन राष्ट्रपति निर्वाचित हुए थे, जबकि पराजित उम्मीदवार क्लीवलण्ड को जनता के अधिक मत मिले थे । ऐसी स्थिति में निर्वाचन प्रणाली स्वाभाविक रूप से बहुत अधिक आलोचना का विषय बन जाती है ।

ततीयत उपरोक्त निर्वाचन प्रणाली के कारण राष्ट्रपति के निर्वाचन मे घनी आबादी वाले बडे राज्यो का महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है और कम आबादी वाले राज्यो तथा ग्रामीण क्षेत्रो की उपेक्षा होती है । पिछले लगभग १०० वर्षों मे राष्ट्रपति पद पर विजयी सभी उम्मीदवार बडे राज्यो मे हो थे । सघात्मक व्यवस्था के अन्तगत व्यावहारिक राजनीति की दृष्टि से इसे उचित नहीं कहा जा सकता ।

चतुथत, निर्वाचन प्रणाली की इस आधार पर भी आलोचना की जाती है कि यदि निर्वाचक मण्डल के मतदान के परिणामस्वरूप किसी भी उम्मीदवार को आवश्यक बहुमत प्राप्त न हो और ऐसी स्थिति म जब राष्ट्रपति का निर्वाचन प्रति-

निधि सभा द्वारा किया जाय, तो परिणाम उससे सर्वथा भिन्न हो सकता है जो साधारणतया होना चाहिए था।

इन सबके अतिरिक्त यह कहा जाता है कि राष्ट्रपति के मनोनयन के लिए जिस पद्धति को अपनाया गया है, उसमे राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार बनने की इच्छा रखने वाले व्यक्तियो की योग्यताओ पर ध्यान नही दिया जाता और राष्ट्रीय सम्मेलनो के उत्तेजनापूर्ण वातावरण के कारण असाधारण प्रतिभाशाली व्यक्ति राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार नही हो पाते। ब्राइस के अनुसार राष्ट्रीय सम्मेलन के प्रतिनिधियो की असगत, असैद्धान्तिक तथा स्वार्थपूर्ण प्रवृत्ति के कारण उम्मीदवारो की योग्यताओ पर ध्यान न देकर परस्पर समझौते किये जाते है और महान व्यक्ति राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार नही बन पाते। लास्की ने अमरीकी राष्ट्रपति के चुनाव को सर्वाधिक भ्रष्ट चुनाव और 'वित्तीय साधनो का खेल (game of financial resources) बतलाया है। इस निर्वाचन पद्धति के कारण प्राय शासन सम्बन्धी अनुभव से शून्य व्यक्ति ही राष्ट्रपति पद पर निर्वाचित होते हैं।

राष्ट्रपति की निर्वाचन प्रणाली की उपरोक्त त्रुटियो को देखते हुए इसम मूल सुधार के लिए कुछ प्रस्ताव दिये जाते हैं। इनमे प्रथम सुझाव यह है कि प्रत्येक राज्य म राष्ट्रपति पद के प्रथम तीन उम्मीदवारो म उनके द्वारा प्राप्त जनमत के अनुपात मे उस राज्य के निर्वाचको का विभाजन होना चाहिए। द्वितीय सुझाव यह है कि राष्ट्रपति के निर्वाचक मण्डल के सदस्यो का चुनाव जनता द्वारा उसी प्रकार से हो, जिस प्रकार सीनेट या प्रतिनिधि सभा के सदस्यो का चुनाव प्रत्येक राज्य मे होता है। तृतीय सुझाव यह है कि राष्ट्रपति का चुनाव प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा किया जाय। किन्तु इनम से किसी भी प्रस्ताव पर विचार नही किया जा रहा है और इनके अपनाये जाने की कोई आशा नही है।

राष्ट्रपति की पदच्युति
(Removal of the President)

अमरीकी सविधान के अनुच्छेद २ की उपधारा ४ के अनुसार राष्ट्रपति को केवल महाभियोग के आधार पर ही पदच्युत किया जा सकता है और महाभियोग देशद्रोह, भ्रष्टाचार या अन्य किसी घोर अपराध या कदाचार के आधार पर ही चलाया जा सकता है। महाभियोग की पद्धति यह है कि प्रतिनिधि सभा का कोई एक या कुछ सदस्य राष्ट्रपति के विरुद्ध उपरोक्त आधारो पर आरोप लगा सकते हैं। इसके बाद य आरोप किसी न्यायिक समिति या विशेष जाँच समिति को दे दिये जाते हैं। जाँच समिति द्वारा प्रतिवेदन दिये जाने पर यदि प्रतिनिधि सभा आवश्यक समझे, तो वह एक प्रस्ताव तैयार करती है जिसमे राष्ट्रपति पर लगाये गये आरोपो का उल्लेख किया जाता है और प्रतिनिधि सभा को यह प्रस्ताव अपने दो तिहाई बहुमत से पारित करना होता है। इस आरोप पत्र की एक प्रति सूचनार्थ राष्ट्रपति को भेजी जाती है।

इसके पश्चात् यह प्रस्ताव सीनेट के पास भेजा जाता है। इसके बाद सीनेट निश्चित तिथि को इन आरोपों की जाँच हेतु एक न्यायालय के रूप मे बैठती है और उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश इस बैठक की अध्यक्षता करता है। प्रतिनिधि सभा की ओर से भेजा गया प्रतिनिधि सीनेट को आरोपों के बारे म पूरी जानकारी देता है। राष्ट्रपति को अपने बचाव हेतु स्वयं उपस्थित होने या अपने प्रतिनिधियों और वकीलो को भेजने का अधिकार प्राप्त होता है। गवाहियां भी दी जा सकती है। यदि पूरी छानबीन के बाद सीनेट अपने ⅔ बहुमत से प्रस्ताव पारित कर दे कि राष्ट्रपति के विरुद्ध लगाये गये आरोप ठीक हैं, तो उस पदच्युत कर दिया जाता है। यदि किसी राष्ट्रपति ने कोई अपराध किया है तो उसकी पदच्युति क बाद उसके विरुद्ध न्यायालय मे मुकदमा चलाया जा सकता है। अब तक केवल एक बार १८६७ मे राष्ट्रपति ए ड्यू जॉनसन के विरुद्ध महाभियोग लगाया गया था, लेकिन सीनेट में इस प्रस्ताव को ⅔ बहुमत प्राप्त होने में एक मत की कमी रह गई और राष्ट्रपति को पद से नही हटाया जा सका।

राष्ट्रपति पद के लिए उत्तराधिकार (Succession to the Presidency)—संविधान के अनुच्छेद २ की उपधारा १ द्वारा यह निर्धारित किया गया है कि मृत्यु, त्यागपत्र, महाभियोग या अन्य किसी कारण से राष्ट्रपति का पद यदि रिक्त हो जाय, तो राष्ट्रपति पद की सभी शक्तियां और कर्तव्य उत्तराधिकार के रूप मे उपराष्ट्रपति के पास आ जायेंगी। यदि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति दोनो के पद रिक्त हो जायें, तो कांग्रेस निर्णय करेगी कि कौन अधिकारी राष्ट्रपति पद पर काय करेगा।

सन १८८६ म कांग्रेस द्वारा इस सम्बन्ध मे एक अधिनियम पारित किया गया, जिसके अनुसार उपराष्ट्रपति के बाद राज्य सचिव (Secretary for State) को तथा उसके बाद वित्त सचिव और युद्ध सचिव को यह पद सम्भालने का अधिकार दिया गया। १९४७ मे कांग्रेस ने पुन 'राष्ट्रपति उत्तराधिकार कानून' पारित कर स्थिति मे परिवर्तन किया, जिसके अनुसार राष्ट्रपति के पद मे स्थायी रिक्तता होने पर उपराष्ट्रपति शेष अवधि के लिए राष्ट्रपति बन जाता है। यदि किसी कारण स उपराष्ट्रपति भी इस पद के लिए उपलब्ध न हो, तो प्रतिनिधि सभा का स्पीकर, सीनेट का अस्थायी अध्यक्ष, राज्य सचिव, वित्त सचिव, युद्ध सचिव आदि क्रमश इस पद को धारण करेंगे। व्यवहार के अन्तगत अब तक जब कभी राष्ट्रपति पद रिक्त हुआ, तब उपराष्ट्रपति के द्वारा ही इसे धारण किया गया है।

अब तक सदैव ही जब कभी राष्ट्रपति पद रिक्त हुआ तो उपराष्ट्रपति के द्वारा राष्ट्रपति पद धारण किया गया और इस प्रकार की प्रत्यक स्थिति मे उपराष्ट्रपति पद रिक्त रहा। ऐसा अब तक १६ बार हो चुका है। इस स्थिति को संविधान के २५वें संशोधन (१९६७) द्वारा दूर किया गया है। संशोधन के प्रथम भाग म उल्लेख है कि मृत्यु त्यागपत्र अथवा पदच्युति पर राष्ट्रपति पद रिक्त होने

पर उपराष्ट्रपति राष्ट्रपति बन जायेगा। संशोधन के दूसरे भाग में उल्लेख है कि जब कभी उपराष्ट्रपति का पद रिक्त होगा, तो राष्ट्रपति एक उपराष्ट्रपति को नामजद करेंगे, जो कांग्रेस के दोनों सदनों द्वारा पुष्टि किये जाने पर अपना पद ग्रहण करेगा।

राष्ट्रपति की शक्तियाँ
(Powers of the President)

अमरीकी संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति की शक्तियों को निर्धारित करने में संविधान निर्माताओं को कठिन समस्या का सामना करना पड़ा। इस सम्बन्ध में एक ओर तो उनके सामने उपनिवेशों के गवर्नरों के अनुभव थे, जिसमें उन्होंने देखा था कि शक्तिशाली शासक किस प्रकार जन स्वातन्त्र्य को नष्ट करने का प्रयत्न कर सकते हैं, और उन्होंने परिसंघ के विधान में निर्बल कार्यपालिका के दुष्परिणाम भी देख लिए थे। अतः अपने इन परस्पर विरोधी अनुभवों के आधार पर वे एक ऐसी कार्यपालिका का निर्माण करना चाहते थे जो सुशासन स्थापित रखने में समर्थ हो, लेकिन तानाशाह जैसी स्थिति प्राप्त न कर ले। अमरीकी राष्ट्रपति के रूप में उनके द्वारा एक ऐसे ही पद की व्यवस्था की गयी। मूल संविधान द्वारा तो राष्ट्रपति को पर्याप्त शक्तियाँ प्रदान की ही गयी थीं, कांग्रेस के अधिनियमों, प्रथाओं और परम्पराओं और न्यायिक व्याख्याओं के द्वारा भी इस पद की शक्ति में वृद्धि ही की गयी है। आज अमरीका के राष्ट्रपति पद के सम्बन्ध में फरग्यूसन और मकहेनरी के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'किसी भी प्रजातान्त्रिक राष्ट्र द्वारा निर्मित यह सर्वाधिक शक्तिशाली पद है।'[1] राष्ट्रपति की व्यापक शक्तियों को अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से निम्न शीर्षकों में विभाजित किया जा सकता है :

(१) *कार्यपालिका शक्तियाँ*—राष्ट्रपति को यद्यपि अमरीकी शासन और राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में शक्तियाँ प्राप्त हैं, लेकिन इनमें सर्वाधिक प्रमुख उसकी कार्यपालिका शक्तियाँ ही हैं। आग और रे के शब्दों में "राष्ट्रपति प्रमुख विधि निर्माता, दलीय नेता, राष्ट्रीय हितों का सामान्य संरक्षक या अन्य चाहे जो कुछ भी हों, वह सर्वप्रथम एक कार्यपालिका ही है।"[2] संविधान में भी कहा गया है कि 'कार्यपालिका

1 'The President of the United States holds one of the most powerful offices ever created by a democratic nation.'
—Ferguson and McHenry: *The American System of Government*, p. 361.

2 "For whatever else he may be—chief legislator, party leader, general custodian of national interest—the president is first of all an executive."
—Ogg & Ray: *The Essentials of American Government*, p. 294.

शक्तियाँ सयुक्त राज्य अमरीका के एक राष्ट्रपति में निहित होगी।"[1] कायपालिका क्षेत्र म उसके विभिन्न काय निम्न प्रकार हैं

(1) कानूनों को लागू करना तया व्यवस्था बनाये रखना—कायपालिका क्षेत्र मे उनकी प्रथम और सबसे महत्त्वपूण शक्ति सघीय कानूनो को लागू करना और व्यवस्था बनाय रखना है। अनुच्छेद २ की तीसरी उपधारा के अनुसार राष्ट्रपति सभी सघीय कानूनो को समुचित रूप मे लागू करने के लिए उत्तरदायी है। उसका यह मुख्य दायित्व है कि वह काग्रेस द्वारा पारित सभी विधियो तथा सीनेट द्वारा अनुमोदित सभी सन्धियो का निष्ठापूवक पालन कराये। राष्ट्रपति इस शक्ति का कुछ सीमा तक अपने विवेक के अनुसार प्रयोग करता है। वह इस बात का निणय करता है कि किन कानूनो को अत्यधिक कठोरता के साथ लागू किया जाय, किन्हे कम कठोरता के साथ लागू किया जाय तथा किन्हे लागू करने के लिए कोई भी कदम न उठाया जाय। उदाहरण के लिए, राष्ट्रपति क्लीवलैण्ड और मकिनले के द्वारा Sherman Anti trust Law (१८९०) को लागू करने का कोई प्रयत्न नही किया गया और ये कानून १९०१ मे थियोडर रूजवेल्ट द्वारा पद ग्रहण किये जाने पर ही प्रभावी हो सके। कानून लागू करने के महान दायित्व को पूरा करने म राष्ट्रपति को अटार्नी जनरल, २५ लाख सघीय कमचारियो, याय विभाग, सेना और राष्ट्रीय रक्षक दलो से पूर्ण सहायता मिलती है।

कानून लागू करने के साथ ही उसका सम्पूण सयुक्त राज्य अमरीका म व्यवस्था बनाये रखने का दायित्व है। इस दायित्व का सवैधानिक आधार सविधान के अनुच्छेद ४ की उपधारा ४ म वर्णित यह बात है कि सघीय सरकार प्रत्येक राज्य मे एक गणतन्त्रीय सरकार की गारण्टी देती है और प्रत्येक राज्य की बाहरी आक्रमण तथा आन्तरिक हिंसा से रक्षा करेगी।' यदि किसी राज्य म गणत त्रात्मक व्यवस्था को खतरा हो या उस पर बाहरी आक्रमण की आशका हो तो राष्ट्रपति राज्य के अधिकारियो से प्राथना की प्रतीक्षा किये बिना स्वय अपनी पहल पर काय कर सकता है। आन्तरिक हिंसा या उपद्रव की स्थिति मे राष्ट्रपति राज्य के गवनर या विधान-मण्डल के आग्रह पर ही सैनिक सहायता प्रदान करता है। लेकिन यदि ऐसी स्थिति मे सघीय कानूनो की क्रियान्विती मे बाधा उपस्थित हो या सघीय सम्पत्ति अथवा अन्तरराज्यिक वाणिज्य को खतरा हो, तो राष्ट्रपति अपनी पहल पर भी काय कर सकता है। अब तक के सवैधानिक इतिहास मे अनेक बार विभिन्न राष्ट्रपतियो द्वारा एसा किया गया है। १८९४ में राष्ट्रपति क्लीवलण्ड ने इलिनोइस के गवनर क विरोध के बावजूद शिकागो नगर मे रेलवे हडताल का भग करने के लिए इस आधार पर सशस्त्र सैनिक भेजे थे कि इस हडताल से अन्तरराज्यिक वाणिज्य म

1 The Executive Powers shall be vested in the President of the United States

अ यवस्था उत्पन्न हो जाती है। १६२२ मे राष्ट्रपति हार्डिग्ज ने एक हडताल को दबाने के लिए सशस्त्र सनिको को तैनात रहने का आदेश दिया था। सन १६४४ मे हडतालियो द्वारा अनुरोध न मानने पर राष्ट्रपति रूजवेल्ट न **नाथ अमरीकन एयरप्लेन कारपोरेशन'** की शिल्प य त्र सामग्री पर अधिकार करने के लिए अपने सनिक भेजे थे और राष्ट्रपति आइजनहॉवर ने भी गवनर के विरोध क बावजूद **लिटिल राक स्कूल समन्वय विवाद'** के सम्बन्ध म सेना का उपयोग किया था। य उदाहरण इस बात के प्रमाण है कि राष्ट्रपति व्यवस्था स्थापित करने के लिए राज्यो क शासन यन्त्र म हस्तक्षेप कर सकता है और सेना का प्रयोग कर सकता है।

(ii) **प्रशासन का सचालन**—राष्ट्रपति कायपलिका का अध्यक्ष हाने के साथ साथ प्रशासन का सर्वोच्च निर्देशक है। यह दखना राष्ट्रपति का प्रमुख सवैधानिक दायित्व है कि शासन के विभिन्न पदाधिकारी सविधान के उपबन्धो, अन्य राज्यो स की गयी सन्धियो तथा सर्वोच्च न्यायालय के निणयो के अनुरूप काय कर रहे हैं अथवा नही। राष्ट्रपति के द्वारा इस हेतु अध्यादेश अथवा अनुदेश, नियम उपनियम या आदेश जारी किये जा सकते हैं। उसके द्वारा विभिन्न विभागो के अध्यक्षो तथा अन्य अधिकारियो को आदेश जारी किय जा सकते है और सम्बन्धित अधिकारियो के लिए इन आदेशो का पालन करना अनिवाय होता है। वह प्रत्यक विभाग के अधिकारी से किसी भी विषय पर प्रतिवदन या सम्मति की माग कर सकता है।

(iii) **नियुक्ति और पदच्युति की शक्ति**—राष्ट्रपति की एक महत्त्वपूण शक्ति विभिन्न पदाधिकारियो की नियुक्ति से सम्बन्धित है जिसके आधार पर राष्ट्रपति वास्तविक प्रशासनिक शक्ति प्राप्त करता और काग्रेस पर अपना प्रभाव स्थापित करता है।

सविधान म सघ सरकार द्वारा की जाने वाली नियुक्तिया को दो भागो मे बाटा गया है (१) वे उच्च पद जिन पर राष्ट्रपति सीनेट क परामश और उनके बहुमत की सहमति से नियुक्तियाँ कर सकता है और (२) वे निम्न पद जिन पर काग्रेस की सहमति स राष्ट्रपति स्वय अथवा विभागीय अध्यक्ष तथा न्यायालय नियुक्तिया कर सकते हैं। क्योकि सविधान मे निम्न पदो की व्याख्या नही की गयी है, इसलिए यह निश्चित करना कि निम्न पदो के अन्तगत कौन अधिकारी आते हैं, काग्रेस के अधिकार म है और वही इन पदों पर नियुक्ति के ढग को निश्चित कर सकती है।

सविधान के अनुसार राजदूतो, अन्य प्रदूता, वाणिज्य दूता, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो, विभिन्न आयोगो के अध्यक्षो, उनक सचिवो, विभिन्न सघीय आयोगो के सदस्यो, चुगी अधिकारियो, राजस्व अधिकारियो और सेना तथा नौ-सेना मे उच्चाधिकारियो की नियुक्ति राष्ट्रपति कर सकते हैं, परन्तु सीनेट के द्वारा अपन बहुमत स इन नियुक्तियो की पुष्टि की जाना अनिवाय है। सामान्यतया मन्त्रिपरिषद के सदस्यो, राजदूत, राष्ट्रपति के व्यक्तिगत सहायको और सर्वोच्च न्यायालय क

न्यायाधीशो की नियुक्ति को सीनेट के द्वारा पुष्टि प्रदान कर दी जाती है, यद्यपि इसके कुछ अपवाद हैं। अब तक ८ बार सीनेट ने राष्ट्रपति द्वारा की गयी मन्त्रियो की नियुक्ति को अस्वीकार किया है और राजदूतो तथा न्यायाधीशो की लगभग ⅟₂ नियुक्तियो को सीनेट ने अस्वीकार किया है। शेष जो लगभग १५ हजार नियुक्तिया हैं, उनके सम्बन्ध मे सामान्य व्यवहार यह है कि राष्ट्रपति के दल के सीनेट के सदस्य राष्ट्रपति के सम्मुख नाम प्रस्तावित करते हैं और सामान्यत राष्ट्रपति इन्हे स्वीकार कर लेता है। जिन अधिकारियो की नियुक्ति के लिए सीनेट की सहमति आवश्यक होती है उनकी भी राष्ट्रपति एक विशेष विधि के अनुसार कुछ समय तक सीनेट की सहमति लिए बिना नियुक्ति कर सकता है। इस 'अल्पावकाश नियुक्ति' (Recess Appointments) कहते है और इसके अन्तर्गत राष्ट्रपति सीनेट के दो अधिवेशनो के बीच के काल म नियुक्ति कर सकता है। लेकिन वर्तमान समय म इस विधि का प्रयोग बहुत कम किया जाता है।

सीनेट के प्रति शिष्टता (Senatorial Courtesy)—अनेक सघीय पदो, विशेषतया राज्य विशेष स सम्बन्धित सघीय पदो, पर एक विशेष पद्धति द्वारा नियुक्तियाँ की जाती है जिसे 'सीनेट के प्रति शिष्टता' कहा जाता है। यह एक अलिखित नियम या परम्परा है जिसके अनुसार राष्ट्रपति अपन दल के उन सीनेट सदस्यो से नियुक्ति के सम्बन्ध मे मन्त्रणा करता है जो उस राज्य की ओर स सीनेट सदस्य है जिसम नियुक्ति करनी है। यदि राष्ट्रपति ऐसा नही करता और अपनी निजी इच्छा स ही नियुक्तिया करता है, तो अन्य सदस्य सीनट के प्रति शिष्टता के नियम के अनुसार सम्भवत राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्ति को अस्वीकार कर देंगे। इस नियम के प्रवत्तन का एक अच्छा उदाहरण १९३८-३९ का फ्लाइड एच० राबट का मामला है। राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने फ्लाइड एच० राबट को पश्चिमी वर्जीनिया के सघीय जिला न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त कर दिया। इस नियुक्ति पर वर्जीनिया राज्य के दोनो सीनेट सदस्यो ने आपत्ति की, लेकिन राष्ट्रपति ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया और राबट का नाम सीनेट क पास पुष्टिकरण के लिये भेज दिया। सीनेट ने इसे अस्वीकृत कर दिया। सीमित रूप मे इस परम्परा का लाभ वे सदस्य भी उठा सकते हैं जो राष्ट्रपति क दल के नही है। उदाहरण के लिए, १९५० में मिचीगन के सिनेटर होमर फरगुसन न मोटर केरियर क्लेम्स कमीशन पर १९४८ के चुनाव म अपने असफल प्रतिद्वन्द्वी फ्रेंक एफ० हुक की नियुक्ति की पुष्टि नही होने दी। उन्होने यह तर्क दिया कि उन्हे इस नियुक्ति पर व्यक्तिगत रूप से आपत्ति है और यह उनके सम्मान क विरुद्ध होगा। इस प्रकार सीनट के सदस्य 'शक्ति एक की नहीं, समूह की होती है और समूह के बल पर ही एक भी शक्तिशाली होता है' के सिद्धान्त पर आचरण करते हुए एक दूसरे के प्रति शिष्टता बरतते है और राष्ट्रपति की नियुक्ति की शक्ति पर अकुश रखत है। 'सीनेट के प्रति शिष्टता' राष्ट्रपति की शक्ति पर एक अकुश होते हुए भी यह स्वीकार करना पडेगा कि राष्ट्रपति सरक्षण के

बहुत महत्त्वपूर्ण अधिकारों का उपभोग करता है और हजारों ऊँचे वेतन प्राप्त करने वाले अधिकारियों की नियुक्ति राष्ट्रपति के हाथ में रहती है।

संविधान के अन्तर्गत इस सम्बन्ध में स्पष्ट व्यवस्था नहीं की गई है कि राष्ट्रपति अपने द्वारा नियुक्त पदाधिकारियों को पदच्युत कर सकता है अथवा नहीं। संविधान में केवल यह कहा गया है कि देशद्रोह, भ्रष्टाचार या अन्य गम्भीर अपराधों के लिए पदाधिकारियों को महाभियोग द्वारा पदच्युत किया जा सकता है, परन्तु यह प्रक्रिया निश्चित रूप से कष्टकारी है। अक्षमता अथवा अनुत्तरदायित्व के आधार पर पदच्युत करने के सम्बन्ध में संविधान मौन है, परन्तु इसे अपना निहित अधिकार मानकर राष्ट्रपति के द्वारा इसका प्रयोग किया जाता रहा है। समय समय पर कांग्रेस ने राष्ट्रपति के इस अधिकार को सीमित करने का प्रयत्न किया किन्तु वह इसमें असफल रही। 'मेयर्स बनाम संयुक्त राज्य' (Myers *vs* United States) के विवाद में सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि जिन पदों पर राष्ट्रपति नियुक्ति करता है, उन पदाधिकारियों को वह पदच्युत भी कर सकता है और कांग्रेस विधि द्वारा राष्ट्रपति की इस शक्ति को सीमित नहीं कर सकती, लेकिन राष्ट्रपति संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों को, कांग्रेस द्वारा स्थापित स्वतन्त्र बोर्ड संस्था या आयोग के सदस्यों को और लोक सेवा नियमों के अन्तर्गत नियुक्त पदाधिकारियों को पदच्युत नहीं कर सकता है।

(iv) क्षमादान का अधिकार—संयुक्त राज्य अमरीका के राष्ट्रपति को अन्य देशों के अध्यक्षों की भांति अपराधियों को क्षमा प्रदान करने उनके दण्ड को स्थगित करने या कम करने का अधिकार प्राप्त है। राष्ट्रपति के द्वारा एक ही प्रकार के अपराध में दण्डित अनेक व्यक्तियों को 'सर्वक्षमा (amnesty) भी प्रदान की जा सकती है। राष्ट्रपति की इस क्षमादान की शक्ति पर दो प्रतिबन्ध हैं **प्रथम**, राज्यों की विधि के विरुद्ध किये गये अपराधों में दण्डित करने का अधिकार राष्ट्रपति को प्राप्त नहीं है, वह केवल संघीय विधि के विरुद्ध किये गये अपराधों में ही क्षमा प्रदान कर सकता है। **द्वितीय** राष्ट्रपति महाभियोग द्वारा दण्डित व्यक्तियों को क्षमा प्रदान नहीं कर सकता है।

(v) परराष्ट्र सम्बन्धों का संचालन—संयुक्त राज्य अमरीका राज्य की कार्यपालिका के प्रधान होने के नाते राष्ट्रपति अमरीका की परराष्ट्र नीति निर्धारित करता है और विश्व के अन्य राज्यों के साथ अमरीका के परराष्ट्र सम्बन्धों का संचालन करता है। सन १८०० में मुख्य न्यायाधीश मार्शल ने घोषणा की थी कि "वदेशिक सम्बन्धों में राष्ट्रपति राष्ट्र का एकमात्र अभिकरण है और विदेशी राष्ट्रों के मध्य वह उसका एकमात्र प्रतिनिधि है।' सन १९३६ के **करटिस राइट विवाद**' में मुख्य न्यायाधीश सदरलैण्ड ने इस स्थिति को स्वीकार करते हुए कहा था कि ' राष्ट्रपति ही पूर्ण रूप से संघीय शासन के वदेशिक सम्बन्धों के निवहन में अधिकृत प्रवक्ता तथा साधन है। इस अधिकार के उपभोग के लिए राष्ट्रपति को कांग्रेस के अधिनियम की आवश्यकता नहीं है। इसको शासन के अन्य अधिकारों

की भांति ही प्रयुक्त किया जा सकता है, बशर्ते इस अधिकार का प्रयोग सविधान के उपब धो के अनुसार हो।" हूवर आयोग, सिडनी हेमेन और लास्की द्वारा भी राष्ट्रपति की इस स्थिति को स्वीकार किया गया है और वस्तुत इस पर कोइ विवाद नही है।

परराष्ट सम्ब धो के सचालन के क्षेत्र म राष्ट्रपति के द्वारा निम्न काय किये जाते हैं

राजदूतो एव अ य प्रतिनिधियो की नियुक्ति—राष्ट्रपति राजदूतो एव राजनयिक तथा व्यापारिक प्रतिनिधिया की नियुक्ति कर परराष्ट सम्ब धो के सचालन मे महत्त्वपूण रूप के भाग लेता है। राजदूता की नियुक्ति पर सीनेट की सहमति आवश्यक है अत अनेक बार राष्टपति अपने विशेष अभिकर्त्ताओ की नियुक्ति करते हैं, जिन पर सीनट के समथन की आवश्यकता नही रहती। राष्टपति वुडरो विल्सन के विशेष अभिकर्त्ता कनल हाऊस, फ्रैंकलिन रूजवेल्ट के हेरी हॉपकिन्स तथा टूमन और लिण्डन जानसन क एवरेल हेरीमेन ने अमरीका की कूटनीति म महत्त्वपूण रूप से भाग लिया है। वतमान राष्ट्रपति निक्सन के विशेष अभिकर्त्ता डा० हैनरी कीसिंगर ने अमरीका के साम्यवादी चीन के साथ सम्बन्ध सुधारने तथा वियतनाम शांति समझौते म महत्त्वपूण रूप स भाग लिया तथा ले रहे है।

अमरीकी विदेश नीति का प्रवक्ता—राष्ट्रपति अमरीका की विदेश नीति का मुख्य प्रवक्ता होता है तथा काग्रेस को समय समय पर भेजे गये राष्ट्रपति के स देशो द्वारा ही कई महत्त्वपूण विदेश नीति सम्ब धी उद्घोषणाओ को ज म दिया गया यथा अलगाव का सिद्धा त (Doctrine of Isolation) मुनरो सिद्धा त, टूमेन का चार सूत्री कायक्रम तथा मध्य पूव के लिए आइजनहॉवर सिद्धात। राष्ट्रपति द्वारा घोपित इन सिद्धान्ता न अ तरराष्ट्रीय राजनीति म अमरीका की भूमिका को निश्चित किया है।

विदेशी सरकारो को मान्यता प्रदान करना—विदेश नीति के क्षेत्र मे राष्ट्रपति को एक अ य उल्लेखनीय शक्ति विदशी सरकारो को मा यता प्रदान करने की प्राप्त है। इस अधिकार का प्रयोग राष्ट्रपति स्वविवेक से करता है और कभी कभी वह इसे विदेश नीति के महत्त्वपूण साधन क रूप म प्रयुक्त करता है। राष्ट्रपति हूवर चाहते थे कि जापान अपनी आक्रामक नीति का परित्याग कर दे, अत उसने जापान की कठपुतली मचूको सरकार को मा यता प्रदान नही की। सामा यत यह माना जाता है कि राष्ट्रपति टूमेन न उचित समय के पूव ही इजरायल राज्य को मा यता प्रदान कर दी थी और इसका उद्देश्य अरब राज्या के विरोध का प्रतिकार एव नवोदित राज्य इजरायल को सुदृढता प्रदान करना था। राष्ट्रपति राजदूतों को वापस बुलाकर या उनके स्तर म परिवतन कर भी अपना असन्तोप व्यक्त कर सकता है। उदाहरण के रूप म, १६३६ म जब इटली ने इथोपिया पर विजय प्राप्त कर ली, तो ईथोपिया म अमरीकी राजदूतावास को वाणिज्य दूतावास बना दिया गया और १६४० म जमनी म वाणिज्य दूतावास ब द कर दिया गया।

सन्धियाँ और प्रशासकीय समझौते—वैदेशिक नीति से सम्बन्धित राष्ट्रपति का सबसे प्रमुख कार्य विदेशी राज्यो से सन्धियाँ या समझौते करना है, लेकिन य सन्धियाँ तभी वध समझी जाती हैं, जबकि सीनट के द्वारा अपन ⅔ बहुमत से इनकी पुष्टि कर दी जाय। यदि सीनट राष्ट्रपति की विरोधी हो तो राष्ट्रपति स्वेच्छानुसार सन्धिया कभी भी नहीं कर सकता। सीनेट द्वारा वर्साय की सन्धि का अनुसमथन न किये जाने के कारण ही अमरीका राष्ट्रसघ का सदस्य न बन सका, यद्यपि राष्ट्रपति विल्सन ने राष्ट्रसघ के निर्माण मे सबसे प्रमुख रूप से भाग लिया था। सीनेट की विदेश सम्बन्ध समिति इस सम्बन्ध मे महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। वतमान समय मे प्राय सभी राष्ट्रपति प्रभावशाली सिनटरो को सन्धि वार्ता म सम्मिलित करते हैं, अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनो मे भाग लेने वाले शिष्टमण्डलो मे उन्हें उचित प्रतिनिधित्व प्रदान करते हैं और इसी प्रकार के अन्य उपायो द्वारा उनका समथन प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं।

सन्धियो की क्रियान्विती हेतु उन पर सीनट का अनुसमथन आवश्यक होता है, अत अनेक बार राष्ट्रपति दूसरे देशो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए सन्धियो के स्थान पर 'प्रशासकीय समझौतो' (Executive agreements) का आश्रय लेते है, क्योकि इन पर सीनट के अनुसमथन की आवश्यकता नही होती। प्रशासकीय समझौता दो देशो की कायपालिका के प्रधानो के बीच सम्पन्न होता है। राष्ट्रपति **थियोडर रूजवेल्ट** ने डोमीनिकन रिपब्लिक तथा जापान के सम्राट के साथ इसी प्रकार के महत्त्वपूर्ण समझौते किये थे। दूसरे महायुद्ध के समय एफ० डी० रूजवेल्ट ने एक प्रशासकीय समझौते Destroyer Bases Agreement' के माध्यम स ब्रिटेन को ५० अमरीकी विध्वसक दिये थे। कांग्रेस भी राष्ट्रपति को अन्य राष्ट्रो के साथ समझौता करने का अधिकार दे सकती है जैसे सन १९३४ म **'परस्पर सम्बन्ध सूचक व्यापार अधिनियम'** (Reciprocal Trade Act) के अनुसार राष्ट्रपति को विदेशो के साथ व्यापारिक समझौते करन का अधिकार दिया गया। गुप्त कूटनीति (Secret Diplomacy) के आधार पर राष्ट्रपति को **'गुप्त समझौते'** करने की भी शक्ति प्राप्त है। सन् १९०५ मे थियोडर रूजवेल्ट ने जापान के साथ गुप्त समझौता करके निश्चित किया था कि फिलिपाइन्स द्वीप मे अमरीकी प्रभुत्व को जापान मान्यता देगा तथा कोरिया म जापान के आधिपत्य को अमरीका स्वीकार करेगा। द्वितीय महायुद्ध के काल म रूजवेल्ट न चर्चिल और अन्य राजनेताओ के साथ गुप्त मन्त्रणाएँ करके अमरीकी विदेश नीति को नया मोड दिया था।

(vi) विदेशो मे अमरीकी नागरिको को सरक्षण—राष्ट्रपति का यह भी कर्तव्य है कि वह विदेश यात्रा करने वाले और प्रवासी अमरीकी नागरिको को सरक्षण प्रदान करे। यदि प्रवास काल मे अमरीकी नागरिक के साथ वहा दुर्व्यवहार किया जाता है तो राष्ट्रपति ऐसे मामलो म हस्तक्षेप कर हर्जाने की माग कर सकता है।

इन सबके अतिरिक्त अमरीकी राष्ट्रपति अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलनों मे भाग लेता है और अमरीका के सर्वोच्च प्रतिनिधि के रूप मे विदेश यात्राएँ करता है। वर्तमान समय मे अमरीकी राष्ट्रपति की विदेश यात्राए और अन्तरराष्ट्रीय राजनीति पर उनका प्रभाव बढता जा रहा है।

यदि पिछले वर्षों मे अन्तरराष्ट्रीय राजनीति के अन्तर्गत अमरीका द्वारा अपनाई गयी स्थिति का अध्ययन किया जाय, तो भी यह बात नितान्त स्पष्ट हो जाती है कि अमरीका की विदेश नीति के सचालन मे राष्ट्रपति सर्वाधिक प्रमुख रूप से भाग लेता है। १९६२ म क्यूबा विवाद के अन्तर्गत अमरीका द्वारा अपनाई गई कठोर स्थिति राष्ट्रपति कैनेडी के व्यक्तिगत निर्णय का परिणाम थी। राष्ट्रपति जॉनसन के द्वारा अपने कार्यकाल मे जिस प्रकार वियतनाम युद्ध मे अधिकाधिक सक्रिय भाग लेने की नीति अपनायी गयी और १९७१ ७३ के काल म राष्ट्रपति निक्सन के द्वारा सयुक्त राष्ट्रसघ म साम्यवादी चीन को प्रवेश प्रदान करने, [illegible] वादी चीन के साथ अमरीका के सम्बन्ध सुधारने और वियतनाम के [illegible] शान्ति समझौते के जो कार्य किये गये वे सभी इन राष्ट्रपतियो के [illegible] निर्णय के परिणाम थे और इनमे उनके द्वारा पहल की गयी थी। [illegible] है कि वैदेशिक सम्बन्धो का अन्तिम नियन्त्रण राष्ट्रपति के हाथो म है और [illegible] राष्ट्रपति विदेश नीति को अपनी इच्छानुसार दिशा प्रदान कर [illegible] है।

सेनाएँ भेजने का कार्य भूतकाल में राष्ट्रपति पोक, राष्ट्रपति मक्किनले और राष्ट्रपति विल्सन के द्वारा भी किया जा चुका है। अब तक के इस समस्त घटनाचक्र को दृष्टि में रखते हुए सिडनी हेमेन के शब्दों में कहा जा सकता है कि "शीत युद्धों, अर्द्ध युद्धों तथा अघोषित युद्धों के इस युग में अवसर ऐसा प्रतीत होता है कि राष्ट्रपति की युद्ध करने की शक्ति ने कांग्रेस के युद्ध घोषित करने के अधिकार को हड़प लिया है।"[1]

सर्वोच्च सेनापति के रूप में राष्ट्रपति व्यापक शक्तियों का प्रयोग करता है। वह निश्चित करता है कि सेनाएँ कहाँ एकत्र की जायें तथा हवाई अड्डे और जहाजी बेड़े कहाँ स्थापित किये जायें। दोनों महायुद्धों को दृष्टि में रखते यह कहना बहुत अधिक अतिशयोक्तिपूर्ण नहीं होगा कि युद्धकाल में उसकी स्थिति लगभग एक अधिनायक जैसी हो जाती है।

(२) विधायी शक्तियाँ—शक्ति विभाजन सिद्धान्त पर आधारित अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था को अपनाने के कारण अमरीकी संविधान के द्वारा राष्ट्रपति को प्रत्यक्ष रूप में विधि निर्माण की शक्ति प्रदान नहीं की गयी है। लेकिन संविधान निर्माता शक्ति विभाजन सिद्धान्त की सीमाओं से परिचित थे और उनके द्वारा राष्ट्रपति को विधायी क्षेत्र में कुछ कार्य सौंपे गये थे। पोटर के शब्दों में, "संविधान ने राष्ट्रपति को विधायी प्रक्रिया के प्रारम्भ और अन्त में स्थान दिया है।"[2] राष्ट्रपति अपने इन कार्यों के आधार पर परोक्ष रूप में विधि निर्माण को प्रभावित कर सकता है और वर्तमान समय में तो राष्ट्रपति के ये कार्य इतने बढ़ गये हैं कि इनके आधार पर उसे प्रधान विधायक (Chief Legislator) कहा जाने लगा है। विधायी क्षेत्र में राष्ट्रपति द्वारा किये जाने वाले कार्यों का उल्लेख इस प्रकार है :

(1) कांग्रेस को सन्देश भेजना—संविधान में व्यवस्था की गयी है कि 'समय समय पर राष्ट्रपति कांग्रेस को संघ की स्थिति के बारे में जानकारी देगा और उसके विचार के लिए ऐसे सुझावों की सिफारिश करेगा, जिन्हें वह आवश्यक और लाभकर समझे।' राष्ट्रपति कांग्रेस को वार्षिक सन्देश भेजते हैं। इन सन्देशों में देश की सामान्य स्थिति पर प्रकाश डालते हैं, आवश्यक समस्याओं पर कांग्रेस का ध्यान आकर्षित करते हैं और आवश्यक कानूनों की सिफारिश करते हैं। इसके अतिरिक्त वे कभी-कभी विशेष परिस्थितियों के बारे में विशेष सन्देश भेजते हैं और आवश्यक कानूनों के निर्माण का सुझाव देते हैं। राष्ट्रपति वाशिंगटन तथा एडम्स कांग्रेस में स्वयं उपस्थित होकर सन्देश पढ़ते थे, जैफरसन ने इस प्रथा को बन्द कर दिया और

1 "In this epoch of cold wars, half wars and undeclared wars it appears at times that the President's powers to make war has virtually swallowed the congressional right to declare war."
—Hayman, Sydney, *The American Presidents*, p. 294.

2 "The constitution puts the President at the beginning and end of the legislative process."
—A. M. Potter, *American Government and Politics*, p. 197.

मे काग्रेस का अधिवेशन समाप्त हो जाय, तो राष्ट्रपति की स्वीकृति न मिलने पर यह विधेयक अपने आप ही निषिद्ध हो जाता है, इसमे राष्ट्रपति को प्रत्यक्ष रूप से निषेध करने की आवश्यकता नहीं होती और इसे ही राष्ट्रपति का 'जेबी निषेधाधिकार' कहते हैं। इस शक्ति का महत्त्व इस दृष्टि से है कि काग्रेस अपने अधिवेशन के अन्तिम दिनों मे जल्दी जल्दी विधेयक पारित करती है, परन्तु जेबी निषेधाधिकार के कारण ये विधेयक विधि का रूप नहीं ले पाते।

प्रारम्भ मे राष्ट्रपतियों ने निषेधाधिकार की शक्ति का प्रयोग सीमित रूप मे किया, किन्तु बाद मे इसका व्यापक प्रयोग होने लगा। उदाहरण के लिए क्लीवलैण्ड द्वारा ४१४ बार, फ्रेंकलिन रूजवेल्ट द्वारा ६३१ बार और ट्रूमैन द्वारा २२४ बार निषेधाधिकार की शक्ति का प्रयोग किया गया। आइजनहॉवर के द्वारा भी इस शक्ति का पर्याप्त प्रयोग किया गया और अभी १९७३-७४ मे राष्ट्रपति पद और काग्रेस में जो दलीय स्थिति है उसमे राष्ट्रपति निक्सन द्वारा इस शक्ति का व्यापक रूप मे प्रयोग किये जाने की सम्भावना है। राष्ट्रपति निषेधाधिकार की शक्ति के प्रयोग की धमकी देकर भी विधेयक का प्रारूप अपनी इच्छानुसार बनवा सकता है। थ्योडर रूजवेल्ट और ट्रूमन ने इस धमकी का अधिक प्रयोग किया था। ऑग और रे ने राष्ट्रपति की इस निषेधाधिकार शक्ति के सम्बन्ध मे लिखा है कि "प्रथाओं द्वारा निषेधाधिकार मे इतनी वृद्धि हो गयी है कि वह विधेयक को दोहराने की सामान्य शक्ति बन गयी है, जिसका प्रयोग सभी प्रकार के विधेयकों के सम्बन्ध म किया जाता है।"

(iv) कार्यपालिका आदेश (Executive Orders)—निषेधाधिकार राष्ट्रपति को निषधात्मक विधायी शक्ति प्रदान करता है तो राष्ट्रपति के द्वारा सकारात्मक विधायी शक्ति का प्रयोग कार्यपालिका आदेश के माध्यम से किया जाता है। राष्ट्रपति को शासन विषयक आदेश जारी करने का अधिकार प्राप्त है। काग्रेस कानून बनाते समय केवल नीति का निर्देश कर देती है और उनके सम्बन्ध म विशद रूप से नियम बनाने का अधिकार कार्यपालिका विभाग को दे दिया जाता है। इस व्यवस्था से लाभ उठाकर राष्ट्रपति विभिन्न शासन विषयक आदेश जारी करता है, जिनका कानून के समान ही महत्त्व होता है। इसे 'प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) या 'अध्यादेश शक्ति' (Ordinance Power) भी कहते हैं।

व्यवस्थापन को प्रभावित करने के अन्य साधन—उपरोक्त के अतिरिक्त अन्य साधनों से भी राष्ट्रपति व्यवस्थापन को प्रभावित कर सकता है। यद्यपि सविधान राष्ट्रपति को विधेयकों का प्रारूप निर्धारित करने का अधिकार प्रदान नहीं करता, किन्तु व्यवहार मे राष्ट्रपति के अधिक प्रशासनिक अनुभव ने उसे यह शक्ति प्रदान कर दी है। काग्रेस मे अन्दर और बाहर राष्ट्रपति की एक प्रभावशाली लाबी होती है, जो राष्ट्रपति की इच्छानुसार कानून निर्माण का प्रयत्न करती है। राष्ट्रपति को हजारों पदों पर नियुक्तियाँ करने का जो अधिकार प्राप्त है, उसके आधार पर राष्ट्-

पति कांग्रेस सदस्यों पर कृपा कर उनसे बदले में विधि निर्माण क्षेत्र में सहयोग और सद्भाव की आशा कर सकता है। यदि कांग्रेस राष्ट्रपति की इच्छानुसार कानून निर्माण का कार्य नहीं कर रही है तो वह राष्ट्र के सर्वोच्च नेता के रूप में लोकमत से सीधी अपील भी कर सकता है और इन सबके अतिरिक्त कांग्रेस सदस्यों के साथ सम्मेलन और अनुरोध के आधार पर उसके द्वारा विधि निर्माण कार्य को प्रभावित करने का सफल प्रयत्न किया जा सकता है।

वस्तुतः राष्ट्रपति विधि के क्षेत्र में पर्याप्त शक्तिशाली होता है। एल० एच० चेम्बरलेन ने १८४६ से ५० वर्षों में कांग्रेस द्वारा निर्मित ९६ महत्त्वपूर्ण कानूनों का विश्लेषण अपनी पुस्तक 'राष्ट्रपति, कांग्रेस और विधायन' (The President Congress and Legislation) में करते हुए बताया है कि "२० प्रतिशत कानून कार्यपालिका के प्रभाव से ४० प्रतिशत कांग्रेस के प्रभाव से, ३० प्रतिशत कांग्रेस और कार्यपालिका दोनों के समान प्रभाव से तथा १० प्रतिशत गैर सरकारी निजी हितों के प्रभाव से बने थे।" उसने यह भी बताया है कि "बीसवीं सदी के अमरीकी संवैधानिक इतिहास की एक प्रमुख घटना विधि निर्माण के क्षेत्र में कार्यपालिका का एक शक्ति के रूप में उदय है।"

विधि निर्माण के क्षेत्र में राष्ट्रपति की इन समस्त शक्तियों के बावजूद यह मानना होगा कि राष्ट्रपति विधि निर्माण कार्य को प्रभावित ही कर सकता है, नियन्त्रित नहीं। विधि निर्माण में उसका वास्तविक प्रभाव स्वयं उसके व्यक्तित्व, कांग्रेस के दोनों सदनों में उसके दल की स्थिति और उसकी नीति की लोकप्रियता पर निर्भर करता है।

(३) न्यायिक शक्तियाँ—राष्ट्रपति को न्यायिक क्षेत्र में भी शक्तियाँ प्राप्त हैं। सीनेट की सहमति से वह संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति करता है, किन्तु वह उन्हें पदच्युत नहीं कर सकता। संविधान के अनुसार राष्ट्रपति को अमरीकी संघ के विरुद्ध किये गये अपराधों के सम्बन्ध में अपराधियों के दण्ड को स्थगित करने या क्षमा प्रदान करने की शक्ति प्राप्त है, परन्तु महाभियोग द्वारा दण्डित व्यक्तियों को राष्ट्रपति क्षमादान नहीं कर सकता है। राष्ट्रपति सर्वक्षमा (amnesty) अर्थात् एक साथ अनेक व्यक्तियों को क्षमा भी प्रदान कर सकता है, जैसा कि राष्ट्रपति जानसन ने १८६८ में उन सभी व्यक्तियों को क्षमा कर दिया जो गृहयुद्ध में दक्षिण की ओर से लड़े थे।

(४) राष्ट्रपति एक दलीय नेता—राष्ट्रपति अपने दल का नेता होता है और इस रूप में भी उसे बहुत अधिक शक्ति तथा प्रभाव प्राप्त होता है। वह अपने दल की राष्ट्रीय समिति के चेयरमन को नियुक्त करता है और उसके परामर्श से दल के अन्य महत्त्वपूर्ण पदों पर नियुक्ति करता है। उसके दल के पदाधिकारी दल की सभी महत्त्वपूर्ण नीतियों और राष्ट्रीय समस्याओं के बारे में उससे परामर्श करते हैं और उसके विचार सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर निर्णायक होते हैं। यदि राष्ट्रपति व दल

को कांग्रेस के दोनों सदनों में बहुमत प्राप्त हो, तो वह दलीय नेता के रूप में विधि निर्माण का कार्य अपनी इच्छानुसार करवा सकता है।

(५) अमरीकी राष्ट्र का सर्वोच्च नेता—इन सबके अतिरिक्त, राष्ट्रपति अमरीकी राष्ट्र का सर्वोच्च नेता होता है। अमरीकी राष्ट्रपति का चुनाव एकदलीय व्यक्ति के रूप में किया जाता है, लेकिन राष्ट्रीय कार्यपालिका के सर्वोच्च प्रधान के रूप में उसे जो स्थिति प्राप्त होती है, उसके कारण वह दलीय नेता से ऊपर उठकर राष्ट्र का प्रतीक बन जाता है। अमरीकी संविधान निर्माता नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त में विश्वास करते थे और उनके द्वारा संगठित या एकसूत्रीय नेतृत्व के स्थान पर बिखरे हुए या कुछ सीमा तक विभाजित नेतृत्व की व्यवस्था की गई थी, लेकिन अमरीकी जनता की लालसा सदैव एक ही सत्ता या नेतृत्व प्राप्त करने की रही और उनके द्वारा कांग्रेस की अपेक्षा राष्ट्रपति के रूप में ही यह नेतृत्व प्राप्त किया गया है। राष्ट्रपति अमरीकी राजनीति का सर्वोच्च व्यक्तित्व है सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधित्व उसके द्वारा ही किया जा सकता है और कठिन तथा संकटपूर्ण स्थिति में व्यक्ति उसी की ओर बुद्धिमत्तापूर्ण तथा प्रभावशाली नेतृत्व के लिए देखते हैं। इन सब बातों ने उसे राष्ट्र के सर्वोच्च नेता की स्थिति प्रदान कर दी है और उसे यह स्थिति न केवल आन्तरिक राजनीति, वरन् अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में भी प्राप्त होती है। राष्ट्रपति विल्सन ने इस सम्बन्ध में लिखा है, 'समस्त राष्ट्र ने उस राष्ट्रपति निर्वाचित किया है और उसे यह ध्यान रहता है कि अमरीकी राष्ट्र का अन्य कोई राजनीतिक प्रवक्ता नहीं है। केवल उसका उद्घोष ही राष्ट्रीय होता है। उसे एक बार देश का विश्वास तथा प्रशंसा जीत लेने दो और कोई अकेली शक्ति उसका सामना नहीं कर सकती कई शक्तियों का संगठन उसे सरलता से नहीं हरा सकता। उसकी स्थिति राष्ट्रीय हो जाती है। वह किसी एक निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधि न होकर समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधि होता है।"

लेकिन वास्तविक स्थिति बहुत कुछ सीमा तक राष्ट्रपति के अपने व्यक्तित्व पर निर्भर करती है। कूलिज और बुकानन जैसे औसत व्यक्ति राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति का संकुचित रूप ग्रहण करते हुए राष्ट्रीय राजनीति में एक साधारण भूमिका निभाते हैं लेकिन लिंकन, वुडरो विल्सन और फ्रेंकलिन डी० रूजवेल्ट जैसे शक्तिशाली व्यक्ति जीवन के सभी क्षेत्रों में राष्ट्र को शक्तिशाली नेतृत्व प्रदान करते हैं। संकटकाल में तो राष्ट्रपति पद की कोई भी सीमाएँ नहीं रहतीं। मुनरो लिखता है कि, 'युद्धकाल में राष्ट्रपति की शक्तियाँ उतनी ही अधिक हैं जितनी नेपोलियन या आलिवर क्रामवेल की थीं। लेकिन सामान्य काल में राष्ट्रपति एक तानाशाह की भाँति नहीं, वरन् एक प्रजातन्त्रात्मक राज्य के सर्वोच्च प्रधान के रूप में कार्य करता है।

राष्ट्रपति की शक्तियों में वृद्धि और उसके कारण

संयुक्त राज्य अमरीका के संवैधानिक विकास के अध्ययन से यह नितान्त

स्पष्ट हो जाता है कि राष्ट्रपति पद की शक्तियों में निरन्तर वृद्धि होती रही है। आज वाशिंगटन के समय से रिचर्ड निक्सन के समय तक राष्ट्रपति का पद विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली पद हो गया है। अमरीकी संविधान के निर्माता नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त के आधार पर कार्य करते हुए किसी भी पदाधिकारी को बहुत अधिक शक्तिशाली नहीं होने देना चाहते थे, लेकिन परिस्थितियांवश राष्ट्रपति पद सभी संवैधानिक सीमाओं को पार कर गया है। पोटर के शब्दों में, 'राष्ट्रपति का पद एक विस्तारशील शक्ति का पद रहा है।'[1]

राष्ट्रपति पद की शक्तियों में निरन्तर वृद्धि के कारणों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है :

(१) राष्ट्रपति पद की शक्तियों में वृद्धि का सर्वप्रथम कारण इस पद को धारण करने वाले महान व्यक्ति रहे हैं, जिन्होंने संविधान की उदार व्याख्या को ग्रहण करते हुए दूरदर्शिता और साहस के साथ राष्ट्रीय हित में कार्य किया। इन राष्ट्रपतियों की धारणा यह थी कि यदि संविधान स्पष्ट शब्दों में उसे ऐसा करने से रोकता न हो, तो आवश्यकतानुसार जो कुछ भी वह देश के हित में ठीक समझे, करे। ऐसे महान राष्ट्रपतियों में जैक्सन, लिंकन और एफ० डी० रूजवेल्ट के नाम सबसे प्रमुख रूप से लिये जा सकते हैं और वाशिंगटन, थियोडर रूजवेल्ट, विल्सन तथा कनेडी के द्वारा भी बहुत कुछ सीमा तक इसी सिद्धान्त के आधार पर आचरण किया गया। इन राष्ट्रपतियों के कार्यों को देखते हुए वुडरो विल्सन का यह कथन सर्वथा सत्य है कि 'कानून तथा नीति दोनों की दृष्टि से एक राष्ट्रपति उतना महान बनने के लिए स्वतन्त्र है, जितनी कि उसमें सामर्थ्य है। उसकी अपनी क्षमता ही उसकी महानता की सीमा है।"

(२) सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गयी संविधान की व्याख्याओं ने भी राष्ट्रपति पद को शक्तिशाली बनाने का ही कार्य किया है। संविधान की अस्पष्टता या उसके मौन की स्थिति में सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की व्याख्या इस प्रकार से की है कि राष्ट्रपति को बहुमुखी शक्ति प्राप्त हो गयी। उदाहरण के लिए, संविधान सार्वजनिक अधिकारियों की पदच्युति की विधि के सम्बन्ध में मौन है, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने संवैधानिक शब्दावली की उदार व्याख्या करते हुए मेयर्स नामक विवाद में मत प्रकट किया कि राष्ट्रपति स्वेच्छा से ऐसे पदाधिकारियों को पदच्युत कर सकता है। अन्य क्षेत्रों में भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गई व्याख्याओं ने राष्ट्रपति पद की शक्तियों को बढ़ाया है।

(३) राष्ट्रपति पद के लिए प्रजातन्त्रीकरण ने भी उसकी शक्तियाँ बढ़ाने में योग दिया है। यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से राष्ट्रपति का निर्वाचन आज भी अप्रत्यक्ष

[1] "The Presidency has been an office of expanding powers
—A M Potter *American Government and Politics* p 203

रीति से ही होता है किन्तु व्यवहार म राष्ट्रपति के निर्वाचकों का चुनाव जिस प्रकार से होता है और उसके बाद जिस प्रकार से वे राष्ट्रपति का निर्वाचन करते हैं, उसने इस एक प्रत्यक्ष निर्वाचन का रूप प्रदान कर दिया है। राष्ट्रपति पद के इस पूर्ण प्रजातन्त्रीकरण के कारण राष्ट्रपति जनता का निर्द्वन्द्व नेता और उसकी आकांक्षाओं का मूर्त रूप बन गया है। जनता का जैसा विश्वास उसे प्राप्त है वैसा अन्य किसी भी पदाधिकारी या संस्था को नहीं। हेनरी जेम्स फोर्ड के शब्दों में, 'संवैधानिक ढाचे को तोड़कर राष्ट्रपति पद को महान बनाना जनता का ही काम है।'[1]

(४) संयुक्त राज्य अमरीका के एक महान विश्व शक्ति के रूप में उदय और अमरीका द्वारा लोककल्याणकारी राज्य की धारणा को अपना लेने के कारण भी राष्ट्रपति पद की शक्तियों में वृद्धि हुई है। आज की अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में अमरीकी राष्ट्र के अनेक उत्तरदायित्व हैं और ये उत्तरदायित्व राष्ट्रपति के द्वारा ही पूरे किये जा सकते है। राज्य के कार्यक्षेत्र म होने वाली निरन्तर वृद्धि ने राष्ट्रपति की शक्तियों म किस प्रकार से वृद्धि की है, इसके सम्बन्ध मे कुछ उदाहरण दिये जा सकते हैं। १७९१ म राष्ट्रपति वाशिंगटन ने ९ अपराधियों को क्षमा प्रदान की और ६५ व्यक्तियों को सघीय पदों पर नियुक्त किया, जबकि ट्रूमन ने अपने कार्यकाल के एक वर्ष में ५०० नागरिक तथा ९ हजार सैनिक व्यक्तियों को क्षमा प्रदान की और २८ हजार व्यक्तियों को नियुक्त किया। वाशिंगटन ने अपने ८ वर्ष के कार्यकाल म २ विधेयकों पर निषेधाधिकार का प्रयोग किया जबकि फ्रेंकलिन डी० रूजवेल्ट ने अपने १३ वर्ष के कार्यकाल में ६३१ विधेयकों पर निषेधाधिकार का प्रयोग किया।

(५) अमरीकी संविधान को लागू करने के बाद अमरीकी राष्ट्र के सम्मुख जो संकट आये उन्होंने राष्ट्रपति पद की शक्तियों म भारी वृद्धि की है। संकटकाल मे राष्ट्र का कुशल एवं सुदृढ नेतृत्व की आवश्यकता होती है और यह नेतृत्व राष्ट्रपति के द्वारा ही प्रदान किया जा सकता है। लिंकन के शासनकाल में गृहयुद्ध के कारण राष्ट्रपति को नवीन शक्तियां मिलीं। इसी प्रकार प्रथम विश्वयुद्ध, १९३० के आर्थिक संकट द्वितीय विश्वयुद्ध और युद्धोपरान्त शीतयुद्ध ने राष्ट्रपति पद की शक्तियों को बढ़ाया है। इन संकटों का सफलतापूर्वक सामना करने से राष्ट्रपति पद की गौरव गरिमा भी बढ़ी है। संकट के समय राष्ट्रपति को जो शक्तियाँ दी जाती है, संकट समाप्त होने पर उनमें से अधिकांश को वापस ले लिया जाता है किन्तु समस्त शक्तियों को पूर्ण रूप से वापस ले लेना प्राय असम्भव होता है और मुनरो के शब्दों

1 The greatness of the Presidency is the work of the people breaking through the constitutional form' —Henry James Ford (Quoted by Burns and Peltason, *Government by the People* p 378)

मे 'इसलिए प्रत्येक राष्ट्रीय सकट का परिणाम राष्ट्रपति की सत्ता में स्थायी रूप से कुछ बातो का जुड जाना होता है।'[1]

(६) वतमान समय म प्रशासनिक पच्चोदगियां बढ जान से कायपालिका आदेश की प्रवृत्ति का विकास हुआ है और इसने राष्ट्रपति का न केवल प्रशासन वरन् कानून निर्माण के क्षेत्र म भी शक्ति प्रदान कर दी है।

उपरोक्त प्रवृत्तिया के परिणामस्वरूप राष्टपति की शक्तियो मे बहुत अधिक वृद्धि हो गई है और आज की स्थिति के सम्बध मे स्ट्रोग के शब्दो मे कहा जा सकता है कि "विश्व के अय किसी भी सवधानिक राज्य मे अमरीकी राष्ट्रपति के समान व्यापक शक्तियो वाला कोई पदाधिकारी नहीं है।"[2]

राष्ट्रपति और काग्रेस
(President and Congress)

अमरीकी सविधान निर्माता शक्ति विभाजन के सिद्धा त से प्रभावित थे और उनक द्वारा अ यक्षात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया है। इस कारण अमरीकी शासन व्यवस्था के अतगत राष्टपति और काग्रेस के बीच वैसा प्रत्यक्ष सम्बध नही है, जैसा प्रत्यक्ष सम्बन्ध ब्रिटेन मे लोकसदन और कैबीनेट के बीच देखा जा सकता है। ब्रिटेन मे लोकसदन (व्यवस्थापिका) और केबीनेट कार्यकाल और कार्यो दोनो की ही दृष्टि स एक दसरे पर निभर करते ह लेकिन अमरीका म राष्ट्रपति और काग्रेस कायकाल की दृष्टि म एक दूसरे से स्वत त्र है। राष्टपति का कायकाल ४ वष है और काग्रेस के द्वारा महाभियोग के अतिरिक्त अय किसी प्रकार से इस अवधि के पूर्व उसे पदच्युत नही किया जा सकता है एव महाभियोग निश्चित रूप से एक अपवादस्वरूप प्रक्रिया है। इसी प्रकार काग्रेस के दोनो सदनो म से प्रतिनिधि सभा का कायकाल २ वष और सीनेट सदस्यो का कायकाल ६ वष होता है। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री जिस प्रकार सम्राट को परामश देकर लोकसदन को समय के पूव भग करवा सकता है, उसी प्रकार राटष्पति द्वारा प्रतिनिधि सभा या सीनेट को समय के पूव भग नही किया जा सकता। इस प्रकार कायकाल की दृष्टि से राष्ट्रपति और काग्रेस एक दूसरे मे स्वतन्त्र हैं।

लेकिन जहा तक कार्यो का सम्बध है, कानून निर्माण और प्रशासन का काय अपनी प्रकृति से ही एक दूसरे पर निभर है और अमरीकी सविधान निर्माता भी इस तथ्य से परिचित थे। इसके अतिरिक्त सरकार के किसी अग विशेष को अपने सीमित

[1] Every national emergency results therefore in some permanent additions to presidential authority

—W B Munro, *op cit* p 183

[2] 'It is safe to say that in no constitutional state in the world does there exist an officer with such vast powers as those of the President of the American Union

—C F Strong *Modern Political Constitutions* p 266

क्षेत्र मे निरकुशता की प्रवृत्ति को ग्रहण करने से रोकने के लिए उनके द्वारा शक्ति विभाजन के साथ नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त को अपनाया गया है। इस प्रकार अमरीका मे भी राष्ट्रपति और काग्रेस बहुत कुछ सीमा तक एक-दूसरे पर निर्भर है। फाइनर ने इन दानो की अन्तर्निर्भरता का उल्लेख करते हुए लिखा है "राष्ट्रपति और काग्रेस की शक्तिया एक बैंक नोट के दो भागो की भाति हैं, जिसमें प्रत्येक दूसरे के बिना व्यर्थ होता है।"[1]

राष्ट्रपति काग्रेस के कार्यो को कैसे प्रभावित करता है ?

सविधान के अनुसार व्यवस्थापन काग्रेस का एकाधिकार है और राष्ट्रपति कार्यपालिका का प्रधान है। अमरीकी राष्ट्रपति ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री की भाति व्यवस्थापिका मे स्वय उपस्थित होकर विधेयक प्रस्तावित करने और विधि निर्माण के कार्य मे व्यवस्थापिका को नेतृत्व प्रदान करने का कार्य तो नही करता, लेकिन वह अनेक प्रकार से काग्रेस के कार्यों को प्रभावित करता है।

सर्वप्रथम राष्ट्रपति को अधिकार है कि वह समय समय पर काग्रेस का सन्देश भेजे। इन सन्देशो मे वह देश की सामान्य स्थिति की विवेचना करते हुए काग्रेस को सुझाव देता है कि विद्यमान परिस्थितियो का मुकाबला करने और देश के सामने प्रस्तुत समस्याओ को हल करने के लिए किस प्रकार का व्यवस्थापन आवश्यक है। सवैधानिक इतिहास से स्पष्ट होता है कि इन सन्देशो का प्राय सम्मान किया जाता है और काग्रेस के व्यवस्थापन कार्यक्रम का श्रीगणेश सामान्यतया राष्ट्रपति के सन्देश से ही होता है।

द्वितीय, यदि राष्ट्रपति समझे कि काग्रेस के द्वारा अनुचित प्रकार के कानूनो का निर्माण करने की चेष्टा की जा रही है, तो राष्ट्रपति निषेधाधिकार का प्रयोग कर सकता है। राष्ट्रपति को यद्यपि पूर्ण निषेधाधिकार नही, वरन मर्यादित निषेधाधिकार ही प्राप्त है, लेकिन सामान्यतया ऐसा देखा गया है कि राष्ट्रपति द्वारा किया गया विलम्बकारी निषेधाधिकार का प्रयोग विधेयक के जीवन को समाप्त ही कर देता है।

तृतीय, राष्ट्रपति को 'कार्यपालिका आदेश' जारी करने की शक्ति प्राप्त है, जिनका प्रभाव कानून के समान ही होता है। इन कार्यपालिका आदेशो के माध्यम से राष्ट्रपति सकारात्मक रूप से कानून निर्माण की शक्तियो का प्रयोग कर सकता है।

इनके अतिरिक्त राष्ट्रपति अन्य प्रकार से भी विधि निर्माण को प्रभावित कर सकता है। राष्ट्रपति के द्वारा काग्रेस के विशेष अधिवेशन बुलाये जा सकते हैं।

1 'The powers of the President and Congress resemble the two halves of a bank note, each useless without the other
—S E Finer *Comparative Government* p 233

संविधान राष्ट्रपति को विधेयकों का प्रारूप निर्धारित करने का अधिकार प्रदान नहीं करता, किन्तु व्यवहार में राष्ट्रपति के अधिक प्रशासनिक अनुभव ने उसे यह शक्ति प्रदान कर दी है। कांग्रेस के अन्दर और बाहर राष्ट्रपति की एक प्रभावशाली लॉबी होती है, जो राष्ट्रपति की इच्छानुसार कानून निर्माण का समर्थन करती है। राष्ट्रपति को हजारों पदों पर नियुक्तियाँ करने का जो अधिकार प्राप्त है उसके आधार पर राष्ट्रपति कांग्रेस सदस्यों पर कृपा कर उनसे बदले में विधि निर्माण क्षेत्र में सहयोग और सद्भाव की आशा कर सकता है। यदि कांग्रेस राष्ट्रपति की इच्छानुसार कानून निर्माण का कार्य नहीं कर रही है तो वह राष्ट्र के सर्वोच्च नेता के रूप में लोकमत से सीधी अपील कर सकता है और इन सबके अतिरिक्त कांग्रेस सदस्यों के साथ सम्मेलन और अनुरोध के आधार पर उनके द्वारा विधि निर्माण कार्य को प्रभावित करने का सफल प्रयत्न किया जा सकता है।

इस प्रकार राष्ट्रपति व्यवस्थापन के क्षेत्र में कांग्रेस के कार्यों पर पर्याप्त प्रभाव डालता है। कांग्रेस राष्ट्रपति के सन्देश से प्राप्त प्रेरणा के आधार पर व्यवस्थापन कार्य प्रारम्भ करती है और व्यवस्थापन बहुत कुछ सीमा तक राष्ट्रपति की इच्छानुसार ही सम्पन्न होता है।

कांग्रेस राष्ट्रपति के कार्यों को कैसे प्रभावित करती है ?

यदि एक ओर राष्ट्रपति कांग्रेस के व्यवस्थापन कार्य को प्रभावित करता है तो दूसरी ओर कांग्रेस भी राष्ट्रपति के क्रियाकलाप पर प्रभाव डालती है।

जहाँ तक राष्ट्रपति की प्रशासनिक शक्तियों का सम्बन्ध है उनके प्रयोग में कांग्रेस विशेषतया सीनेट राष्ट्रपति की सहभागिनी है। कार्यपालिका के प्रधान के रूप में राष्ट्रपति उच्च पदों पर नियुक्तियाँ करता है, लेकिन इन नियुक्तियों को सीनेट के द्वारा अपने सामान्य बहुमत से स्वीकार किया जाना आवश्यक है। राष्ट्रपति के द्वारा विदेशों के साथ सन्धियाँ करने का कार्य किया जाता है, लेकिन ये सन्धियाँ तभी लागू हो सकती हैं, जबकि सीनेट अपने दो तिहाई बहुमत से उनकी पुष्टि कर दे। परराष्ट्र सम्बन्धों के क्षेत्र में राष्ट्रपति द्वारा किये जाने वाले कार्यों पर सीनेट की 'विदेशी मामलों की समिति' कड़ी नजर रखती है और वर्तमान समय में राष्ट्रपति सामान्यतया वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन सीनेट की इस समिति और सीनेट के अन्य महत्वपूर्ण सदस्यों के परामर्श से ही करते हैं। किसी देश के विरुद्ध युद्ध की घोषणा करने के पूर्व भी राष्ट्रपति के लिए यह जरूरी होता है कि वह इस सम्बन्ध में प्रतिनिधि सभा और सीनेट की सम्मिलित स्वीकृति प्राप्त कर ले।

कांग्रेस राष्ट्रपति के कार्यों को एक अन्य प्रकार से भी प्रभावित कर सकती है। राष्ट्रपति प्रशासन का प्रधान है, लेकिन प्रशासन सम्बन्धी कार्यों के सम्पादन हेतु धन की आवश्यकता होती है और धन की स्वीकृति कांग्रेस के द्वारा ही दी जाती है। कांग्रेस राष्ट्रपति द्वारा चाहे गये धन में कटौती करके उसे प्रशासन के क्षेत्र में कुछ सीमा तक कांग्रेस की इच्छानुसार कार्य करने के लिए बाध्य कर सकती है।

करना स्वागत समारोह करना और औपचारिक भाषण करना आदि। लेकिन इस क्षेत्र में भी दोनों की स्थिति में महत्त्वपूर्ण अन्तर है। ब्रिटिश सम्राट क्योंकि एक वैधानिक प्रधान के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है उसके ये औपचारिक कार्य उसके कर्तव्यों का एक बड़ा भाग है, लेकिन अमरीकी राष्ट्रपति न केवल राज्य वरन राष्ट्रीय प्रशासन का भी प्रमुख होता है और इस कारण उसके द्वारा किये जाने वाले ये औपचारिक कार्य उसके कर्तव्यों का एक बहुत छोटा और अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण भाग होते हैं।

असमानताएँ—(१) ब्रिटिश सम्राट ब्रिटिश राज्य का नाममात्र का प्रधान होता है, जबकि अमरीका का राष्ट्रपति राज्य एवं शासन दोनों का प्रधान होता है। इंगलण्ड का सम्राट राज्य करता है, शासन नहीं करता। इसका तात्पर्य यह है कि शासन के क्षेत्र में इंगलण्ड के सम्राट को कोई वास्तविक शक्तियाँ प्राप्त नहीं हैं। ब्रिटिश सम्राट तो एक वंशानुगत सम्राट है, जिसे महिमा और गौरव तो प्राप्त है लेकिन शक्ति नहीं। वस्तुस्थिति यह है कि यद्यपि इंगलण्ड का शासन सम्राट के नाम से चलाया जाता है किन्तु सम्राट के पास कोई अधिकार नहीं रह गये हैं और सम्राट के तथाकथित अधिकारों का प्रयोग केबीनेट के द्वारा किया जाता है। सम्राट के पास अब केवल प्रोत्साहन, परामर्श और चेतावनी देने का अधिकार ही रह गया है।

इसके विपरीत अमरीकी राष्ट्रपति नाममात्र की कार्यपालिका नहीं वरन वास्तविक कार्यपालिका है। उसके द्वारा उन सभी शक्तियों का स्वयं प्रयोग किया जाता है जिनका प्रयोग ब्रिटेन में प्रधानमन्त्री और केबीनेट करते हैं। वह मन्त्रियों की नियुक्ति और पदच्युति करता है। सेना के विभिन्न अंगों के प्रधानों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक और राजनीतिक पदों पर नियुक्तियाँ करता है।

(२) ब्रिटिश सम्राट को संसद के द्वारा पारित विधेयकों पर अपनी अनुमति देनी ही होती है और रानी ऐनी के बाद अब तक किसी सम्राट ने निषेधाधिकार की शक्ति का प्रयोग नहीं किया है लेकिन अमरीका के राष्ट्रपति को 'विलम्बकारी निषेधाधिकार' तथा 'जेबी निषेधाधिकार' की शक्ति प्राप्त है। निषेधाधिकार की यह शक्ति मर्यादित होते हुए भी वास्तविक है और वर्तमान समय में इसके प्रयोग की प्रवृत्ति बढ़ती ही जा रही है।

(३) ब्रिटिश सम्राट को प्रशासनिक आदेश या अध्यादेश जारी करने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है, लेकिन अमरीकी राष्ट्रपति प्रशासनिक आदेश जारी कर सकना व अन्य अनेक उपायों से भी विधि निर्माण कार्य को प्रभावित कर सकता है।

(४) अमरीका के राष्ट्रपति तथा उसके मन्त्रियों के सम्बन्ध भी सम्राट और उसके मन्त्रियों के सम्बन्धों से नितान्त भिन्न हैं। ब्रिटेन में सम्राट परामर्श देता है और निर्णय मन्त्री करते हैं लेकिन अमरीका में निर्णय राष्ट्रपति करता है और मन्त्रियों को उसकी आज्ञानुसार चलना होता है।

इसमे सन्देह नही कि सम्राट अमरीकी राष्ट्रपति की तुलना मे केवल नाममात्र का प्रधान है, किन्तु सम्राट के व्यक्तित्व मे जो आकर्षण है और उसके पद मे जो गौरव है, वह राष्ट्रपति के व्यक्तित्व और पद मे नही है। ब्रिटिश सम्राट निष्पक्ष तथा निर्दलीय होता है और इस कारण ब्रिटेन का प्रत्येक नागरिक उसका जयजयकार करता है, लेकिन अमरीका का राष्ट्रपति दलीय प्रतिनिधि होता है और इस कारण उसे अपने विरोधी पक्ष की आलोचना भी सहन करनी होती है। सम्राट अपने जीवनपर्यन्त शासन करता है और उसे अपनी प्रजा मे पिता का स्थान प्राप्त होता है, लेकिन अमरीकन राष्ट्रपति राजनीतिक दल की सहायता से चुनाव के आधार पर और केवल ४ वर्ष की अवधि के लिए इस पद को प्राप्त करता है।

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि अमरीका का राष्ट्रपति ब्रिटिश सम्राट से अधिक भी है और कम भी।

अमरीका का राष्ट्रपति और ब्रिटिश प्रधानमन्त्री

अमरीकी राष्ट्रपति न केवल ब्रिटिश सम्राट से कुछ कम और कुछ अधिक है वरन वह ब्रिटिश प्रधानमन्त्री से भी कुछ कम और कुछ अधिक है। जबकि ब्रिटिश सम्राट राज्य करता है, शासन नही और ब्रिटिश प्रधानमन्त्री शासन करता है, राज्य नही, अमरीकी राष्ट्रपति राज्य भी करता है और शासन भी। ब्रोगन के शब्दो मे **'उसके व्यक्तित्व मे सम्राट और प्रधानमन्त्री दोनो का समावेश है।'** दूसरे शब्दो मे **'वह एक ऐसा सम्राट है, जो कि स्वय ही अपना प्रधानमन्त्री है।'**

सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति और ब्रिटेन का प्रधानमन्त्री दोनो ही अपने अपने देशो मे प्रमुख शासनाधिकारी हैं और यह कहना निश्चित रूप से बहुत अधिक कठिन है कि इनमे से कौन अधिक शक्तिशाली है। यह अवश्य ही एक तथ्य है कि दोनो की स्थिति भिन्न है और उनकी स्थिति मे यह भेद—दोनो की शासन व्यवस्थाओ के मूल भेद—ससदात्मक और अध्यक्षात्मक शासन के भेद के कारण है।

इन दोनो पदाधिकारियो की शक्तियो का तुलनात्मक अध्ययन करने के पूर्व दोनो सम्बन्धित देशो की शासन व्यवस्थाओ के एक भेद को दृष्टि मे रखा जाना चाहिए और वह ब्रिटेन के एकात्मक शासन व अमरीका के सघात्मक शासन का भेद है। ब्रिटेन मे एकात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण ब्रिटिश प्रधानमन्त्री पूरे ग्रेट ब्रिटेन के लिए कार्य करता है। अमरीका मे सघात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण राष्ट्रपति सघीय क्षेत्र मे ही कार्य कर सकता है, इकाइयो के क्षेत्र मे नही। यद्यपि अमरीकी सघ मे सघीय केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति रही जाती है, लेकिन कितना भी केन्द्रीयकरण क्यो न हो, सघात्मक व्यवस्था राष्ट्रपति के कार्यक्षेत्र को सीमित अवश्य ही करती है।

एक अन्य भेद यह है कि अमरीका के राष्ट्रपति द्वारा जिन शक्तियो का प्रयोग किया जाता है वे सविधान द्वारा स्वय उसे ही प्रदत्त हैं, किन्तु ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री द्वारा जिन शक्तियो का प्रयोग किया जाता है, व उसकी अपनी शक्तियाँ न होकर

सविधान द्वारा सम्राट को प्रदत्त शक्तियाँ हैं। ब्रिटेन मे प्रधानमन्त्री पद को कानूनी मान्यता भी अभी हाल ही म प्राप्त हुई है। इस प्रकार अमरीकी राष्ट्रपति की शक्तियो का आधार सविधान और कानून है, लेकिन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री का आधार प्रथाएँ और परम्पराएँ हैं। लेकिन इस सैद्धान्तिक भेद के कारण इन दानो पदाधिकारियो की व्यावहारिक स्थिति मे कोई अन्तर नही पडा है और वस्तुस्थिति यह है कि आज अमरीकी राष्ट्रपति को भी प्राप्त शक्तियो का एक अश परम्पराओ पर ही आधारित है।

इन दोनो पदाधिकारियो की शक्तियो का तुलनात्मक अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) प्रशासनिक क्षेत्र मे—प्रशासनिक क्षेत्र मे अमरीकी राष्ट्रपति निर्विवाद रूप से ब्रिटिश प्रधानमन्त्री से अधिक शक्तिशाली होता है और उसे यह अधिक महत्त्वपूर्ण स्थिति दो बातो के कारण प्राप्त होती है।

प्रथमत अमरीकी राष्ट्रपति का कार्यकाल निश्चित होता है लेकिन प्रधानमन्त्री का कार्यकाल लोकसदन के विश्वास पर निर्भर करता है और लोकसदन कभी भी अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर कैबीनेट को कभी भी पदच्युत कर सकता है। यद्यपि बीसवी सदी मे लोकसदन द्वारा अविश्वास प्रस्ताव पारित किये जाने का कोई उदाहरण नही है, लेकिन ऐसे अनेक उदाहरण हैं जबकि प्रधानमन्त्री के प्रति लोकसदन के विश्वास मे कमी होने पर एक के स्थान पर दूसरी सरकार का निर्माण हुआ या प्रधानमन्त्री के द्वारा लोकसदन को विघटित करवा कर जनता मे नवीन आदेश प्राप्त किया गया। प्रधानमन्त्री पदधारी क प्रति लोकसदन म तीव्र असन्तोष उत्पन्न होने के कारण १९४० में चेम्बरलेन के स्थान पर चर्चिल और १९५७ में ईडन के स्थान पर मकमिलन ने प्रधानमन्त्री पद धारण किया था। अभी हाल ही के वर्षों म १९६४ मे निर्मित विल्सन सरकार ने १९६६ मे ही जनता से नवीन आदेश प्राप्त किया और जून १९६६ मे पुन प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के बाद उन्होंने जून १९७० मे इस आशा से चुनाव कराये थे कि चुनाव के परिणामस्वरूप लोकसदन मे पुन मजदूर दलीय बहुमत होगा, लेकिन उन्हें निराश होना पडा। ये उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते है कि ब्रिटिश प्रधानमन्त्री लोकसदन के प्रति और अन्तिम रूप मे जनता के प्रति उत्तरदायी होता है और यह तथ्य प्रधानमन्त्री की शक्ति पर निश्चित रूप से एक अकुश है।

लेकिन इसके विपरीत राष्ट्रपति को उसके चार वर्ष के निश्चित कार्यकाल के पूर्व काग्रेस महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से पदच्युत नही कर सकती है। महाभियोग भी किसी नीति भेद के कारण नही चलाया जा सकता है, अपितु सविधान के उल्लघन, देशद्रोह, भ्रष्टाचार या ऐसे ही किन्ही गम्भीर आरोपो के आधार पर चलाया जा सकता है। अब तक महाभियोग का राष्ट्रपति के विरुद्ध कभी भी सफल प्रयोग नहीं किया जा सका है। वर्तमान समय मे स्थिति यह है कि

राष्ट्रपति अपने दूसरे कार्यकाल में संवैधानिक सीमाओं के अन्तर्गत रहते हुए पूर्ण स्वच्छन्दता के साथ आचरण कर सकता है, क्योंकि अब जनता या कांग्रेस न तो उसे पुरस्कृत कर सकती है और न ही दण्डित।

द्वितीयतः यद्यपि ब्रिटिश प्रधानमन्त्री और अमरीकी राष्ट्रपति दोनों का ही अपना मन्त्रिमण्डल होता है, लेकिन अपने मन्त्रिमण्डल के साथ सम्बन्धों में राष्ट्रपति की स्थिति जितनी शक्तिशाली है, प्रधानमन्त्री की स्थिति उतनी शक्तिशाली कभी भी नहीं हो सकती है। अमरीकी राष्ट्रपति को अपने मन्त्रिमण्डलीय साथियों के चयन में जितनी स्वतन्त्रता है, प्रधानमन्त्री को उतनी स्वतन्त्रता नहीं है। लोकसदन द्वारा एक बार नेता चुन लिए जाने के बाद भी प्रधानमन्त्री का सम्पूर्ण राजनीतिक अस्तित्व लोकसदन के बहुमत समर्थन पर निर्भर करता है। इस कारण प्रधानमन्त्री अपने दल के महत्त्वपूर्ण सदस्यों को मन्त्रिमण्डल में शामिल करने के लिए बाध्य होता है और सामान्यतया मन्त्रिमण्डल के कम से कम एक दो सदस्य इतने प्रभावशाली होते हैं कि प्रधानमन्त्री कभी भी उन पर पूर्ण प्रभुत्व स्थापित नहीं कर सकता। लेकिन अमरीकी मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के सम्मुख बौने की भांति होते हैं और उनमें से कोई राष्ट्रपति का सफल विरोध नहीं कर पाता।

ब्रिटेन में सुस्थापित राजनीतिक परम्परा के अनुसार प्रधानमन्त्री के लिए यह आवश्यक है कि वह सभी महत्त्वपूर्ण विषय निर्णय के लिए कैबीनेट के सामने प्रस्तुत करे। प्रधानमन्त्री यह भी चेष्टा करता है कि कैबीनेट के निर्णय सर्वसम्मत हों। इस सर्वसम्मति को प्राप्त करने के लिए जहां अनेक बार कैबीनेट सदस्य प्रधानमन्त्री की इच्छा के सामने झुकते हैं, वहां कभी कभी प्रधानमन्त्री को भी कैबीनेट के महत्त्वपूर्ण सदस्यों के सामने सिर झुकाना होता है। लेकिन अमरीका में राष्ट्रपति को इस बात की स्वतन्त्रता है कि वह मन्त्रिमण्डल से परामर्श ले अथवा न ले और यदि वह मन्त्रिमण्डल से परामर्श लेता है, तो इस परामर्श को स्वीकार या अस्वीकार करना उसके अपने विवेक पर निर्भर करता है। अमरीकी मन्त्रिमण्डल के सम्बन्ध में लिंकन ने एक बार पूर्णतया सत्य ही कहा था कि 'अमरीकी मन्त्रिमण्डल में केवल एक मत राष्ट्रपति के मत का महत्त्व होता है।'[1]

अमरीका में राष्ट्रपति विल्सन ने अपने शक्तिशाली सचिव ब्रायन को और राष्ट्रपति आयर ने अपने सचिव ब्लेन को बिना किसी कठिनाई के हटा दिया था, लेकिन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को ऐसा करने के पूर्व दस बार साहस एकत्रित करना पड़ता है। इसलिए ब्रोगन ने कहा है कि "अमरीकन पद्धति में मन्त्रिमण्डल वैसा ही होता है जैसा राष्ट्रपति उसको बनाना चाहता है। यह उसकी कठपुतली है। उसकी तनिक सी इच्छा इसे हटा सकती है जैसे कि उसकी तनिक सी इच्छा इसे बना

[1] The only vote that counts is the President's own' —Lincoln
(Quoted from Ferguson and McHenry
The American Federal Government p 300)

सकती है।'[1] अमरीका मे वास्तविक कार्यपालिका शक्ति अकेले राष्ट्रपति को प्राप्त है लेकिन ब्रिटेन मे कार्यपालिका शक्ति केबीनेट सहित *प्रधानमन्त्री को प्राप्त होती है।* डॉ० जनिंग्ज ने अटलाटिक घोषणापत्र का सन्दर्भ देते हुए लिखा है कि अमरीका के राष्ट्रपति ने ही उसे संयुक्त राज्य अमरीका की ओर से स्वीकृति दे दी, परन्तु इंगलण्ड की ओर से उसे इंगलण्ड के प्रधानमन्त्री ने नहीं, वरन युद्ध मन्त्रिमण्डल ने स्वीकार किया।

(२) विधायी क्षेत्र मे—*यद्यपि प्रशासनिक क्षेत्र मे अमरीकी राष्ट्रपति ब्रिटिश* प्रधानमन्त्री से अधिक शक्तिशाली है लेकिन अन्य क्षेत्रों मे ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की स्थिति सुदृढ है। अमरीका मे राष्ट्रपति कुछ उपायो के आधार पर कांग्रेस और उसके व्यवस्थापन कार्य को *प्रभावित अवश्य ही कर सकता है, लेकिन वह कांग्रेस* का स्वामी कभी भी नहीं बन सकता। इस सम्बन्ध मे लास्की ने लिखा है "वह तर्क कर सकता है धमकी दे सकता है, खुशामद कर सकता है समझा सकता है परन्तु वह सदैव कांग्रेस के बाहर है और एक ऐसी इच्छा के आधीन है जिस पर उसका कोई नियन्त्रण नहीं है।'[2] यदि कांग्रेस के दोनों सदनों मे राष्ट्रपति के ही बहुमत प्राप्त हो तो भी राष्ट्रपति और कांग्रेस मे कुछ सीमा तक द्वेष होता ही है और कांग्रेस समस्त व्यवस्थापन कार्य राष्ट्रपति की इच्छानुसार नहीं करती है। लिंकन, विल्सन और रूजवेल्ट जैसे शक्तिशाली राष्ट्रपति भी युद्ध या अन्य किसी संकट की *अवधि मे ही कांग्रेस से अपनी इच्छानुसार व्यवस्थापन करवा सके है। यदि सामान्य* काल हो और इसके साथ ही राष्ट्रपति के विरोधी दल को कांग्रेस मे बहुमत प्राप्त हो, तो राष्ट्रपति की स्थिति बहुत अधिक कठिन और कभी कभी तो दयनीय हो जाती है, क्योंकि विरोधी दल राजनीतिक लाभ उठाने को दृष्टि से आवश्यक कानूनों का निर्माण न कर प्रशासन को निर्बल बनाने का प्रयत्न कर सकता है।

लेकिन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को कभी भी व्यवस्थापन के क्षेत्र मे कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता। प्रधानमन्त्री लोकसदन मे बहुमत दल का नेता होता है और बहुमत दल के निश्चित समर्थन के आधार पर वह अपनी इच्छानुसार व्यवस्थापन करवा सकता है। इसके अतिरिक्त प्रधानमन्त्री को लोकसदन को विघटित करने *की एक ऐसी शक्ति प्राप्त होती है जिसके आधार पर वह लोकसदन को अपनी इच्छा* के सम्मुख झुकने के लिए बाध्य कर सकता है। ब्रोगन ने तुलनात्मक दृष्टि से लिखा है *"एक प्रधानमन्त्री लोकसदन मे अपने बहुमत दल के समर्थन के कारण कार्यपालिका*

1 'In the American system the Cabinet is only what the President wants it to be It is his tool and for its members a breath unmakes them as a breath has made
—Brogan *American Political System*, p 127

2 'He can argue bully persuade cajole but he is always outside *Congress* and subject to a will he cannot dominate
—H J Laski *The American Presidency* p 24

और व्यवस्थापिका के क्षेत्र मे ऐसे अधिकारो का उपभोग करता है, जिनका उपभोग अमरीका के सर्वाधिक शक्तिशाली राष्ट्रपति भी नहीं कर सके हैं। यदि उन्होने किया भी है, तो बहुत ही थोड़े समय के लिए।"[1]

(३) वित्तीय क्षेत्र में—वित्तीय क्षेत्र मे भी राष्ट्रपति की तुलना मे ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की सुदृढ स्थिति प्राप्त है। अमरीका म बजट 'बजट ब्यूरो' (Bureau of the Budget) के द्वारा राष्ट्रपति क निर्देशन म तैयार किया जाता है और ब्यूरो के निर्देशक द्वारा प्रतिनिधि सभा म प्रस्तुत किया जाता है। काग्रेस को बजट मे सशोधन करने का पूर्ण अधिकार प्राप्त है और व्यवहार मे भी काग्रेस बजट मे अनेक कटौतिया और अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करती है। इससे अमरीकी राष्ट्रपति को बहुत कठिनाई होती है लेकिन इस सम्बन्ध म ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की स्थिति सुदृढ है। वित्तमन्त्री के द्वारा प्रधानमन्त्री की देखरेख म बजट तैयार किया जाता है और वित्तमन्त्री उस लोकसदन के सम्मुख प्रस्तावित करता है। बजट म सदन के द्वारा केवल वे ही परिवर्तन किये जा सकते हैं जो वित्त मन्त्री अर्थात सरकार को स्वीकार हो। बजट म कटौती का मतलब मन्त्रिमण्डल के प्रति अविश्वास होता है और लोकसदन का बहुमत दल कभी भी अपनी ही सरकार का पतन नही चाहता। इसलिए प्रधानमन्त्री लोकसदन म अपने बहुमत की सहायता से बहुत साधारण से परिवर्तनों सहित बजट पारित करवा लेता है।

(४) न्यायिक नियन्त्रण की दृष्टि से—यदि इन दोनो पदाधिकारियो के न्यायपालिका के साथ सम्बन्धो या न्यायपालिका के इन पर नियन्त्रण की दृष्टि से विचार किया जाय तो भी ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की स्थिति राष्ट्रपति की तुलना मे सुदृढ है। ब्रिटेन मे ससद की सर्वोच्चता है और इस कारण ब्रिटिश न्यायपालिका ससद या प्रधानमन्त्री के कार्यों को अवैधानिक घोषित नही कर सकती। लेकिन अमरीकी राष्ट्रपति पर सर्वोच्च न्यायालय का नियन्त्रण है। उदाहरणार्थ, अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय न राष्ट्रपति रूजवेल्ट की 'नव निर्माण आर्थिक नीति' (New Deal Laws) को अवैधानिक घोषित कर दिया था। इसी प्रकार कोरिया युद्ध के समय जब राष्ट्रपति ट्रूमन ने इस्पात के निजी कारखानो पर नियन्त्रण स्थापित कर लिया क्योंकि उनमे हडताल के भय से युद्ध और प्रतिरक्षा प्रयत्नो म बाधा पहुचने की आशका थी, तो सर्वोच्च न्यायालय ने राष्ट्रपति की इस कार्यवाही को अवैध घोषित कर दिया।

1 A Prime Minister with a party majority in the House of Commons commands all the executive and legislative powers in a fashion that the most potent American President has not done save for very brief periods

—Brogan *American Political System* p 118

(५) दलीय नेता की दृष्टि से—आज की स्थिति मे, ब्रिटेन और अमरीका, दोनो ही देशो मे राजनीतिक दल देश की व्यावहारिक राजनीति मे महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ब्रिटेन मे प्रधानमन्त्री अपने दल का और अमरीका मे राष्ट्रपति अपने दल का नेता होता है, लेकिन दलीय नेता के रूप म प्रधानमन्त्री की स्थिति अधिक सुदृढ है। इसका एक कारण तो ससदात्मक और अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था का भेद है। इसके अतिरिक्त ब्रिटिश राजनीतिक दलो मे जहा कठोर अनुशासन है, अमरीकी राजनीतिक दलो का अनुशासन अपेक्षाकृत शिथिल है। ब्रोगन ने इस सम्बन्ध मे लिखा है, "न केवल प्रधानमन्त्री राजनीतिक जीवन का ऐसा केन्द्र है, जसा केन्द्र अमरीकी जीवन मे नहीं देखा जाता, वरन वह एक ऐसे रूप मे दलीय सगठन का प्रधान होता है, जिस रूप मे बहुत कम राष्ट्रपति देखे जाते हैं।"[1]

अमरीकी राष्ट्रपति और ब्रिटिश प्रधानमन्त्री पद की तुलनात्मक विवेचना के आधार पर कहा जा सकता है कि जहा राष्ट्रपति प्रशासनिक क्षेत्र मे अधिक शक्तिशाली है, प्रधानमन्त्री की स्थिति विधायी वित्तीय और कुछ अन्य क्षेत्रो मे अधिक सुदृढ है। लास्की का यह कथन सत्य है कि 'वह (अमरीकी राष्ट्रपति) ब्रिटिश प्रधानमन्त्री से कुछ कम भी है और कुछ अधिक भी।'

इन दोनो पदाधिकारियो म कौन अधिक शक्तिशाली है इसका कोई ऐसा उत्तर नही है जो सभी परिस्थितियो मे सही उतरे। ब्रोगन और रैम्जेम्योर की विचारधारा ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को अधिक शक्तिशाली समझने की रही है। उनका दृष्टिकोण इस विचार पर आधारित है कि विधायी और वित्तीय क्षेत्र म राष्ट्रपति पद की सीमाएँ अनेक बार प्रशासनिक क्षेत्र मे भी राष्ट्रपति को निर्बल बना देती हैं, क्योंकि प्रशासनिक काय आवश्यक कानूनो और वित्त के आधार पर ही सम्भव हो पाता है। इसी दृष्टिकोण को व्यक्त करते हुए रैम्जेम्योर लिखते है कि "इगलैण्ड का प्रधानमन्त्री जब तक उसके पीछे लोकसदन मे सशक्त और निष्ठावान् बहुमत है, इतनी अधिक शक्तियो से सुशोभित है कि विश्व के किसी भी देश का सवधानिक अध्यक्ष, यहा तक कि सयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति भी उसका मुकाबला नहीं कर सकता।" दूसरी ओर यद्यपि मुनरो, आग और स्ट्रॉग आदि लेखको के द्वारा इन दोनो पदो का विशद् तुलनात्मक अध्ययन नही किया गया है, लेकिन वे सामान्यतया राष्ट्रपति को अधिक शक्तिशाली मानते हैं।

इन दोनो पदाधिकारियो मे एक विशेष समय पर कौन अधिक शक्तिशाली होगा यह अनेक तथ्यो पर निभर करता है जिनमे प्रथम और एक मुख्य तत्त्व है सम्बन्धित पदाधिकारियो का व्यक्तित्व। कूलिज बुचानन या हूवर जसे राष्ट्रपतियो के

[1] 'Not only is the Prime Minister the political centre in a way unknown to American life he is the head of the party organisation in a way that few American Presidents have been
—Brogan *American Political System* p 118

द्वारा ग्लैडस्टन, डिजरैले, पामर्स्टन, पील और चर्चिल जैसे प्रधानमन्त्रियों का मुकाबला नहीं किया जा सकता और न ही चेम्बरलेन, मैकमिलन या सर एलेक डगलस होम जैसे औसत प्रधानमन्त्री जैक्सन, लिंकन या एफ डी रूजवेल्ट जैसे राष्ट्रपतियों का मुकाबला कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त राष्ट्रपति की स्थिति तत्कालीन परिस्थितियों (संकटकाल में उसकी शक्तियां निश्चित रूप से बहुत बढ़ जाती हैं) और कांग्रेस में उसके दल की स्थिति पर निर्भर करती है। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की स्थिति भी तत्कालीन परिस्थितियों, अपने राजनीतिक दल में उसकी स्थिति और लोकसदन में उसके राजनीतिक दल की स्थिति पर निर्भर करती है। यदि प्रधानमन्त्री को अपने दल में निर्विवाद नेतृत्व की स्थिति प्राप्त नहीं है या लोकसदन में उसके राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं है या बहुत ही थोड़ा बहुमत प्राप्त है, तो ऐसे प्रधानमन्त्री की तुलना में अमरीकी राष्ट्रपति की स्थिति अधिक सुदृढ़ होती है।

उपराष्ट्रपति
(Vice-President)

संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान में राष्ट्रपति पद के साथ-साथ उपराष्ट्रपति पद की भी व्यवस्था की गयी है। जब अमरीकी संविधान का निर्माण हो रहा था तो अनेक व्यक्तियों ने उपराष्ट्रपति पद के प्रति कोई उत्साह नहीं दिखाया और बेंजामिन फ्रैंकलिन जैसे व्यक्तियों ने उपराष्ट्रपति को 'व्यर्थ का महिमावान् व्यक्ति' (His Superfluous Highness) भी कहा था। परन्तु अन्य सदस्यों ने इस पद की आवश्यकता और महत्व पर बल दिया। एक विशेष कारण से उपराष्ट्रपति पद की व्यवस्था करना आवश्यक था।

योग्यताएँ, निर्वाचन आदि—संविधान के अनुसार उपराष्ट्रपति पद के लिए भी वे ही योग्यताएँ हैं, जो राष्ट्रपति पद के लिए हैं। वर्तमान समय में अमरीका के प्रमुख राजनीतिक दल उपराष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार का चयन इस दृष्टि से करते हैं कि राष्ट्रपति पद पर उनके उम्मीदवार के विजय के अवसर बढ़ जायँ। उदाहरण के लिए, यदि राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार उत्तरी राज्यों से है, तो उपराष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार दक्षिणी राज्यों में से लिया जाता है। कभी-कभी उपराष्ट्रपति पद को दल के असन्तुष्ट वर्ग को सन्तुष्ट करने का आधार भी बना लिया जाता है। दोनों का चुनाव एक ही निर्वाचक मण्डल द्वारा किया जाता है। मूल संविधान में इन दोनों के अलग अलग निर्वाचन की व्यवस्था नहीं थी। जिसे दूसरे नम्बर पर सबसे अधिक मत प्राप्त होते, उसे उपराष्ट्रपति बना दिया जाता था।

लेकिन यह व्यवस्था सन १८०४ में १२वें संशोधन द्वारा बदल दी गयी। नई व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रपति व उपराष्ट्रपति पद के लिए अलग अलग उम्मीदवार खड़े किये जाने व दोनों के लिए अलग-अलग मत डालने की पद्धति अपनाई गयी। उपराष्ट्रपति पद के लिए भी उम्मीदवार को समस्त निर्वाचकों का बहुमत प्राप्त होना

आवश्यक है, और यदि किसी उम्मीदवार को निर्वाचकों का बहुमत प्राप्त न हो, तो सीनेट के द्वारा प्रथम दो उम्मीदवारों में से उपराष्ट्रपति का चयन किया जाता है।

उपराष्ट्रपति को ४३ हजार डालर वार्षिक वेतन प्राप्त होता है, जिस पर उसे आय-कर देना होता है। इसके अतिरिक्त उसे अन्य खर्चों के लिए भत्ते के रूप म १० हजार डालर मिलते है, जिस पर उसे आय कर नही देना होता।

राष्ट्रपति का कायकाल भी ४ वर्ष होता है और इस अवधि के पूव काग्रेस द्वारा महाभियोग के आधार पर उसे पदच्युत किया जा सकता है।

काय (Functions)—सयुक्त राज्य अमरीका का उपराष्ट्रपति पद अपने कार्यों की कमी के लिए प्रसिद्ध है और इसी कारण इसका अनेक प्रकार से परिहास उडाया जाता है और सयुक्त राज्य के महत्त्वाकाक्षी राजनीतिज्ञ इस पद की प्राप्ति की कभी आकाक्षा ही नही करते।

उपराष्ट्रपति का प्रथम काय राष्ट्रपति की मृत्यु पदत्याग या पदच्युति की स्थिति मे राष्ट्रपति पद का काय भार सभालना है। उस समय उसे राष्ट्रपति पद के सभी अधिकार तथा शक्तिया प्राप्त होगी। इस सम्बन्ध मे १८४१ से ही यह परम्परा स्थापित हो गयी है कि उसके द्वारा कायवाहक राष्ट्रपति (Acting President) के रूप मे नही वरन राष्ट्रपति के रूप म काय किया जायगा। सयुक्त राज्य अमरीका मे इस तरह से ८ उपराष्ट्रपति राष्ट्रपति पद धारण कर चुके हैं।

उपराष्ट्रपति का दूसरा काय सीनट का सभापतित्व करना है। सीनेट काग्रेस का द्वितीय सदन है और इस अपने सभापति को अपने आप चुनने का अधिकार नही है। उपराष्ट्रपति ही उसका पदेन सभापति (Ex officio) होता है। सीनट के अध्यक्ष के रूप मे उपराष्ट्रपति को कोई विशेष अधिकार प्राप्त नही है। सीनट का सदस्य न होने के कारण उसे मत देने का अधिकार नही है, लेकिन यदि किसी विषय पर बराबर मत आये तो उसे निर्णायक मत का अधिकार अवश्य ही प्राप्त है। सीनट के काय सचालन की सुनिश्चित परम्पराएँ होने के कारण इस रूप म उसकी स्थिति औपचारिक ही है।

वतमान समय म उपराष्ट्रपति इन दो कार्यों के अतिरिक्त अन्य काय भी सम्पादित करने लगे है। अनेक राष्ट्रपति प्रशासकीय कायवाही के सचालन मे उपराष्ट्रपति का सहयोग लेते हैं। सन् १९२१ म राष्ट्रपति हार्डिग उपराष्ट्रपति कूलिज को मन्त्रिमण्डल की बैठकों म भाग लेने के लिए आमन्त्रित किया करते थे। इसी प्रकार राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने हेनरी वैलेस गानर व ट्रूमन इत्यादि उपराष्ट्रपतियों की मन्त्रिमण्डल की कायवाही के सचालन में सहायता ली। राष्ट्रपति आइजनहॉवर ने उपराष्ट्रपति पद का महत्व और अधिक बढाया। उन्होने तत्कालीन उपराष्ट्रपति रिचर्ड निक्सन को विदेशो मे सद्भावना यात्रा के लिए भेजा तथा निक्सन ने विदेशी राज्याध्यक्षो तथा प्रधानमन्त्रियो से बातचीत कर अमरीका के लिए सद्भावना उत्पन्न की और राष्ट्रपति को अपनी रिपोट देकर उन्हे वास्तविक स्थिति से परिचित

कराया । इसी प्रकार उपराष्टपति एग्न्यू ने जनवरी १६७० में एशिया के ११ देशो की यात्रा कर अमरीका के लिए सदभावना उत्पन्न की ।

इस प्रकार उपराष्ट्रपति पद के काय इस बात पर निभर करते हैं कि वह राष्टपति का कितना विश्वासपात्र है और वह अपने आपको कितना उपयोगी प्रमाणित करता है । वतमान समय म लास्की आदि लेखको ने यह सुझाव दिया है कि उपराष्टपति को और अधिक काय सौप जायें, जिसम राष्टपति का काय भार कुछ हल्का हो सके ।

राष्ट्रपति का मन्त्रिमण्डल
(President s Cabinet)

अमरीकी सविधान के द्वारा समस्त कायपालिका शक्तिया राष्टपति को प्रदान की गयी है और सविधान के अ तगत म त्रिमण्डल की कोई व्यवस्था नही की गयी है । इस सम्बन्ध मे सविधान म यही उल्लेख है कि "राष्ट्रपति सरकार के विभिन्न प्रशासकीय विभागो के अधिकारियो से उनके अपने विभागों से सम्ब धित विषयों पर लिखित राय ले सकता है ।"[1] अत वतमान समय म म त्रिमण्डल का जिस रूप म विकास हुआ है, वह सवधानिक परम्परा पर आधारित ह ।

म त्रिमण्डल का उदय—सविधान निर्माता यह अवश्य ही अनुभव करते थे कि राष्ट्रपति को अपने काय सचालन म म त्रणा की आवश्यकता हो सकती है । व यह आशा करते थे कि राष्ट्रपति सीनट से विचार विमश कर सकेगा । इसी विश्वास से प्रेरित होकर सयुक्त राज्य के प्रथम राष्ट्रपति वाशिगटन ने अमरीका के मूल निवासियो से सम्ब धित विषयो पर सीनेट स परामश मांगा, लेकिन सीनेट सदस्यो का रुख कुछ ऐसा था जसे सलाह दने का काम उनके लिए गौरवपूण न हो । बाद मे राष्ट्रपति न सर्वोच्च न्यायालय स कि हीं विषयो पर परामश लेने का प्रयत्न किया किन्तु यहाँ भी उसे निराश होना पडा, क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय न किसी भी ऐस कानूनी मामले पर अपने विचार प्रकट करन स इनकार कर दिया, जो कि उसक सामने मुकदम के रूप म नही आता । अत राष्ट्रपति ने अपन नीचे के विभागीय अध्यक्षो से सलाह (परामश) लेना शुरू किया । पहले राष्ट्रपति उनक विचारो को लिखित रूप मे मांगता था, बाद म वह इनकी बठकें बुलाने लग गया और इस प्रकार अमरीका मे 'म त्रिमण्डल' नामक सस्था का उदय हुआ ।

म त्रिमण्डल की रचना—म त्रिमण्डल की रचना म समय-समय पर परिवतन होता रहा है । राष्ट्रपति वाशिगटन के प्रथम म त्रिमण्डल म तत्कालीन चार विभागो के प्रधान ही थे । लेकिन तब से आवश्यकतानुसार कांग्रेस के द्वारा नवीन विभागो की

1 The President may require the opinion, in writing of the principal officer in each of the executive departments upon any subject relating to the duties of their respective offices
—Article II Sec II *of* U S Constitution

स्थापना की गयी और अभी १९७३ मे गठित मन्त्रिमण्डल के सदस्यो की सख्या १२ है। प्रत्येक सचिव या मन्त्री को ३५ हजार डालर वार्षिक वेतन प्राप्त होता है।

मन्त्रिमण्डल के सदस्या का राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किया जाता है, लेकिन इसे सीनेट की स्वीकृति प्राप्त होनी चाहिए। सीनेट इनके मनोनयन पर स्वीकृति देने से बहुत कम इन्कार करती है, क्योकि राष्ट्रपति के मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के व्यक्तिगत सहायक होते हैं और इसीलिए ऐसा माना जाता है कि उनका चुनाव राष्ट्रपति की पसन्द से ही होना चाहिए। सीनेट ने अब तक केवल ७ बार मन्त्रिमण्डल के सदस्या की नामजदगी को अस्वीकार किया है, जिन्ह अपवाद ही कहा जा सकता है।

राष्ट्रपति को अपने मन्त्रिमण्डल के सदस्यो के चयन मे बहुत अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त होती है, किन्तु व्यवहार मे मन्त्रिमण्डल के साथियो का चयन करने मे उसके द्वारा अनेक बातो को ध्यान म रखा जाता है। सवप्रथम, वह अपने दल, समथको और मित्रो को प्रसन्न करने के लिए उनमे से कुछ को सचिवा के रूप म नियुक्ति कर देता है। द्वितीय, उसे कुछ बडे राज्या (न्यूयाक, पैनसलवेनिया और मैसाचुएट्स) म से अवश्य ही एक एक मन्त्री चुनना होता है। राष्ट्रपति के द्वारा विरोधी दल का सहयोग प्राप्त करने के लिए उसके कुछ सदस्य भी मन्त्रिमण्डल म लिए जा सकते हैं। डेमोक्रेटिक राष्ट्रपतियो (थ्योडर रूजवेल्ट और टाफ्ट) ने अपने युद्ध मन्त्रियो की नियुक्तिया रिपब्लिकन दल मे से की थी और रिपब्लिकन राष्ट्रपति हूवर ने एटॉर्नी जनरल के पद पर डेमोक्रेटिक पार्टी के एक सदस्य को नियुक्त किया था। इसी प्रकार एफ० डी० रूजवेल्ट ने १९४० मे दो प्रसिद्ध रिपब्लिकन नेताओ (स्टिमसन और फ्रैंक नोक्स) को युद्धमन्त्री तथा नौ सेना मन्त्री नियुक्त किया था। लेकिन महायुद्ध के बाद का चलन मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्यो को अपने ही राजनीतिक दल मे से लेने का है। राष्ट्रपति एसे व्यक्तियो को मन्त्री नियुक्त करता है, जिनका काग्रेस मे प्रभाव हो। प्रशासनिक अनुभव या विशिष्ट योग्यता के आधार पर भी मन्त्रियो का चुनाव किया जाता है। वाणिज्य-व्यापार, उद्योग न्धे व मजदूर आन्दोलन आदि कुछ ऐसे क्षेत्र हैं जिनमे स मन्त्रिमण्डल के सदस्या का चुनाव आम तौर पर होता ही रहता है।

मन्त्रिमण्डल की स्थिति और राष्ट्रपति तथा मन्त्रिमण्डल मे सम्बन्ध—मन्त्रिमण्डल की स्थिति के सम्बन्ध मे विलियम हॉवड टाफ्ट ने लिखा है कि, "मन्त्रिमण्डल राष्ट्रपति की इच्छा का परिणाम मात्र है। इसका कोई विधित या सवधानिक आधार नहीं है। इसके अस्तित्व का आधार केवल परम्परा है। यदि राष्ट्रपति मन्त्रिमण्डल का अन्त करना चाहे, तो वह ऐसा भी कर सकता है।"[1] इस प्रकार

[1] The Cabinet is a mere creation of the President s will It is an extra statutory and extra constitutional body It exists only by custom If the President desired to dispense with it he could do so —W H Taft, *Our Chief Magistrate and his Powers* p 30

मन्त्रिमण्डल की स्थिति राष्ट्रपति के साथ बदलती रही है। अनेक राष्ट्रपतियों ने मन्त्रिमण्डल को कोई महत्त्व नहीं दिया और वे इसे गौण स्थिति में रखते रहे, जैक्सन ग्राण्ट विल्सन व रूजवेल्ट ऐसे ही राष्ट्रपति थे। जैक्सन मन्त्रिमण्डल की बैठक को अनावश्यक समझता था और इसी कारण उसने दो वर्ष तक मन्त्रिमण्डल की बैठक ही नहीं की। राष्ट्रपति ग्राण्ट मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को सेना के सैकण्ड लैफ्टिनेण्ट समझता था जिनका काम राष्ट्रपति की आज्ञाओं का पालन मात्र है। विल्सन मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को साधारण कर्मचारियों से अधिक नहीं मानता था और राष्ट्रपति एफ० डी० रूजवेल्ट पहले स्वयं निर्णय ले लिया करते थे और इनकी सूचना मन्त्रिमण्डल को दिया करते थे। इसके विपरीत कुछ राष्ट्रपतियों के द्वारा मन्त्रिमण्डल को पर्याप्त महत्त्व दिया गया। राष्ट्रपति क्लीवलैण्ड मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को प्रसन्न रखते थे और बुचानन, हार्डिंग और कूलिज मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को पर्याप्त महत्त्व देते थे।

वर्तमान समय में साधारणतया सप्ताह में एक बार मन्त्रिमण्डल की बैठकें अवश्य होती हैं। युद्ध तथा अन्य संकट के समय अधिक बैठकें बुलाई जा सकती हैं। इन बैठकों में राष्ट्रपति मन्त्रिमण्डल के सदस्यों से विचार विनिमय करते हैं और इनकी कार्यवाही गुप्त ही रखी जाती है। राष्ट्रपति प्रशासनिक दृष्टि से सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर मन्त्रिमण्डल से परामर्श लेने को बाध्य नहीं है। वह जिन विषयों पर परामर्श प्राप्त करना चाहे, उन्हीं विषयों को विचार के लिए प्रस्तुत करता है। निर्णय करने में मत लेने का नियम कम है और यदि मत लिये भी जाय तो राष्ट्रपति के लिए बहुमत की बात मानना जरूरी नहीं है। यदि मन्त्रिमण्डल के सभी सदस्य राष्ट्रपति को एक ही प्रकार का परामर्श दें, तो भी राष्ट्रपति इसे ठुकरा सकता है, राष्ट्रपति लिंकन ने ऐसा ही किया था। एक बार लिंकन के मन्त्रिमण्डल के सभी सात सदस्यों ने जब राष्ट्रपति के प्रस्ताव का विरोध किया तो राष्ट्रपति ने कहा कि **'सात मत विपक्ष में हैं और एक मत पक्ष में, इसलिए प्रस्ताव के पक्ष में निर्णय हुआ'।** (Seven nays, one aye, the ayes have it)।

इस सम्बन्ध में निर्णायक बात यह है कि प्रशासन का अन्तिम उत्तरदायित्व राष्ट्रपति पर ही होता है और मन्त्रिमण्डल के सदस्यों का काम राष्ट्रपति के आदेशों का पालन करना मात्र है। यदि मन्त्रिमण्डल का कोई सदस्य ऐसा न कर सके, तो उसे अपने पद से त्यागपत्र देना होगा। राष्ट्रपति अपने आदेशों का पालन न करने वाले मन्त्री को पदच्युत भी कर सकता है और व्यवहार में देखा गया है कि एक निर्बल राष्ट्रपति को भी शक्तिशाली मन्त्री को पदच्युत करने में कोई कठिनाई नहीं होती। राष्ट्रपति आर्थर ने सरलता से मि० ब्लेन से छुटकारा पा लिया, यद्यपि ब्लेन राष्ट्रपति के दल का बहुत प्रसिद्ध और शक्तिशाली व्यक्ति था। राष्ट्रपति विल्सन ने अपने शक्तिशाली मन्त्री ब्रायन को पदच्युत कर दिया। ब्रायन इसी पर

टिप्पणी करते हुए लिखते हैं कि, 'जिस प्रकार राष्ट्रपति की तनिक सी इच्छा मन्त्रिमण्डल को बनाती है, उसी प्रकार तनिक सी इच्छा इसे हटा भी सकती है।'

राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल के पारस्परिक सम्बन्धों में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि अनेक बार राष्ट्रपति अपने विभागों के प्रमुखों के बजाय अपने निजी मित्रों और अनौपचारिक परामर्शदाताओं पर अधिक निर्भर करते हैं। राष्ट्रपति जैक्सन के अपने कुछ विश्वस्त परामर्शदाता थे, जिन्हें सामूहिक रूप में किचन कैबीनेट (Kitchen Cabinet) या 'प्रासाद रक्षक' (Palace Guards) कहा जाता था। विल्सन पर कर्नल हाऊस का जितना प्रभाव था उतना मन्त्रिमण्डल के अन्य किसी सदस्य का नहीं। नवनिर्माण आर्थिक नीति को अपनाते समय राष्ट्रपति रूजवेल्ट के कुछ ऐसे परामर्शदाता थे, जो मन्त्रिमण्डल के सदस्य नहीं थे किन्तु उन पर राष्ट्रपति अपने मन्त्रियों से भी अधिक विश्वास करते थे। राष्ट्रपति निक्सन के प्रथम और द्वितीय कार्यकाल में डा० हेनरी कीसिंगर राष्ट्रपति के जितने निकट हैं, उतना मन्त्रिमण्डल का कोई भी सदस्य नहीं और वर्तमान समय में भी मन्त्रिमण्डल की अपेक्षा राष्ट्रपति का व्यक्तिगत सहायक वर्ग अधिक शक्तिशाली है।

इस प्रकार राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल के पारस्परिक सम्बन्धों में आधारभूत तथ्य राष्ट्रपति की सर्वश्रेष्ठता है। इस सम्बन्ध में लास्की के शब्दों में कहा जा सकता है कि, 'राष्ट्रपति कुछ सीमा तक सारे राष्ट्र का प्रतीक होता है और यही कारण है कि जब तक वह अपने पद पर रहता है, तब तक उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं हो सकता। उसके सामने मन्त्रिमण्डल के सदस्य की आवाज फुसफुसाहट मात्र है जो सुनी भी जा सकती है और नहीं भी।'[1]

यद्यपि मन्त्रिमण्डल पर राष्ट्रपति की प्रभुता है, लेकिन अमरीकी प्रशासन का अधिकांश कार्य इन विभाग प्रमुखों के द्वारा ही किया जाता है और अमरीकी मन्त्रिमण्डल की अपनी उपयोगिता है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता।

अमरीकी और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डलों की तुलना

अमरीका में राष्ट्रपति को परामर्श देने वाली समिति के रूप में जिस संस्था का उदय हुआ उसे मन्त्रिमण्डल कहा जाता है, लेकिन वस्तुतः इसे मन्त्रिमण्डल का नाम देना उचित नहीं है। मन्त्रिमण्डल शब्द, मन्त्रिमण्डलात्मक शासन व्यवस्था के साथ जुड़ा हुआ है और कैबीनेट या मन्त्रिमण्डल में इस शासन व्यवस्था के लक्षण होने चाहिए। लेकिन अमरीका में अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण इस प्रकार के लक्षण विद्यमान नहीं हैं। अतः लास्की के शब्दों में 'अमरीकी मन्त्रिमण्डल की

[1] 'The President in a word symbolises the whole nation in a way that admits of no competitor while he is in office. Alongside his the voice of a Cabinet officer is at best a whisper which may or may not be heard.'

कल्पना उस नमूने से कोई मेल नहीं खाती जिसे हम बहुत पुराने समय से यूरोप की प्रतिनिधि सरकारों में देखने के अभ्यस्त हैं।"[1]

अमरीकी मन्त्रिमण्डल और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल में एक ही समानता बतलायी जा सकती है और वह यह है कि ये दोनों ही संस्थाएँ परम्पराओं की देन हैं, संविधान या कानून व्यवस्था की नहीं। इसके अतिरिक्त इन दोनों संस्थाओं में भेद ही भेद है। इन दोनों संस्थाओं के भेदों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) मन्त्रिमण्डल के निर्माण में भेद—अमरीकी मन्त्रिमण्डल का निर्माण राष्ट्रपति द्वारा और ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल का निर्माण प्रधानमन्त्री द्वारा किया जाता है, लेकिन ब्रिटिश प्रधानमन्त्री द्वारा मन्त्रिमण्डल के निर्माण में उतनी स्वतन्त्रता का उपभोग नहीं किया जा सकता जितनी स्वतन्त्रता का उपभोग अमरीकी राष्ट्रपति के द्वारा किया जा सकता है। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के लिए आवश्यक है कि वह अपने दल के महत्त्वपूर्ण सदस्यों को मन्त्रिमण्डल में शामिल करे वह उनकी उपेक्षा नहीं कर सकता, लेकिन अमरीकी राष्ट्रपति जिन किन्हीं व्यक्तियों को मन्त्रिमण्डल में शामिल करना या न करना चाहे, उसके द्वारा ऐसा किया जा सकता है।

(२) मन्त्रियों का कार्यकाल सम्बन्धी भेद—यद्यपि सिद्धान्ततया ब्रिटिश प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रिमण्डल में मनचाहे परिवर्तन कर सकता है और उसके द्वारा मन्त्रिमण्डल के किसी भी सदस्य को पदच्युत किया जा सकता है लेकिन व्यवहार में प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रिमण्डल के सबसे महत्त्वपूर्ण साथियों को तब तक पदच्युत नहीं कर पाता जब तक कि ऐसा करने के विशेष कारण न हों। यदि प्रधानमन्त्री मन्त्रियों को हटाने में मनमानी बरते तो इससे उसका राजनीतिक अस्तित्व भी खतरे में पड़ सकता है। उदाहरणार्थ, लार्ड जॉन रसेल पामर्स्टन को १८५१ में पदच्युत कर अधिक दिनों तक प्रधानमन्त्री नहीं रह पाये। अन्य भी ऐसे कुछ उदाहरण हैं। इस प्रकार ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के सदस्यों का कार्यकाल केवल कुछ ही सीमा तक प्रधानमन्त्री की इच्छा पर निर्भर करता है, लेकिन अमरीकी मन्त्रिमण्डल के सदस्यों का कार्यकाल पूर्ण पूरी सीमा तक राष्ट्रपति की इच्छा पर निर्भर करता है और यह बात मन्त्रिमण्डल के सर्वाधिक शक्तिशाली समझे जाने वाले सदस्यों के सम्बन्ध में भी सत्य है।

(३) मन्त्रिमण्डल की स्थिति में भेद—ब्रिटेन में प्रधान मन्त्री केबीनेट के साथ मिलकर समस्त शासन व्यवस्था का संचालन करता है। प्रधानमन्त्री इस बात के लिए बाध्य है कि वह सभी विषयों पर मन्त्रिमण्डल से परामर्श ले और महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक निर्णय मन्त्रिमण्डल की सहमति से ही किये जाते हैं। लेकिन अमरीकी मन्त्रिमण्डल तो पूर्ण रूप से राष्ट्रपति के अधीनस्थ एक संस्था है और यह राष्ट्रपति

[1] It is important to realise atonce that the American Cabinet hardly corresponds to the classic idea of a Cabinet to which representative government in Europe has accustomed us —*Laski*

की इच्छा पर निभर है कि वह इस संस्था का कितना और किस प्रकार से उपयोग करे। ब्रिटेन साझा बाजार की सदस्यता प्राप्त करे यह ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल का निणय था, लेकिन वियतनाम शान्ति समझौता अमरीकी राष्ट्रपति का ऐसा निणय है, जो उन्होंने व्यक्तिगत सहायक वग की मन्त्रणा के आधार पर किया और जिसमे मन्त्रिमण्डल ने कोई भाग नहीं लिया। इस प्रकार ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के सदस्य प्रधानमन्त्री के सहयोगी होते हैं, अमरीकी मन्त्रिमण्डल के सदस्य राष्ट्रपति के सहायक मात्र।

(४) राजनीतिक सजातीयता का भेद—ब्रिटेन मे अब यह परम्परा भली भांति स्थापित हो गयी कि युद्ध या सवटकालीन स्थिति मे तो राष्ट्रीय मन्त्रिमण्डल का गठन किया जाता है, लेकिन सामान्य परिस्थितियो मे प्रधानमन्त्री केवल अपने ही दल के सदस्यो को मन्त्रिमण्डल मे सम्मिलित करता है। इसके विपरीत, अमरीकी मन्त्रिमण्डल मे राजनीतिक सजातीयता नही पायी जाती और राष्ट्रपति विरोधी राजनीतिक दल के सदस्यो या दलीय राजनीति से अलग रहने वाले व्यक्तियो को उनकी विशिष्ट योग्यता के आधार पर मन्त्रिमण्डल मे सम्मिलित कर लेता है।

(५) मन्त्रिमण्डल और व्यवस्थापिका मे सम्बन्ध का भेद—ब्रिटेन मे ससदात्मक शासन व्यवस्था है और वहा पर मन्त्रिमण्डल के सदस्य व्यवस्थापिका अर्थात् ससद से घनिष्ट रूप म सम्बन्धित है। मन्त्रिमण्डल के सदस्य मन्त्री पद प्राप्त करने के बाद भी ससद के सदस्य रहते ह। मन्त्रिमण्डल के सदस्य कानून निर्माण मे सक्रिय रूप से भाग लेते है और ससद सदस्यो के द्वारा मन्त्रिमण्डल पर दिन प्रतिदिन का और इसके साथ ही अन्तिम राजनीतिक नियन्त्रण भी रखा जाता ह। मन्त्रिमण्डल और लोकसदन का कायकाल भी एक दूसरे की दया पर निभर है। मन्त्रिमण्डल लोकसदन को विघटित करवा सकता है और लोकसदन मन्त्रिमण्डल को पदच्युत कर सकता है।

अमरीका मे शक्ति विभाजन सिद्धान्त पर आधारित अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था है और इस कारण मन्त्रिमण्डल और कांग्रेस मे परस्पर सम्बन्ध नही है। मन्त्रिमण्डल के सदस्य कांग्रेस द्वारा किये जाने वाले कानून निर्माण काय मे भाग नहीं लेते और न ही मन्त्रिमण्डल तथा कांग्रेस का कायकाल एक दूसरे पर निभर है।

(६) सामूहिक उत्तरदायित्व सम्बन्धी भेद—ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के आधार पर काय करता है, जिसका तात्पय यह है कि मन्त्रिमण्डल एक इकाई की भांति काय करता है और लॉर्ड मार्ले की भाषा म 'इसके सदस्य साथ साथ तरते और साथ-साथ डूबते हैं। वित्तमन्त्री को विदेश विभाग के दुष्कर्मों का फल भोगना होता है। लेकिन अमरीकी मन्त्रिमण्डल सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर काय नही करता। मन्त्रिमण्डल के सदस्य व्यक्तिगत रूप से केवल राष्ट्रपति के प्रति ही उत्तरदायी होते है। अमरीका म सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का कतई पालन नही होता इसका एक उदाहरण राष्ट्रपति हार्डिंग के समय से लिया जा सकता है। हार्डिंग मन्त्रिमण्डल के तीन मन्त्री तेल

४ संयुक्त राज्य अमरीका की केबीनेट का निर्माण किस प्रकार होता है? लिखिए। क्या इसे राष्ट्रपति की केबीनेट कहना उचित होगा? सकारण मत प्रकट कीजिए। (आगरा १९६९)

५ अमरीकी राष्ट्रपति और ब्रिटिश प्रधानमन्त्री की वैधानिक स्थिति और शक्तियों की तुलना कीजिए व भेद बतलाइए। (विक्रम, १९६३, ६७, आगरा १९७२, जीवाजी १९६५, ६८)

६ अमरीकी राष्ट्रपति की स्थिति व अधिकारों की व्याख्या कीजिए। (कानपुर, १९६८)

७ अमरीकी राष्ट्रपति के अधिकारों और कृत्यों की आलोचनात्मक विवेचना कीजिए। (कानपुर, १९७१)

८ सर हेनरीमेन का कथन था कि 'अमरीकी राष्ट्रपति शासन करता है किन्तु राज्य नहीं करता। क्या आप इस दृष्टिकोण से सहमत हैं? कारण दीजिए। (विक्रम, १९६४)

९ राष्ट्रपति का चुनाव किस प्रकार होता है? राष्ट्रपति के अधिकारों का वर्णन कीजिए। (विक्रम, १९६८, मेरठ, १९७२)

१० ब्रिटेन और अमरीका के मन्त्रिमण्डलों की तुलनात्मक विवेचना कीजिए। (राजस्थान, १९६९)

११ अमरीकी राष्ट्रपति और कांग्रेस के बीच संवैधानिक और राजनीतिक सम्बन्धों का वर्णन कीजिए। क्या अमरीका का राष्ट्रपति चाहे तो कांग्रेस के विरुद्ध काम कर सकता है? (राजस्थान, १९७२)

१२ अमरीका के राष्ट्रपति की शक्तियों का वर्णन कीजिए तथा कांग्रेस से उसके सम्बन्धों की व्याख्या कीजिए। (लखनऊ, १९७१, विक्रम, १९७०)

१३ "अमरीकी राष्ट्रपति ब्रिटिश सम्राट से कुछ कम भी है और कुछ अधिक, वह ब्रिटिश प्रधानमन्त्री से कुछ कम है और कुछ अधिक।" (लास्की) स्पष्ट कीजिए। (जीवाजी, १९६७, विक्रम, १९७१)

१४ 'अमरीका का राष्ट्रपति सबसे बड़ा बेताज का राजा है।' इस कथन की समीक्षा कीजिए। (विक्रम, १९७२)

१५ अमरीका के संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए। व्यवहार में यह किस प्रकार प्रत्यक्ष निर्वाचन बन गया है। (राजस्थान, १९७३)

१६ आप इस बात से कहाँ तक सहमत हैं कि अमरीका का राष्ट्रपति राज्य और शासन दोनों करता है? (आगरा, १९७३)

5
कांग्रेस
(CONGRESS)

"इसके अन्तर्गत प्रदान की गई व्यवस्थापन सम्बन्धी समस्त शक्तियाँ संयुक्तराज्य की एक कांग्रेस में निहित होंगी जिसका निर्माण एक सीनेट व प्रतिनिधि सभा से मिलकर होगा।"[1]

—अमरीकी संविधान के प्रथम अनुच्छेद की प्रथम उपधारा

द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका की आवश्यकता

फिलाडेल्फिया सम्मेलन के सदस्य अमरीका में द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका की आवश्यकता पर लगभग एकमत थे। अमरीका में उपनिवेश काल में भी अधिकांश राज्यों में द्विसदनात्मक प्रणाली को ही अपनाया गया था और 'परिसंघ' के अन्तर्गत अपनायी गयी एकसदनात्मक व्यवस्थापिका नितान्त असन्तोषजनक तथा असफल सिद्ध हुई थी। संघात्मक व्यवस्था को अपनाने के कारण भी द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका को अपनाना आवश्यक था। अतः इस बात पर तो सहमति थी कि राष्ट्रीय व्यवस्थापिका के दो सदन होने चाहिए, लेकिन इस बात पर तीव्र विवाद था कि व्यवस्थापिका के दोनों सदनों के निर्माण का आधार क्या हो। अमरीकी संघ की बड़ी इकाइयों द्वारा इस सम्बन्ध में जनसंख्या के आधार को अपनाने पर बल दिया गया, जिससे बड़ी इकाइयों को अधिक प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके लेकिन छोटी इकाइयों द्वारा व्यवस्थापिका के दोनों ही सदनों का निर्माण संघ की सभी इकाइयों की समानता के सिद्धान्त के आधार पर करने पर बल दिया गया। अन्त में, इस सम्बन्ध में एक समझौता सम्पन्न हुआ, जिसके अनुसार यह निश्चित किया गया कि राष्ट्रीय व्यवस्थापिका (कांग्रेस) के निम्न सदन (प्रतिनिधि सभा) का निर्माण जनसंख्या के आधार पर हो, लेकिन उच्च सदन (सीनेट) के निर्माण में इकाइयों की समानता के

[1] "All legislative powers herein granted shall be vested in a Congress of the United States which shall consist of a Senate and a House of Representatives

—*Section I of Article I of the American Constitution*

सिद्धान्त को अपनाया जाय, अर्थात छोटी-बडी सभी इकाइयो को इसमे समान प्रति निधित्व प्राप्त हो।

कांग्रेस की शक्तियाँ तथा कार्य

संविधान के **प्रथम अनुच्छेद** में कहा गया है कि **"इसके अन्तगत प्रदान की गयी व्यवस्थापन सम्बन्धी समस्त शक्तियाँ संयुक्तराज्य की एक कांग्रेस में निहित होगी।"** लेकिन व्यवहार म कांग्रेस को न केवल विधायी वरन् प्रशासनिक और न्यायिक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। फोर्टेलॉट ने तो कांग्रेस की शक्तियो के सम्बन्ध मे लिखा है कि **"पर्यवेक्षण एव वित्त सम्बन्धी अपनी शक्तियों के कारण, प्रशासन सम्बन्धी अन्तिम शक्ति राष्ट्रपति से भी अधिक कांग्रेस को प्राप्त है तथा महाभियोग सम्बन्धी अपनी शक्ति के कारण यह देश का सबसे—सर्वोच्च न्यायालय से भी—उच्चतर न्यायालय है।"**[1]

कांग्रेस के काय और शक्तिया निम्न प्रकार है

(१) कानून निर्माण करना—कांग्रेस का प्रथम और सवप्रमुख काय कानून निर्माण करना है। सघात्मक व्यवस्था होने के कारण इस सम्बन्ध म कांग्रेस को सीमित शक्तिया ही प्राप्त हैं, असीमित नहीं। कांग्रेस की विधायी शक्तियो का उल्लेख **अनुच्छेद १ के आठवें उपभाग** तथा शक्तियो का विस्तृत वणन चौथे अध्याय म किया गया है। इस सम्बन्ध म कांग्रेस की शक्तिया तीन प्रकार की हैं प्रदत्त (Delegated), निहित (Inherent) तथा समवर्ती (Concurrent)। प्रदत्त शक्तिया के अन्तगत कांग्रेस को कर लगाने तथा एकत्रित करने, ऋण चुकाने की व्यवस्था करने, देश की प्रतिरक्षा की व्यवस्था करने, मुद्रा के निर्माण (नाप तौल का स्तर निर्धारित करने) और डाक तथा तार इत्यादि का प्रबन्ध करने की शक्ति दी गई है। कांग्रेस सर्वोच्च न्यायालय के अधीन अन्य न्यायालयो का गठन कर सकेगी और स्थल सेना तथा जल सेना के नियमन हेतु कानून बना सकेगी। कांग्रेस को कानून निर्माण के सम्बन्ध म अन्तर्निहित शक्तियाँ (Inherent Powers) भी प्राप्त है, जिनका उल्लेख संविधान के चौथे अध्याय म किया गया है। इन शक्तियों म बक तथा कारपोरेशन स्थापित करना, कृषि की सहायता व नियन्त्रण, बिजली उत्पन्न करना तथा फालतू बिजली को बेचना, सैनिक तथा जल सेना अकादमिया स्थापित करना और सडका, स्कूल स्वास्थ्य, बीमा आदि पर धन खच करना भी शामिल है। समवर्ती सूची म वे विषय शामिल हैं, जिन पर कांग्रेस तथा राज्यों के विधानमण्डल दोनो ही कानून बना सकते हैं। कर लगाना, ऋण लेना, न्यायालयो की स्थापना तथा व्यवस्था, बकों व कारपोरेशन की स्थापना, लोगो के हित के लिए सम्पत्ति बनाना तथा सावजनिक कल्याण के लिए खच करना समवर्ती सूची म शामिल है।

(२) चुनाव सम्बन्धी काय—राष्ट्रपति के चुनाव म मतगणना कांग्रेस के दोनो सदनो के सम्मुख होती है। यदि राष्ट्रपति पद के चुनाव म किसी भी उम्मीद

[1] A B Fourtellot *An Anatomy of American Politics*, p 78

बार को निर्वाचक मण्डल का निरपेक्ष बहुमत (Absolute Majority) प्राप्त न हो, तो प्रतिनिधि सभा पहले तीन उम्मीदवारो मे से राष्ट्रपति चुनने के लिए मतदान करती है। इसी प्रकार यदि उपराष्ट्रपति पद के लिए किसी भी उम्मीदवार को स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो, तो सीनेट प्रथम दो उम्मीदवारो मे से उपराष्ट्रपति चुनती है। प्रतिनिधि सभा के द्वारा अपने अध्यक्ष और उपाध्यक्ष तथा सीनेट के द्वारा अपने उपाध्यक्ष का चुनाव किया जाता है। इसके अतिरिक्त काग्रेस का प्रत्येक सदन अपने सदस्यो के चुनाव तथा उनकी योग्यताओ अयोग्यताओ का निर्णय करता है। १६२६ मे पेंसिलवेनिया से विलियम एस० वेयर और इलियोनिस से फ्रैंक एल० स्मिथ सीनेट सदस्य निर्वाचित हुए, किन्तु सीनेट ने इन्हे इस आधार पर सीनेट मे पद ग्रहण नही करने दिया कि उन्होंने अपने चुनाव मे भारी धनराशि खर्च की थी।

(४) कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य—संविधान के द्वारा कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियां राष्ट्रपति को प्रदान की गई हैं, किन्तु काग्रेस और प्रमुखतया सीनेट राष्ट्रपति के इन कार्यो और शक्तियो म भागीदार है। राष्ट्रपति की नियुक्तियां करने और सन्धियां करने से सम्बन्धित शक्ति पर सीनेट के द्वारा प्रभावशाली रूप मे नियन्त्रण रखा जाता है। युद्ध की घोषणा केवल काग्रेस के द्वारा ही की जा सकती है।

(५) प्रशासन का निर्देशन और नियन्त्रण—काग्रेस का एक कार्य प्रशासन का निर्देशन और नियन्त्रण है। कार्यपालिका विभागो से रिपोर्ट और सूचनाएँ मांग कर इसके द्वारा निर्देशन और नियन्त्रण की शक्तियो का प्रयोग किया जा सकता है। काग्रेस के द्वारा प्रशासनिक एजेंसियो और सेवाओ की स्वय व्यवस्था की जा सकती है तथा उनके कार्य भी निर्धारित किये जा सकते है।

(६) जांच पडताल करना—निर्देशन और नियन्त्रण से ही सम्बन्धित एक कार्य जाच पडताल (Investigation) करने का है। काग्रेस को प्रशासन मे व्याप्त भ्रष्टाचार की जाच करने या अन्य किसी मामले की जाच करने के लिए जाच समिति नियुक्त करने का अधिकार है। वर्तमान समय मे काग्रेस के जाच पडताल करने के इस कार्य का महत्त्व बढता जा रहा है।

(७) नवीन राज्यो को सघ मे प्रवेश—काग्रेस कानून द्वारा नवीन राज्यों को सघ मे प्रवेश दे सकती है। आरम्भ मे अमरीकी सघ मे १३ राज्य थे किन्तु अब ५० राज्य हैं और काग्रेस ने कानून बनाकर ही इन राज्यो को सघ मे प्रवेश प्रदान किया है।

(८) दोनो सदनों में अनुशासन बनाये रखने और कार्यविधि के सम्बन्ध मे नियम बनाने का अधिकार—काग्रेस को अधिकार प्राप्त है कि वह दोनो सदनो के सदस्यो से अनुशासन का पालन कराने के लिए नियमो का निर्माण करे। यदि काग्रेस का कोई सदस्य सदन मे अनुशासन भग करे, तो सम्बन्धित सदन ⅔ बहुमत से प्रस्ताव पारित कर उसे सदन से निष्कासित कर सकता है।

(९) वित्तीय कार्य—काग्रेस का एक महत्त्वपूर्ण कार्य राष्ट्रीय वित्त पर नियन्त्रण है। यद्यपि वार्षिक बजट, बजट ब्यूरो के द्वारा राष्ट्रपति के निर्देशन मे तैयार किया जाता है, लेकिन बजट काग्रेस के द्वारा ही पारित किया जाता है और ऐसा करते हुए इसके द्वारा बजट म अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किय जाते है। काग्रेस अपनी इस शक्ति के आधार पर कार्यपालिका विभागो के कार्य सचालन को प्रत्यक्ष रूप मे प्रभावित कर सकती है।

(१०) न्यायिक कार्य—सविधान मे काग्रेस को यह अधिकार दिया गया है कि देशद्रोह भ्रष्टाचार या अन्य घोर अपराध के आधार पर वह राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति या अन्य किसी भी नागरिक अधिकारी को महाभियोग के द्वारा पदच्युत कर सकती है।

अमरीकन काग्रेस और ब्रिटिश ससद

अमरीका की राष्ट्रीय व्यवस्थापिका 'काग्रेस' ब्रिटिश ससद से मूलभूत रूप म भिन्न है। *ब्रोगन के शब्दो मे 'अमरीकी काग्रेस ससदो की जननी से नितान्त भिन्न है।'*[1] यह ब्रिटिश ससद मे न केवल शक्तियो की दृष्टि स वरन कार्यपालिका विभाग के साथ सम्बन्धो म भी भिन्न है।

ब्रिटिश ससद विश्व की एकमात्र सम्प्रभु व्यवस्थापिका है और इसकी कानून निर्माण की शक्ति की कोई वैधानिक सीमा नही है। इसके द्वारा किसी भी कानून का निर्माण किया जा सकता है, पहले से चल आ रहे किसी भी कानून में सशोधन किया जा सकता है या उसे रद्द किया जा सकता है और न्यायालय इस बात के लिए बाध्य हैं कि वे ससद द्वारा पारित प्रत्येक कानून को मान्यता प्रदान करें तथा उसे लागू करे। ब्रिटेन मे न्यायिक पुनर्विलोकन की कोई व्यवस्था नही है और ऐसी कोई सत्ता नही है जो ससद द्वारा पारित कानूनो को अवैधानिक घोषित कर सके। लेकिन अमरीकी काग्रेस एक सम्प्रभु सस्था नही है और इसकी शक्तियाँ प्रभावशाली प्रतीत होते हुए भी दो रूपो मे बहुत अधिक सीमित हैं।

अमरीकी काग्रेस की शक्तियो की प्रथम सीमा उसकी सघात्मक व्यवस्था के कारण है। सविधान के द्वारा केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारो म शक्ति विभाजन किया गया है और अनेक विषयो पर सघीय काग्रेस द्वारा नही, वरन इकाइयो के विधानमण्डलों द्वारा ही कानूनों का निर्माण किया जा सकता है। उदाहरण के लिए शिक्षा, श्रम-पूजी सम्बन्धो, विवाह, तलाक और अन्य अनेक विषयो पर सघीय व्यवस्थापिका के द्वारा कानूनो का निर्माण नही किया जा सकता। इस प्रकार ब्रिटिश ससद तो ब्रिटेन मे किन्ही भी विषयो पर कानूनो का निर्माण करने म स्वतन्त्र है, लेकिन अमरीकी काग्रेस केवल सघीय विषयो पर ही कानूनो का निर्माण कर सकती है।

1 'American Congress is something very different from the mother of Parliaments
—D W Brogan *The American Political, System*, p 137

अमरीकी काग्रेस की शक्तियो की दूसरी सीमा सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति (Power of Judicial Review) है। सघीय क्षेत्र के अतगत भी काग्रेस के द्वारा जिन विधियो का निर्माण किया जाता है, सर्वोच्च न्यायालय उनकी इस आधार पर परीक्षा करता है कि वे सविधान के प्रावधानो के अनुरूप हैं अथवा नही और सर्वोच्च यायालय यदि इन्हे सविधान के प्रावधानो के अनुरूप न समझे, तो उसके द्वारा उन्ह अवैध घोषित किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय की यह न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति अमरीकी काग्रेस की विधि निर्माण की शक्ति पर एक बहुत बडा प्रतिबन्ध है।

अमरीकी काग्रेस और ब्रिटिश ससद इन दो व्यवस्थापिकाओ मे न केवल शक्ति की दृष्टि स, वरन् अपने-अपने देश की कार्यपालिका के साथ सम्बन्ध की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण अन्तर है। ब्रिटन की ससदात्मक व्यवस्था के अन्तगत व्यवस्थापिका और कायपालिका परस्पर घनिष्ट रूप मे सम्बद्ध हैं। मन्त्रिमण्डल के सदस्य ससद से ही लिए जाते हैं और वे ससद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। लोकसदन का बहुमत मन्त्रिमण्डल का समथन करता है और इस समथन के बल पर ही मन्त्रिमण्डल शासन व्यवस्था का सचालन करता है। यदि लोकसदन बहुमत से अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर द, तो मन्त्रिमण्डल का पतन हो जाता है। इसका एक दूसरा पक्ष यह भी है कि प्रधानमन्त्री सम्राट को परामश देकर लोकसदन को भग करवा सकता है। ब्रिटन म वास्तविक स्थिति चाहे जो भी हो, सिद्धान्त म ससद विशेषतया लोकसदन, मन्त्रिमण्डल का स्वामी कहा जा सकता है। अमरीका मे शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को अपनाने के कारण काग्रेस और राष्ट्रपति एक-दूसरे स बिलकुल अलग हैं। राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल के सदस्य काग्रेस के सदस्य नही हो सकते। राष्ट्रपति और काग्रेस न केवल एक दूसरे से पृथक वरन नितान्त स्वतन्त्र भी हैं। काग्रेस महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रक्रिया से राष्ट्रपति को चार वर्ष की निश्चित अवधि के पूव पदच्युत नही कर सकती और न ही राष्ट्रपति काग्रेस के किसी सदन को भग कर सकता है।

यद्यपि सद्धान्तिक दृष्टि से अमरीकी काग्रेस की स्थिति ब्रिटिश ससद की तुलना मे बहुत कम महत्त्वपूर्ण है, लेकिन व्यवहार की दृष्टि स अमरीकी काग्रेस को ब्रिटिश ससद की तुलना मे अधिक शक्ति प्राप्त है। ब्रिटिश सविधान की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि 'जो कुछ है वह दिखाई नहीं देता और जो नहीं है वह दिखाई देता है।' सिद्धान्त मे तो ससद की सम्प्रभुता की बात कही जाती है, लेकिन व्यवहार म द्विदलीय पद्धति और राजनीतिक दलो के कठोर अनुशासन के कारण ससद केबीनेट के हाथ की एक कठपुतली बनकर रह गई है। यदि केबीनेट के पीछे लोकसदन म अनुशासित बहुमत हो तो उसे विधियो के निर्माण और वित्तीय प्रस्तावों को स्वीकार करने मे कोई भी कठिनाई नही होती है और सामान्यतया केबीनेट के पीछे लोकसदन के बहुमत की शक्ति होती है। अत व्यवहार मे ससद केबीनेट पर

नियन्त्रण नही रखती, वरन् स्वय केबीनेट से नियन्त्रित होती है और केबीनेट की शक्ति इतनी बढ गई है कि 'केबीनेट के अधिनायकत्व' की बात कही जाने लगी है। लेकिन अमरीका म स्थिति यह है कि सकटकाल मे भले ही राष्ट्रपति कुछ सीमा तक कानून निर्माण की शक्तियो का प्रयोग करे, लेकिन शान्ति काल मे वह सीधे ही विधायी क्षेत्र म प्रवेश नही कर सकता। राष्ट्रपति प्रत्यक्ष और परोक्ष साधनो से कांग्रेस को प्रभावित कर सकता है नियन्त्रित नही। कानून निर्माण तथा वित्तीय क्षेत्र मे अन्तिम शक्ति कांग्रेस को ही प्राप्त है, राष्ट्रपति को नही।

इस प्रकार सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटिश ससद सम्प्रभु है जबकि अमरीकी कांग्रेस को इस प्रकार की सम्प्रभुता प्राप्त नही है। लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि कानून निर्माण और राष्ट्रीय वित्त पर कांग्रेस को जैसा प्रभावी नियन्त्रण प्राप्त है, आज की स्थिति मे ब्रिटिश ससद को वैसा प्रभावी नियन्त्रण प्राप्त नही रहा है। इसके अतिरिक्त कांग्रेस, विशेषता सीनेट के द्वारा राष्ट्रपति की कार्यपालिका शक्तियो पर भी प्रभावशाली रूप मे नियन्त्रण रखा जाता है।

सीनेट
(Senate)

अमरीकी कांग्रेस के द्वितीय सदन (सीनेट) मे सभी इकाइयो को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है और प्रत्येक इकाई के द्वारा इसमे अपने दो प्रतिनिधि भेजे जाते हैं। सीनेट मे प्राप्त इस प्रतिनिधित्व से किसी भी राज्य को उसकी इच्छा के बिना वचित नही किया जा सकता है। सविधान के अनुच्छेद ५ मे स्पष्ट रूप से उल्लेख कर दिया गया है कि 'किसी राज्य को उसकी सहमति के बिना सीनेट मे प्रतिनिधित्व की समानता से वचित नहीं किया जा सकता।' प्रारम्भ म जब १३ राज्यो ने मिलकर अमरीकी सघ का निर्माण किया, उस समय सीनेट के सदस्यो की सख्या केवल २६ थी। परन्तु अब अमरीकी सघ मे ५० राज्य है और सीनेट की सदस्य सख्या १०० हो गई है। १९७२ मे सीनेट के जो चुनाव हुए उनमें डेमोक्रेटिक पार्टी की सदस्य सख्या ५५ से बढकर ५७ हो गई है और रिपब्लिकन पार्टी की ४५ से घटकर ४३।

सदस्यो के लिए योग्यताएँ—जो व्यक्ति सीनेट की सदस्यता के लिए उम्मीदवार होना चाहते हैं, उनम निम्नलिखित योग्यताए होनी अनिवार्य हैं

(१) वह ३० वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो,

(२) वह उस राज्य का निवासी हो, जिसका प्रतिनिधित्व वह सीनेट मे करना चाहता है।

(३) वह कम से कम ९ वर्ष से सयुक्त राज्य अमरीका मे निवास करता हो।

सदस्यों का चुनाव—प्रारम्भ मे सीनेट सदस्यो के निर्वाचन हेतु अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था को अपनाया गया था और यह व्यवस्था की गई थी कि राज्यो के विधानमण्डल सीनेट सदस्यो को निर्वाचित करके भेजेंगे। कुछ समय तक तो यह

व्यवस्था ठीक चली, किन्तु बाद मे इस व्यवस्था मे अनेक दोष उत्पन्न होने लगे। कुछ राज्यो की विधानसभाओ के सदस्यो मे आपसी झगडे और मतभेद इतने उग्र थे कि वे अनेक बार किसी भी सदस्य को सीनेट के लिए नही चुन सके। अत सीनेट मे कई राज्यो के स्थान रिक्त पडे रहे। १८९० से १९१२ तक के समय मे कम से कम ११ राज्यो का किसी न किसी समय सीनेट मे एक प्रतिनिधि ही रहा और १९०१ मे डालावार राज्य का कोई भी प्रतिनिधि सीनेट के लिए निर्वाचित नही हो सका। इसके अतिरिक्त सीनेट सदस्यो के निर्वाचन मे भ्रष्ट साधनो का प्रयोग किया जाने लगा। विशेषतया छोटे राज्यो के विधानमण्डल के सदस्यो को रिश्वत आदि देकर धनी लोग अपने प्रस्तावित व्यक्ति को सीनेट के लिए निर्वाचित करवा लेते। इस प्रकार योग्यता के आधार पर निर्वाचन किये जाने के बजाय पदो का क्रय विक्रय किया जाने लगा। यह निश्चित रूप से चिन्ताजनक स्थिति थी और इसे दूर करने के लिए जनता मे यह विचार बल पकडने लगा कि सीनट के सदस्यो को भी प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित किया जाना चाहिए।

इसी कारण १९१२ मे सविधान मे १७वा सशोधन प्रस्तावित किया गया, जिसका उद्देश्य था सीनट के सदस्यों का चुनाव सीधे जनता द्वारा किया जाय। यह सशोधन १९१३ मे पारित हुआ और तब से ही सीनेट के सदस्यो का प्रत्यक्ष रूप मे निर्वाचन होता है। इसके परिणामस्वरूप सीनट का महत्त्व बढ गया है और अब वह जनता की वैसी ही प्रतिनिधि बन गयी है जैसी कि प्रतिनिधि सभा।

अवधि—सीनेट एक स्थायी सदन है जिसके सदस्य ६ वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित किये जाते है। प्रति दो वर्ष बाद एक तिहाई सदस्य अवकाश ग्रहण करते हैं जिनके स्थान पर नवीन निर्वाचन कराये जाते हैं। सदस्यो के पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध नही है और अनेक सदस्य लम्बे समय तक इसके सदस्य बने रहते हैं।

गणपूर्ति (Quorum)—सीनेट की बैठको के लिए कुल सदस्यो के बहुमत की उपस्थिति आवश्यक है।

वेतन, भत्ते और उन्मुक्तियाँ—काग्रेस के दोनो सदनो के सदस्यो के वेतन, भत्ते और उन्मुक्तिया समान हैं। इन्हे ३० हजार डालर वार्षिक वेतन मिलता है, इसके अतिरिक्त १७,५०० डालर क्लर्क के लिए और १२ हजार डालर वार्षिक कार्यालय के लिए खर्च मिलता है। इसके अतिरिक्त उन्हे यात्रा भत्ते व स्टेशनरी व्यय आदि कुछ अन्य खर्च भी प्राप्त होते हैं। सदस्यो को भाषण की स्वतन्त्रता भी प्राप्त है और सदन मे दिये गये उनके भाषण के आधार पर उनके विरुद्ध कोई कार्यवाही नही की जा सकती है।

अधिवेशन—१९३३ मे पारित किये गये बीसवें सशोधन के अनुसार सीनेट का अधिवेशन ३ जनवरी को दोपहर को प्रतिनिधि सभा के साथ ही प्रारम्भ होता है और दोनो सदनो का अधिवेशन उस समय तक चलता रहता है, जब तक कि दोनो

सदन अधिवेशन के स्थगन या समाप्ति के लिए प्रस्ताव पारित न करें। यदि दोनों सदनो मे अधिवेशन स्थगन की तिथि पर मतभेद उत्पन्न हो जाय तो राष्ट्रपति तिथि निश्चित करता है। सामान्यतया यह अधिवेशन जुलाई मे समाप्त होता है, किन्तु युद्ध या अन्य सकट की स्थिति मे अधिक समय तक भी चल सकता है। राष्ट्रपति के द्वारा काग्रेस के सदनो के विशेष अधिवेशन भी आमन्त्रित किये जा सकते हैं।

सभापति और अन्य पदाधिकारी—सयुक्त राज्य अमरीका का उपराष्ट्रपति सीनेट या सदन सभापति होता है। उपराष्ट्रपति सीनेट का सदस्य नही होता और प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष की तुलना म उसके द्वारा सीनेट की कार्यवाही का सचालन लगभग पूर्ण निष्पक्षता के साथ किया जाता है। वह मतदान मे भाग नही लेता और पक्ष विपक्ष के बराबर मत आने अर्थात् 'टाई' (tie) पड़ने की स्थिति में ही अपने निर्णायक मत का प्रयोग करता है। सीनेट की कार्यवाही के सुनिश्चित नियम हैं और सीनेट के सदस्य अमरीकी राजनीति के वरिष्ठ सदस्य होते हैं, इसलिए ऐसे अवसर सामान्यतया नही आते हैं, जिनमे सभापति को व्यवस्था स्थापित करने की अपनी शक्तियो का प्रयोग करना पड़े। सभापति के द्वारा सदस्यो को उसी क्रम से बोलने की आज्ञा प्रदान की जाती है, जिस क्रम से वे बोलने के लिए उठे हो।

सीनेट को अपना एक 'सामाजिक अध्यक्ष' (President Protempore) भी चुनने का अधिकार होता है। वह बहुमत दल का मनोनीत सदस्य होता है। उप राष्ट्रपति की अनुपस्थिति मे यह सदन की बैठको की अध्यक्षता करता है। सामयिक अध्यक्ष, सदन का सदस्य होने के नाते, उसे सदन की सभी कार्यवाहियो मे भाग लेने और मत देने का अधिकार प्राप्त होता है। सीनेट के अन्य पदाधिकारी भी होते हैं जैसे बहुमत दल का नेता, दल सचेतक, सचिव, सार्जेण्ट एट आर्म्स और सदन का लिपिक आदि।

फिलिबस्टर—सीनेट की कार्यवाही की एक विशेष बात 'फिलिबस्टर' (Filibuster) है, जिसे इसके कार्य सचालन का दोष ही कहा जा सकता है। सीनेट के सदस्यो को मनचाहे समय तक बोलने की स्वतन्त्रता प्राप्त है और यदि वादविवाद प्रारम्भ होने के पूर्व ही विचार व्यक्त करने पर समय के प्रतिबन्ध के रूप मे समझौता न हो जाय, तो सदस्यो के ऊपर समय का कोई प्रतिबन्ध लागू नही होता है। केवल इतना प्रतिबन्ध है कि कोई सदस्य एक दिन मे एक ही विषय पर दो से अधिक बार नही बोल सकता है, लेकिन सशोधनो पर बोलने मे यह भी प्रतिबन्ध लागू नही होता है।

मूल रूप मे यह व्यवस्था इस दृष्टि से की गयी थी कि प्रस्तावित विषयो पर पूर्ण वादविवाद हो सके, लेकिन कालान्तर म सदस्यो, विशेषतया अल्पमत वाले सदस्यो, द्वारा इसका दुरुपयोग प्रारम्भ कर दिया गया। उनके द्वारा एक विशेष विधेयक या सरकारी कामकाज मे रुकावट डालने की दृष्टि से अनिश्चित

समय तक बोलने की प्रवृत्ति अपनाली गयी है और ऐसे लम्बे-लम्बे भाषण दिये जाने लगे, जो विचाराधीन विषय से बिल्कुल भी सम्बंधित नही थे। सदन के कामकाज मे रुकावट डालने की दृष्टि से अनावश्यक रूप से किये जा रहे इस वादविवाद को ही 'फिलिबस्टर' कहा जाता है।

१९१७ और १९३७ मे इस बुराई को भीषण रूप मे देखा गया। १९१७ मे ११ सीनेटरो ने मिलकर व्यापारिक जहाजो के शस्त्रीकरण विधेयक को असफल कर दिया और १९३७ मे दक्षिणी क्षेत्र के २० सीनेटरो ने मिलकर 'एण्टीलिंचिंग विधेयक' (Anti Linching Bill) के विरुद्ध फिलिबस्टर का प्रयोग किया, जिसके परिणाम-स्वरूप ६ जनवरी से २१ फरवरी, १९३७ तक के डेढ महीने मे सीनेट कोई कार्य नही कर सकी। राष्ट्रपति विलसन ने इस बुराई पर आक्रोश व्यक्त करते हुए कहा था कि 'हठी व्यक्तियो का कोई भी एक छोटा गुट संयुक्त राज्य की महान सरकार को असहाय और तुच्छ बना सकता है।'[1] अत फिलिबस्टर के विरुद्ध जनमत जाग्रत हुआ और १९१७ मे समापन नियम अपनाया गया, जिसे १९४९ मे सशोधित करते हुए सीनेट न यह नियम बना दिया कि यदि कुल सख्या के दो तिहाई (१०० मे से ६७ सदस्य) वादविवाद बन्द करने के लिए एक प्रस्ताव पारित कर दे, तो वाद विवाद समाप्त हो जायगा। लेकिन फिलिबस्टर पर रोक लगाने के लिए ⅔ बहुमत की प्राप्ति कठिन होती है, इसलिए बाद मे भी फिलिबस्टर की प्रवृत्ति को अपनाया जाता रहा और १९५३ मे सीनेटर मोरिस ने २२ घण्टे २६ मिनट तक भाषण देकर इसी प्रवृत्ति को अपनाया। १९१७ के नियम के आधार पर अब तक केवल चार बार ही 'फिलिबस्टर' पर रोक लगाई जा सकी है। सीनेट के समय के अधिक अच्छे उपयोग की दृष्टि से फिलिबस्टर पर प्रभावी रोक लगाना आवश्यक है, लेकिन वर्तमान परिस्थितियो मे इसकी सम्भावना कम ही दिखाई देती है। सीनेट के द्वारा फिलिबस्टर की धमकी का भी प्रयोग किया जा सकता है। १९६८ में एवे फोर्टास को सर्वोच्च न्यायालय मे मुख्य न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति के प्रस्ताव पर कुछ सीनेट सदस्यो ने फिलिबस्टर के प्रयोग की धमकी दी और राष्ट्रपति को अपना प्रस्ताव वापस लेना पड़ा।

सीनेट की शक्तियाँ और कार्य

फिलाडेल्फिया सम्मेलन के सदस्यो द्वारा अमरीकी सविधान का निर्माण करने मे शक्ति विभाजन सिद्धान्त के साथ-साथ नियन्त्रण और सन्तुलन के सिद्धान्त को अपनाया गया था और उनका विचार था कि राष्ट्रपति और प्रतिनिधि सभा दोनो पर ही अकुश रखने वाली एक सस्था होनी चाहिए, जिससे इन दोनो म से कोई भी

[1] "Any little group of wilful men can render the great government of the United States helpless and contemptible
—Woodrow Wilson (Quoted by William H Riker, *Democracy in the United States*, p 192

संस्था निरंकुशता की प्रवृत्ति को न अपना सके। सीनेट की रचना एक ऐसी संस्था के रूप में ही की गई है। लॉर्ड ब्राइस के शब्दों में, "सीनेट शासन में गुरुत्वाकर्षण का केन्द्र है। एक ओर तो वह प्रतिनिधि सभा की लोकतन्त्रात्मक असावधानी और धृष्टता पर और दूसरी ओर राष्ट्रपति की राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं पर रोक लगाने वाली एक सत्ता है।"[1]

सीनेट की शक्तियों और कार्यों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) कानून निर्माण सम्बन्धी शक्तियां—सीनेट अमरीकी कांग्रेस का द्वितीय सदन है और सामान्यतया वर्तमान समय के प्रजातन्त्रात्मक देशों में व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन को कानून निर्माण में गौण स्थिति ही प्राप्त होती है, लेकिन अमरीकी सीनेट के सम्बन्ध में ऐसी स्थिति नहीं है। मुनरो के शब्दों में, 'यह कांग्रेस की एक समानपदी शाखा है, अधीन नहीं है और निम्न सदन के साथ राष्ट्रीय कानून निर्माण के कार्य में साझेदार है।'[2] सीनेट की कानून निर्माण सम्बन्धी शक्तियों का विवेचन साधारण विधेयकों, संवैधानिक विधेयकों और वित्त विधेयकों के सम्बन्ध में पृथक पृथक किया जा सकता है।

साधारण विधेयकों के सम्बन्ध में सीनेट को प्रतिनिधि सभा के बिल्कुल समान शक्तियाँ प्राप्त हैं। साधारण विधेयक दोनों में से किसी भी सदन में प्रस्तावित किये जा सकते हैं और वे तब तक पारित नहीं समझे जाते, जब तक दोनों सदन उन्हें स्वीकार न कर लें।

संवैधानिक विधेयकों के सम्बन्ध में भी दोनों सदनों की स्थिति पूर्णतया समान है। संविधान में संशोधन सम्बन्धी विधेयक दोनों में से किसी भी सदन में प्रस्तावित किये जा सकते हैं और प्रत्येक ऐसे विधेयक को पारित समझे जाने के लिए यह आवश्यक है कि उसे दोनों सदन अपने-अपने दो तिहाई बहुमत से पारित करें।

वित्तीय विधेयकों के सम्बन्ध में संविधान प्रतिनिधि सभा को अवश्य ही कुछ उच्च स्थिति प्रदान करता है। संविधान के अनुसार वित्तीय विधेयकों का सूत्रपात प्रतिनिधि सभा में ही हो सकता है, सीनेट में नहीं, किन्तु संविधान यह भी कहता है कि सीनेट वित्तीय विधेयकों में अन्य विधेयकों की भाँति संशोधन कर सकती है या

1 The Senate is the centre of gravity in the Government an authority to check and correct on the one hand the democratic recklessness of the House and on the other the monarchical ambitions of the President —*Bryce*

2 It is a co-ordinate not a subordinate branch of the American Congress and divides with the House of Representatives the function of making the national laws
—Munro, *The National Government of U S* p 301

उन्हें अस्वीकार कर सकती है और वित्तीय विधेयक तभी पारित समझा जायेगा, जबकि कांग्रेस के दोनों सदन उसे स्वीकृति प्रदान कर दें। सीनेट ने वित्तीय विधेयक में संशोधन करने के अधिकार का अर्थ यह लगाया है कि वह उसके पास भेजे गये बजट या अन्य वित्त विधेयक को नये सिरे से बनाने का अधिकार रखती है। कभी-कभी तो सीनेट किसी वित्तीय विधेयक को इतना संशोधित और परिवर्तित कर देती है कि सम्बन्धित विधेयक के नाम के अतिरिक्त और सब कुछ परिवर्तित हो जाता है। उदाहरण के लिए एक राजस्व विधेयक में सीनेट ने ८४७ संशोधन प्रस्तावित किये थे। मुनरो के शब्दों में, 'सीनेट वह कर्तव्य करने लगा है जिनको संविधान नहीं चाहता था, कि वह करे।'

इस प्रकार वित्त विधेयकों के सम्बन्ध में सीनेट की स्थिति सैद्धान्तिक दृष्टि से ही गौण है, व्यवहार में नहीं। इसके अतिरिक्त व्यवहार में एक बात ने तीनों ही प्रकार के विधेयकों के सम्बन्ध में सीनेट को प्रतिनिधि सभा से उच्च स्थिति प्रदान कर दी है। यदि किसी भी विधेयक पर दोनों सदनों में मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो यह विधेयक 'सम्मेलन समिति' को सौंपा जाता है, जिसमें दोनों सदनों के बराबर बराबर की संख्या में प्रायः ३-३ सदस्य होते हैं और सम्मेलन समिति दोनों सदनों में समझौता कराने का प्रयत्न करती है। व्यवहार में, सीनेट के सदस्य अधिक योग्य, अनुभवी और कार्यकुशल होते हैं और समझौता बहुत कुछ सीमा तक उसी रूप में सम्पन्न हो जाता है, जिस रूप में सीनेट चाहती है।

(२) कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ—सीनेट को न केवल व्यवस्थापन वरन् प्रशासनिक क्षेत्र में भी महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं। कार्यपालिका क्षेत्र में उसकी शक्तियाँ प्रतिनिधि सभा से निश्चित रूप से बहुत बढ़कर हैं।

कार्यपालिका क्षेत्र में उसकी प्रथम शक्ति नियुक्तियों के पुष्टीकरण से सम्बन्धित है। राष्ट्रपति के द्वारा की गई नियुक्तियाँ तभी वैध होती हैं, जबकि सीनेट के द्वारा अपने साधारण बहुमत से उन्हें स्वीकृति प्रदान कर दी जाय। राष्ट्रपति दो प्रकार की नियुक्तियाँ करता है। पहली प्रकार की वे नियुक्तियाँ हैं जो सारे राष्ट्र से सम्बन्धित होती हैं जैसे राजदूत, मन्त्रिमण्डल के सदस्य, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश और उच्च सैनिक अधिकारी आदि। दूसरे प्रकार की नियुक्तियाँ उन संघीय अधिकारियों की होती हैं जो किसी राज्य में की जाती हैं जैसे संघीय जिला न्यायाधीश, पोस्टमास्टरों के कुछ वर्ग, जिला न्यायवादी तथा मार्शल इत्यादि। पहली प्रकार की नियुक्तियाँ सामान्यतया सीनेट के द्वारा इस आशा के साथ स्वीकार कर ली जाती हैं कि राष्ट्रपति दूसरी श्रेणी की नियुक्तियों में उनसे परामर्श करे। वर्तमान समय में अमरीका में 'सीनेटीय शिष्टता' (Senatorial Courtesy) का नियम प्रचलित है, जिसका तात्पर्य यह है कि राष्ट्रपति जिस राज्य में नियुक्तियाँ करे उस राज्य के वरिष्ठ सीनेटर से परामर्श कर ले। यदि वरिष्ठ सीनेटर उसके दल से सम्बन्धित नहीं है, तो उसके द्वारा 'कनिष्ठ' (junior) सीनेटर से परामर्श किया

जाता है। यदि दोनों ही सीनेटर राष्ट्रपति के दल से सम्बन्धित नहीं हैं, तो वह सीनेटरों से परामर्श करने के लिए बाध्य नहीं है, परन्तु व्यवहार में राष्ट्रपति उस राज्य के सीनेटरों से परामर्श कर लेता है, चाहे वे विरोधी दल के ही हों, जिससे सीनेट में उन नियुक्तियों का विरोध न हो।

जब जब राष्ट्रपति ने सीनेटीय शिष्टता की इस परम्परा को तोडने की कोशिश की, राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों को सीनेट ने अस्वीकार कर दिया। १६३८ में राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने वर्जीनिया में एक संघीय न्यायाधीश की नियुक्ति वहां के सीनेटर कार्टर ग्लास के परामर्श के बिना ही कर दी। सीनेट ने ७२ के विरुद्ध ६ के मत से इस आधार पर नियुक्ति को रद्द कर दिया कि राष्ट्रपति ने सीनेट के अधिकार क्षेत्र का उल्लंघन किया है। इसी प्रकार १६५१ में राष्ट्रपति ट्रूमैन द्वारा इलियोनिस राज्य में की गई संघीय न्यायाधीशों की नियुक्ति को सीनेट द्वारा रद्द कर दिया गया। ऐसे अन्य भी अनेक उदाहरण हैं। सीनेट ने राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों को स्वीकार करने की इस शक्ति के आधार पर राष्ट्रीय नीति के निर्धारण में भी कुछ भाग प्राप्त कर लिया है।

कार्यपालिका क्षेत्र में सीनेट की दूसरी अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण शक्ति सन्धियों के विषय में है। सन्धियों के सम्बन्ध में व्यवस्था है कि राष्ट्रपति द्वारा विदेशों के साथ की गई सन्धियां उस समय तक लागू नहीं समझी जायेंगी, जब तक कि सीनेट उन्हें दो-तिहाई बहुमत से स्वीकार न कर ले। सीनेट की यह शक्ति महत्त्वपूर्ण है और सीनेट अपनी इस शक्ति के आधार पर वैदेशिक सम्बन्धों के संचालन में राष्ट्रपति की भागीदार बन गई है। सीनेट अपनी इस शक्ति के सम्बन्ध में सदैव ही सचेत रही है और इसने अवसर पड़ने पर कुछ सन्धियों को अस्वीकार भी किया है। सन् १७८६ से १६३४ के बीच जितनी सन्धियां हुईं, उनमें से सीनेट ने ६८२ को स्वीकार किया, १७३ को संशोधित किया और १५ को अस्वीकार किया। सीनेट द्वारा वर्साय की सन्धि की अस्वीकृति तो सर्वप्रसिद्ध है। जान हे का तो कहना है कि, "सीनेट में जाने वाली सन्धि अखाड़े में जाने वाले सांड के समान है। यह नहीं कहा जा सकता कि उस पर अन्तिम प्रहार किस प्रकार और कब होगा, परन्तु एक बात निश्चित है कि वह अखाड़े से जीवित बाहर नहीं आयेगी।"[1]

अनेक बार यह कहा जाता है कि प्रशासकीय समझौतों की प्रथा के कारण सीनेट की सन्धियों को स्वीकार करने की शक्ति का महत्त्व कम हो गया है, किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि प्रशासकीय समझौतों का प्रयोग सीमित रूप में किया जा

1 A treaty entering the Senate is like a bull going into the arena, no one can say just how or when the final blow will fall but one thing is certain it will never leave arena alive
—John Hay (Quoted from Munro's *The National Government of United States* p 294

सकता है और प्रशासकीय समझौते सभी बातो के सम्बन्ध मे संधि का विकल्प नही हो सकते। वैदेशिक सम्बन्धो के क्षेत्र मे राष्ट्रपति भी अपनी सीमाओ से परिचित है और वर्तमान समय मे उसके द्वारा वैदेशिक सम्बन्धो का संचालन सीनेट की परराष्ट्र समिति के निकट सम्पर्क मे रहते हुए ही किया जाता है। सीनेट की इस शक्ति के सम्बन्ध मे प्रो० लास्की का कहना है कि "अन्तरराष्ट्रीय मामलो मे प्रभाव रखने के नाते विश्व की कोई भी विधान सभा सीनेट का मुकाबला नहीं कर सकती।"

सीनेट की तीसरी कार्यपालिका शक्ति युद्ध की घोषणा से सम्बन्धित है। संविधान के अनुसार युद्ध की घोषणा कांग्रेस के द्वारा ही की जा सकती है। सीनेट अपनी प्रथम दो कार्यपालिका शक्तियो का प्रयोग तो अकेले ही करती है, किन्तु इस तीसरी शक्ति का प्रयोग उसके द्वारा प्रतिनिधि सभा के साथ मिलकर किया जाता है।

(३) अन्वेषण की शक्ति (Power of Investigation)—सीनेट को एक अन्य महत्त्वपूर्ण शक्ति अन्वेषण या जाँच के सम्बन्ध मे प्राप्त है। सीनट ने इस अन्वेषण सम्बन्धी कार्य ने अभी हाल ही मे अत्यधिक महत्त्व प्राप्त कर समस्त विश्व का ध्यान आकर्षित किया है। संविधान के द्वारा तो सीनेट को व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्यों के लिए ही अन्वेषण की शक्ति प्रदान की गई थी, किन्तु सीनेट ने अपनी इस शक्ति के आधार पर अनेक बार प्रशासनिक विभागो के कार्यों की व्यापक जाँच की है और सीनेट के इन अन्वेषणो को इस आधार पर उचित ठहराया जाता है कि शक्ति विभाजन के सिद्धान्त पर आधारित संवैधानिक व्यवस्था मे प्रशासनिक भ्रष्टताओ और अक्षमताओ को प्रकाश मे लाने का यही एकमात्र साधन है। सीनेट द्वारा किये गये अन्वेषण से राष्ट्रपति हार्डिंग्ज के काल मे तेल षड्यन्त्र प्रकाश मे आया जिसके परिणामस्वरूप तीन मन्त्रियो को त्यागपत्र देना पड़ा। १९२९-३० के आर्थिक संकट के पूर्व और संकट काल मे वाल स्ट्रीट द्वारा अपनाये गये भ्रष्ट तरीके भी सीनेट के अन्वेषण के परिणामस्वरूप ही प्रकाश मे आये। इस प्रकार सीनेट द्वारा किये गये कुछ अन्वेषणो ने महती सेवा की है इस आधार पर लास्की लिखते हैं कि 'अमरीकी अन्वेषण समिति की व्यवस्था मे ब्रिटिश रॉयल कमीशन तथा लोकसदन मे प्रश्न काल दोनो के गुण समन्वित है।'[1] गोलावे ने सीनेट की इन अन्वेषण समितियो को कार्यपालिका के साथ सम्बन्ध स्थापित करने वाली कड़ियाँ बतलाया है।[2]

सीनेट की इस शक्ति का दूषित पक्ष यह है कि इसका दुरुपयोग भी किया जा सकता है।

[1] 'The method combines something of the value of Royal Commission in Britain with the illumination afforded by question time in the House of Commons' —*Laski*

[2] G B Galloway Investigative Functions of Congress in *The Political Science Review*

(४) न्यायिक शक्तियाँ—सीनेट को न्यायिक शक्तियां भी प्राप्त हैं, जिनमे सबसे प्रमुख महाभियोग की जाँच का अधिकार है। प्रतिनिधि सभा मे राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, सैनिक अधिकारियो तथा न्यायाधीशो पर देशद्रोह, भ्रष्टाचार तथा अन्य गम्भीर अपराध के लिए महाभियोग लगाया जा सकता है। महाभियोग की सुनवाई सीनेट मे होती है और वही उस पर अपना निणय देती है। महाभियोग की सुनवाई करते हुए न्यायिक प्रक्रिया के सभी काय (जसे आदेश जारी करना, गवाहो को बुलाना और उन्हें शपथ दिलाना आदि) करती है। महाभियोग की सुनवाई के समय सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश सीनेट की अध्यक्षता करता है। अपराध सिद्ध के लिए दो-तिहाई बहुमत की आवश्यकता होती है। अभी तक सीनेट के द्वारा कुल १२ बार महाभियोग प्रस्तावो की जाच की गयी और इनम से ४ महाभियोगो का प्रस्ताव पारित किया गया। १८६८ मे राष्ट्रपति ऐण्ड्रयू जॉनसन पर महाभियोग लगाया गया, किन्तु वह असफल हो गया। ब्राइस ने महाभियाग को 'काग्रेस के शस्त्रागार का सबसे भारी शस्त्र' कहा है।

(५) अन्य शक्तियां—सीनेट को अन्य कुछ शक्तियां भी प्राप्त हैं। वह राष्ट्रपति तथा उपराष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए किये गये मतदान की गणना करती है और निर्वाचन परिणाम की घोषणा करती है। विशेष दशाओं मे वह उपराष्ट्रपति का निर्वाचन भी करती है। यदि उपराष्ट्रपति के निर्वाचन मे किसी उम्मीदवार को पूर्ण संख्या का बहुमत प्राप्त नही हो, तो सीनेट सर्वाधिक मत प्राप्त करने वाले प्रथम दो उम्मीदवारो म से किसी एक को उपराष्ट्रपति निर्वाचित कर सकती है। सीनेट को अपने सदस्यो के निर्वाचन एव उनकी योग्यता के सम्बन्ध मे उठाये गये प्रश्नो के निणय का अधिकार भी प्राप्त है।

सीनेट की शक्तियो की उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि सीनेट प्रतिनिधि सभा से अधिक शक्तिशाली है। यदि विश्व के अन्य देशों की व्यवस्थापिकाओं के द्वितीय सदनों से इसकी तुलना की जाय, तो इसे विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली द्वितीय सदन कहा जा सकता है।

सीनेट की आलोचना—कुछ आधारो पर सीनेट की कड़ी आलोचना की जाती है। प्रो० लास्की न सीनेट की निम्न त्रुटियो का विशेष उल्लेख किया है

(१) सीनेट विश्व की अन्य व्यवस्थापिकाओ की अपेक्षा बहुत अधिक समय नष्ट करती है। इस सम्बन्ध म सीनेट म अपनाये गये फिलिबस्टर का विशेष रूप से उल्लेख किया जा सकता है।

(२) सीनेट की कार्यवाही का एक आधार 'लाग रोलिंग' (Log Rolling) पद्धति है जो पारस्परिक सहयोग का एक अत्यन्त भ्रष्ट साधन है।

(३) नियुक्तियों के सम्बन्ध मे स्थापित 'सीनेट के प्रति शिष्टाचार' (Senatorial Courtesy) की व्यवस्था अत्यन्त दूषित और भ्रष्ट राजनीति की जनक है। इस व्यवस्था के आधार पर सीनेटर अपने ही राजनीतिक स्वार्थों की दृष्टि में

रखते हुए अपने राजनीतिक समर्थको और मित्रो को उच्च पदो पर नियुक्त करवा देते हैं और गुण तथा योग्यता की उपेक्षा होती है।

(४) सीनेट, जो कि प्रशासन के प्रति या प्रशासनिक कार्यो के लिए उत्तरदायी नहीं है, उसे महत्त्वपूर्ण प्रशासनिक शक्तियाँ प्राप्त होना किसी भी प्रकार से उचित नही कहा जा सकता।

(५) सीनेट की अन्वेषण सम्बन्धी समितियो की कार्यवाही राजनीतिक दलबन्दी से प्रभावित होती है और इसमे राष्ट्रीय हितो की उपेक्षा की जाती है।

(६) सीनेट का सगठन अप्रजातन्त्रात्मक है। अमरीकी सघ की इकाइयो म जनसख्या की दृष्टि से बहुत भेद है किन्तु सीनेट मे सब इकाइयो को समान प्रतिनिधित्व प्रदान कर दिया गया है। सीनट सदस्यो का बहुमत अमरीकी सघ की जनसख्या के पाचवे से भी कम हिस्से का प्रतिनिधित्व करता है।

(७) सीनट क सदस्य समाज के अत्य त कुलीन वग म से आते हैं और उनके द्वारा जनसाधारण के हितो की उपेक्षा की जाती है। अनेक बार सीनट सदस्यो के निर्वाचन म भ्रष्ट साधना और धन का प्रयोग किये जाने की बात भी कही जाती है और यह निमूल नही है।

(८) सीनट की इस आधार पर भी आलोचना की जाती है कि इसक द्वारा सीनेटीय अह के वशीभूत होकर राष्ट्रपति का अनावश्यक विरोध करन और राष्ट्रपति को नीचा दिखाने का प्रयत्न किया जाता है। कभी कभी राष्ट्रीय सकट की स्थिति मे भी सीनेट की यह प्रवृत्ति बनी रहती है और इससे राष्ट्रीय हितो को क्षति पहुचती है।

सीनेट की महत्ता और उसके कारण

सीनेट की उपरोक्त आलोचनाओ के बावजूद यह एक तथ्य है कि सीनेट विश्व की श्रेष्ठतम राजनीतिक सस्थाओ मे स एक है। प्रो० लास्की के कथनानुसार 'सीनेट अमरीकन शासन प्रणाली की अद्वितीय सफलताओं में से एक है।' प्रो० लिण्डसे रोजस का कथन है कि 'सीनेट आधुनिक राजनीति का सबसे महत्त्वपूर्ण आविष्कार है।' सर हेनरी मेन का कथन है कि 'जब से आधुनिक प्रजातन्त्र का विकास हुआ है तब से जितनी भी सस्थाओ का निर्माण किया गया है, उनमे यही एकमात्र पूर्ण सफल सस्था रही है।" जिस प्रकार रोमन यह कहत हुए कभी नही थकते कि पीरूस के राजदूत ने रोमन सीनेट को राजाओ की सभा कहा था, वसे ही अमरीकावासी भी अपनी सीनेट को 'राजनीतिज्ञों एव सन्तों का ओलम्पियन निवासस्थान' (Olympion dwelling place of Statesmen and Sages) कहकर पुकारते है। इनके अतिरिक्त प्रजातन्त्र के अधिकारी विद्वान लार्ड ब्राइस, ब्रिटिश प्रधानमन्त्री ग्लेडस्टन व फ्रेंच लेखक टाकवेल ने भी सीनेट की बडी प्रशसा की है।

सीनेट की महत्ता के कारणो का उल्लेख निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) सविधान निर्माताओं द्वारा सीनेट को प्रदत्त महत्त्वपूर्ण स्थान—सविधान की भाषा स यह निता त स्पष्ट है कि सविधान निर्माता स्वय सीनेट को महत्त्वपूर्ण

स्थिति प्रदान करना चाहते थे। मुनरो के अनुसार "संविधान के प्रथम अनुच्छेद में, जहाँ द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका की बात कही गई है, सीनेट का नाम पहले लिया जाना कोई साधारण लिखने की गलती नहीं है। संविधान निर्माताओं में अधिकांश सीनेट को संघीय व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी की दृष्टि से देखते थे।"[1] संविधान निर्माताओ को इस बात का भय था कि कहीं जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि सभा प्रजातन्त्रात्मक उत्तरदायित्वहीनता की स्थिति को न अपना ले या कहीं राष्ट्रपति एक निरकुश शासक की स्थिति को ग्रहण न कर ले। इस कारण उनके द्वारा सीनेट को प्रतिनिधि सभा की विधायी शक्ति और राष्ट्रपति की कार्यपालिका शक्ति दोनो पर ही अंकुश लगाने का अधिकार प्रदान किया गया है। इसी कारण स्थिति यह है कि सीनेट और राष्ट्रपति दोनो मिलकर प्रतिनिधि सभा की सहमति के बिना अनेक कार्य कर सकते हैं। इसी प्रकार सीनेट और प्रतिनिधि सभा राष्ट्रपति की उपेक्षा कर अनेक कार्य सम्पन्न कर सकती है, परन्तु ऐसे कार्य लगभग नहीं हैं जिन्हे राष्ट्रपति और प्रतिनिधि सभा दोनो मिलकर सीनेट की उपेक्षा करते हुए सम्पन्न कर सकें। इस प्रकार संविधान निर्माताओ द्वारा सीनेट को शासन के गुरुत्वाकर्षण केन्द्र की स्थिति प्रदान की गई है।

(२) **सीनेट की विशेष शक्तियाँ**—संविधान और परम्परा के आधार पर सीनेट को कुछ ऐसी शक्तिया प्राप्त हैं, जो विश्व की किसी भी व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन को प्राप्त नहीं हैं और इन शक्तियो के आधार सीनेट की महत्ता बहुत अधिक बढ गई है। कानून निर्माण के क्षेत्र मे सीनेट प्रतिनिधि सभा के समकक्ष है और यह बात न केवल साधारण विधेयकों वरन् वित्तीय विधेयकों के सम्बन्ध म भी सत्य है। सीनेट को नियुक्तियो की पुष्टि और सन्धियो की पुष्टि की दो ऐसी शक्तियाँ प्राप्त हैं, जिनके आधार पर सीनेट कार्यपालिका क्षेत्र में राष्ट्रपति की साझेदार बन गयी है। नियुक्तियों की पुष्टि के आधार पर सीनेट आन्तरिक प्रशासनिक कार्य को प्रभावित करती है और सन्धियो की पुष्टि के आधार पर सीनेट के द्वारा वैदेशिक सम्बन्धो के संचालन पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। सीनेट की इन कार्यपालिका शक्तियों के कारण उसके सम्मान म अत्यधिक वृद्धि हुई है और इसी तथ्य के कारण इसने सर्वाधिक योग्य और राजनीतिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियो को अपनी ओर आकर्षित किया है।

(३) **मन्त्रिमण्डल पद्धति का अभाव**—यदि अमरीका मे ब्रिटेन की ही भाँति मन्त्रिमण्डलात्मक पद्धति होती, तो प्रतिनिधि सभा और सीनेट के पारस्परिक सम्बन्धो

[1] 'It was by no mere slip of the pen that the first article of the Constitution in establishing a Congress of two chambers gives the Senate priority of mention The men who framed this document most of them looked up the Senate as the backbone of the whole federal system —W B Munro, *The National Government of the United States* p 270

की स्थिति दूसरी हो सकती थी। मन्त्रिमण्डलात्मक व्यवस्था होने पर अमरीकी कार्यपालिका अर्थात राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल व्यवस्थापिका के निम्न सदन अर्थात प्रतिनिधि सभा के प्रति उत्तरदायी होता और केवल इसी तथ्य के कारण प्रतिनिधि सभा सीनेट की तुलना में अधिक महत्त्व प्राप्त कर लेती। लेकिन अमरीका में अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं है और प्रतिनिधि सभा को कार्यपालिका पर नियन्त्रण की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। अत काग्रेस के प्रथम सदन (प्रतिनिधि सभा) की तुलना मे सीनेट अधिक शक्तिशाली हो गई है।

(४) प्रत्यक्ष निर्वाचन—ब्रिटेन की लार्ड सभा, भारत की राज्य सभा तथा फ्रास की सीनेट को प्रथम सदन की तुलना मे कम महत्त्व प्राप्त होने का एक प्रमुख कारण यह है कि इन देशो में द्वितीय सदन का तो मनोनयन होता है अथवा अप्रत्यक्ष निर्वाचन और ये पद्धतियाँ लोकतन्त्र की भावना के प्रतिकूल हैं। मूल अमरीकी सविधान में सीनेट सदस्यो के भी अप्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था की गयी थी, लेकिन सन १९३१ में सविधान के सत्रहवें सशोधन के द्वारा सीनेट सदस्यो के प्रत्यक्ष निर्वाचन की व्यवस्था की गयी। सीनेट सदस्यो का प्रत्यक्ष निर्वाचन होने के कारण विश्व के अन्य देशो मे जिस तत्त्व के आधार पर द्वितीय सदन का अपेक्षाकृत कम महत्त्व होता है, वह बात अमरीकी राजनीति मे नही रही है और सीनेट के लोकतन्त्रीय आधार ने उसे प्रजातन्त्र का प्रतीक बना दिया है। निर्वाचन सम्बन्धी ही एक अन्य बात ने सीनेट को अधिक शक्तिशाली बना दिया है। प्रतिनिधि सभा के सदस्यो का निर्वाचन 'क्षेत्रीय नियम' (locality rule) के अनुसार होता है अत उनका दृष्टिकोण बहुत सकुचित हो जाता है, लेकिन सीनेटर पूरे राज्य का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनका दृष्टिकोण अपेक्षाकृत व्यापक होता है।

(५) सीनेट का स्थायित्व और सीनेट सदस्यों का दीर्घ कार्यकाल—सीनेट का स्थायित्व तथा सदस्यो का दीर्घकाल भी सीनेट की शक्ति मे वृद्धि का रहस्य है। सीनेट इस अर्थ मे स्थायी है कि न तो सीनेट कभी भग होती है और न ही सीनेट के सभी सदस्यो का कार्यकाल नये सिरे से शुरू होता है। सीनेट सदस्यों का कार्यकाल ६ वर्ष है और ६ वर्ष के इस कार्यकाल का महत्त्व इस दृष्टि से है कि इसकी तुलना मे प्रतिनिधि सभा का कार्यकाल २ वर्ष ही है। प्रतिनिधि सभा के सदस्य जहाँ एक बार निर्वाचित होने के लगभग तुरन्त बाद ही पुनर्निर्वाचन की चिन्ता मे लग जाते हैं, वहाँ सीनेट सदस्य एक बार निर्वाचित होने के बाद लगभग ५ वर्ष तक स्वतन्त्रता और निर्भीकता के साथ राष्ट्रीय सेवा मे लगे रहते हैं। पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध न होने के कारण अनेक सदस्य १८, २४ और कभी कभी ३० वर्ष से भी अधिक समय तक इसके सदस्य रहते हैं और अपने इस दीर्घ अनुभव के आधार पर ये सीनेटर और सीनेट अमरीकी राजनीति मे अपना विशिष्ट स्थान बना लेते हैं। आग और रे के अनुसार "प्रतिनिधि सभा प्रति दो वर्ष के उपरान्त एक नयी सस्था

बन जाती है, नवनिर्वाचन से उसकी सदस्यता में बहुत परिवर्तन हो जाता है और उसे पुनः नीचे से ऊपर तक अपने को संगठित करना पड़ता है। इसके विपरीत प्रत्येक समय पर सीनेट के दो तिहाई से अधिक सदस्य ऐसे होते हैं जो प्रतिनिधियों की अपेक्षा कम से कम दो वर्ष सीनेटर के रूप में सेवा कर चुके हैं। नेतृत्व का विकास धीरे-धीरे होता है और साधारणतया इसमें परिवर्तन भी धीरे धीरे होता है और सीनेट में इसकी अनवरत प्रवाहित धारा राजनीति में इसे विशिष्ट महत्ता प्रदान कर देती है।"

(६) सीनेट का लघु आकार—सीनेट के लघु आकार के कारण भी उसकी महत्ता तथा प्रतिष्ठा बढ़ी है। सीनेट की कुल सदस्य संख्या १०० है जबकि प्रतिनिधि सभा में ४३५ सदस्य हैं। छोटे आकार के कारण इसके सदस्यों में पारस्परिक घनिष्टता रहती है और वे स्वतन्त्रतापूर्वक वादविवाद कर पाते हैं। सीनेट का आकार इतना अवश्य है कि उसमें विचारों की विभिन्नता रहती है पर वह इतनी अधिक नहीं है जिससे कि विधायी विचार विमर्शों और कार्यवाहियों में सजीवता न रह सके। लार्ड ब्राइस का कथन है कि "इस सदन का लघु आकार योग्य तथा होनहार व्यक्तियों को योग्यता प्रदर्शित करने का अवसर प्रदान करता है तथा प्रतिभा एवं चातुर्य वाले व्यक्तियों को अपना पराक्रम दिखाने तथा राष्ट्र के एक कोने से दूसरे कोने तक प्रसिद्धि प्राप्त करने का सुअवसर देता है।"

(७) सीनेट सदस्यों में अपनी संस्था के प्रति सम्मान और परस्पर ऐक्य (Solidarity)—वैसे तो स्वाभाविक रूप से सभी संस्थाओं के सदस्य अपनी संस्था के प्रति सम्मान रखते हैं और उनमें परस्पर ऐक्य की भावना होती है, लेकिन सीनेट के सदस्य अपनी संस्था के प्रति जितने सम्मान की भावना करते हैं और उनमें परस्पर जितना ऐक्य है, उतना अन्यत्र नहीं है। सीनेट सदस्यों में ऐक्य को दृष्टि में रखते हुए प्रो० ज्वाइण्ट ने लिखा है 'सीनेट सदस्य औसत प्रतिनिधि की अपेक्षा भिन्न प्रकार के राजनीतिक प्राणी होते हैं।' वे सीनेट के अन्दर एक दूसरे पर कटु आक्षेप कर सकते हैं, परन्तु कुछ ही देर बाद आप देखेंगे कि बाहर वे हाथ में हाथ डाले घूम रहे हैं। जब किसी राष्ट्रपति के द्वारा 'सीनेट के प्रति शिष्टाचार' (Senatorial Courtesy) या सीनेट की अन्य किन्हीं सुनिश्चित परम्पराओं का उल्लंघन किया जाता है तो सीनेट के सदस्य अपने राजनीतिक दल के प्रति भक्ति को भूलकर सीनेट के सम्मान की रक्षा हेतु एक हो जाते हैं। १९३८ में जब राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने सीनेट के प्रति शिष्टाचार की अवज्ञा का यत्न किया, तो पूरी सीनेट ने, जिसमें राष्ट्रपति के दल के सदस्य भी सम्मिलित थे, राष्ट्रपति का डटकर और सफल विरोध किया।

(८) सीनेट की कार्यप्रणाली—सीनेट की कार्यप्रणाली भी उसकी शक्ति का स्रोत है। सीनेट की कार्यप्रणाली ऐसी है कि उसमें सदस्यों के बोलने का समय निश्चित नहीं किया जाता। परिणामस्वरूप यहां विषयों पर विचार अधिक पूर्णता

के साथ होता है और किसी निश्चय पर पहुंचने के पूर्व उसके सभी पहलुओं पर पूर्णता के साथ विचार कर लिया जाता है। अच्छी तरह विचार के बाद किये गये निर्णय देश के लिए अधिक लाभकारी होते हैं और उनके कारण सीनेट की महत्ता में और वृद्धि हुई है। यद्यपि कार्यप्रणाली की इस सरलता का दुरुपयोग भी किया गया है और भाषण की स्वतन्त्रता की आड में सदन में बाइबिल और शब्दकोष तक पढकर सुनाये गये हैं, लेकिन ये अपवादस्वरूप है और कार्यविधि की सरलता ने सामान्यतया सीनेट के स्तर को उच्चता ही प्रदान की है।

(६) सीनेट सदस्यो की गुणात्मक उच्चता—संस्था की महत्ता उसके सदस्यो पर निर्भर करती है और सीनेट को इतनी अधिक महत्ता प्राप्त होने का अन्तिम किन्तु एक महत्त्वपूर्ण कारण प्रतिनिधि सभा की तुलना में सीनेट सदस्यो की गुणात्मक श्रेष्ठता है। सीनेट कार्यपालिका शक्तियो मे राष्ट्रपति की सहभागी है, इस कारण शासन तन्त्र में उसका स्थान बड़े महत्त्व का हो गया है। परिणामस्वरूप वे राजनीतिक नेता, जो अपने को देश के राजनीतिक जीवन में अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाना चाहते हैं, अधिकांश सीनेट की ही ओर आकर्षित होते हैं। सीनेट की शक्ति इस प्रकार जब योग्य हाथो मे रहती है, तो उसका उपयोग अच्छा होता है और इस प्रकार जब सीनेट लोगो की अच्छी सेवा करती है, तो सीनेट के सम्मान और उसकी महत्ता में वृद्धि होती है। गवर्नर उपराष्ट्रपति तथा राष्ट्रपति बनने के लिए सीनेट ही सबसे महत्त्वपूर्ण सीढ़ी है। प्रतिनिधि सभा मे जो कुछ होता है उसकी ओर समाचारपत्रों का ध्यान भी नही जाता परन्तु सीनेट सदस्यो के वक्तव्य समाचार पत्रो मे शीर्ष स्थान पाते हैं। फ्रास के प्रसिद्ध विचारक डॉ० टाकविले ने दोनो सदनो के विषय में विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि "वाशिंगटन की प्रतिनिधि सभा में घुसते ही व्यक्ति का ध्यान उस बड़ी सभा के भद्दे दिखावे की ओर साधारणतया आकृष्ट हुए बिना नहीं रहता। उसकी दीवारो के भीतर प्राय कोई भी प्रतिभा का व्यक्ति दिखाई नहीं देता। उसके प्राय सभी सदस्य साधारण व्यक्ति होते हैं। उससे थोड़ी ही दूरी पर सीनेट का द्वार है जिसके अपने थोड़े से स्थान में अमरीका के प्रतिभाशाली व्यक्तियों का अधिकांश समाया रहता है।"[1]

सीनेट की लॉर्ड सभा तथा विश्व के अन्य द्वितीय सदनो से तुलना

सीनेट अमरीकी काग्रेस का द्वितीय सदन है और सीनेट की अन्य राज्यों की व्यवस्थापिकाओ के द्वितीय सदन से तुलना करना असगत न होगा। इस प्रकार की

1 On entering the House of Representatives of Washington, one is struck by the vulgar demeanour of that great assembly The eye frequently does not discover a man of celebrity within its walls Its members are almost all obscure individuals At a few yards distance from the spot there is the door of the Senate which contains within a small space a large proportion of the celebrated men of America' —*De Tocqueville*

तुलना के सम्बन्ध म लिण्डसे रोजर्स का यह कथन नितान्त सत्य है कि, "सीनेट विश्व का सबसे अधिक शक्तिशाली द्वितीय सदन है। दूसरे देशों की राजनीतिक व्यवस्था मे तो द्वितीय सदन की शक्तियाँ कम हुई हैं, परन्तु सीनेट की शक्तियों का विस्तार हुआ है।"[1]

अमरीकी सीनेट और ब्रिटिश लॉर्ड सभा—सीनेट अमरीकी कांग्रेस का और लार्ड सभा ब्रिटिश ससद का द्वितीय सदन है, लेकिन सगठन और शक्ति की दृष्टि से ब्रिटिश लार्ड सभा तथा अमरीका की सीनेट मे महान अन्तर है। जहाँ सीनेट विश्व के द्वितीय सदनो मे सबसे अधिक शक्तिशाली है, लॉर्ड सभा को विश्व के द्वितीय सदनो म सबसे अधिक शक्तिहीन कहा जा सकता है।

इन दोनो सस्थाओ की तुलना प्रमुखतया निम्न आधारो पर की जाती है

सगठन—एक राजनीतिक सस्था क कार्यों और शक्तियो पर उसकी सगठन की पद्धति का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। सीनेट और लॉर्ड सभा के सगठन म तीन प्रमुख अन्तर हैं। प्रथमत सीनट की सदस्य सख्या १०० है किन्तु लॉर्ड सभा की सदस्य सख्या वतमान म १,०५६ है। एक हजार से अधिक सदस्यो वाली लॉर्ड सभा न तो ठीक प्रकार स काय कर सकती है और न ही उससे ऐसी आशा की जा सकती है, लेकिन सीनेट एक छोटी सस्था होन के कारण एक सुसगठित इकाई क रूप मे काय कर सकती है। सीनट के सदस्यो मे परस्पर ऐक्य है जबकि लार्ड सभा के सदस्य परस्पर अपरिचित भी हो सकते है। द्वितीयत लार्ड सभा के अधिकाश सदस्य वश परम्परा के आधार पर अपना पद ग्रहण करते हैं। इस कारण वे जन प्रतिनिधि होने का दावा नही कर सकते और बिना किसी प्रयत्न के मिली हुई सदस्यता उनके लिए तिरस्कार की वस्तु बन जाती है सीनेट सदस्य प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर पद ग्रहण करते हैं प्रयत्नपूवक प्राप्त की गई सदस्यता को वे सम्मान की दृष्टि स देखते हैं और सत्य रूप म जन प्रतिनिधि होने का दावा कर सकते हैं। तृतीयत, लॉर्ड सभा के सदस्यो को सदस्यता आजीवन प्राप्त रहती है सीनट की सदस्यता का कायकाल ६ वष है।

सगठन के इन भेदो के कारण लार्ड सभा के सदस्य जहा अपने पद और कतव्यो के प्रति उदासीन होते है सीनट सदस्य अधिकाधिक सक्रिय।

शक्तियाँ—शक्तियो की दृष्टि से सीनेट लार्ड सभा की तुलना म अत्यधिक शक्तिशाली है। इन शक्तियो की तुलना विधायी, कायपालिका और न्यायिक इन तीन क्षेत्रों में की जा सकती है।

1 The Senate of the United States is now the most powerful second chamber in the world In all other constitutional systems of Government the powers of the upper chambers have waned The authority of the Senate has vaxed —*Lindsay Rogers*

१९११ और १९४९ का संसदीय अधिनियम पारित होने के पूर्व लार्ड सभा लोकसदन के समकक्ष थी, लेकिन वर्तमान समय में यह न केवल द्वितीय वरन गौण सदन बनकर रह गई है। लार्ड सभा अवित्तीय विधेयकों को १ वर्ष तक और वित्तीय विधेयक को १ माह तक रोके रखने का कार्य ही कर सकती है। लेकिन सीनेट को व्यवस्थापन के क्षेत्र में आज भी वह स्थिति प्राप्त है जो लार्ड सभा को १९११ का संसदीय अधिनियम पारित होने के पूर्व प्राप्त थी। वित्तीय क्षेत्र में प्रतिनिधि सभा और सीनेट की स्थिति में जो थोड़ा सा अन्तर है वह भी व्यवहार में महत्वहीन हो गया है।

कार्यपालिका क्षेत्र में लार्ड सभा के द्वारा मन्त्रिमण्डल से प्रश्न पूछने और उसकी आलोचना करने का कार्य किया जा सकता है लेकिन लार्ड सभा द्वारा की गई मन्त्रिमण्डल की आलोचना का कोई वैधानिक महत्त्व नहीं है क्योंकि मन्त्रिमण्डल लोकसदन के ही प्रति उत्तरदायी होता है लार्ड सभा के प्रति नहीं। अमरीकी सीनेट को कार्यपालिका अर्थात् राष्ट्रपति पर नियन्त्रण रखने की कुछ वास्तविक शक्तियाँ प्राप्त हैं नियुक्तियाँ और सन्धियाँ सीनेट की स्वीकृति के बिना वैध नहीं होतीं, युद्ध की घोषणा कांग्रेस के दोनों सदनों द्वारा ही की जा सकती है और सीनेट के द्वारा अन्वेषण समितियों के आधार पर प्रशासन की जाँच करने का कार्य किया जा सकता है। बात यह है कि नियुक्तियों और सन्धियों को स्वीकृति प्रदान करने और जाँच समितियाँ स्थापित करने से सम्बन्धित शक्ति अकेली सीनेट को प्राप्त है और प्रतिनिधि सभा सीनेट की इन शक्तियों में भागीदार नहीं है।

न्यायिक क्षेत्र में लार्ड सभा सीनेट से अधिक शक्तिशाली है। सीनेट तथा लॉर्ड सभा दोनों को ही निम्न सदन द्वारा लगाये गये महाभियोग को सुनने का अधिकार प्राप्त है। लेकिन लार्ड सभा ब्रिटेन में अपील का सर्वोच्च न्यायालय भी है और उसे पीयर लोगों के देशद्रोह से सम्बन्ध रखने वाले महाभियोग को सुनने का प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार भी प्राप्त है। ये अधिकार सीनेट के पास नहीं हैं।

ब्रिटेन की लॉर्ड सभा जहाँ लोकसदन की तुलना में बहुत अधिक निर्बल है, अमरीका की सीनेट प्रतिनिधि सभा की तुलना में बहुत अधिक सबल। ब्रिटेन में राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा रखने वाले व्यक्ति लोकसदन की ओर आकर्षित होते हैं अमरीका में राजनीतिक महत्त्वाकांक्षा रखने वाले व्यक्तियों का आकर्षण केन्द्र सीनेट है। निकट भविष्य में सीनेट की शक्तियाँ कम किये जाने की भी कोई प्रवृत्ति अमरीकी राजनीति में दिखाई नहीं देती। सीनेट का महत्त्व और उसका सम्मान निरन्तर बढ़ता जा रहा है।

सीनेट और भारत की राज्य सभा (Senate and Indian Council of States)—भारत की राज्यसभा की तुलना में भी सीनेट बहुत अधिक शक्तिशाली है। भारत में राज्यसभा को साधारण विधेयकों के बारे में लोकसभा के समान ही

शक्तिया प्रदान की गयी हैं परन्तु दोनो मे गतिरोध उत्पन्न होने पर ससद के दोनो सदनो की बठक बुलाई जाती है, जिसम लोकसभा की सदस्य सख्या राज्यसभा की दुगुनी म भी अधिक होने के कारण उसकी स्थिति बहुत सुदृढ रहती है। राज्यसभा वित्तीय विधेयको को केवल १४ दिन तक रोके रख सकती है और उसकी अस्वीकृति का कोई महत्त्व नही है, जबकि सीनेट की स्वीकृति के बिना वित्तीय विधयक कानून का रूप ग्रहण नही कर सकता। राज्य सभा कायपालिका को प्रभावित तो कर सकती है, लेकिन उस पर अंतिम नियन्त्रण रखने की शक्ति उसे प्राप्त नहा है सीनट के द्वारा कायपालिका पर प्रभावशाली नियन्त्रण रखा जाता है। न्यायिक क्षेत्र म दोनो की स्थिति समान है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लाड सभा सीनेट जसा शक्तिशाली द्वितीय सदन नही है।

सोवियत रूस की राष्ट्रीयताओ की परिषद और स्विटजरलैण्ड की राज्य परिषद से अमरीकी सीनेट की तुलना—सोवियत रूस म प्रथम सदन सघ की सोवियत और दूसरा सदन राष्ट्रीयताओ की सोवियत (Soviet of the Nationalities) कहलाता है। सोवियत रूस मे साधारण तथा वित्तीय दोना प्रकार के विधेयको के सम्बन्ध मे दोनो सदनो की शक्तिया समान है। दोनो मे ही विधेयक प्रस्तावित हो सकते हैं और प्रत्येक विधेयक अलग-अलग दोनो सदनो द्वारा पारित होना आवश्यक है। दोनो सदनो मे गतिरोध उत्पन्न होने की स्थिति मे समझौता आयोग' (Conciliation Commission) इन मतभेदो का दूर करने की चेष्टा करता है और उसके असफल रहने की स्थिति मे प्रेजीडियम दोनो सदनो को विघटित कर नये चुनाव करा सकता है। इस प्रकार रूस मे द्वितीय सदन प्रथम सदन के समान ही शक्तिशाली है, परन्तु फिर भी इसे दो कारणो से सीनेट के समान शक्तिशाली नही कहा जा सकता। प्रथमत, सोवियत रूस म सर्वोच्च सोवियत, जिसका एक अग राष्ट्रीयताओ की सोवियत है, की शक्तिया अवास्तविक हैं और कानून निर्माण तथा प्रशासनिक क्षेत्र मे यदि कोई इकाई वास्तविक महत्त्व रखती है, तो वह है साम्यवादी दल की सर्वोच्च सत्ता। अमरीकी सीनेट को न केवल य शक्तियाँ प्राप्त हैं वरन् उसके द्वारा व्यवहार से भी इन शक्तियो का उपयोग किया जाता है। द्वितीय, राष्ट्रीयताओ की सोवियत न तो प्रथम सदन से अधिक शक्तिशाली है और ही कम, लेकिन अमरीकी सीनेट प्रतिनिधि सभा से अधिक शक्तिशाली है। नियुक्तियों और सन्धियो को स्वीकृति प्रदान करने की शक्ति के माध्यम से उसके द्वारा प्रशासन पर ऐसा प्रभावी नियन्त्रण रखा जा सकता है, जसा नियन्त्रण रखना राष्ट्रीयताओ की सोवियत' के लिए सम्भव नही है।

स्विटजरलैण्ड मे भी सविधान की दृष्टि से राष्ट्रीय व्यवस्थापिका (सघीय सभा) के दोनो सदनो—राष्ट्रीय परिषद और राज्य परिषद—की शक्तियाँ समान हैं लेकिन व्यावहारिक राजनीति के कुछ कारणों के आधार पर व्यवहार मे प्रथम

सदन द्वितीय सदन से अधिक शक्तिशाली हो गया है। इसके अतिरिक्त स्विस राज्य परिषद को नियुक्तियो और सन्धियो के विषय मे ऐसे अनन्य अधिकार प्राप्त नही हैं जैसे कि अमरीकी सीनेट को। इस प्रकार स्विस राज्य परिषद से अमरीकी सीनेट पर्याप्त शक्तिशाली है।

अमरीकी सीनेट की जापान के द्वितीय सदन 'सभासद सदन' से तुलना—जापान की डायट का प्रथम सदन 'प्रतिनिधि सभा' (House of Representatives) द्वितीय सदन 'सभासद सदन' (House of Councillors) से अधिक शक्तिशाली है। साधारण विधेयक दोनो मे से किसी भी सदन मे प्रस्तावित किया जा सकता है, परन्तु वित्त विधेयक प्रथम सदन मे ही प्रस्तावित किया जा सकता है। यदि प्रतिनिधि सभा किसी साधारण विधेयक को पारित कर दे और सभासद सदन उसे रद्द कर दे, तो प्रतिनिधि सदन के द्वारा पुन उसे ⅔ बहुमत से पारित किये जाने पर विधेयक दोनो सदनो द्वारा पारित समझा जायगा और कानून बन जायगा। वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे जापान के सभासद सदन की स्थिति ब्रिटिश लार्ड सभा के समान है, उसके द्वारा वित्त विधेयक को केवल ३० दिन की अवधि तक रोके रखने का कार्य किया जा सकता है। जापान की ससदात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यपालिका पर नियन्त्रण की शक्ति प्रथम सदन को प्राप्त है, जबकि अमरीका मे राष्ट्रपति की शक्तियो पर सीनेट के द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है। इस प्रकार जापान के द्वितीय सदन (सभासद सदन) की तुलना मे अमरीकी सीनेट बहुत अधिक शक्तिशाली है।

अमरीकी सीनेट की कनाडा तथा आस्ट्रेलिया के द्वितीय सदन से तुलना—इसी प्रकार अमरीकी सीनेट कनाडा तथा आस्ट्रेलिया के द्वितीय सदनो से भी अधिक शक्तिशाली है क्योकि इन देशो मे ससदात्मक शासन व्यवस्था है जिसमे कार्यपालिका व्यवस्थापिका के निम्न सदन के ही प्रति उत्तरदायी होती है। अत इन देशो मे द्वितीय सदन प्रथम सदन की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली है, जबकि अमरीका मे स्थिति विपरीत ही है। अमरीकी सीनेट को नियुक्तियो और सन्धियो पर स्वीकृति प्रदान करने और प्रशासन के विषयो की जाँच करने की जो अनन्य शक्ति प्राप्त है, उनके कारण सीनेट इन देशो के द्वितीय सदनो से बहुत अधिक शक्तिशाली हो गयी है।

विश्व के विभिन्न देशो के द्वितीय सदनो की शक्तियो की सीनेट से तुलना करने पर यह नितान्त स्पष्ट है कि अमरीकी सीनेट इन सभी द्वितीय सदनो से अधिक शक्तिशाली है। कुछ से यदि सीनेट बहुत ही अधिक शक्तिशाली है तो कुछ से अधिक शक्तिशाली और यह स्थिति न केवल सिद्धान्त, वरन व्यवहार मे भी है। प्रो० स्ट्रॉग ने सत्य ही कहा है "सीनेट की बहुत अधिक शक्तियाँ हैं। सम्भवतया विश्व का कोई ऐसा द्वितीय सदन नहीं होगा जो राष्ट्रीय सरकार के सभी मामलों में वास्तविक और सीधा महत्त्वपूर्ण प्रभाव रखता हो, विदेशी मामलों से लेकर सघीय

कानून निर्माण तथा वित्त तक, सरकारी क्षेत्र की प्रत्येक छोटी से छोटी बात पर सीनेट का प्रत्यक्ष प्रभाव है।"[1]

इसके अतिरिक्त विभिन्न देशों के द्वितीय सदन जहाँ अपना महत्त्व क्रमश खोते जा रहे है, अमरीकी राजनीति मे इस प्रकार की कोई प्रवृत्ति होने के बजाय उसके महत्त्व और सम्मान मे क्रमश वृद्धि ही होती जा रही है। आज की स्थिति और भविष्य की प्रवृत्तियो को दृष्टि मे रखते हुए प्रो० मुनरो ने ठीक ही लिखा है, "अभी तक ऐसा कोई समय नहीं आया और सम्भवत कभी आयगा भी नहीं, जबकि कांग्रेस का दूसरा सदन (सीनेट) द्वितीय श्रेणी का सदन कहलायेगा। सम्भवत सीनेट की हालत वैसी कभी नहीं होगी, जसी कि ग्रेट ब्रिटेन की ससद मे लार्ड सभा की हुई है। इसकी वधानिक शक्तिया अत्यधिक व्यापक हैं।"[2]

अत यह मानना होगा कि सीनेट की स्थिति बहुत अधिक दृढ है और वह विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली द्वितीय सदन है।

प्रतिनिधि सभा
(House of Representatives)

अमरीकी कांग्रेस के दोनो ही सदन जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होते है, लेकिन कांग्रेस का लोकप्रिय सदन प्रतिनिधि सभा ही है। इसका कारण यह है कि जनसख्या के आधार पर प्रतिनिधि सभा का ही गठन होता है, सीनेट का गठन तो सघीय आधार पर किया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रतिनिधि सभा का काय काल कवल २ वर्ष होने से इसके सदस्यो पर जनता के विचारो की अधिक और तत्काल प्रतिक्रिया होती है और वे उसी के अनुरूप आचरण भी करते है। जनसख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व की व्यवस्था होने के कारण प्रतिनिधि सभा मे बडे राज्यो को अधिक और छोटे राज्यो को कम प्रतिनिधित्व प्राप्त है। प्रतिनिधि सभा के लिए न्यूयार्क राज्य से ४३ प्रतिनिधि चुने जाते हैं, लेकिन अलास्का, डेलावयर, नेवादा और व्योमिंग राज्यो से एक एक प्रतिनिधि चुना जाता है।

प्रतिनिधि सभा की रचना—अमरीका के मूल संविधान मे लिखा है कि

1 The powers of the Senate are very great Probably no second chamber in the world today has an influence so real and direct not only in the most obviously national concerns such as foreign affairs but down to the very minutest business of federal legislation including finance

—C F Strong *Modern Political Constitutions*, p 213

2 There has never been a time and probably will never be when the second chamber of Congress the Senate can be termed a secondary chamber The Senate is not likely to meet the same fate as the House of Lords has encountered in the Parliament of Great Britain Its constitutional powers are far reaching

—W B Munro *The Government of United States*, p 285

"प्रतिनिधि अनेक राज्यों में उनके अनुपात के अनुसार बाँटे जायेंगे। जो इण्डियन टैक्स नहीं देते हैं, उनको उसमें शामिल नहीं किया जायगा। ३० हजार व्यक्तियों के ऊपर एक प्रतिनिधि लिया जायगा, परन्तु प्रत्येक राज्य में से कम से कम एक प्रतिनिधि अवश्य लिया जायगा।" प्रारम्भ में अमरीकी प्रतिनिधि सभा के सदस्यों की संख्या ६५ थी, लेकिन नवीन राज्यों के अमरीकी संघ में प्रवेश करने और जनसंख्या बढ़ने के साथ-साथ यह सदस्य संख्या बढ़ती गई। अब १९२९ में निर्मित और १९४१ में संशोधित 'पुनर्निर्धारण एक्ट (Re apportionment Act) के अनुसार प्रतिनिधि सभा की सदस्य संख्या स्थायी रूप से ४३५ निश्चित कर दी गई है। १९५९ में हवाई और अलास्का को काँग्रेस ने संघ में सम्मिलित होने की अनुमति प्रदान की, तो उन्हें प्रतिनिधित्व प्रदान करने के लिए अस्थायी रूप से यह संख्या ४३७ कर दी गई, परन्तु १९६१ में की गई जनगणना के आधार पर पुनर्निर्धारण हुआ और यह संख्या फिर स्थायी रूप से ४३५ कर दी गई है। मूल संविधान में ३० हजार मतदाताओं के लिए एक सदस्य चुनने की व्यवस्था की गयी थी, परन्तु जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होते जाने के कारण १९६३ में ४ लाख ४५ हजार जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि निश्चित किया गया है। मूल संविधान में की गयी यह व्यवस्था अब तक बनी हुई है कि अमरीकी संघ की प्रत्येक इकाई द्वारा प्रतिनिधि सभा के लिए एक प्रतिनिधि अवश्य ही निर्वाचित किया जायगा, चाहे उसकी जनसंख्या कितनी ही कम क्या न हो।

सदस्यों के लिए योग्यताएँ—प्रतिनिधि सभा के उम्मीदवार में निम्न योग्यताएँ होनी आवश्यक है

(१) वह २५ वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(२) वह कम से कम ७ वर्ष से संयुक्त राज्य अमरीका का नागरिक हो। इस सम्बन्ध में उसके लिए अमरीका का प्राकृतिक नागरिक होना आवश्यक नहीं है।

(३) वह संयुक्त राज्य अमरीका में कोई नागरिक या सैनिक पदाधिकारी न हो।

(४) वह उस राज्य का निवासी हो जिस राज्य से वह प्रतिनिधि सभा का चुनाव लड़ना चाहता है। वर्तमान समय में, अधिकांश राज्यों में यह परम्परा स्थापित हो गयी है कि उम्मीदवार न केवल उस राज्य का, वरन उस निर्वाचन क्षेत्र का भी निवासी हो, जहाँ से वह चुनाव लड़ रहा है। इसे 'स्थानीयता का नियम' (Locality Rule) कहते हैं।

प्रतिनिधि सभा का चुनाव—प्रतिनिधि सभा के सदस्य भारतीय लोक सभा की भाँति ही वयस्क मताधिकार के आधार पर एकल सदस्यीय चुनाव क्षेत्र प्रणाली द्वारा चुने जाते हैं। पहले संयुक्त राज्य में महिलाओं को मताधिकार प्राप्त नहीं था, १९२० में किये गये संविधान के १९वें संशोधन द्वारा उन्हें मताधिकार प्रदान किया गया। १९६४ ६५ में नागरिक मताधिकार अधिनियम पारित करते हुए अशिक्षित

हब्शियों को भी मताधिकार प्रदान कर दिया गया। इस प्रकार मताधिकार के सम्बन्ध में रंग के आधार पर सभी भेदभाव समाप्त कर दिये गये हैं। मतदाता की आयु के सम्बन्ध में विभिन्न राज्यों में अलग अलग प्रकार की व्यवस्थाएँ हैं। जार्जिया और केण्टकी में यह आयु १८ वर्ष, अलास्का में १९ वर्ष, हवाई में २० वर्ष और शेष राज्यों में २१ वर्ष रखी गई है। मतदाता बनने के लिए यह भी जरूरी है कि वह व्यक्ति उस राज्य में कुछ समय तक रहा हो। यह अवधि विभिन्न राज्यों में ६ माह से लेकर २ वर्ष तक है। पागलों और दिवालियों को मताधिकार से वंचित कर दिया गया है। १९७२ के चुनाव में डेमोक्रेटिक पार्टी को प्रतिनिधि सभा में २४४ और रिपब्लिकन पार्टी को १९१ स्थान प्राप्त हुए हैं और वर्तमान समय में सीनेट के समान ही प्रतिनिधि सभा में भी डेमोक्रेटिक पार्टी को बहुमत प्राप्त है।

कार्यकाल—प्रतिनिधि सभा का कार्यकाल २ वर्ष है और इस निश्चित अवधि को न तो कम किया जा सकता है और न ही बढ़ाया जा सकता है। प्रतिनिधि सभा को अवधि के पूर्व विघटित नहीं किया जा सकता है। १९७२ में निर्वाचित प्रतिनिधि सभा का कार्यकाल ३ जनवरी १९७३ से प्रारम्भ हुआ है।

प्रतिनिधि सभा के सदस्यों के वेतन, भत्ते, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ वे ही हैं जो सीनेट सदस्यों के हैं। गणपूर्ति (Quorum) के सम्बन्ध में भी सीनेट के समान यही व्यवस्था की गई है कि प्रतिनिधि सभा की बैठक तभी पूर्ण समझी जायेगी, जबकि सदस्यों की कुल संख्या का बहुमत उपस्थित हो।

जरीमण्डरिंग (Gerrymandering)—प्रतिनिधि सभा के गठन से सम्बन्धित एक प्रथा जरीमण्डरिंग है। प्रतिनिधि सभा के सदस्य एकल सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों से चुने जाते हैं और चुनाव क्षेत्रों का निर्धारण अमरीका में राज्य विधान मण्डलों का उत्तरदायित्व है। व्यवहार में सत्ताधारी दल चुनाव क्षेत्रों का निर्धारण इस प्रकार से करता है कि विरोधी दल के समर्थकों की संख्या को थोड़े से चुनाव क्षेत्रों में सीमित कर दिया जाय और अपने समर्थकों को अधिक से अधिक क्षेत्रों में इस प्रकार से फैला दिया जाय कि थोड़े थोड़े बहुमत से लेकिन अधिक संख्या में अपने उम्मीदवार विजयी हो जायें। सन् १८१४ में एलब्रिज जरी मैसाचुएट्स के गवर्नर थे और उनके द्वारा ही सबसे पहले इस प्रथा को अपनाया गया। अतः उनके नाम पर इसे जरीमण्डरिंग कहा जाता है। जरीमण्डरिंग की प्रथा सत्ताधारी दल द्वारा सत्ता के दुरुपयोग का एक उदाहरण है और इसके कारण प्रतिनिधि सभा का गठन दोषपूर्ण हो गया है। 'जरीमण्डरिंग' को दृष्टि में रखते हुए ही बियर्ड (Beard) ने लिखा है कि प्रतिनिधि सभा राजनीतिक विचारों का सही दर्पण नहीं है। अमरीका में 'जरीमण्डरिंग' की प्रथा पर रोष अवश्य है किन्तु अब तक इस बुराई को दूर नहीं किया जा सका है। मुनरो ने लिखा है "अमरीकी राजनीति में जरीमण्डरिंग एक दूषित तत्त्व रहा है तथा जनता की भावनाएँ धीरे धीरे इसके विरुद्ध होती जा

रही है। आज यदि कोई दल इसका प्रयोग करता है, तो यह स्वयं उसके लिए विनाशकारी सिद्ध होता है।'

प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष
(Speaker)

प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष को 'स्पीकर' (Speaker) कहते हैं और यह पद अमरीकी राजनीति मे बहुत अधिक सम्मान और महत्व का है। प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष संयुक्त राज्य के राष्ट्रपति से दूसरे दर्जे पर समझा जाता है। यदि किसी विशेष स्थिति मे राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति दोनो के ही पद रिक्त हो जायँ तो प्रतिनिधि सभा का स्पीकर ही राष्ट्रपति पद को धारण करता है। प्रतिनिधि सभा के स्पीकर को ४३ हजार डालर वार्षिक वेतन तथा १० हजार डालर भत्ते के रूप मे मिलता है।

स्पीकर' का चुनाव—संविधान के अनुच्छेद १, खण्ड २ में कहा गया है कि 'प्रतिनिधि सभा के सदस्य, सभा के सभापति व अन्य अधिकारियो का चुनाव करेंगे।' प्रतिनिधि सभा प्रत्येक २ वर्ष के बाद अर्थात् सभा के निर्वाचन के उपरान्त प्रथम सत्र मे, स्पीकर का चुनाव करती है। व्यवहार मे स्पीकर सदा ही सदन मे बहुमत वाले दल का प्रत्याशी होता है। स्पीकर का चुनाव बहुमत दल अपने 'काकस (Caucus) अर्थात् अन्तरंग सम्मेलन मे कर लेता है फिर भी सदन मे उसके चुनाव की औपचारिक कानूनी कार्यवाही की जाती है। स्पीकर साधारणतया कोई अनुभवी और वरिष्ठ सदस्य होता है, किन्तु व्यक्तिगत लोकप्रियता भी उसके निर्वाचन मे सहायक सिद्ध होती है। ब्रिटिश लोकसदन के स्पीकर का चुनाव प्राय सर्वसम्मत होता है और वहाँ एक बार स्पीकर, सदैव स्पीकर' के सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता है परन्तु संयुक्त राज्य मे स्पीकर का चुनाव सर्वसम्मति से नहीं वरन बहुमत दल के द्वारा किया जाता है। इस सम्बन्ध मे अब यह परम्परा अवश्य ही स्थापित हो गई है कि यदि प्रतिनिधि सभा मे पुन उसी दल का बहुमत हो जाय तो पूर्वगामी सभा का स्पीकर ही पुन स्पीकर निर्वाचित कर लिया जाता है। यदि पहले का अल्पमत दल बहुमत मे आ गया है, तो उसके द्वारा अपने उम्मीदवार को स्पीकर निर्वाचित किया जाता है। स्पीकर के चुनाव की पद्धति को दृष्टि मे रखते हुए आग तथा रे ने लिखा है कि— 'अमरीकी स्पीकर के पद का विकास इंगलैण्ड से बहुत भिन्न रूप मे हुआ और वह दलीय सम्बन्ध से मुक्त नहीं है। रीड और केनन के समय तो वह राष्ट्रपति से दूसरे स्थान पर ही दल का नेता होता था।'[1]

[1] The American speakership has been developed on very different lines and has been quite frankly partisan In the days of Reed and Cannon he was a party figure second only to President himself '

—Ogg and Ray, *Essentials of American Government* p 199

शक्तियां और कार्य—अमरीकी सविधान का निर्माण करते समय यह सोचा गया था कि विधि निर्माण के क्षेत्र मे प्रतिनिधि सभा स्वय ही अपना नेतृत्व कर लेगी। प्रारम्भ मे प्रतिनिधि सभा की सदस्य सख्या ६५ थी और ऐसा होना सम्भव भी था, किन्तु अमरीकी सघ मे नवीन इकाइयो के प्रवेश करने और प्रतिनिधि सभा की सदस्य सख्या बढने के साथ यह बात सम्भव नही रही तथा यह स्पष्ट हो गया कि विधि निर्माण का कार्य भली भाति सम्पन्न करने के लिए सभा मे नेतृत्व की आवश्यकता है। शक्ति विभाजन पर आधारित अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल के द्वारा तो यह नेतृत्व किया नही जा सकता था, अत सभा मे बहुमत दल के नेतृत्व का भार 'स्पीकर' पर पडा और इस बात ने स्पीकर पद को अमरीकी राजनीति मे बहुत शक्तिशाली बना दिया। हेनरी क्ले के समय से स्पीकर पद की शक्तियो मे वृद्धि प्रारम्भ हुई और धीरे धीरे वह बहुमत दल और सदन का मान्य नेता बन गया। स्पीकर रीड और उसके बाद बीसवी सदी के प्रारम्भ मे स्पीकर जोसेफ जी० केनन के समय मे तो स्पीकर पद की शक्तियाँ इतनी अधिक बढ गयी कि स्पीकर पदधारी को तानाशाह कहा जाने लगा। इस समय 'स्पीकर' नियम समिति (Rules Committee) का अध्यक्ष था और इसलिए सदन मे उसी कार्य को प्राथमिकता दे सकता था जिसे वह उचित समझे। इसके अतिरिक्त वह स्थायी समितियो और प्रवर समितियो की नियुक्ति करता था और उसके द्वारा इन शक्तियो का प्रयोग इस प्रकार से किया जाने लगा कि वह कानून निर्माण के क्षेत्र मे अन्तिम शक्ति बन गया। उसके द्वारा अपनी इन शक्तियो के प्रयोग मे मनमानी भी की जाने लगी।

स्पीकर की इस मनमानी के विरुद्ध १९१० मे विरोधी दल (रिपब्लिकन दल) ने विद्रोह खडा कर दिया और स्पीकर के दल के ही कुछ सदस्यो ने भी इस विद्रोह मे साथ दिया। उसे नियम समिति के अध्यक्ष पद से हटा दिया गया और स्थायी समितियो तथा प्रवर समितियो की नियुक्ति की शक्ति सदन के द्वारा अपने हाथ मे ले ली गयी।

स्पीकर की शक्तियो का एक महत्वपूर्ण भाग छीन लिए जाने के बाद भी उसके पास पर्याप्त शक्तियाँ हैं, जिनका उल्लेख निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) वह प्रतिनिधि सभा की बैठको की अध्यक्षता करता है। अपना पद ग्रहण करने के बाद वह प्रतिनिधि का कार्यक्रम प्रारम्भ होने की घोषणा करता है।

(२) सदन मे शान्ति व्यवस्था और अनुशासन बनाये रखने का उत्तरदायित्व स्पीकर पर ही होता है। यदि सदन मे कोई भी उपद्रव अव्यवस्था अभद्र या अनिष्ट व्यवहार हो, तो वह गलियारो तथा सभाकक्षों (lobbies) को खाली कराने का आदेश दे सकता है।

(३) वह सदस्यो को सदन मे भाषण के लिए स्वीकृति प्रदान करता है। स्पीकर की यह शक्ति महत्वपूर्ण है और उसके द्वारा इस शक्ति का प्रयोग इस प्रकार

से किया जाता है कि उसके दल के सदस्यो को बोलने के अधिक अवसर प्राप्त हो। इस सम्बन्ध में उसके मार्गदर्शन हेतु सदन के कुछ निश्चित नियम भी हैं।

(४) वह प्रश्नो पर मत लेता और निर्णयो की घोषणा करता है।

(५) वह सदन के नियमो की व्याख्या करता और उन्हे लागू करता है।

(६) स्पीकर सदन के विचार-विमर्श मे भाग ले सकता है। साधारणतया उसे मत देने का अधिकार नही होता, लेकिन मत बराबर होने की स्थिति मे उसके द्वारा निर्णायक मत (casting vote) का प्रयोग किया जा सकता है। गुप्त मतपत्र द्वारा मतदान होने पर भी वह मतदान मे भाग लेता है। उसके द्वारा अपने मत का सदैव ही इस प्रकार से प्रयोग किया जाता है कि उसके दल को राजनीतिक लाभ पहुचे।

(७) वह सब प्रस्तावो, लेखो (Writs), अधिपत्रो (Warrants) और विधेयको (Bills) पर अपने हस्ताक्षर करता है।

(८) वह दोनो सदनो मे मतभेद उत्पन्न होने की स्थिति मे सम्मेलन समिति और अन्य विशेष समितियो की नियुक्ति करता है तथा विविध स्थायी समितियो के पास विधेयको को भेजता है।

यह एक तथ्य है कि अमरीका मे प्रतिनिधि सभा का अध्यक्ष दलीय आधार पर कार्य करता है और व्यवहार मे अध्यक्ष पद कभी अधिक शक्तिशाली रहा है तो कभी कम शक्तिशाली। फरग्यूसन और मक्हेनरी ने लिखा है कि— 'स्पीकर पद कभी बहुत अधिक महत्त्व का और कभी साधारण महत्त्व का हो जाता है। इसकी स्थिति पदधारी व्यक्ति के व्यक्तित्व और अपने दल (कांग्रेस) तथा देश की परिस्थितियों पर निर्भर करती है। शक्तिशाली स्पीकरो (रीड, कैनन और लागवर्थ) ने इस पद की सत्ता और सम्मान को उच्चतम स्तर पर पहुचा दिया था, लेकिन कुछ स्पीकर पदधारियों ने औपचारिक अध्यक्ष के रूप मे कार्य करते हुए ही सन्तोष कर लिया।'[1]

प्रतिनिधि सभा के स्पीकर की ब्रिटिश लोकसदन के स्पीकर से तुलना

यद्यपि प्रतिनिधि सभा के स्पीकर का पद ब्रिटिश लोकसदन के स्पीकर पद से उदयभूत है, और यद्यपि इन दोनो ही देशों मे स्पीकर के द्वारा सदन की अध्यक्षता

[1] Like the Presidency the speakership can be an office of great magnitude or one of only modest influence which it depends upon the incumbent and the circumstances in his party, in Congress and in the country The most powerful speakers like Reed Connon and Longworth built up the authority and prestige of the office to a high level Some of the others have been content to be merely the Presiding Officer —Ferguson & McHenry *The American Federal Government* p 256

और सदन मे व्यवस्था बनाये रखने से सम्बन्धित कुछ समान शक्तियो का उपभोग किया जाता है, परन्तु प्रतिनिधि सभा के स्पीकर का स्वरूप लोकसदन के स्पीकर के स्वरूप से नितान्त भिन्न है।

निर्वाचन मे अन्तर—नवीन लोकसदन के निर्माण के बाद लोकसदन के अध्यक्ष का चुनाव सामान्यतया सर्वसम्मति से होता है और इगलण्ड मे 'एक बार स्पीकर, सदा के लिए स्पीकर' की परम्परा का पालन किया जाता है। जो व्यक्ति स्पीकर पद पर कार्य कर रहा है, उसे उसके निर्वाचन क्षेत्र से निर्विरोध चुना जाता है और सदन मे चाहे किसी भी राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त हो पहले के स्पीकर को ही पुन स्पीकर निर्वाचित कर लिया जाता है। लेकिन अमरीका मे प्रतिनिधि सभा के स्पीकर का चुनाव दलीय आधार पर होता है। बहुमत दल और अल्पमत दल के द्वारा अपने अपने उम्मीदवार खडे किये जाते हैं और बहुमत दल का उम्मीदवार स्पीकर पद पर निर्वाचित होता है। इस चुनाव सम्बन्धी अन्तर को दृष्टि मे रखते हुए ही आग और रे ने लिखा है कि 'अमरीका में स्पीकर पद का विकास इगलण्ड से बहुत भिन्न रूप मे हुआ है।'

दलीय स्थिति मे अन्तर—इन दोनो पदाधिकारियो का मूल और सबसे प्रमुख अन्तर दलीय स्थिति से सम्बन्धित ही है। लोकसदन का स्पीकर निर्वाचन के बाद दल से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर लेता है और दलीय राजनीति से किसी भी रूप मे कोई सम्बन्ध नहीं रखता है। वह सदन के वादविवाद मे कोई भाग नहीं लेता। टाई (tie) पडने की स्थिति मे, यद्यपि उसे निर्णायक मत के प्रयोग का अधिकार प्राप्त है लेकिन उसके द्वारा अपने इस मत का प्रयोग भी इस प्रकार से किया जाता है कि अन्तिम निर्णय सदन के ही द्वारा हो।

लेकिन प्रतिनिधि सभा के स्पीकर का चुनाव दलीय आधार पर होता है और जैसा कि फाइनर लिखते हैं "अध्यक्ष बनने पर वह अपना राजनीतिक चरित्र छोड नहीं देता वरन् और अधिक राजनीतिक होने के लिए ही वह अध्यक्ष बनता है।"[1] वह अपने दल के हितो की वृद्धि के लिए अपनी शक्ति और अधिकार का व्यापक तथा निरन्तर प्रयोग करता है। अध्यक्ष निकोलस लागवर्थ ने एक बार कहा था, "अपने दलीय मच पर खडे होकर जहा तक सम्भव हो उचित रीति मे अपने दल के घोषित सिद्धान्तो और नीतियो के अनुकूल विधान निर्माण मे सहायता करना और इसी प्रकार अपने दल की घोषित नीतियो के प्रतिकूल विधान को रोकना स्पीकर का प्रथम कर्त्तव्य है। वह अन्य सदस्यो की तरह ही सदन के वादविवाद मे भाग लेता

1 Instead of losing his partisan character on becoming speaker he becomes speaker in order to be more political
—Finer Herman *Theory & Practice of Modern Government* p 480

और मतदान भी करता है। एक बार अध्यक्ष हैनरी लो ने मतदान के समय सब प्रथम अपना नाम पुकारा था, जिससे उसका मत उसके अनुयायियो को प्रभावित कर सके। इन दोनो पदाधिकारियो की स्थिति के अन्तर को स्पष्ट करते हुए डॉ० फाइनर ने लिखा है, "लोकसदन का स्पीकर केवल नियमो का उल्लेख करता और उन्हे निष्पक्षता से लागू करता है जबकि प्रतिनिधि सभा का स्पीकर अपनी इच्छा से नियमों का पुनर्निर्माण करता है और सदन की कार्यवाही के निर्धारण मे भी भाग लेता है।"[1]

शक्तियो मे अन्तर—इन दोनो पदाधिकारियो की शक्तियो मे भी कुछ अन्तर है। लोकसदन के स्पीकर को १९११ के ससदीय अधिनियम के अनुसार वित्त विधेयक को प्रमाणित (certify) करने की शक्ति प्राप्त है, परन्तु प्रतिनिधि सभा म स्पीकर को इस प्रकार की कोई शक्ति प्राप्त नही है।

एक अन्य अन्तर यह भी है कि लोकसदन म स्पीकर का निर्णय सभी नियमो की व्याख्या के बारे म अन्तिम होता है परन्तु सयुक्त राज्य म स्पीकर का यह निर्णय अन्तिम नही होता और उसके निर्णय के विरुद्ध सदन मे अपील की जा सकती है।

इस प्रकार प्रतिनिधि सभा के स्पीकर का पद और व्यक्तित्व दलीय होता है लोक सदन के स्पीकर का निर्दलीय। इसी तथ्य ने इस भेद को जन्म दिया है कि ब्रिटेन मे स्पीकर का पद बहुत अधिक प्रतिष्ठा और सम्मान का समझा जाता है, लेकिन प्रतिनिधि सभा के स्पीकर को ऐसी प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त नही है। लोकसदन के स्पीकर का पद प्रतिष्ठा और गौरव का पद है प्रतिनिधि सभा के स्पीकर का पद लोकसदन के स्पीकर की तुलना म अधिक वास्तविक राजनीतिक शक्ति लेकिन कम प्रतिष्ठा का पद है।

प्रतिनिधि सभा की शक्तियाँ और कार्य

सविधान के अनुसार सयुक्त राज्य अमरीका की समस्त विधायी शक्तियाँ काग्रेस मे निहित है, जिनका प्रयोग प्रतिनिधि सभा और सीनेट समान रूप से करती है। इस प्रकार प्रतिनिधि सभा की मुख्य शक्ति कानून निर्माण से सम्बन्धित है किन्तु इसके अतिरिक्त भी उसके द्वारा कुछ अन्य कार्य किये जाते है। उसकी शक्तियाँ और कार्य निम्नलिखित हैं

(१) विधायी शक्तियाँ—सविधान के अनुसार काग्रेस को सभी सघीय विषयो पर कानून निर्माण की शक्ति प्राप्त है। इस सम्बन्ध म उसके द्वारा सविधान

[1] Whereas the Speaker of the House of Commons simply utters the rules of the House the Speaker of the House of Representatives has often made the rules of the House with power over the proceedings of the House —Finer *Herman, Ibid* p 477

मे उल्लिखित विषयो के अतिरिक्त अन्तर्निहित विषयो पर भी कानून निर्माण का काय किया जाता है। कानून निर्माण के सम्बन्ध मे काग्रेस के दोनो सदनो को समान शक्ति प्राप्त है। कोई भी विधेयक जब तक दोनो सदनो से पारित नही हो जाता, कानून नही बन सकता। वित्तीय विधेयक प्रतिनिधि सभा म ही प्रस्तावित किय जा सकते है, सीनेट मे नही, किन्तु सीनेट को इन विधेयको मे सशोधन करने का पर्याप्त अधिकार प्राप्त है। ऐसा प्रतीत होता है कि सविधान निर्माता कानून निर्माण के क्षेत्र मे प्रतिनिधि सभा को सर्वोपरि स्थिति देना चाहते थे, किन्तु कालान्तर मे कानून निर्माण के क्षेत्र मे भी सीनेट ने प्रतिनिधि सभा के समकक्ष ही और व्यवहार मे कभी कभी अधिक शक्तिशाली स्थिति प्राप्त कर ली।

(२) **सवैधानिक सशोधन की शक्ति**—अमरीकी काग्रेस के दोनो सदनो द्वारा अपने दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित कर सविधान म सशोधन प्रस्तावित करने का काय किया जाता है।

(३) **कायपालिका शक्तियाँ**—कायपालिका क्षेत्र मे प्रतिनिधि सभा को दो शक्तियाँ प्राप्त हैं। प्रतिनिधि सभा सीनेट के साथ मिलकर युद्ध की घोषणा करती है। इसके अतिरिक्त वह अपनी स्थायी तथा विशेष समितियो के द्वारा सघीय सरकार के प्रशासन तथा सघीय न्यायपालिका के कार्यों की जाँच कर सकती है।

(४) **राष्ट्रपति को निर्वाचित करने की शक्ति**—राष्ट्रपति का चुनाव निर्वाचन मण्डल के द्वारा किया जाता है। परन्तु यदि किसी भी उम्मीदवार को निर्वाचन मण्डल का पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो तो प्रतिनिधि सभा प्रथम तीन प्रत्याशियो मे से किसी एक को राष्ट्रपति निर्वाचित करती है।

(५) **न्यायिक शक्तियाँ**—न्यायिक शक्ति के अन्तगत प्रतिनिधि सभा राष्ट्रपति उपराष्ट्रपति एव अन्य सघीय अधिकारियो के विरुद्ध महाभियोग का प्रस्ताव प्रस्तावित करती है जिसे सीनेट द्वारा निश्चित प्रक्रिया के आधार पर स्वीकार कर लिये जाने पर सम्बन्धित अधिकारी पदच्युत हो जाता है।

(६) **अन्य शक्तियाँ**—प्रतिनिधि सभा को कुछ अन्य शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। वह अपने सदस्यो के विरुद्ध अनुशासनात्मक कायवाही कर सकती है और ऐसे किसी भी व्यक्ति को दण्डित कर सकती है जिसके व्यवहार से सदन की कायवाही मे प्रत्यक्ष हस्तक्षेप अथवा बाधा पडी हो। प्रतिनिधि सभा को अपनी कायप्रणाली के सम्बन्ध म नियम निर्माण का अधिकार प्राप्त है। यह सभा अपने सदस्यो के लिए योग्यताएँ निर्धारित कर सकती और उनके चुनाव सम्बन्धी विवादो का निणय कर सकती है। यदि सदन $\frac{2}{3}$ बहुमत से किसी सदस्य को दोषी ठहराये तो उसकी सदस्यता समाप्त हो सकती है।

सीनेट की तुलना मे प्रतिनिधि सभा की दुर्बलता

सयुक्त राज्य अमरीका के ही समान विश्व के अन्य देशो मे द्विसदनात्मक व्यवस्थापिकाएँ हैं, लेकिन विश्व के अन्य देशो की तुलना मे अमरीकी काग्रेस के दोनो

सदनो का पारस्परिक सम्बन्ध परस्पर विपरीत रूप मे ही है। भारत, ब्रिटेन, कनाडा और जापान आदि देशो मे निम्न सदन को जनता की आकाक्षाओ का प्रत्यक्ष रूप से प्रतिनिधित्व करने के कारण लोकतन्त्र का सजग प्रहरी माना जाता है और उच्च सदन की तुलना मे अधिक शक्तियाँ प्राप्त होती हैं परन्तु अमरीका मे प्रतिनिधि सभा सीनेट की तुलना मे अधिक शक्तिशाली है।

कानून निर्माण के क्षेत्र में—सविधान के अनुसार अवित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे दोनो सदनो को बिल्कुल समान शक्तियाँ प्राप्त है किन्तु व्यवहार मे एक बात के कारण सीनेट कुछ अधिक शक्तिशाली हो गई है। दोनो सदनो मे मतभेद उत्पन्न होने की स्थिति मे विधेयक सम्मेलन समिति को सौंपा जाता है और सम्मेलन समिति मे सीनेट सदस्यो के अधिक प्रभावशाली होने के कारण बहुत कुछ सीमा तक निर्णय सीनेट के विचारानुसार ही होता है।

वित्तीय क्षेत्र मे—सविधान के अनुसार वित्तीय विधेयक प्रतिनिधि सभा मे ही प्रस्तावित किये जा सकते हैं सीनेट मे नही और सविधान मे की गई इस व्यवस्था से ऐसा प्रतीत होता है कि सविधान निर्माता वित्तीय क्षेत्र मे अन्तिम शक्ति प्रतिनिधि सभा को ही देना चाहते थे। लेकिन सीनेट को वित्तीय विधेयको मे सशोधन करने का अधिकार प्राप्त है और अपने इस अधिकार के माध्यम से सीनेट ने सविधान निर्माताओ द्वारा किये गये भेद को महत्वहीन कर दिया है। इसके अतिरिक्त वित्तीय विधेयक भी दोनो सदनो द्वारा स्वीकृत होना आवश्यक है और सदनो मे परस्पर विरोध होने पर सम्मेलन समिति की जो व्यवस्था की गई है, उसके कारण अनेक बार वित्तीय क्षेत्र मे भी सीनेट अधिक शक्तिशाली हो जाती है।

कार्यपालिका क्षेत्र मे—भारत, ब्रिटेन, कनाडा और जापान आदि देशो मे कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रथम सदन के प्रति उत्तरदायी होती है और यह तथ्य द्वितीय सदन की तुलना मे प्रथम सदन को बहुत अधिक शक्तिशाली बना देता है। लेकिन अमरीका मे राष्ट्रपति पर नियन्त्रण की शक्ति सीनेट को प्राप्त है, प्रतिनिधि सभा को नही और इस बात ने सीनेट की तुलना मे प्रतिनिधि सभा की स्थिति को बहुत निर्बल कर दिया है।

व्यवहार मे प्रतिनिधि सभा अपने सदस्यो की अपेक्षाकृत कम योग्यता के कारण भी एक निर्बल सस्था बनकर रह गई है।

प्रतिनिधि सभा विश्व का सर्वाधिक निर्बल प्रथम सदन—अमरीकी काग्रेस के दो सदनो मे से सीनेट को यदि सर्वाधिक शक्तिशाली द्वितीय सदन कहा जा सकता है तो प्रतिनिधि सभा विश्व का सर्वाधिक निर्बल प्रथम सदन है। भारत, ब्रिटेन कनाडा जापान, स्विटजरलैण्ड और सोवियत सघ आदि देशो की व्यवस्थापिकाओ के प्रथम सदन की तुलना मे यह निश्चित रूप से बहुत निर्बल है। भारत और ब्रिटेन मे यद्यपि कानून निर्माण की शक्ति ससद को प्राप्त है, लेकिन ससद के दो सदनों की तुलना मे निम्न सदन द्वितीय सदन की तुलना मे बहुत अधिक शक्तिशाली

है और इसी कारण व्यवहार के अन्तर्गत ब्रिटेन मे संसद का तात्पर्य लोकसदन (House of Commons) से और भारत मे संसद का तात्पर्य लोकसभा से हो गया है। जापान और कनाडा मे भी स्थिति यही है। स्विटजरलण्ड म यद्यपि संविधान के द्वारा संघीय सभा क दोनो सदनों को समान शक्तियाँ प्रदान की गई हैं, लेकिन व्यवहार मे प्रथम सदन द्वितीय सदन से अधिक शक्तिशाली हो गया है। अन्य प्रथम सदन, जहा द्वितीय सदन की तुलना मे प्रमुखता की स्थिति रखते है, प्रतिनिधि सभा को सीनेट की तुलना मे गौण स्थिति ही प्राप्त है। कार्यपालिका क्षेत्र मे तो उसकी यह गौण स्थिति नितान्त स्पष्ट है और इसी बात ने प्रतिनिधि सभा को विश्व का सर्वाधिक निर्बल प्रथम सदन बना दिया है। लास्की के शब्दो मे, 'प्रतिनिधि सभा उन कृत्यों को करने मे, जो उससे अपेक्षित हैं, नितान्त असफल रही है।

प्रतिनिधि सभा की दुर्बलता के कारण

प्रतिनिधि सभा सीनेट की तुलना मे निर्बल है और विश्व के अन्य देशो के प्रथम सदनो की तुलना म भी। प्रतिनिधि सभा की दुर्बलता के कारणो की विवेचना निम्न रूपो मे की जा सकती है

(१) कानून निर्माण में समानपदीय द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका—भारत और ब्रिटन आदि देशो क संविधानो मे कानून निर्माण के क्षेत्र मे प्रथम सदन को द्वितीय सदन की तुलना मे अधिक महत्त्वपूर्ण स्थिति प्रदान की गयी है किन्तु अमरीका मे सीनेट को हर प्रकार से प्रतिनिधि सभा के समान ही स्थिति प्राप्त है। इगलण्ड मे लार्ड सभा एक साधारण विधेयक को अधिक से अधिक एक वर्ष तक रोके रख सकती है और अन्तिम रूप म कानून निर्माण लोकसदन की इच्छा पर निर्भर करता है, लेकिन अमरीका मे सीनेट की स्वीकृति के बिना प्रतिनिधि सभा कानून निर्माण के क्षेत्र मे कुछ भी नही कर सकती है।

(२) प्रतिनिधि सभा को वित्तीय क्षेत्र पर एकाधिकार प्राप्त न होना—सामान्यतया राष्ट्रीय व्यवस्थापिका के प्रथम सदन को राष्ट्रीय वित्त पर एकाधिकार प्राप्त होता है। भारत, ब्रिटन, कनाडा जापान आदि देशो मे ऐसा ही है और इसके कारण प्रथम सदन सर्वोपरि स्थिति प्राप्त कर लेता है। लेकिन अमरीका म प्रतिनिधि सभा को राष्ट्रीय वित्त पर भी एकाधिकार प्राप्त नही है। इस सम्बन्ध म सीनेट उसकी सहभागिनी है। सीनेट वित्तीय विधेयको म संशोधन कर सकती है और उसकी स्वीकृति के बिना कोई भी वित्त विधेयक पारित नही हो सकता।

(३) अमरीका की अध्यक्षात्मक व्यवस्था—संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यपालिका व्यवस्थापिका में से ली जाती है और वह व्यवस्थापिका के निम्न सदन के प्रति उत्तरदायी होती है। लेकिन अमरीका म अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था होने के कारण राष्ट्रपति और मन्त्रिमण्डल न तो कांग्रेस मे से लिये जाते हैं और न ही

प्रतिनिधि सभा के प्रति उत्तरदायी होते हैं। अत प्रतिनिधि सभा राष्ट्रपति पर नियन्त्रण रखने मे नितान्त असमर्थ है।

(४) सीनेट की विशिष्ट कार्यपालिका शक्तियाँ—विश्व के अन्य देशो म तो कार्यपालिका पर नियन्त्रण की शक्ति प्रथम सदन को प्राप्त होती है, लेकिन अमरीका मे यह शक्ति द्वितीय सदन को प्राप्त है। सविधान निर्माता सम्भवतया सीनेट को राष्ट्रपति की परामर्शदात्री समिति बनाना चाहते थे और इसी कारण उनके द्वारा सीनेट को नियुक्तियो की स्वीकृति, सन्धियो की पुष्टि और विभागीय जांच आदि के अधिकार प्रदान किये गये। सीनेट को प्रदान की गयी इन कार्यपालिका शक्तियो के कारण अमरीकी प्रशासन म द्वितीय सदन (सीनेट) को वह विशिष्ट स्थिति प्राप्त हो गयी है, जो ब्रिटेन और भारत की प्रशासनिक व्यवस्था म क्रमश प्रथम सदन (लोकसदन) और लोकसभा को प्राप्त है। सीनेट को इन कार्यपालिका शक्तियो के कारण प्रतिनिधि सभा स्वाभाविक रूप से एक निर्बल सदन बनकर रह गया है।

(५) प्रतिनिधि सभा की अल्पावधि—प्रतिनिधि सभा की निर्बलता का एक प्रमुख कारण उसकी अल्पावधि है जबकि ब्रिटेन और भारत मे निम्न सदन का कार्यकाल ५ वर्ष है, अमरीका म प्रतिनिधि सभा का कार्यकाल केवल २ ही वर्ष है। इस अल्प कार्यकाल के कारण प्रतिनिधि-गण सदा चुनाव की चिन्ता से ग्रस्त रहते हैं और अपने कर्तव्यो की पूर्ति की ओर उचित ध्यान नही दे पाते। इसके विपरीत सीनेट सदस्यों का कार्यकाल ६ वर्ष है, जिससे सीनेट को स्थायित्व होता है और उसके सदस्य अधिक अच्छे रूप म अपने कर्तव्यो का पालन कर सकते हैं।

(६) विशाल आकार तथा कठिन कार्यविधि—प्रतिनिधि सभा का विशाल आकार तथा कठिन कार्यविधि भी इसकी दुर्बलता के लिए उत्तरदायी है। जबकि सीनेट मे केवल १०० सदस्य हैं, प्रतिनिधि सभा ४३५ सदस्यो वाली एक वृहत सस्था है, अत किसी भी विषय पर आवश्यक गम्भीरता के साथ यह विचार नही कर पाती। सीनेट सदस्यो की तुलना मे इस सभा के सदस्यो को भाषण की स्वतन्त्रता भी अत्यन्त सीमित है। वे जो कुछ कहना चाहते हैं उसे प्रतिनिधि सभा के रिकार्ड म छपवा दिया जाता है, अत सदस्य वादविवाद मे विशेष रुचि नही लेते। इन सबके कारण प्रतिनिधि सभा का वास्तविक कार्य तो समितियो की गुप्त बैठको मे होता है और प्रतिनिधि सभा का महत्त्व कम हो गया है।

(७) सदस्यों की गुणात्मक हीनता—प्रतिनिधि सभा गुणात्मक दृष्टि से भी निर्बल है। जहा सीनेट के सदस्य देश के अनुभवी व वरिष्ठ राजनीतिज्ञ और प्रसिद्ध विधि विशेषज्ञ होते हैं, वहाँ प्रतिनिधि सभा के सदस्य साधारण श्रेणी के लोग होते हैं। प्रतिनिधि सभा के अल्प कार्यकाल और अपेक्षाकृत कम शक्तियो के कारण अधिक योग्य और अनुभवी व्यक्ति इस सदन की ओर आकर्षित नही होते। इसके अतिरिक्त प्रतिनिधि सभा के निर्वाचन म 'क्षेत्रीय नियम' (Locality Rule) का अनुसरण किया जाता है। परिणामस्वरूप अनेक योग्य व अनुभवी व्यक्ति प्रतिनिधि

सभा के सदस्य नही बन पाते जबकि इसी नियम के कारण एक विशेष चुनाव क्षेत्र योग्य उम्मीदवारो के अभाव म साधारण श्रेणी के उम्मीदवारो का चुनाव करता है।

प्रतिनिधि सभा की उपरोक्त दुर्बलता को दृष्टि म रखते हुए ही लास्की ने लिखा है कि वह एक महान राष्ट्र के लिए अनुपयुक्त सदन है।

अमरीकी काग्रेस की समिति व्यवस्था

वतमान समय में कानून निर्माण का काय बहुत अधिक बढ गया है और इसके साथ ही यह काय बहुत अधिक जटिल हो गया है। ऐसी स्थिति म सदन के साधारण बुद्धि वाले सदस्यो स इस बात की आशा नही की जा सकती कि उनके द्वारा अपने सीमित समझ मे सभी विषयो पर उचित प्रकार के कानूनो का निर्माण किया जा सके। कानून निर्माण के काय म वृद्धि और काय की जटिलता की इस दोहरी कठिनाई को दूर करने के लिए सभी देशो मे समिति प्रणाली' (Committee System) को अपनाया जाता है। विधयको पर विस्तृत और पूण वादविवाद का काय समितियो द्वारा कर लिया जाता है, जिससे सदन का बहुमूल्य समय बच जाता है और विचाराधीन विधयको पर बहुत अधिक अच्छे प्रकार से विचार करने का काय सम्पन्न हो जाता है।

काग्रेस म समितियो की आवश्यकता इस बात से नितान्त स्पष्ट है कि काग्रेस के प्रत्येक सत्र मे लगभग १० हजार स लेकर १५ हजार तक विधेयक प्रस्तावित किये जाते है और किसी भी विधायी सस्था के द्वारा स्वय इतनी बडी सख्या मे विधेयको पर विचार करने का काय नही किया जा सकता। अत अमरीका मे भी इगलण्ड के समान समिति-व्यवस्था को अपना लिया गया है।

समितियो का काय और महत्त्व

सयुक्त राज्य अमरीका की व्यवस्था म अन्य किसी देश की तुलना मे समितियो की अधिक आवश्यकता और उनका अधिक महत्त्व है। ग्रेट ब्रिटेन की ससदीय व्यवस्था म मन्त्रिमण्डल के द्वारा कानून निर्माण के काय मे ससद का नतृत्व किया जाता है। मन्त्रिमण्डल ससद का कायक्रम निश्चित करता है और विधेयको का प्रारूप तयार कर उन्हे ससद के सम्मुख लाता है। परन्तु अमरीका म राष्ट्रपति या मन्त्रिमण्डल के सदस्य कानून निर्माण के काय मे भाग नही लेते और इस काय म काग्रेस को स्वय ही अपना नेतृत्व करना होता है। ऐसी स्थिति मे अधिकाश विधेयको का प्रारम्भ समितियो मे ही होता है। जब कभी राष्ट्रपति किसी विशेष कानून की आवश्यकता पर बल देता है तब उस पर समितियो म ही विचार किया जाता है और समितियाँ ही इन विधेयको के लिए प्रारूप तैयार करती हैं।

अमरीका मे समितियाँ विधयको के प्रारूप पर ही नही, वरन् उनके सिद्धान्तो पर भी विचार करके उन्हें ठीक रूप दे सकती हैं। यदि वे विधेयक को अवाछनीय समझें, तो उनके द्वारा बिना प्रतिवेदन दिये विधेयक को अपने पास पडे रहने दिया जाता है जिसे विधेयक को 'कबूतर के दरबे मे डाल देना' (Pigeon holing of

the bill) कहा जाता है और इससे विधेयक के जीवन का अन्त हो जाता है। सैद्धान्तिक स्थिति यह है कि समिति ने जिस विधेयक को समाप्त करने हेतु उसे अपने पास रख लिया है, उसे सम्बन्धित सदन मे वापस विचारार्थ मंगवाया जा सकता है यदि विधेयक का प्रस्तावक उस विधेयक के पक्ष में सदन के कुल सदस्यो के बहुमत के हस्ताक्षर (४३५ मे से २१८) प्राप्त कर ले। किन्तु व्यवहार मे इस अधिकार का प्रयोग कम ही किया जाता है और स्थिति यह है कि विधेयक के जीवन मरण का अन्तिम अधिकार समितियो के हाथ मे है। समितियो की इस स्थिति को दृष्टि मे रखते हुए ही डॉ० फाइनर इन्हे सदन की वास्तविक विधान सभाएँ' (Real Legislative Bodies of the House) और राष्ट्रपति विल्सन इन्हे लघु विधान सभाएँ' (Little Legislatives) के नाम से पुकारते हैं। इसी प्रकार स्पीकर रीड ने समितियो का विवरण देते हुए कहा था कि 'ये सदन की आख, कान, हाथ और अधिकांशतया उसका मस्तिष्क होती हैं।'[1]

समितियो के प्रकार—अमरीकी काग्रेस मे विभिन्न प्रकार की समितिया हैं, जिनमे निम्नलिखित प्रमुख हैं

(१) **स्थायी समितिया (Standing Committees)**—स्थायी या नियमित समितियाँ अमरीकी काग्रेस की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समितियाँ होती है। फरग्यूसन और मैकहैनरी के शब्दो मे स्थायी समितिया वे बड़ी चलनी हैं जो प्रस्तावित व्यवस्थापन के एक बड़े भाग का सूक्ष्म परीक्षण करती हैं।'[2] १९वी सदी के प्रारम्भ मे प्रतिनिधि सभा मे केवल ५ स्थायी समितिया थी और सीनेट मे एक भी नही थी, किन्तु आवश्यकतानुसार इनकी सख्या मे वृद्धि होती गयी और १९२७ मे इनकी सख्या ६१ हो गयी। परन्तु सन १९४८ के विधायिका पुनर्गठन अधिनियम ने इनकी सख्या १९ निश्चित कर दी। वर्तमान समय मे प्रतिनिधि सभा मे १६ स्थायी समितिया है। प्रतिनिधि सभा की स्थायी समितिया इस प्रकार है—कृषि विनियोग (Appropriations), सशस्त्र सेवाएँ बैंकिंग तथा करेंसी कोलम्बिया जिला शिक्षा तथा श्रम, वैदेशिक मामले, सरकारी सक्रिया, सदन का प्रशासन, आन्तरिक तथा द्वितीय मामले, अन्तरराज्यिक तथा वैदेशिक व्यापार, न्यायपालिका, समुद्री व्यापार तथा मछलियो के स्थान, डाकखाने तथा नागरिक सेवाएँ सार्वजनिक कार्य नियम तथा विज्ञान तथा विमान, अमरीका विरोधी गतिविधिया, भूतपूर्व कर्मचारियो के मामले, उपाय तथा साधन (Ways and Means)।

1 'The eye the ear, the hand and very often the brain of the House'
—*Thomas B Reed*

2 'The standing committees constitute the screen through which the great mass of proposed legislation is sifted'
—Ferguson & McHenry *American System of Government* p 35

सीनेट की स्थायी समितियां इस प्रकार हैं—वैमानिक अन्तरिक्ष विज्ञान, कृषि तथा वन, विनियोग, सशस्त्र सेवाएँ, बैंकिंग तथा करेंसी कोलम्बिया जिला, वित्त, वैदेशिक सम्बन्ध, सरकारी सक्रिया, आन्तरिक तथा द्वितीय मामले, अन्तरराज्यिक तथा वदेशिक व्यापार, न्यायपालिका, श्रम तथा सावजनिक कल्याण, डाकखाने तथा नागरिक सेवाएँ, सावजनिक काय, नियम तथा प्रशासन।

स्थायी समितियों का गठन—ये स्थायी समितियां प्रत्येक काग्रेस के प्रारम्भ मे स्थापित होती हैं और सन १९११ के बाद से इनका निर्माण सभा द्वारा होता है, न कि अध्यक्ष द्वारा। प्रतिनिधि सभा की विविध स्थायी समितियो की सदस्य सख्या ९ से लेकर ५० तक होती है और सीनेट की इन समितियो की सदस्य सख्या २ से लेकर १७ तक होती है। वास्तव मे स्थायी समितियो के इन सदस्या का चयन प्रत्येक दल की 'समितियों सम्बन्धी समिति' के द्वारा किया जाता है। प्रत्येक दल की इस समिति मे दल के वरिष्ठ सदस्य होते हैं और वे ही निणय करते हैं कि दल के किस सदस्य को किस समिति मे रखा जाय। प्रत्येक दल को प्राय समितियों मे उसी अनुपात मे प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाता है जो उनुपात उसका सदन म हो। समिति के सभापति की नियुक्ति ज्येष्ठता के आधार पर की जाती है और सामान्यतया यह बहुमत दल का सदस्य ही होता है।

काय—दोनो सदनो की विधायी प्रक्रिया का अधिकाश काय स्थायी समितियां ही सम्पन्न करती हैं। समितियो के पास जो विधेयक आते हैं, वे उनका सूक्ष्म परीक्षण करती है और सदन को अपनी रिपोट देती है, जिसके आधार पर सदन उन्हे शीघ्रता से निबटा सकता है। उन्हे यह महत्त्वपूण अधिकार प्राप्त है कि वे जिन विधेयकों को अनुपयुक्त समझकर समाप्त करना चाहे, उनके सम्बन्ध म रिपोट ही प्रस्तुत न करें। लगभग तीन-चौथाई विधेयक समितियो द्वारा या ही समाप्त कर दिये जाते हैं। स्थायी समितियां, विधेयकों पर जसी चाहे, खुली या गुप्त, बठकें कर सकती हैं, गवाहो की साक्षी ले सकती हैं, बाहर के व्यक्तियों को बुलाकर प्रश्न पूछ सकती हैं तथा विधेयको मे सशोधन के सुझाव भी दे सकती है। स्थिति यह है कि समिति की सिफारिश के बिना कोई भी विधेयक कानून का रूप ग्रहण नही कर सकता।

(२) **नियम निर्मात्री समिति**—स्थायी समितियों मे सबसे महत्त्वपूण समिति प्रतिनिधि सभा की नियम निर्मात्री समिति (The House Committee on Rules) है जिसे फरग्यूसन और मकहैनरी के शब्दो म 'प्रतिनिधि सभा मे विधायन के ऊपर आम जीवन और मरण की शक्ति प्राप्त है।'[1] वे आगे लिखते हैं कि 'इसने

1 The House Committee on Rules has virtual life and death power over legislation in the lower house —Ferguson & McHenry, *The American System of Government*, p 303

प्रतिनिधि सभा के काय सचालन मे अद्ध अधिनायकत्व की स्थिति प्राप्त कर ली है।"[1]

इस समिति के १५ सदस्य होते हैं और समिति का अध्यक्ष सदन द्वारा नियुक्त किया जाता है। विषय समितिया जिन विधेयको के पक्ष म रिपोट देती हैं वे सब इसके सम्मुख लाय जाते हैं और यही उनक भाग्य का निणय करती है। यह न केवल विधेयको पर विचार करने का क्रम निर्धारित करती है, अपितु यह भी निणय करती है कि प्रत्येक विधयक को कितना समय दिया जायगा और विधेयक की किन धाराओ म किस प्रकार के सशोधन किय जा सकेंगे। इसे किसी भी विधेयक पर बहस को बीच म ही रोक कर अपने किसी प्रस्ताव को आगे बढा देने का अधिकार प्राप्त है। नियम समिति सदन को तीव्र गति से विधि निर्माण की क्षमता प्रदान करती है, लेकिन इस पर सामान्यतया अनुदार तत्वो का नियन्त्रण होने स उदार व्यवस्थापन को रोकन का दोषी ठहराया जाता है। नियम समिति पर राष्ट्रपति के समथक तत्वो का नियन्त्रण होने पर यह राष्ट्रपति को शासन सचालन म बहुत सहायक होती है और विपरीत स्थिति मे बाधक।

(३) विशेष समितिया (Special Committees)—ये समितिया अस्थायी होती हैं जिनका गठन विशेष प्रकार के काय को सम्पन्न करन के लिए किया जाता है और ज्यो ही इनका काय समाप्त होता है, इन्हे भग कर दिया जाता है। इस प्रकार की समितियो म जाँच समितियो (Special Investigation Committees) का विशेष महत्व है। प्रतिनिधि सभा और सीनेट दोनो ही इस प्रकार की समितियो का गठन कर सकती हैं और इनके द्वारा विभिन्न राजनीतिक, प्रशासकीय व कानून निर्माण सम्बन्धी मामलो पर जाच की जाती है। इन मामलो की जानकारी के लिए ये समितिया देश म घूम फिर कर आक- एकत्रित कर सकती हैं गवाहियाँ ल सकती हैं प्रशासकीय व सनिक अधिकारियो को बुलाकर उनके विचार जान सकती हैं। सयुक्त राज्य अमरीका म कायपालिका और प्रशासक वग व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नही होता और य जाच समितिय ही एकमात्र ऐसा माध्यम हैं जिसके आधार पर प्रशासनिक कमियो को जनता के सामने रखा जा सकता और प्रशासनिक स्वेच्छाचारिता पर नियन्त्रण रखा जा सकता है। इस दृष्टि से इन जाच समितियो का विशेष महत्व है और आजकल इस प्रकार की जाच करना काग्रेस का प्रमुख कतव्य बन गया है। वतमान समय मे इस प्रकार की जाच समितिया का उद्देश्य विधि निर्माण से अधिक राजनीतिक होता है।

(४) सम्पूण सदन की समिति (Committee of the Whole House)— अमरीका मे भी सम्पूण सदन की व्यवस्था की गयी है, लेकिन इगलण्ड मे की गयी

[1] It has acquired a Quasi dictatorship in House affairs'
—*Ibid* p 304

व्यवस्था से यह कुछ भिन्न है। इंगलण्ड म सम्पूर्ण सदन की समिति केवल वित्त विधेयकों पर ही विचार करती है, लेकिन अमरीका मे द्वितीय वाचन के अन्तर्गत सभी विधेयकों पर विचार करने के लिए सदन को सम्पूर्ण सदन की समिति का रूप दे दिया जाता है। यह व्यवस्था इस दृष्टि से की गयी है कि बिना किन्ही औपचारिकताओं के विधयक पर पूर्ण विचार किया जा सके। इस व्यवस्था म काय शीघ्र सम्पन्न हो जाता है और प्रत्येक को अपनी बात कहने का पूरा अवसर मिलता है। समय के सदुपयोग की दृष्टि स प्रत्येक वक्ता के लिए पाच मिनट की सीमा निर्धारित कर दी जाती है। सम्पूर्ण सभा की समिति का सभापति स्पीकर नहीं होता, वरन अन्य समितियों की तरह ही इस समिति के लिए भी एक विशेष अध्यक्ष का चुनाव किया जाता है। सदन की बैठकों म गणपूर्ति कुल सदस्य संख्या का बहुमत होता है, लेकिन सम्पूर्ण सभा की समिति मे गणपूर्ति केवल १०० है।

(५) सम्मेलन समितियां (Conference Committees)—इस प्रकार की समितियां ब्रिटेन या अन्य देशो मे गठित नहीं की जाती और न ही वहां इनकी आवश्यकता होती है। अमरीका मे कानून निर्माण के सम्बन्ध मे कांग्रेस के दोनों सदनों को समान शक्तियां प्राप्त हैं। इसलिए अनेक बार विधेयक के सम्बन्ध मे दोनों सदनों मे मतभेद होने पर गतिरोध उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार के गतिरोध को दूर करने के लिए सम्मेलन समिति का गठन किया जाता है। इस समिति मे दोनों सदनों के सदस्य बराबर बराबर की संख्या म, सामान्यतया ३ ३ होते हैं, जिनका चुनाव सदन की सहायता से सम्बन्धित सदन के अध्यक्ष द्वारा किया जाता है। सदन के वरिष्ठ और योग्यतम सदस्यों को ही इन समितियों की सदस्यता प्रदान की जाती है। अमरीका के राजनीतिक जीवन मे इन समितियों का विशेष महत्त्व है और अनेक महत्त्वपूर्ण विधेयकों के सम्बन्ध म इन समितियों का गठन करना होता है।

(६) संयुक्त समितियां (Joint Committees)—अनेक बार कुछ विशेष उद्देश्यों के लिए दोनों सदनों की संयुक्त समितियां स्थापित की जाती हैं। ये समितियां स्थायी भी हो सकती हैं और अस्थायी भी। पहले इनका गठन कांग्रेस के एक प्रस्ताव के आधार पर होता था, परन्तु १९४७ मे इनका चुनाव दोनों सदनों की स्थायी समितियों से किया जाता है। इस प्रकार की समितियां मे अणुशक्ति सम्बन्धी समिति कांग्रेस के संगठन से सम्बन्धित समिति मुद्रण और आय कर विषयों से सम्बन्धित समिति आदि प्रमुख हैं।

(७) संचालन समिति (Steering Committee)—अमरीका म एक अन्य समिति भी होती है, जिसका निर्माण सदन म व्यवस्थापन काय का संचालन करने के लिए किया जाता है और इसे संचालन समिति कहते हैं। इसका चयन सदन के बहुमत दल द्वारा अपने दल के सदस्यों म से किया जाता है और सदन के बहुमत दल का नेता इसका अध्यक्ष होता है। बहुमत दल की ओर से यही समिति विधेयक को सदन के सम्मुख प्रस्तुत करती है और उस सदन से पारित कराती है। इंगलण्ड म

इस प्रकार की कोई समिति नहीं है, क्योंकि वहाँ पर व्यवस्थापन कार्य का संचालन मन्त्रिमण्डल के द्वारा किया जाता है।

समिति व्यवस्था के दोष—अमरीकी कांग्रेस की समिति व्यवस्था सर्वथा दोषमुक्त नहीं है। सर्वप्रथम समितियों के अत्यधिक शक्तिशाली हो जाने से सदन का महत्त्व समाप्त हो गया है और सदन समितियों द्वारा स्वीकृत विधेयकों को रजिस्टर करने की एजेंसी मात्र बनकर रह गया है। द्वितीय समितियों की अधिकांश कार्यवाही गुप्त होती है और अनेक बार इस प्रकार की बात कही जाती है कि अनेक बार समिति के अध्यक्ष और सदस्यों को अनैतिक साधनों से प्रभावित करने का सफल प्रयत्न किया जाता है। तृतीय, कांग्रेस की जाँच समितियों की आलोचना की जाती है। यह कहा जाता है कि इनका उद्देश्य कानून निर्माण न होकर शासन को बदनाम करना और चुनाव प्रचार हेतु सामग्री प्राप्त करना होता है।

अमरीकी तथा ब्रिटिश समिति व्यवस्था की तुलना—अमरीकी कांग्रेस और ब्रिटिश संसद दोनों में ही समितियों का व्यापक रूप से प्रयोग किया जाता है, किन्तु इन दोनों देशों की समिति व्यवस्था में पर्याप्त भिन्नता है।

(१) इन दोनों देशों की समिति व्यवस्था में सबसे प्रमुख अन्तर शक्तियों से सम्बन्धित है और कांग्रेस की समितियाँ इंगलैण्ड की संसदीय समितियों की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति का प्रयोग करती हैं। वे किसी विधेयक को सदन के विचारार्थ वापस न भेजकर उसका अन्त कर सकती हैं परन्तु ब्रिटिश समितियों को अपने पास आया प्रत्येक विधेयक अपनी रिपोर्ट के साथ सदन को वापस भेजना होता है। ब्रिटिश समितियाँ विधेयक की अन्तर्दृष्टि नहीं कर सकती और संशोधन भी कुछ निश्चित सीमाओं के भीतर ही कर सकती हैं। इस प्रकार ब्रिटिश समितियों की स्थिति सदन के प्रति अधीनता की है जबकि अमरीका में समितियों ने वास्तविक विधायी संस्था का रूप ग्रहण कर लिया है। जैसा कि के० सी० ह्वीयर ने कहा है, "इंगलैण्ड को यदि संसदीय व्यवस्थापन पर गर्व है तो संयुक्त राज्य अमरीका में व्यवस्थापन समितियों का है।"[1]

(२) इन दोनों देशों की स्थायी समितियों की संख्या में अन्तर है। इंगलैण्ड के लोकसदन में केवल ५ स्थायी समितियाँ हैं, जबकि अमरीका की प्रतिनिधि सभा में इनकी संख्या २० है। इसका परिणाम यह हुआ है कि इंगलैण्ड में जहाँ सभी समितियाँ महत्त्वपूर्ण और क्रियाशील हैं, अमरीका में कुछ समितियाँ तो पर्याप्त महत्त्वपूर्ण और क्रियाशील हैं लेकिन कुछ समितियाँ बहुत कम सक्रिय हैं और इन्हें 'निष्क्रिय समितियाँ' (Phantom Committees) कहा जाता है।

[1] 'If England prides in Legislation by Parliament in U S A there is Committee Legislation —K C Wheare

(३) दोनों देशों में समितियों के गठन में भी अन्तर है। ब्रिटेन में समितियों का गठन दलों के नेताओं द्वारा मनोनीत की गई चयन समिति द्वारा होना है जबकि अमरीकी प्रतिनिधि सभा में दोनों दलों के वरिष्ठ सदस्यों द्वारा दी गई सूचियों के आधार पर सदन में सदस्यों का चुनाव होता है, जो एक औपचारिकता मात्र है। सदस्यों के चुनाव में अमरीका की अपेक्षा ब्रिटेन में दलीय दृष्टिकोण को कम ध्यान में रखा जाता है।

(४) समिति के अध्यक्ष और सदस्यों के चुनाव में अमरीका में वरिष्ठता (Seniority) के नियम का कठोरता से पालन किया जाता है, लेकिन ब्रिटेन में इस नियम का सख्ती से पालन किया जाता है। ब्रिटेन में यदि कोई जूनियर सदस्य अत्यन्त योग्य है, तो उसे भी किसी समिति की अध्यक्षता दी जा सकती है।

(५) ब्रिटेन में समितियाँ सामान्य उद्देश्य से बनाई जाती हैं। उनके नाम 'ए', 'बी', 'सी', 'डी' आदि हैं और स्पीकर के द्वारा विधेयक, किसी भी समिति के पास भेजा जा सकता है। अमरीका में स्थायी समितियों का गठन विषयवार है और विधेयक सम्बन्धित समिति के पास ही भेजा जाता है।

(६) इंगलण्ड में विशिष्ट समितियों का प्रयोग अमरीका की तुलना में अधिक होता है, क्योंकि वहाँ पर स्थायी समितियों का निर्माण विषयवार नहीं होता और विशिष्ट मामलों पर विचार हेतु विशिष्ट समितियों का गठन करना होता है। लेकिन अमरीका में स्थायी समितियों का निर्माण ही विषयवार होता है और इन समितियों के सदस्य अपने अपने विषयों के विशेषज्ञ बन जाते हैं, अतः विशिष्ट समितियों के अधिक प्रयोग की आवश्यकता नहीं होती।

(७) इन दोनों देशों में विधेयकों को सदन के पास भेजने के समय में भी अन्तर है। ग्रेट ब्रिटेन में विधेयक समितियों को द्वितीय वाचन के पश्चात भेजे जाते हैं जबकि सदन विधेयक के मूल सिद्धान्तों को स्वीकार कर चुकता है। इसलिए समितियाँ उनमें आधारभूत परिवर्तन नहीं कर सकती हैं परन्तु अमरीका में विधेयक समितियों को प्रथम वाचन के पश्चात ही भेज दिये जाते हैं, इसलिए वहाँ समितियाँ उनमें आधारभूत परिवर्तन कर सकती हैं।

(८) ग्रेट ब्रिटेन में सरकारी विधेयक और निजी सदस्यों के विधेयक में अन्तर किया जाता है और निजी सदस्यों के विधेयकों पर विचार करने के लिए गैर सरकारी विधेयक समितियाँ होती हैं। लेकिन अमरीका में कार्यपालिका द्वारा तो कोई भी विधेयक प्रस्तावित नहीं किया जाता। इस प्रकार अमरीका में सरकारी निजी विधेयक और निजी सदस्यों के विधेयक का अन्तर नहीं है और स्वाभाविक रूप में सदस्य विधेयक समितियों जैसी कोई व्यवस्था नहीं है।

(९) अमरीका में संचालन समिति है जिसके द्वारा बहुमत दल की ओर से सदन में कानून निर्माण कार्य का संचालन किया जाता है, लेकिन ब्रिटेन में यह कार्य मन्त्रिमण्डल द्वारा किया जाता है और संचालन समिति की कोई व्यवस्था नहीं है।

इसी प्रकार अमरीकी काग्रेस की प्रतिनिधि सभा म 'नियम समिति' होती है, लेकिन ब्रिटन क लोकसदन या लाड सभा में इस प्रकार की कोई समिति नही है।

अमरीका मे विधि निर्माण प्रणाली
(Law making Procedure)

सयुक्त राज्य अमरीका म विधि निर्मा‍ण की प्रक्रिया ब्रिटेन की विधि निर्माण प्रक्रिया से भिन्न है और यह भेद ससदात्मक तथा अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था के भेद मे निहित है। ब्रिटेन म अधिकाश महत्त्वपूण विधेयक मन्त्रिमण्डल के सदस्या द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, वे ही उनके प्रारूप तयार करते और उन्हे पारित करवाते हैं। लेकिन अमरीका मे मन्त्रिमण्डल के सदस्य काग्रेस के सदस्य नही होते और विधेयक राष्ट्रपति या मन्त्रिमण्डल के सदस्या द्वारा नही, वरन राष्ट्रपति द्वारा स्वय ही प्रस्तावित किये जाते है। क्योकि सभी विधेयक काग्रेस सदस्यो द्वारा ही प्रस्तावित किये जाते हैं, इसलिए अमरीका मे सरकारी विधयको और निजी सदस्या के विधेयको (Private Member's Bill) का भी कोई भेद नही है। वस्तुत अमरीका मे सभी निजी सदस्यो के विधेयक ही होते हैं। इतना होते हुए भी दोना देशो की विधि निर्माण प्रक्रिया लगभग एक सी ही है जसे विधेयक के तीन वाचन, समिति प्रतिवेदन और कायपालिका प्रधान के हस्ताक्षर दानो ही दशो म विधि निर्माण प्रक्रिया के चरण हैं।

अमरीका म विधि निमाण प्रक्रिया के विभिन्न चरणो का उल्लेख इस प्रकार है

(१) विधेयक प्रस्तावित करना (Introduction of the Bill)—वित्त विधेयक के अतिरिक्त अन्य सभी विधयक काग्रेस के किसी भी सदन, प्रतिनिधि सभा या सीनेट म प्रस्तावित किये जा सकते हैं। वित्त विधयक प्रतिनिधि सभा म ही प्रस्तावित किये जा सकते है सीनेट मे नही, यद्यपि सीनट को इनम सशोधन करने का अधिकार प्राप्त होता है। विधयक, प्रस्तावित करने की पद्धति सरलता की प्रतिमूर्ति है। जो सदस्य विधेयक प्रस्तावित करना चाहता है, वह उस विधेयक की एक प्रति पर अपने हस्ताक्षर कर उसे सदन के सचिव की डेस्क पर रखे बॉक्स म डाल देता है। केवल इतने से ही विधेयक का प्रस्तुतीकरण हो जाता है। इसके पश्चात विधेयक को क्रम पर रख दिया जाता है। विधयक का नम्बर आने पर इसे छपवा दिया जाता है तथा उसकी प्रति प्रत्यक सदस्य को दे दी जाती है।

सामान्यतया काग्रेस के प्रत्यक अधिवेशन म १० हजार से लेकर १५ हजार तक विधेयक प्रस्तावित किये जाते हैं। इसका कारण यह है कि काग्रेस के सदस्य कितने ही विधेयक प्रस्तुत कर सकते है उनके इस अधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नही है। सदस्य अपने मित्रा और समथकों को प्रसन्न करने के लिए भी अनेक विधयक प्रस्तुत करते हैं। एसा करने स उनके नाम समाचारपत्रो मे प्रकाशित होते हैं और अपने निर्वाचको म वे सक्रिय समझे जाते हैं।

(२) समिति स्तर (Committee Stage)—विधेयक को क्रम पर रख दिया जाता है और तत्पश्चात उसे सदन के लिपिक द्वारा सम्बन्धित समिति के पास भेज दिया जाता है। यदि यह विवाद उत्पन्न हो जाय कि विधेयक को किस समिति के पास भेजा जाय तो सदन का अध्यक्ष इसका निर्णय करता है और उसका निर्णय अंतिम होता है। समिति विधेयक के मूल सिद्धान्तो पर विचार करती है और यदि उसकी राय मे विधेयक की कोई उपयोगिता नही है, तो वह विधेयक पर आगे बिना विचार किये विधेयक को अपने पास पडे रहने देती है और इससे विधेयक समाप्त हो जाता है। परन्तु इस सम्बन्ध मे यह व्यवस्था की गई है कि प्रतिनिधि सभा अपने कुल बहुमत से ३३ दिन के अन्दर किसी विधेयक को समिति मे स्वयं विचार करने के लिए वापस माँग सकता है। इसी प्रकार यदि सीनेट ने प्रस्ताव द्वारा समिति को विधेयक पर विचार करने से मुक्त कर दिया है, तो उस विधेयक पर सीनेट सीधे रूप से विचार कर सकती है। परन्तु व्यवहार मे प्रतिनिधि सभा और सीनेट दोनो मे ही ऐसा कम होता है और तीन चौथाई से भी अधिक विधेयकों का समिति स्तर पर ही अन्त हो जाता है।

यदि समिति विधेयक की उपयोगिता समझे, तो उस पर आगे कार्यवाही करती है। वह विभागो से तथ्य तथा आँकडे प्राप्त कर सकती है और सरकारी अधिकारियो की राय ले सकती है। यदि विधेयक सर्वसाधारण से सम्बन्धित है, तो समिति विभिन्न व्यक्तियो और संस्थाओ को विधेयक पर अपने विचार प्रस्तुत करने का अवसर देती है। यदि समिति आवश्यक समझे, तो उसके द्वारा विधेयक पर विचार हेतु उप-समिति का निर्माण भी किया जा सकता है। इतनी कार्यवाही करने के पश्चात वह सदन को उस विधेयक पर अपनी सम्मति देती है। समिति विधेयक मे संशोधन कर सकती है, सदस्य द्वारा प्रस्तावित विधेयक को समाप्त कर नया विधेयक प्रस्तुत कर सकती है अथवा वह सदन को दिये गये अपने प्रतिवेदन मे सिफारिश कर सकती है कि विधेयक को अस्वीकृत कर दिया जाय।

(३) कलेण्डर स्तर (Calendar Stage)—जब समिति विधेयक पर अपनी रिपोर्ट दे देती है तब वह विधेयक निम्न विवरण पत्रिकाओ मे से किसी एक मे सम्मिलित कर लिया जाता है

(i) संघीय विवरण पत्रिका (Union Calendar)—इसमे राजस्व तथा नियोजन, सम्पत्ति तथा वित्त सम्बन्धी सार्वजनिक विधेयक रखे जाते हैं।

(ii) भवन विवरण पत्रिका (House Calendar)—समस्त राज्य के हितो से सम्बन्धित अन्य विधेयक, जिनका सम्बन्ध वित्त से नहीं होता, इसमे रखे जाते हैं।

(iii) सम्पूर्ण सदन की समिति की सूची—इसमे स्थानीय विषयो तथा निजी निगमो आदि से सम्बन्धित विधेयक सम्मिलित किये जाते हैं।

(iv) राष्ट्रीय महत्त्व के विषयों की सूची—चौथी सूची उन विषयों की होती है जो राष्ट्रीय महत्त्व के होते हैं और जिन्हें सर्वसम्मति से पारित किया जाना होता है।

(v) पाँचवीं सूची में उन विधेयकों को सम्मिलित किया जाता है जिन्हें सदन द्वारा विशेष आदेशों के साथ समितियों को लौटाता है, जिससे उन पर समितियों में फिर विचार हो सके।

(४) द्वितीय वाचन (Second Reading)—कैलेण्डर अवस्था के पश्चात् विधेयक का द्वितीय वाचन प्रारम्भ होता है। कलेण्डर अवस्था से इतनी बड़ी संख्या में विधेयक सदन में आते हैं कि इन सभी विधेयकों पर पहले से निश्चित किये गये क्रम में विचार करना सम्भव नहीं होता। अतः अनेक उपायों के आधार पर आवश्यक समझे जाने वाले विधेयकों को प्राथमिकता प्रदान कर दी जाती है। किन विधेयकों को प्राथमिकता प्रदान की जाय, इस सम्बन्ध में सदन की 'नियम समिति' (Rules Committee) का विचार बहुत अधिक महत्त्व रखता है। अति आवश्यक समझे जाने वाले विधेयकों को द्वितीय वाचन और तृतीय वाचन की विभिन्न औपचारिकताएँ पूरी किये बिना भी सदन द्वारा पारित किया जा सकता है लेकिन ऐसा केवल कुछ ही विधेयकों के सम्बन्ध में और सदन की सर्वसम्मति से ही किया जाता है।

अन्य विधेयकों के लिए विधेयक का द्वितीय वाचन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होता है। सभी विधेयकों पर द्वितीय वाचन के सम्बन्ध में ऐसी व्यवस्था है कि सदन 'सम्पूर्ण सदन की समिति' (Committee of the Whole House) के रूप में परिवर्तित हो जाता है और अध्यक्ष उठ जाता है। विधेयक पर बिना किसी औपचारिकताओं के पूर्ण विचार किया किया जा सके, इस दृष्टि से ऐसा किया जाता है। सम्पूर्ण सदन की समिति विधेयक के सिद्धान्तों और स्वरूप पर पूर्ण विचार करती है। विधेयक पर प्रति धारा, उपधारा, प्रति शब्द और प्रति वाक्य विचार किया जाता है और उसमें आवश्यक समझे जाने वाले संशोधन किये जाते हैं। इस स्थिति के अन्तर्गत प्रतिनिधि सभा में समिति का अध्यक्ष प्रत्येक सदस्य को ५ मिनट बोलने की स्वीकृति देता है लेकिन सीनेट में कोई सदस्य कितने ही समय तक बोल सकता है। विचार-विमर्श के बाद अध्यक्ष सदन का मत लेता है कि क्या उसे तृतीय वाचन के लिए रखा जाय? यदि सदन इसके पक्ष में निर्णय करता है तो विधेयक तृतीय वाचन के लिए सुरक्षित कर लिया जाता है अन्यथा विधेयक यहीं पर समाप्त हो जाता है।

(५) तृतीय वाचन (Third Reading)—तृतीय वाचन बहुत कुछ सीमा तक एक औपचारिकता ही है। इसमें विधेयक के शीर्षक को पढ़कर सुनाया जाता है, यदि कोई सदस्य इस पर आपत्ति करते हुए माँग करे कि सम्पूर्ण विधेयक को पढ़कर सुनाया जाय, तो अध्यक्ष सदन की राय लेता है। यदि राय सम्बन्धित सदस्य

के विचार के पक्ष मे होती हैं तो विधेयक को पूरा पढ़ा जाता है, अन्यथा अन्यम विधेयक पर सदन का अन्तिम निर्णय प्राप्त करता है। मतदान के लिए इन तरीको मे से किसी एक को अपनाया जा सकता है—(१) मौखिक मतदान, (२) उठकर मत देना, और (३) हां या ना द्वारा। तृतीय वाचन मे जब विधेयक सदन द्वारा स्वीकृत हो जाता है, तो उस पर अध्यक्ष के हस्ताक्षर होते हैं और वह सदन से पारित समझा जाता है।

विधेयक दूसरे सदन मे—एक सदन द्वारा विधेयक स्वीकृत हो जाने पर उसे दूसरे सदन मे भेज दिया जाता है। दूसरे सदन मे भी विधेयक को उन्ही स्थितियों से होकर गुजरना होता है, जिन स्थितियो से वह एक सदन मे गुजर चुका है यथा प्रथम वाचन समिति अवस्था, द्वितीय वाचन तृतीय वाचन आदि। यदि दूसरा सदन भी विधेयक को स्वीकृति प्रदान कर देता है, तो विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। परन्तु दूसरा सदन विधेयक मे संशोधन चाहे, तो विधेयक को संशोधन के साथ प्रस्तावित सदन म भेज दिया जाता है। यदि संशोधन पर दोनो सदनो म सहमति नही होती है, तो विधेयक को 'सम्मेलन समिति' (Conference Committee) के पास भेज दिया जाता है जिसमे बराबर बराबर की सख्या मे दोनो सदनो के सदस्य होते हैं। सम्मेलन समिति दोनो सदनो के मतभेदो को दूर करने का प्रयत्न करती है और यदि वह इसमे सफल रहे, तो सम्मेलन समिति द्वारा स्वीकृत रूप मे विधेयक दोनो सदनो द्वारा पारित कर लिया जाता है। यदि समिति किसी सामान्य निर्णय पर नही पहुच पाती, तो विधेयक समाप्त हो जाता है।

राष्ट्रपति की स्वीकृति—विधेयक दोनो सदनो से पारित होने के पश्चात् उसे राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए भेज दिया जाता है। राष्ट्रपति को इस विधेयक पर विचार के लिए १० दिन का समय प्राप्त होता है और उसके सामने तीन विकल्प होते हैं। प्रथम विकल्प यह है कि वह १० दिन के भीतर विधेयक पर अपनी स्वीकृति दे दे। यदि राष्ट्रपति १० दिन के भीतर अपनी स्वीकृति नही देता है और १० दिन के बाद भी काग्रेस का अधिवेशन चल रहा है तो यह समझा जाता है कि राष्ट्रपति ने विधेयक को स्वीकार कर लिया है और वह कानून का रूप ग्रहण कर लेता है। दूसरा विकल्प यह है कि राष्ट्रपति विधेयक को अस्वीकार कर दे और ऐसा करने का कारण बताते हुए विधेयक काग्रेस के उस सदन को भेज दे जिसमें प्रस्तावित किया गया था। राष्ट्रपति की अस्वीकृति के होते हुए भी यदि काग्रेस उस पर पुनः विचार करना आवश्यक समझती है, तो वह उस पर पुनः विचार करती है। यदि वह विधेयक प्रत्येक सदन द्वारा अपने २/३ बहुमत से पुनः पारित कर दिया जाता है तो राष्ट्रपति को उसे अनिवार्यतः स्वीकार करना होता है। इस प्रकार राष्ट्रपति को विलम्बकारी निषेधाधिकार (Suspensive Veto) ही प्राप्त

है, पूर्ण निषेधाधिकार नही, लेकिन व्यवहार मे यह निषेधाधिकार पर्याप्त प्रभावशाली होता है।

राष्ट्रपति के सामने तीसरा विकल्प जेबी निषेधाधिकार के प्रयोग का होता है। राष्ट्रपति का यह अधिकार परम्परागत ही है, वैधानिक नही। कांग्रेस अपने अधिवेशन के अंतिम दिनो मे जिन विधेयको को पारित कर राष्ट्रपति के पास हस्ताक्षर के लिए भेजती है, राष्ट्रपति उन विधेयको को बिना स्वीकार या अस्वीकार किये १० दिन तक अपने पास पड़ा रहने देता है। जब १० दिन मे कांग्रेस का अधिवेशन समाप्त हो जाता है, तो राष्ट्रपति द्वारा बिना अस्वीकार किये ही विधेयक अस्वीकृत हो जाता है। राष्ट्रपति के इस अधिकार का इस दृष्टि से बड़ा महत्त्व है कि कांग्रेस द्वारा अपने अधिवेशन के अंतिम दिनो मे बहुत बड़ी संख्या मे विधेयक पारित किये जाते हैं।

वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे प्रक्रिया

सन १९२१ के पूर्व अमरीका मे सम्पूर्ण राष्ट्रीय आय-व्यय पर एक साथ विचार नही किया जाता था, वरन इस सम्बन्ध मे दोनो सदनो की अनेक समितिया थी, जो अलग अलग विषयो के सम्बन्ध मे खर्च के अनुमान लगाती थी। लेकिन इस व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न विभागो द्वारा अपने लिए अधिक से अधिक धनराशि प्राप्त करने की नीति अपना ली गयी। अतः १९२१ मे कांग्रेस द्वारा **'बजट और एकाउण्टिग कानून'** (Budget and Accounting Law) पारित करते हुए अन्य देशो के समान ही राष्ट्रीय वार्षिक बजट पद्धति को अपनाया गया और इस हेतु **'बजट ब्यूरो'** (Bureau of the Budget) की स्थापना की गयी।

वर्तमान समय मे बजट ब्यूरो के निर्देशक द्वारा राष्ट्रपति के निर्देशन मे इगलैण्ड की पद्धति पर ही बजट तयार किया जाता है तथा ब्यूरो का निर्देशक राष्ट्रपति की जिम्मेदारी पर उसकी ओर से प्रतिनिधि सभा मे बजट प्रस्तावित करता है। बजट या अन्य कोई वित्त विधेयक प्रतिनिधि सभा मे ही प्रस्तावित किया जा सकता है, सीनेट मे नही। वहाँ इस पर सदन की दो समितियो 'उपाय और साधन समिति (Committee of Ways and Means) तथा विनियोग समिति' (Appropriation Committee) विचार करती है। ये समितियाँ अपना प्रतिवेदन सदन को देती हैं, जो कि वादविवाद के पश्चात् वित्तीय विधेयक तथा विनियोग विधेयक पारित करती है। उसके पश्चात् ये दोनो विधेयक सीनेट के पास भेजे जाते हैं और सीनेट के द्वारा भी इनमे सशोधन किये जा सकते हैं। ब्रिटेन मे बजट प्रस्तावित करते हुए वित्तमन्त्री ससद के दोनो सदनो के सम्मुख आय व्यय के सम्बन्ध मे शासन का दृष्टिकोण प्रतिपादित करता है और शासन के त्यागपत्र की धमकी देकर लोकसदन से बजट पारित करवा लेता है। लेकिन अमरीका मे कार्यपालिका का कोई सदस्य या बजट ब्यूरो का निर्देशक कांग्रेस के दोनो मे से किसी भी सदन मे नही बैठता है। यद्यपि राष्ट्रपति के द्वारा कांग्रेस के सदस्यो और विशेषतया अपने दल के

सदस्यों के साथ अनौपचारिक मुलाकातों में प्रशासन की आवश्यकताओं के बारे में जानकारी दी जाती है, लेकिन फिर भी अनेक बार प्रतिनिधि सभा और सीनेट बजट प्रस्तावों में अनेक संशोधन कर देते हैं। कांग्रेस को न केवल खर्च में कटौती, वरन् खर्च की नई मदें दर्ज करने या किन्हीं मदों पर किये जाने वाले खर्च को बढ़ाने का भी अधिकार प्राप्त है। कांग्रेस जिन संशोधनों सहित बजट पारित करना चाहे, करती है और राष्ट्रपति के हस्ताक्षर से यह कानून का रूप ग्रहण करता है। वित्तीय विधेयकों पर भी दोनों सदनों में मतभेद उत्पन्न होने की स्थिति में वही व्यवस्था है जो साधारण विधेयकों के सम्बन्ध में है।

अमरीका तथा ब्रिटेन की विधि निर्माण प्रक्रिया की तुलना

यद्यपि अमरीकी कांग्रेस में अपनायी गयी विधि निर्माण की प्रक्रिया पर ब्रिटिश विधायी प्रक्रिया की स्पष्ट छाप है लेकिन फिर भी यह ब्रिटिश विधायी प्रक्रिया से पर्याप्त भिन्न है। इनमें प्रमुखतया निम्न भेद हैं

(१) प्रथम और सर्वप्रमुख भेद, ब्रिटेन और अमरीका की शासन व्यवस्था के मूल भेद, संसदात्मक व्यवस्था और अध्यक्षात्मक व्यवस्था, पर आधारित है। ब्रिटेन की संसदात्मक व्यवस्था के अन्तर्गत विधि निर्माण के क्षेत्र में मंत्रिमण्डल द्वारा संसद का नेतृत्व किया जाता है, लेकिन अमरीका की अध्यक्षात्मक व्यवस्था में कार्यपालिका कानून निर्माण सम्बन्धी कार्यों में भाग नहीं लेती और इस क्षेत्र में कांग्रेस स्वयं ही अपना नेतृत्व करती है।

(२) साधारण और वित्तीय, सभी विधेयकों के सम्बन्ध में विधि निर्माण प्रक्रिया का द्वितीय महत्त्वपूर्ण भेद दोनों सदनों के पारस्परिक सम्बन्धों के अन्तर पर आधारित है। ब्रिटेन में लॉर्ड सभा संसद का अधीनस्थ सदन है, अमरीका में सीनेट विधि निर्माण में प्रतिनिधि सभा का समानपदीय सदन है। इंगलैण्ड में चाहे साधारण विधेयक हो चाहे वित्तीय विधेयक, विधेयक का भाग्य अन्तिम रूप में लोकसदन की इच्छा और विचार पर निर्भर करता है। लेकिन अमरीका में दोनों ही प्रकार के विधेयकों के सम्बन्ध में प्रतिनिधि सभा और सीनेट को समान शक्तियाँ प्राप्त हैं। इसी कारण अमरीका में 'सम्मेलन समिति' की जो व्यवस्था की गयी है वैसी कोई व्यवस्था न तो ब्रिटेन में है और न ही उसकी कोई आवश्यकता है।

(३) इंगलैण्ड में विधि निर्माण में पहल मंत्रियों द्वारा की जाती है। अमरीका में ऐसा नहीं है, वहाँ विभिन्न समितियों के अध्यक्ष इस सम्बन्ध में पहल करते हैं। इंग्लैण्ड में समितियों के अध्यक्षों का महत्त्व मंत्रियों के आगे समाप्त हो जाता है।

(४) ब्रिटेन में सरकारी और गैर-सरकारी, सार्वजनिक तथा असार्वजनिक विधेयकों में भेद किया जाता है और उन्हें पारित किए जाने की प्रक्रिया अलग अलग है किन्तु अमरीका में सरकारी और गैर-सरकारी जैसा कोई भेद नहीं है तथा सार्वजनिक और असार्वजनिक विधेयक एक ही विधि से पारित किए जाते हैं।

(५) इगलण्ड मे विधेयक द्वितीय वाचन के बाद समिति को भेजे जाते हैं जबकि अमरीका म द्वितीय वाचन के पूव ही विधेयक समिति के सुपुद कर दिये जाते हैं। इगलण्ड मे विधेयक के मूल सिद्धान्तो पर विचार एव तत्सम्ब धी निणय ससद करती है जबकि अमरीका मे विधेयक के मौलिक स्वरूप व उसकी उपयोगिता के सम्ब ध म विचार और निणय समिति मे ही होता है और काग्रेस को उस पर विचार करन का अवसर उसके बाद मिलता है।

(६) इगलण्ड मे समितिया किसी भी विधेयक का अन्त नही कर सकती, उन्हे अपने प्रतिवेदन सहित विधेयक वापस लौटाना ही पडता है, जबकि अमरीकी समितियाँ विधेयक पर कोई निणय न करके उसका अ त कर सकती हैं। गलोवे के मतानुसार 'व्यवस्थापन सम्ब धी वास्तविक शक्ति प्रतिनिधि या सीनेट में नहीं है, वह तो उनकी स्थायी समितिया मे निहित है।

(७) अमरीका मे सभी विधेयको पर द्वितीय वाचन के अ तगत सम्पूण सदन की समिति के द्वारा विचार किया जाता है, लेकिन इगलण्ड मे सम्पूण सदन की समिति केवल वित्तीय विषयो पर ही विचार करती है।"

(८) इगलण्ड म ससद सदस्य व्यक्तिगत रूप से अपना पूरा भाषण देते हैं, परन्तु अमरीकी काग्रेस, विशेषतया प्रतिनिधि सभा, क सदस्य छोटा सा भाषण देकर अपने विस्तृत भाषण के प्रकाशन की अनुमति ले लते हैं। कभी कभी तो ऐसे विस्तृत भाषण प्रकाशित होते हैं जिनके सम्बन्ध मे एक शब्द भी नही कहा गया था।

वित्तीय विधेयको के पारित होने की प्रक्रिया मे अन्तर

(१) अमरीका मे बजट, बजट ब्यूरो के निर्देशक द्वारा तयार किया जाता है तथा वह उस राष्ट्रपति की ओर से काग्रेस के समक्ष प्रस्तुत करता है। इसके विपरीत इगलैण्ड मे वित्तमन्त्री बजट तैयार करता और स्वय उसे लोकसदन म प्रस्तावित करता है।

(२) बजट प्रस्तावित होने के पश्चात् प्रतिनिधि सभा की साधन तथा विनियोग समितिया क विचार के लिए भेजा जाता है जबकि ब्रिटेन म लोकसदन सम्पूण सदन की समिति के रूप मे बजट पर विचार करता है।

(३) अमरीका मे काग्रेस के सदस्यो को बजट म कटौती, खच म वृद्धि तथा खच की नवीन मदो की व्यवस्था का भी अधिकार प्राप्त है लेकिन इगलण्ड मे ससद को खच मे कवल कटौती करने का ही अधिकार प्राप्त है, ससद के द्वारा खर्च मे वृद्धि नही की जा सकती है।

काग्रेस के सगठन व कायवाही का मूल्याकन
(General appraisal of the Organisation and Functioning of Congress)

अमरीकी सविधान क प्रथम अनुच्छेद म कहा गया है कि 'अमरीकी सघ की विधायी शक्ति एक काग्रेस मे निहित होगी। सविधान क द्वारा काग्रेस को न केवल

(२) कांग्रेस राष्ट्रीय संस्था नहीं—कांग्रेस की आलोचना का सर्वप्रमुख आधार यह है कि कांग्रेस राष्ट्रीय हितों का प्रतिनिधित्व नहीं करती। टूर्टेलॉट के शब्दों में, 'कांग्रेस किन्हीं भी अर्थों में राष्ट्रीय प्रतिनिध्यात्मक संस्था नहीं है यह तो क्षेत्रीय और राज्य प्रतिनिधि मण्डलों का योग है।'[1] राष्ट्रपति सम्पूर्ण राष्ट्र का प्रतिनिधि समझा जाता है और वह सभी वर्गों व हितों की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहता है। लेकिन कांग्रेस सदस्यों की कोई राष्ट्रीय विचारधारा नहीं होती, वे तो अपने आपको क्षेत्र विशेष का प्रतिनिधि ही मानते हैं और अपने निर्वाचकों को प्रसन्न रखना उनका सबसे प्रमुख उद्देश्य होता है। यह क्षेत्रीय प्रवृत्ति विशेषतया प्रतिनिधि सभा के सदस्यों में देखी जाती है और इसका कारण प्रतिनिधि सभा का २ वर्ष का कार्य-काल और उनके चुनाव के सम्बन्ध में क्षेत्रीय नियम (locality rule) की परम्परा है, जिसके अनुसार एक व्यक्ति उस क्षेत्र विशेष से ही प्रतिनिधि सभा का चुनाव लड़ सकता है, जिसमें वह मतदाता है। प्रो० आग ने इस स्थिति का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि "कांग्रेस अपने मतदाताओं के स्थानीय, व्यक्तिगत व विशिष्ट हितों के बोझ से इतनी दबी रहती है कि राष्ट्रीय नीति के निर्माण की ओर उसका ध्यान ही नहीं जाता। ऐसा अनुमान है कि कांग्रेस के एक सदस्य का ८० प्रतिशत समय ऐसे कामों को करने में गुजर जाता है कि जिनका कानून निर्माण से कोई सम्बन्ध नहीं होता। कांग्रेस के सदस्य हमेशा ही अपने मतदाताओं के किसी न किसी काम के लिए इधर-उधर दौड़ते रहते हैं।"

(३) लॉबिंग (Lobbying) और कानून निर्माण पर अन्य दूषित प्रभाव—कांग्रेस में संगठित नेतृत्व का अभाव होने के कारण कांग्रेस के सदस्य कानून निर्माण के सम्बन्ध में सदैव ही लॉबिंग और अन्य दूषित प्रवृत्तियों से प्रभावित रहते हैं। विभिन्न निहित स्वार्थ कांग्रेस सदस्यों पर प्रभाव डालकर अपने हित में कानून निर्माण का जो प्रयत्न करते हैं वही लॉबिंग है। ये निहित स्वार्थ-पत्र व्यवहार, तार, टैली-फोन के द्वारा बातचीत, समाचारपत्रों में लेख छपवाकर, सीधी बातचीत और निजी सम्बन्ध स्थापित करके तथा कभी कभी रिश्वत देकर भी कांग्रेस सदस्यों को प्रभावित करते हैं। संयुक्त राज्य के प्रायः सभी प्रमुख व्यवसायों और हितों के एजेण्ट वाशिंगटन में कांग्रेस सभा भवन व सदस्यों के विश्राम गृह में चक्कर काटते रहते हैं। इनका प्रमुख उद्देश्य विशेष प्रकार के कानून पास करवाना या विशेष प्रकार के विधेयकों को कानून का रूप ग्रहण करने से रोकना होता है। अमरीकन रेलवे संघ, अमरीकन मजदूर संघ, राष्ट्रीय पटोल व्यापारी संघ, फार्म ब्लाक व व्यापार मण्डल आदि प्रमुख हितों के प्रतिनिधि तो सदैव ही वाशिंगटन में रहते हैं। इनका उद्देश्य वर्गीय स्वार्थों व हितों की रक्षा करना होता है। इन गुटों के प्रभाव के आधीन कांग्रेस के सदस्य विशिष्ट वर्गों व स्वार्थों के हाथों में खिलौने बन जाते हैं और अपनी

[1] Congress is not in any real sense a national representative body at all it is the sum of regional i e state delegations
—A B Tourtellot, *An Anatomy of American Politics* p 70

स्वतंत्रता को बैठते है। अमरीका मे कानून-निर्माण पर लाबिंग का प्रभाव इतना अधिक है कि लॉस्की ने लाबिंग को 'कांग्रेस के पीछे एक और कांग्रेस'[1] की संज्ञा दी है। ब्राग और रे, चार्ल्स वियड तथा अन्य लेखको ने भी लाबिंग की कटु आलोचना की है। अमरीका मे १९४६ के 'विधायी पुनर्गठन अधिनियम' (Legislative Re organisation Act) के द्वारा लॉबिंग की कुछ बुराइयो को दूर करने का प्रयत्न किया गया, किन्तु इसमे सफलता नही मिली है। लाबिंग से कभी कभी लाभ भी होता है, परन्तु बहुधा इस कार्य के लिए भ्रष्ट तरीके अपनाये जाते हैं और इससे कांग्रेस की प्रतिष्ठा को तीव्र आघात पहुचा है।

लाबिंग के अतिरिक्त कांग्रेस की कार्यप्रणाली मे 'पार्क बरल (Pork Barrel) और 'लाग रालिंग' (Log rolling) की बुराइयां भी देखी जाती हैं। प्रतिनिधि सभा के सदस्यो को प्रति दो वर्ष बाद चुनाव लड़ना होता है और इस हेतु अपने निर्वाचको को प्रसन्न रखना जरूरी हो जाता है। अतः प्रतिनिधिगण इस बात का प्रयत्न करते हैं कि राष्ट्रीय धन की अधिकाधिक राशि उनके निर्वाचन क्षेत्र मे व्यय के लिए स्वीकार की जाये। ऐसा करते हुए उनके द्वारा राष्ट्रीय हित के स्थान पर क्षेत्रीय हित की दृष्टि से ही विचार किया जाता है और इसी को 'पार्क बरल व्यवस्थापन' कहते हैं।

प्रतिनिधिगणो के द्वारा राष्ट्रीय धन मे से अपने क्षेत्र के लिए अधिकाधिक धनराशि दलीय नेताओ की सहमति और समान उद्देश्य वाले लोगो के समर्थन से ही प्राप्त की जा सकती है। अतः स्वार्थसिद्धि वाले कानूनो के निर्माण और अपने क्षेत्र हेतु अधिकाधिक धनराशि प्राप्त करने के लिए प्रतिनिधि सभा मे अस्थायी गठबन्धन स्थापित हो जाते हैं और स्वार्थ सिद्धि के लिए किया गया यह पारस्परिक सहयोग ही 'लाग रालिंग' (Log Rolling) है। पार्क बरल और लाग रॉलिंग प्रतिनिधि सभा मे बहुत देखी जाती हैं और ये इस दृष्टि से बुरी हैं कि इनमे राष्ट्रीय हितों की नितान्त उपेक्षा की जाती है।

(४) प्रशासन और कांग्रेस म विभाजन—सुशासन का संचालन कांग्रेस और राष्ट्रपति के पारस्परिक सहयोग से ही सम्भव हो सकता है, लेकिन अमरीका मे ऐसा नही है। संविधान निर्माताओ द्वारा राष्ट्रपति और कांग्रेस को अस्तित्व और कार्यकाल की दृष्टि से नितान्त स्वतन्त्र रखा गया है। ये एक दूसरे के प्रति उत्तरदायी नहीं हैं किन्तु इन्हें एक दूसरे की शक्तियों मे भागीदार बना दिया गया है और एक दूसरे पर नियन्त्रण का अधिकार भी दे दिया गया है। प्रशासन के संचालन की जिम्मेदारी तो राष्ट्रपति पर है परन्तु कांग्रेस को प्रशासकीय कार्यों के नियन्त्रण का अधिकार है। ऐसी स्थिति म कांग्रेस अपनी प्रशासकीय शक्तियों के प्रयोग मे सतर्कता नहीं बरत सकती, और राष्ट्रपति तथा कांग्रेस प्रशासन के दोनों के

[1] Lobbying is a kind of Congress behind the Congress
—H J Laski The American Presidency p. 84

उत्तरदायित्व एवं दूसरे के मत्थे मढ सकते हैं। प्रो० आग का कहना है कि 'प्रशासन के साथ सम्पर्क के साधन ठीक न होने के कारण दोनों भागों का सामूहिक व सयुक्त जिम्मेदारी से कार्य कर सकना बहुत कठिन है। काग्रेस और राष्ट्रपति के पारस्परिक सम्बन्धो की भी कड़ी आलोचना की जाती है। कभी तो काग्रेस राष्ट्रपति के कड़े विरोध की प्रवृत्ति अपनाते हुए कानून निर्माण मे राष्ट्रपति की इच्छा के नितान्त विरुद्ध कार्य करती है और कभी वह राष्ट्रपति के हाथो का खिलौना ही बन जाती है।

(५) सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति—सविधान द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को प्रदान की गई 'न्यायिक पुनर्विलोकन' (Judicial Review) की शक्ति के कारण भी काग्रेस की शक्ति और प्रभाव मे कमी हुई है। काग्रेस की कानून निर्माण की शक्तियाँ सीमित हैं और काग्रेस द्वारा जिन कानूनो का निर्माण किया जाता है, उनके सम्बन्ध मे सर्वोच्च न्यायालय निर्णय करता है कि वे सविधान के अनुसार हैं अथवा नही। यदि सर्वोच्च न्यायालय उन्हे सविधान के विरुद्ध समझे, तो वह उन्हे अवैधानिक घोषित कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति के कारण काग्रेस कानून पारित करते हुए उनके भविष्य के सम्बन्ध मे सर्वथा निशक नही होती और इससे उसकी प्रतिष्ठा को आघात पहुँचा है।

इन सबके कारण काग्रेस राष्ट्रीय उद्देश्यों की पूर्ति करने मे असफल रही है। काग्रेस राष्ट्र की विश्वासपात्र सस्था नही रही है उनके विश्वास का केन्द्र बिन्दु तो राष्ट्रपति पद ही है।

काग्रेस की स्थिति मे सुधार हेतु सुझाव—काग्रेस के उपरोक्त दोषो को दूर करने का एकमात्र मार्ग काग्रेस और राष्ट्रपति का सुदृढ नेतृत्व प्रदान करना ही हो सकता है। ऐसा होने पर ही काग्रेस के द्वारा राष्ट्रीय दृष्टिकोण अपनाते हुए कुशलता के साथ कानून निर्माण का कार्य किया जा सकता है। काग्रेस और राष्ट्रपति मे सम्बन्ध स्थापित करने के लिए प्रमुख रूप से तीन सुझाव दिये जाते हैं

प्रथम सुझाव यह है कि राष्ट्रपति की केबीनेट के सदस्यो को काग्रेस की बैठको मे उपस्थित होने, काग्रेस के सदनो मे विधेयक प्रस्तावित करने काग्रेस को सूचना देने तथा अन्य कार्यवाहियो मे भाग लेने का अधिकार प्राप्त हो परन्तु उन्हे काग्रेस मे मत देने का अधिकार न दिया जाये।

दूसरा सुझाव यह है कि केबीनेट और काग्रेस दोनो के प्रमुख सदस्यो की एक सयुक्त समिति बनाई जाय। इस सयुक्त समिति मे विधायी क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण समितियो के अध्यक्ष व प्रशासनिक ऐजेन्सियो के सदस्य भी शामिल किये जा सकते हैं। यह समिति राष्ट्रीय नीति निर्धारित करने व कार्यपालिका और व्यवस्थापिका मे सहयोग स्थापित करने का कार्य करे।

तीसरा सुझाव यह है कि राष्ट्रपति काग्रेस के प्रमुख सदस्यो की एक सलाहकार समिति का निर्माण करे और प्रशासन से सम्बंधित महत्त्वपूर्ण विषयो पर केबीनेट तथा इस सलाहकार समिति से परामर्श ले ।

अमरीकी शासन व्यवस्था का मूल आधार शक्ति विभाजन का सिद्धान्त है और उपरोक्त मे से किसी भी सुझाव को अपनाने का तात्पर्य शक्ति विभाजन के सिद्धान्त का त्याग और अमरीकी शासन व्यवस्था के मूलाधार मे परिवतन है । इसी कारण वतमान परिस्थितियो मे इनमे मे किसी भी सुझाव को अपनाये जाने की सम्भावना नही है ।

प्रश्न

१ सर्वोच्चता की दृष्टि से ब्रिटिश ससद की अमरीकी काग्रेस से तुलना कीजिए । (आगरा, १९७१)

२ "अमरीकी काग्रेस निस्सदेह ब्रिटिश ससद की सन्तान है, फिर भी वह एक ऐसी सन्तान है जो अपनी मा से भिन्न है ।" स्पष्टीकरण और विवेचना कीजिए । (राजस्थान, १९६६)

३ क्या आप इस कथन से सहमत हैं कि अमरीकी प्रतिनिधि सभा ससार के निम्न सदनो म सर्वाधिक शक्तिहीन है ? स्पष्ट कीजिए ।
(आगरा, १९६७, ७०)

४ स्थिति, शक्तियो तथा कार्यों की दृष्टि से ब्रिटिश स्पीकर की अमरीकी स्पीकर से तुलना कीजिए और भेद बतलाइए ।
(जीवाजी, १९६६, ६९, ७१, विक्रम, १९६४)

५ सीनेट की शक्तियो तथा कार्यों का वणन कीजिए । (आगरा, १९६४)

६ "अमरीकी सीनेट विश्व के सभी उच्च सदनो मे सर्वाधिक शक्तिशाली है ।" व्याख्या कीजिए ।
(विक्रम, १९६३, ६४, राजस्थान १९६६, ७१, जीवाजी, १९७२, आगरा, १९७२)

७ सीनेट को सवशक्तिशाली द्वितीय सदन कहा जाता है । क्यो ?
(मेरठ, १९६८, ७२, कानपुर, १९६८, जीवाजी, १९६५, लखनऊ १९७०, ७२)

८ सीनेट का गठन कैसे होता है ? काग्रेस म यह अधिक शक्तिशाली सदन क्यों हो गया है ? (कानपुर, १९७०)

९ सीनेट के सगठन, अधिकार तथा कार्यों का वणन कीजिए ।
(लखनऊ १९६८, जीवाजी, १९७१, कानपुर, १९६७, ७१)

१० क्या अमरीका म सीनेट प्रतिनिधि सभा स अधिक शक्तिशाली बन गई है ?
(विक्रम, १९६५, ६६, ६९)

११ "सीनेट की वही दशा होने की सम्भावना नही है, जो लॉड सभा की हुई है। उसकी शक्तियाँ अत्यन्त विस्तृत हैं।" इस कथन की विवेचना कीजिए। (कानपुर, १६७२)

१२ अमरीकी सीनेट तथा ब्रिटिश लार्ड सभा के अधिकारो का तुलनात्मक अध्ययन कीजिए। (जीवाजी, १९६७, ७०)

१३ अमरीकी विधि निर्माण की तुलना ब्रिटिश विधि निर्माण से कीजिए और भेद बतलाइए। (विक्रम, १९६६, जीवाजी, १९७०)

१४ "अमरीकी सीनेट लॉड सभा से अधिक शक्तिशाली है। इतना ही नही, वह अमरीकी काग्रेस के दोनो सदनो मे भी अधिक शक्तिशाली है।" स्पष्ट कीजिए। (जीवाजी, १९६८)

१५ अमरीकी काग्रेस तथा ब्रिटिश समिति व्यवस्था की तुलनात्मक विवेचना कीजिए। (राजस्थान, १९७२)

6

संघीय न्यायपालिका
(FEDERAL JUDICIARY)

> "संवैधानिक विवादों के अन्तिम निर्णायक के रूप में सर्वोच्च न्यायालय का विकास शासन विज्ञान को अमरीकी लोगों की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण देनों में से एक है।"[1]
>
> —मुनरो

संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायपालिका की विशेष स्थिति

न्यायपालिका का अस्तित्व वर्तमान समय में सभ्य राज्य की प्रथम आवश्यकता समझा जाता है और अमरीकी संवैधानिक व्यवस्था की तो एक प्रमुख विशेषता संघीय न्यायपालिका को प्राप्त महत्त्वपूर्ण स्थिति है। १७७७ में जिस परिसंघ की स्थापना की गयी थी, उसमें संघीय न्यायपालिका के लिए कोई व्यवस्था नहीं थी और राज्यों के न्यायालय ही समस्त न्यायिक विवादों का निर्णय करते थे। लेकिन यह व्यवस्था दोषपूर्ण थी। विभिन्न राज्यों की न्याय व्यवस्था में विभिन्नता थी, इसलिए कभी-कभी परस्पर विरोधी निर्णय होते थे, जिससे अनिश्चितता और अस्थिरता की स्थिति उत्पन्न हो जाती थी। अमरीकी संविधान के निर्माता परिसंघ की इस दुर्बलता को दूर करते हुए एक ऐसी न्यायपालिका की स्थापना करना चाहते थे, जो संविधान की रक्षा करने में समर्थ हो। हैमिल्टन का सुझाव इस सम्बन्ध में एक ऐसे सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना का था, जो संघ की सर्वोच्चता के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए, संघ और राज्यों के अन्य न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध
८ अपीलों की सुनवाई कर [illegible] सम्पूर्ण [illegible] की व्याख्या की [illegible]
[illegible]

९

१०

निहित होगी जिनकी स्थापना व प्रतिष्ठा कांग्रेस द्वारा समय पर की जायगी।"[1] सीनेट के तो व्यवस्थापन काय का प्रारम्भ ही इस धारा को क्रियान्वित करने के लिए प्रस्तावित विधेयक से हुआ।

अमरीका म सघीय न्यायपालिका को दो विशेष कारणो स अत्यधिक महत्व पूण स्थिति प्राप्त है। प्रथमत, अमरीका मे सघात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया है और सघवाद में एक ऐसी सत्ता की आवश्यकता होती है जो केन्द्र और इकाइयो मे उत्पन्न होने वाले विवादो को हल कर सके। इसक अतिरिक्त अमरीकी सवधानिक व्यवस्था शक्ति विभाजन के सिद्धान्त पर आधारित है। इस व्यवस्था के अन्तगत व्यवस्थापिका और कायपालिका एक-दूसरे से पृथक और स्वतन्त्र हैं और इन दोनो के बीच अधिकार क्षेत्र सम्बन्धि विवाद उत्पन्न हो सकते हैं। अत इन विवादो का निबटारा करन के लिए भी सघीय न्यायपालिका जसी एक सत्ता का अस्तित्व नितान्त आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार न्यायपालिका ने सविधान के सरक्षक की स्थिति प्राप्त कर ली है।

सघीय न्यायपालिका का सगठन

सघीय न्यायपालिका के अन्तगत दो प्रकार के न्यायालय हैं—व्यवस्थापक न्यायालय और सवधानिक न्यायालय।

व्यवस्थापक न्यायालय (Legislative Courts)—व्यवस्थापक न्यायालय, वे न्यायालय हैं, जिनकी स्थापना सविधान की तीसरी धारा के अधीन नहीं, वरन् कांग्रेस के द्वारा अपनी विधायिनी शक्ति के अन्तर्गत की गयी है। ये न्यायालय न्यायिक शक्ति का उपभोग नही करते, वरन् इनका काय कांग्रेस द्वारा निर्मित कानूनो के क्रियान्वय मे प्रशासन की सहायता करना है। उदाहरणाथ, कांग्रेस की पहली धारा की आठवी उपधारा कांग्रेस को विविध प्रकार के कर लगाने व उन्हें वसूल करने का अधिकार प्रदान करती है। इस सम्बन्ध मे कांग्रेस द्वारा निर्मित कानून पर जो वाद उत्पन्न हो, उनका निणय करने के लिए कांग्रेस ने नौ न्यायाधीशों के एक न्यायालय की स्थापना की है जिसे 'सयुक्त राज्य का कस्टम न्यायालय' (United States Customs Court) कहा जाता है। इसी प्रकार कुछ अन्य व्यवस्थापक न्यायालय हैं जिनका सम्बन्ध अन्तरराष्ट्रीय व्यापार सावजनिक धन के व्यय और करो की वसूली आदि से होता है।

व्यवस्थापक न्यायालयो और सवधानिक न्यायालयो के न्यायाधीशो मे भी अन्तर है। जहाँ सवधानिक न्यायालय के न्यायाधीशो को महाभियोग द्वारा ही हटाया जा सकता है, व्यवस्थापक न्यायालयो के न्यायाधीशो का प्रशासन द्वारा बिना महा-

[1] 'Judicial power will be vested in one Supreme Court and such other courts as the Congress may from time to time ordain and establish' —*Article III of the Constitution*

भियोग के ही पदच्युत किया जा सकता है। सवैधानिक न्यायालयो के न्यायाधीश सद्व्यवहार-पय न्त काय करते हैं, परन्तु काग्रेस द्वारा स्थापित न्यायालय के याया धीशो का कायकाल निश्चित होता है और निश्चित अवधि की समाप्ति पर उह पदो से हटा दिया जाता है।

सवैधानिक न्यायालय (Constitutional Courts)—सघीय यायपालिका का मूल आशय सविधान की धारा ३ के अ तगत स्थापित सवधानिक न्यायालयो से ही है। सघीय न्यायपालिका का यह ढांचा त्रिस्तरीय है जिसमे सबस नीचे के स्तर पर जिला न्यायालय, उसके ऊपर 'सघीय अपील न्यायालय' (Circuit Courts of Appeals) होते हैं और सर्वोच्च स्तर पर सयुक्त राज्य अमरीका का सर्वोच्च न्यायालय है।

जिला न्यायालय (District Courts)—सयुक्त राज्य की सघीय न्याय पालिका का सबसे निचला न्यायालय जिला न्यायालय है। सयुक्त राज्य अमरीका के समस्त क्षेत्र मे इस प्रकार के न्यायालयो की सख्या ८८ है। अमरीकी सघ के प्रत्येक राज्य मे कम से कम एक जिला न्यायालय अवश्य होता है। साधारणतया प्रत्येक राज्य म एक ही जिला न्यायालय होता है, कि तु क्षेत्र और जनसख्या की दृष्टि से जो विशाल राज्य हैं, उनमे आवश्यकतानुसार अधिक जिला न्यायालय स्थापित कर दिये गये हैं।

एक जिला न्यायालय मे न्यायाधीशों की सख्या उस क्षेत्र मे न्यायिक काय को देखकर निश्चित की जाती है। जिला न्यायालय मे न्यायाधीशो की अधिकतम सख्या १६ हो सकती है और व्यवहार मे यह १ से लेकर १६ तक है। जिन जिला न्यायालयो मे एक स अधिक न्यायाधीश हैं, वहां न्यायालय के विभिन्न भाग हो जाते हैं और ये अलग अलग क्षेत्रो मे एक साथ काय करते हैं।

जिला न्यायालयो को केवल प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र (original juris diction) ही प्राप्त है, अपील सुनने का अधिकार प्राप्त नहीं है। इनमे सघीय कानून से सम्बन्धित दीवानी व फौजदारी, दोनो ही प्रकार के मुकदमे पेश किये जा सकते हैं। कुछ मामलो म तो जिला न्यायालय के निणय की अपील सघीय अपील न्यायालय मे की जा सकती है और कुछ मामलो म इसके निणय की अपील सीधे सर्वोच्च न्यायालय मे ही की जा सकती है।

सघीय अपील न्यायालय (The Circuit Courts of Appeals)—जिला न्यायालयो के ऊपर सघीय अपील न्यायालयो का गठन किया गया है। इन न्याया लयो के द्वारा अलग-अलग क्षेत्रो का दौरा करते हुए अपना काय किया जाता है और इसी कारण इनको दौरा करन वाले न्यायालय भी कहा जाता है। ये जिला न्याया लय और अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय के बीच मे स्थित हैं। इन न्यायालयों की कुल सख्या ११ है, इनम से १ केवल कोलम्बिया जिले के लिए ही काय करता है और शेष १० न्यायालय, उन १० प्रदेशो म काय करते हैं, जिनमे सयुक्त राज्य का

बँटवारा किया गया है। प्रारम्भ मे जिला न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय की ही स्थापना की गयी थी, लेकिन जब सर्वोच्च न्यायालय का काय भार बहुत अधिक बढ गया और इसके परिणामस्वरूप कठिनाइयाँ उत्पन्न होने लगी, तो सर्वोच्च न्यायालय के कायभार को हल्का करने के लिए 'सघीय अपील न्यायालयो' की स्थापना की गयी।

सघीय अपील न्यायालयो को प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त नही है, वरन इन्ह केवल जिला न्यायालयो के निणय के विरुद्ध अपीलें सुनने का अधिकार है। सन् १६२५ मे काग्रेस ने इन्ह कई मामलो मे अपील सुन अन्तिम निणय करने का अधिकार दे दिया है। परन्तु सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार है कि वह ऐसे किसी भी मामले को अपने पास पुनर्विचार के लिए मगवा सकता है, जिसमे कि इस न्यायालय द्वारा निणय किया जा चुका हो। इन न्यायालयो के न्यायाधीश अक्सर दौरे पर जाते हैं और अपने क्षेत्रो मे अलग-अलग स्थानो पर अदालत लगाते हैं।

इन न्यायालयो को अन्तरराज्य व्यापार कमीशन, सघीय सुरक्षा परिषद व सघीय व्यापार परिषद के आदेशो व निणयो का पुनरावलोकन करने और उन्हें रद्द करने का अधिकार प्राप्त है।

इन न्यायालयो क न्यायाधीशो की सख्या साधारणतया ३ से लेकर ६ तक होती है। अपीलीय न्यायालय मे किसी विवाद की सुनवाई कम से कम दो न्याया-धीशो की बेंच द्वारा की जाती है। जिला न्यायालय और सघीय अपील न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति राष्ट्रपति सीनेट की सहमति से करता है।

सर्वोच्च न्यायालय
(Supreme Court)

सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना १७८६ के न्यायिक अधिनियम के अनुसार हुई है। सवप्रथम यह न्यूयार्क नगर की वाल स्ट्रीट मे स्थापित किया गया, बाद मे यह फिलाडेल्फिया मे चला गया और वतमान समय मे यह वाशिंगटन मे स्थित है।

रचना—सवप्रथम जब सर्वोच्च न्यायालय का गठन हुआ, तो इसमे एक मुख्य न्यायाधीश तथा ५ अन्य न्यायाधीश थे। काग्रेस के द्वारा समय-समय पर इस सख्या मे परिवतन किया जाता रहा। १८०१ मे इसकी सख्या ५ कर दी गयी। इसके बाद १८०७ मे यह सख्या ७, १८३७ म ६ और १८६३ मे १० कर दी गयी। १८६६ मे इसके न्यायाधीशो की सख्या पुन ७ कर दी गयी। १८६६ मे सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की सख्या ६ निर्धारित की गयी और उस समय से लेकर अब तक यह सख्या ६ ही है। वतमान समय मे सर्वोच्च न्यायालय मे एक मुख्य न्यायाधीश तथा ८ अन्य न्यायाधीश हैं।

नियुक्ति—न्यायाधीशो की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा सीनेट की सहमति से की जाती है। सविधान म सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश पद के लिए कोई योग्यताएँ

निर्धारित नहीं की गयी हैं, इसलिए राष्ट्रपति किसी भी ऐसे व्यक्ति को इस महान पद पर नियुक्त कर सकता है, जिसके नाम पर सीनेट की स्वीकृति प्राप्त हो सके। सामान्यतया इस पद के लिए राष्ट्रपति द्वारा प्रस्तावित नाम को सीनेट स्वीकार कर लेती है, परन्तु कभी कभी सीनेट किसी विशेष व्यक्ति की इस पद पर नियुक्ति को अस्वीकार भी कर देती है। उदाहरणस्वरूप, ६ अप्रैल, १६७० को राष्ट्रपति निक्सन ने सर्वोच्च न्यायालय मे न्यायाधीश पद के लिए हेरल्ड कासवेल का नाम प्रस्तावित किया था किन्तु सीनेट ने इसे स्वीकृति देने से इन्कार कर दिया।

वेतन तथा पदावधि—सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो का वेतन कांग्रेस द्वारा निर्धारित किया जाता है और न्यायाधीश की पदावधि मे इस वेतन मे वृद्धि तो की जा सकती है, लेकिन कमी नहीं। वर्तमान समय मे मुख्य न्यायाधीश को ४० हजार डालर और अन्य न्यायाधीशो को ३५ हजार डालर वार्षिक वेतन प्राप्त होता है। यह वेतन आय कर से मुक्त नहीं है।

न्यायाधीशो की पदावधि आजीवन है और वे सदाचार पर्यन्त (during good behaviour) अपने पद पर बने रहते है। न्यायाधीशो द्वारा इसके पूर्व स्वेच्छा से पद त्याग किया जा सकता है। इस सम्बन्ध मे यह व्यवस्था की गई है कि यदि किसी व्यक्ति ने १० वर्ष तक सर्वोच्च न्यायालय की सेवा की है और उसकी आयु ७० वर्ष हो चुकी है अथवा यदि वह १५ वर्ष तक सर्वोच्च न्यायालय की सेवा कर चुका है और उसकी आयु ६५ वर्ष हो चुकी है, तो स्वेच्छा से अवकाश ग्रहण करने के बाद भी उसे जीवन पर्यन्त अपने पद का पूरा वेतन प्राप्त होता रहेगा। यह स्पष्ट है कि ७० वर्ष की आयु के बाद भी अपने पद से अवकाश ग्रहण करना न्यायाधीश की इच्छा पर निर्भर है।

महाभियोग (Impeachment)—सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को केवल महाभियोग के आधार पर ही पदच्युत किया जा सकता है। महाभियोग का प्रस्ताव प्रतिनिधि सभा मे प्रस्तावित किया जाता है और प्रतिनिधि सभा द्वारा $\frac{2}{3}$ बहुमत से प्रस्ताव पारित कर दिये जाने पर सीनेट द्वारा इसकी जाच की जाती है। यदि सीनेट भी अपने $\frac{2}{3}$ बहुमत से इस प्रस्ताव की पुष्टि कर दे तो महाभियोग का प्रस्ताव पारित समझा जाता है और सम्बन्धित न्यायाधीश को पद त्याग करना होता है। अब तक के संवैधानिक इतिहास मे संघीय न्यायपालिका के ६ न्यायाधीशो के विरुद्ध महाभियोग का प्रस्ताव रखा गया और इनमे से केवल ४ के विरुद्ध यह प्रस्ताव पारित हो सका। सर्वोच्च न्यायालय के तो केवल एक न्यायाधीश सेम्युअल चेज के विरुद्ध यह प्रस्ताव लाया गया लेकिन उनके विरुद्ध भी प्रस्ताव पारित नहीं हो सका। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि महाभियोग की प्रक्रिया अपवाद स्वरूप ही है।[1]

[1] Ferguson & McHenry *The American Federal Government*, p 334

सर्वोच्च न्यायालय की कार्यविधि—सर्वोच्च न्यायालय का अधिवेशन प्रति वर्ष अक्टूबर के प्रथम सोमवार को प्रारम्भ होता है और प्राय अगले वर्ष के जून माह के पहले सप्ताह तक चलता रहता है। विशेष आवश्यकता पडने पर मुख्य न्यायाधीश न्यायालय का विशेष अधिवेशन भी बुला सकते हैं। मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय का कार्यपालिका अधिकारी है। वह अधिवेशनो की अध्यक्षता करता और निर्णयो की घोषणा करता है, लेकिन उसे अन्य न्यायाधीशो की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त नही हैं। अभियोगो की सुनवाई मगल, बुध, गुरु तथा शुक्र को होती है। शनिवार को न्यायाधीश परस्पर विचार विमर्श करते हैं तथा सोमवार को सार्वजनिक रूप से निर्णय देते हैं। अभियोग की सुनवाई तथा निर्णय के लिए ६ न्यायाधीशो की गण-पूर्ति (quorum) रखी गयी है। अभियोग का निर्णय बहुमत से होता है। मुख्य न्यायाधीश सबसे पहले अपने विचार बतलाता किन्तु मत सबसे अन्त मे देता है। कोई भी न्यायाधीश बहुमत के निर्णय से भिन्न मत व्यक्त कर सकता है। बहुमत निर्णय तथा उससे सहमत न होने वाले न्यायाधीशो के विचार (dissenting opinions) जनता तथा न्यायालयो के पथ प्रदर्शन के लिए सयुक्त राज्य की रिपोर्ट मे छापे जाते हैं।

क्षेत्राधिकार
(Jurisdiction)

सर्वोच्च न्यायालय को सविधान से ही शक्तियाँ प्राप्त हैं और इन रूप म वह अमरीकी सघ की कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका, दोनो स ही स्वतन्त्र है। सर्वोच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार इस प्रकार है

प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार—सर्वोच्च न्यायालय को दो प्रकार के अभियोगो मे प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार प्राप्त हैं—(1) वे सभी विवाद, जिनम राजदूत अन्य सार्वजनिक मन्त्री, वाणिज्य दूत अथवा विदेशी प्रतिनिधि कोई पक्ष हो। (ii) ऐसे सभी विवाद जिनमे सयुक्त राज्य अमरीका का सघ या अमरीकी सघ का कोई एक या अधिक राज्य एक पक्ष हो।

अपीलीय क्षेत्राधिकार—शेष सभी विवादो के सम्बन्ध मे सर्वोच्च न्यायालय को अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त है अर्थात निचले न्यायालयो के निर्णय की अपील सर्वोच्च न्यायालय मे सुनी जा सकती है। राज्यो के न्यायालयो की अपील सघ के सर्वोच्च न्यायालय म ही की जा सकती है, अन्य किसी सघीय न्यायालय मे नही। सविधान सर्वोच्च न्यायालय को कानून तथा तथ्यो के बारे म अपीलीय क्षेत्राधिकार देता है परन्तु कांग्रेस को इसे नियमित करने का अधिकार है। १६२५ के कांग्रेस के अधिनियम द्वारा अपील का अधिकार केवल निम्न विषयो तक सीमित कर दिया गया है

(i) जिनमे सघीय कानून तथा सन्धियो को राज्य के न्यायालय मे सविधान के विरुद्ध घोषित कर दिया गया हो।

(ii) जिनमे राज्य के किसी कानून को किसी सघीय न्यायालय म सघ क सविधान, किसी कानून अथवा सन्धि के विरुद्ध घोषित कर दिया गया हो, जबकि राज्यो के न्यायालय राज्यो के उस कानून को वध ठहरायें ।

उपरोक्त दोनो प्रकार के मामलो मे सर्वोच्च न्यायालय को अपील अवश्य ही सुननी होती है । अन्य मामलो मे सर्वोच्च न्यायालय को अपील का अधिकार है, परन्तु सर्वोच्च न्यायालय की इच्छा पर निभर है कि वह इसका प्रयोग करे या न करे । इस श्रेणी मे सघीय अपील न्यायालय के निणयो के विरुद्ध अपील शामिल है, जिनमे किसी सघीय कानून अथवा सन्धि को असवैधानिक घोषित कर दिया गया हो या जिनमे राज्य के किसी कानून या सवैधानिक उपबन्ध को इस आधार पर अवध घोषित कर दिया गया हो कि यह सघीय सविधान, कानून अथवा सन्धि के विरुद्ध है । जिला न्यायालयो के भी कुछ निणयो की अपील सीधे सर्वोच्च न्यायालय मे की जा सकती है ।

सर्वोच्च न्यायालय परामश देने का काय नही करता और इस दृष्टि से वह भारतीय सर्वोच्च न्यायालय से भिन्न है ।

न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार (सर्वोच्च न्यायालय—सविधान का सरक्षक)

Power of Judicial Review (Supreme Court—Guardian of the Constitution)

सर्वोच्च न्यायालय की सर्वाधिक महत्त्वपूण शक्ति न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार है, जिसके आधार पर सर्वोच्च न्यायालय न सविधान के सरक्षक की स्थिति प्राप्त कर ली है । ब्राइस ने सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति के सम्बन्ध मे लिखा है—"सयुक्त राज्य सरकार की किसी और विशेषता ने यूरोपीय जगत में इतनी अधिक जिज्ञासा जागत नहीं की, इतनी अधिक चर्चा पदा नहीं की, इतनी अधिक प्रशसा प्राप्त नहीं की और इतनी अधिक गलतफहमी उत्पन्न नहीं की, जितनी कि सर्वोच्च न्यायालय के उन कतव्यों और कार्यों ने की है, जो वह सविधान की रक्षा करते हुए करता है ।"[1]

सर्वोच्च न्यायालय को सविधान की व्याख्या का एकमात्र अधिकार प्राप्त है । इस अधिकार के अन्तगत उसक द्वारा उन सभी कानूनो की सवधानिकता की परीक्षा की जाती है जिन्हे सघीय काग्रेस तथा राज्य सरकारो द्वारा पारित किया

1 "No feature of the government of United States has awakened so much curiosity in the European mind caused so much discussion received so much admiration and been more frequently misunderstood than the duties assigned to the Supreme Court and the functions, which it discharges in guarding the arc of the constitution " —*James Bryce*

गया है और यदि सर्वोच्च न्यायालय ऐसा समझे कि ये कानून संविधान के प्रतिकूल हैं, तो उसके द्वारा इन्हें अवैध घोषित किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति को ही 'न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति' कहते हैं। इस शक्ति के आधार पर न्यायालयों के अधिकारक्षेत्र के अन्तर्गत कार्यपालिका द्वारा किये गये वे कार्य भी आते हैं, जो ऐसे कानूनों के आधार पर उसने किये हों। कोर्विन ने न्यायिक पुनर्विलोकन को स्पष्ट करते हुए कहा है कि—"न्यायिक पुनर्विलोकन का तात्पर्य न्यायालयों की उस शक्ति से है, जो उन्हें अपने न्याय क्षेत्र के अन्तर्गत लागू होने वाले व्यवस्थापिका के कानूनों की वैधानिकता का निर्णय देने के सम्बन्ध में तथा उन कानूनों को लागू करने से इन्कार करने के सम्बन्ध में प्राप्त है, जिन्हें वे अवैध और इसलिए व्यर्थ समझें।"[1]

न्यायिक पुनर्विलोकन की इस शक्ति के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान के संरक्षक की स्थिति प्राप्त कर ली है। इसी बात को दृष्टि में रखते हुए जस्टिस ह्यूज ने कहा था कि 'अमरीकन जनता संविधान के आधीन अवश्य रहती है परन्तु संविधान वही है, जो न्यायाधीश कहते हैं।'[2] इसी प्रकार जस्टिस फ्रैंकफर्टर ने कहा था कि 'सर्वोच्च न्यायालय ही संविधान है।'[3] सर्वोच्च न्यायालय को उसकी इस शक्ति के आधार पर 'कांग्रेस का तृतीय सदन' (Third Chamber of the Congress) भी कहा जाता है।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायिक पुनर्विलोकन के अधिकार के सम्बन्ध में कुछ विशेष बातें हैं। सर्वप्रथम, सर्वोच्च न्यायालय अपनी ही पहल (initiative) पर किसी कानून की वैधानिकता या अवैधानिकता पर विचार नहीं कर सकता। उसके द्वारा यह कार्य तभी किया जा सकता है जब कोई व्यक्ति या व्यक्ति समुदाय किसी विवाद या अपील के अन्तर्गत किसी कानून की संवैधानिकता को चुनौती दे। द्वितीय, न्यायिक पुनर्विलोकन के अधिकार का प्रयोग केवल सर्वोच्च न्यायालय ही नहीं करता वरन् निम्न संघीय न्यायालय और राज्यों के उच्च न्यायालय भी इस अधिकार का प्रयोग करते हैं। इतना अवश्य है कि उनके निर्णय के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है और इस सम्बन्ध में अन्तिम निर्णायक सर्वोच्च न्यायालय ही है।

1 Judicial Review is the power of courts to pass judgment upon the constitutionality of legislative acts, which fall within their normal jurisdiction to enforce and the power to refuse to enforce such as they find to be unconstitutional and hence void

—*Corwin in Encyclopaedia of Social Sciences*

2 We are under a constitution but the constitution is what the judges says it is —*Justice Hughes*

3 The Supreme Court is the constitution —*Justice Frankfurter*

न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का सवैधानिक आधार

इस बात पर बहुत अधिक विवाद है कि सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का कोई सवैधानिक आधार है अथवा नहीं। एक पक्ष का विचार है कि इसका कोई वैधानिक आधार नहीं है और सर्वोच्च न्यायालय ने मन माने तरीके से यह शक्ति अपने हाथ मे ले ली है। सविधान सभा के एक प्रमुख सदस्य और बाद मे राष्ट्रपति जेफरसन ने तो स्पष्ट कहा था कि पूर्वजों ने जिस ढाँचे की स्थापना की थी, उसके अन्तर्गत प्रशासन के तीनों विभाग पूर्णतया स्वतन्त्र होने थे तथा अब यदि न्यायपालिका काग्रेस व राष्ट्रपति के अधिकारों के पुनर्विलोकन के अधिकार का प्रयोग करती है, तो यह शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त का ही उल्लघन नहीं वरन् सविधान निर्माताओं के विचारों का भी अनादर है।

परन्तु वास्तव मे न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का वैधानिक आधार है। सविधान के अन्तर्गत इस सम्बन्ध मे स्पष्ट तौर पर चाहे कुछ भी न कहा गया हो, लेकिन सविधान के दो प्रबन्धों (अनुच्छेद ६ व अनुच्छेद ३ की उपधारा २) मे यह शक्ति निहित है। सविधान के अनुच्छेद ६ मे कहा गया है कि—"यह सविधान तथा अमरीका के सब कानून तथा उनके अनुसार बनाई गई सब सन्धियाँ अमरीका का सर्वोच्च कानून होगा। न्यायाधीश इससे बंधे हुए होंगे। किसी भी राज्य के सविधान तथा कानून मे यदि सयुक्त राज्य अमरीका के सविधान के विरुद्ध कोई बात होगी तो वह वैध नहीं मानी जायगी।"[1] इसी प्रकार अनुच्छेद ३ की उपधारा २ मे कहा गया है कि 'कानून व औचित्य के अनुसार न्यायपालिका की शक्ति के क्षेत्र मे वे सब मामले आयेंगे, जो इस सविधान सयुक्त राज्य के कानूनों व उनके अन्तर्गत की गई अथवा की जाने वाली सन्धियों के अन्तर्गत उत्पन्न हों।"[2]

इन दोनों अनुच्छेदों की व्याख्या करते हुए न्यायिक पुनर्विलोकन की धारणा के समर्थकों का कथन है कि सविधान की सर्वोच्चता बनी रहे और किसी और से उसका उल्लघन न हो, यह देखना सर्वोच्च न्यायालय का कार्य है और सर्वोच्च न्याया लय यह कार्य तभी सम्पन्न कर सकता है जबकि उस सविधान की व्याख्या करने और सघीय या राज्य व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित ऐसे कानूनों को अवैध घोषित

1 This constitution and the laws of ... ited States which shall be made in pursu... eof, a... aties made or which shall be made un... horit... ted States shall be the supreme law ... nd ... every State shall be bound thereby ... the ... or laws of any State to the contra... in ... Icle VI, ...

2 'The judic... a ... and e... arising u... d Sta... treaties n... ity" ... I, S

करने का अधिकार प्राप्त हो, जो उसके विचार मे सविधान के प्रतिकूल है। फिलाडेल्फिया सम्मेलन के प्रसिद्ध सदस्य हैमिल्टन ने यही दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए *"Federalist"* नामक पत्रिका मे लिखा था, "कानूनों की व्याख्या करना न्यायालयों का उचित व विशिष्ट कार्यक्षेत्र है। सविधान आधारभूत कानून होता है और न्यायालयों को उसे आधारभूत कानून ही मानना चाहिए। इसलिए यह उनका कार्य होना चाहिए कि वे उसका तथा व्यवस्थापिका द्वारा बनाये गये किसी भी कानून का अर्थ निश्चित करें। यदि दोनों में कोई ऐसा अन्तर हो, जिसमे साम्य न बढाया जा सके, तो निश्चय ही उसे ग्रहण किया जाना चाहिए जिसकी मान्यता व वैधता श्रेष्ठतर हो, दूसरे शब्दों में, कानून की तुलना मे सविधान को तथा जनता के प्रतिनिधियों की इच्छा की तुलना में जनता की मान्यता अधिक होनी चाहिए।"

सर्वोच्च न्यायालय द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन का प्रयोग

१८०१ मे मारबरी बनाम मेडीसन के विवाद मे न्यायमूर्ति मार्शल द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त का स्पष्ट रूप से प्रतिपादन किया गया और तब से अब तक इस सिद्धान्त का प्रयोग करते हुए सर्वोच्च न्यायालय काग्रेस द्वारा निर्मित ८१ कानूनों को अवैध घोषित कर चुका है। उपरोक्त प्रसिद्ध विवाद इस प्रकार था कि मार्च १८०१ को राष्ट्रपति एडम्स ने मारबरी को कोलम्बिया जिले का न्यायाधिकारी (Justice of Peace) नियुक्त किया। लेकिन उपरोक्त आदेश मारबरी को भेजे जाने के पूर्व ही राष्ट्रपति एडम्स का कार्यकाल समाप्त हो गया और नवीन राष्ट्रपति जैफरसन व उनके न्याय मन्त्री मेडीसन ने मारबरी को उपरोक्त आदेश भेजने से इन्कार कर दिया। अत मारबरी ने १७८९ के न्यायपालिका अधिनियम की व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रपति के विरुद्ध परमादेश (Mandamus) जारी करने की प्रार्थना की। १७८९ के न्यायपालिका अधिनियम मे व्यवस्था की गई थी कि प्रशासनिक अधिकारियो को परमादेश दिये जाने हेतु सर्वोच्च न्यायालय से प्रार्थना की जा सकती है और सर्वोच्च न्यायालय को ऐसा आदेश जारी करने का अधिकार होगा। इस विवाद मे सर्वोच्च न्यायालय की ओर से न्यायाधीश मार्शल ने यह निर्णय दिया कि १७८९ के न्यायपालिका अधिनियम के अन्तर्गत मारबरी नियुक्ति सम्बन्धी आज्ञापत्र प्राप्त करने का अधिकारी है, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सम्बन्धित अधिकारियो को परमादेश नही दिया जा सकता, क्योंकि १७८९ के जिस न्यायपालिका अधिनियम के अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय को परमादेश जारी करने का अधिकार दिया गया है वह स्वय सविधान की तीसरी धारा के विरुद्ध है, क्योंकि इसके द्वारा सर्वोच्च न्यायालय का प्रारम्भिक न्याय क्षेत्र उस न्याय क्षेत्र से अधिक कर दिया गया है जो सविधान की उक्त धारा मे दिया गया है। इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय ने १७८९ के न्यायपालिका अधिनियम की एक व्यवस्था को अवैध घोषित करते हुए उसे लागू करने से इन्कार कर दिया। न्यायाधीश मार्शल के उपरोक्त निर्णय को अग्र रूपो मे व्यक्त किया जा सकता है

(i) संविधान एक लेखपत्र (document) है जो शासन की शक्तियों को निश्चित और मर्यादित करता है।

(ii) संविधान देश का सर्वोच्च कानून है और इसलिए कांग्रेस द्वारा पारित अन्य कानूनों की तुलना में श्रेष्ठ है।

(iii) इसलिए संविधान के विपरीत बनाये गये कानून असंवैधानिक हैं और न्यायालय अवैध घोषित करते हुए उन्हें मानने से इन्कार कर सकता है।

न्यायिक पुनर्विलोकन की आलोचना

न्यायाधीश मार्शल द्वारा अपने निर्णय में न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धान्त को प्रतिपादित किये जाने के पूर्व से ही इस धारणा की आलोचना की जाती रही है। जफरसन इस शक्ति के प्रारम्भ से ही आलोचक थे और सीनेट के उम्मीदवार के रूप में प्रचार करते हुए अब्राहम लिंकन ने भी सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति की कटु आलोचना की थी। अमरीकी संविधान के लेखकों में बोगन, लुई बोदा, एडम ब्रुक्स व लास्की इसके प्रमुख आलोचक रहे हैं। इन लेखकों द्वारा की गई आलोचना के प्रमुख आधार निम्न प्रकार हैं

(१) न्यायिक पुनर्विलोकन का कोई संवैधानिक आधार नहीं—आलोचकों के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय के इस अधिकार का कोई संवैधानिक आधार नहीं है। संविधान में कहीं भी इस बात का उल्लेख नहीं है कि सर्वोच्च न्यायालय कानूनों की संवैधानिकता की परीक्षा कर उन्हें रद्द कर सकता है।

इस प्रकार की आलोचना का कोई महत्त्व नहीं है क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति का बहुत कुछ सीमा तक संवैधानिक आधार है। इसके अतिरिक्त पिछले लगभग १७० वर्षों से इस अधिकार का प्रयोग किया जा रहा है और किसी ने भी सर्वोच्च न्यायालय के इस अधिकार को गम्भीर चुनौती नहीं दी है।

(२) सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय राजनीति से प्रेरित—यह तो माना जा सकता है कि सर्वोच्च न्यायालय को वैधानिकता के आधार पर कानूनों पर विचार करने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए, किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश वैधानिक निर्णय देते हुए उन्हें अपनी राजनीतिक विचारधारा से रंग देते हैं। इस सम्बन्ध में कहा जाता है कि 'केवल काला लबादा ओढ़ लेने से ही कोई व्यक्ति राजनीति से मुक्त नहीं हो जाता है।' न्यायाधीश लोग जीवित प्राणी होते हैं वे सामाजिक और राजनीतिक जीवन से प्रभावित होते हैं, अतः जब कभी कांग्रेस का कोई ऐसा अधिनियम उनके सामने आता है जो उनकी विचारधारा के विरुद्ध होता है तो वे संवैधानिकता की आड़ में उसे रद्द कर देते हैं।

न्यायाधीशों के निर्णय आर्थिक और राजनीतिक विचारधारा पर आधारित होते हैं, इसका प्रमाण यह है कि न्यायिक निर्णयों में परिवर्तन होते रहे हैं। १९२३ में कांग्रेस द्वारा कोलम्बिया जिले के लिए पारित 'न्यूनतम मजदूरी अधिनियम' सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस आधार पर अवैध घोषित कर दिया गया था कि यह

संविधान के पाँचवें संशोधन द्वारा प्रदत्त संविदा की स्वतन्त्रता के प्रतिकूल है। लेकिन १९५७ में सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ही पुराने निर्णय को रद्द करते हुए संविदा की स्वतन्त्रता को दूसरे ही रूप में ग्रहण किया। मुख्य न्यायाधीश मार्शल और मुख्य न्यायाधीश टानी की विचारधारा में वैसा ही अन्तर देखा जा सकता है, जैसा क्रमश हेमिल्टन और जफरसन की विचारधारा में था।

(३) **प्रगतिशीलता में बाधक**—इस आधार पर भी आलोचना की जाती है कि सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी इस शक्ति के प्रयोग में सामान्यतया प्रतिक्रियावादिता और रूढ़िवादिता का ही परिचय दिया है। सर्वोच्च न्यायालय ने आय कर व्यवस्था, न्यूनतम वेतन, उद्योगों में काम करने वाले मजदूरों के काम करने के घण्टे निश्चित करने व दास प्रथा को खत्म करने से सम्बन्धित प्रगतिशील विधेयकों को रद्द कर सर्वोच्च न्यायालय प्रगतिशीलता में बाधक बना है। राष्ट्रपति रूजवेल्ट की नवनिर्माण आर्थिक नीति व उनके प्रशासन काल में कांग्रेस द्वारा पारित 'राष्ट्रीय पुनरोद्धार एक्ट (National Industrial Recovery Act) तथा 'कृषि आयोजन एक्ट' (Agriculture Adjustment Act) रद्द करके तो सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी प्रतिक्रियावादिता पर मोहर ही लगा दी। इसी आधार पर प्रो० लास्की का कथन है कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों ने सदा ही सम्पत्तिशाली वर्ग के हितों की रक्षा की है और यह हाउस ऑफ लार्ड्स की भाँति ही सम्पत्तिशाली वर्ग का गढ़ रहा है।'

(४) **सर्वोच्च न्यायालय कांग्रेस का तृतीय सदन**—आलोचना का एक प्रमुख आधार यह है कि सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी इस शक्ति के आधार पर कांग्रेस के तीसरे सदन की स्थिति प्राप्त कर ली है जो नितान्त अनुचित है। प्रजातन्त्र में कानून निर्माण की शक्ति जन प्रतिनिधियों को ही प्राप्त होनी चाहिए और अमरीकी जनता इस कार्य के लिए कांग्रेस सदस्यों को चुनती है, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय कांग्रेस द्वारा पारित अधिनियमों को अवैध घोषित कर एक उच्च विधान मण्डल की स्थिति प्राप्त कर लेता है। सर्वोच्च न्यायालय का संगठन लोकतन्त्रीय नहीं है और न्यायाधीशों को कार्यपालिका ही नामजद करती है। अतः इन न्यायाधीशों को जन प्रतिनिधियों से उच्च स्थिति प्रदान करना निश्चित रूप से अलोकतन्त्रीय ही है। लास्की और ब्रोगन ने इसी आधार पर सर्वोच्च न्यायालय को 'कांग्रेस का तृतीय सदन' कहा है। जब सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा राष्ट्रपति रूजवेल्ट की नवनिर्माण आर्थिक नीति को रद्द कर दिया गया तो संघीय न्यायपालिका के पूर्ण पुनर्गठन की आवश्यकता बतलाते हुए राष्ट्रपति ने कांग्रेस को अपने प्रसिद्ध सन्देश में कहा था कि—'इस बात का महत्त्व ही नहीं है कि कांग्रेस ने कानून का निर्माण किया है कार्यपालिका ने उस पर हस्ताक्षर किये हैं और प्रशासकीय तन्त्र उसे क्रियान्वित करने की प्रतीक्षा कर रहा है। न्यायपालिका एक अतिरिक्त कार्य अपने हाथ में ले रही है और उसके द्वारा राष्ट्रीय व्यवस्थापिका के तीसरे रूप में

संगठित तथा धीमी प्रक्रिया से कार्य करने वाले तृतीय सदन का रूप ग्रहण किया जा रहा है।"[1]

(५) निर्णय की त्रुटिपूर्ण प्रक्रिया—सर्वोच्च न्यायालय की बहुमत निर्णय की जो प्रक्रिया है, उसकी भी आलोचना की जाती है। सर्वोच्च न्यायालय के अधिकांश निर्णय ४ के विरुद्ध ५ न्यायाधीशों के बहुमत से किये जाते हैं। चार न्यायाधीश तो कानून की संवैधानिकता मे विश्वास व्यक्त करते हैं लेकिन पांच न्यायाधीश उसे असंवैधानिक कहकर रद्द कर देते हैं। इस प्रकार एक न्यायाधीश सम्पूर्ण कांग्रेस और राष्ट्रपति के निर्णय पर निषेधाधिकार का प्रयोग करता है और यह स्थिति सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की बुद्धिमत्ता के प्रति शंका उत्पन्न कर देती है। प्रश्न यह है कि यदि कानून असंवैधानिक है तो न्यायाधीशों मे मतभेद क्यों है? निर्णय की यह त्रुटिपूर्ण प्रक्रिया जनता मे अविश्वास और निराशा भर देती है।

(६) सामाजिक व आर्थिक जीवन मे अस्थिरता—सर्वोच्च न्यायालय की यह शक्ति सामाजिक और आर्थिक जीवन मे बड़ी अस्थिरता उत्पन्न करने का भी कारण होती है। कई बार ऐसा होता है कि कांग्रेस का एक कानून काफी लम्बे समय तक प्रयोग में आता रहता है और लोग उसके अनुसार अपना कार्य करते रहते हैं, लेकिन फिर एक दिन सर्वोच्च न्यायालय उसे अवैध घोषित कर देता है और वर्षों से उसके आधार पर किया गया समस्त कार्य असंवैधानिक हो जाता है। यह स्थिति नागरिकों में समस्त कानूनी ढांचे के प्रति शंका उत्पन्न कर देती है। इसमे राजनीतिक जीवन के उद्देश्य भी निश्चित नहीं हो पाते। कोई भी राजनीतिक दल विश्वास के साथ यह नहीं कह सकता कि उसके दलीय कार्यक्रम की कौनसी बात कानून बनने पर न्यायाधीशों द्वारा असंवैधानिक घोषित कर दी जायगी।

(७) विधानमण्डलों में उत्तरदायित्व का ह्रास—प्रो० ब्रोगन द्वारा इस आधार पर न्यायिक पुनर्विलोकन की आलोचना की गई है कि इसके परिणामस्वरूप विधानमण्डलों की उत्तरदायित्व भावना कम होती है तथा उनके काम मे लापरवाही व असावधानी बढ़ जाती है। कांग्रेस सदस्य यह सोचकर निश्चिन्त हो जाते हैं कि यदि उनके द्वारा निर्मित कानूनों मे कोई कमी रह भी गयी, तो सर्वोच्च न्यायालय उसे दूर कर लेगा।

1 It matters not that Congress has enacted the law, that the executive has signed it and the administrative machine is waiting to function the judiciary is assuming an additional function and is coming more and more to constitute a scattered loosely organised and slowly operating third house of the National Legislature —F D Roosevelt s message to Congress in February 1937 (Quoted from Strong (F), *Modern Political Constitutions*, p 113)

न्यायिक पुनर्विलोकन का महत्त्व

यद्यपि कुछ लेखकों द्वारा न्यायिक पुनर्विलोकन की आलोचना की गयी है लेकिन सामान्य अमरीकी दृष्टिकोण न्यायिक पुनर्विलोकन का प्रशंसक है और इसका महत्त्व बतलाते हुए निम्न बातें कही जाती हैं, जिनमें पर्याप्त सार है

(१) अमरीकी संविधान निर्माताओं द्वारा एक ऐसे सीमित शासन की कल्पना की गयी थी, जिसमें सरकार के प्रत्येक अंग की शक्तियाँ सीमित हों। इस आदर्श को न्यायिक पुनर्विलोकन के आधार पर ही प्राप्त किया जा सका है। सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी इस शक्ति के आधार पर कांग्रेस व राष्ट्रपति को अपनी सीमाओं के भीतर रहने पर विवश किया और उन्हें निरंकुश व अनियन्त्रित सत्ता सम्पन्न नहीं होने दिया।

(२) सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी इस शक्ति के आधार पर संघात्मक व्यवस्था की भी रक्षा की है। संविधान निर्माताओं ने केन्द्र और इकाइयों की सरकारों के बीच जिस शक्ति विभाजन की व्यवस्था की थी, उसे बनाये रखते हुए संघात्मक रूप व राज्यों के अधिकारों की रक्षा का भार सर्वोच्च न्यायालय पर ही था और सर्वोच्च न्यायालय ने इसे भली भाँति निभाया है। इसी आधार पर डॉ० फाइनर लिखते हैं कि 'यह एक ऐसा सीमेण्ट है जिसने सारे संघीय ढाँचे को स्थिरता दी है।'[1] मुनरो का तो विचार है कि 'सर्वोच्च न्यायालय के अभाव में अमरीकी संघ की इकाइयाँ अनेक मुँह वाले दैत्यों का रूप ग्रहण कर संवैधानिक व्यवस्था को समाप्त कर देतीं।'

(३) सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी इस शक्ति के बल पर सदैव ही नागरिक अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की रक्षा का कार्य किया है। सर्वोच्च न्यायालय नागरिक स्वतन्त्रताओं की रक्षा के प्रति कितना जागरूक है इसका प्रमाण यह है कि गृहयुद्ध की स्थिति में भी जब राष्ट्रपति लिंकन ने बन्दी प्रत्यक्षीकरण के अधिकार को स्थगित कर दिया, तो मुख्य न्यायाधीश टॉनी ने इसे अनुचित बतलाया।

(४) इन सबके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय की इस शक्ति का सर्वाधिक महत्त्व इस दृष्टि से है कि इसने संविधान को बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप गतिशीलता प्रदान की है। प्रत्येक संविधान को लागू किये जाने के बाद देश की परिस्थितियों में जो परिवर्तन होते हैं, उनके कारण संविधान में अनेक परिवर्तन करने जरूरी हो जाते हैं लेकिन अमरीकी संविधान में संशोधन की प्रक्रिया पर्याप्त कठिन होने के कारण औपचारिक रूप से ऐसे परिवर्तन कर सकना सरल नहीं है।

[1] 'It is the cement, which has fixed firm the whole federal structure
—*Dr Finer*

[2] The American constitutional system would have become a hydra-headed monstrosity of forty eight rival states
—Munro, *The Govt of U S* p 571

सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का ही यह परिणाम है कि बिना औपचारिक परिवर्तनों के संविधान बदलती हुई परिस्थितियों के अनुरूप ढल गया है। ह्वीयर के शब्दों में 'संविधान को नवीन समाज की आवश्यकताओं के अनुसार ढालना सर्वोच्च न्यायालय का ही कार्य है।[1]

सर्वोच्च न्यायालय अपनी व्याख्याओं के आधार पर संविधान को निरंतर गतिशीलता प्रदान कर रहा है, इस बात को दृष्टि में रखते हुए बेक ने कहा है कि "सर्वोच्च न्यायालय न्याय प्रदान करने की एक एजेंसी ही नहीं वरन् एक अर्थ में निरन्तर कार्य करने वाली संविधान सभा है। इसने अपनी व्याख्याओं के आधार पर संविधान में परिवर्तन करते हुए १७८७ के संवैधानिक सम्मेलन के कार्य को जारी रखा है।"[2]

सर्वोच्च न्यायालय के पुनर्गठन के सुझाव

सर्वोच्च न्यायालय और उसकी न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति के विविध दोष बतलाये जाते हैं और सर्वोच्च न्यायालय के संगठन, कार्यप्रणाली एवं शक्तियों को संशोधित करने के अनेक सुझाव दिये जाते हैं।

सर्वप्रथम २०वीं सदी के प्रारम्भिक चरण में राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट ने यह सुझाव दिया था कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अवैध घोषित किये गये कानूनों पर लोक निर्णय (referendum) की व्यवस्था होनी चाहिए और जनता को अधिकार होना चाहिए कि वह अपने बहुमत से सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को रद्द कर सके।

दूसरा सुझाव यह है कि सर्वोच्च न्यायालय द्वारा कानूनों को अवैध घोषित किये जाने की प्रक्रिया में परिवर्तन होना चाहिए। वर्तमान समय में सर्वोच्च न्यायालय अपने सामान्य बहुमत से कानूनों को अवैध घोषित कर सकता है, लेकिन इसके स्थान पर ⅔ बहुमत की अनिवार्यता ठहराते हुए यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि सर्वोच्च न्यायालय ९ में से कम से कम ७ न्यायाधीशों के निर्णय से ही कानून अवैध घोषित कर सके।

तीसरा सुझाव भी सर्वोच्च न्यायालय की कानूनों को अवैध घोषित करने की शक्ति पर नियन्त्रण के रूप में ही है। इसमें यह कहा गया है कि जिस प्रकार राष्ट्रपति द्वारा किये गये निषेधाधिकार के प्रयोग को कांग्रेस ⅔ बहुमत से पुनः वह

1 That the constitution has been adapted to the new society is the work of the Supreme Court
—Wheare *Modern Constitutions*, p 160

2 Thus the Supreme Court is not only a Court of Justice but in a qualified sense a continuous constitutional convention It continues the work of the convention of 1787 by adapting through interpretation the great charter of government
—J M Beck, *Constitution of the United States* p 221

विधेयक पारित कर रद्द कर सकती है, उसी प्रकार कांग्रेस को अधिकार होना चाहिए कि यदि सर्वोच्च न्यायालय ने किसी कानून को अवैध घोषित कर दिया है और कांग्रेस उसे राष्ट्रीय हित में आवश्यक समझती है तो कांग्रेस दे बहुमत से इस विधेयक को पारित कर सकती है और अब इस विषय पर सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं होनी चाहिए।

अमरीका के अब तक के संवैधानिक इतिहास में कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच सबसे प्रबल संघर्ष राष्ट्रपति रूजवेल्ट के दूसरे तीसरे कार्यकाल (१९३२-३७) में हुआ। रूजवेल्ट की नवनिर्माण आर्थिक नीति के अन्तर्गत निर्मित व्यवस्थापन को जब सर्वोच्च न्यायालय ने अवैध घोषित कर दिया तो राष्ट्रीय जीवन में खलबली मच गयी और ऐसी स्थिति में रूजवेल्ट ने सर्वोच्च न्यायालय में सुधार का प्रस्ताव किया। रूजवेल्ट ने यह योजना रखी कि राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया जाए कि वह ७० वर्ष से अधिक आयु वाले न्यायाधीशों की संख्या के बराबर सीनेट की सहमति से अतिरिक्त न्यायाधीशों को नामजद कर सके, परन्तु ऐसे न्यायाधीशों की संख्या ६ से ज्यादा नहीं पहुंचनी चाहिए। परन्तु राष्ट्रपति रूजवेल्ट के इस प्रस्ताव का कड़ा विरोध हुआ। सबने यह कहा जाने लगा कि राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय को अपने समर्थकों से भर कर उसकी स्वतन्त्रता और निष्पक्षता को समाप्त कर देना चाहता है। अतः कांग्रेस द्वारा रूजवेल्ट का प्रस्ताव रद्द कर दिया गया। इस प्रस्ताव की अस्वीकृति के थोड़े समय बाद ही राष्ट्रपति रूजवेल्ट के दृष्टिकोण से असहमत एक-दो न्यायाधीशों की मृत्यु हो जाने से सर्वोच्च न्यायालय का बहुमत राष्ट्रपति के दृष्टिकोण का समर्थक हो गया और इस प्रकार के किसी प्रस्ताव की आवश्यकता नहीं रही।

उस समय से लेकर अब तक सर्वोच्च न्यायालय के संगठन और शक्तियों में सुधार की योजना प्रस्तावित नहीं की गयी। वास्तव में इस प्रकार की किसी योजना को कानूनी रूप देने के लिए संविधान में संशोधन की आवश्यकता होगी और अमरीकी संविधान में संशोधन निश्चित रूप से एक दुष्कर कार्य है।

इसके अतिरिक्त अमरीकी जनता सर्वोच्च न्यायालय के वर्तमान संगठन और उसकी शक्तियों को बनाये रखने के पक्ष में ही हैं। वे इसे संविधान और नागरिक अधिकारों का रक्षक मानते हैं और सामान्यतया सर्वोच्च न्यायालय ने इसी रूप में कार्य कर अपने लिए महान प्रतिष्ठा और सम्मान अर्जित किया है। अंग्रेज विचारक लॉस्की ने कहा है कि 'अमरीका के संघीय न्यायालय तथा उनसे भी अधिक वहां के सर्वोच्च न्यायालय को जितना सम्मान प्राप्त है, उतना ही संयुक्त राज्य के जीवन पर उनका प्रभाव भी है।'[1]

1 'The respect in which the federal courts and above all the Supreme Court are held is hardly surpassed by the influence they exert on the life of the United States —*Laski*

प्रश्न

१ सर्वोच्च न्यायालय के कार्य समझाइए। यह संविधान के संरक्षक के रूप में कहाँ तक सक्रिय है?
(आगरा, १९६४, ६६, ७१, राजस्थान, १९६६, विक्रम, १९

२ सर्वोच्च न्यायालय के संगठन और शक्तियों को समझाइए। (आगरा १९

३ संयुक्त राज्य अमरीका में सर्वोच्च न्यायालय की रचना एवं कार्यों का वर्णन कीजिए। अमरीका की राजनीतिक पद्धति में इसका क्या स्थान है?
(कानपुर, १९६९, ७२, लखनऊ, १९

४ न्यायिक पुनर्विलोकन से आप क्या समझते हैं? अमरीका में यह किस सीमा तक विद्यमान है?
(राजस्थान, १९

५ अमरीकी संविधान के विकास में सर्वोच्च न्यायालय के योगदान का विवेचन कीजिए।
(विक्रम, १९

६ संयुक्त राज्य अमरीका में सर्वोच्च न्यायालय के संगठन तथा शक्तियों का वर्णन कीजिए। यह कहना कहाँ तक ठीक है कि यह कांग्रेस का तृतीय सदन बन गया है?
(जीवाजी, १९६६ ६९, विक्रम १९

७ न्यायिक पुनर्विलोकन से आपका क्या तात्पर्य है? अमरीकी अनुभव के आधार पर इसके गुण-दोषों की समीक्षा कीजिए।
(जीवाजी १९

८ सर्वोच्च न्यायालय के महत्त्व, संगठन और शक्तियों का वर्णन कीजिए।
(जीवाजी १९

९ अमरीका की शासन व्यवस्था में सर्वोच्च न्यायालय के महत्त्व के कारण बतलाइए।
(लखनऊ १९

7

सयुक्त राज्य अमरीका मे राजनीतिक दल

(POLITICAL PARTIES IN U S A)

'सविधान निर्माताओं ने जिस शिला को अस्वीकृत कर दिया था, यह आज अमरीकी शासन पद्धति का स्तम्भ है।'[1] —मुनरो

अमरीका मे राजनीतिक दलो का उद्भव और विकास

वतमान समय म प्राय सभी व्यक्ति इस बात को स्वीकार करते हैं कि राजनीतिक दलो के बिना प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था का सचालन सम्भव नही है। किन्तु राजनीतिक दलो के सम्बन्ध म अमरीकी सविधान के निर्माताओ का दृष्टिकोण यह नही था। उन्हे भय था कि राजनीतिक दल जनता के विभिन्न वर्गों मे द्वेष और वर की भावना उत्पन्न करेंगे और इसके परिणामस्वरूप नवजात अमरीकी राष्ट्र तथा उसके प्रजातन्त्र का अस्तित्व खतरे में पड जायगा। सविधान सभा में मेडीसन ने राजनीतिक दलो की तीव्र भर्त्सना की थी और प्रथम राष्ट्रपति जाज वाशिंगटन न अपन विदाई भाषण मे अमरीकी जनता को राजनीतिक दलो क विरुद्ध चेतावनी देते हुए कहा था कि दलगत विद्वेष मे सभी के लिए बुराई और हानि छिपी हुई है। अत प्रत्येक बुद्धिमान व्यक्ति का यह सहज कतव्य है कि वह ऐसी भावनाओं का दमन करे और उनसे बचे। दलगत विद्वेष से लोकप्रिय सस्थाएँ क्षीण होती हैं और प्रशासन में दुबलता आती है। यह (दलीय भावना) समाज को आधार रहित विद्वेषो और झूठी आशकाओ से उद्वेलित करती है, उसके एक भाग को दूसरे भाग के प्रति शत्रुता के लिए प्रेरित करती है एव समय पर विद्रोह और दगों का कारण बनती है।'

लेकिन वाशिंगटन की यह चेतावनी अमरीकी राजनीति के स्वाभाविक विकास को नही रोक सकी। वास्तव म अमरीकी सविधान का निर्माण करने वाले फिलाडेल्फिया सम्मेलन म ही राजनीतिक दल बीज रूप म विद्यमान थे। एक गुट, जिसका नता एलेक्जेण्डर हेमिल्टन था, शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार के पक्ष मे था।

[1] 'The stone which the builders rejected has become the chief stone of the corner' —*W B Munro*

दूसरा गुट, जिसका नेता जैफरसन था, राज्यों की स्वायत्तता और नागरिक स्वतन्त्रता का प्रबल समर्थक था। इन दोनों गुटों को क्रमशः फेडरलिस्ट (Federalist) और एण्टी फेडरलिस्ट (Anti Federalist) के नाम प्राप्त हुए। जैफरसन और हेमिल्टन दोनों ही सशक्त अमरीकी राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे, लेकिन दोनों के मार्ग अलग-अलग थे। इस गुटबन्दी के बावजूद जार्ज वाशिंगटन को सभी पक्षों का सम्मान प्राप्त था और वे सर्वसम्मति से अमरीका के प्रथम राष्ट्रपति निर्वाचित हुए। वाशिंगटन शासन को दलीय भावना से ऊपर रखना चाहते थे, इसलिए उनके द्वारा एलेक्जेण्डर हेमिल्टन और टामस जैफरसन, दोनों को ही मन्त्रिमण्डल में सम्मिलित किया गया। परन्तु उनके मतभेद समाप्त नहीं हो सके और १८६६ में जैफरसन ने मन्त्रिमण्डल से त्यागपत्र देकर अपनी सारी शक्ति 'एण्टी फेडरलिस्ट' जिन्हें 'डेमोक्रेटिक रिपब्लिक' भी कहा जाता है, को संगठित करने में लगा दी। १८६६ के राष्ट्रपति चुनाव के समय दलबन्दी स्पष्टतया उभर उठी और यह स्पष्ट हो गया कि न केवल नेता, वरन नागरिक भी दलों में विभक्त हैं। १७९६ के राष्ट्रपति चुनाव में फेडरलिस्ट विजयी हुए, परन्तु १८०० के निर्वाचन में फेडरलिस्ट को कड़ा आघात पहुंचा और सत्ता डेमोक्रेटिक रिपब्लिकन दल के हाथों में आ गयी। अनेक कारणोंवश इसी समय से फेडरलिस्ट दल का प्रभाव कम होता गया और १८१५ के पश्चात् यह दल राजनीतिक रंगमंच से लुप्त हो गया।

डेमोक्रेट्स और ह्विग (Democrats and Whigs)—फेडरलिस्ट दल के पतन के बाद राजनीतिक रंगमंच पर एकमात्र डेमोक्रेटिक रिपब्लिकन दल रह गया, परन्तु इस दल के नेताओं में भी आपसी मतभेद और सत्ता के लिए संघर्ष था। ऐसी स्थिति में हेनरी क्ले और डेनियल वेब्सटर के नेतृत्व में एक नया दल संगठित हुआ, जिसे अनुदार दल (Whig Party) या राष्ट्रीय गणतन्त्रवादी दल का नाम दिया गया। इस समय डेमोक्रेटिक दल का नेता जैक्सन था और नेशनल रिपब्लिकन दल का नेता जान क्विन्सी एडम्स। १८२८ में डेमोक्रेटिक नेता जैक्सन राष्ट्रपति निर्वाचित हुए और उस समय से लेकर १८४१ तक यह दल सत्तारूढ़ रहा। १८४१ के बाद ह्विग दल की प्रतिष्ठा में तेजी से गिरावट आयी और १८५६ तक इसका पूर्ण विघटन हो गया।

रिपब्लिकन्स और डेमोक्रेट्स (Republicans and Democrats)—१९वीं शताब्दी के मध्य में दासप्रथा की समाप्ति के प्रश्न को लेकर दो विचार धाराओं का उदय हुआ, जिनका प्रतिनिधित्व क्रमशः रिपब्लिकन और डेमोक्रेट नामक दलों द्वारा हुआ। ये दोनों दल अपने मूल नामों के साथ अभी तक चल रहे हैं। इन दो के अतिरिक्त अन्य राजनीतिक दल बहुत छोटे छोटे हैं और उनकी शक्ति नगण्य है। इन दोनों दलों की नीति और कार्यक्रम में समय समय पर परिवर्तन होते रहे हैं। अमरीका में दोनों दल लगभग समान रूप से शक्तिशाली हैं और लोकमत कभी एक दल के पक्ष में और कभी दूसरे दल के पक्ष में होता रहा है।

यदि पिछले ३०-४० वर्षों का राजनीतिक इतिहास देखा जाय, तो १९३२ से लेकर १९५२ तक राष्ट्रपति पद पर डेमोक्रेटिक दल का प्रभुत्व रहा, १९५२ से १९६० तक रिपब्लिकन दल के नेता आइजनहावर राष्ट्रपति रहे १९६० से १९६८ तक डेमोक्रेटिक नेता कनेडी और उनके बाद लिंडन बी जॉनसन राष्ट्रपति रहे। १९६८ और उसके बाद १९७२ मे रिपब्लिकन नेता रिचर्ड निक्सन राष्ट्रपति पद पर निर्वाचित हुए हैं लेकिन अब तक कांग्रेस के दोनों सदनों में दलीय स्थिति इस प्रकार रही है

	१९६८		१९७०		१९७२	
	प्रतिनिधि सभा	सीनेट	प्रतिनिधि सभा	सीनेट	प्रतिनिधि सभा	सीनेट
रिपब्लिकन दल	१८७	४२	१८०	४५	१९१	४३
डेमोक्रेटिक दल	२४८	५८	२५५	५५	२४४	५७

अमरीकी संघ की इकाइयों के ५० गवर्नरों में से डेमोक्रेटिक दल के ३१ और रिपब्लिकन दल के १९ हैं। इस प्रकार राष्ट्रपति पद पर रिपब्लिकन दल का अधिकार है किन्तु देश की राजनीति में डेमोक्रेटिक दल की स्थिति सुदृढ है।

अमरीकन दल प्रणाली की विशेषताएँ

अमरीकन दल प्रणाली की प्रमुख विशेषताओं का अध्ययन निम्नलिखित रूपों मे किया जा सकता है

(१) दलों का संविधानेत्तर विकास (Extra constitutional growth of parties)—अमरीका मे राजनीतिक दलों के उद्भव और विकास से यह नितान्त स्पष्ट है कि ब्रिटेन की ही भांति अमरीका की दलीय प्रणाली भी बिना किसी वैधानिक मान्यता के विकसित हुई है। वस्तुत अमरीकी संविधान निर्माता राजनीतिक दलों को शंका की दृष्टि से देखते थे और वे इनके विरोधी थे। अमरीकी संविधान राजनीतिक दलों के विषय में सर्वथा मौन है किन्तु जनतन्त्रात्मक व्यवस्था का सचालन राजनीतिक दलों के बिना सम्भव नही हो सकता। इसलिए अमरीका में वाशिंगटन के शासनकाल के अन्त में ही राजनीतिक दल राष्ट्रीय मंच पर प्रकट हो गये और तभी से वे बराबर अमरीकी राजनीति का संचालन करते रहे है। इस प्रकार राजनीतिक दल संविधानेत्तर विकास का परिणाम हैं।

(२) द्विदलीय पद्धति—ब्रिटेन की भाँति अमरीका में भी दो ही प्रमुख राजनीतिक दल है। अमरीका के राजनीतिक रंगमंच पर सदा दो ही प्रमुख राजनीतिक दल रहे हैं। उनके नाम बदलते रहे हैं परन्तु उनका अस्तित्व सतत् बना रहा है। समय समय पर तीसरे दल भी उत्पन्न हुए हैं परन्तु इनमें से कोई भी राष्ट्रीय निर्वाचनों में सफलता प्राप्त नही कर सका और शीघ्र ही उनका लोप हो गया। इस सम्बन्ध में शरश्नीडर का कथन है 'जब हम कहते हैं कि अमरीका मे दो राजनीतिक दलों की प्रणाली है तो उसका अर्थ यह नहीं है कि वहां केवल दो दल हैं,

वरन् यह है कि यद्यपि राष्ट्रपति पद के लिए एक दजन दल अपने उम्मीदवार खड़े करते हैं पर वास्तव मे वहा केवल दो बडे दल हैं और छोटे दल इतने छोटे हैं कि उन्हे तो प्राय लोग भूल ही जाते हैं।" भूतकाल मे इस प्रकार के अनेक छोटे राजनीतिक दलो का उदय और विघटन हो चुका है और वतमान समय मे भी इस प्रकार के कुछ छोटे दल हैं। कृषक वग का असन्तोष व्यक्त करने के लिए ग्रीन बक (Green Back) पार्टी और श्रमिको की स्थिति मे सुधार के लिए लेबर रिफाम (Labour Reform) दल की स्थापना हुई। इसी प्रकार डेमोक्रेटिक पार्टी के वाम पक्ष के रूप मे 'पॉपुलिस्ट पार्टी' (Populist Party) और रिपब्लिकन पार्टी के वाम पक्ष के रूप मे 'प्रोग्रेसिव पार्टी' (Progressive Party) की उत्पत्ति हुई। इसी प्रकार अमरीका मे 'शोसलिस्ट दल और 'साम्यवादी दल' भी हैं, लेकिन इनमे से किसी भी राजनीतिक दल का राष्ट्रीय स्तर पर कोई प्रभाव या महत्व नही है।

द्विदल प्रणाली के उदय के कारण—द्विदल प्रणाली के उदय के कारणो मे सवप्रथम पूव परम्परा और अनुभव है। अमरीकावासियो ने अपना राजनीतिक जीवन परम्पराओ से प्रारम्भ किया था और ब्रिटेन द्विदल पद्धति का आदि स्थान रहा है। इस प्रकार पूव परम्परा और अनुभव ने अमरीका मे द्विदल पद्धति को पनपने मे महत्त्वपूण योग दिया है।

अमरीका मे राष्ट्रपति और राज्यो के गवनरों की निर्वाचन पद्धति ने भी द्विदल पद्धति को विकसित करने मे ही योग दिया है। राष्ट्रपति पद अथवा राज्यो मे गवर्नर पद पर आधिपत्य स्थापित करने के लिए उत्सुक दल को निर्वाचक मण्डल का निरपेक्ष बहुमत प्राप्त करना आवश्यक है और ऐसी स्थिति मे दो से अधिक राजनीतिक दलो का प्रभावशाली होना कठिन हो जाता है। मकमोहन के शब्दो मे "राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रणाली तीसरे दल को हतोत्साहित कर देती है, जिसके फलस्वरूप द्विदल पद्धति सुदृढ ही गई है।"[1]

एकल सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र—द्विदलीय पद्धति के विकास का एक अन्य कारण है। एकल सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्र सदैव ही द्विदलीय पद्धति को प्रोत्साहन देते हैं, क्योकि इस पद्धति के अन्तगत छोटे छोटे राजनीतिक दलो के लिए विजय प्राप्त करना बहुत ही कठिन होता है। अमरीका मे सभी निर्वाचनो के लिए एकल सदस्यीय निवाचन क्षेत्र की पद्धति को ही अपनाया गया है।

अमरीका मे किसी भी तीसरे दल का प्रभाव न बढने का एक कारण यह है कि छोटे राजनीतिक दल जिन प्रश्नो को अपनाते हैं, उन प्रश्नो को शीघ्र ही बडे

1 The centripetalism generated by this office more than any other factor discouraged the development of the multiplicity of parties anticipated by the founders of the constitution —Arthur W MacMohan (Quoted from William H Riker *Democracy In the United States* p 118 19

दल अपना लेत हैं। उनके कायक्रम को जब बडे दल अपना लेते हैं, तो छोटे दल आधारहीन हो जाते हैं और अन्तत उनका लाप हो जाता है। फरग्युसन और मेकहैनरी ने इस स्थिति की विवेचना इस प्रकार से की है—"आज से दो तीन दशाब्दियो पूव वामपक्षी दल जिन सिद्धान्तो का समथन करते थे, उनका अधिकांश अब डेमोक्रेटिक और रिपब्लिकन दलों मे शामिल कर लिया गया है। तीसरे दल की गतिविधियों में भाग लेने वाले व्यक्ति शासन पदों का लाभ भले ही प्राप्त न कर सकें किन्तु उनके द्वारा प्रतिपादित नीतियाँ जन स्वीकृति प्राप्त कर लेने पर देश की भूमि के कानून बन जाती हैं।"[1]

देश की राजनीति मे दो ही राजनीतिक दलो को प्रभावपूर्ण स्थान प्राप्त होने के कारण दोनो दलो मे स्वस्थ राजनीतिक प्रतियोगिता चलती रहती है और दोनो दल अधिकाधिक लोककल्याण का काय करन की ओर प्रेरित होते हैं।

(३) विचारधारा सम्बन्धी आधारभूत अन्तरों का अभाव—अमरीका म जब राजनीतिक दलो का उदय हुआ, उस समय उनमें कुछ मूलभूत प्रश्नो पर मतभेद थे, परन्तु धीरे धीरे नीतियो की दृष्टि से दोनो दल एक दूसरे के समीप आते गये और आज इन दलो म नीतियो के बारे मे कोई मौलिक मतभेद नहीं रह गये हैं। विदेश नीति के क्षेत्र मे दानो दल परस्पर सहमत हैं और इस क्षेत्र मे दोनो दलो की 'एकमतता' (Bi Partisanship in Foreign Policy) की प्रवृत्ति देखी जा सकती है और आन्तरिक क्षेत्र मे दोनो दल पूजीवादी व्यवस्था को बनाये रखने पर सहमत हैं। लास्की ने कहा है कि 'कोई ऐसा मापदण्ड नहीं है जिसके आधार पर यह निश्चित किया जा सके कि रिपब्लिकन तथा डेमोक्रेटिक दलो के अलग अलग स्थायी विचार क्या हैं। हरमन फाइनर ने भी अमरीकी दलो के विषय म ऐस ही विचार व्यक्त किये है। ब्रियड ने तो इस सम्बन्ध मे यहाँ तक कहा है कि—'वहा के मतदाताओ की दशा उन निर्जीव प्राणियो जसी होती है जो खाली शब्दों के लिए मतदान करते हैं।" वस्तुत दोनो दलो के द्वारा चरमतावाद से दूर रहकर मध्यममार्गी नीति को अपनाने का काय किया गया है और यही उनके हित म है।

(४) दलों का शिथिल सगठन—अमरीकी राजनीतिक दल सदस्यता तथा दलीय अनुशासन की दृष्टि से शिथिल सगठन हैं। अमरीकी राजनीतिक दलो म सदस्यो की भर्ती की न तो कोई निश्चित प्रक्रिया है और न ही राजनीतिक दल के सदस्य सदव दलीय अनुशासन मे बधकर काय करते हैं। अनेक बार एक विशेष राजनीतिक दल के टिकट पर चुन गय प्रतिनिधि अपने दलीय नेता के आदेश पर मतदान करने के बजाय विभिन्न हितो या अपन चुनाव क्षेत्र के मतदाताओ को प्रसन्न करने के लिए मतदान करत हैं। इस प्रकार अमरीकी राजनीतिक दल विभिन्न राजनीतिक विचारधारा वाले व्यक्तियो के ढीले ढाले सगठन हैं जिनम विचारधारा

[1] Ferguson and McHenry *The American Federal Govt*, p 194

सम्बन्धी एकमतता तथा कठोर दलीय अनुशासन का सर्वथा अभाव रहता है। लास्की के शब्दों में 'केवल निर्वाचन के समय वे राष्ट्रीय दल हैं, अन्यथा प्रभावशाली स्थानीय संस्थाएँ हैं।'

(५) दबाव गुटों का प्रभाव—अमरीका में प्रमुख राजनीतिक दल तो दो ही हैं, लेकिन छोटे छोटे दबाव गुटों का काफी प्रभाव पाया जाता है। ये गुट दो प्रमुख दलों पर दबाव डालकर अपने हितों को सिद्ध करते रहते हैं।

(६) लाभ प्रदान करने या लूट की प्रणाली (The Spoils System)—अमरीका में दलीय पद्धति से सम्बन्धित ही एक परम्परा लूट की प्रणाली या लाभ प्रदान करने की प्रणाली है जिसका तात्पर्य यह है कि राष्ट्रपति के चुनाव में विजयी दल का अधिकार प्राप्त है कि वह पहले से कार्य कर रहे नागरिक सेवा के पदाधिकारियों को पदच्युत कर उन पदों पर अपने समर्थकों को नियुक्त कर दे। छोटे पैमाने पर तो लाभ प्रदान करने की प्रणाली प्रारम्भ से ही प्रचलित थी, लेकिन १८२८ में एण्ड्रयू जैक्सन ने इसे बड़े पैमाने पर अपनाया और यह अमरीकी राष्ट्रीय सरकार का एक आधार बन गई। राष्ट्रपति जैक्सन ने अपने कार्यकाल के प्रथम वर्ष में ही ७०० अधिकारियों और कर्मचारियों को पदच्युत कर दिया और उनके स्थान पर अपने समर्थक क्षेत्र के व्यक्तियों को नियुक्त कर दिया गया। दलीय आधार पर लाभ प्रदान करने की यह प्रणाली बढ़ती ही गई और राष्ट्रपति ग्राण्ट के समय तक इसने सभी सीमाएँ प्राप्त कर ली। कुछ व्यक्तियों द्वारा इस प्रणाली का समर्थन करते हुए यह कहा जाता है कि इसने प्रजातन्त्र को सरलता प्रदान की है और शासन को जनता के प्रति उत्तरदायी बनाया है। किन्तु वास्तव में ऐसा कहना सही नहीं है। व्यवहार में लूट की प्रणाली ने नागरिक सेवाओं को भ्रष्ट करने का कार्य किया है और इससे प्रशासनिक कार्यकुशलता को तीव्र आघात पहुंचा है।

लूट की प्रणाली पर प्रतिक्रिया उत्पन्न होनी स्वाभाविक थी और अनेक व्यक्तियों तथा संस्थाओं ने इस स्थिति में सुधार की आवश्यकता पर बल दिया। १८८१ में जब एक निराश और बेरोजगार व्यक्ति द्वारा राष्ट्रपति गारफील्ड की हत्या कर दी गई तो इससे सम्पूर्ण देश की आत्मा को तीव्र आघात पहुंचा और १८८३ में कांग्रेस के द्वारा पेण्डलटन अधिनियम पारित किया गया जिसके अन्तर्गत संघीय लोक सेवा आयोग की स्थापना की व्यवस्था की गयी। वर्तमान समय में स्थिति यह है कि लगभग ८० प्रतिशत स्थानों के लिए संघीय लोक सेवा आयोग द्वारा योग्यता के आधार पर चयन किया जाता है और शेष लगभग २० प्रतिशत स्थान राष्ट्रपति के अनुग्रह के आधार पर भर जाते हैं। इस प्रकार लूट की प्रणाली को सीमित कर दिया गया है लेकिन अब भी यह संयुक्त राज्य अमरीका में विद्यमान है। वर्तमान समय में न्यायिक सेवाओं, पोस्ट आफिस, विशेष एजेंसियों और स्वतन्त्र आयोगों में राष्ट्रपति के अनुग्रह के आधार पर नियुक्ति की जाती है।

दलों का संगठन (Organisation of the Parties)—संयुक्त राज्य अमरीका में दोनों प्रमुख राजनीतिक दलों का संगठन एक जैसा है। दलों के संगठन को दो भागों में बाँटा जा सकता है—स्थायी समितियाँ तथा अस्थायी समितियाँ। स्थायी समितियों में दलों की स्थानीय इकाइयों की समितियों से लेकर राष्ट्रीय समिति तक अनेक समितियाँ शामिल हैं। इसके अतिरिक्त चुनाव के समय कुछ अस्थायी समितियों का निर्माण भी किया जाता है लेकिन विशेष महत्व स्थायी समितियों का ही है।

स्थायी दलीय संगठन—दोनों प्रमुख दलों का स्थायी संगठन लगभग समान है और यह पाँच स्तरीय है जिसकी विवेचना निम्न रूपों में की जा सकती है

(i) मतदान जिला समितियाँ (Precinct Committees)—संयुक्त राज्य अमरीका में स्थायी दलीय संगठन की इकाई मतदान जिले हैं। मतदान जिलों का आधार जनसंख्या के घनत्व और मतदाताओं की संख्या पर निर्भर करता है, जिससे चुनाव अधिकारी सरलता से उनका प्रबन्ध कर सकें। मतदान जिले की औसतन संख्या १०० और ५०० के बीच होती है। अमरीका में लगभग १ लाख २५ हजार मतदान जिला समितियाँ और इकाइयाँ हैं। मतदान जिले के दलीय अध्यक्ष का कर्तव्य क्षेत्र के मतदाताओं से सम्बन्ध स्थापित करना और उनका समर्थन प्राप्त करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न करना है। वह अपने क्षेत्र में दल के समर्थकों अथवा मित्रों आदि के लिए सरकारी नौकरियाँ तथा अन्य सुविधाएँ प्रदान करने का प्रयत्न करता है।

(ii) नगर समितियाँ, कस्बा तथा ग्राम समितियाँ—नगरों में मतदान जिला समितियों के ऊपर एक वार्ड समिति होती है। वार्ड में से नगर पार्षद चुने जाते हैं, जिनका नगरपालिका और नगर की राजनीति से सम्बन्ध रहता है। नगर समिति वार्ड समितियों तथा मतदान जिला समितियों के कार्यों की निगरानी करती है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय समस्याओं को हल करने के लिए ग्राम समितियाँ स्थापित की जाती हैं।

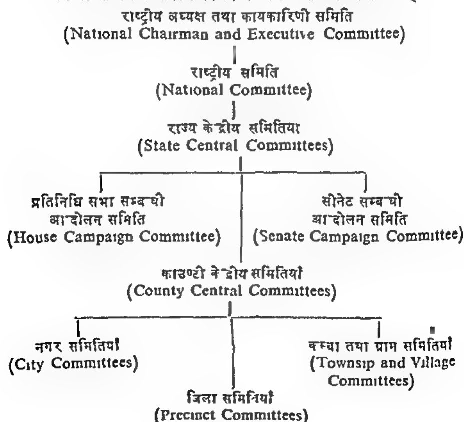
(iii) काउण्टी समितियाँ—अमरीका में ३,००० से भी अधिक काउण्टियाँ हैं और ये ग्रामीण क्षेत्रों में हैं। दोनों प्रमुख राजनीतिक दलों में से प्रत्येक की काउण्टी में एक समिति होती है।

(iv) राज्य केन्द्रीय समितियाँ—अमरीकी संघ के ५० राज्यों में से प्रत्येक में दोनों राजनीतिक दलों की एक केन्द्रीय समिति है। यह अपने समस्त राज्य क्षेत्र में दलीय संगठन की देखभाल करती है। इसके द्वारा राज्यों के पदों और प्रतिनिधि सभा तथा सीनेट के चुनाव अभियान को संगठित किया जाता है। राज्य की केन्द्रीय समिति के कुछ सदस्य निर्वाचित होते हैं और कुछ मनोनीत। समिति के सदस्यों की संख्या राज्य के क्षेत्र और जनसंख्या के अनुसार अलग अलग होती है। दल का एक प्रभावशाली सदस्य राज्य की केन्द्रीय समिति का अध्यक्ष ह

(v) राष्ट्रीय समिति (National Committee)—प्रत्येक दल के शीर्ष पर एक राष्ट्रीय समिति होती है। इसमे प्रत्येक राज्य से दो प्रतिनिधि आते हैं जिसमे एक पुरुष तथा एक स्त्री होती है। इनका निर्वाचन राज्य की केन्द्रीय समिति करती है या राष्ट्रीय सम्मेलन के प्रतिनिधियो या राज्य सम्मेलन द्वारा होता है। राजनीतिक दल के सगठन मे इस राष्ट्रीय समिति का महत्त्वपूर्ण तथा सर्वोच्च स्थान है। राष्ट्रीय समिति का एक चेयरमैन या अध्यक्ष होता है, जिसे वह व्यक्ति मनोनीत करता है, जोकि दल की ओर से राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार चुना गया हो। राष्टीय समिति दल के अध्यक्ष पद पर नियुक्ति की केवल औपचारिक रूप से पुष्टि करती है। राष्ट्रीय समिति अपने अन्य पदाधिकारियो को चुनती है और दल के अध्यक्ष के नेतृत्व मे राष्ट्रपति पद के चुनाव अभियान का सचालन करती है।

अमरीका के दोनो ही राजनीतिक दलो के पास पर्याप्त वित्तीय साधन हैं।

ऊपर वर्णित दल के सगठन को निम्न चित्र से समझा जा सकता है



राजनीतिक दलो का कार्यकरण

अमरीकी सविधान के निर्माता राजनीतिक दलो को शका की दृष्टि से देखते और उन्हें भय था कि इनसे नवजात अमरीकी राष्ट्र तथा अमरीकी प्रजातन्त्र को

आघात पहुंचेगा, किन्तु यह एक तथ्य है कि दल प्रणाली के बिना प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था का संचालन नहीं हो सकता और जैसा कि मुनरो ने कहा है कि, 'संविधान निर्माताओं ने जिस शिला को अस्वीकृत किया था, वह आज अमरीकी प्रजातन्त्र की आधारभूत शिला बन गयी है।' संयुक्त राज्य की शासन पद्धति पर दलों के अप्रतिम प्रभाव का उल्लेख करते हुए ब्राइस ने लिखा है कि 'दल संविधान द्वारा स्थापित वैधानिक सरकार के साथ साथ एक दूसरी ही सरकार बन गया है जिसका कानून में कहीं उल्लेख नहीं है। इसे वह डायनेमो इंजन कहा जा सकता है जिससे वैधानिक सरकार अपनी शक्ति प्राप्त करती है। वैधानिक और दल की सरकारें अपने ढांचों में बहुत भिन्न हैं, परन्तु वैधानिक सरकार को अपनी चालक शक्ति इस दलीय सरकार से ही प्राप्त होती है, जिसका कोई कानूनी आधार नहीं है।'

अमरीकी शासन व्यवस्था में राजनीतिक दलों की भूमिका का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) कांग्रेस तथा कार्यपालिका के बीच सामंजस्य तथा एकरूपता—अमरीकी संविधान शक्ति विभाजन के सिद्धान्त पर आधारित है तथा इसमें व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका को एक दूसरे से पृथक् तथा स्वतन्त्र रखा गया है। लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि यदि व्यवस्थापिका और कार्यपालिका एक दूसरे से स्वतन्त्र रहें, तो शासन व्यवस्था का संचालन ही सम्भव नहीं हो सकता। इन दोनों के बीच अनौपचारिक रूप से सम्बन्ध स्थापित करने का कार्य राजनीतिक दलों के द्वारा किया जाता है। राष्ट्रपति का निर्वाचन दलीय आधार पर होता है तथा राष्ट्रपति विभागीय अध्यक्षों की नियुक्ति भी दलीय आधार पर करता है। कांग्रेस के दोनों सदनों के सदस्य भी दलीय आधार पर निर्वाचित होते हैं। इस प्रकार दलीय सम्बन्ध कांग्रेस और कार्यपालिका को जोड़ने वाली महत्त्वपूर्ण कड़ी का कार्य करते हैं। राष्ट्रपति, जो अपने दल का नेता होता है कांग्रेस में अपने दल के सदस्यों के सामने, दलीय बैठकों में विधायी प्रस्ताव रखता है और साधारणतया अपनी इच्छानुसार कानूनों का निर्माण करने में सफलता प्राप्त कर लेता है।

(२) राष्ट्रीय एकीकरण की शक्ति—संयुक्त राज्य अमरीका १७ करोड़ की जनसंख्या वाला एक विशाल देश है, जिसमें विभिन्न जातियों तथा भाषाओं के लोग निवास करते हैं। विविधताओं से परिपूर्ण इस देश में आज जो प्रबल राष्ट्रीय एकता देखी जाती है उसे विकसित करने में राजनीतिक दलों ने प्रभावशाली भूमिका अदा की है। यद्यपि वर्तमान समय में स्थिति ऐसी नहीं है किन्तु सामान्यतया एक ही दल को शासन की विभिन्न शाखाओं पर नियन्त्रण प्राप्त होता है और यह सम्पूर्ण देश को एकता के सूत्र में बांधकर उसे एक उद्देश्य की पूर्ति में निर्देशित करता है। **ऑग और रे** का कहना है कि, **"विभिन्न जातियों, धर्मों, संस्कृतियों एवं व्यवसायों के लोगों में एकता स्थापित करने में राजनीतिक दल सीमेण्ट का सा कार्य करते हैं।"** अमरीकी राजनीति के सन्दर्भ में यह कथन नितान्त सत्य है।

(३) विभिन्न पदाधिकारियों और संस्थाओं के चुनाव को सम्भव बनाना—अमरीकी संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रतिनिधि सभा और सीनेट सदस्यों के निर्वाचन की जो व्यवस्था की गयी है, व्यवहार में अन्तर्गत वह राजनीतिक दलों के आधार पर ही कार्य कर रही है। राजनीतिक दलों के अभाव में राष्ट्रपति को निर्वाचक मण्डल के सदस्यों का बहुमत प्राप्त होना बहुत अधिक कठिन होता है और बार बार प्रतिनिधि सभा द्वारा ही राष्ट्रपति का चुनाव किये जाने पर राष्ट्रपति पद की गरिमा समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार वर्तमान समय में न्यूयार्क और ओहियो जैसे कुछ राज्यों में सीनेट के निर्वाचन क्षेत्र बहुत बड़े हैं और राजनीतिक दलों के बिना उनमें चुनाव की कल्पना नहीं की जा सकती।

(४) जनता को राजनीतिक शिक्षा—प्रजातन्त्रीय व्यवस्था की सफलता जनता की राजनीतिक शिक्षा पर निर्भर करती है और अन्य देशों के समान ही अमरीका में भी राजनीतिक दल राजनीतिक शिक्षा प्रदान करने के सर्वप्रमुख साधन के रूप में कार्य करते हैं।

(५) राजनीतिक दल भावी राजनीतिज्ञों का कार्य करते हैं। प्रो० लास्की आदि ने अमरीकी राजनीतिक दलों की कड़ी आलोचना की है। उनके द्वारा की गयी आलोचना के दो प्रमुख आधार हैं। प्रथमतः अमरीकी राजनीतिक दलों का कोई सैद्धान्तिक आधार नहीं है। विचारधारा सम्बन्धी भेद के अभाव में ये दल सत्ता प्राप्ति मात्र के लिए संघर्ष करने वाले गुट बनकर रह गये हैं। द्वितीयतः, अमरीकी राजनीतिक दलों के सदस्य अपने दल के प्रति निष्ठावान नहीं होते और उनके द्वारा दलीय अनुशासन की अवहेलना की जाती है। आलोचना करते हुए यह भी कहा जा सकता है कि इन राजनीतिक दलों ने ही अमरीकी राजनीतिक व्यवस्था में लूट की प्रणाली को जन्म दिया है। वर्तमान समय में राजनीतिक दलों के द्वारा राष्ट्रपति और अन्य चुनावों में बहुत अधिक धनराशि का व्यय किया जाता है और इससे विभिन्न प्रकार की राजनीतिक भ्रष्टताओं को बढ़ावा मिलता है।

अमरीकी राजनीतिक दलों के प्रति की गयी इन आलोचनाओं में पर्याप्त सत्यता है, लेकिन इसके साथ ही यह भी तथ्य है कि अमरीकी प्रजातन्त्र राजनीतिक दलों पर ही आधारित है। राजनीतिक दलों के कारण ही संयुक्त राज्य अमरीका अधिनायकवाद और राजनीतिक अस्थिरता तथा अराजकता की स्थितियों से अपने आपकी रक्षा कर सका है। राजनीतिक दलों ने अमरीकी लोकतन्त्र को सजीवता और गतिशीलता प्रदान कर उसके सफल संचालन में योग दिया है।

अमरीका और इंगलैण्ड की दल प्रणाली की तुलना

संयुक्त राज्य अमरीका और इंगलैण्ड के राजनीतिक दलों में दो प्रमुख समानताएँ हैं। प्रथमतः, इन दोनों ही देशों में राजनीतिक दल संविधानेतर विकास के परिणाम हैं। न तो ब्रिटिश संविधान और न ही अमरीकी संविधान में

राजनीतिक दलों का कोई उल्लेख किया गया है, किन्तु वर्तमान समय में स्थिति यह है कि राजनीतिक दलों का अध्ययन किये बिना इन दोनों ही देशों की शासन व्यवस्था को भली भांति नहीं समझा जा सकता। दोनों ही देशों में राजनीतिक दलों को कानूनी स्थिति प्राप्त न होते हुए भी ये शासन व्यवस्था की आधार शिलाएं हैं।

दोनों देशों के राजनीतिक दलों में एक अन्य प्रमुख समानता **द्विदलीय पद्धति** है। दोनों देशों में दो ही राजनीतिक दलों को देश की राजनीति में प्रभावशाली स्थिति प्राप्त है और देश की राजनीति में अन्य राजनीतिक दलों का कोई महत्त्व नहीं है।

असमानताएं—लेकिन इन दोनों देशों के राजनीतिक दलों में समानताओं की अपेक्षा असमानताएं निश्चित रूप से अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। इस सम्बन्ध में काविल ने कहा है, "संयुक्त राज्य अमरीका के राजनीतिक दल उद्देश्य व रूप की दृष्टि से इंगलैण्ड तथा अधिकांश अन्य देशों से भिन्न हैं।"[1] इन दोनों देशों की दल प्रणाली में निम्न प्रमुख अन्तर पाये जाते हैं :

(१) वर्तमान समय में ब्रिटिश राजनीतिक के दो प्रमुख दल हैं : अनुदार दल और श्रमिक दल। इन दोनों राजनीतिक दलों में सिद्धान्त और विचारधारा का स्पष्ट अन्तर है। अनुदार दल पूंजीवादी अर्थव्यवस्था और विद्यमान स्थिति को कम से कम परिवर्तनों के साथ बनाये रखने के पक्ष में है, लेकिन श्रमिक दल का उद्देश्य है शान्तिपूर्ण और संवैधानिक पद्धति से प्रजातान्त्रिक समाजवाद की स्थापना। किन्तु अमरीकी राजनीति के दो प्रमुख दलों—रिपब्लिकन दल और डेमोक्रेटिक दल—में विचारधारा सम्बन्धी भेद का अभाव है। विदेश नीति या राजनीतिक और आर्थिक जीवन के आदर्शों के सम्बन्ध में इन दोनों राजनीतिक दलों का एक समान दृष्टिकोण है। फाइनर के विचारानुसार 'ब्रिटेन के अनुदार तथा श्रमिक दलों की स्पष्ट भिन्नता के समान विभिन्न आदर्शों की साधना के आधार पर रिपब्लिकन और डेमोक्रेटिक दलों के बीच अन्तर की कोई रेखा नहीं खींची जा सकती। वास्तव में इन्हें एक ही दल के दो अंग कहना अधिक उचित होगा, जिनको रिपब्लिकन और डेमोक्रेट दो विभिन्न नामों से पुकारा जाता है।' लार्ड ब्राइस ने अमरीकी राजनीति के दो दलों की तुलना दो ऐसी खाली बोतलों से की है, जिनमें अलग-अलग पेय के लेबिल लगे हुए हैं। एमरसन की यह पंक्ति भी ब्रिटिश दलों से अमरीकी दलों का भेद ही बतलाती है कि 'साधारणतया हमारे दल (अमरीकी दल) परिस्थितियों के दल हैं, सिद्धान्तों के नहीं।'[2]

[1] The political parties in the United States of America essentially differ in their aims and character from those in England and most other countries —*Cowel*

[2] Ordinarily our parties are parties of circumstances and not of principles —*Amerson*

(२) संगठन और दृष्टिकोण की दृष्टि से ब्रिटिश राजनीतिक दल राष्ट्रीय होते हैं और उनमें बहुत अधिक सुदृढ़ संगठन देखा जा सकता है, लेकिन अमरीकी राजनीतिक दलों में स्थानीयता की प्रवृत्ति प्रबल है। अमरीकी राजनीतिक दल केवल राष्ट्रपति के चुनाव के समय ही राष्ट्रीय रूप धारण करते हैं अन्यथा वस्तुतः वे स्थानीय और राज्य संगठन ही होते हैं।

(३) ब्रिटिश राजनीतिक दल अपने कठोर दलीय अनुशासन के लिए सुविख्यात हैं और ब्रिटिश राजनीति में दल के सदस्यों द्वारा दलीय अनुशासन की अवहेलना की घटनाएँ बहुत कम ही घटित होती हैं। लेकिन यह कठोर दलीय अनुशासन अमरीकी राजनीतिक दलों के लिए ऐसी ईर्ष्या की वस्तु है, जिसे उनके द्वारा कभी भी प्राप्त नहीं किया जा सका है। अमरीकी कांग्रेस के सदस्यों द्वारा अनेक बार अपने दल के नेता के आदेशों निर्देशों की अवहेलना की जाती रही है।

(४) सम्भवतया ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था का यह परिणाम है कि ब्रिटिश दल सदैव सक्रिय रहते हैं, लेकिन अमरीकी राजनीतिक दल राष्ट्रपति के चुनाव के समय ही सक्रिय रहते हैं। एक बार राष्ट्रपति का चुनाव हो जाने के बाद तीन वर्ष से भी अधिक अवधि तक वे निष्क्रिय बने रहते हैं।

(५) अमरीकी राजनीतिक दलों में दबाव ग्रुप (Pressure groups) बहुत अधिक सक्रिय है, लेकिन ब्रिटेन में ऐसा नहीं है।

(६) अमरीका में राजनीतिक दलों से ही सम्बन्धित एक लक्षण 'लूट की प्रणाली' (Spoils System) है जिसके द्वारा विजेता दल बहुत बड़ी संख्या में नागरिक सेवाओं से सम्बन्धित पद अपने ही राजनीतिक दल के समर्थकों को प्रदान करता है किन्तु ब्रिटिश राजनीतिक दलों और उनके व्यवहार में ऐसी किसी पद्धति को नहीं अपनाया गया है।

प्रश्न

१ अमरीकी संविधान में राजनीतिक दलों के कार्यकरण का वर्णन कीजिए। (कानपुर १९७१)

२ अमरीकी संविधान में राजनीतिक दलों ने उसके संचालन की दृष्टि से क्या योग दिया है? (राजस्थान, १९७२)

३ अमरीका में राजनीतिक दलों के कार्यों का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए। (जीवाजी, १९६९)

४ अमरीका तथा ब्रिटेन की दलबन्दी प्रथा की तुलना कीजिए और भेद बताइए। (जीवाजी, १९६७, विक्रम, १९६५ ६६)

1

स्विट्जरलैण्ड के संविधान का विकास और उसकी विशेषताएँ

(CONSTITUTIONAL DEVELOPMENT OF SWITZERLAND AND ITS CHARACTERISTICS)

'स्विटजरलण्ड अशान्ति के समुद्र मे शान्ति का द्वीप है।'[1]

—जान ब्राउन मसन

स्विस संवैधानिक व्यवस्था के अध्ययन का महत्व

लगभग ५० लाख जनसख्या और १६ हजार वर्गमील भूमि का देश स्विटजरलण्ड विश्व के सबसे छोटे स्वतन्त्र राज्यो म से एक है। लेकिन अपनी विशिष्ट राजनीतिक सस्थाओ के कारण स्विस संविधान और शासन व्यवस्था के अध्ययन का निश्चित रूप से बहुत अधिक महत्त्व है। साधारण व्यक्ति के लिए स्विटजरलैण्ड विश्व का सबसे प्रमुख प्राकृतिक सौन्दर्य स्थल, रैड क्रास का केन्द्र और प्रसिद्ध घडियो का निर्माण स्थल ही है लेकिन राजनीति विज्ञान के विद्यार्थी के लिए यह इससे बहुत अधिक है। यह प्रजातन्त्र का घर और विश्व की सबसे प्रमुख राजनीतिक प्रयोगशाला है। स्विट्जरलैण्ड के सवैधानिक महत्त्व का अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) विश्व का सर्वाधिक प्राचीन गणतन्त्र—स्विटजरलण्ड विश्व का सर्वाधिक प्राचीन गणतन्त्रीय राज्य है। सन् १८४८ के संविधान द्वारा जब स्विटजरलण्ड मे गणतन्त्र की स्थापना हुई, उस समय वह आधुनिक विश्व का अकेला गणतन्त्र था। १८४८ के पूर्व भी स्विटजरलण्ड मे उस प्रकार का राजतन्त्र नही रहा, जिस प्रकार का राजतन्त्र इगलण्ड, फ्रास या सोवियत रूस मे था। रैपार्ड इसी बात को दृष्टि मे रखते हुए लिखते हैं कि 'स्विटजरलैण्ड युगो से गणतन्त्र रहा

[1] A happy island in a sea of unrest
—John Brown Mason *Switzerland in Foreign Governments* p 388

है।[1] स्विस नागरिक न केवल वशानुगत राजा वरन् किसी एक निर्वाचित प्रधान को भी पूर्ण शक्ति प्रदान करने के विरुद्ध रहे हैं और इस गणतन्त्रीय भावना की अत्यधिक प्रबलता के कारण ही उनके द्वारा एकल कार्यपालिका के स्थान पर बहुल कार्यपालिका को अपनाया गया है। हेन्स हूबर ने लिखा है कि "राजतन्त्रीय ढग से सोचना स्विटजरलण्ड के निवासी के लिए एक विदेशी बात है। किसी शासक की शक्ति व सुविधाओं के लिए उसके हृदय मे कोई गुजाइश नहीं है, उसके लिए राज्य सब नागरिकों का मामला है उसका सचालन न तो वश परम्परागत आधार पर हो सकता है और न उसे किसी एक निर्वाचित व्यक्ति के ही सुपुर्द किया जा सकता है।'[2]

(२) **प्रजातन्त्र का आदर्श प्रतीक**—स्विस राजनीतिक व्यवस्था को महत्व प्रदान करने वाला दूसरा तत्त्व उसका प्रजातन्त्रात्मक लक्षण है। आधुनिक युग में स्विटजरलण्ड उसी प्रकार से प्रजातन्त्र का प्रतीक है जिस प्रकार प्राचीन विश्व में एथेन्स था। स्विस प्रजातन्त्र मे नागरिकों को राजनीतिक व्यवस्था मे भाग लेने की जितनी सीमा तक शक्ति प्रदान की गई है, उतनी सीमा तक अन्य किसी लोकतन्त्र में प्रदान नहीं की गयी है। ५ स्विस कण्टनो मे वर्तमान समय में प्रत्यक्ष लोकतन्त्र है और नागरिकों के द्वारा जन सभाओं मे कानूनों का निर्माण किया जाता है। लोक निर्णय और आरम्भक का स्विटजरलण्ड मे ही उदय हुआ और वर्तमान समय में भी इनका बहुत अधिक सीमा तक पालन किया जाता है। अत यह ठीक ही कहा गया है कि यदि ब्रिटेन ससदात्मक व्यवस्था का और अमरीका सघात्मक व्यवस्था का जनक है, तो स्विटजरलण्ड आधुनिक विश्व मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का घर होने का दावा कर सकता है।

(३) **विविधता मे एकता**—स्विटजरलण्ड ने विविधता के बीच एकता का भी एक आदर्श उदाहरण उपस्थित किया है। स्विटजरलण्ड में भाषा धर्म और सस्कृति के भेद पाये जाते हैं लेकिन इन भेदो के बावजूद राष्ट्रीय एकता की भावना बहुत अधिक प्रबल है। स्विटजरलण्ड में लगभग ७४ **प्रतिशत लोग** जर्मन, २० **प्रतिशत फ्रेंच** ५ **प्रतिशत इटलियन** और १ **प्रतिशत** रोमन भाषाभाषी हैं, लेकिन इस भाषा सम्बन्धी विविधता का हल इन सभी भाषाओं को राजभाषा का स्तर प्रदान कर निकाल लिया गया है। इसी प्रकार वहाँ लगभग ५८ प्रतिशत लोग प्रोटेस्टण्ट, ४० प्रतिशत रोमन कैथोलिक १ प्रतिशत यहूदी और १ प्रतिशत अन्य

1 Switzerland has been throughout the ages a Republic —*Rappard*

2 'Monarchistic ways of thinking are alien to the Swiss he has no understanding for the powers and privileges of a ruler for him the State is an affair of all citizens and its guidance is not to be hereditary nor it is to be entrusted to an elected individual —Hans Huber *How Switzerland is Governed*

है, लेकिन इन सभी ने धार्मिक सहिष्णुता और एक दूसरे के प्रति सम्मान को इतने गहरे रूप में अपना लिया है कि इन धार्मिक भेदों ने राष्ट्रीय एकता को शिथिल करने के बजाय सुदृढ़ ही किया है। भाषायी और धार्मिक भेदों के कारण फूट उत्पन्न न होने का एक कारण यह भी है कि वहाँ एक ही धर्म के अनुयायियों की भाषाएँ अनेक हैं और एक भाषा बोलने वाले लोग अनेक धर्मों के अनुयायी हैं। इसके अतिरिक्त कण्टनों की सीमाएँ भी धर्म तथा भाषा के क्षेत्रों की सीमाओं से भिन्न हैं। इन सबके कारण धर्म, भाषा और क्षेत्रीयता के भेद प्रबल नहीं हो सके हैं और बुअल के शब्दों में 'स्विटजरलैण्ड ने यह दिखा दिया है कि उन लोगों में भी घनिष्ट सहयोग की सम्भावना हो सकती है जो कभी राजनीतिक दृष्टि से परस्पर स्वतन्त्र थे तथा जो आज भाषा व धर्म के द्वारा व्यापक रूप से विभाजित हैं।'[1]

स्विटजरलैण्ड की विविधता में यह एकता भारत जैसे राज्यों के लिए तो एक उदाहरण है ही सुदूर भविष्य में एक विश्व राज्य की स्थापना के लिए भी यह एक आदर्श बन सकता है। जान ब्राउन मैसन ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि— 'भाषा तथा धर्म सम्बन्धी स्पष्ट विविधता के होते हुए भी जिस कोटि की राष्ट्रीय एकता स्विट्जरलैण्ड में पाई जाती है उसने अन्तरराष्ट्रीय मामलों के अनेक अध्ययनकर्ताओं का ध्यान आकर्षित किया है। उन्हें उससे यह प्रमाणित होने की आशा दिखाई देती है कि उन राष्ट्रों में भी उच्च कोटि का सहयोग सम्भव है जिनमें संस्कृति सम्बन्धी व्यापक भिन्नता पाई जाती हो तथा जिनमें स्वतन्त्रता की शक्तिशाली परम्परा चली आई हो।'[2]

(४) स्थायी तटस्थता—अन्तरराष्ट्रीय राजनीति की दृष्टि से भी स्विटजरलैण्ड की राजनीतिक व्यवस्था का अध्ययन महत्त्वपूर्ण है। वर्तमान समय में जबकि विश्व के विभिन्न राज्य एक दूसरे का विरोध करने में संलग्न हैं स्विटजरलैण्ड ने स्थायी तटस्थता को अपनाकर 'अशान्ति के समुद्र में बसने वाले सुखी द्वीप' की स्थिति कर ली है। सर्वप्रथम १८१५ की वियना कांग्रेस द्वारा स्विट्जरलैण्ड की स्थायी तटस्थता को मान्यता प्रदान की गई। १८१९ की वार्साय सन्धि और उसके बाद के

[1] 'Switzerland has demonstrated the possibility of close co operation between peoples who at one time were independent of each other politically and who today are widely divided by language and religion

—Buell and others *Democratic Government in Europe*, p 558

[2] Switzerland s remarkable degree of national unity despite pronounced linguistic and religious diversity has aroused interest of many students of international affairs They see in it a hopeful evidence that a high degree of co-operation is possible between nations of widely different cultures and strange traditions of independence

—John Brown Mason, *Foreign Governments*, p 320

अन्य अंतरराष्ट्रीय सम्मलनो मे स्विट्जरलण्ड ने सदा इस बात पर बल दिया कि स्विटजरलण्ड को स्थायी रूप से एक तटस्थ राज्य घोषित किया जाय और सभी राज्यो ने स्विटजरलण्ड की इस स्थिति का स्वीकार किया। प्रथम महायुद्ध और द्वितीय महायुद्ध मे स्विटजरलण्ड ने युद्धरत दोनो पक्षो के साथ समान सम्बंध बनाए रखे और हिटलर तथा मुसोलिनी ने भी उसकी तटस्थता को बना रहने दिया। इसी कारण स्विट्जरलण्ड के द्वारा सयुक्तराष्ट्र सघ की सदस्यता प्राप्त नही की गई है, क्योकि सघ की सदस्यता सदस्य राज्यो को आक्रमणकारी राज्य के विरुद्ध युद्ध करने का दायित्व सौपती है। स्विटजरलैण्ड सघ की आर्थिक, सामाजिक और मानवीय क्षेत्र म काय करने वाली एजेंसियो का सदस्य अवश्य ह।

इस सम्बन्ध मे हमारे द्वारा भारत की तटस्थता और स्विटजरलण्ड की तटस्थता मे अन्तर कर लिया जाना चाहिए। भारतीय तटस्थता का तात्पर्य शीतयुद्ध के दो पक्षो मे तटस्थता स ह और इस सही अर्थो मे 'असलग्नता की नीति (Policy of Non alignment) कहा जाना चाहिए। आधुनिक विश्व के अन्य तथाकथित तटस्थ राष्ट्रो की स्थिति भी यही है। लेकिन स्विटजरलण्ड अन्तरराष्ट्रीय कानून के अर्थो मे तटस्थ है और उसे विश्व के विभिन्न राज्यो क विवादो स कुछ भी लेना देना नही ह। अपनी इस तटस्थता के कारण स्विटजरलण्ड को अन्तरराष्ट्रीय राजनीति मे बहुत अधिक सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त है और इसी आधार पर इसने परस्पर विरोधी राज्यो क बीच सम्पर्क सूत्र का काय किया है।

अपनी स्थायी तटस्थता के बावजूद स्विट्जरलण्ड किसी भी आक्रमण स रक्षा क लिए तत्पर और सक्षम है।

(५) बहुल कायपालिका—सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि कायपालिका का सगठन एकल होना चाहिए, जिससे उसके द्वारा शासन व्यवस्था का सचालन कुशलता क साथ किया जा सके। भारत ब्रिटन और अमरीका आदि देशो म एकल कायपालिका ही है, लेकिन स्विटजरलण्ड म ७ सदस्यो की बहुल कायपालिका को अपनाया गया है। यह कायपालिका न तो पूर्ण अर्थो म ससदात्मक है और न ही अध्यक्षात्मक, वरन इसम दोनो के ही गुणो को ग्रहण करत हुए विश्व के सम्मुख एक नवीन उदाहरण उपस्थित किया गया है।

स्विट्जरलैण्ड का सवैधानिक विकास

वतमान स्विटजरलण्ड के निर्माण की प्रक्रिया और स्विटजरलण्ड के सवधानिक विकास का प्रारम्भ १२९१ मे समझा जा सकता है जबकि ऊरी, स्वज और अण्टरवाल्डेन द्वारा आत्मरक्षा हेतु एक राज्यमण्डल (League) की स्थापना की गई। इसके पूव वतमान स्विटजरलण्ड के क्षेत्र मे अलग-अलग कण्टन थ और उनके बीच कोई समन्वयकारी या एकीकृत सत्ता नही थी। इसके पूव य कण्टन आस्टिया के हप्सबग शासको के आधीन थे, लेकिन १२९१ म तीन कण्टनों न हप्सबग शासन स स्वतन्त्रता की घोषणा करते हुए एक राज्यमण्डल की स्थापना की।

हेप्सबग शासन द्वारा इन तीन कैण्टनो को पुन अपने आधीन लेने का प्रयत्न किया गया, लेकिन ये कैण्टन अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा करने मे सफल रहे। इससे प्रोत्साहित होकर अन्य कण्टन भी राज्यमण्डल की ओर प्रवृत्त हुए और १३५३ तक इस राज्यमण्डल मे ८ कण्टन शामिल हो गये। १६४८ तक इस राज्यमण्डल म १३ कण्टन शामिल हो गय जो सभी जमन भाषा भाषी थे। राज्यमण्डल की प्रतिष्ठा मे भी निरन्तर वृद्धि हुई और १६४८ को वेस्टफेलिया की सन्धि म इसे एक सम्प्रभु राज्य के रूप म मान्यता प्रदान की गई।

राज्यमण्डल की दुबलता—यद्यपि यह राज्यमण्डल बाहरी आक्रमणो के विरुद्ध अपने अस्तित्व को बनाये रखने मे सफल रहा था लेकिन राज्यमण्डल निश्चित रूप से बहुत अधिक दुबल था। राज्यमण्डल की अपनी कोई स्थायी केन्द्रीय सरकार नहीं थी। इसकी एकमात्र संस्था 'डायट (Diet) थी, जिसके समय समय पर सम्मेलन अवश्य होते थे और उसम राष्ट्रीय महत्त्व के प्रश्नो पर विचार होता था परन्तु जो कण्टन बहुमत निणय से असहमत हो उन पर व निणय लागू नही होते थे। प्रतिनिधि अपने कण्टनो द्वारा दिये गय आदेशो के अनुसार ही काय करते थे। न कोई सघीय कायपालिका थी न कोई सघीय सेना न कोई राष्ट्रीय नागरिकता थी और न कोई सघीय जनपदाधिकारी वग। इसके अतिरिक्त विभिन्न कण्टनो की शासन प्रणालियो मे प्रचुर विभिन्नता थी। ६ कण्टनो म प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र था, ३ कण्टनो म सीमित मताधिकार के साथ प्रतिनिध्यात्मक प्रजातन्त्र और शेष चार कण्टन कुलीनतन्त्रात्मक थे। धार्मिक मतभेदो के कारण १७१२ मे दूसरा गृहयुद्ध छिड गया, जिसने स्विस राज्यमण्डलो को बडा दुबल कर दिया। इसलिए अनेक इतिहासकारो का तो यहा तक मत है कि इस समय स्विस नाम की कोई वस्तु थी ही नही। ब्रुक्स का कहना है कि 'इस समय स्विटजरलण्ड का केन्द्रीय शासन 'राज्यमण्डल के विधान (Articles of Confederation) के अन्तगत सचालित सयुक्त राज्य अमरीका के केन्द्रीय शासन से भी अधिक शक्तिहीन था।'[1]

हेल्वेटिक गणतन्त्र की स्थापना (१७९८ १८१५)—इस स्थिति मे क्रान्तिकारी फ्रासीसी सेनाओ ने स्विटजरलण्ड पर आक्रमण कर राज्यमण्डल की निबलता को नितान्त स्पष्ट कर दिया। विजय के पश्चात् फ्रासीसी क्रान्तिकारियो ने पुराने राज्यमण्डल के स्थान पर नवीन गणतन्त्र की स्थापना की और इसे 'हेल्वेटिक गणतन्त्र' का नाम दिया गया। यह नवीन गणतन्त्र वास्तव म फ्रास का एक सरक्षित राज्य था और पेरिस मे एक नवीन संविधान बनाकर इस पर लाद दिया गया था। इस नवीन संविधान और उसके अन्तगत स्थापित की गई व्यवस्था के सबसे प्रमुख लक्षण एकात्मकता, केन्द्रीय सत्ता और सुदृढ नौकरशाही थी। यह नवीन व्यवस्था

[1] Robert Brooks, *Government and Politics of Switzerland*, p 34

स्विटजरलण्ड की मूल स्थानीयता की प्रवृत्ति के इतनी अधिक विरुद्ध थी कि इसका विरोध होना नितान्त स्वाभाविक था। शीघ्र ही लगभग समस्त स्विटजरलण्ड में इस व्यवस्था के विरुद्ध अशान्ति और विद्रोह फल गया।

स्विटजरलण्ड मे पुन शान्ति और व्यवस्था स्थापित करने के उद्देश्य से नपोलियन ने हस्तक्षेप किया और स्विटजरलण्ड के ६० प्रतिनिधियो को पेरिस बुला कर इन्ह फ्रासीसी परामर्शदाताओ की सहायता से स्विटजरलण्ड के लिए एक नवीन सविधान रचने का काय सौपा गया। १८०३ मे नपोलियन ने प्रसिद्ध 'एक्ट आफ मेडिएशन (Act of Mediation) की घोषणा की जिसने हल्वटिक गणतन्त्र का अन्त कर नवीन सविधान को कार्यान्वित कर दिया। इस नवीन सविधान के आधार पर बहुत कुछ अशो मे राज्यमण्डल की व्यवस्था को पुनर्जीवित कर दिया गया और कण्टनो को पर्याप्त सीमा तक स्वायत्तता प्रदान कर दी गई।

वियना काग्रेस और नवीन सविधान (१८१५–१८४८)—१८१३ मे नपोलियन की पराजय के पश्चात् यूरोप के सयुक्त राज्यो ने १८१४ म स्विस डायट को एक नया सविधान बनाने के लिए विवश किया। इस नवीन व्यवस्था को 'पक्ट आफ पेरिस (Pact of Paris) कहा जाता है और १८१५ की वियना काग्रेस ने इस नवनिर्मित सविधान को स्वीकार कर लिया। वियना काग्रेस ने जहा एक ओर स्विट्जरलैण्ड की आन्तरिक व्यवस्था निर्धारित की, वहा अन्तराष्ट्रीय राजनीति मे स्विटजरलण्ड की स्थायी तटस्थता की घोषणा कर इसकी वदेशिक स्थिति भी निर्धारित कर दी। वियना काग्रेस का यह निश्चित रूप से सर्वाधिक महत्त्वपूण काय था जिसे वतमान समय तक मान्यता प्राप्त है। इसी समय स्विस राज्यसघ की सदस्य सख्या २२ हो गई और यह जमन फ्रेन्च तथा इटालियन तीन भाषाओ से सम्बन्धित लोगो का बहु भाषा भाषी राज्य हो गया। पेरिस पक्ट को इस दृष्टि से प्रतिक्रियावादी कहा जाता है कि इसने स्थानीय स्वायत्तता को अत्यधिक महत्त्व दिया और सघीय शक्ति को दुबल कर दिया।

सघष और केन्द्रवादी शक्तियो की विजय—१८१५ नवीन व्यवस्था लागू किय जाने के बाद से ही कण्टनो क मध्य सवधानिक और धार्मिक मतभेद और उनके परिणामस्वरूप सघष प्रारम्भ हो गया। इस सघष म दो पक्ष थे—एक पक्ष सुधारवादी प्रोटस्टण्ट और दूसरा पक्ष प्रतिक्रियावादी कथोलिक कण्टना का। सुधारवादी पक्ष, जिस रेडीकल्स (Radicals) का नाम दिया गया अधिक एकात्मकता और केन्द्रीकरण का समथक था, लेकिन प्रतिक्रियावादी पक्ष, जिसे फेडरलिस्टस (Federalists) का नाम दिया गया, कण्टनो के लिए अधिकाधिक स्वायत्तता चाहता था। १८४७ म यह सघष अपने चरमोत्कर्ष पर पहुच गया जबकि ७ कथोलिक कण्टनो न राज्यमण्डल स पृथक होकर अपने लिए एक पृथक सघ सुन्दरबन्ड (Sunderbund) की स्थापना का प्रयत्न किया। १६ दिन (१० २६ नवम्बर १८४७)

के इस गृह युद्ध में राज्य संघ की सेनाओं ने कथोलिक कण्टनों की सेनाओं को पराजित कर दिया और केन्द्रवादी पक्ष की विजय हुई।

१८४८ का संविधान—युद्ध की समाप्ति पर संघीय डायट ने यह अनुभव किया कि केन्द्रीय सरकार पर्याप्त शक्तिशाली होनी चाहिए, जिससे वह बाहरी आक्रमणों का सामना तथा आन्तरिक क्षेत्र में शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने का कार्य सफलतापूर्वक कर सके। अतः तदनुसार शासन प्रणाली में परिवर्तन करने के लिए फरवरी १८४८ में १४ सदस्यों के एक आयोग की नियुक्ति की गई। लगभग ५० दिन (११ फरवरी—८ अप्रल, १८४८) के परिश्रम से इस आयोग ने संविधान का एक प्रारूप तैयार किया जिस पर ५ अगस्त से २ सितम्बर तक विभिन्न कण्टनों में लोकनिर्णय लिया गया। लोकनिर्णय में जनता द्वारा भारी बहुमत से स्वीकार किये जाने और २२ में से १५½ कैण्टनों द्वारा इसे स्वीकार कर लिए जाने पर नया संविधान १२ सितम्बर, १८४८ को लागू कर दिया गया। रपार्ड के शब्दों में—'इस संविधान ने लगभग साढ़े पाँच सदी से चले आ रहे कण्टनों के संघ को एक संघ राज्य के रूप में परिणत कर दिया।'[1]

१८७४ का पूर्ण संवैधानिक संशोधन—१८४८ में निर्मित संविधान के अन्तर्गत संविधान के पूर्ण संशोधन और आंशिक संशोधन की व्यवस्था की गई है। इस व्यवस्था के अन्तर्गत अब तक संविधान में ५७ संशोधन किये जा चुके हैं, लेकिन इसमें पूर्ण संशोधन १८७४ में ही किया गया और इसी का सर्वाधिक महत्त्व है। वर्तमान स्विस शासन प्रणाली का मूल आधार १८४८ में निर्मित और १८७४ में संशोधित किया गया संविधान ही है।

१८७४ के इस पूर्ण संशोधन (revision) में चार दिशाओं में परिवर्तन किये गये (१) शासन शक्ति का अधिकाधिक केन्द्रीकरण, (२) प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रवाद की दिशा में प्रगति, (३) आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में अधिकाधिक राजकीय हस्तक्षेप तथा (४) धार्मिक महन्तों की शक्ति पर प्रहार तथा समाप्ति। संविधान के इस पूर्ण संशोधन में १८४८ के संविधान की १४ धाराएँ बिल्कुल रद्द कर दी गयी, ४० संशोधित हुई तथा २१ नई धाराएँ अपनाई गई। यह संशोधित संविधान १९ अप्रल १८७४ को जनता तथा राज्यों के बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिया गया। यह संशोधित संविधान २९ मई १८७४ से प्रभावी हुआ। पूर्ण संशोधन का एक महत्त्वपूर्ण कार्य संघीय सरकार की समस्त सेना पर नागरिक सत्ता का पूर्ण आधिपत्य स्थापित करना था।

१८७४ के उपरान्त संवैधानिक विकास—१८७४ से लेकर अब तक संविधान में अनेक संशोधन हो चुके हैं। संशोधनों के परिणामस्वरूप संघीय सरकार

[1] The constitution transformed the league of Cantons . Switzerland had been for five centuries and a half into a f State —W E Rappard *The Governments of Switzerland*

की शक्तियो का और अधिक केन्द्रीकरण हुआ है और इन संशोधनो ने जीवन के आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रो मे शासन को और अधिक उत्तरदायित्व सौंपे है। इसके साथ ही कानून निर्माण मे लोक निर्णय को अपनाकर लोगो को कानून निर्माण मे और अधिक प्रत्यक्ष भाग प्रदान किया गया है। १९३५ मे एक आन्दोलन के माध्यम से माग की गई कि स्विटजरलण्ड के संविधान म पुन पूर्ण संशोधन होना चाहिए। इस आन्दोलन के समर्थक चाहते थे कि कण्टनो की शक्तियो म वृद्धि की जाये विधानमण्डलो के चुनाव 'व्यावसायिक प्रतिनिधित्व' (Occupational Representation) के सिद्धान्त के अनुसार हो और अन्ततोगत्वा स्विटजरलण्ड मे एक 'निगमनात्मक राज्य' (Corporate State) की स्थापना की जाय। किन्तु यह माग अस्वीकृत कर दी गई और वर्तमान समय मे स्विस संविधान मे पूर्ण संशोधन की कोई सम्भावना नही है।

स्विस संविधान की विशेषताएँ

स्विटजरलण्ड विश्व की सबसे प्रमुख राजनीतिक प्रयोगशाला है और उसका संविधान निश्चित रूप से बहुत अधिक मौलिक तथा विलक्षण है। संविधान की इन विशेषताओ ने ही इस छोटे से देश की सवैधानिक व्यवस्था के अध्ययन को बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण बना दिया है और समस्त विश्व म राजनीतिक अध्ययन के प्रति रुचि रखने वाले व्यक्ति इसका अध्ययन बहुत अधिक गम्भीरता के साथ करते हैं। स्विस संविधान की प्रमुख विशेषताओ का अध्ययन निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) निर्मित, लिखित और अपेक्षाकृत व्यापक संविधान—स्विटजरलण्ड का संविधान भारत, फ्रास और अमरीका आदि देशो के संविधानो की भाति एक निर्मित और लिखित संविधान है। इस संविधान का मूल प्रारूप १८४८ मे १४ सदस्यो के एक आयोग द्वारा तैयार किया गया था और इस मूल प्रारूप मे १८७४ में व्यापक परिवर्तन किये गये। संविधान को इस दृष्टि से लिखित कहा जा सकता है कि यद्यपि स्विस संविधान मे भी कुछ परम्पराएँ हैं और इसका निरन्तर विकास होता रहा है लेकिन शासन व्यवस्था का मूल ढाचा १८४८ म निर्मित और १८७४ मे संशोधित प्रलेख पर ही आधारित है।

स्विटजरलण्ड के संविधान म १२३ धाराएँ और ३ अध्याय हैं और संविधान के इस आधार की तुलना यदि अमरीकी संविधान म की जाय तो स्विस संविधान की व्यापकता नितान्त स्पष्ट हो जाती है। स्विस संविधान के इस अपेक्षाकृत बडे आकार के दो कारण हैं (१) इसमे अनेको ऐसे विषयो का उल्लेख किया गया है जिनका वास्तव मे कोई सवैधानिक महत्त्व नही है। उदाहरण के लिए मछली मारने शिकार खेलने व जुआ खेलने आदि विषयो का भी संविधान मे उल्लेख किया गया है, और (२) इसमें संघीय सरकार के अधिकारो तथा संघीय व कण्टनो की सरकारो के बीच विधायी तथा प्रशासकीय अधिकार क्षेत्र के विभाजन का वर्णन अत्यधिक विस्तार से

किया गया है। फलस्वरूप स्विटजरलैण्ड उन सवधानिक विवादो से लगभग मुक्त रहा, जिनके कारण सयुक्त राज्य अमरीका मे यायपालिका इतनी शक्तिशाली हो गई है।

(२) कठोर सविधान (Rigid Constitution)—स्विस सविधान एक कठोर सविधान है अर्थात् उसमे सशोधन करने के लिए सामान्य कानून के निर्माण की प्रक्रिया से भिन्न एक विशेष प्रक्रिया को अपनाना होता है। सघात्मक शासन व्यवस्था को अपनाये जाने के कारण सविधान का कठोर होना आवश्यक भी था। व्यवहार के अन्तगत यद्यपि सशोधन की प्रक्रिया भारत की व्यवस्था से अधिक जटिल है, परन्तु अमरीका की तुलना मे निश्चित रूप से कम कठोर है। स्विस सविधान म १२५ वर्षो मे ५७ सशोधन हो चुके हैं, जबकि अमरीकी सविधान मे १८५ वर्षों मे २३ सशोधन ही हुए हैं।

सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया

स्विस सविधान कठोर है, इसम न केवल साधारण कानून निर्माण की प्रक्रिया से परिवतन नही किया जा सकता, वरन ऐसी व्यवस्था की गई है कि इसम कण्टनो और स्विस सघ की जनता की सहमति के बिना भी परिवतन नही किया जा सकता। स्विस सविधान मे दो प्रकार के सशोधन किये जा सकते हैं—पूण सशोधन और आशिक सशोधन और इन दोना प्रकार के सशोधनो की प्रक्रिया मे कुछ अन्तर है। सशोधन प्रक्रिया के दो चरण हैं—प्रथम सशोधन प्रस्ताव की प्रस्तावना या उसका आरम्भ और द्वितीय सशोधन का पुष्टीकरण। ये दोना चरण इस प्रकार हैं

सविधान के पूण सशोधन का आरम्भ—पूण सशोधन का तात्पय सविधान की पूरी व्यवस्था पर पुनर्विचार से है। इससे सम्बन्धित व्यवस्था सविधान की धारा २० म दी गई है। स्विटजरलण्ड के अन्तगत सविधान मे सशोधन प्रस्तावित करने के विषय म सघीय व्यवस्थापिका (सघीय सभा), सघीय कायपालिका (सघीय परिषद) और सघ की जनता तीनो को अधिकार प्रदान किया गया है। सविधान म सशोधन का प्रस्ताव सघीय सभा के किसी सदन द्वारा या सघीय परिषद द्वारा या ५० हजार पजीकृत मतदाताओ के द्वारा प्रस्तुत किया जा सकता है। यह प्रस्ताव दो परिस्थितियो में लोक निणय के लिए भेजा जाता है। प्रथम, यदि प्रस्ताव सघीय सभा के किसी सदन या सघीय परिषद द्वारा प्रस्तावित किया गया है और उसके सम्बन्ध म दोना सदनो म मतभेद है। द्वितीय, यदि सशोधन का प्रस्ताव ५० हजार मतदाताओ द्वारा प्रस्तावित किया गया है तो इसे लोक निणय के लिए भेजा जायगा। यदि सशोधन प्रस्ताव सघीय परिषद द्वारा या सघीय सभा के किसी एक सदन द्वारा प्रस्तावित किया गया है और उस प्रस्ताव की स्वीकृति या अस्वीकृति के सम्बन्ध म दोनों सदनो का एक ही विचार है, तो प्रस्ताव लोक निणय के लिए नहीं भेजा जाता है।

जिन दो परिस्थितियो मे प्रस्ताव लोक निणय के लिए भेजा जाता है उनमें जनता को यह निणय करने का अवसर दिया जाता है कि सविधान में पूण सशोधन किया जाय या नही। यदि मतदाताओ के बहुमत द्वारा निणय किया जाय कि सविधान मे पूण सशोधन किया जाना चाहिए तो फिर सघीय व्यवस्थापिका के दोना सदनो का नवीन निर्वाचन कराया जाता है और नवीन सिरे से निर्वाचित व्यवस्थापिका सविधान म पूण सशोधन का काय करती है।

सविधान के आशिक सशोधन का प्रारम्भ—आशिक सशोधन का तात्पय सविधान की किसी एक या कुछ विशेष धाराओ मे ही सशोधन से है। आशिक सशोधन का प्रारम्भ सघीय सभा के किसी एक सदन द्वारा सघीय परिषद द्वारा या ५० हजार मतदाताओ द्वारा किया जा सकता है। यदि यह प्रस्ताव सघीय सभा के एक सदन द्वारा या सघीय परिषद द्वारा प्रस्तावित किया गया है और इस पर दोनो सदनो म मतभेद है, तो इस प्रस्ताव पर लोकनिणय किया जाता है।

५० हजार मतदाताओ द्वारा आशिक सशोधन की प्रस्तावना 'सवि यासित आरभक' (Formulated Initiative) या अवि यासित आरभक' (Unformulated Initiative) क रूप म की जा सकती है। सवि यासित आरभक का तात्पय है कि जनता सविधान म सम्बधित सशोधन का प्रस्ताव स्वय तयार कर सघीय सभा के सम्मुख प्रस्तुत कर। अवि यासित आरभक का तात्पय यह है कि जनता एक विशेष प्रकार के सवधानिक सशोधन के विषय मे अपनी इच्छा व्यक्त कर दे और सम्बधित विधेयक तयार करने का काय सघीय सभा के द्वितीय सदन राज्य परिषद पर छोड द। यदि जनता द्वारा अवि यासित आरभक क रूप म प्रस्ताव किया गया है और सघीय सभा सशोधन सम्ब धी जनता की माग को मोट रूप से स्वीकार कर लेती है तो राज्य सभा सशोधन का प्रारूप तयार करती है, पर यदि सघीय सभा लोगो की माग को अस्वीकार कर देती है तो इस बात का निणय लोक-निणय के आधार पर किया जाता है कि प्रस्तावित आशिक सशोधन किया जाना चाहिए या नही।

आशिक सशोधन की माँग जब सम्बधित विधयक के साथ अर्थात् निर्मित या सवि यासित आरभक के रूप मे की जाती है तो सघीय सभा के लिए यह जरूरी है कि वह उस जनता की स्वीकृति के लिए रख, चाहे वह उसम सहमत हो या असहमत। यदि सघीय सभा इस प्रस्ताव मे असहमत है तो वह प्रस्ताव जनता के समक्ष लोक निणय के लिए रखते हुए यह सिफारिश कर सकती है कि जनता उस अस्वीकार कर। सघीय सभा एक वकल्पिक प्रस्ताव (Counter Proposal) भी तयार कर सकती है और उसके द्वारा जनता के प्रस्ताव के साथ साथ अपना प्रस्ताव भी लोक निणय के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। जनता द्वारा जिस विधयक या प्रस्ताव को बहुमत स स्वीकार किया जाय, वह प्रस्तावित हो जाता है।

संशोधन का पुष्टीकरण (Ratification)—संशोधन प्रक्रिया का दूसरा चरण संशोधन की पुष्टि का है और चाहे पूर्ण संशोधन का प्रस्ताव हो या आंशिक संशोधन का, संशोधन के पुष्टीकरण हेतु एक ही प्रक्रिया अपनाई जाती है। संशोधन की पुष्टि हेतु प्रस्ताव को लोक निर्णय के लिए रखा जाता है। संशोधन तभी पारित समझा जाता है जबकि कण्टनों के बहुमत तथा स्विस संघ की जनता के बहुमत द्वारा उसे स्वीकार कर लिया जाय। कैण्टनों के बहुमत का निर्णय करने में पूरे कैण्टन का मत एक व अर्द्ध कैण्टन का मत आधा गिना जाता है। इस प्रकार संशोधन पारित समझे जाने के लिए यह आवश्यक है कि कम से कम ११½ कैण्टनों द्वारा और जनता के बहुमत द्वारा उसे स्वीकार किया जाय। जनता के बहुमत और कैण्टनों के बहुमत द्वारा स्वीकार कर लिए जाने पर संविधान में सम्बन्धित संशोधन हो जाता है।

संशोधन प्रक्रिया की उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि संशोधन की प्रक्रिया पर्याप्त जटिल है लेकिन फिर भी इस प्रक्रिया के कारण संवैधानिक विकास में कोई बाधा नहीं पहुंची है। स्विटजरलैण्ड में न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था नहीं है और अब तक जो भी संवैधानिक विकास हुआ, वह औपचारिक संशोधनों के आधार पर ही हुआ है। अब तक स्विटजरलैण्ड के संविधान में एक बार १८७४ में पूर्ण संशोधन और ५७ आंशिक संशोधन हो चुके हैं। संशोधन प्रक्रिया की श्रेष्ठता का एक विशेष लक्षण यह है कि यह अत्यधिक लोकतन्त्रीय है। स्विस जनता को संशोधन की प्रस्तावना या पुष्टि के सम्बन्ध में जिस प्रकार की शक्ति प्रदान की गई है, वैसी शक्ति अन्य किसी संविधान द्वारा अपनी जनता को प्रदान नहीं की गई है।

अमरीकी संविधान की संशोधन प्रक्रिया से तुलना

अमरीका और स्विटजरलैण्ड इन दोनों ही देशों के संविधान कठोर हैं। इसके साथ ही इन दोनों देशों में संशोधन प्रक्रिया के दो चरण हैं—संशोधन की प्रस्तावना और संशोधन की पुष्टि। लेकिन अन्य विस्तार की बातों में इन दोनों देशों के संविधानों की संशोधन प्रक्रिया में अन्तर है, जो इस प्रकार हैं

(१) स्विस पद्धति में पूर्ण संवैधानिक संशोधन और आंशिक संवैधानिक संशोधन में भेद किया गया है, लेकिन अमरीकी संविधान की संशोधन प्रक्रिया में इस प्रकार का कोई भेद नहीं है।

(२) स्विटजरलैण्ड में जनता के द्वारा संविधान में संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तावित किया जा सकता है और संशोधन प्रस्ताव तभी पारित होता है, जबकि जनता के बहुमत द्वारा उसे स्वीकृति प्रदान कर दी जाय। लेकिन अमरीका भारत, सोवियत रूस या अन्य देशों में जनता को संवैधानिक संशोधन की प्रस्तावना का अधिकार नहीं दिया गया है। इन देशों में संवैधानिक संशोधनों की पुष्टि के लिए लोकनिर्णय की भी व्यवस्था नहीं है। इस प्रकार स्विस संविधान में संशोधन की प्रक्रिया अमरीका या अन्य किसी भी संविधान की तुलना में अधिक लोकतन्त्रीय है।

(३) स्विटजरलण्ड मे कार्यपालिका द्वारा सशोधन प्रस्तावित किये जाने की व्यवस्था है लेकिन अमरीका या अन्य देशो मे ऐसा नही है।

(४) अमरीका मे सघ की इकाइयो को सविधान मे सशोधन प्रस्तावित करने का अधिकार है, लेकिन स्विस सघ के कण्टनो को सविधान म सशोधन प्रस्तावित करने का अधिकार नही है।

(५) स्विटजरलण्ड और अमरीका, इन दोना ही देशा के सविधान कठोर है लेकिन अमरीकी सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया स्विस सविधान म सशोधन की प्रक्रिया से निश्चित रूप म अधिक जटिल है। अमरीका म काग्रेस के दोना सदनो द्वारा दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित किये जाने पर ही सवधानिक सशोधन प्रस्तावित होता है और तीन चौथाई इकाइयो के विधान मण्डलो या तीन चौथाई इकाइया के सविधान सशोधन सम्मेलना द्वारा पारित किये जाने पर सशोधन प्रस्ताव की पुष्टि होती है लेकिन स्विटजरलण्ड मे इस सम्बन्ध मे सघीय सभा के दोनो सदनो के बहुमत कण्टनो के बहुमत और जनता के बहुमत की ही आवश्यकता है, इनम से किसी के द्वारा भी दो तिहाई तीन चौथाई या इस प्रकार के किसी विशेष बहुमत से प्रस्ताव पारित किये जाने की आवश्यकता नही है। इस प्रकार स्विस पद्धति अपक्षाकृत सरल है। अमरीका के १८५ वर्षों के सवधानिक इतिहास म २३ सशोधन ही हुए हैं, स्विटजरलैण्ड के १२५ वर्षों के सवधानिक इतिहास म ८७ सशोधन हुए हैं। अमरीका मे न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था होने के कारण सवधानिक विकास का एक छोटा अश औपचारिक सशोधनो से, लेकिन एक बडा अश न्यायिक व्याख्याओ से सम्पन्न हुआ है। स्विटजरलण्ड मे न्यायिक पुनर्विलोकन की कोई व्यवस्था नही है और सवधानिक विकास का समस्त काय औपचारिक सशोधनो से ही सम्पन्न हुआ है।

(३) प्राचीनतम गणराज्य—स्विटजरलण्ड का गणराज्य विश्व का सबसे पुराना है। १८७० तक सान मरिनो तथा हसा टाउन जसे दो कम महत्त्वपूर्ण राज्यो के अतिरिक्त स्विटजरलैण्ड ही यूरोप का एकमात्र गणराज्य था। यूरोप और एशिया के प्राय सभी देशो मे जब स्वेच्छाचारी और निरकुश राजाओ का शासन था, उस समय भी स्विटजरलण्ड के समस्त कण्टनो मे लोकतन्त्रात्मक गणराज्य स्थापित था, और वहाँ की जनता को पर्याप्त अधिकार प्राप्त थे, जिनके आधार पर वह शासन तथा शासनाधिकारियो पर पर्याप्त नियन्त्रण रखती थी। वहा किसी भी समय राजतन्त्र नही रहा। रैपाड का कहना है कि स्विटजरलण्ड युगों से गणतन्त्र रहा है।'

(४) प्रत्यक्ष लोकतन्त्र और उसके साधन—स्विस सविधान के द्वारा लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था को सर्वाधिक श्रेष्ठ रूप म अपनाया गया है। वर्तमान समय म विश्व के अन्य राज्यो मे जब प्रत्यक्ष लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था को अव्यवाहारिक मानकर छोड दिया गया है तब भी स्विटजरलण्ड के एक पूर्ण कण्टन ग्लेरस) और चार अर्द्ध-कण्टनो (ओब वाल्डेन निड वाल्डेन, इनर अपेनजेल और

आउटर अपेनजेल) में प्रत्यक्ष लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था विद्यमान है और इन कण्टनों में मतदाताओं की सभाओं 'लण्डसजीमाइण्ड (Landsgiemiende) के द्वारा कानून निर्माण का काय किया जाता है। इसके अतिरिक्त स्विटजरलैण्ड में संघीय स्तर और कैण्टनों के स्तर पर लोकनिर्णय और आरम्भक की प्रत्यक्ष लोकतन्त्रात्मक पद्धतियों को सफलता के साथ अपनाया गया है। इस प्रकार स्विट्जरलैण्ड को लोकतन्त्र का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण कहा जा सकता है। ब्राइस का कथन है कि—"वर्तमान लोकतन्त्रीय राज्यों में जो कि वास्तविक लोकतन्त्र हैं, अध्ययन की दृष्टि से स्विटजरलैण्ड का दावा सबसे बडा है। यह सबसे पुराना लोकतन्त्र है क्योंकि इसमें वे समुदाय है जिनमे लोकप्रिय शासन उस समय से चला आ रहा है जब संसार के किसी भी अन्य भाग में लोकतन्त्र का नाम नहीं था। इसने लोकतन्त्रीय सिद्धान्तों का विकास किया है और यूरोप के किसी अन्य राज्य की अपेक्षा उन्हें अधिक दृढता से लागू किया है।'[1] जुचर के शब्दों में— पिछले वर्षों में स्विटजरलैण्ड तथा लोकतन्त्र प्राय समान अर्थों वाले बन गये हैं।'[2] १९७० तक स्विस लोकतन्त्र की एक विलक्षण बात यह थी कि महिलाओं को मताधिकार से वंचित रखा गया था लेकिन ८ फरवरी, १९७१ से महिलाओं को मताधिकार दे दिया गया है और अब २० वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक स्त्री पुरुष को यह अधिकार प्राप्त है।

(५) संघात्मक शासन व्यवस्था—यद्यपि संविधान में स्विटजरलैण्ड को एक 'राज्यमण्डल' (Confederation) कहा गया है किन्तु वास्तव में स्विटजरलैण्ड एक राज्यमण्डल न होकर संघ राज्य (Federation) ही है। स्विस संविधान में संघात्मक शासन के सभी प्रमुख लक्षणों—लिखित और कठोर संविधान, संविधान द्वारा केन्द्र और इकाइयों में शक्तियों का विभाजन संघीय न्यायपालिका, राज्यों की नागरिकता और संघीय व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन में सभी इकाइयों का समान प्रतिनिधित्व आदि—की व्यवस्था की गयी है।

स्विस संघ में १९ पूर्ण कैण्टन तथा ६ अर्द्ध कण्टन इस प्रकार २२ कण्टन या राज्य हैं। पूर्ण कण्टन और अर्द्ध कण्टन में दो बातों की दृष्टि से भेद किया गया है। जहाँ प्रत्येक पूर्ण कण्टन को राज्यसभा में २ प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है, वहाँ

[1] Among the modern democracies which are true democracies Switzerland has the highest claim to be studied It is the oldest for it contains communities in which popular government dates back farther than it does anywhere else in the world and it has pushed democratic doctrines farther and would apply them out more consistently than any other European State

—*Bryce Modern Democracies*, Vol I, p 367

[2] Switzerland and democracy have, in recent years become almost synonymous

—Arnold J Zurcher, *The Political System of Switzerland* p 984

अद्ध कण्टन को केवल एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। दूसरा भेद यह है कि संवैधानिक संशोधन के समय जहाँ पूर्ण कण्टन का मत १ गिना जाता है वहाँ अद्ध कण्टन का मत आधा गिना जाता है। संविधान के द्वारा केन्द्र और कण्टनों की सरकारों में शक्तियों का विभाजन अमरीकी पद्धति के आधार पर ही किया गया है। संविधान में संघ की शक्तियों का वर्णन कर दिया गया है और शेष शक्तियाँ कण्टनों की सरकारों को दी गई हैं। कण्टनों को अपना अलग संविधान बनाने का अधिकार है, परन्तु उनका संविधान स्विस संविधान के अनुरूप ही होना चाहिए और प्रत्येक कण्टन के लिए गणतन्त्रीय शासन प्रणाली को अपनाना आवश्यक है। यद्यपि संघीय न्यायपालिका को संघीय क्षेत्र में न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्राप्त नहीं है, लेकिन अन्य सभी लक्षणों के विद्यमान होने के कारण इसे एक संघ राज्य कहा जा सकता है।

(६) उदारवादी दर्शन पर आधारित संविधान—वर्तमान समय में इंगलैण्ड, अमरीका आदि देशों के संविधान उदारवादी या व्यक्तिवादी दर्शन पर आधारित हैं तो सोवियत रूस या चीन आदि देशों के संविधान समाजवादी दर्शन पर। स्विटजरलैण्ड के संविधान पर उदारवादी दर्शन का ही प्रभाव है। संविधान का मूल दर्शन यही है कि जीवन के सभी क्षेत्रों में नागरिकों को अधिकतम सम्भव सीमा तक स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए और राज्य के द्वारा कम से कम हस्तक्षेप किया जाना चाहिए। यद्यपि वर्तमान समय में स्विटजरलैण्ड में भी राज्य के कार्यक्षेत्र के सम्बन्ध में लोककल्याणकारी प्रवृत्तियों का विकास हो रहा है, लेकिन मूल विचार यही है कि नागरिकों को आर्थिक क्षेत्र में अधिकाधिक स्वतन्त्रता प्राप्त होनी चाहिए।

(७) संसदात्मक और अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्थाओं का समन्वय—सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि प्रजातन्त्र में या तो ब्रिटेन जैसी संसदात्मक व्यवस्था को अपनाया जा सकता है या अमरीका जैसी अध्यक्षात्मक व्यवस्था को, लेकिन स्विटजरलैण्ड की शासन व्यवस्था एक अपवाद है क्योंकि यह न तो पूर्णतया संसदात्मक सिद्धान्तों के अनुकूल है और न ही अध्यक्षात्मक सिद्धान्तों के। स्विटजरलैण्ड में व्यवस्थापिका (संघीय सभा) और कार्यपालिका (संघीय परिषद्) परस्पर सम्बन्धित हैं, लेकिन इंगलैण्ड के समान कार्यपालिका व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं है और व्यवस्थापिका कार्यपालिका को पदच्युत नहीं कर सकती। इसे अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था नहीं कहा जा सकता क्योंकि इसमें अमरीकी संविधान के समान शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है। स्विस संविधान द्वारा संसदात्मक और अध्यक्षात्मक दोनों ही प्रकार की शासन व्यवस्था के मूल गुणों को ग्रहण कर एक नवीन शासन-व्यवस्था को जन्म दिया गया है।

(८) बहुल कार्यपालिका—सामान्य विचार यही है कि कार्यपालिका संगठन की दृष्टि से एकल होनी चाहिए, जिससे उसके द्वारा शासन व्यवस्था के संचालन का कार्य कुशलतापूर्वक किया जा सके। किन्तु स्विटजरलैण्ड में कार्यपालिका शक्ति ७

सदस्यो को एक सघीय परिषद् को प्रदान की गयी है और सघीय परिषद के इन सातो सदस्यो की शक्तियाँ बिल्कुल समान हैं। इसी आधार पर इसे बहुल कार्यपालिका (Plural Executive) कहा जाता है और स्विटजरलण्ड मे यह बहुल कार्यपालिका सफलता के साथ कार्य कर रही है। इस प्रकार की बहुल कार्यपालिका का एकमात्र अन्य उदाहरण सोवियत सघ की 'प्रेजीडियम' है लेकिन सोवियत सघ और स्विटजरलैण्ड की शासन व्यवस्था मे आधारभूत अन्तर है। बहुल कार्यपालिका इस बात की प्रतीक है कि स्विटजरलण्ड मे प्रजातन्त्रीय और गणतन्त्रीय भावना बहुत गहरी उतरी हुई है।

(६) औपचारिक अधिकार पत्र का अभाव—स्विटजरलण्ड के सविधान मे इस प्रकार का कोई औपचारिक अधिकार पत्र नही है, जिस प्रकार का अधिकार-पत्र भारत अमरीका या अन्य कुछ देशो के सविधान मे है। परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि स्विटजरलण्ड के लोगो को कोई अधिकार प्राप्त नहीं है। सविधान की विभिन्न धाराओ द्वारा नागरिको को अधिकार प्रदान किये गये हैं [illegible] से कुछ इस प्रकार है। धारा २७ नागरिको को धर्मनिरपेक्षता के साथ [illegible] शिक्षा का अधिकार प्रदान करती है और धारा ४६ धर्म व पूजा की [illegible]। धारा ३१ व्यापार-व्यवसाय का अधिकार प्रदान करती है और धारा ५५ [illegible] प्रकाशन की स्वतन्त्रता का अधिकार। धारा ५६ स्वतन्त्रतापूर्वक [illegible] अधिकार प्रदान करती है और धारा ६० के अनुसार स्विस नागरिको को [illegible] पूर्वक किसी भी कैण्टन मे रहने का अधिकार प्राप्त है। [illegible] सविधान की धारा ४ समानता का अधिकार प्रदान करती है [illegible] निश्चित रूप से सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

कैथोलिक चर्च) और उससे सम्बन्धित संस्थाओं पर प्रतिबंध लगा दिया गया है।[1]

(११) संघीय क्षेत्र में न्यायिक पुनर्विलोकन का अभाव—संघात्मक शासन व्यवस्था में सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि संघीय न्यायपालिका को संविधान की व्याख्या करने और रक्षा करने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि संघीय न्यायपालिका संघीय और इकाइयों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा निर्मित कानूनों की संवैधानिकता की जाँच करे और यदि वह उन्हें संविधान के प्रतिकूल समझती है, तो अवैध घोषित कर दे। इसी को 'न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार' कहा जाता है। लेकिन स्विटजरलैण्ड की संघीय न्यायपालिका को न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार आंशिक रूप में ही प्राप्त है। वहाँ का सर्वोच्च न्यायालय जिसे 'संघीय न्यायमण्डल (Federal Tribunal) कहा जाता है, कैण्टन के कानूनों तथा प्रशासनिक कार्यों को तो अवैध घोषित कर सकता है, परन्तु संघीय व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानूनों या संघीय प्रशासन द्वारा किये गये कार्यों को न्यायमण्डल द्वारा अवैध घोषित नहीं किया जा सकता है। स्विटजरलैण्ड में संविधान की रक्षा करने का कार्य न्यायपालिका को नहीं सौंपा गया है। वहाँ यह कार्य स्वयं जनता द्वारा किया जाता है और जनता लोकनिर्णय के अन्तर्गत संघीय व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित किसी भी कानून को अवैध घोषित कर सकती है। स्विटजरलैण्ड में भी संघीय न्यायपालिका को न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार देने के सम्बन्ध में १९३९ में प्रयत्न किया गया था, परन्तु जनता ने उसे अस्वीकार कर दिया।

(१२) बहु भाषाभाषी राज्य—सामान्यतया विविध भाषाओं वाले देश में भी किसी एक भाषा को राजभाषा का स्तर प्रदान किया जाता है और इसके पीछे यह भावना होती है कि किसी एक ही भाषा को राजकाज की भाषा के रूप में अपनाकर राष्ट्रीय एकता के लक्ष्य को अधिक अच्छे रूप में प्राप्त किया जा सकता। लेकिन स्विटजरलैण्ड में भाषायी विविधता की समस्या को दूसरे रूप में हल किया गया है। स्विटजरलैण्ड में लगभग ७४ प्रतिशत लोग जर्मन, २० प्रतिशत फ्रेंच और ५ प्रतिशत इटैलियन भाषाभाषी हैं। इसके अतिरिक्त १ प्रतिशत व्यक्ति रोमांच नामक आदि भाषा का प्रयोग करते हैं। स्विटजरलैण्ड में प्रारम्भ से ही समस्त राज्य कार्य जर्मन, फ्रेंच और इटलियन तीनों भाषाओं में होता था, १९३८ के संवैधानिक संशोधन से रोमांच (Romanch) नामक आदि भाषा को भी राजभाषा मान लिया गया है। इस प्रकार स्विटजरलैण्ड बहुभाषा-भाषी राज्य है। भारत की तुलना में १ प्रतिशत जनसंख्या वाले इस राज्य द्वारा ४ भाषाओं को राज्य कार्य

[1] 'The order of Jesuits and societies affiliated with it may not be admitted in any part of Switzerland and all activities in Church and school are forbidden to their members

—*Article 51 of Swiss Constitution*

की भाषा के रूप म अपनाना सविधान और शासन की विशेषता तो है ही, यह उनके व्यावहारिक दृष्टिकोण का भी प्रतीक है।

प्रश्न

१ स्विटजरलण्ड के सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया का वणन कीजिए।
(आगरा, १९६५, ७१, कानपुर, १९६८)

२ सयुक्त राज्य अमरीका और स्विटजरलैण्ड के सविधान मे सशोधन की प्रक्रिया का तुलनात्मक वणन कीजिए।
(विक्रम, १९६९, ७१, लखनऊ, १९६३, ६६, ६८)

३ स्विस सविधान के मुख्य लक्षणो की विवेचना कीजिए।
(जीवाजी, १९६९, विक्रम, १९७२, आगरा, १९७३)

४ "वतमान लोकतन्त्रीय राज्यो मे, जो वास्तव मे लोकतन्त्र हैं, अध्ययन की दृष्टि से स्विट्जरलण्ड का दावा सबसे बडा है।" (ब्राइस) व्याख्या कीजिए और बतलाइए कि स्विटजरलण्ड के सविधान मे ऐसी कौनसी बातें हैं, जिनके आधार पर ब्राइस ने यह विचार व्यक्त किया।

2

स्विट्जरलैण्ड की सघीय व्यवस्था
(FEDERAL SYSTEM OF SWITZERLAND)

"स्विटजरलैण्ड की एक सघीय शासन व्यवस्था है और मूल रूप से यह जर्मन साम्राज्य व अमरीका के सघ जैसी है।"[1] —ब्रूक्स

यद्यपि स्विटजरलैण्ड क्षेत्र और जनसख्या की दृष्टि से एक छोटा राज्य है, लेकिन यह छोटा राज्य विविधताओ से उतना ही परिपूर्ण है, जितना कि सयुक्त राज्य अमरीका, भारत या सोवियत सघ हैं। इसी कारण स्विटजरलैण्ड मे भी अमरीका, भारत आदि देशो की भाति सघात्मक व्यवस्था को ही अपनाया गया है। जुचर के शब्दो मे 'सघवाद वह मूल वैधानिक सिद्धान्त है जिस पर स्विटजरलण्ड का शासन आधारित है।'[2]

स्विट्जरलण्ड, एक राज्य मण्डल नहीं, वरन् एक सघ राज्य
(Switzerland, a Federation, not a Confederation)

स्विस सविधान के प्रथम अनुच्छेद मे कहा गया है कि 'स्विस राज्यमण्डल २२ सम्प्रभुत्व सम्पन्न कण्टनों से मिलकर बना है।'[3] सविधान की इस भाषा के आधार पर कुछ लोगो का मत है कि स्विटजरलण्ड एक राज्यमण्डल है सघराज्य

1 Switzerland is a federal government and thus is fundamentally similar to the German Empire and the American Federation —*Brooks*

2 'Federalism is the basic constitutional doctrine upon which the government of Switzerland is now posited —*Zurcher*

3 'The people of the twentytwo sovereign Cantons united by the present alliance that is to say Zurich Berne Lucern Uri Schwyz, Unterwalden (Obwald and Nidwald) Glarns Zug Fribourg Solothern Basle (Town and country) Schaffahausen Appengell (The two Rhodes) St Gall Grisons Aargan Thurgan Ticino Vand Talais Neuchatel and Geneva comprise the Swiss Confederation —*Article I*

नही। उनका कथन है कि सविधान मे कण्टनो को सम्प्रभुतासम्पन्न कहा गया है और सम्प्रभु इकाइया एक राज्यमण्डल को ही जन्म दे सकती हैं, सघ राज्य को नही। उनका द्वितीय तर्क यह है कि १८४८ की जिस व्यवस्था के आधार पर इसका गठन हुआ है वह एक सन्धि मात्र है, सविधान नही और सन्धि एक राज्यमण्डल को ही जन्म दे सकती है, सघ राज्य को नही।

किन्तु वास्तविकता यह है कि स्विटजरलण्ड एक सघ राज्य है, राज्यमण्डल नही। राज्यमण्डल का अर्थ राज्यो के उस ढीलेढाले सघ से होता है, जिसमे सशक्त केन्द्रीय सत्ता का अभाव हो और जिसमे इकाइयो को केन्द्र से सम्बन्ध विच्छेद करने की स्वतन्त्रता हो। लेकिन स्विट्जरलण्ड म केन्द्रीय सत्ता पर्याप्त शक्तिशाली है और कैण्टनो को सघ से सम्बन्ध विच्छेद करने का अधिकार प्राप्त नही है। यह कहना भी उचित नही है कि १८४८ मे लिखित प्रलेख के रूप मे की गयी व्यवस्था एक सन्धि या गठबन्धन मात्र था। वास्तव म यह सविधान के सभी अर्थों मे एक सविधान है। वस्तुत जसा वाल्टर ने कहा है—'सन् १८४८ के लोगो की भी राय थी कि वे सविधान बना रहे थे और अब भी साधारण लोगों का ऐसा ही विश्वास है।'[1]

वास्तव म, स्विट्जरलण्ड के लिए राज्यमण्डल शब्द भ्रमात्मक है और यह एक सघ राज्य है। स्विस सविधान के सघवादी तत्त्वो का अध्ययन निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) लिखित और कठोर सविधान—सघीय शासन का प्रथम तत्त्व लिखित और कठोर सविधान होता है, जिससे केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारें अपनी अपनी सीमाओ म बनी रहे और दोनो मे से किसी भी सत्ता के द्वारा अकेले ही सविधान म मनमाना परिवतन न किया जा सके। स्विटजरलण्ड म ऐसे ही लिखित और कठोर सविधान की व्यवस्था की गयी है।

(२) शक्तियों का विभाजन—सघीय शासन क अन्तगत सविधान के द्वारा ही केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारो मे शक्तियो का विभाजन किया जाता है। विशेष बात यह है कि ये दोनो पक्ष अपनी शक्ति सविधान से ही प्राप्त करते हैं। स्विटजरलण्ड ने अन्तगत सविधान क द्वारा ही केन्द्रीय सरकार और कैण्टनो की सरकारों मे शक्तियो का विभाजन किया गया है। शक्ति विभाजन म अमरीका के ही समान 'गणना व अवशेष सिद्धान्त' को अपनाया गया है तथा सघीय सरकार की शक्तिया व उसके अधिकारो को गिनाकर शेष को कैण्टनो की सरकारो की शक्ति माना गया है। जो विषय राष्ट्रीय महत्त्व के हे उन्हें केन्द्रीय सरकार के कार्यक्षेत्र में और शेष विषयों को कण्टनो की सरकारो के कार्यक्षेत्र म रखा गया है।

[1] 'It was the opinion of men the men of 1848 that they were creating a constitution and today such is also the general conviction —*Burckhardt Walter*

2

स्विट्जरलैण्ड की सघीय व्यवस्था
(FEDERAL SYSTEM OF SWITZERLAND)

"स्विट्जरलैंड की एक सघीय शासन व्यवस्था है और मूल रूप से वह जमन साम्राज्य व अमरीका के सघ जैसी है।"[1] —ब्रुक्स

यद्यपि स्विटजरलण्ड क्षेत्र और जनसख्या की दृष्टि से एक छोटा राज्य है, लेकिन यह छोटा राज्य विविधताओ से उतना ही परिपूण है जितना कि सयुक्त राज्य अमरीका, भारत या सोवियत सघ हैं। इसी कारण स्विटजरलैण्ड म भी अमरीका, भारत आदि दशो की भाँति सघात्मक यवस्था को ही अपनाया गया है। ज्युचर के शब्दा मे 'सघवाद वह मूल वैधानिक सिद्धान्त है जिस पर स्विटजरलण्ड का शासन आधारित है।

स्विट्जरलैंड, एक राज्य मण्डल नहीं, वरन् एक सघ राज्य
(Switzerland, a Federation, not a Confederation)

स्विस सविधान के प्रथम अनुच्छेद मे कहा गया है कि स्विस राज्यमण्डल २२ सम्प्रभुत्व सम्पन्न कण्टनों से मिलकर बना है।[3] सविधान की इस भाषा के आधार पर कुछ लोगों का मत है कि स्विटजरलण्ड एक राज्यमण्डल है सघराज्य

[1] Switzerland is a federal government and thus is fundamentally similar to the German Empire and the American Federation —*Brooks*

[2] Federalism is the basic constitutional doctrine upon which the government of Switzerland is now posited —*Zurcher*

[3] The people of the twentytwo severeign Cantons united by the present alliance that is to say Zurich Berne Lucern Uri Schwyz Unterwalden (Obwald and Nidwald) Glarns Zug Fribourg Solothern Basle (Town ard country) Schaffahausen Appengell (The two Rhodes) St Gall Grisons Aargan Thurgan Ticino Vand Talais Neuchatel and Geneva comprise the Swiss Con federation —*Article I*

नही। उनका कथन है कि सविधान मे कण्टनो को सम्प्रभुतासम्पन्न कहा गया है और सम्प्रभु इकाइया एक राज्यमण्डल को ही जन्म दे सकती हैं, सघ राज्य को नही। उनका द्वितीय तर्क यह है कि १८४८ की जिस व्यवस्था के आधार पर इसका गठन हुआ है, वह एक सन्धि मात्र है सविधान नही और सन्धि एक राज्यमण्डल को ही जन्म दे सकती है, सघ राज्य को नही।

किन्तु वास्तविकता यह है कि स्विटजरलण्ड एक सघ राज्य है राज्यमण्डल नही। राज्यमण्डल का अर्थ राज्यो के उस ढीलेढाले सघ से होता है, जिसमे सशक्त केन्द्रीय सत्ता का अभाव हो और जिसमे इकाइयो को केन्द्र स सम्बन्ध विच्छेद करने की स्वतन्त्रता हो। लेकिन स्विटजरलण्ड मे केन्द्रीय सत्ता पर्याप्त शक्तिशाली है और कण्टनो को सघ से सम्बन्ध विच्छेद करने का अधिकार प्राप्त नही है। यह कहना भी उचित नही है कि १८४८ मे लिखित प्रलेख क रूप म की गयी व्यवस्था एक सन्धि या गठबन्धन मात्र था। वास्तव मे यह सविधान के सभी अर्थों मे एक सविधान है। वस्तुत जैसा वाल्टर ने कहा है— सन् १८४८ के लोगो की भी राय थी कि वे सविधान बना रहे थे और अब भी साधारण लोगों का ऐसा ही विश्वास है।"[1]

वास्तव मे स्विटजरलण्ड के लिए राज्यमण्डल शब्द भ्रमात्मक है और यह एक सघ राज्य है। स्विस सविधान के सघवादी तत्त्वो का अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) लिखित और कठोर सविधान— सघीय शासन का प्रथम तत्त्व लिखित और कठोर सविधान होता है, जिससे केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारें अपनी अपनी सीमाओ म बनी रह और दोनो मे से किसी भी सत्ता के द्वारा अकेले ही सविधान म मनमाना परिवर्तन न किया जा सके। स्विट्जरलण्ड म ऐसे ही लिखित और कठोर सविधान की व्यवस्था की गयी है।

(२) शक्तियों का विभाजन—सघीय शासन के अन्तगत सविधान के द्वारा ही केन्द्रीय सरकार और इकाइयो की सरकारो म शक्तियो का विभाजन किया जाता है। विशेष बात यह है कि ये दोनो पक्ष अपनी शक्ति सविधान से ही प्राप्त करते हैं। स्विट्जरलण्ड के अन्तगत सविधान के द्वारा ही केन्द्रीय सरकार और कैण्टनो की सरकारो मे शक्तियो का विभाजन किया गया है। शक्ति विभाजन म अमरीका के ही समान 'गणना व अवशेष सिद्धान्त' को अपनाया गया है तथा सघीय सरकार की शक्तिया व उसके अधिकारो को गिनाकर शेष को कण्टनो की सरकारों की शक्ति माना गया है। जो विषय राष्ट्रीय महत्त्व के हैं उन्ह केन्द्रीय सरकार के कार्यक्षेत्र मे और शेष विषयो को कण्टनो की सरकारो क कार्यक्षेत्र मे रखा गया है।

[1] It was the opinion of men the men of 1848 that they were creating a constitution and today such is also the general conviction —*Burckhardt Walter*

(३) न्यायपालिका की सर्वोच्चता—संघीय शासन का तीसरा तत्त्व न्याय पालिका की सर्वोच्चता है। न्यायपालिका की सर्वोच्चता का तात्पर्य यह है कि न्यायपालिका संविधान की रक्षा तथा उसकी व्याख्या करने का कार्य करेगी और यदि संघ अथवा इकाइयों की ओर से अपने कार्यों अथवा कानूनों द्वारा संविधान की अवहेलना की जाती है तो वह संघ अथवा इकाइयों के ऐसे कानूनों को, जोकि संविधान के विरुद्ध हैं, अवैध घोषित कर सकती है। संघ व इकाइयों के बीच शासन शक्ति से सम्बन्धित विवादों का निर्णय करना उसी का काम होता है।

न्यायपालिका की सर्वोच्चता के विषय में स्विटजरलैण्ड संघात्मकता की कसौटी पर पूरा नहीं उतरता। स्विटजरलैण्ड में न्यायपालिका को वह सर्वोच्चता और उस रूप में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है, जिस रूप में वह अमरीका की न्यायपालिका को प्राप्त है। स्विटजरलैण्ड का संघीय न्यायालय कण्टनों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा निर्मित कानूनों का तो संवैधानिकता के आधार पर परीक्षण कर सकता है और यदि उन्हें संविधान के विरुद्ध समझे, तो अवैध घोषित कर सकता है। लेकिन संघीय व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानूनों के सम्बन्ध में उसके द्वारा इस शक्ति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार स्विटजरलैण्ड का संघीय न्यायालय केन्द्रीय शासन को संविधान का अतिक्रमण करने से नहीं रोक सकता है। इस दृष्टि से स्विटजरलैण्ड का संघ संघात्मकता की कसौटी पर खरा नहीं उतरता, क्योंकि इस सम्बन्ध में संघ को इकाइयों की तुलना में संघ को अधिक महत्त्व दे दिया गया है।

(४) उच्च सदन में इकाइयों को समान प्रतिनिधित्व—संघात्मकता का एक सहायक तत्त्व यह है कि संघीय व्यवस्थापिका के उच्च सदन में, संघ की छोटी बड़ी सभी इकाइयों को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाता है। स्विटजरलैण्ड में संघात्मकता के इस तत्त्व को अपनाते हुए संघीय व्यवस्थापिका में द्वितीय सदन (राज्य परिषद) में सभी इकाइयों को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। इस सम्बन्ध में केवल पूर्ण कण्टन और अर्द्ध-कण्टन में अन्तर किया गया है। पूर्ण कण्टन के द्वारा अपने दो प्रतिनिधि और अर्द्ध कण्टन के द्वारा अपना एक प्रतिनिधि राज्य परिषद के लिए भेजा जाता है।

(५) संशोधन कार्य में इकाइयों को अधिकार—संघीय संविधान की संशोधन प्रक्रिया में इकाइयों को भी उचित अधिकार दिया जाता है तथा ऐसी व्यवस्था की जाती है कि इकाइयों की अवहेलना करके संविधान में संशोधन न किया जा सके। स्विटजरलैण्ड में संघीय व्यवस्था के इस तत्त्व को अपनाया गया है। संशोधन प्रस्तावित करने व उसकी पुष्टि में संघ की इकाइयों की जनता का पूरा पूरा हाथ रहता है। संविधान का कोई भी संशोधन तब तक पारित नहीं समझा जा सकता, जब तक कि आधे से अधिक कण्टनों द्वारा उसे स्वीकार न कर लिया जाय।

(६) दोहरी नागरिकता—ऐसा समझा जाता है कि संघीय शासन में प्रत्येक व्यक्ति को दोहरी नागरिकता प्राप्त होनी चाहिए—प्रथम, संघ की नागरिकता और

द्वितीय, राज्य की नागरिकता। स्विस सघ इस दृष्टि से एक कदम आगे है, वहाँ प्रत्येक नागरिक के लिए तीन नागरिकताओं की व्यवस्था की गयी है—सघ की नागरिकता, कण्टन की नागरिकता और कम्यून की नागरिकता।

उपरोक्त विवेचना से नितान्त स्पष्ट है कि सघीय व्यवस्था के अधिकाश, लगभग सभी प्रमुख तत्त्व स्विटजरलण्ड की शासन व्यवस्था मे विद्यमान हैं। सविधान मे 'सघ' के स्थान पर 'राज्यमण्डल' (Confederation) शब्द का प्रयोग किये जाने से स्थिति मे कोई अन्तर नहीं पडता। भारतीय सविधान मे भी कहीं पर 'फेडरशन' शब्द का प्रयोग नही किया गया है, वरन 'यूनियन' (Union) शब्द का प्रयोग किया गया है। यद्यपि न्यायपालिका की सर्वोच्चता के सिद्धान्त को पूरी-पूरी सीमा तक नही अपनाया गया है और सघीय न्यायालय को सघीय व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानूनो की जाच करने तथा उन्हें अवैधानिक घोषित करने का अधिकार प्राप्त नही है, लेकिन ऐसा एक विशेष कारण से है। स्विस नागरिक जनता की प्रत्यक्ष सत्ता मे अत्यधिक विश्वास करते हैं और वे इस बात के पक्ष म नही हैं कि उनके प्रतिनिधियो की सस्था की शक्ति पर 'न्यायिक पुनर्विलोकन (judicial review) का प्रतिबन्ध लगाया जाय। उनके अनुसार सघीय न्यायालय क ही एक न्यायाधीश हेन्स हूबर के शब्दो मे 'सवैधानिक कानून का न्यायिक परीक्षण लोकतन्त्र के सिद्धान्त का उल्लघन है।'[1] इस प्रकार न्यायपालिका के सम्बन्ध मे किया गया प्रबन्ध सघात्मकता के प्रति उनकी कम आस्था का नहीं, वरन् लोकप्रिय सम्प्रभुता के प्रति अत्यधिक आस्था का प्रतीक है। स्विट्जरलैण्ड की सघीय सभा पर जनता की लोकनिर्णय की शक्ति का प्रतिबन्ध है।

वस्तुत सघीय व्यवस्था के आदर्श को विभिन्न राज्यो द्वारा अपनी-अपनी परिस्थिति के अनुरूप अपनाया जाता है। भारतीय सविधान के द्वारा भी सघात्मक व्यवस्था को अपनाते हुए एकात्मक शासन के कुछ गुणो को ग्रहण कर लिया गया है। स्विस सविधान म सविधान की सर्वोच्चता के सिद्धान्त को पूरी सीमा तक न अपनाये जाने के कारण इसे सघीय शासन मानने से इन्कार नहीं किया जा सकता। सघीय शासन का मूल तत्त्व प्रो० ह्वीयर के कथनानुसार "शक्तियो के इस प्रकार विभाजन से है कि केन्द्रीय सरकार और इकाइयों की सरकारें हर एक स्वतन्त्र भी रहे और अन्योन्याश्रित अथवा सयुक्त भी।" सघीय व्यवस्था के अधिकारी विद्वान प्रो० ह्वीयर स्वय स्वीकार करते हैं कि स्विटजरलण्ड मे ऐसी ही स्थिति है। इस प्रकार 'स्विट्जरलण्ड मोटे तौर पर एक सघ है और इसे राज्यमण्डल की सज्ञा देना भ्रमात्मक है।'

स्विस सघ मे कैण्टन और सघीय शासन का सम्बन्ध

स्विस सघ का निर्माण अमरीकी सघ की सम्मिलन प्रक्रिया (integration procedure) द्वारा हुआ है। १३वी सदी मे ३ कण्टनो ने मिलकर राज्यमण्डल का

[1] The people saw in the judicial examination of the constitutional law an infringement of the democratic principle
—*Hans Huber*

निर्माण किया, जिनकी संख्या वस्टफेलिया की संधि के समय १३ हो गई और १८१५ की वियना कांग्रेस के समय २२ हो गयी। २२ कण्टनों के नाम स्वयं संविधान के प्रथम अनुच्छेद में दिये गये हैं, जिसका अर्थ यह लगाया जाता है कि यदि स्विस संघ में अन्य कोई पड़ोसी प्रदेश प्रविष्ट करना चाहे, तो उसके लिए संवैधानिक संशोधन आवश्यक होगा। संविधान के अनुसार छोटे बड़े सभी कण्टन वैधानिक दृष्टि से समान हैं। इन २२ कैण्टनों में १६ पूर्ण व ६ अर्द्ध-कण्टन हैं। पूर्ण कण्टन और अर्द्ध कण्टन में केवल दो बातों की दृष्टि से अन्तर है। प्रथम, संघीय राज्य परिषद में प्रत्येक पूर्ण कण्टन को अपने दो प्रतिनिधि लेकिन अर्द्ध कण्टन को अपना एक ही प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। द्वितीय, संवैधानिक संशोधन पर लिए गये लोक निर्णय में अर्द्ध-कण्टन का केवल आधा मत माना जाता है, जबकि पूर्ण कण्टन का मत एक समझा जाता है। इन दो अपवादों के अतिरिक्त प्रत्येक कण्टन और अर्द्ध-कण्टन संवैधानिक दृष्टि से समान है।

शक्ति विभाजन—स्विस संविधान में कुछ विषय संघीय अधिकार क्षेत्र में रख दिये गये हैं, कुछ विषय ऐसे हैं जिन पर कण्टनों तथा संघीय सरकार दोनों को अधिकार क्षेत्र प्राप्त है, अर्थात् उन्हें समवर्ती अधिकार क्षेत्र में रखा गया है तथा कुछ विषय ऐसे हैं जिन पर अधिकार क्षेत्र संघ तथा कण्टनों की सरकारों में विभक्त कर दिया गया है अर्थात उन पर विभक्त अधिकार क्षेत्र की व्यवस्था की गयी है। अवशिष्ट अधिकार कैण्टनों को सौंपे गये हैं। इस सम्बन्ध में संविधान के अनुच्छेद ३ में कहा गया है कि 'संघीय संविधान की सीमाओं के अन्तर्गत कण्टन सम्प्रभुता सम्पन्न हैं। वे उन सभी अधिकारों का उपयोग करते हैं जो संघ को हस्तान्तरित न किये गये हों।'

संघीय अधिकार—संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में संघ सरकार को अनेक विषयों पर अनन्य (exclusive) अधिकार प्रदान किया गया है। संघीय अधिकार क्षेत्र के प्रमुख विषय ये हैं वैदेशिक सम्बन्ध अर्थात् दूसरे देशों से संधियां करना, उनसे युद्ध की घोषणा करना, उनके यहां राज्य प्रतिनिधि (दूत प्रदूत) आदि भेजना देश की सुरक्षा अथवा सेना की व्यवस्था करना डाक-तार टेलीफोन, रेलमार्ग आदि यातायात व संदेशवाहन के साधन, उच्च शिक्षा, मुद्रा टंकण व नोट बारूद तथा अस्त्र शस्त्र, नाप-तौल के मापदण्ड, कापीराइट पेटेण्ट दीवानी फौजदारी व वाणिज्य सम्बन्धी विधियां, वन, लोक स्वास्थ्य, वायु पथ नौवाहन तथा जल शक्ति आदि। संघीय अधिकार क्षेत्र के इन विषयों पर संघीय व्यवस्थापिका ही कानून बना सकती है या इन विषयों के सम्बन्ध में संघीय शासन ही व्यवस्था कर सकता है।

समवर्ती अधिकार—वे विषय जिन्हें समवर्ती सूची में सम्मिलित किया गया है इस प्रकार हैं प्रेस पर नियन्त्रण, उद्योगों पर नियन्त्रण तथा उनका नियमन, दक्ष व्यवसाय, आप्रवासन (immigration) और राजपथों (highways) की

व्यवस्था आदि। इन विषयों पर सघ सरकार तथा कण्टनों की सरकारें, दोनों को ही नियम बनाने का अधिकार प्राप्त है, परन्तु यदि किसी विषय पर दोनों के बनाये गये नियमों मे परस्पर विरोध हो जाये, तो सघीय नियम ही मान्य होता है, कैण्टन का नही।

विभक्त अधिकार—स्विस शासन प्रणाली की यह अनुपम विशेषता है कि यहाँ पर कुछ विषयों के सम्बन्ध मे व्यवस्था करने का अधिकार सघ तथा राज्यों मे बँटा हुआ है। उदाहरणार्थ, विदेशों से सन्धियाँ करना सघीय अधिकार क्षेत्र मे है, परन्तु कैण्टन अपने निकटवर्ती राज्यों से सविधान द्वारा निश्चित की गई सीमाओं के अन्तर्गत कुछ विशेष नियमों पर सन्धियाँ कर सकते हैं। सेना व्यवस्था तथा सचालन का कार्य भी सघ तथा कण्टनों मे बँटा हुआ है। अनिवार्य तथा निःशुल्क प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था करना कण्टनों का कर्तव्य है, परन्तु सघ को यह निरीक्षण करने का अधिकार प्राप्त है कि कण्टन अपने इस कर्तव्य का पालन कर रहे है अथवा नही। सघ का यह भी कर्तव्य है कि वह इस कर्तव्य पूर्ति हेतु आवश्यकतानुसार कण्टनों को आर्थिक सहायता दे। सघीय रेलों के प्रशासन और नापतौल के मापदण्ड आदि के सम्बन्ध में भी कुछ ऐसी ही व्यवस्था की गयी है।

उपरोक्त वर्णन से यह स्पष्ट है कि सघीय सरकार का अधिकार क्षेत्र बड़ा व्यापक और विस्तृत है। जीवन के लगभग प्रत्येक क्षेत्र को नियमित करने का अधिकार उसे प्राप्त है। शक्ति विभाजन का एक अन्य पक्ष यह है कि सविधान के द्वारा कण्टनों को भी कुछ ऐसे अधिकार प्राप्त हैं जो सामान्यतया सघ की इकाइयों को प्राप्त नही होते हैं। सविधान की धारा ९ कण्टनों को विदेशी राज्यों के साथ सन्धियाँ करने का अधिकार प्रदान करती है और धारा १३ कण्टनों को सीमित रूप मे सेना रखने का अधिकार देती है।

सविधान के अनुसार प्रत्येक कैण्टन तथा अर्द्ध-कैण्टन को अपना अलग सविधान बनाने तथा पृथक सरकार रखने का अधिकार है। कण्टनों को अपना अलग सविधान बनाते समय तीन बातों को ध्यान मे रखना होता है। प्रथम, कैण्टन का सविधान सघीय सविधान के अनुकूल होना चाहिए। द्वितीय, उनके द्वारा अपने सविधान मे गणतन्त्रात्मक प्रणाली को ही अपनाया जाना चाहिए, अन्य किसी शासन व्यवस्था को नही। तृतीय, उन्हें अपना सविधान अपनी जनता के द्वारा स्वीकार कराना चाहिए और नागरिकों के बहुमत द्वारा माँग किये जाने पर उसका सशोधन होना चाहिए।

सविधान द्वारा किया गया यह शक्ति विभाजन विधायी क्षेत्र के सम्बन्ध मे ही है। प्रशासनिक क्षेत्र मे सघीय अधिकार के अनेक विषयों का प्रशासन कण्टनों की सरकारों द्वारा किया जाता है। स्विट्जरलण्ड मे केन्द्रीय शासन और कण्टनों के शासन मे परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध है।

केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति (Tendency towards Centralization)

स्विटजरलण्ड, यद्यपि एक सघ राज्य है, किन्तु उसकी शासन व्यवस्था में कुछ ऐसे तत्त्व विद्यमान हैं, जिनसे प्रकट होता है कि स्विस सघ म केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति बहुत प्रबल है। मूल सविधान के अन्तगत केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति निम्न बाता मे देखी जा सकती है

(१) मूल सविधान के द्वारा लगभग सभी महत्त्वपूण विषय सरकार को सौंप दिये गये हैं और इस बात ने केन्द्र को ऐसी उच्च स्थिति प्रदान कर दी है कि वह कैण्टनो पर छाया रह सकता है। उदाहरण के लिए, सविधान केन्द्र को मुद्रा एव बकिंग व्यवस्था के सम्बध मे अधिकार प्रदान करता है, और यह एक ही अधिकार ऐसा है जिसके आधार पर केन्द्र कण्टनो के समस्त आर्थिक व व्यापारिक जीवन पर नियत्रण रख सकता है।

(२) समवर्ती सूची म जो विषय रखे गये हैं उनके सम्बध म अतिम अधिकार केन्द्रीय सरकार को है और कण्टनो की सरकारो द्वारा केन्द्रीय सरकार के विरुद्ध किसी भी कानून का निर्माण नहीं किया जा सकता है। यह व्यवस्था केन्द्र को बहुत अधिक महत्त्व प्रदान कर देती है।

(३) सविधान के अनुसार कुछ विशेष परिस्थितियो म केन्द्र क द्वारा कण्टनों के अधिकार क्षेत्र मे हस्तक्षेप किया जा सकता है। सविधान की धारा १६ के अनुसार किसी कण्टन म अशान्ति और व्यवस्था की स्थिति उत्पन्न होन पर केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप किया जा सकता है और धारा ३ के अनुसार नागरिक अधिकारो की रक्षा के लिए केन्द्र कण्टनो के शासन म हस्तक्षेप कर सकता है। इस सम्बध म केन्द्र को इतना तक अधिकार है कि वह सरकारी सूत्र से सूचना मिलने की प्रतीक्षा किये बिना केवल गर सरकारी सूत्र की सूचना के आधार पर ही किसी कण्टन का शासन अपने अधिकार मे ले ले। यह व्यवस्था न कवल सविधान म है, वरन व्यवहार के अन्तगत भी केन्द्र क द्वारा अपनी इस शक्ति का प्रयोग किया गया है। १८४८ और १९२० के बीच केन्द्र के द्वारा कण्टनो के अधिकार क्षेत्र मे ११ बार हस्तक्षेप किया गया। एण्डरे (Andre) ने केन्द्र की इस शक्ति के सम्बन्ध मे लिखा है कि "सघ सरकार के निरन्तर हस्तक्षेप के कारण कैण्टन धीरे धीरे प्रभुत्वसम्पन्न राज्य नहीं रहेंगे, अपितु सघ सरकार की आज्ञाओ को पूरा करने वाले प्रशासकीय जिलों सदृश हो जायेंगे।'

(४) कण्टन वित्तीय दृष्टि से भी सघ सरकार पर ही आश्रित हैं।

(५) कण्टन सघ सरकार के अनुमोदन क बिना अपने सविधान मे सशोधन नही कर सकते हैं। कण्टनो के पारस्परिक झगडो के निणय का अधिकार भी सघ सरकार को प्राप्त है।

(६) विशेष बात यह है कि कण्टनों के अधिकार क्षेत्र का सर्वोच्च न्यायालय का परक्षण प्राप्त नहीं है और केन्द्र के द्वारा कण्टनों के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण किया जा सकता है।

संविधान में निहित केन्द्रीकरण की इस प्रवृत्ति के कारण संविधान की धारा ३ में वर्णित कण्टनों की सम्प्रभुत्व सम्पन्नता हास्यास्पद हो जाती है। केन्द्रीकरण की इस प्रवृत्ति के कारण डुप्रेज (Dupreiz) ने कहा है कि स्विस संविधान संघ को कण्टनों का शिक्षक तथा निरीक्षक बना देता है।"[1]

मूल संविधान के अन्तगत तो केन्द्रीकरण की यह प्रवृत्ति विद्यमान थी ही, संविधान लागू किये जाने के बाद भी केन्द्रीकरण की इस प्रवृत्ति का निरन्तर विकास हुआ है। रपाड के कथनानुसार, "अमरीका की भांति स्विटजरलण्ड में भी ऐतिहासिक विकास राष्ट्र के राजनीतिक जीवन के आकर्षण केन्द्र को खण्डों से हटाकर अधिकाधिक सम्पूर्ण की ओर ले जा रहा है।"

चार बातों ने स्विस संविधान के विकास में केन्द्रीकरण की इस प्रकृति को बल प्रदान किया है। ये हैं—सामाजिक सेवाओं के लिए निरन्तर बढ़ती हुई माँग, यातायात के साधनों तथा उद्योगों में यन्त्रीकरण तथा औद्योगिक क्रान्ति, युद्ध और आर्थिक अवसाद। स्विस संविधान के अनुच्छेद ३१ तथा ३४ में संशोधन द्वारा केन्द्रीय सरकार को सावजनिक कल्याण तथा नागरिक सुरक्षा और श्रमिकों के कल्याण के लिए कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। केन्द्रीय सरकार धीरे धीरे देश के आर्थिक जीवन की संरक्षिका बन गयी है। इन सब बातों के कारण केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति को बल मिला है।

केन्द्रीकरण की उपरोक्त प्रवृत्ति के आधार पर यह निष्कर्ष नहीं निकाला जाना चाहिए कि स्विस संघ में कण्टनों का कोई महत्त्व नहीं है। संविधान के द्वारा कण्टनों को न केवल अवशिष्ट शक्तियाँ प्रदान की गयी हैं, वरन निकटवर्ती राज्यों के साथ सन्धियाँ करने व सेना रखने की ऐसी शक्तियाँ भी प्रदान की गयी हैं, जो साधारणतया संघ राज्यों में इकाइयों को प्रदान नहीं की जाती हैं। संवैधानिक संशोधन कण्टनों की स्वीकृति से ही किये जा सकते हैं और नागरिकता तथा राजनीतिक गतिविधियों का मूल केन्द्र कैण्टन ही है। इन सबके अतिरिक्त स्थानीयता स्विस नागरिकों के स्वभाव का एक प्रमुख लक्षण है। ब्रुक्स के शब्दों में "प्रत्येक कण्टन सक्रिय राजनीतिक जीवन का केन्द्र है।" बोरिओर ने ठीक ही कहा है कि,

[1] The Swiss Constitution really creates the Confederation in some measure into a tutor and inspector of Cantons' —*Dupreiz*

[2] In Switzerland as in the United States historical evolution tends more and more to shift the centre of gravity of political life of the nation from the parts to the whole

—W E Rappard *The Government of Switzerland*, p 82

"कण्टन वे छोटे छोटे राष्ट्र हैं जिनकी एकमात्र सतत आकांक्षा यह रहती है कि वे अपने राजनीतिक संगठन को पूर्ण करें और अपनी प्रजातन्त्रात्मक संस्थाओं का विकास करें।"[1]

वास्तव मे, स्विस संघ के अन्तर्गत केन्द्र सरकार और कैण्टनों की सरकारें दोनों को ही अपने अपने क्षेत्रों मे महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है। इन दोनों में अत्यन्त सद्भावनापूर्ण सम्बन्ध और पारस्परिक सहयोग है जिसका प्रमाण यह है कि अधिकांश संघीय कानूनों की क्रियान्विती कैण्टनों की सरकारों द्वारा ही की जाती है।

स्विट्जरलैण्ड के संघ की अमरीकी संघ से तुलना

संघात्मक व्यवस्था राजनीतिक विचार और व्यवहार को अमरीका की देन है। इस कारण विश्व के जिन देशों द्वारा संघात्मक व्यवस्था को अपनाया गया है उनकी तुलना अमरीकी संघ से करना अनुचित न होगा।

समानताएँ—स्विटजरलैण्ड की संघात्मक व्यवस्था और अमरीका की संघात्मक व्यवस्था में प्रमुखतया निम्नलिखित समानताएँ देखी जा सकती हैं

(१) स्विस और अमरीकी दोनों ही संघों का निर्माण सुरक्षा की भावना के आधार पर हुआ है। स्विस कैण्टनों का यूरोप के पड़ौसी राज्यों से भय था और उनमे अपनी रक्षा हेतु उनके द्वारा संघ का निर्माण किया गया। इसी प्रकार अमरीकी उपनिवेशों को ब्रिटिश तथा स्पेनिश साम्राज्यवाद से भय था और उनसे अपनी सुरक्षा हेतु उनके द्वारा संघ का निर्माण किया गया।

(२) अमरीकी और स्विस दोनों संघ राज्यों का निर्माण एक ही प्रक्रिया और प्रवृत्ति के आधार पर हुआ है। संघ के निर्माण की दो प्रक्रियाएँ होती हैं, प्रथम केन्द्रोमुखी (centripetal) प्रवृत्ति या सम्मिलन की प्रक्रिया द्वारा और द्वितीय केन्द्रविमुखी (centrifugal) प्रवृत्ति या पृथक्करण की प्रक्रिया (disintegration) द्वारा। अमरीकी और स्विस दोनों ही संघों की इकाइयां संघ के निर्माण के पूर्व स्वतन्त्र राज्य थीं और सम्बन्धित राज्यों द्वारा दोनों ही संघों का निर्माण केन्द्रोमुखी प्रवृत्ति या सम्मिलन की प्रक्रिया के आधार पर हुआ। इसके विपरीत भारतीय या सोवियत संघ का निर्माण केन्द्रविमुखी प्रवृत्ति या पृथक्करण की प्रक्रिया के आधार पर हुआ है।

(३) स्विस और अमरीकी दोनों संघ राज्यों में शक्ति विभाजन के लिए एक ही पद्धति को अपनाया गया है और वह पद्धति है गणना तथा अवशेष की पद्धति। दोनों ही संघ राज्यों के संविधानों में केन्द्रीय सरकार की शक्तियां निश्चित कर दी गयी हैं और सभी अवशिष्ट शक्तियाँ इकाइयों को प्रदान की गयी हैं। स्विस संविधान की

1 'Cantons are small nations animated by a ceaseless desire to perfect their political organization and to develop their democratic institutions
—*Bourjour*

धारा ३ और अमरीकी संविधान के दसवें संशोधन द्वारा यह स्पष्ट कर दिया गया है कि जो अधिकार संघ को नहीं दिये गये हैं, वे सभी संघ की इकाइयों को प्राप्त होंगे।

(४) दोनों संघ राज्यों में संघीय व्यवस्थापिका के द्वितीय सदन में, छोटी बड़ी सभी इकाइयों को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। अमरीकी संघ में प्रत्येक इकाई के द्वारा सीनेट में अपने २ प्रतिनिधि भेजे जाते हैं और स्विस संघ में भी प्रत्येक इकाई राज्य परिषद में अपने २ प्रतिनिधि भेजती है। स्विस संघ के अन्तगत इस सम्बन्ध में केवल पूर्ण कैण्टन और अर्द्ध कैण्टन में अन्तर किया गया है।

(५) अमरीकी और स्विस संघ दोनों ही संघ राज्यों के अन्तगत इकाइयों के अपने पृथक संविधान हैं और दोनों संघ राज्यों में यह शर्त है कि इकाइयों के संविधान संघीय संविधान के अनुरूप ही होने चाहिए और उनके द्वारा अनिवार्य रूप से प्रजातन्त्रात्मक शासन व्यवस्था को ही अपनाया जाना चाहिए।

(६) अमरीकी और स्विस दोनों संघ राज्यों के अन्तर्गत इकाइयों को संघ से सम्बन्ध विच्छेद करने का अधिकार प्राप्त नहीं है।

(७) अमरीकी और स्विस इन दोनों संघों के निर्माण के समय स्थानीयता की प्रवृत्ति प्रबल थी और इन दोनों राज्यों में इकाइयाँ ही संघ के आधार हैं लेकिन इन दोनों संघ राज्यों के विकास में केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति देखी गई है। दोनों संघ राज्यों के अन्तर्गत केन्द्रीय सरकार की शक्तियों में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। रपार्ड के कथनानुसार "अमरीका की भाँति स्विटजरलैण्ड में भी ऐतिहासिक विकास राष्ट्र के राजनीतिक जीवन के आकर्षण केन्द्र को खण्डों से हटाकर अधिकाधिक सम्पूर्ण की ओर ले जा रहा है।"

असमानताएँ—स्विस और अमरीकी संघ में यदि एक ओर अनेक समानताएँ हैं, तो दूसरी ओर इनमें कुछ असमानताएं भी हैं, जिन्होंने इन्हें एक दूसरे से भिन्न कर दिया है। ये असमानताएं इस प्रकार हैं

(१) अमरीकी संविधान द्वारा किये गये शक्ति विभाजन में समवर्ती अधिकार क्षेत्र की कोई व्यवस्था नहीं की गयी है लेकिन स्विस संविधान में समवर्ती अधिकार क्षेत्र की व्यवस्था की गयी है और भारत के ही समान समवर्ती अधिकार क्षेत्र के सम्बन्ध में अन्तिम शक्ति केन्द्र को प्रदान की गई है।

(२) संयुक्त राज्य अमरीका के संविधान में एक सूत्र में शक्ति विभाजन हुआ है लेकिन स्विटजरलैण्ड के संविधान में यत्रतत्र संघ सरकार के अधिकारों का उल्लेख है।

(३) यद्यपि दोनों संघों की इकाइयों के पृथक पृथक संविधान हैं, परन्तु जहाँ अमरीका में राज्यों के संविधान के सम्बन्ध में केवल इतना कहा गया है कि राज्यों का संविधान संघीय संविधान के अनुकूल ही होना चाहिए वहाँ स्विस संघ की इकाइयों के सम्बन्ध में अग्रलिखित तीन निश्चित शर्तें रखी गई हैं

3

सघीय विधानमण्डल · संघीय सभा

(FEDERAL LEGISLATURE   FEDERAL ASSEMBLY)

"स्विटजरलैण्ड की कार्यपालिका की तरह ही वहां की व्यवस्थापिका भी विशिष्ट है, विश्व में यही एक ऐसी व्यवस्थापिका है जिसके उच्च सदन की शक्ति निम्न सदन की शक्ति से किसी भी प्रकार भिन्न नहीं है।"[1]

—प्रो० स्ट्रोंग

सघीय विधानमण्डल   सघीय सभा

स्विस सघीय शासन के तीनों अंगों में सविधान के द्वारा सघीय सभा को निश्चित रूप से सर्वाधिक शक्तिशाली स्थिति प्रदान की गयी है। स्विस सविधान के अनुच्छेद ७१ में कहा गया है, "जहाँ तक जनता के तथा कैण्टनों के अधिकारों का अतिक्रमण नहीं होता है, राज्यमण्डल की सर्वोच्च सत्ता का प्रयोग सघीय सभा करेगी, जिसके दो सदन—राष्ट्रीय परिषद तथा राज्य परिषद—हैं।"[2]

स्विस सघीय सभा एक शक्तिशाली विधानमण्डल है और कार्यपालिका तथा सघीय न्यायाधिकरण को इसके अधीन किया गया है, परन्तु सघीय सभा ब्रिटिश ससद की भाँति सम्प्रभुत्वसम्पन्न सस्था नहीं है। सर्वप्रथम, सघात्मक व्यवस्था और कठोर सविधान के कारण इसकी शक्ति सीमित हो गयी है। द्वितीय स्विस सविधान के निर्णय और आरम्भक की जो व्यवस्था की गयी है, उसके कारण कानून निर्माण

1 "Swiss legislature, like the Swiss Executive is unique It is the only legislature in the world the fu[...] of whose Upper House are in no way differentiated from [...]he Lower [...]
—C. F. [St]rong *Model[...] [C]onstitutions*, p 204

2 Subject to [...] reserved [...] and [the Cantons] (Article 8[...] Supreme [...] e Confederat[...] is exercised [...] assembly [...] two division[s] or Councils [...]tional [...] e Council [...] States [...] —Artic[...] onstitut[...]

और सवैधानिक सशोधन के सम्बन्ध मे अन्तिम शक्ति जनता को प्राप्त हो गयी है, विधानमण्डल को नही।

सघीय सभा की एक अन्य विशेष बात दोनो सदनो की बिलकुल समान शक्तियाँ हैं। राष्ट्रीय परिषद और राज्य परिषद की शक्तियो मे कोई अन्तर नही है और प्रो० स्ट्रोंग के शब्दो मे, 'यह इस दृष्टि से अनोखी है।'

सघीय सभा—द्वि सदनीय विधानमण्डल

स्विस सघीय सभा को सघीय व्यवस्थापिका का नाम दिया गया है। इसके दो सदन हैं राष्ट्रीय परिषद (National Council) और राज्य परिषद (Council of States)। इन्हे राष्ट्रीय सभा और राज्य सभा भी कहा जाता है। राष्ट्रीय परिषद निम्न सदन है और राज्य परिषद उच्च सदन।

राष्ट्रीय परिषद
(National Council)

रचना—राष्ट्रीय परिषद के सदस्यो की सख्या १९५१ म १९६ थी, परन्तु इस समय २०० है। सविधान के अनुसार अधिकतम सदस्य सख्या २०० ही हो सकती है। सविधान के अनुच्छेद ७२ के अनुसार राष्ट्रीय परिषद स्विस जनता की प्रतिनिधि सभा है। वतमान समय म २४ हजार जनसख्या पर राष्ट्रीय परिषद के लिए एक प्रतिनिधि चुना जाता है। राष्ट्रीय परिषद की सदस्य सख्या २०० की सीमा म ही रहे इसके लिए यदि आवश्यक हो तो वह जनसख्या बढाई जा सकती है, जिस पर एक प्रतिनिधि राष्ट्रीय परिषद के लिए भेजा जाता है। ऐसा दो बार किया भी चुका है। सन् १९३१ मे यह सख्या २० हजार से बढाकर २२ हजार और १९४० मे २२ हजार स बढाकर २४ हजार कर दी गयी। वतमान व्यवस्था के अन्तगत २२ हजार या उसस अधिक जनसख्या को भी अपना एक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। इसके साथ ही प्रत्येक कण्टन या अर्द्ध कण्टन के द्वारा कम से कम एक सदस्य राष्ट्रीय परिषद के लिए अवश्य ही भेजा जाता है। जनसख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व की व्यवस्था होने के कारण बन और ज्यूरिच जसे बडे कण्टनो के द्वारा राष्ट्रीय परिषद के लिए क्रमश अपने ३३ और ३२ प्रतिनिधि भेजे जाते है, लेकिन ऊरी जैसे कण्टन का राष्ट्रीय परिषदमे एक ही प्रतिनिधि है।

चुनाव प्रणाली—स्विटजरलण्ड म २० वष या इससे अधिक आयु वाले सभी व्यक्तियो को मताधिकार प्राप्त है। १९७० तक महिलाओ को मताधिकार से वचित रखा गया था लेकिन ८ फरवरी, १९८१ स महिलाओ को भी मताधिकार प्रदान कर दिया गया है। कोई भी मताधिकार प्राप्त व्यक्ति राष्ट्रीय परिषद की सदस्यता के लिए उम्मीदवार हो सकता है किन्तु पादरी सघीय सरकार के कमचारी सघीय परिषद के सदस्य या राज्य सभा के सदस्य इस सदन का चुनाव नही लड सकते हैं। राष्ट्रीय परिषद के चुनाव वयस्क मताधिकार, गुप्त मतदान तथा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली की सूची पद्धति (List System) के अनुसार होते हैं। प्रत्येक दल

हर कण्टन मे अपने उम्मीदवारो की एक सूची प्रकाशित कर देता है और मतदाताओ को अपने उम्मीदवारो की एक सूची भेज देता है। मतदाताओ को सरकार की ओर से भी एक खाली सूची मिलती है। मतदाता उतने मत देने का अधिकारी होता है, जितने सदस्यो का निर्वाचन उस कण्टन से होना है। मतदाता की इच्छा है कि वह किसी दल की सूची को ज्यो का त्यो मतपेटी म डाल दे या किसी सूची मे काटकर कुछ नाम भर दे या सारी की सारी खाली सूची को नये सिरे से भर दे। सूचियो के आधार पर विभिन्न दलो को प्राप्त मतों की गणना की जाती है और 'चुनाव कोटा' (Election Quota) के आधार पर यह मालूम कर लिया जाता है कि राष्टीय परिषद मे प्रत्येक दल की ओर से कितने प्रतिनिधि भेजे जायेंगे। स्विटजरलैण्ड मे कोई उप चुनाव नही होते हैं। यदि कोई स्थान खाली होता है तो वह दल उस स्थान को भर देता है जिसे वह स्थान प्राप्त था। आनुपातिक प्रतिनिधित्व की सूची प्रणाली का प्रयोग केवल उन कण्टनो मे होता है, जिनसे एक से अधिक सदस्या का निर्वाचन होता है। जिन कण्टनो म केवल एक सदस्य चुना जाता है, मतदान साधारण प्रणाली द्वारा होता है।

कार्यकाल तथा अधिवेशन—राष्ट्रीय परिषद का कायकाल ४ वष है और सघीय सभा के दोनो सदन ४ वष की अवधि के पूव केवल उसी स्थिति म भग किय जा सकते हैं, जबकि जनता के द्वारा लोक निणय मे पूण सवधानिक सशोधन का प्रस्ताव पास किया जाय या आशिक सवैधानिक सशोधन के प्रश्न पर सघीय सभा के दोना सदनो मे मतभेद उत्पन्न हो जाय। प्रत्येक ४ वष के पश्चात अक्टूबर माह के अन्तिम रविवार को राष्ट्रीय परिषद का चुनाव होता है। सघीय सभा की प्रति वर्ष मार्च, जून, सितम्बर और दिसम्बर म बठकें होनी आवश्यक हैं। सघीय सभा अपने अधिवेशन स्वय बुलाती है कायपालिका नही। सघीय परिषद राष्ट्रीय परिषद के असाधारण अधिवेशन अपनी इच्छा से या ५ कैण्टनो या राष्ट्रीय परिषद के ¼ सदस्यो की माग पर बुला सकती है। राष्ट्रीय परिषद की बैठका के लिए गणपूर्ति (Quorum) १०१ रखी गयी है और इसमे सब निणय बहुमत से लिये जाते हैं।

अध्यक्ष व उपाध्यक्ष (President and Vice President)—राष्ट्रीय परिषद का एक अध्यक्ष व उपाध्यक्ष होता है जिनका निर्वाचन राष्ट्रीय परिषद स्वय करती है। इन दोना पदाधिकारिया मे से किसी का भी उसी पद के लिए पुनर्निर्वाचन नही होता है, इस सम्बन्ध मे यह परम्परा अवश्य है कि उपाध्यक्ष अपने कायकाल की समाप्ति पर अध्यक्ष चुन लिया जाता है। राष्ट्रीय परिषद के अध्यक्ष का पद ब्रिटिश लोकसदन के अध्यक्ष पद की अपेक्षा अमरीका की प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष पद के अधिक समीप है। परिषद का अध्यक्ष परिषद की अध्यक्षता करता और कायवाही का उचित सचालन करता है। वह सदन मे शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने, सदन के सम्मान और उसकी सुविधाओ की रक्षा के लिए उत्तरदायी है। किसी विषय पर बराबर मत आने पर उसे अपने निर्णायक मत के प्रयोग का

अधिकार होता है । राष्ट्रीय परिषद के अध्यक्ष का पद पूर्ण निष्पक्षता का नही है, फिर भी उसके पद का बडा महत्त्व होता है और इस पदधारी व्यक्ति को दल मे बडा सम्मान प्राप्त होता है । उसे अपने पद के लिए कोई विशेष वेतन नही मिलता है । सघीय सभा के दोना सदनो की सयुक्त बैठको की अध्यक्षता राष्ट्रीय परिषद का अध्यक्ष ही करता है ।

वेतन और भत्ते—राष्ट्रीय परिषद के सदस्यो को कोई निश्चित वेतन नही मिलता है, वरन अधिवेशन के दिना म ७० फ्रैंक प्रतिदिन के हिसाब से भत्ता मिलता है ।

कार्यप्रणाली की विशेष बात यह है कि सघीय सभा की कार्यवाही का प्रत्येक प्रलेख जर्मन, फ्रेंच इटालियन और रोमाच चारो ही भाषाओ मे प्रकाशित किया जाता है ।

राज्य परिषद
(Council of State)

रचना—राज्य परिषद का निर्माण सघीय आधार पर करते हुए इसमे सघ की छोटी-बडी सभी इकाइया को समान प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है । प्रत्येक पूर्ण कण्टन को राज्य परिषद में २ और अर्द्ध कण्टन को १ प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है । इस प्रकार राज्य परिषद की सदस्य सख्या ४४ है ।

निर्वाचन और कार्यकाल—सघीय सविधान म राज्य परिषद के सदस्यो की चुनाव प्रणाली को निश्चित नही किया गया है, वरन् इस कैण्टना की इच्छा पर छोड दिया गया है । इसीलिए १४ कैण्टना तथा ३ अर्द्ध कण्टना मे इनका चुनाव समस्त मताधिकार प्राप्त नागरिको द्वारा प्रत्यक्ष रूप स होता है प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र वाले ग्लेरस तथा ३ अर्द्ध-कण्टन राज्य परिषद के लिए अपने प्रतिनिधियो का चुनाव 'जनसभा' (लण्डसजीमाइड) द्वारा करते ह तथा ४ कण्टना म उन्ह विधानमण्डल द्वारा निर्वाचित किया जाता है ।

राज्य परिषद क सदस्यो का कार्यकाल भी कण्टना की इच्छा पर निर्भर है । १५ कैण्टन तथा ५ अर्द्ध-कण्टन राज्य परिषद मे अपने प्रतिनिधि ४ वर्ष के लिए चुनते हैं, २ कण्टन तथा १ अर्द्ध कण्टन ३ वर्ष के लिए और शेष २ कण्टन केवल एक वर्ष के लिए । राज्य परिषद के सदस्यो से आशा की जाती है कि व अपने कण्टनो के हितो की रक्षा करेंगे । यद्यपि सघीय सविधान म राज्य परिषद के सदस्या को 'वापस बुलाने' (Recall) की कोई व्यवस्था नही है तथापि बाट और न्यूचेटल के कण्टनो ने अपने विधानमण्डलो को वापस बुलाने की शक्ति द दी है । राज्य परिषद के अधिवेशनो के सम्बन्ध म राष्ट्रीय परिषद के समान ही व्यवस्था है ।

वेतन तथा भत्ते—प्रत्येक कण्टन का विधानमण्डल अपने प्रतिनिधियो के वेतन निर्धारित करता है और कैण्टन के कोष से उन्ह यह वेतन प्राप्त होता है ।

जब राज्य परिषद के सदस्य सघीय विधानमण्डल की किसी समिति की कार्यवाही में भाग लेते हैं, तो उन्हें भत्ता तथा यात्रा खर्च सघीय कोष से प्राप्त होता है।

गणपूर्ति—राज्य परिषद में गणपूर्ति के लिए ४४ में से २३ सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है।

अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष (President and Vice President)—प्रत्येक साधारण तथा असाधारण अधिवेशन के लिए राज्य परिषद के सदस्यो का अपने में से ही एक अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष चुनने का अधिकार है। इस सम्बन्ध मे अधिवेशन का अभिप्राय एक वर्ष से लिया जाता है और एक वर्ष की अवधि के लिए ही इनका चुनाव किया जाता है। इस सम्बन्ध मे सविधान मे केवल यह कहा गया है कि एक वर्ष जिस कैण्टन का सदस्य अध्यक्ष रह चुका है, दूसरे वर्ष उसी कैण्टन का सदस्य दुबारा अध्यक्ष नही चुना जा सकता है अर्थात् प्रत्येक वर्ष अध्यक्ष भिन्न भिन्न कैण्टनों से चुने जायेंगे और एक ही कैण्टन के सदस्य अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष दोनों नहीं चुने जा सकते हैं। यह परम्परा स्थापित हो गयी है कि गत वर्ष के उपाध्यक्ष को अगले वर्ष अध्यक्ष बना दिया जाता है। अध्यक्ष सदन की अध्यक्षता करता है और उसे निर्णायक मत का अधिकार प्राप्त होता है।

सघीय सभा की शक्तियाँ और कार्य

स्विटजरलैण्ड मे सघीय सभा के दोनों राष्ट्रीय परिषद और राज्य परिषद को विधायी, प्रशासनिक तथा वित्तीय सभी क्षेत्रो मे समान शक्तियाँ प्रदान की गयी है। सविधान के अनुच्छेद ८४ में कहा गया कि "राष्ट्रीय परिषद और राज्य परिषद दोनो उन सभी कार्यो को सम्पन्न करेंगी जो कि वर्तमान सविधान द्वारा सघीय अधिकार क्षेत्र मे रखे गये हैं और जो कि अन्य किसी सघीय अधिकारी को नहीं सौंपे गये हैं।' सविधान के अनुच्छेद ८५ मे सघीय सभा के अधिकारों का विस्तृत उल्लेख किया गया है जिससे स्पष्ट है कि सघीय सभा को विधायी, प्रशासकीय, न्यायिक और वित्तीय सभी क्षेत्रों मे अधिकार प्राप्त है।

सघीय सभा की शक्तियो का अध्ययन निम्न रूपों मे किया जा सकता है

विधायी शक्तियाँ—सघीय सभा मूलत एक विधायी सभा है और इसका प्रमुख कार्य कानून निर्माण है। सविधान द्वारा सघीय अधिकार क्षेत्र मे रखे गये सभी विषयो पर इसे कानून निर्माण की शक्ति प्राप्त है। इसे सघीय अधिकारियों के गठन तथा उनके निर्वाचन पद्धति सम्बन्धी कानून निर्माण का अधिकार प्राप्त है। सघीय सभा सविधान के सशोधन कार्य में भी महत्त्वपूर्ण स्थिति रखती है। प्रत्येक सशोधन प्रस्ताव इसके दोनो सदनो द्वारा पारित किये जाने पर ही लोकनिर्णय के लिए भेजा जाता है। जब सघीय सविधान के पूर्ण सशोधन का कोई प्रस्ताव विचाराधीन हो तो सघीय सभा को भग कर नवीन सभा का निर्वाचन आवश्यक होता है।

सघीय सभा की कानून निर्माण की शक्ति पर जनता की ऐच्छिक लोकनिर्णय की शक्ति का प्रतिबन्ध है। इसका तात्पर्य यह है कि सघीय सभा द्वारा पारित

विधेयकों पर जनता सविधान मे निर्धारित प्रक्रिया के आधार पर लोकनिणय की माँग कर, लोक निणय म उसे अस्वीकार कर सकती है। पर ऐसा केवल उसी व्यवस्थापन के विषय मे होता है, जिसे नियम के अन्तर्गत कानून की सज्ञा दी गयी है। सघीय सभा द्वारा पारित ऐसे अध्यादेशो (Arretes) पर लोक-निणय का प्रतिबन्ध नही है जो सवव्यापी (universally binding) न हो अथवा जिन्हें दोनो सदनो के सभी सदस्यो ने 'आवश्यक' (urgent) घोषित कर दिया हो। परिणाम स्वरूप व्यवस्थापन का अधिकाश भाग अध्यादेशो के रूप मे होता है जिससे व वैकल्पिक लोक निणय के प्रतिबन्ध से बच सकें। आँकडे बतलाते हैं कि बीसवीं सदी के प्रारम्भिक ६० वर्षों मे व्यवस्थापन मे कानून व अध्यादेशो की सख्या का अनुपात १ व ६ का रहा था।

नियुक्ति सम्बन्धी शक्ति—सघीय सभा को नियुक्तियो के सम्बन्ध मे व्यापक शक्ति प्राप्त है। सविधान के अनुसार उसे सघीय परिषद व सघीय न्यायालय के सदस्या, सघ के चासलर व सकटकाल मे मुख्य सेनाध्यक्ष को चुनने का अधिकार है। वही सघीय बीमा न्यायालय के सदस्यो का निर्वाचन करती है। सविधान के अनुसार सघीय परिषद के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष क चयन, सघीय न्यायालय के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के निर्वाचन तथा कुछ अन्य चुनाव सम्बन्धी और पुष्टीकरण सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हैं। इनमे से अधिकाश नियुक्तिया सघीय सभा के दोनो सदन अपने सयुक्त अधिवशन मे करते हैं।

वित्तीय शक्ति—सघीय सभा की सबसे प्रमुख वित्तीय शक्ति बजट की स्वीकृति से सम्बन्धित है। सघीय परिषद जो बजट बनाती है उसे स्वीकार करना सघीय सभा का काय है। बजट के सम्बन्ध मे इसकी स्वीकृति अन्तिम होती है, क्योकि इस पर ऐच्छिक लोक निणय का कोई प्रतिबन्ध नही होता। सघ की ओर से दिये जाने वाले ऋणो के विषय मे भी निणय सघीय सभा ही करती है। सघीय प्राधिकारियो के वेतन तथा भत्ते निर्धारित करना तथा सघीय शासन के स्थायी पदो का निर्माण तथा उनके वेतन आदि निर्धारित करना भी सघीय सभा का काय है।

कायपालिका शक्ति—सघीय सभा मूलत एक विधि निर्मात्री सभा है परन्तु इसे कुछ कायपालिका शक्तिया भी प्राप्त है। अपनी कार्यपालिका शक्ति के अन्तगत ही उसके द्वारा सघीय परिषद सघीय न्यायालय, सघीय बीमा न्यायालय तथा अन्य कुछ सस्थाओ से सम्बन्धित पदाधिकारियो का चयन किया जाता है।

सघीय सभा को विदेशो से सन्धियाँ तथा समझौते करने का अधिकार है। बाहरी आक्रमण और हस्तक्षेप से स्विटजरलैण्ड की स्वतन्त्रता और तटस्थता की रक्षा के लिए उचित प्रबन्ध करना युद्ध की घोषणा करना व शान्ति सन्धि करना वदेशिक क्षेत्र मे सघीय सभा के प्रमुख काय हैं।

सघीय सभा सघीय परिपद पर नियन्त्रण रखने का काय भी करती है, यद्यपि यह नियन्त्रण ब्रिटिश पद्धति से भिन्न रूप मे है। सघीय सभा न तो सघीय परिषद को पदच्युत कर सकती है और न ही उसके निर्णयो मे परिवतन कर सकती है, लेकिन सभा भविष्य के लिए परिषद को आदेश दे सकती है और परिषद के लिए इन आदेशो का पालन अनिवाय है।

सघीय सभा सघीय परिषद के सभी कार्यों तथा नीतिया पर नियन्त्रण रखती है जिसमे वित्तीय नियन्त्रण भी सम्मिलित है। सन् १९६४ मे फ्रास से की गई लडाकू मिरेज जेटों की खरीद के सम्बन्ध मे जो घोटाला हुआ था तथा उसके बाद जो विवाद चला, उसके बाद से इस बात की माग निरन्तर जोर पकड रही है कि समितिया के माध्यम से तथा प्रत्यक्ष रूप से भी सघीय सभा को सघीय परिषद पर अपना कडा नियन्त्रण रखना चाहिए। सघीय सभा के सदस्य सघीय परिषद क सदस्या से प्रशासन तथा नीति के बारे म कोई भी प्रश्न पूछ सकते हैं, जिनका उत्तर उन्हे देना होता है।

कैण्टनो से सम्बन्धित शक्ति—सघीय सभा को यह भी अधिकार प्राप्त है कि वह कैण्टनो के सविधानो और उनके सशोधनो की उचित जाच कर उन्हें स्वीकार करे। कैण्टन विदेशो से जो सन्धिया करते हैं, उन पर सघीय सभा का अनुमोदन आवश्यक है। इसी प्रकार कैण्टन परस्पर जो सन्धिया करते है उनके बारे म सघीय सभा का अनुमोदन आवश्यक है, यदि सघीय परिषद या अन्य कैण्टन सन्धि पर कोई आपत्ति उठावें। आन्तरिक शान्ति बनाये रखना और उसके लिए यदि आवश्यक हो, तो सघीय सेना का प्रयोग करना भी सविधान के अनुसार सघीय सभा का ही काय है, परन्तु व्यवहार मे यह काय सघीय परिषद द्वारा किया जाता है।

न्यायिक शक्ति—मूल सविधान क द्वारा सघीय सभा को महत्वपूर्ण न्यायिक शक्तिया प्रदान की गई थी, किन्तु अब सघीय न्यायालय की शक्ति बढने के साथ साथ सघीय सभा का न्यायिक कार्यक्षेत्र कम हो गया है। अब भी यह सघ की विविध सत्ताओ के बीच कार्यक्षेत्र सम्बन्धी विवादो का निणय करती है। प्रशासनिक मामलो और उन मामलो मे जो सघीय प्रशासन के तीनो अगो के सदस्यो के विरुद्ध कैण्टनो की ओर से चलाये जाते हैं, सघीय सभा ही न्याय काय करती है। सघीय सभा अपने द्वारा नियुक्त अधिकारियो के विरुद्ध कायवाही भी कर सकती है। सघीय सभा सघ के न्याय विभाग के अधिकारियो द्वारा दण्डित व्यक्तियो व मृत्युदण्ड पाये हुए व्यक्तियो को क्षमादान दे सकती है।

सघीय सभा की वास्तविक स्थिति—सघीय सभा की शक्तियो की उपयुक्त विवेचना से स्पष्ट है कि उस सभी क्षेत्रो मे बहुत अधिक व्यापक शक्तिया प्राप्त हैं। जुकर ने ठीक ही लिखा है कि 'सघीय सभा की स्थापना करते हुए स्विस सविधान के निर्माताओं ने शक्ति विभाजन के मर्यादापूर्ण सिद्धान्त पर कोई विशेष ध्यान नहीं

दिया है, क्योंकि उन्होंने इसे विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक सभी प्रकार की शक्तिया प्रदान की हैं।"[1]

लेकिन व्यवहार म, सघीय सभा उतनी शक्तिशाली नही है, जितनी शक्तिशाली सविधान निर्माता उसे बनाना चाहते थे। विधायी क्षेत्र म सघीय सभा की शक्ति ऐच्छिक लोकनिणय (Optional Legislative Referendum) के कारण सीमित हो गई है। न केवल सवधानिक दृष्टि से यह व्यवस्था है, वरन् व्यवहार मे भी एच्छिक लोकनिणय की शक्ति का बहुत अधिक प्रयोग किया जाता है। परिणामस्वरूप सघीय सभा को सदव यह ध्यान मे रखना होता है कि कानूनो पर लोक निणय हो सकता है और उसके कारण वे समाप्त हो सकते है। इसके अतिरिक्त वतमान समय मे कानून निर्माण का काय पर्याप्त जटिल हो गया है और इस कारण विधायी क्षेत्र मे भी सघीय सभा के स्थान पर सघीय परिषद ही पहल करती है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक देश म कल्याणकारी राज्य के उदय और सङ्कटकालीन स्थिति के कारण कायपालिका की शक्तिया निरन्तर बढती जा रही है और व्यवस्थापिका की शक्तियो का ह्रास हो रहा है। स्विटजरलण्ड म भी सघीय परिषद द्वारा शासन सूत्र के सचालन मे अपनी महत्त्वपूण स्थिति बना लिए जाने के कारण सघीय सभा का महत्त्व कम हो गया है। जुचर न ठीक ही कहा है कि "यह पर्याप्त स्पष्ट है कि सघीय परिषद का विधायी महत्त्व स्थायी रूप से बढ गया है और अन्य पश्चिमी प्रजातन्त्रो के समान ही स्विटजरलण्ड मे भी, कम से कम वास्तविकता की दृष्टि से, सघीय परिषद शासन का सवप्रमुख अग बन गई है।"[2]

सघीय सभा के सम्बन्ध मे एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि सभा अपने समस्त काय शान्ति, समझ और ईमानदारी से सम्पन्न करती है। लॉर्ड ब्राइस के अनुसार "स्विटजरलण्ड की सघीय सभा बडी ईमानदारी से काय करने वाली सस्था है जो शान्ति तथा देशप्रेम से प्रभावित होकर अपने काय सम्पन्न करती है। वहा के सदस्य व्यथ मे ओजस्वी भाषण नहीं देते, न उन भाषणो की प्रशसा की जाती है। वे तो व्यवहार में अपना काय कुशलतापूवक ढग से सम्पन्न करने से ही सम्बन्ध रखते हैं।"

1 The makers of the Swiss Constitution did not pay much attention to the orthodox theory of the separation of powers in establish ing the Federal Assembly since they conferred upon it all kinds of authority, legislative executive and even judicial '

—Zurcher, *Governments of Continental Europe*, p 437

2 'It seems reasonably clear that the legislative significance of the Federal Council has been permanently enhanced and that in Switzerland as elsewhere among Western democracies the executive has become, at least defacto, the dominant branch of the Government —Zurcher *Ibid* p 532

सघीय सभा के दोनो सदनो का पारस्परिक सम्बन्ध

स्विस सविधान के अनुसार सघीय सभा के दोनो सदनो की शक्तियाँ बिल्कुल समान हैं। इस सम्बन्ध मे प्रो० स्टोग ने लिखा है कि स्विस सघीय सभा सघीय परिषद की भाति ही विचित्र है, क्योकि इसमें दोनो सदनों के अधिकार एक से हैं और उच्च सदन की शक्तियाँ किसी भी दृष्टि से निम्न सदन से कम या अलग नहीं हैं।"

साधारण विधेयक हो या वित्तीय विधेयक, सघीय सभा के किसी भी सदन म प्रस्तावित किया जा सकता है और कानून का रूप ग्रहण करने के लिए इस दोनो सदनो म पारित होना आवश्यक है। यदि किसी विधेयक पर दोनो सदनों म विरोध उत्पन्न हो जाय, तो दोनो सदनो की एक सयुक्त सम्मेलन समिति' (Joint Conference Committee) स्थापित की जाती है, जो विधेयक के बारे म गतिरोध दूर करने के लिए विचार करती और दोनो सदनो के सम्मुख अपने सुझाव रखती हैं। यदि दोनो सदनो मे गतिरोध दूर हो जाय, तो ठीक है। यदि अब भी गतिरोध दूर न हो, तो सयुक्त सम्मेलन समिति पुन इसी प्रकार म काय करती है। यदि फिर भी विधेयक पर गतिरोध बना रहे तो उस विधयक को ही समाप्त कर दिया जाता है। व्यवहार म एसा देखा गया है कि स्विटजरलण्ड के दोनो सदनो म गतिरोध बहुत ही कम होते है। इसका कारण यह है कि दोनो सदनो मे कोई प्रतिस्पर्द्धा नहा है और दोनो ही सदन व्यावहारिक दृष्टिकोण के आधार पर अपना काय करते हैं।

सविधान द्वारा सघीय सभा के दोनो सदनो को समान शक्तिया प्रदान किय जान पर भी व्यवहार म द्वितीय सदन (राज्य परिषद) की शक्तिया घटने लगी हैं। राष्ट्रीय परिषद की तुलना मे राज्य परिषद का प्रभाव कम होने का एक कारण यह है कि राज्य परिषद एक लोकप्रिय सदन नही है। राज्य परिषद ने अपनी इच्छा से राष्ट्रीय परिषद की तुलना मे गौण स्थान ग्रहण कर लिया है क्योकि राष्ट्रीय परिषद मे जनता के प्रतिनिधि बठते है और राज्य परिषद मे केवल कण्टनो के प्रतिनिधि। सावेल का मत है कि "दो शक्तिशाली सस्थाओ मे से जिस सस्था मे राजनीतिक नेता रहते हैं वह कालान्तर मे सामान्यत निश्चित रूप से अधिक शक्तिमान हो जाती है तथा इसी कारण यह आश्चयजनक बात नहीं है कि राज्य परिषद राष्ट्रीय परिषद की तुलना में कम अधिकार तथा प्रभाव रखती है।"

लेकिन व्यवहार म राज्य परिषद को कुछ गौण स्थिति प्राप्त होने के आधार पर यह निष्कष नही निकाला जाना चाहिए कि राज्य परिषद व्यथ है। व्यवहार के अन्तर्गत कुछ परिस्थितियों मे राज्य परिषद ने राष्ट्रीय परिषद की अपेक्षा जन दृष्टिकोण को अधिक अच्छे रूप मे समझा है। १९४९ मे राज्य परिषद ने सघीय परिषद एव राष्ट्रीय परिषद द्वारा समर्थित कुछ नये करों को लगाने का प्रस्ताव अस्वीकृत कर दिया। मतदाताओ ने लोकनिणय मे प्रस्तावित करो के विरुद्ध मत देकर राज्य परिषद के विचार का समथन किया। भारत की राज्यसभा और इगलण्ड

की लाड सभा की तुलना मे स्विस राज्य परिषद की शक्तियाँ और उसकी स्थिति निश्चित रूप से बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है।

इसके अतिरिक्त विश्व के अन्य देशो की व्यवस्थापिकाओ के द्वितीय सदन अपनी प्रतिक्रियावादिता के लिए कुख्यात रहे हैं। लेकिन स्विस राज्य परिषद के सम्बन्ध मे ऐसी बात नही है। मुनरो के शब्दो म "विश्व के अधिकाश द्वितीय सदनों के समान राज्य परिषद ने प्रतिक्रियावादी होने की प्रसिद्धि प्राप्त नहीं की है। स्विस राज्यपरिषद को कोई भी व्यक्ति प्रतिक्रियावादी का गढ़ अथवा प्रगति को रोकने वाली सस्था नहीं कहता है।"[1]

विधायी प्रक्रिया

स्विस सघीय सभा के दोनो सदनो के अधिवेशन सघीय परिषद के सदस्यो, सघीय न्यायालय के न्यायाधीशो और कुछ दूसरे सघीय अधिकारियो के निर्वाचन तथा कुछ अन्य प्रयाजनो के लिए सयुक्त मे रूप होते हैं। ये सयुक्त अधिवेशन राष्ट्रीय परिषद के भवन म होते है और राष्ट्रीय परिषद का अध्यक्ष ही सयुक्त अधिवेशन का सभापतित्व करता है। शेष कार्यों के लिए दोनो सदनो के पृथक पृथक अधिवेशन होते है।

विधायी क्षेत्र मे दोनो सदनो की शक्तिया बिलकुल समान हैं और साधारण विधेयक हो या वित्तीय विधेयक, सविधान के अनुसार किसी भी सदन म प्रस्तावित किया जा सकता है। लेकिन व्यवहार मे यह परम्परा स्थापित हो गई है कि बजट पहले निम्न सदन म रखा जाता है और रेल बजट दोनो सदनो म एक साथ प्रस्तुत किया जाता है।

विधायी प्रक्रिया, सक्षेप म इस प्रकार है

निधेयक प्रस्तुत करना—सदनो मे विधेयक चार प्रकार स प्रस्तुत होते हैं—(i) सघीय परिषद द्वारा (ii) सघीय सभा द्वारा (iii) कण्टना द्वारा और (iv) सघीय सभा के किसी सदन के किसी भी सदस्य द्वारा। लेकिन व्यवहार मे सघीय परिषद ही अधिकाश विधेयक तयार करती और उन्ह प्रस्तावित करती है। वित्त विधेयक सघीय परिषद द्वारा ही प्रस्तावित हो सकता है किसी सदस्य द्वारा नहीं। विधेयक प्रस्तावित होन पर उसके सिद्धान्तो पर विचार किया जाता है। यदि सदन उससे सहमत है तो विधेयक समिति को विचाराथ सौंप दिया जाता है।

समिति अवस्था—समिति मे सदन के समस्त दलो का अपनी सदस्य सख्या के अनुपात मे प्रतिनिधित्व प्राप्त होता है। स्विटजरलण्ड मे विधायी समितियाँ प्राय

[1] Unlike most Upper Chambers moreover it has not acquired a reputation for being more conservative than the other Chamber No one ever speaks of the Swiss Council of States as a citadel of reaction or a brake upon the wheels of progress'
—W B Munro *Governments of Europe* pp 740-41

अपनी बठकें उस समय करती हैं जब सदन का अधिवेशन न हो रहा हो। समितियाँ प्राय विधेयक के मूल प्रारूप को नही बदलती, वरन विधेयक म केवल आवश्यक सशोधनो का ही सुझाव देती हैं। सामान्यत समिति प्रत्येक विचाराधीन प्रश्न को सवसम्मति से सुलझाती है और फिर अपने निणय को एक निर्वाचित प्रतिवेदक के द्वारा सम्बद्ध सदन मे भेज देती है।

सदन मे विधेयको को पारित करना—समिति की रिपोट सदन म आ जाने पर सदन म विधेयक पर विचार प्रारम्भ किया जाता है। सदन मे विधेयक पर धारा वार विचार किया जाता है और समिति द्वारा सुझाये गये सशोधनो पर भी सदन विचार करता है। अन्त मे सम्पूण विधेयक पर मत सग्रह किया जाता है और एक सदन द्वारा विधेयक की स्वीकृति के बाद उसे दूसरे सदन म भेज दिया जाता है। दूसरे सदन मे भी विधेयक पर विचार के लिए यही प्रक्रिया अपनाई जाती है।

मतभेदो को दूर करना—यदि किसी विधेयक पर दोनो सदनो म मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो मतभेद दूर करने के लिए सयुक्त सम्मेलन समिति' स्थापित की जाती है, जिसमे दोनो सदनो के बराबर बराबर सदस्य होते हैं और इस समिति का अध्यक्ष उस सदन मे से कोई व्यक्ति होता है, जिसमे विधेयक प्रारम्भ हुआ था। यदि सयुक्त समिति के सुझावो को भी कोई सदन अस्वीकार कर दे, तो विधेयक रद्द समझा जाता है।

विधेयक का प्रकाशन—यदि विधेयक दोनो सदनो से पारित हो जाय, तो उस पर दोनो सदनो के अध्यक्ष तथा सचिवो के हस्ताक्षर हो जाते हैं और इसके बाद विधेयक सघीय परिषद के पास प्रकाशन तथा लागू करने के लिए भेज दिया जाता है। यदि विधेयक म दज की गई अवधि तक जनता इस पर लोक निणय की माग न करे, तो यह कानून की भाँति लागू किया जाता है।

प्रश्न

१ स्विस राष्ट्रीय परिषद के सगठन तथा शक्तियो की विवेचना कीजिए।
(आगरा, १९६३, ७२)

२ स्विस सघीय विधानमण्डल का निर्माण कैसे होता है? उसकी शक्ति एव कार्यों का वणन कीजिए। (आगरा १९६६ ७०, कानपुर १९६८, लखनऊ १९६७ ६८, ७०, ७१ ७२)

३ स्विस सघीय विधानमण्डल के सगठन तथा शक्तियो का वणन कीजिए तथा उन सिद्धान्तो पर प्रकाश डालिए जिनके द्वारा इसके सम्बन्ध स्विस सघीय कायपालिका स नियमित होते हैं। (जीवाजी, १९६५)

४ स्विस सविधान निर्माताओ ने वहाँ के विधानमण्डल को सब प्रकार के अधिकार प्रदान किये हैं—व्यवस्थापिका एव कायपालिका सम्बन्धी और न्यायिक भी।' इस कथन का स्पष्टीकरण कीजिए। (राजस्थान १९७३)

4

संघीय परिषद
(FEDERAL COUNCIL)

स्विस शासन व्यवस्था अपने आप में एक वर्ग है। यह संसदात्मक और अध्यक्षात्मक दोनों ही प्रकार की शासन व्यवस्थाओं से मूलभूत रूप में भिन्न है परन्तु इसमें दोनों ही शासन व्यवस्थाओं के लक्षणों का मिश्रण है।"[1]

—डॉ० गार्नर

स्विस संविधान के द्वारा जिस प्रकार की कार्यपालिका की व्यवस्था की गई है, वह अपने आप में एक वर्ग है। इसके संगठन और शक्तियों का ही नहीं, वरन् विधान मण्डल के साथ इसका जो सम्बन्ध है, उसका भी कोई सादृश्य नहीं मिलता है। सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि एक निश्चित नेतृत्व के अन्तर्गत ही कार्यपालिका शासक संचालन का कार्य कुशलतापूर्वक कर सकती है, इसलिए कार्यपालिका संगठन की दृष्टि से एकल होनी चाहिए। लेकिन स्विस कार्यपालिका बहुल है और सामान्य धारणा के विपरीत इसके द्वारा सफलतापूर्वक कार्य किया जा रहा है। इसी प्रकार सामान्य धारणा के अनुसार कार्यपालिका या तो संसदात्मक हो सकती है या अध्यक्षात्मक लेकिन स्विस कार्यपालिका को इन दोनों में से किसी एक श्रेणी में नहीं रखा जा सकता, वरन इसमें दोनों के ही तत्वों का मिश्रण है। स्विस कार्यपालिका के अन्तर्गत, इन दोनों ही शासन व्यवस्थाओं के गुणों को ग्रहण करने का प्रयत्न किया गया है। स्विस कार्यपालिका के इन लक्षणों के आधार पर ही प्रो० स्ट्रॉंग ने लिखा है कि 'यह विश्व की संवैधानिक पद्धतियों में सर्वाधिक अनुपम है।'[2] ब्राइस के मतानुसार 'यह एक ऐसी संस्था है, जिसका अध्ययन करना अन्य सभी संस्थाओं से अधिक महत्त्वपूर्ण है।'

[1] 'A system of government which falls in a class by itself which differs fundamentally from the presidential and cabinet types but which combines certain features of both is that of Switzerland.'
—Garner *Political Science and Government*, p 341

[2] 'It is quite unique among the constitutional systems of the world
—C F Strong *Modern Political Constitutions* p 241

संघीय परिषद की रचना

स्विस संविधान के अनुच्छेद ९५ के अनुसार, "स्विस राज्यमण्डल की सर्वोच्च निर्देशन तथा कार्यपालिका शक्ति ७ सदस्यों की एक संघीय परिषद द्वारा प्रयुक्त की जाती है।" संघीय परिषद के इन ७ सदस्यों का निर्वाचन संघीय सभा के दोनों सदस्यों की संयुक्त बैठक में किया जाता है। स्विटजरलण्ड जैसे प्रबल प्रजातन्त्रीय भावना वाले देश में कार्यपालिका के निर्माण हेतु अप्रत्यक्ष निर्वाचन की पद्धति को अपनाना अनुचित प्रतीत हो सकता है, लेकिन ऐसा कुछ विशेष कारणों से किया गया है। सर्वप्रथम, स्विस संघीय सभा के सदस्य जनता के इतने अधिक सम्पर्क में रहते हैं कि स्विस जनता संघीय सभा के सदस्यों द्वारा किये गये निर्वाचन को जनता द्वारा किया गया निर्वाचन ही मानती है। इसके अतिरिक्त संविधान निर्माता संघीय परिषद के चुनाव को राजनीतिक दलबन्दी से अलग रखना चाहते थे और उनकी इच्छा थी कि पर्याप्त राजनीतिक ज्ञान और अनुभव रखने वाले व्यक्ति ही इस परिषद के लिए चुने जायें। इसलिए भी उनके द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन के स्थान पर अप्रत्यक्ष निर्वाचन को अपनाया गया।

जहाँ तक योग्यताओं का प्रश्न है, संविधान ने यह निश्चित किया है कि कोई भी स्विस नागरिक, जो राष्ट्रीय परिषद का सदस्य चुने जाने के योग्य है, संघीय परिषद का सदस्य चुना जा सकता है। इस सम्बन्ध में केवल दो वैधानिक प्रतिबन्ध हैं। प्रथम, रक्त एवं विवाह द्वारा सम्बद्ध दो व्यक्ति एक साथ संघीय परिषद के सदस्य नहीं बन सकते। द्वितीय संविधान की धारा ९६ के अनुसार यह निश्चित किया गया है कि एक कण्टन से एक से अधिक व्यक्ति संघीय परिषद के सदस्य निर्वाचित नहीं हो सकते। इन दो वैधानिक शर्तों के अतिरिक्त संघीय परिषद के निर्माण में दो महत्वपूर्ण परम्पराएँ भी स्थापित हो गई हैं। प्रथम परम्परा के अनुसार स्विटजरलण्ड के दो सबसे बड़े और प्रमुख कण्टनों (बर्न और ज्यूरिच) का संघीय परिषद में सदैव ही प्रतिनिधित्व रहता है। यह विशेष स्थिति फ्रेंच भाषा भाषी कण्टन वाउद (Vaud) को भी प्राप्त है। दूसरी परम्परा यह है कि संघीय परिषद में चार जर्मन भाषा भाषी दो फ्रेंच भाषा भाषी तथा एक इटालियन भाषा भाषी होना है। इस व्यवस्था के सम्बन्ध में जान ब्राउन मेसन ने कहा है कि 'इस तरह सन्तोषजनक क्षेत्रीय तथा भाषायी वितरण का आश्वासन दिया जाता है।'[1] इसके अतिरिक्त सामान्य तथा संघीय परिषद में सभी दलों को प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाता है।

साधारणतया संघीय परिषद के सदस्य संघीय सभा के सदस्यों में से ही निर्वाचित किये जाते हैं। निर्वाचित होते ही वे संघीय सभा की सदस्यता से त्यागपत्र

1 A satisfactory regional and linguistic distribution is assured
—John Brown Mason *Switzerland in Foreign Govts*, p 373

दे देते हैं। सघीय परिपद के सदस्य न तो कण्टन के अधीन कोई पद धारण कर सकते हैं और न ही उन्हे किसी प्रकार का व्यवसाय करने की आज्ञा है।

कायकाल—सघीय परिपद का कायकाल ४ वप निश्चित किया गया है, किन्तु इसके साथ ही यह राष्ट्रीय परिपद के कायकाल पर निभर करता है। यदि इस अवधि के पूव स्विटजरलण्ड की सघीय सभा भग हो जाय तो नवीन निर्वाचन के बाद सघीय सभा के दोना सदन अपन सयुक्त अधिवेशन मे नई सघीय परिपद को चुनते हैं। मृत्यु, त्यागपत्र या अन्य किसी कारण से, यदि ४ वप की अवधि के पूव सघीय परिपद का कोई स्थान रिक्त हो जाय, तो सघीय सभा अपने अगले अधिवेशन म शेष अवधि के लिए किसी नय व्यक्ति का चुनाव करती है।

सघीय परिपद के सदस्या क पुनर्निवाचन पर कोई प्रतिबन्ध नही है। वास्तविकता यह है कि सघीय परिपद के सदस्य बार बार चुन लिए जाते है, जिससे वे अपने अनुभव और योग्यता स देश को लाभ पहुचा सकें। उदाहरणाथ, मोहा ३० वप तक, मि० श्रीफ २७ वप तक और वेल्टी २५ वप तक सघीय परिपद के के सदस्य रहे।

वेतन विशेपाधिकार और उन्मुक्तियाँ—सघाय परिपद के प्रत्यक सदस्य का ८० हजार फ्रैंक वार्षिक वतन प्राप्त होता है। परिपद के अध्यक्ष को अन्य सदस्या से १० हजार फ्रैंक अधिक मिलते हैं। ५५ वप या इससे अधिक आयु प्राप्त व्यक्तियो को यदि व १० वप तक परिपद के सदस्य रह चुके है ता उन्हे निवृत्ति वतन (Pension) दिया जाता है जो वेतन का ४० प्रतिशत से ६० प्रतिशत तक होता है। परिपद के सदस्यो का यह वतन अन्य देशो के मन्त्रियो स बहुत कम है और पापद बहुत सादगी से रहते हैं। सघीय परिपद के सदस्यो को लगभग वे ही विशेपाधिकार और उन्मुक्तिया प्राप्त हैं, जो सघीय सभा के सदस्या को होती हैं। अपने कायकाल मे सभी सघीय पापद सनिक सवा से मुक्त हैं और उनके विरुद्ध कोई मुकदमा नहा चलाया जा सकता है। यदि सघीय परिपद अपनी ही इच्छा से अपना यह विशेपाधिकार समाप्त कर दे तो उनके विरुद्ध फौजदारी अभियोग चलाया जा सकता है।

अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष (President and Vice President)—सघीय सभा के दोना सदन अपनी एक सयुक्त बैठक म सघीय परिपद क सदस्यो मे स ही एक अध्यक्ष तथा एक उपाध्यक्ष का एक वप के लिए चुनाव करते है। सघीय परिपद का अध्यक्ष ही स्विस राज्यमण्डल का राष्टपति कहलाता है। वह लगातार दो वप के लिए अध्यक्ष नही चुना जा सकता है, यद्यपि वह एक से अधिक बार अध्यक्ष चुना जा सकता है। उदाहरणाथ, हर मुलर तीन बार (१८९९ १९०७ और १९१६) अध्यक्ष रहे। इसी प्रकार डॉ० फिलिप एटर ४ बार और मि० मोट्टा ५ बार स्विस राज्यमण्डल के अध्यक्ष रहे। अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के चुनाव मे 'ज्येष्ठता के नियम' (Seniority rule) का ध्यान रखा जाता है और चेष्टा यह की जाती है कि क्रम क्रम से सभी स्थाना को अध्यक्ष तथा

उपाध्यक्ष का पद प्राप्त हो जाय। यह भी परम्परा स्थापित हो गई है कि उपाध्यक्ष को अगले वर्ष अध्यक्ष चुन लिया जाता है। उपाध्यक्ष अन्य सदस्यों की भाँति ही एक विभाग का प्रमुख होता है और अध्यक्ष की अनुपस्थिति में अध्यक्ष या राष्ट्रपति पद पर कार्य करता है। अध्यक्ष को अगले वर्ष उपाध्यक्ष पद पर भी निर्वाचित नहीं किया जा सकता है।

संघीय परिषद के अध्यक्ष या स्विस राज्यमण्डल के राष्ट्रपति के अधिकार और कार्य

स्विस राज्यमण्डल के राष्ट्रपति का पद भी संघीय परिषद की भाँति ही अनुपम है और यह स्विस नागरिकों की गहरी प्रजातन्त्रीय और गणतन्त्रीय भावना का प्रतीक है। अपनी गहरी प्रजातन्त्रीय भावना के कारण ही उनके द्वारा कार्यपालिका शक्ति एक व्यक्ति को प्रदान न कर एक समिति को प्रदान की गई है और समिति के अध्यक्ष अर्थात राज्यमण्डल के राष्ट्रपति को किसी भी रूप में उच्च स्थिति प्राप्त नहीं है। लावेल के कथनानुसार— वह साधारण रूप से राष्ट्र की कार्यपालिका समिति का अध्यक्ष होता है और इस कारण वह यह जानने का प्रयत्न करता है कि उसके साथी क्या कर रहे हैं और वह राज्य के नाममात्र के अध्यक्ष के औपचारिक कर्तव्यों को पूरा करता है।" राष्ट्रपति का कार्य दो प्रकार का है

(i) राज्यमण्डल के राष्ट्रपति के रूप में (As President of the Confederation),

(ii) संघीय परिषद के सभापति के रूप में (As Chairman of the Council)।

(i) राज्यमण्डल के राष्ट्रपति के रूप में—सन १९१४ के 'संघीय प्रशासन संगठन अधिनियम' में राष्ट्रपति ब्रिटिश सम्राट की भाँति स्विस राष्ट्र का प्रतीक है और महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय तथा अन्तरराष्ट्रीय अवसरों पर राज्य का प्रतिनिधित्व करता है। वह विदेशी राजदूतों का स्वागत करता है और उनके मानपत्र (Credentials) स्वीकार करता है। वह विदेशों में स्विस राज्यमण्डल का प्रतिनिधि तथा अधिवक्ता माना जाता है। संघीय सभा द्वारा पारित विधेयकों पर वह अपने हस्ताक्षर करता है, किन्तु यह एक औपचारिकता मात्र है और उसे कोई निषेधाधिकार प्राप्त नहीं है। जब अन्य राज्यों के प्रधान स्विटजरलैण्ड की राजकीय यात्रा पर आते हैं तो संघीय परिषद के सातों सदस्य उनका स्वागत करते हैं। वह संघीय चासलरी (Federal Chancellory) का निर्देशन तथा नियमन करता है।

(ii) संघीय परिषद के सभापति के रूप में—संघीय परिषद के सभापति के रूप में वह परिषद की बैठकों का सभापतित्व करता है और किसी विषय पर 'टाई' (tie) पड़ने की स्थिति में निर्णायक मत का प्रयोग करता है। वह संघीय परिषद के सदस्य के रूप में एक विभाग का अध्यक्ष होता है और अन्य पार्षदों की भाँति ही वह कुछ 'प्रशासनिक प्राधिकारों' का प्रयोग करता है। उसे संघीय परिषद के अन्य सदस्यों

के विभागीय कार्यों के निरीक्षण का भी अधिकार है, परन्तु वह केवल सुझाव ही दे सकता है, आदेश नहीं। वह परिषद के अन्य सदस्यो को न तो नियुक्त कर सकता है और न पदच्युत ही उसके द्वारा सघीय परिषद के सदस्यो के विभागो मे भी परिवर्तन नही किया जा सकता। इस प्रकार वह किसी भी अर्थ मे सघीय परिषद का स्वामी या नेता नही है। अत्यन्त सकटकालीन स्थिति मे परिषद की ओर से अध्यक्ष को कभी कभी कुछ कार्य करने के अधिकार दे दिये जाते है, फिर भी साधारणतया परिषद के अन्य सदस्यो से बढकर अध्यक्ष के कोई अधिकार नही है। यहाँ तक कि यदि परिषद का कोई अध्यक्ष अधिक विदेश यात्राएँ करे, तो भी उसकी आलोचना की जाती है।

राष्ट्रपति पद की स्थिति—इस प्रकार राज्यमण्डल का राष्ट्रपति प्राय शक्ति शून्य है और अमरीका के राष्ट्रपति, ब्रिटिश प्रधानमन्त्री या अन्य किसी कार्यपालिका प्रधान से उसकी तुलना करना नितान्त भ्रमपूर्ण है। क्योकि सघीय परिषद के सभी सदस्यो को समान स्थिति प्राप्त है इसलिए स्विस कार्यपालिका को बहुल कार्यपालिका कहा जाता है और क्योकि अध्यक्ष पद के कोई विशेष अधिकार नही है इसलिए हेन्स हूबर के शब्दो म कहा जाता है कि '**राज्यमण्डल का कोई अध्यक्ष नहीं है।**'[1] उसे अपने सहयोगियो की अपेक्षा कुछ वरीयता दी जाती है, लेकिन यह वरीयता मात्र औपचारिक है। वह वास्तव म न तो राष्ट्र का प्रधान है और न शासन का ही। वह देश के प्रशासन के लिए अन्य पापदो की अपेक्षा किसी भी प्रकार अधिक उत्तरदायी नही है। रपार्ड क शब्दो मे '**उसके पद का कोई राष्ट्रीय महत्त्व नहीं है। उसका न तो कोई विशेष अधिकार है और न ही कोई विशेष प्रभाव।**'

किन्तु यह समझना गलत होगा कि स्विस राष्ट्रपति का पद सवथा प्रभावहीन और अनावश्यक है। राष्ट्रपति का पद स्विस शासन का सर्वोच्च पद है और उसके द्वारा कुछ ऐसे औपचारिक काय किये जाते हैं जिन्हे समस्त सदस्य एक साथ नही कर सकते। स्विस राष्ट्रपति पद के गौरव पर सदेह नही किया जा सकता ब्रुक्स ने ठीक ही कहा है कि—**"जनसेवा के एक लम्बे जीवन के पश्चात् सर्वोच्च पारितोषिक के रूप में इस पद की कामना की जाती है और इसी कारण यह समस्त स्विस जनता के बहुत अधिक सम्मान का पात्र है।"**[2]

प्रशासन के विभाग
(Administrative Department)

भारत ब्रिटन आदि देशो मे प्रशासनिक विभागो की सख्या निश्चित नही है

[1] The Confederation has no President —*Hans Huber*

[2] 'As such it is sought after as the crowning reward of a long career of public service as much also it commands in high measure the respect of the Swiss people as a whole

—Brooks *Government and Politics of Switzerland* p 110

लेकिन स्विट्जरलण्ड मे यह सख्या निश्चित है, और समस्त प्रशासनिक कार्यों को ७ विभागो मे बाँट दिया गया है जो इस प्रकार हैं

(१) राजनीतिक विभाग (Political Department)
(२) न्याय पुलिस विभाग (Department of Police and Justice)
(३) गृह विभाग (Department of Interior)
(४) सेना विभाग (Military Department)
(५) वित्त तथा प्रशुल्क विभाग (Dept of Finance and Customs)
(६) सावजनिक अथ विभाग (Dept of Public Economy)
(७) डाक और रल विभाग (Post and Railways Department)

प्रत्येक विभाग सघीय परिषद के एक सदस्य के आधीन होता है, जो उसके काय सचालन के लिए उत्तरदायी होता है। स्विटजरलैण्ड मे सघीय परिषद के सदस्य अपनी बठक म बातचीत के आधार पर विभागो का बँटवारा कर लेते हैं और प्राय एक सदस्य को वही विभाग दिया जाता है, जो उसके पास पहले से था जिससे वह अपने अनुभव से लाभ पहुचा सके। प्रत्येक विभाग का प्रमुख अन्य किसी विभाग का उप प्रमुख होता है, जिससे किसी विशेष सदस्य की अस्वस्थता या अनुपस्थिति म भी विभागीय काय का सुचारु रूप स सचालन हो सके। परिषद मे विभिन्न दलो के सदस्य होते है और उनके द्वारा अपने मतभेद खुले रूप स व्यक्त किये जा सकते हैं।

कायप्रणाली—सघीय परिषद की साधारणतया सप्ताह मे २ बठकें होती हैं। परिषद की कायवाही गुप्त होती है और परिषद के द्वारा कोई भी काय किया जा सके इसके लिए कम से कम ४ सदस्यो की उपस्थिति आवश्यक है। निणय के लिए उपस्थित सदस्यो का बहुमत आवश्यक है। मत हाथ उठाकर दिये जाते हैं और अध्यक्ष को निर्णायक मत देने का अधिकार प्राप्त है। सघीय परिषद सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के आधार पर काय नही करती है। इसलिए यह कहा जाता है कि स्विटजरलण्ड मे कायपालिका के ७ सदस्य हैं परन्तु कोई कायपालिका परिषद नहीं है।

सघीय परिषद की शक्तियां और काय
(Powers and Functions of Federal Council)

सघीय परिषद मुख्यतया एक प्रशासकीय सस्था है और सविधान की धारा ९५ के अनुसार इसमे स्विस राज्यमण्डल की सर्वोच्च निर्देशन और कायपालिका निहित है। प्रशासनिक शक्तियो के अतिरिक्त सघीय परिषद को कुछ महत्त्वपूण विधायी, वित्तीय और न्यायिक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। स्विस सविधान की धारा १०२ म सघीय परिषद की शक्तियो एव कार्यों की एक लम्बी सूची दी गई है, जिनका अध्ययन निम्नलिखित शीषको मे किया जा सकता है

(१) कायपालिका शक्तियाँ—सघीय परिषद स्विस राज्यमण्डल की सर्वोच्च

कायपालिका सत्ता है और इस क्षेत्र मे उसकी शक्तिया निश्चित रूप से बहुत अधिक व्यापक हैं।

(i) परिषद सघीय विधियो तथा आदेशो के अनुसार समस्त राज्यमण्डल के प्रशासन को नियन्त्रित करती है। स्विस सविधान के उपबन्धो, सघीय सभा द्वारा निर्मित विधियों, अध्यादेशो विदेशो के साथ की गयी सन्धियो और सघीय न्यायाधिकरण के निर्णयो को कार्यरूप प्रदान करने का दायित्व सघीय परिषद पर ही है।

(ii) सघीय परिषद को उन सभी पदो पर नियुक्ति करने का अधिकार प्राप्त है, जिन पर नियुक्ति करने की शक्ति सघीय सभा, सघीय न्यायालय या अन्य किसी सघीय प्राधिकारी को प्रदान नही की गयी है।

(iii) बाहरी आक्रमण से स्विटजरलण्ड की स्वतन्त्रता और तटस्थता की रक्षा और आन्तरिक क्षेत्र मे शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना सघीय परिषद का दायित्व है और परिषद इसके लिए सभी आवश्यक कदम उठा सकती है।

(iv) सघीय परिषद को सघीय सेना पर नियन्त्रण की शक्ति प्राप्त है। यदि सघीय सभा की बैठक न हो रही हो और सुरक्षा की दृष्टि से कोई कार्य करना आवश्यक हो तो परिषद स्वय ही अपनी इच्छा से सेना का प्रयोग कर सकती है, लेकिन यदि तीन सप्ताह से अधिक की अवधि के लिए या २ हजार से अधिक सनिको का प्रयोग करना हो तो इस पर सघीय सभा की स्वीकृति आवश्यक होती है।

(v) सघीय परिषद को स्विटजरलण्ड के वदेशिक सम्बन्धो के सचालन का अधिकार प्राप्त है। यह कण्टनो की पारस्परिक सधियो और कण्टनो के द्वारा विदेशो से जो सधिया की गयी हैं उनकी जाच करती है। यदि परिषद ऐसा समझे कि ये सधियाँ अनुचित हैं तो वह सघीय सभा से इन सधियो या समझौतो को रद्द करने की सिफारिश कर सकती है।

(vi) सघीय परिषद को कण्टनो के प्रशासन पर भी कुछ अधिकार प्राप्त हैं। वह कैण्टनो के सविधानो की क्रियाविधी की जाँच करती है एव उनके सशोधन पर स्वीकृति देती है। वह कण्टनो के वित्तीय, सनिक तथा प्रशासनिक कार्यों का निरीक्षण करती है। कण्टनो की विधानसभाओ द्वारा पारित कुछ विधियो पर सघीय परिषद की स्वीकृति अनिवार्य है।

उपरोक्त के अतिरिक्त सघीय परिषद के द्वारा कुछ औपचारिक कार्य भी किये जाते हैं। ये कार्य परिषद सामूहिक रूप से या इसके दो तीन सदस्य मिल कर करते हैं। विदेशी अतिथियो का स्वागत, राजदूतो से परिचय पत्र प्राप्त करना, राष्ट्रीय समारोहो और मनोरजन आयोजनो मे भाग लेना ऐसे ही कुछ कार्य हैं।

(२) विधायी शक्तिया—सघीय परिषद को विधायी क्षेत्र मे भी महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है। यद्यपि परिषद के सदस्य सघीय सभा के सदस्य नही होते परन्तु वे उसकी बैठकों मे उपस्थित होते हैं और मत देने के अतिरिक्त अन्य सभी कार्यों में भाग लेते हैं। सघीय परिषद स्वेच्छा से विधानमण्डल के सम्मुख विधेयक प्रस्तुत

लेकिन स्विटजरलण्ड म यह सख्या निश्चित है, और समस्त प्रशासनिक कार्यों को ७ विभागो म बांट दिया गया है जो इस प्रकार हैं

(१) राजनीतिक विभाग (Political Department)
(२) न्याय पुलिस विभाग (Department of Police and Justice)
(३) गह विभाग (Department of Interior)
(४) सेना विभाग (Military Department)
(५) वित्त तथा प्रशुल्क विभाग (Dept of Finance and Customs)
(६) सावजनिक अय विभाग (Dept of Public Economy)
(७) डाक और रेल विभाग (Post and Railways Department)

प्रत्येक विभाग सघीय परिषद के एक सदस्य के आधीन होता है, जो उसके काय सचालन के लिए उत्तरदायी होता है। स्विटजरलैण्ड मे सघीय परिषद के सदस्य अपनी बठक मे बातचीत के आधार पर विभागो का बँटवारा कर लते हैं और प्राय एक सदस्य को वही विभाग दिया जाता है, जो उसके पास पहले स था, जिससे वह अपने अनुभव से लाभ पहुचा सके। प्रत्येक विभाग का प्रमुख अन्य किसी विभाग का उप प्रमुख होता है, जिससे किसी विशेष सदस्य की अस्वस्थता या अनुपस्थिति म भी विभागीय काय का सुचारु रूप से सचालन हो सके। परिषद म विभिन्न दलों के सदस्य होते हैं और उनके द्वारा अपन मतभेद खुले रूप स व्यक्त किये जा सकते हैं।

कायप्रणाली—सघीय परिषद की साधारणतया सप्ताह मे २ बठकें होती हैं। परिषद की कायवाही गुप्त होती है और परिषद के द्वारा कोई भी काय किया जा सके, इसके लिए कम से कम ४ सदस्यो की उपस्थिति आवश्यक है। निणय के लिए उपस्थित सदस्यो का बहुमत आवश्यक है। मत हाथ उठाकर दिये जाते हैं और अध्यक्ष को निर्णायक मत देने का अधिकार प्राप्त है। सघीय परिषद सामूहिक उत्तर दायित्व के सिद्धान्त के आधार पर काय नहीं करती है। इसलिए यह कहा जाता है कि स्विटजरलण्ड मे कायपालिका के ७ सदस्य हैं परन्तु कोई कायपालिका परिषद नहीं है।

सघीय परिषद की शक्तियां और काय
(Powers and Functions of Federal Council)

सघीय परिषद मुख्यतया एक प्रशासकीय सस्था है और सविधान की धारा ६५ के अनुसार इसमे स्विस राज्यमण्डल की सर्वोच्च निर्देशन और कायपालिका निहित है। प्रशासनिक शक्तियो के अतिरिक्त सघीय परिषद को कुछ महत्त्वपूर्ण विधायी, वित्तीय और न्यायिक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। स्विस सविधान की धारा १०२ म सघीय परिषद की शक्तियो एव कार्यों की एक लम्बी सूची दी गई है, जिनका अध्ययन निम्नलिखित शीर्षको म किया जा सकता है

(१) कायपालिका शक्तियां—सघीय परिषद स्विस राज्यमण्डल की सर्वोच्च

कार्यपालिका सत्ता है और इस क्षेत्र मे उसकी शक्तिया निश्चित रूप से बहुत अधिक व्यापक है।

(i) परिषद संघीय विधियो तथा आदेशो के अनुसार समस्त राज्यमण्डल के प्रशासन को नियन्त्रित करती है। स्विस संविधान के उपबन्धो, संघीय सभा द्वारा निर्मित विधियो, अध्यादेशो, विदेशो के साथ की गयी संधियो और संघीय न्यायाधिकरण के निर्णयो को कार्यरूप प्रदान करने का दायित्व संघीय परिषद पर ही है।

(ii) संघीय परिषद को उन सभी पदो पर नियुक्ति करने का अधिकार प्राप्त है, जिन पर नियुक्ति करने की शक्ति संघीय सभा, संघीय न्यायालय या अन्य किसी संघीय प्राधिकारी को प्रदान नही की गयी है।

(iii) बाहरी आक्रमण से स्विटजरलैण्ड की स्वतन्त्रता और तटस्थता की रक्षा और आन्तरिक क्षेत्र मे शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना संघीय परिषद का दायित्व है और परिषद इसके लिए सभी आवश्यक कदम उठा सकती है।

(iv) संघीय परिषद को संघीय सेना पर नियन्त्रण की शक्ति प्राप्त है। यदि संघीय सभा की बैठक न हो रही हो और सुरक्षा की दृष्टि से कोई कार्य करना आवश्यक हो तो परिषद स्वयं ही अपनी इच्छा से सेना का प्रयोग कर सकती है, लेकिन यदि तीन सप्ताह से अधिक की अवधि के लिए या २ हजार से अधिक सैनिको का प्रयोग करना हो, तो इस पर संघीय सभा की स्वीकृति आवश्यक होती है।

(v) संघीय परिषद को स्विटजरलैण्ड के वैदेशिक सम्बन्धो के संचालन का अधिकार प्राप्त है। यह कैण्टनो की पारस्परिक संधियो और कैण्टनो के द्वारा विदेशो से जो संधियाँ की गयी हैं, उनकी जाँच करती है। यदि परिषद ऐसा समझे कि ये संधियाँ अनुचित हैं, तो वह संघीय सभा से इन संधियो या समझौतो को रद्द करने की सिफारिश कर सकती है।

(vi) संघीय परिषद को कैण्टनो के प्रशासन पर भी कुछ अधिकार प्राप्त हैं। वह कैण्टनो के संविधानो की क्रियान्विती की जाँच करती है एव उनके संशोधन पर स्वीकृति देती है। वह कैण्टनो के वित्तीय, सैनिक तथा प्रशासनिक कार्यों का निरीक्षण करती है। कैण्टनो की विधानसभाओ द्वारा पारित कुछ विधियो पर संघीय परिषद की स्वीकृति अनिवार्य है।

उपरोक्त के अतिरिक्त संघीय परिषद के द्वारा कुछ औपचारिक कार्य भी किये जाते हैं। ये कार्य परिषद सामूहिक रूप से या इसके दो तीन सदस्य मिल कर करते हैं। विदेशी अतिथियो का स्वागत, राजदूतो से परिचय-पत्र प्राप्त करना, राष्ट्रीय समारोहो और मनोरंजन आयोजनो मे भाग लेना ऐसे ही कुछ कार्य हैं।

(२) विधायी शक्तियाँ—संघीय परिषद को विधायी क्षेत्र मे भी महत्त्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है। यद्यपि परिषद के सदस्य संघीय सभा के सदस्य नहीं होते परन्तु वे उसकी बैठकों मे उपस्थित होते हैं और मत देने के अतिरिक्त अन्य सभी कार्यों में भाग लेते हैं। संघीय परिषद स्वेच्छा से विधानमण्डल के सम्मुख विधेयक प्रस्तुत

कर सकती है और सघीय सभा भी परिषद से किसी विशेष विषय पर विधेयक प्रस्तुत करने के लिए कह सकती है। व्यवहार के अन्तगत लगभग ६५ प्रतिशत विधेयक सघीय परिषद के द्वारा ही प्रस्तावित किये जाते हैं। परिषद को सविधान सशोधन सम्बन्धी विधेयक प्रस्तावित करने का भी अधिकार प्राप्त है। सघीय सभा के दोनो सदनो मे साधारण सदस्यो द्वारा जितने भी विधेयक प्रस्तावित किये जाते हैं उन सबको सवप्रथम सघीय परिषद के सम्बन्धित सदस्यो के पास उनके विचार के लिए भेजा जाता है और उसके बाद ही सघीय सभा उन पर विचार करती है। सघीय परिषद के सदस्य किसी विषय पर यह प्रस्ताव भी कर सकते हैं कि उस पर लोकनिणय कराया जाय। परिषद के सदस्य सघीय सभा की समितियो के विचार विमश मे भी भाग लेकर कानून निर्माण के काय को प्रभावित करते हैं।

इन सबके अतिरिक्त सघीय परिषद को अध्यादेश जारी करने तथा 'प्रदत्त व्यवस्थापन' (Delegated legislation) की प्रणाली के अन्तगत कानूनो को लागू करते हुए नियम बनाने का अधिकार भी प्राप्त है। परिषद के इन अध्यादेशो व नियमो की शक्ति और उनका प्रभाव कानूनो जसा ही होता है और न्यायालयो द्वारा भी उनकी मान्यता की जाती है।

सघीय परिषद के इन विधायी कृत्यो को दृष्टि मे रखते हुए रैपाड ने लिखा है कि 'वस्तुत और सवधानिक धारणा के नितान्त विपरीत सघीय परिषद काय पालिका और प्रशासनिक कार्यो के साथ साथ महत्वपूण विधायी काय भी करती है।'[1]

(३) वित्तीय शक्तियां—वित्तीय क्षेत्र मे सघीय परिषद को महत्वपूर्ण शक्तियां प्राप्त हैं। स्विस सघ के वित्तीय प्रशासन का सचालन इसी के द्वारा किया जाता है और अपनी इस शक्ति के अन्तगत यह सघीय बजट तयार करती तथा उसको सघीय सभा के सामने स्वीकृति के लिए रखती है। यह सघीय सरकार के आय और व्यय का हिसाब सघीय सभा को देती है। यह राजस्व तथा अन्य कर एकत्रित करती है और सघीय सभा द्वारा स्वीकृत व्यय की निगरानी रखती है।

(४) न्यायिक शक्तियां—१९१४ तक सघीय परिषद को बहुत अधिक न्यायिक शक्तियां प्राप्त थी लेकिन कायपालिका को इतनी अधिक न्यायिक शक्तियाँ प्राप्त होना उचित न समझते हुए १९१४ म इन्हें बहुत कम कर दिया गया। फिर भी, सघीय परिषद को न्यायिक क्षेत्र के कुछ अधिकार प्राप्त हैं। प्रथमत, यह सघीय सरकार के विभिन्न विभागो जिनम सघीय रेलवे प्रशासन भी सम्मिलित है, के निणयो के विरुद्ध निजी व्यक्तियो की अपीलें सुनती है। द्वितीय, यदि कण्टनो मे धार्मिक

1 In actual truth and in contrast to the constitutional fiction, the Federal Council thus exercises legislative as well as executive and administrative functions
—William Rappard *The Government of Switzerland*, p 84

आधार पर कोई भेदभाव हो, तो यह कैण्टनो के निणयो के विरुद्ध अपीलें सुनती है। ततीय इसे कण्टनो की व्यापार सम्ब धी स धियो के आधार पर पदा होन वाले झगडे तथा सविधान की कुछ धाराओं के अ तगत उत्पन्न विवादो के सम्ब ध मे की गयी अपीलो पर निणय देने का अधिकार प्राप्त है। इन सभी विवादो के सम्बध मे सघीय परिषद का निणय अ तिम नही होता और इसके विरुद्ध सघीय प्रशासनिक न्यायालय मे अपील की जा सकती है।

(५) सकटकालीन शक्तिया—सविधान ने सघीय परिषद को कोई सकट कालीन शक्तिया नही दी हैं, कि तु व्यवहार में, उसके द्वारा ये शक्तिया प्राप्त कर ली गयी हैं। जब कभी देश की आ तरिक तथा वाहरी परिस्थितियो के कारण सकट काल उत्पन्न हुआ, तो सघीय सभा न परिषद को पूण अधिकार दे दिय। उदाहरणाथ, १८४६, १८५३, १८६६ तथा १८७० म सघीय सभा ने परिषद को देश की तटस्थता की रक्षा करने लिए सभी प्रकार के अधिकार प्रदान किये। इसी प्रकार द्वितीय विश्वयुद्ध म राष्ट्र की रक्षा करने और तटस्थता को बनाये रखने के लिए सभा के द्वारा परिषद को पूण अधिकार दे दिये गये। केवल सुरक्षा के लिए ही नही, वरन् १६३० मे आर्थिक सकट का सामना करने के लिए भी परिषद को इसी प्रकार के अधिकार प्रदान किय गये थे। इस प्रकार सकटकाल म सघीय परिषद अत्यधिक शक्तिशाली हो जाती है और उसके द्वारा बहुत कुछ सीमा तक अपने ही विवेक के अनुसार काय किया जा सकता है।

इस प्रकार सघीय परिषद को बहुत अधिक महत्त्वपूण शक्तिया प्राप्त हैं। लावेल के कथनानुसार, सघीय परिषद को राष्ट्रीय सरकार रूपी घडी की बडी कमानी कहा जा सकता है और यह निश्चित रूप में राष्ट्रीय शासन का सन्तुलन चक्र है।"[1]

सघीय परिषद का सघीय सभा से सम्बन्ध

सघीय परिषद को स्विस शासन व्यवस्था की एक विलक्षण सस्था कहा जाता है और उसकी यह विलक्षणता सर्वाधिक रूप मे व्यवस्थापिका अर्थात सघीय सभा के साथ उसके सम्ब धो म देखी जा सकती है। सघीय परिषद और सघीय सभा का यह पारस्परिक सम्बन्ध न तो पूणतया ब्रिटेन की ससदात्मक व्यवस्था के अनुरूप है और न ही अमरीका की अध्यक्षात्मक व्यवस्था के। अमरीका म शक्ति विभाजन के सिद्धा त को कठोर रूप म अपनाते हुए कायपालिका अर्थात राष्ट्रपति और म त्रिमण्डल को अमरीकी सघ की व्यवस्थापिका अर्थात काग्रेस स बिलकुल पृथक रखा गया है और कायपालिका क सदस्य कानून निर्माण काय म भाग नहीं लेते।

[1] 'The Federal Council may almost be regarded as the mainspring and is certainly the balance wheel of the national government
—Lowell, *Government and Parties in Continental Europe* Vol II p 205

परन्तु स्विटजरलैण्ड म सघीय परिषद के सदस्य सघीय सभा की बठकों म भाग लेते हैं प्रश्नो का उत्तर देते, वादविवाद मे भाग लेते तथा मतदान के अतिरिक्त अन्य सभी अधिकारो का प्रयोग करते हैं। विधियो के तो सभी प्रारूप परिषद द्वारा ही निर्मित किये जाते हैं और निजी सदस्यो द्वारा सदन मे प्रस्तुत किये जाने वाले विधेयक भी सवप्रथम सघीय परिषद के पास परीक्षण के लिए भेजे जाते हैं। इस प्रकार विधायी क्षेत्र मे पहल सघीय परिषद के द्वारा ही की जाती है और सघीय परिषद कानून निर्माण के क्षेत्र म सक्रिय सर्वाधिक महत्त्वपूण इकाई है।

कायपालिका द्वारा कानून निर्माण के काय म भाग लेने की यह प्रवृत्ति ब्रिटेन की ससदात्मक व्यवस्था के अनुरूप है, लेकिन इसके साथ ही यह ब्रिटिश व्यवस्था स इस रूप मे भिन्न है कि ब्रिटेन म कायपालिका के सदस्य व्यवस्थापिका के भी सदस्य होते हैं और व्यवस्थापिका म पराजित होने पर उन्हे पदत्याग करना होता है, लेकिन स्विटजरलण्ड मे व्यवस्थापिका द्वारा कायपालिका का प्रस्ताव अस्वीकार कर दिये जाने पर कायपालिका द्वारा पदत्याग किये जाने की कोई आवश्यकता नहीं होती। लावेल ने इन दोना स्विस सस्थाओ के पारस्परिक सम्बन्ध की इस विशेष प्रवृत्ति को लक्ष्य करते हुए लिखा है कि "स्विस सघीय परिषद का सदस्य एक वकील अथवा वास्तुकार की तरह है। उसका परामश लिया जाता है और प्राय उस पर ध्यान भी दिया जाता है। लेकिन यदि उसका नियोजक उसके परामश के विरुद्ध ही काय करने का हठ करे, तो वकील अथवा वास्तुकार से अपनी वृत्ति छोड देने की बात नहीं की जाती। वस्तुत ऐसा करना असवैधानिक समझा जाता है।"

जहाँ तक व्यवस्थापिका और कायपालिका के पारस्परिक नियन्त्रण का प्रश्न है इस सम्बन्ध मे सवधानिक स्थिति एक प्रकार की है और व्यावहारिक स्थिति दूसरे ही प्रकार की है।

सवधानिक स्थिति—सविधान के अनुच्छेद ७१ के अनुसार सघीय सभा म ही राज्यमण्डल की सर्वोच्च सत्ता निहित है। सविधान के अनुसार सघीय परिषद विदेशी मामलो, सशस्त्र बला सनाओ अथवा सावजनिक प्रशासन के सम्बन्ध में अपनी शक्तियों का प्रयोग या तो सघीय सभा के पूव आदेशानुसार करती है अथवा काय कर चुकने के बाद इन पर सघीय सभा का अनुमोदन प्राप्त कर लेती है। सघीय सभा परिषद को सकटकालीन शक्तियो के प्रयोग का अधिकार दे देती है और जब चाहे तब इसे वापस भी ले सकती है। वह प्रस्तावो तथा आदेशो द्वारा सघीय परिषद के कार्यों पर नियन्त्रण रखती है। सघीय परिषद के सदस्यो तथा अध्यक्ष एव उपाध्यक्ष का निर्वाचन सघीय सभा करती है। सघीय सभा के विघटन की स्थिति म सघीय परिषद का भी विघटन हो जाता है और सघीय परिषद अपने कार्यों का वार्षिक विवरण सघीय सभा के सम्मुख प्रस्तुत करती है।

सविधान के इन उपबन्धो स ऐसा प्रतीत होता है कि सघीय परिषद जिन शक्तियो का प्रयोग करती है, व मौलिक रूप से सघीय सभा की हैं और सघीय

परिषद उनका प्रयोग संघीय सभा के एक अभिकर्ता (agent) के रूप में ही करती है। ज़ुरचर के मतानुसार, "स्विस संविधान का सिद्धान्त यह प्रतीत होता है कि कार्यपालिका शासन की एक स्वतन्त्र अथवा सहयुक्त (Co ordinate) शाखा न होकर संघीय सभा की सेविका है।"[1] इसी प्रकार प्रो० डायसी ने लिखा है कि "संघीय परिषद से आशा की जाती है कि वह संघीय सभा द्वारा निर्धारित नीति को, जो अन्ततोगत्वा राष्ट्र की ही नीति है क्रियान्वित करेगी परिषद उसी प्रकार सभा के आदेशों पर चलती है, जिस प्रकार किसी दुकान के गुमाश्ते से यह आशा की जाती है कि वह अपने मालिक की आज्ञाओं का अवश्य ही पालन करेगा।"

वास्तविक स्थिति—स्विटजरलैण्ड में भी इस सम्बन्ध में सिद्धान्त और व्यवहार में पर्याप्त अन्तर है। वर्तमान समय में विश्व के लगभग सभी राज्यों में व्यवस्थापिका से कार्यपालिका अधिक शक्तिशाली हो गई है और स्विटजरलैण्ड भी इसका कोई अपवाद नहीं है। सिद्धान्ततः संघीय परिषद संघीय सभा की अभिकर्ता मात्र है, लेकिन व्यवहार में संघीय परिषद की शक्तियों में पर्याप्त वृद्धि हुई है और संघीय सभा से नियन्त्रित होने के बजाय यह संघीय सभा पर नियन्त्रण रखने लगी है। अन्य राज्यों के समान स्विटजरलैण्ड में भी लोककल्याणकारी प्रवृत्ति को अपना लिया गया है और इसके कारण संघीय परिषद के कार्य इतने बढ़ गये हैं कि संघीय सभा अपने अल्प समय और सामान्य योग्यता के आधार पर इन सभी कार्यों पर नियन्त्रण नहीं रख सकती है। विधायी क्षेत्र में भी स्थिति यही है। संघीय परिषद के सदस्य मत देने के अतिरिक्त कानून निर्माण की समस्त प्रक्रिया में भाग लेते हैं और संघीय सभा की तुलना में परिषद के सदस्यों के अधिक योग्य और अनुभवी होने के कारण कानून निर्माण का कार्य बहुत कुछ सीमा तक परिषद के विवेक के अनुसार ही सम्पन्न होता है। संघीय परिषद के सदस्य उच्च कोटि के राजनीतिज्ञ होते हैं और अनेक बार उनका पुनर्निर्वाचन होता है। इस लम्बी पदावधि के कारण उनकी प्रतिष्ठा और शासन कुशलता बहुत बढ़ गई है और व्यावहारिक राजनीति में उनका नेतृत्व स्थापित हो गया है। इस तथ्य ने ही प्रशासन और कानून निर्माण दोनों ही क्षेत्रों में संघीय सभा की तुलना में संघीय परिषद को अधिक शक्तिशाली बना दिया है। वस्तुस्थिति यह है कि संघीय सभा ने स्वयं ही अपनी सीमाओं को समझ लिया है और रपार्ड के शब्दों में "संघीय सभा के संवैधानिक अधिकारों के होते हुए भी आज नेतृत्व स्पष्ट रूप से संघीय परिषद

[1] 'The theory of the Swiss Constitution appears to be that the executive is not an independent or co-ordinate branch of the government but the servant of the Federal Assembly

—Zurcher *Government of Continental Europe* p 94

के हाथों में चला गया है।"[1] इसी प्रकार ब्राइस ने लिखा है कि "वैधानिक दृष्टि से व्यवस्थापिका की सेविका होते हुए भी व्यवहार में संघीय परिषद ब्रिटेन की मन्त्रिपरिषद के समान और फ्रांस की कुछ मन्त्रिपरिषदों से अधिक अधिकारों का प्रयोग करती है। यह पथ प्रदर्शक भी है और साधन भी।"[2]

संघीय परिषद की विशेषताएँ

स्विस संघीय परिषद अपने ढंग की एक ही है और प्रो० स्ट्रॉग के शब्दों में 'स्विटजरलण्ड की संघीय परिषद विश्व की अन्य सभी कार्यपालिकाओं से अधिक ध्यान देने योग्य है।" संघीय परिषद की जिन विशेषताओं ने उसे यह स्थिति प्रदान की है, उनका अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) बहुल कार्यपालिका—सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि व्यवस्थापिका का संगठन बहुलता के आधार पर, लेकिन कार्यपालिका संगठन की दृष्टि से एकल होना चाहिए। इसका तात्पर्य यह है कि कार्यपालिका का नेतृत्व एक व्यक्ति के द्वारा ही किया जाना चाहिए। वर्तमान समय के अधिकांश राज्यों में ऐसी ही व्यवस्था है। अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रपति के नेतृत्व में और संसदात्मक शासन व्यवस्था के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री के नेतृत्व में कार्यपालिका के द्वारा प्रशासन सम्बन्धी कार्य किया जाता है। लेकिन स्विट्जरलण्ड में एकल कार्यपालिका के स्थान पर बहुल कार्यपालिका को अपनाया गया है। संविधान के ९५वें अनुच्छेद के अनुसार 'राज्य संघ की सर्वोच्च निर्देशन तथा कार्यकारिणी शक्ति ७ सदस्यों की संघीय परिषद द्वारा प्रयुक्त की जाती है।" यह कार्यपालिका बहुल इस दृष्टि से है कि संघीय परिषद के सातों ही सदस्यों की स्थिति समान है और इसी कारण हे स हूबर लिखते हैं कि राज्यमण्डल का कोई अध्यक्ष नहीं है। स्विस नागरिकों में प्रजातन्त्रीय और गणतन्त्रीय भावनाओं की अतिशयता के कारण ही उनके द्वारा बहुल कार्यपालिका को अपनाया गया है। रपार्ड के ही शब्दों में हमारी प्रजातन्त्रीय भावना किसी एक व्यक्ति की अतिशय प्रमुखता के विरुद्ध विद्रोह करती है।'[3] इस बहुल कार्यपालिका का अन्य कोई उदाहरण नहीं है और सोवियत संघ की प्रेजीडियम को ही इसके समीप कहा जा सकता है। लेकिन स्विटजरलण्ड और सोवियत रूस की शासन व्यवस्था में आधारभूत भेद है और इस कारण यह समानता मात्र औपचारिक है, वास्तविक नहीं। स्विटजरलण्ड में यह बहुल कार्यपालिका

[1] Today inspite of all the constitutional prerogatives of the Federal Assembly the lead has clearly passed into the hands of the Federal Council

—Rappard *Government of Switzerland* p 84

[2] 'Legally the servant of the legislature it exerts in practice as much authority as does the English and more than do some French cabinets It is a guide as well as an instrument'

—Bryce *Modern Democracies* p 397

[3] Our democratic feelings revolts against any exclusive personal --- eminence —Rappard, *Government of Switzerland*, p 76

सफलतापूर्वक कार्य कर रही है लेकिन ऐसा स्विटजरलैण्ड की विशेष परिस्थितियो के कारण ही है और विश्व के अन्य देशो मे, विशेषतया भारत जसे देश मे, इसे सफलतापूर्वक अपनाना कतई सम्भव नही है।

(२) ससदात्मक व अध्यक्षात्मक प्रणालियो का समन्वय—राज्य और शासन सम्बन्धी ज्ञान के अन्तगत कायपालिका के दो प्रकारो का अध्ययन किया जाता है। प्रथम, समदात्मक कायपालिका जिसका आदश उदाहरण ब्रिटेन है, और द्वितीय, अध्यक्षात्मक कायपालिका जिसका आदश उदाहरण सयुक्त राज्य अमरीका है। लेकिन "स्विस शासन व्यवस्था अपने आप मे एक वग है। यह ससदात्मक और अध्यक्षात्मक दोनों ही प्रकार की कार्यपालिकाओ से मूलभूत रूप मे भिन्न है, परन्तु इसमे दोनों ही शासन व्यवस्थाओ के लक्षणो का मिश्रण है।" ससदात्मक और अध्यक्षात्मक कायपालिका से स्विस सघीय परिषद के साम्य और अन्तर का अध्ययन निम्न रूपो मे किया जा सकता है

ससदात्मक कार्यपालिका (ब्रिटिश कायपालिका) से तुलना

स्विस कायपालिका का स्वरूप ससदात्मक कायपालिका अथात इगलण्ड की मन्त्रिपरिषद से कुछ अशो म समान है। बाहरी रूप से इन दोनो म निम्न समानताएँ दिखाई दती हैं

(१) ब्रिटिश सम्राट के समान स्विस सघीय परिषद के अध्यक्ष को कोई अधिकार प्राप्त नही है। वह भी कायपालिका का औपचारिक प्रधान ही है।

(२) सघीय परिषद के सदस्य सघीय सभा के दोनो सदनो मे बैठते है, प्रश्नो का उत्तर देते हैं और बहुत कुछ अशो तक ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के सदस्यो के समान ही विधि और बजट निर्माण के कार्य म सहयोग देते हैं।

(३) सघीय परिषद भी ससदात्मक व्यवस्था की मन्त्रिमण्डल की भाँति ही पार्लियामेंट की एक समिति मात्र है।

(४) इगलण्ड की मन्त्रिपरिषद की भाँति ही सघीय परिषद सघीय सभा का पथ प्रदर्शन करती है।

उपरोक्त समानताओ के होते हुए भी सघीय परिषद इगलण्ड की मन्त्रि-परिषद या अन्य किसी ससदात्मक कायपालिका से मूलत भिन्न है। रचना काय और शक्ति तथा कायप्रणाली सभी रूपो म यह भेद देखा जा सकता है

(१) ससदीय व्यवस्था म मन्त्री व्यवस्थापिका के सदस्य होते ह यदि वे मन्त्रिपद पर नियुक्त किये जाने के समय व्यवस्थापिका के सदस्य नही होते, तो ६ माह के भीतर ही उन्हे व्यवस्थापिका का सदस्य बनना होता है। लेकिन स्विटजरलण्ड म एक ही व्यक्ति सघीय सभा और सघीय परिषद दोनो का सदस्य नही हो सकता। सघीय सभा के जो सदस्य सघीय परिषद के लिए चुन लिए जाते हैं, उन्हे सघीय सभा से त्यागपत्र दना होता है।

(२) *संसदीय कार्यपालिका का एक प्रमुख तत्व सामूहिक उत्तरदायित्व का* सिद्धान्त है। सामूहिक उत्तरदायित्व के इस सिद्धान्त के कारण इंगलण्ड की मंत्रि परिषद् एक इकाई की भाँति कार्य करती है और मन्त्रिमण्डल के सदस्य एक साथ डूबते या एक साथ तरते हैं। लेकिन स्विस संघीय परिषद् एक इकाई नहीं और इसका कोई सामूहिक उत्तरदायित्व नहीं होता। संघीय परिषद् का प्रत्येक सदस्य केवल अपने कार्यों के लिए ही उत्तरदायी होता है और यद्यपि परिषद् की बैठकों में एक सामान्य नीति अपनाने का प्रयत्न किया जाता है तथा विभिन्न विभागों में सहयोग की प्रवृत्ति होती है परन्तु मन्त्री एक दूसरे के आचरण और विचारों से बंधे हुए नहीं होते हैं। यद्यपि ऐसा कम देखने में आता है किन्तु सिद्धान्ततः परिषद् के सदस्य संघीय सभा में एक दूसरे विभाग की नीति और कार्यों की आलोचना कर सकते हैं। सामूहिक उत्तरदायित्व के इस अभाव के कारण स्विस संघीय परिषद् की समस्त प्रकृति ब्रिटिश मन्त्रिपरिषद से भिन्न हो जाती है।

(३) संसदीय कार्यपालिका अर्थात् मन्त्रिमण्डल सामान्यतया एक दलीय होता है। इंगलैंड में राष्ट्रीय संकट के अवसरों को छोड़कर मिले जुले मन्त्रिमण्डलों को पसन्द नहीं किया जाता और मन्त्रिमण्डल में बहुमत दल के सदस्य ही होते हैं। किन्तु स्विस संघीय परिषद में किसी एक राजनीतिक दल के सदस्य नहीं वरन् स्विस राजनीति में महत्त्व रखने वाले सभी राजनीतिक दलों के सदस्य होते हैं।

(४) संसदात्मक व्यवस्था की कार्यपालिका गोपनीयता के आधार पर कार्य करती है और इंगलैंड भारत आदि देशों में मन्त्रिपद ग्रहण करते समय संविधान के प्रति निष्ठा के साथ साथ गोपनीयता की शपथ ली जाती है लेकिन स्विस संघीय परिषद के द्वारा गोपनीयता के आधार पर कार्य नहीं किया जाता है।

(५) ब्रिटेन की संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत संसद और मन्त्रिमण्डल का कार्यकाल एक दूसरे के विश्वास पर निर्भर करता है, किन्तु संघीय परिषद और संघीय सभा के सम्बन्ध में ऐसी स्थिति नहीं है। ब्रिटिश संसद के द्वारा अविश्वास का प्रस्ताव पास कर मन्त्रिमण्डल को पदच्युत किया जा सकता है। यदि संसद मन्त्रिमण्डल के किसी महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव को अस्वीकार कर दे या बजट में कटौती कर दे तो भी मन्त्रिमण्डल इसे अपने प्रति अविश्वास मानकर पदत्याग कर देता है। लेकिन स्विस संघीय सभा अविश्वास के प्रस्ताव के आधार पर परिषद को पदच्युत नहीं कर सकती और यदि संघीय सभा परिषद के किसी महत्त्वपूर्ण समझे गये प्रस्ताव को अस्वीकार कर दे तो भी परिषद त्यागपत्र देने की आवश्यकता अनुभव नहीं करती। परिषद के सदस्य असम्मान को अपनी जेब में रख लेते हैं और संसद की इच्छा शक्ति के सम्मुख झुक जाते हैं। इसी प्रकार ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल के द्वारा सम्राट को परामर्श देकर लोक सदन को भंग करवाया जा सकता है लेकिन स्विटजरलैंड में संघीय परिषद संघीय सभा को भंग नहीं कर सकती है। स्विटजरलण्ड में संघीय सभा और संघीय परिषद एक दूसरे को समाप्त नहीं कर सकते उनका

कार्यकाल केवल इस रूप म परस्पर बँधा हुआ है कि यदि सविधान सशोधन विधेयक पर मतभेद होने क कारण सघीय सभा को विघटित किया जाय, तो नव निर्वाचित सघीय सभा नवीन सघीय परिषद का निर्वाचन करती है।

(६) स्विस सघीय परिषद म वैसे नेतृत्व का भी अभाव है जिस प्रकार का नेतृत्व ससदीय व्यवस्था के अन्तगत प्रधानमत्री के द्वारा मत्रिमण्डल को प्रदान किया जाता है। ब्रिटिश मत्रिमण्डल म प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डल के निर्माण, काय सचालन और अन्त मे केन्द्रीय स्थिति रखता है और उसका पद समस्त शासन व्यवस्था म बडा प्रभावशाली होता है। किन्तु स्विस सघीय परिषद का अध्यक्ष केवल सम सहयोगियो मे ही प्रथम है और उस यह पद केवल एक वष के लिए ही प्राप्त होता है।

सघीय परिषद की उपरोक्त विशेष बातो के कारण इसे ससदीय व्यवस्था या ब्रिटिश मत्रिमण्डल के अनुरूप नही माना जा सकता।

अध्यक्षात्मक कार्यपालिका (सयुक्त राज्य अमरीका की कायपालिका) से तुलना

स्विस सघीय परिषद अध्यक्षात्मक कायपालिका से कुछ बातो मे समान है और कुछ बातो म असमान। अमरीका की अध्यक्षात्मक कायपालिका के समान स्विस सघीय परिषद म स्थायित्व होता है। इसका निर्वाचन ४ वष की अवधि के लिए होता है और सघीय सभा इसे इस अवधि के पूव पदच्युत नही कर सकती। अमरीका के समान ही स्विटजरलैण्ड म भी कायपालिका अर्थात् सघीय परिषद के द्वारा सघीय सभा को भग नही किया जा सकता है। एक अन्य समानता यह है कि जिस प्रकार अमरीकी राष्ट्रपति और उसके मत्रिमण्डल के सदस्य काग्रेस के सदस्य नही हो सकत हैं उसी प्रकार स्विटजरलण्ड मे भी सघीय परिषद के सदस्य सघीय सभा के सदस्य नही हो सकते हैं।

किन्तु इन समानताओ की तुलना म असमानताएँ अधिक है और वे निश्चित रूप से अधिक महत्वपूण भी हैं

(१) अमरीकी सवधानिक व्यवस्था शक्ति विभाजन के सिद्धान्त पर आधारित है और अमरीकी कायपालिका व्यवस्थापिका से स्वतन्त्र रूप म शासन काय का सचालन करती है। राष्ट्रपति पर काग्रेस यदि कुछ नियन्त्रण रखती है तो वह परोक्ष और निषेधात्मक ही है लकिन स्विस सघीय परिषद व्यवस्थापिका से घनिष्ट सम्बन्ध रखते हुए शासन काय का सचालन करती है। सघीय सभा सघीय परिषद पर प्रत्यक्ष नियन्त्रण रखती है और इस सम्बन्ध मे इसे सघीय सभा की अभिकर्ता या एक समिति मात्र कहा जाता है।

(२) अमरीका की अध्यक्षात्मक व्यवस्था म राष्ट्रपति और उसके मन्त्री काग्रेस से बिलकुल पृथक रहते हैं और वे कानून निर्माण की प्रक्रिया म कोई भाग

नहीं लेते। स्विटजरलण्ड में यद्यपि संघीय परिषद के सदस्य संघीय सभा के सदस्य नहीं होते और वे सभा में मतदान भी नहीं करते, लेकिन वे संघीय सभा में विधेयक प्रस्तावित करते, वादविवाद में भाग लेते और इस क्षेत्र में संघीय सभा को नेतृत्व प्रदान करते हैं।

(३) स्विटजरलण्ड में संघीय परिषद के सदस्यों का चुनाव संघीय सभा के द्वारा किया जाता है किन्तु अमरीका में राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित निर्वाचक मण्डल द्वारा चुना जाता है और मन्त्रियों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा सीनेट की सहमति से की जाती है।

(४) इन सबके अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण अन्तर यह है कि स्विस संघीय परिषद का अध्यक्ष अमरीकी कार्यपालिका के प्रधान राष्ट्रपति जैसी महत्वपूर्ण स्थिति नहीं रखता और इन दोनों पदों में नाम के अतिरिक्त अन्य कोई समानता नहीं है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि स्विटजरलण्ड की संघीय परिषद में संसदीय और अध्यक्षात्मक दोनों ही प्रकार की कार्यपालिकाओं के लक्षण विद्यमान हैं, लेकिन इसे संसदीय या अध्यक्षात्मक किसी एक श्रेणी में नहीं रखा जा सकता। डायसी ने स्विटजरलण्ड की संघीय परिषद की तुलना निर्देशकों की एक ऐसी परिषद से की है जिसकी नियुक्ति संघ की सभा की इच्छा के अनुसार संघ के व्यवसाय का प्रबन्ध करने के लिए की गयी हो।[1] इस सम्बन्ध में लार्ड ब्राइस का कहना है कि 'संघीय परिषद न तो इंगलण्ड की मन्त्रिपरिषद के समान ही है और न ही यह संयुक्त राज्य की कार्यपालिका या उन गणराज्यों की कार्यपालिका के समान है जिन्होंने अध्यक्षात्मक प्रणाली को अपनाया है और जहाँ कार्यपालिका व्यवस्थापिका से स्वतन्त्र है। यद्यपि इसमें इन दोनों व्यवस्थाओं के लक्षण मिलते हैं लेकिन फिर भी यह इन दोनों से भिन्न है।' मुनरो के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'स्विटजरलण्ड की संघीय परिषद संसदीय तथा असंसदीय, दोनों प्रकार की कार्यपालिकाओं के गुणों से युक्त तथा दोषों से मुक्त है। कार्यपालिका होते हुए भी इसमें एकल कार्यपालिका के गुण पाये जाते हैं।'[2]

(३) उत्तरदायित्व व स्थायित्व का योग—संसदीय शासन का सबसे प्रमुख गुण उत्तरदायित्व है अर्थात् वास्तविक शासन व्यवस्था का संचालन करने वाले व्यक्ति जन प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी होते हैं। उत्तरदायित्व की इस व्यवस्था के कारण

1 Swiss Federal Council is like a Board of Directors appointed to manage the concern of the Confederation in accordance with the wishes of the Federal Assembly
—Dicey *Law of the Constitution* p 611

2 The Swiss Federal Council combines the merits and excludes the defects of both the parliamentary and non parliamentary executives It provides a plural executive with the merits of a united executive —*Munro*

शासन काय जन प्रतिनिधियो की इच्छानुसार सम्पन्न होता है और सरकार निरकुश नही हो पाती। अध्यक्षात्मक शासन का सवप्रमुख गुण स्थायित्व है अर्थात काय पालिका का एक निश्चित कायकाल होता है, जिससे उसके द्वारा निश्चिन्तता और कुशलता के साथ शासन काय किया जा सकता है। स्विस सघीय परिषद मे उत्तर दायित्व और स्थायित्व का बडा उपयोगी योग है और इसे सघीय सभा तथा सघीय परिषद के बीच विशेष प्रकार के सम्ब धो की व्यवस्था करके प्राप्त किया गया है सघीय परिषद सघीय सभा के निर्देशन और निय त्रण म काय करती है और इससे शासन काय म जन दृष्टिकोण का समावेश हो गया है, लेकिन सघीय सभा सघीय परिषद को पदच्युत नही कर सकती और न ही सघीय सभा से अपना प्रस्ताव अस्वीकृत होने पर सघीय परिषद त्याग पत्र देती है। इस स्थिति के सम्ब ध म मुनरो ने कहा है "सघीय परिषद कानून निर्माण के काय मे पूण सक्रिय रूप से भाग ले, पर यदि उसका सुझाव न माना जाय तो वह अपना अपमान भी न समझे, ऐसी आशा सघीय परिषद से की जाती है।" इस प्रकार सघीय सभा और सघीय परिषद के पारस्परिक सम्ब धो मे बहुत अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाकर उत्तरदायित्व और स्थायित्व दोनो ही गुणो को प्राप्त कर लिया गया है।

(४) निदलीयता—स्विस सघीय परिषद की एक महत्त्वपूण विशेषता उसका निदलीय स्वरूप है। सघीय परिषद मे किसी एक राजनीतिक दल के सदस्य नही होते, वरन उसम उन सभी राजनीतिक दलो के सदस्य होते हैं जिन्हे सघीय सभा मे प्रतिनिधित्व प्राप्त हो। सघीय परिषद इस दृष्टि से भी निदलीय है कि परिषद के सदस्य अपने राजनीतिक दलो की सीमाओ म बँधकर काय नही करते, वरन स्वय अपने विवेक के अनुसार स्वत त्रतापूवक विचार व्यक्त करते और काय करते हैं। वे दलब दी की सीमाओ से ऊपर उठकर राष्ट्रीय हित की साधना करते है। स्ट्रोग ने कहा है "मन्त्रिमण्डल (सघीय परिषद) का रूप दलब दी पर आधारित नहीं है। वह दल की सीमा के परे है। सदन मे वह न तो दल का काय करता है और न ही सदन के विभिन्न दलों के कार्यों को निर्धारित करता है।"[1]

परिषद की यह निदलीयता उसकी शक्ति का एक महत्त्वपूण स्रोत है। परिषद अपने इस निदलीय स्वरूप के कारण विभिन्न राजनीतिक दलो म मध्यस्थता कर सकती और उनम राष्ट्रीय हित की दृष्टि स सामजस्य स्थापित कर सकती है।

लेकिन निदलीयता का तात्पय यह नही लिया जाना चाहिए कि परिषद के सदस्य राजनीतिक दलो से किसी भी रूप म सम्ब ध नही रखते। एक राजनीतिक दल विशेष मे नेतृत्व की स्थिति प्राप्त होने के कारण ही व्यक्ति को परिषद की सदस्यता प्राप्त होती है और परिषद के सदस्यो का कतव्य है कि वे परिषद के

[1] 'The ministry has no partisan character It stands outside party It does not do party work and it does not determine the work of the various parties of the Hous ' —C F Strang

निणयो को अपने अपने राजनीतिक दलो से स्वीकार करायें और उन्हे राष्ट्रीय हित मे काय करने के लिए प्रेरित करे। यदि कोई सदस्य अपनी इस भूमिका को नही निभा पाता, तो परिषद और राष्ट्रीय शासन के लिए उसकी उपयोगिता समाप्त हो जाती है। ह्यूज ने इस स्थिति के सम्बन्ध मे कहा है, 'दल का समथन उसकी वैयक्तिक स्थिति के लिए आवश्यक है तथा यह एक दहेज सा होता है जो वह मन्त्रिमण्डल की परिवारिक परिधि मे लाता है। ससद के अपने दल को साथ लिए बिना वह अपने सहयोगियो के लिए भी व्यथ सिद्ध होगा।'[1]

इस प्रकार स्विस सघीय परिषद के सदस्य यद्यपि भारत, ब्रिटन या अमरीकी कायपालिका की तुलना म अपेक्षाकृत निदलीय हैं लेकिन यह नही कहा जा सकता कि परिषद की सदस्यता और उनके कार्यो का राजनीतिक दलो से कोई सम्बन्ध नही होता है। ब्राइस ने स्थिति का सही विश्लेषण करते हुए लिखा है कि "यह (सघीय परिषद) दल के बाहर है, दल का काय करने के लिए नहीं चुनी जाती, दल की नीति निश्चित नही करती परन्तु फिर भी यह दलीय प्रभाव से पूणतया मुक्त नहीं है।'[2]

(५) विशेषज्ञो की परिषद—ब्रिटेन और भारत की ससदीय व्यवस्था और कुछ सीमा तक अमरीका की अध्यक्षात्मक व्यवस्था के अन्तगत भी मन्त्रिगण अपने विभागो के विशेषज्ञ नही होते। उन्हे अपना यह पद लोकप्रियता, सामान्य प्रशासनिक योग्यता, राजनीतिक दल म अपने स्थान और कायपालिका प्रधान की व्यक्तिगत कृपा के रूप म प्राप्त होता है। लेकिन स्विटजरलण्ड मे परिषद क सदस्य अपने अपने विभागो के विशेषज्ञ होते हैं। परिषद के सदस्यो के पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है और मोटा, शाफ तथा वेल्टी जसे सदस्यो के द्वारा क्रमश ३०, २७ और २५ वष तक इसके सदस्य के रूप म काय किया जा चुका है। यह भी परम्परा है कि पुनर्निर्वाचन पर साधारणतया एक व्यक्ति को वही विभाग दिया जाता है, जिस विभाग के प्रधान के रूप मे उसके द्वारा काय किया जा चुका है। यह स्थिति सम्बन्धित सदस्यो को उनके विभागो का पूण विशेषज्ञ बना देती है। सदस्यो की विशेषज्ञता को लक्ष्य करते हुए लावेल ने कहा है कि, स्विटजरलण्ड मे परिषद के सदस्य अपने अपने विभागो के राजनीतिक अध्यक्ष तथा प्रमुख सचिव दोनों होते हैं।

1 The support of the party is essential to his own personal position and it is as it were the dowry he brings into the family circle of the cabinet—he would be of no use to his colleagues if he could not carry his parliamentary party with him
—Christopher Hughes *The Parliament of Switzerland* p 93

2 It stand outside party is not chosen to do party work, does not determine party policy yet is not wholly without some party colour —James Bryce *Modern Democracies* Vol I p 394

प्रश्न

१ 'स्विट्जरलण्ड की कायपालिका ससार की शासन प्रणालियो मे अद्वितीय है। इस कथन के आधार पर स्विस सघीय परिषद के गठन और सघीय व्यवस्थापिका के साथ उसके सम्ब धो का वणन कीजिए। (आगरा, १९६५)

२ स्विट्जरलण्ड की कायपालिका क प्रमुख लक्षणो का वणन कीजिए और उसकी ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल तथा अमरीका की सघीय कायपालिका के लक्षणो से तुलना कीजिए। (आगरा, १९६६, ७०, कानपुर १९६९)

३ स्विस सघीय परिषद ससदात्मक और अध्यक्षात्मक व्यवस्थाओ का समन्वय है।' स्पष्ट कीजिए। (लखनऊ, १९६१)

४ स्विस कायकारिणी के गठन तथा स्थिति की विवेचना कीजिए। उसके विधायिनी से सम्ब ध बतलाइए। (लखनऊ, १९६२, ६६ विक्रम, १९६३)

५ स्विस कायकारिणी विचित्र है। व्याख्या कीजिए। (लखनऊ, १९६४, ६६)

स्विस कायकारिणी को अनोखी क्यो कहा जाता है? उसकी तुलना अमरीकी कायकारिणी स कीजिए। (लखनऊ, १९६८)

७ स्विस सघीय कायपालिक की विलक्षणताओ की विवचना कीजिए। यह स्थायित्व एव उत्तरदायित्व का किस प्रकार समन्वय करती है? (लखनऊ १९७० विक्रम, १९६८)

८ स्विस सघीय कायपालिका के असामान्य स्वरूप की व्याख्या कीजिए। (जीवाजी १९६७)

९ स्विस सघीय परिषद का ससदीय कायपालिका से साम्य तथा अन्तर स्पष्ट कीजिए। (जीवाजी, १९६८)

१० स्विस सघीय परिषद की रचना अधिकार एव कार्यों का आलोचनात्मक वणन कीजिए। (कानपुर, १९७१)

११ रचना कार्यो और विधानमण्डल के साथ सम्बन्ध की दृष्टि से स्विस सघीय परिषद व ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की तुलना कीजिए। (विक्रम, १९७१)

१२ सघीय परिषद उन सस्थाओ म से एक है, जिसका अध्ययन परम आवश्यक है।' (ब्राइस) सघीय परिषद के सम्बन्ध मे इस कथन की विवचना कीजिए। (विक्रम १९७१)

१३ स्विस सघीय परिषद म ससदात्मक व अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्थाओ के गुणो का समावेश है।' इस कथन की विवचना कीजिए। (जीवाजी, १९६६, विक्रम, १९७२)

१४ 'स्विस सघीय परिषद अनोखी सस्था है।' विवचना कीजिए। (आगरा, १९७३)

5

संघीय न्यायाधिकरण
(THE FEDERAL TRIBUNAL)

"स्विस लोगों की दृष्टि में संवैधानिक कानूनों का न्यायिक पुनर्विलोकन लोकतन्त्र के सिद्धान्त का उल्लंघन है।"[1]

—हंस ह्यूबर

स्विस संविधान के अनुच्छेद १०६ में कहा गया है कि 'संघीय मामलों के न्याय प्रशासन के लिए एक संघीय न्यायालय की स्थापना की जायगी।'[2] संविधान की इस व्यवस्था के अनुसार १८४८ में संघीय न्यायाधिकरण की स्थापना की गई। लेकिन १८४८ के संविधान द्वारा स्थापित इस संघीय न्यायाधिकरण की शक्तियाँ बहुत अधिक सीमित थी और न्यायिक क्षेत्र का अधिकांश कार्य संघीय सभा और संघीय परिषद् के द्वारा किया जाता था। १८७४ में संविधान में जो पूर्ण संशोधन किया गया, उसके द्वारा संघीय न्यायाधिकरण की शक्तियों में वृद्धि की गई। इसके बाद १९०७ में संघीय न्यायाधिकरण को दीवानी संहिता के सम्बन्ध में शक्तियाँ प्रदान की गयी, १९२९ में इसे प्रशासनिक कानूनों के अन्तर्गत शक्तियाँ दी गयी और १९३७ में इसे फौजदारी संहिता के अन्तर्गत अधिकार प्रदान किये गये। वर्तमान समय में यद्यपि स्विस संघीय न्यायालय को समस्त प्रशासनिक तन्त्र में वह स्थिति प्राप्त नहीं है जो स्थिति संयुक्त राज्य अमरीका और भारत आदि संघ राज्यों में सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त है, लेकिन १८४८ की तुलना में संघीय न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में वृद्धि और उसकी स्थिति में सुधार अवश्य ही हुआ है।

रचना—संविधान द्वारा संघीय न्यायाधिकरण के न्यायाधीशों की संख्या निश्चित नहीं की गयी है। संघीय सभा समय समय पर इसके सदस्यों की संख्या निश्चित करती है। १८७४ में केवल ९ न्या... परन्तु अब संघीय सभा द्वारा

1 • The people ... judicial ... the constitutional law an infrir... h demo...
—Hans Hub...

2 • A Federal ... is a ... ministration of justice to th... Article I...

पारित कानून के अनुसार इनकी सख्या २६ स २८ तक हो सकती है। इसके अतिरिक्त ११ स १३ तक वकल्पिक न्यायाधीश (Alternate Judges) हो सकते हैं। इस समय सघीय न्यायाधिकरण म २६ यायाधीश तथा १२ वैकल्पिक यायाधीश हैं। नियमित यायाधीश अपना काय करने म असमथ होने की स्थिति म उनके स्थान पर वकल्पिक यायाधीश द्वारा काय किया जाता है। इन सभी न्यायाधीशो को सघीय सभा ६ वप के लिए निर्वाचित करती है। यायाधीशा के पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध नही है और परम्परा के अनुसार न्यायाधीश जब तक इस पद पर काय करना चाहे, पुनर्निर्वाचित होते रहते हैं। इस पुनर्निर्वाचन के आधार पर न्यायाधीशो के निरन्तर अनुभव से लाभ उठाया जा सकता है। सामान्यतया ऐसा समझा जाता है कि न्यायाधीशो की नियुक्ति हतु निर्वाचन की पद्धति को अपनाने से यायिक स्वतन्त्रता पर विपरीत प्रभाव पडता है और वे राजनीतिक प्रभाव म काय करते हैं। लेकिन स्विटजरलण्ड म पुनर्निर्वाचन की परम्परा अपनाय जाने के कारण यह आशका लगभग समाप्त हो गयी है। सघीय यायाधिकरण का एक प्रधान तथा एक उप-प्रधान होता है, जिनका निर्वाचन सघीय सभा द्वारा २ वप की अवधि के लिए किया जाता है। प्रधान या उप प्रधान पद पर तुरन्त ही दूसरी अवधि के लिए इनमे स किसी को निर्वाचित नही किया जा सकता।

योग्यताएँ—सविधान म यायाधीशो की योग्यता के सम्बन्ध मे कोई उल्लेख नही है। सविधान मे केवल यह कहा गया है कि कोई भी स्विस नागरिक जो राष्ट्रीय परिपद् का सदस्य बनने की योग्यता रखता हो सघीय न्यायालय का यायाधीश निर्वाचित हो सकता है केवल यह प्रतिबन्ध है कि सघीय सभा या सघीय परिपद् के सदस्य या उनके द्वारा नियुक्त पदाधिकारी इन पदो पर निर्वाचित नही हो सकते। यद्यपि न्यायाधीश पद के लिए कोई कानूनी योग्यता निर्धारित नही की गयी हैं किन्तु व्यवहार मे न्याय सम्बन्धी ज्ञान और अनुभव रखने वाले व्यक्ति ही इस पद पर निर्वाचित होते हैं। एक विधि के अनुसार दो निकट सम्बन्धी न्यायालय के एक साथ सदस्य नही हो सकते हैं। यह परम्परा भी स्थापित हो गयी है कि मुख्य राजनीतिक दलो एव प्रोटेस्टेण्ट तथा कथोलिक धर्मों तथा तीनो मुख्य भाषाओ के प्रतिनिधियो को न्यायालय मे स्थान दिया जाता है।

वेतन आदि—एक सघीय यायाधीश को ५३ हजार स्विस फ्रेंक वार्षिक वेतन मिलता है। न्यायाधिकरण के प्रधान को ३ ६०० फ्रेंक और उप प्रधान को २,४०० फ्रेंक अतिरिक्त मिलते हैं। वकल्पिक न्यायाधीशो को कोई नियमित वेतन नही मिलता वरन उन्ह उनके सवाकाल के दिनो मे भत्ता मिलता है। जब उनकी आयु ६० वप की हो जाती है, तो उन्हे पेंशन पाने का भी अधिकार है, यदि वे कम से कम १० वप तक इस पद पर काय कर चुके हैं। सेवा काल के अनुसार उनके वतन का ४० स ६० प्रतिशत तक भाग पेंशन के रूप म मिलता है।

सघीय न्यायाधिकरण का मुख्य स्थान वॉड कैण्टन की राजधानी लासेन नगर है। सभी न्यायाधीशो को वही रहना होता है, परन्तु राजनीतिक और नागरिक अधिकार उन्हे उस कैण्टन से प्राप्त होते हैं, जिसके वे निवासी हैं। सघीय न्यायाधिकरण के न्यायाधीश अपने पद पर रहते हुए न तो सघीय सरकार या कण्टनो की सरकारो के अधीन कोई नौकरी कर सकते हैं और न किसी निजी व्यवसाय या उद्योग का सचालन कर सकते हैं।

सघीय न्यायाधिकरण के विभाग—सघीय न्यायाधिकरण के कार्य को अधिक सुचारु रूप से चलाने के लिए इसे तीन विभागो मे बाँटा गया है (i) सवैधानिक व प्रशासनिक कानून न्यायालय (Constitutional and Administrative Law Court) (ii) दीवानी कानून न्यायालय (Civil Law Court), (iii) फौजदारी अपील न्यायालय (Criminal Appellate Court)। प्रत्येक विभाग मे ३ से ६ तक न्यायाधीश होते हैं। इन मुख्य विभागो के अतिरिक्त सघीय न्यायाधिकरण के कुछ छोटे विभाग या चेम्बर भी हैं जैसे ऋण तथा दिवालियेपन का चम्बर (The Chamber of Debts and Bankruptcy) और दोषारोपण चम्बर (Chamber of Accusation)। इनमे से प्रत्येक मे तीन न्यायाधीश होते हैं। इसके अतिरिक्त सघीय न्यायालय मे एक उप-विभाग फौजदारी न्यायालय तथा असाधारण अवरोध न्यायालय (Extraordinary Court of Cessation) का होता है।

कार्यप्रणाली—फौजदारी न्यायालयो के अतिरिक्त शेष सभी विभागो के अध्यक्ष सघीय न्यायाधिकरण की सम्पूर्ण बैठक मे चुने जाते हैं। फौजदारी न्यायालय प्रत्येक अभियोग के लिए अपने मे से किसी एक को अपना अध्यक्ष चुन लेता है। प्रत्येक विभाग या न्यायालय तथा उप-विभाग या छोटे न्यायालय के लिए अलग अलग गणपूर्ति निश्चित की गयी है। सभी विभागो तथा उप विभागो मे निर्णय बहुमत से लिए जाते है और बराबर मत पडने की स्थिति मे अध्यक्ष को निर्णायक मत का अधिकार होता है। सघीय न्यायालय की कार्यवाही जनता के लिए खुली होती है, परन्तु सुरक्षा की दृष्टि से आवश्यक होने पर गुप्त कार्यवाही भी की जा सकती है।

सघीय न्यायाधिकरण का अधिकारक्षेत्र
(Jurisdiction)

सघीय न्यायाधिकरण दीवानी फौजदारी, प्रशासनिक और सवैधानिक अभियोगो की सुनवाई करता है। इसे प्रारम्भिक और अपीलीय दोनो ही प्रकार के अधिकारक्षेत्र प्राप्त हैं जो इस प्रकार हैं

(१) प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र—सघीय न्यायाधिकरण को दीवानी और फौजदारी दोनो ही प्रकार के विवादो मे प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त है।

न्यायाधिकरण को निम्नलिखित प्रकार के दीवानी विवादो मे प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त है

(i) जो स्विस राज्यमण्डल (Confederation) तथा कण्टनो के बीच हो,

(II) राज्यमण्डल तथा एक निगम अथवा साधारण नागरिक के मध्य उत्पन्न विवाद परन्तु यह आवश्यक है कि वादी नागरिक अथवा निगम हो और विवादग्रस्त राशि ८००० फ्रैंक से कम न हो।

(III) ऐसे विवाद जो विभिन्न कण्टनो के बीच उत्पन्न हों।

(IV) राष्ट्रीयता के खोय जाने से सम्बन्धित विवाद।

(V) कण्टनो के कम्यूनो की नागरिकता से सम्बन्धित विवाद।

(VI) अन्य दीवानी विवाद भी सघीय न्यायाधिकरण के सम्मुख प्रस्तुत किये जा सकते हैं यदि दोनो पक्ष उन्हें सघीय न्यायाधिकरण को सौंपने के लिए तैयार हो जायें और जो सघीय कानून से सम्बन्धित हों। इन विवादो में १० हजार फ्रैंक से अधिक धनराशि विवादग्रस्त होनी चाहिए।

सघीय न्यायाधिकरण को निम्नलिखित प्रकार के फौजदारी विवादो में प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त है

(I) राज्यमण्डल के विरुद्ध देशद्रोह, सघीय अधिकारो के विरुद्ध विद्रोह तथा हिंसा।

(II) अन्तरराष्ट्रीय कानून के विरुद्ध अपराध।

(III) ऐसे राजनीतिक अपराध, जो कि अशान्ति के फलस्वरूप हुए या जिनके कारण अशान्ति उत्पन्न हुई और जिनमे अधिकारियो के सशस्त्र हस्तक्षेप की आवश्यकता पडी हो।

(IV) जाली सिक्के बनाने से सम्बन्धित विवाद।

(V) वे विवाद जो उच्च सघीय अधिकारियों द्वारा अपने कर्मचारियो पर लगाये गये अपराधो के सम्बन्ध मे हों।

(VI) वे विवाद जो इसके पास कण्टनो द्वारा सघीय सभा की अनुमति से भेजे जायें।

फौजदारी विवादो को सुनने के लिए समस्त स्विट्जरलण्ड को ५ जिलो में बाँटा गया है। प्रत्येक जिले में १२ व्यक्तियो की एक जूरी स्थापित की जाती है, जिसकी सहायता से विवादो की सुनवाई होती है। प्रत्येक अभियोग में अपराधी को दोषी ठहराने के लिए ५ ६ जूरो की स्वीकृति आवश्यक है।

(२) अपीलीय अधिकार क्षेत्र—सघीय सभा ने सघीय न्यायाधिकरण को उन विवादो में अपील सुनने का अधिकार प्रदान किया है जिन्हें कैण्टन के न्यायालय सुन चुके है और जो ४ हजार फ्रैंक से अधिक राशि से सम्बन्धित हैं।

(३) प्रशासनिक अधिकार क्षेत्र—सविधान की धारा ११३ द्वारा सघीय न्यायाधिकरण को प्रशासनिक क्षेत्र में निम्न अधिकार दिये गये हैं

(I) प्रशासनिक अभियोगो सम्बन्धी विवाद,

(II) सरकारी कर्मचारियों की कानूनी क्षमता सम्बन्धी विवाद,

(iii) रेल प्रशासन सम्बन्धी विवाद, तथा

(iv) करारोपण सम्बन्धी प्रशासनिक विवाद।

(४) संवैधानिक अधिकार क्षेत्र—यद्यपि स्विट्जरलैंड के संघीय न्यायाधिकरण का संवैधानिक क्षेत्र उतना व्यापक नहीं है जितना अन्य संघ राज्यों के सर्वोच्च न्यायालय का होता है, लेकिन फिर भी इसे निम्न विवादों के सम्बन्ध में संवैधानिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त हैं

(i) संघीय अधिकारियों तथा कण्टनों के अधिकारियों के मध्य उत्पन्न होने वाले क्षेत्राधिकार सम्बन्धी विवाद,

(ii) कण्टनों के बीच सार्वजनिक विधि के सम्बन्ध में विवाद,

(iii) नागरिकों के संवैधानिक अधिकारों के उल्लंघन सम्बन्धी विवाद

(iv) कण्टनों में निर्वाचन तथा धार्मिक स्वतन्त्रता सम्बन्धी विवाद।

आंशिक न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था—संवैधानिक अधिकार क्षेत्र के सम्बन्ध में एक विशेष बात यह है कि अमरीकी संघ के सर्वोच्च न्यायालय के समान स्विस संघीय न्यायाधिकरण को पूर्ण अर्थों में न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है वरन उसे यह शक्ति आंशिक रूप में ही प्राप्त है। संघीय न्यायाधिकरण कण्टनों की विधियों और कण्टनों की सरकारों के कार्यों की इस आधार पर जाँच कर सकता है कि वे संविधान के प्रतिकूल तो नहीं हैं और यदि वह उन्हें संविधान के प्रतिकूल समझे, तो अवैध घोषित कर सकता है। लेकिन इस संघीय क्षेत्र में न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्राप्त नहीं है अर्थात् वह संघीय सभा द्वारा निर्मित कानूनों को असंवैधानिक घोषित नहीं कर सकता। यह बात संविधान की धारा ११३ से नितान्त स्पष्ट है जिसमें कहा गया है कि सभी मामलों में संघीय न्यायाधिकार संघीय सभा द्वारा पारित विधियों और सभी सर्वमान्य आज्ञाओं को तथा संघीय सभा द्वारा अनुसमर्थित सभी विधियों को मान्यता देने पर विवश होगा।"

स्विटजरलण्ड में न्यायिक पुनर्विलोकन न होने की कुछ पक्षों द्वारा आलोचना की गई है। उदाहरणार्थ, डायसी इसे संविधान निर्माताओं की विफलता और संवैधानिक त्रुटि' बतलाते हैं। लेकिन वास्तव में यह धारणा [illegible]पूर्ण है। स्विस नागरिक अत्यधिक प्रजातन्त्रवादी हैं और वे जन इच्छा[illegible] प्रतिबन्ध स्वीकार नहीं करते। इसी कारण उनके [illegible] न्यायिक पुन[illegible] अपनाया गया है। हेन्स हूबर ने उचित [illegible] है कि 'समी[illegible] [illegible]जरलण्ड के लोग लोकतन्त्र अर्थात् जनत[illegible] सन को स[illegible] संविधान की इच्छा के पालन से उ[illegible] हैं।"[1]

1. 'The S[illegible] a [illegible] ocr [illegible] of the people [illegible] er [illegible] const[illegible]

सघीय न्यायाधिकरण की अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय से तुलना

स्विट्जरलण्ड म सयुक्त राज्य अमरीका के ही समान सघात्मक शासन व्यवस्था है और इस कारण यह सोचा जा सकता है कि स्विट्जरलण्ड का सघीय न्यायाधिकरण अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय के ही समान होगा। लेकिन वस्तुत इन दोनो के सगठन और शक्तियो म महत्वपूर्ण अन्तर है, जिनका अध्ययन निम्न प्रकार से किया जा सकता है।

सगठन मे भिन्नता

(i) स्विटजरलण्ड मे सघीय स्तर पर केवल एक ही न्यायालय है। इस सघीय न्यायालय के आधीन कोई अन्य निम्न न्यायालय नही है। इसके विपरीत सयुक्त राज्य अमरीका म सघीय स्तर पर एक सर्वोच्च न्यायालय के अतिरिक्त निम्न न्यायालय सगठित करन का अधिकार भी काग्रेस को दिया गया है। काग्रेस ने इस अधिकार के अन्तगत अपीलीय न्यायालय तथा जिला न्यायालय सगठित किय हैं, जिनकी सख्या क्रमश ११ तथा ८५ है।

(ii) स्विस सघीय न्यायालय आकार की दृष्टि से बडा है। इसम २६ न्यायाधीश तथा १२ वकल्पिक न्यायाधीश हैं और यह ४ विभागो बँटा हुआ है। इसके विपरीत, सयुक्त राज्य अमरीका, जिसकी जनसख्या स्विटजरलण्ड की ३० गुनी से भी अधिक है के सर्वोच्च न्यायालय म केवल ९ न्यायाधीश हैं अर्थात सघीय न्यायालय की न्यायाधीश सख्या से लगभग एक तिहाई। स्विस सघीय न्यायालय का यह बडा आकार सम्भवतया सघीय स्तर पर एक ही न्यायालय होने क कारण है।

(iii) स्विस सघीय न्यायालय के न्यायाधीशो का सघीय सभा निर्वाचन करती है, लेकिन अमरीका मे सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति सीनेट की सहमति से राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

(iv) कम स कम सवधानिक दृष्टि स इन दोनो न्यायालयो क कायकाल मे भी अन्तर है। अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश सदाचार पयन्त अपने पद पर आसीन रहते हैं परन्तु स्विस सघीय न्यायालय के न्यायाधीश केवल ६ वष के लिए निर्वाचित किये जाते हैं। परन्तु व्यवहार म पुनर्निर्वाचन की परम्परा होन के कारण स्विस न्यायाधीशो का कायकाल भी अमरीकी सदाचार पयन्त हो गया है।

(v) अमरीकी सविधान का मूलभूत सिद्धान्त शक्ति पृथक्करण है। इस कारण सर्वोच्च न्यायालय काग्रेस और कायपालिका से पूणतया पृथक रहते हुए अपना काय करता है। अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय क पास अपने निणयो को लागू करने के लिए पदाधिकारी होते हैं। लेकिन स्विस सविधान मे शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त के लिए कोई स्थान नही है। यह न्यायालय सघीय सभा के अधीक्षण मे काय करता है और इस अपने कार्यों की वार्षिक रिपोट सघीय सभा के सम्मुख प्रस्तुत करनी होती है। इसके अतिरिक्त स्विस सघीय न्यायालय के पास अपने निणयों को लागू करने के लिए अपने कोई पदाधिकारी नहीं होत हैं।

अधिकार क्षेत्र में भिन्नता—संगठन की अपेक्षा अधिकार क्षेत्र के सम्बन्ध में भिन्नता अधिक महत्त्वपूर्ण है

(i) दीवानी और फौजदारी क्षेत्र में—दीवानी और फौजदारी मामलों में स्विस संघीय न्यायालय का अधिकार क्षेत्र अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय की तुलना में विस्तृत और व्यापक है। इसका कारण यह है कि संयुक्त राज्य अमरीका में दीवानी तथा फौजदारी कानून बनाने का अधिकार राज्य सरकारों को प्राप्त है। अतः इस सम्बन्ध में उत्पन्न विवादों पर राज्यों के उच्चतम न्यायालय का निर्णय ही अन्तिम होता है और इन न्यायालयों के निर्णयों के विरुद्ध संघीय न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती है। स्विटजरलैण्ड में स्थिति भिन्न है। वहाँ दीवानी तथा फौजदारी विधियाँ बनाने का अधिकार स्वयं संघीय सरकार का है और इस अधिकार के अन्तर्गत उसने दीवानी संहिता तथा फौजदारी संहिता की रचना की है। दीवानी तथा फौजदारी के मामलों में कैण्टनों के न्यायालयों को संघ द्वारा निर्मित संहिताओं के अनुसार ही निर्णय करना होता है और उनके निर्णयों के विरुद्ध संघीय न्यायालय में अपील की जा सकती है। इस प्रकार स्विस संघीय न्यायालय का दीवानी और फौजदारी अधिकार क्षेत्र अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय या संघीय न्यायपालिका के क्षेत्राधिकार से अधिक विस्तृत है।

(ii) प्रशासनिक क्षेत्र में—संयुक्त राज्य अमरीका में संघीय न्यायालय को प्रशासनिक न्याय सम्बन्धी शक्तियाँ प्राप्त नहीं हैं वहाँ प्रशासनिक विवादों के सम्बन्ध में निर्णय साधारण न्यायालयों द्वारा दिया जाता है परन्तु स्विटजरलैण्ड में संघीय न्यायालय को प्रशासनिक विवादों के सम्बन्ध में अधिकार क्षेत्र प्राप्त है।

संवैधानिक क्षेत्र में—एक राज्य के सर्वोच्च न्यायालय और विशेषतया संघ राज्य के सर्वोच्च न्यायालय के लिए दीवानी, फौजदारी या प्रशासनिक अधिकार क्षेत्र की अपेक्षा संवैधानिक अधिकार क्षेत्र ही अधिक महत्त्व रखता है और संवैधानिक अधिकार क्षेत्र की दृष्टि में अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय की स्थिति स्विस संघीय न्यायालय की तुलना में बहुत अधिक उच्च है। अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त है जिसने इसे संविधान के संरक्षक की स्थिति प्रदान कर दी है। संघीय न्यायालय संघीय या राज्य व्यवस्थापिकाओं द्वारा निर्मित कानूनों अथवा संघीय या राज्य सरकारों के प्रशासनिक कार्यों को संवैधानिकता के आधार पर जाँच करता है और यदि वह उन्हें संविधान के प्रतिकूल समझे, तो अवैध घोषित कर सकता है। यही न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति है और इसके कारण न्यायपालिका ने समस्त प्रशासनिक तन्त्र में सर्वोच्च स्थिति प्राप्त कर ली है। न्यायिक पुनर्विलोकन की इस शक्ति के कारण सर्वोच्च न्यायालय को कांग्रेस का तृतीय सर्वोपरि सदन कहा जाता है और ह्यूज (Hughes) जैसे व्यक्ति स्थिति की विवेचना करते हुए लिखते हैं कि **'हम एक संविधान के अन्तर्गत हैं, किन्तु संविधान वैसा ही है जैसा कि सर्वोच्च न्यायालय कहता है।'** स्विस संघीय न्यायालय को केवल कैण्टनों

के सम्बन्ध मे ही न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त है स्विस नागरिक सवधानिकता की अपेक्षा प्रजातन्त्रात्मकता के अधिक भक्त हैं और स्विस लोगो की दृष्टि म सवैधानिक कानूनो का न्यायिक परीक्षण लोकतन्त्र के सिद्धान्त का उल्लघन है ।

इस प्रकार अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय की तुलना म स्विस सघीय न्यायालय का अधिकार क्षेत्र बहुत अधिक सीमित है और इसी आधार पर यह कहा जा सकता कि अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय की तुलना म स्विस सघीय न्यायालय की स्थिति अत्यधिक हीन है ।

प्रश्न

१ स्विट्जरलण्ड की सघीय न्यायपालिका के गठन और क्षेत्राधिकार की विवेचना कीजिए । सोवियत सघ की न्यायपालिका से उसकी तुलना कीजिए । (लखनऊ १९६९)

२ स्विटजरलण्ड के उच्चतम न्यायालय की रचना तथा शक्तियो की अमरीका के उच्चतम न्यायालय की रचना तथा शक्तियो से तुलना कीजिए । (लखनऊ, १९७१)

३ 'अमरीकी सघ की न्यायपालिका की तुलना म स्विस सघीय न्यायपालिका अत्यधिक हीन है ।' इस कथन को स्पष्ट कीजिए । (आगरा, १९६३)

४ स्विस उच्चतम न्यायालय के सगठन, कार्यों तथा शक्तियो का उल्लेख कीजिए । (विक्रम, १९६३)

५ स्विस सघीय न्याय व्यवस्था के सगठन तथा अधिकारो का वणन कीजिए । स्विटजरलण्ड के सघीय न्यायालय की अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय से तुलना कीजिए । (जीवाजी, १९६७)

६ स्विस न्याय पद्धति पर एक सक्षिप्त निबन्ध लिखिए । (विक्रम, १९६७)

6

स्विट्जरलैण्ड मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र

(DIRECT DEMOCRACY IN SWITZERLAND)

> "लोकतन्त्र के विद्यार्थी के लिए स्विस शासन व्यवस्था मे इस (प्रत्यक्ष लोकतन्त्रीय साधनों) से अधिक शिक्षाप्रद और कुछ भी नहीं है, क्योंकि यह असंख्य जनों के हृदय की झांकी प्रस्तुत करती है और उनकी भावनाएँ तथा विचार प्रत्यक्ष रूप से प्रकट होते हैं, निर्वाचित प्रतिनिधियो के माध्यम से परावर्तित होकर नहीं।"[1]
>
> —ब्राइस

स्विट्जरलैण्ड—लोकतन्त्र का घर

लोकतन्त्र की सर्वप्रथम परिभाषा के अनुसार इसे 'जनता का, जनता द्वारा और जनता के लिए शासन' कहा जाता है। मूलत इसका आशय यही है कि स्वयं जनता के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से शासन की शक्ति का प्रयोग किया जाना चाहिए। यह प्रत्यक्ष लोकतन्त्र है तथा प्राचीन काल मे यूनानी नगरराज्यो तथा भारत के वज्जि संघ मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्रात्मक शासन ही प्रचलित था। लेकिन कालान्तर मे राज्यो की जनसंख्या बढ़ जाने और बड़े आकार वाले राज्यो की स्थापना होने के कारण प्रत्यक्ष लोकतन्त्र को अव्यावहारिक पाया गया और इसके स्थान पर विश्व के अधिकांश राज्यो मे अप्रत्यक्ष या प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र को अपना लिया गया। लेकिन वर्तमान समय मे भी स्विट्जरलैण्ड के एक पूर्ण कैण्टन और चार अर्द्ध कैण्टनो मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्रीय शासन प्रचलित है। स्विट्जरलैण्ड के अन्य कैण्टनो और संघीय क्षेत्र मे अप्रत्यक्ष लोकतन्त्र है किन्तु प्रत्यक्ष लोकतन्त्र की उपादेयता को स्वीकार करते हुए इन कैण्टनो और संघीय क्षेत्र मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के

1 'Nothing in Swiss arrangements is more instructive to the student of democracy for it opens a window into the soul of the multitude Their innermost thoughts and feelings are seen directly not refracted through the medium of elected bodies

—Lord Bryce *Modern Democracies*, Vol I p 413

उपकरणो—लोकनिणय और आरम्भक—को अपनाया गया है। स्विटजरलण्ड की इन व्यवस्थाओ के कारण ही स्विटजरलैण्ड को लोकतन्त्र का घर माना जाता है और ब्राइस के शब्दो म कहा जा सकता है कि "विश्व के आधुनिक प्रजातन्त्रों मे, जो कि वास्तविक प्रजातन्त्र हैं, अध्ययन की दृष्टि से स्विटजरलण्ड का सर्वाधिक महत्त्व है।'[1]

स्विट्जरलैण्ड मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र और उसके उपकरण

प्रत्यक्ष लोकतन्त्र—आज २०वी सदी मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र को सामान्यतया अतीत की शासन व्यवस्था माना जाता है, किन्तु स्विटजरलण्ड के एक पूर्ण कण्टन (ग्लेरस) और चार अर्द्ध-कण्टनो (ओब वाल्डेन, निड वाल्डेन, इनर अपेंजल और आउटर अपेन्जल) मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र प्रचलित है।

इन कण्टनो म कोई विधानमण्डल नही है और विधानमण्डल का काय 'लण्डसजेमिण्ड (Landsgiemeinde) या प्रारम्भिक सभा द्वारा किया जाता है। इन कैण्टनो मे नागरिको की वप म एक बार या आवश्यकतानुसार इसस अधिक बार प्रारम्भिक सभाएँ होती है जिनम २० वप या इसस अधिक आयु वाले प्रत्येक स्त्री पुरुष को वाद विवाद मे भाग लेने और मत देने का अधिकार होता है। इस प्रारम्भिक सभा को स्विटजरलण्ड म लैण्डसजेमिण्ड कहा जाता है। इस सभा म अगले वप तक के लिए प्रशासनिक काय चलाने हेतु एक कायकारिणी परिषद का चुनाव किया जाता है, जिसका प्रधान 'लण्डसमैन' (Landsman) कहा जाता है। यह कायकारिणी परिषद प्रारम्भिक सभा के सम्मुख गत वप के प्रशासनिक काय की रिपोट और आगामी वप के लिए बजट प्रस्तुत करती है। सभा बजट पारित करती है। यह सभा कण्टन के न्यायाधीशो और अन्य सरकारी अधिकारियो और राज्य परिषद के लिए प्रतिनिधि भी चुनती है। प्रारम्भिक सभा के द्वारा वे सभी अन्य काय भी किये जाते है जो अन्य कैण्टनो मे विधानमण्डल करते है।

एक पूर्ण कण्टन और चार अर्द्ध कण्टनो मे अपनाई गई इस व्यवस्था को लोकतन्त्र का सर्वोत्तम रूप कहा जा सकता है, क्योकि इसम नागरिक प्रत्यक्ष रूप से शासन व्यवस्था का सचालन करते हैं। लायड तथा हाब्सन के विचारानुसार "प्रभुसत्ता जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से प्रयोग की जाती है तथा सभी मतदाताओं द्वारा बनी हुई यह सभा उस लोकतन्त्र का श्रेष्ठ उदाहरण है, जिसे रूसो तथा अन्य दार्शनिकों ने वास्तविक लोकतन्त्र कहा है।[2]

[1] Among the modern democracies which are true democracies Switzerland has the highest claim to be studied —*Bryce*

[2] The Sovereign power of the people is directly exercised in all the critical acts of the government or the full assembly of the citizens forming the largest and most conspicuous example of what Rousseau and certain other philosophers regard as the only democracy —*Loyd and Hobson*

प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के उपकरण—लोकनिणय और आरम्भक
(Referendum and Initiative)

अ य स्विस कण्टनो और सघीय क्षेत्र मे यद्यपि प्रत्यक्ष लोकत त्र को उसकी अव्यावहारिकता के कारण नही अपनाया गया है, लेकिन स्विस नागरिक मूलत प्रत्यक्ष लोकत त्र के प्रशसक और भक्त हैं तथा उनके द्वारा अपनी शासन व्यवस्था मे प्रत्यक्ष प्रजात त्र के उपकरणो (लोकनिणय और आरम्भक) को अपनाकर शब्दो म नही, लेकिन भावना मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र को अपना लिया गया है। इन पद्धतियो क कारण वास्तविक और अ तिम रूप मे विधि निर्माण शक्ति की अधिकारिणी समस्त स्विस जनता हो गई है। सिगफ्रीड इस स्थिति के सम्ब ध म लिखते हैं कि "यहा लोकतन्त्र प्रत्यक्ष ही रहता है और अपनी शक्तिया सौंपते समय स्विस जनता उन्ह त्याग नहीं देती। वह लोकनिणय के द्वारा अन्तिम शब्द और आरम्भक की प्रकिया के द्वारा शायद प्रथम शब्द कहने का अधिकार सदव अपने पास ही रखती है।"[1]

लोकनिणय और आरम्भक को यद्यपि विश्व के अन्य कुछ क्षेत्रो मे भी अपनाया गया है—जसे सवधानिक प्रश्नो पर लोकनिर्णय स्विटजरलण्ड ने अमरीकी सघ के मसाचुएटस राज्य से ग्रहण किया, जहा वह १७७८ से भी पूव प्रचलित था लेकिन स्विटजरलण्ड मे लोकनिणय और आरम्भक की पद्धतियो को इस सीमा तक अपनाया और विकसित किया गया है कि वे वस्तुत स्विस पद्धतिया ही हो गयी है।[2]

लोकनिणय और आरम्भक का तात्पय

लोकनिणय या जनमत सग्रह—लोकनिणय इस विचार पर आधारित है कि प्रत्येक कानून आवश्यक रूप से जनता की इच्छा की अभिव्यक्ति होनी चाहिए और इसलिए जनता को व्यवस्थापिका द्वारा पारित विधेयको पर विधेयाधिकार प्राप्त होना चाहिए। लोकनिणय का तात्पय यह है कि विधानमण्डल द्वारा पारित कोई विधेयक कानून का रूप ग्रहण नही कर सकता, जब तक कि जनता उसे स्वीकृति प्रदान न करे अथात् यदि जनता विधेयक को अस्वीकृत कर दे, तो उसे रद्द समझा जायगा। लोकनिणय के दो रूप होते हैं—अनिवाय और ऐच्छिक।

अनिवाय लोकनिणय का आशय यह है कि विधानमण्डल द्वारा पारित सब विधेयको पर लोकनिणय आवश्यक है और बिना जनता की स्वीकृति क य विधयक

1 'In Switzerland democracy remains direct and in delegating their powers the Swiss people do not abdicate them They always reserve the right to have the last word by referendum and perhaps the first word too by means of the popular initiative procedure —*Siegfried*

2 John Brown Mason *Switzerland in Govts of Foreign Powers*, p 368

कानून का रूप ग्रहण नही कर सकते। ऐच्छिक लोकनिर्णय का तात्पर्य यह है कि संविधान द्वारा निर्धारित जनता की एक निश्चित संख्या निश्चित समय के भीतर, विधानसभा द्वारा पारित विधेयक पर लोकनिर्णय की माँग करें, तभी वह उसके लिए प्रस्तुत किया जायगा, अन्यथा नही। यदि जनता द्वारा इस प्रकार की माँग न की जाय, तो विधेयक बिना लोकनिर्णय के ही स्वीकृत समझ लिया जाता है।

आरम्भक—लोकनिर्णय जनता को कानूनो के सम्बन्ध मे निषेधात्मक शक्ति प्रदान करता है और उसे इस सम्बन्ध मे सकारात्मक शक्ति आरम्भक के द्वारा प्रदान की जाती है। आरम्भक के द्वारा जनता को अधिकार दिया जाता है कि वह किसी विधेयक का प्रारूप तयार कर अथवा प्रस्ताव के रूप मे विधानमण्डल से इस बात की माँग कर सकती है कि या तो विधानमण्डल उस प्रस्ताव के आधार पर कानून का निर्माण करे अथवा उस पर लोकनिर्णय लिया जाय। आरम्भक के दो प्रकार होते हैं (१) सविन्यासित आरम्भक (formulated initiative) और (२) अविन्यासित आरम्भक (unformulated initiative)

सविन्यासित आरम्भक के अन्तगत जनता स्वय ही विधानमण्डल के सम्मुख विधेयक का पूर्ण प्रारूप प्रस्तुत करती है और विधानमण्डल इस प्रारूप को बिना किसी संशोधन के जनता के सम्मुख अन्तिम निर्णय हेतु प्रस्तुत करता है।

अविन्यासित आरम्भक के अन्तगत जनता विधानमण्डल के सम्मुख कुछ निश्चित सिद्धान्त रखती है। यदि विधानमण्डल इन सिद्धान्तो से सहमत होता है तो उनके आधार पर विधेयक निर्मित करता है और यदि विधानमण्डल इन सिद्धान्तो से असहमत हो तो इन सिद्धान्तो को जनमत जानने के लिए प्रस्तुत किया जाता है। लोकनिर्णय मे जनता द्वारा इन सिद्धान्तो को स्वीकृत कर लिए जाने पर, विधान मण्डल उनके आधार पर विधेयक का प्रारूप तयार करता है और इस प्रारूप पर पुन लोकनिर्णय लिया जाता है।

स्विट्जरलैण्ड मे लोकनिर्णय और आरम्भक का प्रयोग

लोकनिर्णय—स्विटजरलैण्ड म लोकनिर्णय को अलग अलग विषयो पर अनिवार्य और ऐच्छिक दो अलग अलग रूपो मे अपनाया गया है। संविधान संशोधन सम्बन्धी विधेयका पर अनिवार्य लोकनिर्णय की व्यवस्था की गयी है। संविधान के अनुच्छेद ११४ मे कहा गया है कि संवधानिक संशोधन तभी लागू होगे, जबकि उन्हे मतदान मे भाग लेने वाले स्विस नागरिको के बहुमत द्वारा और कण्टनो के बहुमत द्वारा स्वीकार किया जायगा। १८४८ से १९६० तक ७६ संवधानिक संशोधनों पर अनिवार्य लोकनिर्णय करवाया गया जिनमे केवल १५ संशोधन जनता और कैण्टनों द्वारा स्वीकार किये गये।

१८४८ के संविधान म ऐच्छिक लोकनिर्णय की व्यवस्था नही थी लेकिन १८७४ के पूर्ण संवधानिक संशोधन म ऐसे संघीय कानूनो पर ऐच्छिक लोकनिर्णय

की व्यवस्था की गई है जिन्हे संघीय सभा द्वारा अत्यावश्यक (urgent) न घोषित किया गया हो। इस सम्बन्ध मे यह व्यवस्था की गयी है कि किसी कानून या आदेश के प्रकाशन के ९० दिन के भीतर यदि ३० हजार नागरिक या ८ कण्टन लोकनिर्णय की माग करें तो उस पर लोकनिर्णय कराया जाना आवश्यक है।

व्यवहार के अन्तर्गत संघीय सभा के द्वारा कानून को अत्यावश्यक घोषित करने की शक्ति का, विशेषतया युद्ध और आर्थिक संकट की स्थिति मे अत्यधिक प्रयोग किया गया जिससे कि उस पर जननिर्णय न लेना पडे। अत ११ नवम्बर, १९४९ को संविधान की धारा ८९ म संशोधन किया गया, जिसके अनुसार अब यह स्थिति है कि 'अत्यावश्यक' (urgent) घोषित किये गये आदेश एक वर्ष बाद स्वय समाप्त समझे जायेंगे, यदि उनके विषय में ऐच्छिक लोकनिर्णय की मांग की जाय और उन्हे उसके द्वारा स्वीकार न किया जाय।

१९२१ म किये गये संशोधन के अनुसार ऐच्छिक लोकनिर्णय की यह व्यवस्था उन सन्धियो पर भी लागू होगी, जो अनिश्चित काल के लिए या १५ वर्ष से अधिक समय के लिए की जायें।

कण्टनो मे लोकनिर्णय—संघीय संविधान के अनुच्छेद ६ के अनुसार सभी कण्टनो मे संविधान संशोधन सम्बन्धी विधेयको पर अनिवार्य लोकनिर्णय की व्यवस्था है। १० पूर्ण कण्टनो और एक अर्द्ध कैंण्टन मे सामान्य कानूनो पर भी अनिवार्य लोकनिर्णय की व्यवस्था है। ८ पूर्ण कण्टन और १ अर्द्ध कण्टन म सामान्य कानूनो पर ऐच्छिक लोकनिर्णय की व्यवस्था है अर्थात् सम्बन्धित संविधानो म निर्धारित प्रक्रिया के आधार पर निश्चित संख्या म मतदाताओ द्वारा लोकनिर्णय की मांग की जा सकती है। शेष कैंण्टनो म लोकनिर्णय की आवश्यकता ही नही है क्योंकि वहाँ प्रत्यक्ष लोकतन्त्र है। कुछ कैंण्टनो मे वित्त सम्बन्धी विषयो पर भी लोकनिर्णय की व्यवस्था है। उदाहरणार्थ, कुछ कण्टनो म यह व्यवस्था है कि एक लाख फ्रैंक या उससे अधिक रकम के खर्च के लिए तथा दो लाख या उससे अधिक राशि के वार्षिक खर्च के लिए लोकनिर्णय करवाया जाना चाहिए।

आरम्भक—स्विटजरलण्ड म आरम्भक की व्यवस्था संविधान संशोधन सम्बन्धी विधेयको के विषय म ही की गयी है साधारण विधायी प्रस्तावो पर नहीं। इसीलिए इसे 'संवैधानिक आरम्भक' (constitutional initiative) ही कहा जाता है। वर्तमान व्यवस्था के अनुसार संविधान के पूर्ण संशोधन तथा आंशिक संशोधन दोनो के ही विषय मे आरम्भक का प्रयोग किया जा सकता है। दोनो ही प्रकार के आरम्भक का प्रयोग ५० हजार मतदाताओ द्वारा किया जा सकता है। यदि उक्त संख्या मे स्विस नागरिक पूर्ण संशोधन या आंशिक संशोधन के लिए याचिका दें तो उस प्रार्थना पत्र पर लोकनिर्णय लेना आवश्यक होता है। ५० हजार मतदाताओं के ये हस्ताक्षर ६ महीने की अवधि के भीतर किये हुए होने चाहिए।

पूर्ण सशोधन के लिए प्रस्तुत आरम्भक को यदि स्विस मतदाताओ का बहुमत स्वीकार कर ले, तो सघीय सभा का विघटन कर दिया जाता है और चुनाव के बाद निर्मित नयी सघीय सभा सविधान में सशोधन का काय करती है।

आशिक सशोधन के लिए आरम्भक का प्रयोग पूरे विधेयक के रूप मे अर्थात सविन्यासित रूप (formulated) मे किया जा सकता है या मोटे सुझावो के रूप म अर्थात अविन्यासित (unformulated) रूप म किया जा सकता है। जब आशिक सशोधन के लिए अविन्यासित रूप म आरम्भक का प्रयोग किया जाता है और यदि व्यवस्थापिका उससे सहमत होती है तो वह उन सुझावो के अनुसार सशोधन विधेयक तैयार कर उस पर जनता व कण्टनो का मत लेती है। यदि व्यवस्थापिका उन सुझावो से सहमत नही होती, तो उन सुझावो पर लोकनिणय लिया जाता है। यदि लोकनिणय मे जनता का बहुमत सुझावो का समर्थन करता है, तो व्यवस्थापिका इस बात के लिए बाध्य होती है, कि वह उन सुझावो के अनुसार सशोधन विधेयक तयार कर, उस पर लोगो व कण्टनो का मत ले।

आशिक सशोधन की याचिका यदि सशोधन विधेयक के साथ प्रस्तुत की जाती है और यदि सघीय सभा उससे सहमत होती है, तो उस पर तुरन्त ही जनता तथा कण्टनो का मतदान कराया जाता है। यदि जनता और कैण्टनो का बहुमत इसके पक्ष मे हो, तो सविधान मे सशोधन होगा वरना नही। यदि सघीय सभा जनता द्वारा निर्मित विधेयक के विरुद्ध हो तो वह या तो मतदाताओ को इसकी अस्वीकृति के लिए सलाह दे सकती है या वकल्पिक प्रस्ताव तैयार कर जनता स इसे स्वीकार करने के लिए आग्रह कर सकती है।

कण्टनों मे आरम्भक—जनेवा मे केवल सविधान सशोधन सम्बन्धी विधेयको पर ही आरम्भक की व्यवस्था है शेष सभी कैण्टनो म सवधानिक सशोधन तथा सामान्य कानून दोनो के ही सम्बन्ध मे आरम्भक की व्यवस्था है। आरम्भक के प्रयोग की पद्धति सम्बन्धित कैण्टन के सविधान द्वारा ही निर्धारित की जाती है।

प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के उपकरणों का मूल्याकन

स्विटजरलण्ड के १ पूर्ण कण्टन तथा ४ अर्द्ध-कण्टनो मे जिस प्रकार का प्रत्यक्ष लोकतन्त्र है और सघीय शासन तथा कण्टनो के शासन के क्षेत्र म जिस प्रकार से प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के उपकरणो (लोकनिणय और आरम्भक) को अपनाया गया है, उसकी प्रशसा तथा आलोचना दोनो ही हुई हैं।

प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का पक्ष—प्रत्यक्ष लोकतन्त्र और उसके उपकरणो के पक्ष म प्रमुखतया निम्नलिखित तक दिये जाते है

(१) कानूनी प्रभु पर प्रतिबन्ध—लोकनिणय तथा आरम्भक व्यवस्थापिका के मनमाने कार्यों पर एक जनप्रिय प्रतिबन्ध होता है। लोकतन्त्र म व्यवस्थापिकाओ से यह आशा की जाती है कि वे कानून निर्माण का काय जनता की इच्छानुसार

करेंगी, लेकिन वे सदव ही ऐसा नही करती। अत लोकनिणय और आरम्भक अपनी इच्छा लागू करने के लिए जनता के हाथ मे एक आवश्यक अस्त्र है।

(२) लोकनिणय शासन की त्रुटियों का उपचार—अनेक बार व्यवस्थापिका जनता के हितो को भुलाकर दोषपूर्ण कानून बनाने का प्रयत्न करती है, लेकिन यदि लोकनिणय की व्यवस्था हो तो व्यवस्थापिका को ये विधेयक जनता के सम्मुख मतदान के लिए प्रस्तुत करने होगे और जनता इन्हे अस्वीकार कर शासन की त्रुटियो को दूर कर देगी।

(३) आरम्भक शासन की भूलो का उपचार—अनेक बार जन प्रतिनिधि जनता के हित मे आवश्यक कानूनो का निर्माण नही करते। ऐसी स्थिति मे यदि आरम्भक की व्यवस्था हो, तो जनता व्यवस्थापिका पर जनहितकारी कानूनो का निर्माण करने के लिए दबाव डाल सकती है।

(४) राजनीतिक दलो का महत्त्व कम होना—जब लोकनिणय और आरम्भक के आधार पर जनता स्वय कानून निर्माण का काय करती है, तो राजनीतिक दलो का महत्त्व और उनकी बुराइयाँ कम हो जाती हैं।

(५) जनता मे राजनीतिक विषयो के प्रति जागरूकता—लोकनिणय और आरम्भक के आधार पर जनता को सावजनिक जीवन मे अधिक भाग लेने की प्रेरणा और परिणामत अधिक राजनीतिक शिक्षा प्राप्त होती है। बन्जोर (Banjour) के शब्दो मे, 'यह व्यक्तिगत निर्वाचकों की राजनीतिक शिक्षा में वद्धि करता है।'

(६) जनता और प्रतिनिधियो मे सम्बन्ध स्थापित करना—अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र मे अनेक बार चुनाव के समय के अतिरिक्त जनता और उनके प्रतिनिधियो म कोई सम्पक नही रहता लेकिन लोकनिणय और आरम्भक की पद्धतियाँ इस दोष को दूर कर देती है। ब्राइस के शब्दो मे 'प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की पद्धतिया निर्वाचन के अतिरिक्त अन्य समयो मे जन प्रतिनिधियों का जनता से सम्पक बनाये रखने का श्रेष्ठतम साधन हैं।'

(७) कानूनो को नतिक शक्ति प्राप्त होना—ब्राइस ठीक ही कहते हैं कि "लोगों की स्वीकृति के कारण कानून अधिक शक्ति और सम्मान प्राप्त कर लेता है और जनता इनका पालन करना तथा करवाना अपना परम कतव्य समझती है।"

(८) विधायक कतव्य के प्रति सजग—इन पद्धतियो का सीधा प्रभाव यह होता है कि विधायक अपने कर्तव्यो के प्रति सजग हो जाते हैं और अपने कार्यों को अधिकाधिक श्रेष्ठ रूप म करने का प्रयत्न करते हैं।

(९) देशभक्ति की भावना में वद्धि—लोकनिणय और आरम्भक की शक्तियो के आधार पर जब जनता को अधिक राजनीतिक शक्ति प्रदान की जाती है तो उनमे देशभक्ति और राष्ट्रवाद की भावना बढती है और वे क्रान्ति की दिशा में नही सोच सकते।

इन पद्धतियो के गुणो का वणन करते हुए ब्राइस कहते हैं कि "जिस प्रकार लोकनिणय विधानमण्डल की त्रुटियों से जनता की रक्षा करता ह, उसी प्रकार आरम्भक उनको भूलों का उपचार है।"[1]

दोष—सद्धा तिक रूप में प्रशसनीय होते हुए भी प्रत्यक्ष व्यवस्थापन की ये पद्धतियाँ व्यवहार मे अनेक दृष्टियो से दोषपूण हैं। उनके प्रमुख दोष निम्नलिखित कह जा सकते हैं

(१) साधारण जनता कानून निर्माण का जटिल काय करने के योग्य नहीं— वतमान समय म विधयको का प्रारूप तयार करने और इन विधेयको पर विचार करन का काय इतना जटिल हो गया है कि साधारण जनता इन कार्यों को करन की योग्यता नही रखती है। ऐसी स्थिति मे जनता के द्वारा इस शक्ति का दुरुपयोग ही किया जाता है। **डॉ० फाइनर ने लिखा है "बुद्धिहीन व अशिक्षित लोगो ने प्रगतिशील कानूनो को प्राय नष्ट ही किया है।"**

(२) व्यवस्थापिका के सम्मान मे कमी—जब कानून निर्माण के सम्ब ध मे अन्तिम शक्ति व्यवस्थापिका के हाथ मे नही होती, तो व्यवस्थापिका के सम्मान म बहुत कमी हो जाती है और ऐसी स्थिति मे अधिक योग्य व्यक्ति व्यवस्थापिका की सदस्यता प्राप्त करने के इच्छुक नही रहते। डूब्स के शब्दों म **'इन पद्धतियों को अपनाने पर व्यवस्थापिका एक परामशदात्री सस्था बनकर रह जाती है।'**[2]

(३) व्यवस्थापिका अनुत्तरदायी और लापरवाह हो जाती है—लोकनिणय और आरम्भक के कारण जब कानून निर्माण के सम्बध म अन्तिम शक्ति जनता के हाथ मे रहती है तो इससे विधानमण्डल की उत्तरदायित्व की भावना बहुत निबल हो जाती है।

(४) जनता की उदासीनता—जनता का बार बार लोक काय मे भाग लेना उनम एक निर्वाचकीय थकावट (electoral fatigue) पैदा कर देता है। इस प्रकार के कार्यों मे भाग लेने के लिए अधिकाश जनता को न तो समय ही मिलता है और न उनमे रुचि ही होती है। इसलिए जो निणय होते हैं, व अल्पमत के ही होते हैं।

(५) समय और धन का अपव्यय—लोकनिणय के परिणामस्वरूप अनेक आवश्यक कानूनो के निर्माण म बहुत अधिक देर लग जाती है और अनेक बार वे तब निर्मित हो पाते हैं, जबकि 'कालातीत' (out of date) हो जाते है। बार-बार के इन मतदानो मे बहुत अधिक व्यय भी होता है।

[1] 'As the referendum protects the people against the legislature s sins of commission, the initiative is a remedy for their ommis sion —*Bryce*

[2] 'If you introduce the referendum, parliament becomes merely a consultative body" —M Dubbs (Quoted by Simon Diploige in '*The Referendum in Switzerland* p 99)

(६) राजनीतिक दल और अवांछित व्यक्तियों का शक्तिशाली होना—लोक निर्णय और आरम्भक से राजनीतिक दलों के प्रभाव में कमी होने के बजाय वे बहुत अधिक सक्रिय हो जाते हैं। इससे भी अधिक अनुचित यह है कि इसके अन्तर्गत अनुत्तरदायी और दम्भी व्यक्तियों को जनता की अज्ञानता का लाभ उठाने का अवसर मिल जाता है।

(७) लोकनिर्णय में संशोधन सम्भव नहीं—लोकनिर्णय का एक दोष यह है कि इसके अन्तर्गत कानून को या तो पूर्ण रूप से स्वीकार करना होता है या पूर्ण रूप से अस्वीकार। इसके अन्तर्गत कानून में कोई संशोधन नहीं हो सकता।

(८) रूढ़िवादिता को प्रोत्साहन—सामान्य व्यक्ति रूढ़िवादी होता है और उसके लिए प्रगतिशील कानून को स्वीकार करना बहुत कठिन होता है। ऐसी स्थिति में लोकनिर्णय आदि को अपनाने का परिणाम रूढ़िवादिता को प्रोत्साहन देना ही होगा।

इस प्रकार लोकनिर्णय और आरम्भक की ये पद्धतियां जनता को वास्तविक राजनीतिक शक्ति प्रदान करती हैं लेकिन इनका उचित रूप में प्रयोग किये जाने के लिए जनता में उच्च राजनीतिक जागरूकता नितान्त आवश्यक है।

स्विटजरलैण्ड में लोकतन्त्र और आरम्भक के प्रयोग की स्थिति—लोकनिर्णय और आरम्भक की प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रात्मक पद्धतियों के गुण दोष बतलाये जाते हैं, लेकिन सामान्य धारणा यही है कि स्विटजरलैण्ड में इन पद्धतियों के द्वारा सफलतापूर्वक कार्य किया जा रहा है। अमरीकी संघ के राज्यों में जब लोकनिर्णय और आरम्भक की पद्धतियां को अपनाया गया, तो भ्रष्टाचार और षड्यन्त्र की अनेक घटनाएँ सुनने को मिलीं, लेकिन स्विटजरलैण्ड में इन पद्धतियों का प्रयोग सामान्यतया इन दोषों से मुक्त रहा है। न केवल सामान्य जनता में इन पद्धतियों के प्रयोग के प्रति सन्तोष है वरन वे इन पर गर्व अनुभव करते हैं और इन्हें बनाये रखने के तीव्र इच्छुक हैं। इसका प्रमाण यह है कि अभी हाल ही में जब ऐच्छिक लोकनिर्णय को सीमित करने का प्रयत्न किया गया, तो सभी कण्टनों में इसे अत्यधिक बहुमत से अस्वीकार कर दिया गया। वस्तुस्थिति यह है कि स्विटजरलैण्ड में लोकनिर्णय और आरम्भक का प्रयोग दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है।

स्विटजरलैण्ड में आरम्भक की अपेक्षा लोकनिर्णय अधिक सफल रहा है और ऐच्छिक विधायी लोकनिर्णय की तुलना में अनिवार्य संवैधानिक लोकनिर्णय अपेक्षाकृत अधिक लोकप्रिय है। १८४८ से १९६० तक के ११२ वर्षों में संघीय सभा द्वारा पारित ७६ संवैधानिक संशोधनों पर लोकनिर्णय हुआ, जिनमें से ५१ को मतदाताओं तथा कण्टनों द्वारा स्वीकार कर लिया गया। इस प्रकार संवैधानिक संशोधनों को स्वीकार करने में सामान्यतया जनता ने तत्परता का ही परिचय दिया है और

ह्वीयर के शब्दो मे कहा जा सकता है कि 'यदि स्विस सविधान कठोर है तो नागरिक पर्याप्त लचीले हैं।'[1]

एक विचार यह व्यक्त किया जाता है कि नागरिको ने इन पद्धतिया के प्रयोग के सम्बन्ध मे सामान्यतया अनुदारवादिता का ही परिचय दिया है। जनता द्वारा लोकनिणय मे प्रगतिशील कानूनो को अस्वीकार किय जाने से स्पष्ट है कि जनता अपने प्रतिनिधिया की तुलना म कम प्रगतिशील है और उन्हाने सदव ही क्रान्तिकारी प्रवृत्तियो का विरोध किया है। लेकिन इसके साथ ही यह मानना होगा कि स्विस जनता समय के साथ अपने दृष्टिकोण म परिवर्तन कर रही है और अब जनता आवश्यकतानुसार जन जीवन मे राज्य का नियन्त्रण स्वीकार करने लगी है।

इन पद्धतिया के सम्बन्ध मे जन भावनाएँ व्यक्त करते हुए रपाड ने लिखा है कि "जब कोई व्यक्ति स्विटजरलण्ड के साधारण नागरिक से यह पूछता है कि क्या उसका देश प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के प्रयोग और उसके परिणाम से सन्तुष्ट है, तो वह निश्चित रूप से हाँ में उत्तर देगा। सम्भव है कि वह इस सम्बन्ध मे परीक्षण शब्द को अच्छा न समझे, क्योंकि उसके विचार मे इस सम्बन्ध में अब परीक्षण का समय व्यतीत हो चुका है। इसके साथ ही आरम्भक और लोकनिणय का विरोध करने वालों के सन्देह समाप्त हो चुके हैं जिस तरह कि इन विधियों के अनुयायियों का अन्धविश्वास समाप्त हो चुका है।"[2]

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की सफलता के कारण

प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र स्विस शासन व्यवस्था की एक महत्त्वपूण विशेषता है और इसकी सफलता का श्रेय इस देश की विशिष्ट परिस्थितिया को ही है। लॉर्ड ब्राइस का कहना है कि "कुछ ऐसी पद्धतियाँ होती हैं जो पौधों की भाँति केवल एक विशेष प्रकार की जलवायु में ही पलती हैं।"[3] स्विटजरलैण्ड मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की सफलता के कारणा का अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) भौगोलिक स्थिति—स्विटजरलण्ड की भौगोलिक स्थिति लगभग वसी ही है, जसी प्राचीन काल के रोम और यूनान के नगरराज्यो की थी और यह

[1] 'If the Swiss constitution is rigid the Swiss people are flexible
—K C Wheare *Federal Government* p 223

[2] If one were to ask the man in the street in Switzerland whether the country was on the whole satisfied with the result of experiments with direct democracy, the answer would undoubtedly be in the affirmative Indeed he might take exception to the term of experiments in this connection The experimental stage is over and with it have gone as well as the mis givings of the early enemies of the initiative and referendum as the blind enthusiasm of its first friends"
—W E Rappard *The Government of Switzerland*, p 74 75

[3] 'There are institutions which like plants, flourish only on their own hilside and their sunshine' —*Bryce*

प्रत्यक्ष प्रजात त्र की सफलता के नितात अनुकूल है। स्विटजरलैंड यूरोप के मध्य मे स्थित लगभग ५० लाख जनसख्या का छोटा सा देश है। पवतो तथा अय प्राकृतिक बाधाओ से घिरा हुआ होने के कारण स्विस जनता सुरक्षा की भावना अनुभव करती है और लघु आकार तथा कम जनसख्या के कारण स्विटजरलण्ड में लोकनिणय और आरम्भक जसी पद्धतियो का प्रयोग सफलतापूवक किया जा सका है।

(२) स्विस नागरिको का चरित्र—स्विस नागरिको का चरित्र ही वह तत्व है जिसने प्रजातन्त्र की सफलता मे सर्वाधिक योग दिया है। ये लोग बडे शातिप्रिय है और एक दूसरे के विचारो का सम्मान करते हैं। इनमे सूझ बूझ विनम्रता तथा सहिष्णुता कूट कूट कर भरी है। वे लोग राजनीति को एक गम्भीर विषय मानते हैं और बिना किसी आवेश तथा स्वाथ के इसका सचालन करते हैं। सामान्यतया सभी पक्ष इस बात का स्वीकार करते हैं कि स्वत त्र विचार, गम्भीर व्यावहारिक निणय, उदारवादी तथा भावना के प्रभाव मे न रहने वाले जितने श्रेष्ठ नागरिक स्विटजरलण्ड म हैं उतने और किसी देश मे मिलने दुलभ हैं।

(३) आर्थिक असमानता का अभाव—हाब्सन ने एक स्थान पर लिखा है कि धनवानो का धन और निधनो की निधनता प्रजातन्त्र को भ्रष्ट कर देती है किन्तु स्विटजरलैण्ड मे ऐसी स्थिति नही है। स्विटजरलण्ड मे आर्थिक असमानता अन्य देशो की तुलना मे बहुत कम है और स्विटजरलैण्ड के अधिकतर लोग निम्न मध्यम वग के हैं। बेकारी तथा दरिद्रता की भीषण समस्याएँ वहा पर नही हैं और न ही जनता मे आर्थिक स्थिति के प्रति असतोष और रोष है। इस आर्थिक पृष्ठभूमि ने प्रत्यक्ष प्रजात त्र को सफल बनाने मे बहुत योग दिया है।

(४) उग्र दलबन्दी का अभाव—स्विटजरलैण्ड मे राजनीतिक दल तो हैं लेकिन दलबन्दी की भावना बहुत उग्र न होने के कारण स्विटजरलण्ड राजनीतिक दलो की उन अनेक बुराइयो से अछूता है, जो अन्य देशो मे विद्यमान हैं। अन्य यूरोपियन देशो, अमरीका और भारत मे व्यावसायिक राजनीतिज्ञो की एक बडी जमात है, जो राजनीति को भ्रष्ट और राष्ट्रीय हितो की उपेक्षा करती है। बहुलीय और बहुल कायपालिका के कारण बहुत अधिक महत्वाकाक्षी व्यक्ति स्विस राजनीति मे प्रवेश नही करते और स्विस राजनीति शात स्वस्थ और भ्रष्टाचार रहित है।

(५) राष्ट्रीय एकता और देशप्रेम की प्रबल भावना—स्विटजरलण्ड मे जातिगत, भाषागत और धमगत विभिन्नताएँ हैं किन्तु श्रेष्ठ चरित्र और व्यावहारिकता के आधार पर इन विभिन्नताओ से सामजस्य स्थापित कर लिया गया है और राष्ट्रीय एकता की भावना बहुत अधिक प्रबल हो गयी है जिससे वे राष्ट्रीय हित के प्रश्नों पर बहुत अधिक अच्छे रूप में सोचने की स्थिति मे हैं। देशभक्ति की भावना की प्रबलता के कारण वे स्वय के स्वार्थ की तुलना मे देशहित को अधिक महत्व देते हैं।

(५) **स्थानीय स्वशासन की श्रेष्ठ व्यवस्था**—स्थानीय स्वशासन प्रजातन्त्र का आधार है और स्विट्जरलण्ड मे स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था जितने अधिक श्रेष्ठ रूप मे विद्यमान है, उतनी अन्य देश मे नही है। स्थानीय स्वशासन की इस व्यवस्था ने स्विस नागरिकों को सार्वजनिक कार्यों का प्रशिक्षण प्रदान किया है और उनमे नागरिक दायित्व की भावना जागृत की है।

(६) **शिक्षा का व्यापक प्रचार**—प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की सफलता का एक कारण यह है कि स्विटजरलण्ड की लगभग समस्त जनता शिक्षित है। स्विटजरलण्ड के सभी कण्टनो मे निःशुल्क और अनिवार्य प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था है।

(७) **स्वतन्त्र प्रेस**—प्रजातन्त्र की सफलता के लिए स्वतन्त्र प्रेस नितान्त आवश्यक है और स्विटजरलण्ड म प्रेस पूर्णतया स्वतन्त्र और निष्पक्ष है तथा इसने प्रजातन्त्र को सफल बनाने मे महत्त्वपूर्ण योग दिया है।

(८) **अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में तटस्थता**—स्विटजरलण्ड मे प्रजातन्त्र की सफलता का एक कारण अन्तरराष्ट्रीय राजनीति म स्विटजरलण्ड की स्थायी और सब स्वीकृत तटस्थता है। इस कारण स्विटजरलण्ड बीसवी सदी के उन दो सकटो से मुक्त रहा है, जिनका सामना यूरोप क अन्य प्रजातन्त्रीय राज्यो को करना पडा। स्विटजरलण्ड की स्थायी तटस्थता के कारण ही बडे पडोसी देश स्विस राजनीति मे हस्तक्षेप करने के लिए प्रेरित नही हुए हैं और तटस्थता के कारण ही स्विटजरलण्ड अपने समस्त साधनो का प्रयोग आन्तरिक राजनीतिक आर्थिक और सामाजिक स्थिति सुधारने म कर सका है।

इन सबके अतिरिक्त स्विट्जरलण्ड मे वीरपूजा की भावना नहीं है और प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र स्विस नागरिको के स्वभाव के नितान्त अनुकूल है। इन्हीं तत्त्वो का परिणाम है कि जहाँ विश्व क अन्य देशो मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र और उसके उपकरण नितान्त अव्यावहारिक प्रमाणित हो चुके हैं स्विटजरलण्ड म इनके द्वारा सफलतापूर्वक कार्य किया जा रहा है।

प्रश्न

१ प्रत्यक्ष लोकतन्त्र से आप क्या समझते हैं? स्विटजरलण्ड म यह किस प्रकार क्रियान्वित हो रहा है? (आगरा, १९६४)

२ 'स्विटजरलण्ड प्रजातन्त्र का घर है।' इस वाक्य की व्याख्या कीजिए। (आगरा १९६७, कानपुर, १९६८)

३ स्विटजरलण्ड म प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की संस्थाओ का वर्णन कीजिए और उनके गुण दोष बतलाइए। (आगरा १९६८ ६९, ७१, जोधपुर, १९७०, ७२)

४ प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का क्या अर्थ है? आरम्भक और लोकनिर्णय की व्याख्या कीजिए तथा समझाइए कि स्विट्जरलण्ड म उनका प्रयोग किस प्रकार व कितनी सफलता के साथ किया जाता है? (लखनऊ १९६५)

५ स्विटजरलण्ड मे प्रत्यक्ष प्रजातन्त्रीय सस्थाओ के कार्यकरण की विवेचना कीजिए। (लखनऊ, १९६७, ६९, ७२)

६ स्विटजरलण्ड मे प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के व्यावहारिक स्वरूप का परीक्षण कीजिए। (जीवाजी, १९६६)

७ प्रत्यक्ष लोकतन्त्र की व्याख्या कीजिए। यह स्विटजरलण्ड म किस प्रकार क्रियावित हो रहा है? (विक्रम, १९६३, कानपुर, १९७२)

८ 'प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के साधनो के लाभ वास्तविक की अपेक्षा दिखावटी अधिक है।' इस कथन के सदभ मे स्विस प्रजातन्त्र की क्रियान्विती की व्याख्या कीजिए। (विक्रम, १९६४)

९ ब्राइस के मतानुसार स्विस जनतन्त्र 'विश्व के अन्य जनतन्त्रो से अधिक जनतान्त्रिक है।' इस कथन के आधार पर स्विट्जरलण्ड म विद्यमान प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के रूपो का वणन कीजिए। (विक्रम १९७०)

१० 'प्रजातन्त्र के विद्यार्थी के लिए स्विटजरलैण्ड की शासन व्यवस्था से अधिक शिक्षाप्रद कोई भी वस्तु नही है।' (ब्राइस) विस्तृत विश्लेपण कीजिए। (विक्रम, १९७१)

7

स्विट्जरलैण्ड के राजनीतिक दल
(POLITICAL PARTIES IN SWITZERLAND)

"स्विटजरलण्ड के दलो की विचारधारा तथा उनके सामाजिक सगठन में कोई अति उग्र प्रकार के अन्तर नहीं हैं।"[1] —कोडिंग

अधिकाश पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देशो के सविधानो म राजनीतिक दलो का कोई उल्लेख नही है, लेकिन वास्तविक शासन व्यवस्था के सचालन म राजनीतिक दल महत्त्वपूण भूमिका अदा करते हैं। स्विट्जरलण्ड के सविधान मे भी राजनीतिक दलो का कोई उल्लेख नही है और यद्यपि स्विस शासन व्यवस्था मे राजनीतिक दल उतने शक्तिशाली नही हैं, जितने कि ब्रिटन या अमरीका मे हैं। लेकिन फिर भी राजनीतिक दलो की भूमिका महत्त्वपूण है और स्विस दलो का ज्ञान प्राप्त किये बिना शासन व्यवस्था के यथाथ स्वरूप को नही जाना जा सकता है।

दल प्रणाली का विकास

सन १८४८ के पूव स्विटजरलण्ड म केवल तीन राजनीतिक दल—उदार दल, क्रान्तिकारी दल तथा कथोलिक दल—थे। इनमे सबसे प्रमुख उदार दल था जिसका निर्माण बुद्धिजीवियो श्रमिको और किसानो द्वारा १८१५ के समझौते द्वारा स्थापित सामन्तवादी व्यवस्था का विरोध करने के लिए किया गया था। १८३२ में उदार दल का ही एक भाग उससे अलग हो गया और उसने क्रान्तिकारी दल के नाम स अपना गठन किया। इसी समय उदार दल व क्रान्तिकारी दल का विरोध करने के लिए कथोलिक दल का गठन किया गया। इन राजनीतिक दलो का पारस्परिक विरोध इतना प्रबल हो गया कि इसके परिणामस्वरूप 'साउण्डरबण्ड' (Sounderbund) का युद्ध हुआ।

१८४८ में जबकि नवीन सविधान का निर्माण हो रहा था तो उदार दल

[1] There are no extreme differences in the philosophy and social composition of the Swiss Parties —*Coddings*

और क्रान्तिकारी दल ने मिलकर इस प्रगति का प्रतीक बनाने का प्रयत्न किया और इसमें वे कुछ सीमा तक सफल भी रहे।

लेकिन क्रान्तिकारी दल सुधारों की दिशा में तीव्र गति से आगे बढ़ने का इच्छुक था और संविधान निर्माण के लगभग तुरन्त बाद ही इस बात को लेकर इन दोनों राजनीतिक दलों में मतभेद उत्पन्न हो गये। जनता का समर्थन क्रान्तिकारी दल को मिला और उसने इस समर्थन के आधार पर १८७४ में संविधान में पूर्ण संशोधन करने में सफलता प्राप्त की।

इसके बाद १९१९ तक स्विस राजनीति पर क्रान्तिकारी दल का प्रभुत्व बना रहा यद्यपि १८९० में स्विस राजनीतिक मंच पर समाजवादी दल का भी उदय हो चुका था। १९१९ में व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली को अपनाया गया। इसके परिणामस्वरूप स्विस राजनीति बहुदलीय हो गयी और स्विटजरलैण्ड में तीन नये राजनीतिक दलों का उदय हुआ। सर्वप्रथम कृषक दल (Farmers, Workers and Middle Class Party) का उदय हुआ और इसके बाद स्वतन्त्र दल तथा साम्यवादी दल का।

स्विटजरलैण्ड के प्रमुख राजनीतिक दल तथा उनकी विचारधारा

जिन राज्यों में बहुदलीय प्रणाली होती है उनके राजनीतिक दलों में आधारभूत भेद पाया जाता है। स्विटजरलैण्ड में भी ऐसा ही है और कोडिंग ने लिखा है कि 'स्विटजरलैण्ड के दलों की विचारधारा तथा उनके सामाजिक संगठन में कोई अति उग्र प्रकार के अन्तर नहीं हैं।'

स्विटजरलैण्ड के प्रमुख राजनीतिक दलों की नीतियों की विवेचना इस प्रकार है

वादिता ही है। १९६० के बाद इस दल मे दो गुट उभर रहे है। रूढिवादी कैथोलिक गुट जहाँ अब भी पुरानी मा यताओ को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील है एक अधिक प्रगतिशील गुट दल को समाजवादी रूप प्रदान करने के लिए सचेष्ट है।

(२) क्रा तिकारी दल (Redical Party)—सन १८३२ मे उदारवादी दल से अलग होकर कुछ लागो ने इसकी स्थापना की थी। यह दल नाम से क्रा तिकारी किन्तु नीति की दृष्टि से मध्यममार्गी है और वास्तव मे इसने कथोलिक दल तथा समाजवादी दल के बीच का माग ग्रहण किया है। पहले यह दल शक्तिशाली के द्र, सामाजिक सुरक्षा की अधिकतम व्यवस्था तथा व्यापक प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के पक्ष मे था, लकिन अब इसके सामाजिक सुरक्षा सम्ब धी कायक्रम को समाजवादी दल न अपना लिया है। इसी कारण इस दल के अनेक सदस्य समाजवादी दल म चले गये हैं और इसका महत्त्व कम हो गया है। वतमान समय म यह दल सवैधानिक आरम्भक के समान ही सामा य विधायी क्षेत्र मे भी आरम्भक (initiative) को अपनान क पक्ष मे है। यह दल कथोलिको की प्रमुखता का विरोधी और धम निरपक्षता का समथक है। यह दल सम्पत्ति के अधिकार का तो समथक है, कि तु इस अधिकार की असीमितता के पक्ष म नही है। इसके अधिकाश अनुयायी मध्यम वग मे से ही हैं।

(३) समाजवादी लोकतन्त्रीय दल (Social Democratic Party)—इस दल की स्थापना १८९० मे हुई थी। दल का उदय यद्यपि एक उग्रवादी दल क रूप मे हुआ था लेकिन इसका वतमान रूप वसा नही है। वतमान समय म दल का उद्देश्य पूजीवादी अथव्यवस्था को समाप्त करने के बजाय उसे उसक दोषो से मुक्त करना है तथा इसका विचार है कि मिश्रित अथ व्यवस्था को अपनाकर इस उद्देश्य की पूर्ति सरलता स की जा सकती है। यह दल स्विटजरलण्ड को सयुक्त राष्ट्र सघ का सक्रिय सदस्य बनान श्रमिको की स्थिति म सभी सम्भव सुधार करने और सघ को प्रत्यक्ष कर लगाने के अधिकार का समथक है। १९७१ मे स्त्रिया को जो मताधिकार प्राप्त हुआ, उसमे समाजवादी लोकतन्त्रीय दल ने सर्वाधिक भूमिका अदा की थी। वतमान समय मे यह दल मजदूर सघो के अधिकारो का विशेष समथक है। यह दल स्विटजरलण्ड के तीन प्रमुख दला मे से एक है और वतमान समय म सघीय परिषद म इसके दो सदस्य हैं। कारखाना मे काम करने वाले लोग और थोडा वेतन पाने वाले सरकारी कमचारी इसके समथक हैं।

(४) कृषक दल (Farmers Workers and Middle Class Party)—इसका पूरा नाम कृषका, कामगरो और मध्यमवग का दल है, लकिन 'कृषक दल नाम ही अधिक प्रचलित है। तीन प्रमुख राजनीतिक दला के अतिरिक्त स्विस राजनीति में जो अ य छोटे-छोटे दल हैं, उनमे 'कृषक दल' सबसे प्रमुख है। दल का प्रमुख ध्येय किसाना कारीगरो तथा स्विट्जरलण्ड के मध्यम वग की स्थिति म सुधार करना है और इस सम्ब ध मे दल नीति सम्ब धी घोषणाओ क बजाय उन

और क्रान्तिकारी दल ने मिलकर इसे प्रगति का प्रतीक बनाने का प्रयत्न किया और इसमे व कुछ सीमा तक सफल भी रहे।

लेकिन क्रान्तिकारी दल सुधारो की दिशा म तीव्र गति से आगे बढ़ने का इच्छुक था और संविधान निर्माण के लगभग तुरन्त बाद ही इस बात को लेकर इन दोनो राजनीतिक दलो मे मतभेद उत्पन्न हो गये। जनता का समर्थन क्रान्तिकारी दल को मिला और उसने इस समर्थन के आधार पर १८७४ मे संविधान म पूर्ण संशोधन करने मे सफलता प्राप्त की।

इसके बाद १९१९ तक स्विस राजनीति पर क्रान्तिकारी दल का प्रभुत्व बना रहा, यद्यपि १८९० मे स्विस राजनीतिक मंच पर समाजवादी दल का भी उदय हो चुका था। १९१९ म व्यवस्थापिका मे प्रतिनिधित्व के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली को अपनाया गया। इसके परिणामस्वरूप स्विस राजनीति बहुदलीय हो गयी और स्विटजरलण्ड मे तीन नये राजनीतिक दलो का उदय हुआ। सर्वप्रथम कृषक दल (Farmers, Workers and Middle Class Party) का उदय हुआ और इसके बाद स्वतन्त्र दल तथा साम्यवादी दल का।

स्विट्जरलैण्ड के प्रमुख राजनीतिक दल तथा उनकी विचारधारा

जिन राज्यो म बहुदलीय प्रणाली होती है उनके राजनीतिक दलो म आधारभूत भेद का अभाव होता है। स्विटजरलण्ड मे भी ऐसा ही है और कोडिंग ने लिखा है कि **'स्विटजरलण्ड के दलों की विचारधारा तथा उनके सामाजिक सगठन में कोई अति उग्र प्रकार के अन्तर नहीं हैं।'**

स्विटजरलण्ड के प्रमुख राजनीतिक दलो की नीतियो की विवेचना इस प्रकार है

(१) कैथोलिक दल—कैथोलिक दल जिसे 'कैथोलिक रूढ़िवादी दल (Catholic Conservative Party) भी कहते हैं, स्विटजरलण्ड का एक अत्यन्त प्रमुख दल है। जसा कि इसके नाम स ही स्पष्ट है यह दल साउण्डरबण्ड युद्ध के समय से ही कैथोलिक चर्च की रीतियो व नीतियो की रक्षा के लिए प्रयत्नशील रहा है। चर्च की स्वतन्त्रता का समर्थक होने के कारण इसकी सदैव यह चेष्टा रही है कि स्विस संविधान से वे भाग निकल जायें, जो चर्च के क्रियाकलापो पर प्रतिबन्ध लगाते हैं। क्योंकि ग्रामीण कैण्टनो मे कैथोलिक चर्च का प्रभाव अधिक है अत इस प्रभाव को बनाये रखने के लिए यह दल कैण्टनो के अधिकार का समर्थक और संघ म शक्ति के केन्द्रीकरण का विरोधी रहा है।

कैथोलिक दल व्यक्ति की आर्थिक स्वतन्त्रता का समर्थक है और उसका विचार है कि व्यक्ति के सम्पत्ति के अधिकार पर कोई प्रतिबन्ध नही लगाये जाने चाहिए। हाल ही म समय की माँग के साथ चलते हुए इस दल ने मजदूरो के अधिकारो सामाजिक सुरक्षा कानूनो, कुटुम्ब का भत्ता तथा श्रमिक संघो को प्रोत्साहन जसी बातो को अपने कार्यक्रम मे स्थान दिया है, किन्तु इसकी नीति का मूल रूढ़ि

वादिता ही है। १९६० के बाद इस दल मे दो गुट उभर रहे हैं। रूढिवादी कैथोलिक गुट जहा अब भी पुरानी मा यताओ को बनाये रखने के लिए प्रयत्नशील है एक अधिक प्रगतिशील गुट दल को समाजवादी रूप प्रदान करने के लिए सचेष्ट है।

(२) क्रा तिकारी दल (Redical Party)—सन् १८३२ म उदारवादी दल से अलग होकर कुछ लोगो ने इसकी स्थापना की थी। यह दल नाम से क्रातिकारी, किन्तु नीति की दृष्टि से मध्यममार्गी है और वास्तव मे इसने कथोलिक दल तथा समाजवादी दल के बीच का माग ग्रहण किया है। पहले यह दल शक्तिशाली के द्र सामाजिक सुरक्षा की अधिकतम व्यवस्था तथा व्यापक प्रत्यक्ष लोकत त्र के पक्ष मे था, लेकिन अब इसके सामाजिक सुरक्षा सम्ब धी कायक्रम को समाजवादी दल न अपना लिया है। इसी कारण इस दल के अनेक सदस्य समाजवादी दल म चले गये हैं और इसका महत्त्व कम हो गया है। वतमान समय म यह दल सवैधानिक आरम्भक के समान ही सामा य विधायी क्षेत्र मे भी आरम्भक (initiative) को अपनाने क पक्ष म है। यह दल कथोलिको की प्रमुखता का विरोधी और धम निरपक्षता का समथक है। यह दल सम्पत्ति के अधिकार का तो समथक है कि तु इस अधिकार की असीमितता के पक्ष मे नही है। इसके अधिकाश अनुयायी मध्यम वग म मे ही है।

(३) समाजवादी लोकतन्त्रीय दल (Social Democratic Party)—इस दल की स्थापना १८९० मे हुई थी। दल का उदय यद्यपि एक उग्रवादी दल क रूप मे हुआ था लकिन इसका वतमान रूप वसा नही है। वतमान समय मे दल का उद्देश्य पूजीवादी अथव्यवस्था को समाप्त करने के बजाय उसे उसक दोषो स मुक्त करना है तथा इसका विचार है कि मिश्रित अथ व्यवस्था को अपनाकर इस उद्देश्य की पूर्ति सरलता स की जा सकती है। यह दल स्विटजरलण्ड को सयुक्त राष्ट्र सघ का सक्रिय सदस्य बनान, श्रमिको की स्थिति म सभी सम्भव सुधार करने और सघ को प्रत्यक्ष कर लगाने के अधिकार का समथक है। १९७१ म स्त्रियो को जो मताधिकार प्राप्त हुआ, उसम समाजवादी लोकतन्त्रीय दल ने सर्वाधिक भूमिका अदा की थी। वतमान समय म यह दल मजदूर सघो के अधिकारो का विशेष समथक है। यह दल स्विटजरलण्ड क तीन प्रमुख दलो मे स एक है और वतमान समय म सघीय परिषद मे इसके दो सदस्य हैं। कारखानो मे काम करने वाले लोग और थोडा वतन पाने वाले सरकारी कमचारी इसके समथक हैं।

(४) कृषक दल (Farmers, Workers and Middle Class Party)—इसका पूरा नाम कृषको कामगरो और मध्यमवग का दल है, लकिन 'कृषक दल नाम ही अधिक प्रचलित है। तीन प्रमुख राजनीतिक दलो के अतिरिक्त स्विस राजनीति मे जो अ य छोटे छोटे दल हैं उनम 'कृषक दल' सबसे प्रमुख है। दल का प्रमुख ध्येय किसानो कारीगरो तथा स्विटजरलण्ड के मध्यम वग की स्थिति म सुधार करना है और इस सम्ब ध म दल नीति सम्ब धी घोषणाओ क बजाय उन

सभी कार्यों के करने मे अधिक विश्वास रखता है, जिनसे इस लक्ष्य की प्राप्ति हो सके। यह दल चाहता है कि सरकार किसानो को सहायता दे, बाहरी वस्तुओं के आयात पर भारी कर लगाये और उत्पादन के मूल्यो को निर्धारित करे, जिससे कृषकों को उचित लाभ पहुच सके। आर्थिक क्षेत्र मे राज्य के हस्तक्षेप के सम्बन्ध म इसका दृष्टिकोण व्यावहारिक है।

(५) उदारवादी दल (Liberal Party)—यह दल बहुत पहले महत्वपूर्ण था और उसने क्रान्तिकारी दल के साथ मिलकर सन १८४८ के संविधान के निर्माण और उसके बाद शासन सत्ता के सचालन के रूप से भाग लिया था, किन्तु अब इसकी स्थिति नगण्य सी है। यह उदारवादी विचारधारा और प्रोटेस्टण्ट ईसाइयो का समर्थक है और सदैव ही सांस्कृतिक स्वतन्त्रता तथा गणतन्त्रवाद का पक्ष लेता रहा है। इस दल ने अब अपना नाम 'उदारवादी लोकतन्त्रीय दल' (Liberal Democratic Party) रख लिया है।

(६) स्वतन्त्र दल (Independent Party)—इसकी स्थापना १९३५ म हुई है। यह दल आर्थिक क्षेत्र म राज्य के हस्तक्षेप का विरोधी और उपभोक्ताओं के हितो का प्रबल समर्थक है। इस दल को स्विस जनता का व्यापक समर्थन प्राप्त नही है, किन्तु दल के कुछ प्रमुख सदस्य बहुत अच्छे वक्ता हैं और कोडिंग के श० मे, 'स्वतन्त्र दल अपनी वक्तता द्वारा वास्तविक राजनीतिक शक्ति की कमी को पूरा कर लेता है।'[1]

(७) साम्यवादी दल अथवा श्रमिक दल (Communist Party or Labour Party)—यह दल मार्क्सवादी विचारधारा के आधार पर स्विटजरलण्ड मे साम्यवाद लाना चाहता है और इसी कारण यह दल स्विटजरलण्ड मे कभी भी अधिक समर्थन प्राप्त नही कर सका है। द्वितीय महायुद्ध मे स्विस तटस्थता के विरुद्ध सोवियत रूस समर्थक दृष्टिकोण अपनाने के कारण १९४० से १९४५ तक इस दल पर प्रतिबन्ध लगा रहा तथा उसके बाद इस दल ने अपना नाम 'श्रमिक दल' रख लिया है।

उपरोक्त दलो के अतिरिक्त भी स्विटजरलण्ड मे कई अन्य छोटे छोटे दल हैं जैसे उदार समाजवादी दल (Liberal Socialist Party), लोकतन्त्रात्मक तथा प्रोटेस्टेण्ट दल, नेशनल फ्रण्ट, अनुदार नवयुवक दल, राष्ट्रीय लीग तथा किसान लीग आदि।

स्विस राजनीतिक दलों की विशेषताएँ
(Salient Features of the Swiss Political Parties)

स्विट्जरलण्ड क राजनीतिक दलो की मुख्य विशेषताओं का अध्ययन अग्र लिखित रूपो म किया जा सकता है

[1] "The Independent Party makes up in articulation for what it lacks in actual power —Codding

(१) बहुदलीय प्रणाली (Multiple Party System)—इगलैण्ड और अमरीका के विपरीत स्विटजरलण्ड म बहुदलीय प्रणाली है अथात दो से अधिक राजनीतिक दलो को स्विस राजनीति मे प्रभावपूण स्थिति प्राप्त है। सविधान के निर्माण के समय स्विट्जरलण्ड मे ३ प्रमुख राजनीतिक दल थे, किन्तु १९१९ म राष्ट्रीय परिपद के चुनाव हेतु आनुपातिक प्रतिनिधित्व को प्रणाली अपना लन से इनकी सख्या मे बहुत वृद्धि हो गयी और आज इनकी सख्या १३ १४ के लगभग है। इनमे से ७ को प्रभावपूण स्थिति प्राप्त है और उनम भी ३ अधिक प्रमुख है।

बहुदलीय प्रणाली न स्वाभाविक रूप से मिली जुली सरकारो को ज म दिया है, लेकिन इस सम्ब ध म स्विटजरलण्ड की स्थिति अनुपम है। सामा य तथा बहुदलीय प्रणाली निबल और अस्थायी सरकारा को ज म देती है जसा कि द्वितीय महायुद्ध क बाद और दिगाल के उदय के पूव फास मे देखा गया, लकिन स्विटजरलण्ड म ऐसा कोई बात नही है और बहुदलीय प्रणाली अत्यधिक सफलता के साथ काय कर रही है।

(२) दलो की सविधानेत्तर (Extra Constitutional) स्थिति—अ य प्रजातान्त्रिक देशा के समान ही स्विटजरलण्ड म भी राजनीतिक दलो का अस्तित्व सविधानेत्तर ही है। सविधान म कही पर भी उनका उल्लख नही है, लकिन फिर भी उनक द्वारा काय किया जाता है और सविधान न उनकी स्थिति को स्वीकार कर लिया है। इस सम्ब ध मे स्विटजरलण्ड की स्थिति सोवियत रूस और अन्य साम्यवादी देशा से भिन है जहाँ साम्यवादो दल को सविधान क द्वारा स्पष्ट मा यता प्रदान की जाती है।

(३) विरोधी दल का अभाव—ब्रिटेन, फ्रान, कनाडा, अमरीका और भारत आदि दशा मे एक राजनीतिक दल सत्तारूढ होता है और एक या अ य राजनीतिक दल विरोधी दल के रूप मे काय करत ह। ऐसी स्थिति स्विट्जरलण्ड म नही है। स्विटजरलण्ड म आनुपातिक प्रतिनिधित्व की पद्धति को अपनान क कारण किसी एक राजनीतिक दल को राष्ट्रीय परिपद म पूण बहुमत प्राप्त नही हो पाता है। राष्ट्रीय परिपद की भाँति ही सघीय परिपद म भी दला को उनक अनुपात क अनुसार प्रतिनिधित्व मिल जाता है और किसी भी विरोधी दल का प्रश्न ही उत्पन्न नही होना।

(४) दलो में मौलिक सिद्धान्तों पर मतभेद नही—सामा यतया प्रजातान्त्रिक देशो के राजनीतिक दलो म मौलिक सिद्धा ता पर मतभेद पाय जाते हैं, लकिन स्विट्जरलण्ड म ऐसा नही है। तीव्र आर्थिक असमानता के अभाव, सभी व्यक्तियो की अपनी आर्थिक स्थिति स सन्तुष्टि और व्यावहारिक दृष्टिकोण क कारण विभिन्न दलो के आर्थिक कायक्रम मे बहुत अधिक भेद नही है। इसके अतिरिक्त सभी स्विस राजनीतिक दल धम-निरपेक्षता, गणत त्रवाद और अ तरराष्ट्रीय क्षेत्र म स्विट्जरलण्ड की तटस्थता म विश्वास करत हैं।

सगठन को जन्म देते हैं, किन्तु शासन की रूपरेखा के सम्बन्ध मे स्विस जनता म कोई मतभेद नही है। सभी नागरिक गणतन्त्रात्मक सविधान, धर्मनिरपेक्षता, मिश्रित अर्थ-व्यवस्था और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र मे स्विस तटस्थता को स्वीकार करते हैं। जनता मे मत विभाजन का प्रश्न न होने के कारण सुदृढ दलबन्दी स्थापित नही हो सकी है।

(२) गम्भीर आर्थिक असमानता और वग विद्वेष का अभाव—विश्व के जिन देशो मे गम्भीर आर्थिक असमानता है वहाँ कम स कम दो ऐस राजनीतिक दलो का उदय होता है जो एक दूसरे के नितान्त विरुद्ध होते है। इनमे स एक यथास्थिति बनाय रखने का समथक होता है और दूसरा इसम व्यापक परिवतन के लिए प्रयत्नशील। लेकिन स्विटजरलण्ड म आर्थिक असमानता गम्भीर रूप म विद्यमान नही है और सभी व्यक्ति अपनी आर्थिक स्थिति से लगभग सन्तुष्ट हैं। आर्थिक और सामाजिक वग विभेद का अभाव होने के कारण सुदृढ दलबन्दी का आधार ही नही रहा है।

(३) धार्मिक वैमनस्य का अभाव—विश्व के अनक देशो म धम विभेद न धार्मिक वैमनस्य और धार्मिक वैमनस्य ने उग्र दलबन्दी को जन्म दिया है, लेकिन स्विटजरलण्ड मे स्थिति ऐसी नही है। स्विटजरलण्ड मे प्रोटस्टण्ट और क्योलिक आदि के रूप मे धम विभेद तो है, लेकिन इन सभी के द्वारा एक दूसरे के प्रति धार्मिक सहिष्णुता के भाव को अपना लिया गया है। राज्य के स्तर पर धम निरपेक्षता को अपनाकर धम विभेद की समस्या हल कर ली गयी है।

(४) सघीय परिषद की प्रकृति—राजनीतिक दलो की निबलता म स्विस सघीय परिषद का बहुत अधिक योग है। सघीय परिषद इस अथ म स्थायी कार्यपालिका है कि इसे पदच्युत नही किया जा सकता। इसके अतिरिक्त यह निर्दलीय भी है और इसका परिणाम यह हुआ कि स्विस व्यवस्थापिका मे राजनीतिक दल उस प्रकार स सत्ता के लिए सघष मे सलग्न नहीं रहत, जसा ब्रिटेन, फ्रास या अन्य ससदीय राज्यो म होता है। सघीय परिषद की निर्दलीय प्रकृति के कारण सबल दलीय सगठन और व्यवस्थापिका मे कठोर दलीय अनुशासन की कोई आवश्यकता नही रहती। स्विटजरलैंड मे दलीय सचेतको की भूमिका बहुत कम महत्वपूण ह और एक विशेष बात यह है कि सघीय सभा मे सदस्यो के बठने की व्यवस्था दलीय आधार के स्थान पर जिला आधार पर की गई है।

(५) सघीय सभा के अल्पकालीन अधिवेशन—स्विस व्यवस्थापिका के अधिवेशन बहुत छोटे, अधिक स अधिक एक महीने के होते हैं और अधिवेशन के बाद सदस्यगण अपने नियमित व्यवसाय म चले जाते हैं, क्योंकि स्विटजरलण्ड मे व्यावसायिक राजनीतिज्ञो के लिए कोई स्थान नहीं है। अत व्यवस्थापिका मे कठोर दलीय सगठन का विकास नही हो पाया है।

(५) सुसगठित और दृढ दलबन्दी का न होना—स्विटजरलण्ड में राजनीतिक दलों का वैसा सुदृढ सगठन नहीं है, जैसा कि भारत, ब्रिटेन या अमरीका आदि देशों मे है। न तो इन राजनीतिक दलो का कोई देशव्यापी सगठन है और न ही इनके पास बहुत अधिक धनराशियां हैं। स्विटजरलण्ड मे यह स्थिति अनेक कारणों से है।

(६) व्यावसायिक राजनीतिज्ञों का अभाव—भारत ब्रिटेन और अमरीका आदि देशों के राजनीतिक दलों मे काफी बड़ी सख्या मे ऐसे व्यक्ति होते हैं जिनके द्वारा धन प्राप्ति की इच्छा से राजनीति मे प्रवेश किया जाता है और राजनीति जिनका धन्धा (रोजगार) होता है। ये व्यक्ति राजनीति को दूषित करने का ही काय करते हैं और स्विट्जरलण्ड मे स्थिति यह है कि राजनीति के आधार पर आर्थिक या जीवन के अन्य लाभ प्राप्त नही किये जा सकते हैं और न ही कोई दल अपने अनुयायियों को विशेष लाभ पहुँचा सकता है।

(७) दलों का कण्टनों के आधार पर सगठन—स्विटजरलण्ड के लोग कण्टनों के राजनीतिक मामलों मे राष्ट्रीय मामलों की अपेक्षा अधिक रुचि लेते हैं और राजनीतिक दलों का सगठन कण्टनों के आधार पर ही हुआ है, राष्ट्रीय आधार पर नहीं। प्रो० कार्डिग ने लिखा है कि "सघीय सभा के चुनाव कण्टनो के आधार पर ही लड़े जाते हैं। न केवल एक कण्टन को चुनाव का प्रदेश समझा जाता है वरन् चुनाव मे उन्हीं उम्मीदवारों को चुना जाता है, जो कण्टनों की विधानसभा में योग्यता का परिचय देकर नाम पैदा कर चुके हों। रपाड के द्वारा भी इस विचार की पुष्टि की गयी है।[1]

राजनीतिक दलों की निबल स्थिति और उसके कारण

स्विटजरलैण्ड मे राजनीतिक दलों की स्थिति अन्य देशों की तुलना मे निश्चित रूप से बहुत निबल है। इस सम्बन्ध मे लार्ड ब्राइस ने ठीक ही लिखा है कि स्विटजरलैण्ड मे राजनीतिक दल ब्रिटेन फ्रांस या अन्य किसी प्रजातान्त्रिक देश की अपेक्षा बहुत कम महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं।'[2] अन्य किसी भी प्रजातान्त्रिक देश की तुलना मे स्विटजरलैण्ड के अन्तगत चुनावों या देश की राजनीति पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। ब्राइस ने स्विस राजनीति का व्यापक अध्ययन करते हुए दलों की निबल स्थिति के कुछ कारण भी गिनाये हैं। ब्राइस द्वारा किये गये अध्ययन और अन्य बातों के आधार पर राजनीतिक दलों की निबल स्थिति के निम्न कारण बतलाये जा सकते हैं

(१) जनता मे मौलिक मतभेदों का अभाव—आर्थिक और राजनीतिक विचारधारा के सम्बन्ध मे जनता मे जो मौलिक मतभेद होते हैं, वे ही सुदृढ दलीय

1 'Rappard William E *The Government of Switzerland*, p 105

2 In Switzerland political parties play a role far inferior to that of a party in France or England or any other democratic country'
—Bryce *Modern Democracies* Vol I, p 390

संगठन को जन्म देते हैं, किन्तु शासन की रूपरेखा के सम्बन्ध में स्विस जनता में कोई मतभेद नहीं है। सभी नागरिक गणतन्त्रात्मक संविधान, धर्मनिरपेक्षता, मिश्रित अर्थ-व्यवस्था और अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में स्विस तटस्थता को स्वीकार करते हैं। जनता में मत विभाजन का प्रश्न न होने के कारण सुदृढ़ दलबन्दी स्थापित नहीं हो सकी है।

(२) गम्भीर आर्थिक असमानता और वर्ग विद्वेष का अभाव—विश्व के जिन देशों में गम्भीर आर्थिक असमानता है वहाँ कम से कम दो ऐसे राजनीतिक दलों का उदय होता है जो एक दूसरे के नितान्त विरुद्ध होते हैं। इनमें से एक यथास्थिति बनाये रखने का समर्थक होता है और दूसरा इसमें व्यापक परिवर्तन के लिए प्रयत्नशील। लेकिन स्विट्जरलण्ड में आर्थिक असमानता गम्भीर रूप में विद्यमान नहीं है और सभी व्यक्ति अपनी आर्थिक स्थिति में लगभग सन्तुष्ट हैं। आर्थिक और सामाजिक वर्ग विभेद का अभाव होने के कारण सुदृढ़ दलबन्दी का आधार ही नहीं रहा है।

(३) धार्मिक वैमनस्य का अभाव—विश्व के अनेक देशों में धर्म विभेद ने धार्मिक वैमनस्य और धार्मिक वैमनस्य ने उग्र दलबन्दी को जन्म दिया है, लेकिन स्विटजरलण्ड में स्थिति ऐसी नहीं है। स्विटजरलण्ड में प्रोटेस्टण्ट और कैथोलिक आदि के रूप में धर्म विभेद तो है, लेकिन इन सभी के द्वारा एक दूसरे के प्रति धार्मिक सहिष्णुता के भाव को अपना लिया गया है। राज्य के स्तर पर धर्म-निरपेक्षता को अपनाकर धर्म विभेद की समस्या हल कर ली गयी है।

(४) संघीय परिषद की प्रकृति—राजनीतिक दलों की निर्बलता में स्विस संघीय परिषद का बहुत अधिक योग है। संघीय परिषद इस अर्थ में स्थायी कार्यपालिका है कि इसे पदच्युत नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त यह निर्दलीय भी है और इसका परिणाम यह हुआ कि स्विस व्यवस्थापिका में राजनीतिक दल उस प्रकार से सत्ता के लिए संघर्ष में संलग्न नहीं रहते जैसा ब्रिटेन, फ्रांस या अन्य संसदीय राज्यों में होता है। संघीय परिषद की निर्दलीय प्रकृति के कारण सबल दलीय संगठन और व्यवस्थापिका में कठोर दलीय अनुशासन की कोई आवश्यकता नहीं रहती। स्विटजरलण्ड में दलीय सचेतकों की भूमिका बहुत कम महत्वपूर्ण है और एक विशेष बात यह है कि संघीय सभा में सदस्यों के बैठने की व्यवस्था दलीय आधार के स्थान पर जिला आधार पर की गई है।

(५) संघीय सभा के अल्पकालीन अधिवेशन—स्विस व्यवस्थापिका के अधिवेशन बहुत छोटे, अधिक से अधिक एक महीने के होते हैं और अधिवेशन के बाद सदस्यगण अपने नियमित व्यवसाय में चले जाते हैं, क्योंकि स्विटजरलैण्ड में व्यावसायिक राजनीतिज्ञों के लिए कोई स्थान नहीं है। अतः व्यवस्थापिका में कठोर दलीय संगठन का विकास नहीं हो पाया है।

(६) राजनीति मे व्यक्तिगत प्रभाव का अभाव—स्विस राजनीति मे किन्ही भी व्यक्तियो को अधिक व्यक्तिगत प्रभाव प्राप्त नही है। अत कोई भी राजनीतिज्ञ इतने अनुयायी एकत्रित नही कर सकता है कि स्वय अपना दल सगठित कर उसका एकमात्र नियमन और निर्देशन कर सके और उसे अपनी आकाक्षाओं की पूर्ति हेतु प्रयुक्त कर सके।

(७) राजनीति के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण—स्विस नागरिक राजनीति के प्रति व्यावहारिक दृष्टिकोण रखते हैं और अपने आपको किन्ही सिद्धान्तो या दल से बाधकर रखने के बजाय स्वतन्त्र विवेक के आधार पर कार्य करते हैं। वे राजनीति को एक गम्भीर विषय मानते हैं और उग्र दलबन्दी को अच्छा नही समझते।

(८) राजनीतिक जीवन मे बहुत कम पारितोषिक—स्विस राजनीतिक जीवन मे पारितोषिक बहुत ही कम है। उच्च मे उच्च शासन पद प्राप्त कर लेने पर भी सफल राजनीतिज्ञ को कोई विशेष शक्तियाँ तथा सम्मान प्राप्त नही हो पाता। अत स्विटजरलैण्ड मे व्यावसायिक राजनीतिज्ञो का अभाव है जिनके कारण ही दलबन्दी विषम अथवा उग्र रूप धारण कर लेती है।

(९) लोकनिर्णय की व्यवस्था—स्विटजरलैण्ड मे लोकनिर्णय की व्यवस्था के कारण विधानमण्डल और कार्यकारिणी दोनो ही अपेक्षाकृत निर्बल हैं और इसी कारण इनमे उपस्थित दल भी निर्बल हैं।

(१०) राष्ट्र प्रेम की उग्र भावना—स्विस नागरिको मे राष्ट्र प्रेम की भावना इतनी अधिक उग्र है कि वे किन्ही भी विषयो पर दलीय हित की दृष्टि से नही वरन राष्ट्रीय हित की दृष्टि से ही विचार करते हैं। राष्ट्र प्रेम की इस भावना ने स्विस नागरिको मे एकता और सुदृढता उत्पन्न कर दलबन्दी पर भीषण प्रहार किया है।

इन सभी तथ्यो के परिणामस्वरूप स्विटजरलैण्ड मे दलबन्दी की भावना बहुत दुर्बल है और स्विस राजनीति अपेक्षाकृत शान्त, सुव्यवस्थित और सयत है।

प्रश्न

१ स्विस दल प्रणाली पर एक निबन्ध लिखिए। (कानपुर, १९७०)

२ स्विस जनतन्त्र मे राजनीतिक दलो का क्या स्थान है? ब्रिटन तथा अमरीका मे पायी जाने वाली स्थिति से यह किस प्रकार भिन्न है? (जोधपुर, १९६५)

३ स्विटजरलैण्ड मे राजनीतिक दलों का क्या ... है? उनका महत्त्व कम क्यो है? (विक्रम १९७०)

४ किन परिस्थितियो और कारणो के प्रभा... मे राजनीतिक दल इगलैण्ड और ... के दलो की ... स्थान रखते है? ... १९७१)

1

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि तथा स्टालिन संविधान की विशेषताएँ

(HISTORICAL BACKGROUND AND SALIENT FEATURES OF THE STALIN CONSTITUTION)

सोवियत समाजवादी गणराज्य संघ श्रमिकों और कृषकों का समाजवादी राज्य है।[1] —सोवियत संविधान का प्रथम अनुच्छेद

भौगोलिक परिचय

सोवियत संघ एशिया और यूरोप के उत्तरी भाग में स्थित है। इसकी सीमा रेखाएँ बाल्टिक महासागर से प्रशान्त महासागर तक तथा श्वेत सागर एवं उत्तरी ध्रुव महासागर से कैस्पियन सागर एवं काला सागर तक फैली हुई हैं। इसके उत्तर में उत्तरी ध्रुव महासागर, पश्चिम में पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया तथा रूमानिया, दक्षिण में चीन, मंगोलिया और अफगानिस्तान तथा पूर्व में प्रशान्त महासागर है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से सोवियत रूस विश्व का सबसे बड़ा राज्य है। इसका क्षेत्रफल ८७ ०७,८७० वर्गमील है। इस प्रकार यह विश्व के ⅙ भाग पर फैला हुआ है और तुलनात्मक दृष्टि से संयुक्त राज्य अमरीका का ढाई गुना व ब्रिटेन के क्षेत्रफल के १०० गुने से भी अधिक है। सोवियत रूस की वर्तमान जनसंख्या २३ करोड़ है और इस दृष्टि से विश्व में सोवियत रूस का स्थान चीन और भारत के बाद तीसरा है। शक्ति और अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में प्रभाव की दृष्टि से सोवियत रूस विश्व के दो सर्वाधिक प्रमुख राज्यों (संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियत रूस) में से एक है।

क्षेत्रफल की दृष्टि से इतना बड़ा राज्य होने के कारण सोवियत रूस में प्रत्येक प्रकार की जलवायु और प्रत्येक प्रकार का प्रदेश है। एक ओर रूस के अनेक प्रदेश सदा बर्फ से ढके रहते हैं, दूसरी ओर ऐसे प्रदेश भी हैं, जो मरुभूमि होने के कारण अत्यधिक गरम हैं।

[1] The Union of Soviet Socialist Republics is a Socialist State of workers and peasants —*Article I of the Soviet Constitution*

इतने विशाल क्षेत्रफल और जनसंख्या वाला यह राज्य स्वाभाविक रूप से विविधताओं से परिपूर्ण है। इसमें लगभग १०० राष्ट्रीयताएं निवास करती हैं जिनमे सर्वाधिक प्रमुख रूसी राष्ट्रीयता है, जिसकी संख्या ५० प्रतिशत से अधिक है। इस साम्यवादी राज्य में चार धर्मों की प्रधानता है—ईसाई, इस्लाम, बौद्ध और यहूदी। यहाँ पर १४७ भाषाएँ बोली जाती हैं। संस्कृति, आचार विचार और रहन-सहन की विविधताएँ यहाँ भारत से भी अधिक रोचक रूप में देखी जा सकती हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

सोवियत रूस इस दृष्टि से एक नवीन राज्य कहा जा सकता है कि इसके इतिहास का प्रारम्भ नवीं सदी से ही होता है। इससे पूर्व वर्तमान रूस की भूमि पर खानाबदोश स्लाव लोग रहते थे। नवीं शताब्दी में यहाँ धीरे धीरे स्कैण्डिनेवियन बसने लगे। ८६२ में इन्हीं में से तीन राजकुमारों ने तीन पृथक पृथक राज्यों की स्थापना की। बाद में इन्हीं में से एक राजकुमार रूरिक (Rurik) ने इन तीन राज्यों को एक में संगठित कर स्लाव राज्य की स्थापना की। इस क्षेत्र पर १२४० तक इस राजकुमार के वंशजों का शासन रहा। तत्पश्चात् इस देश पर तातारों ने आक्रमण किया और १३वीं सदी में यह देश तातार शासकों के अधीन हो गया। लगभग १५वीं सदी तक उनका शासन चलता रहा। लेकिन ये तातार शासक मूलतः लुटेरे थे और उनकी रुचि प्रशासनिक विषयों के बजाय कर वसूल करने में थी। उनके लिए कर एकत्रित करने का कार्य मास्को का ड्यूक करता था। अपनी स्थिति से लाभ उठाकर ड्यूक ने अन्य निकटवर्ती राज्यों की सहायता से १३८० में तातारों को पराजित किया और रूस पर शासन करने लगा। इस वंश के ईवान चतुर्थ ने जार की उपाधि धारण की और १५वीं सदी से सोवियत रूस में जारशाही का प्रारम्भ हुआ। ईवान चतुर्थ तथा उसके उत्तराधिकारी निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी शासक थे। फाइनर के कथनानुसार, जार की पदवी थी "परमेश्वर का प्रतिनिधि एकछत्र सम्राट।"[1]

१६१३ में माइकल रोमनाव रूस के सिंहासन पर बैठा। यहीं से रोमनोव वंश की नींव पड़ी जिसने लगभग ३०० वर्ष तक शासन किया। इस वंश में सर्वाधिक प्रसिद्ध शासक हुए पीटर महान् (Peter the Great, 1698 1725) और कथरीन महान् (Catherine the Great, 1762 1796)। इन्होंने सोवियत रूस के क्षेत्र को विस्तृत कर उसे विकास के मार्ग पर आगे बढ़ाया। इन्हें वर्तमान रूस का निर्माता कहा जा सकता है। इस वंश में अन्य जो शासक हुए, उनमें एलेक्जेण्डर प्रथम, निकोलस प्रथम एलेक्जेण्डर द्वितीय तथा तृतीय और निकोलस द्वितीय प्रमुख हैं। इनमें **एलेक्जेण्डर द्वितीय** का शासन काल (१८५५ १८८१) सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है।

1 The Tsar's style was Tsar autocrat, chosen by God —*Finer*

इस काल मे साम्राज्य विस्तार के अतिरिक्त कुछ उल्लेखनीय सामाजिक तथा प्रशासनिक सुधार भी किये गये जसे दीवानी और फौजदारी न्यायालयो की स्थापना, स्थानीय स्वशासन सस्थाओ की स्थापना और अर्द्ध दासो को मुक्ति प्रदान करना। इन कतिपय सुधारो के बावजूद सभी जार शासको का शासन निरकुश और प्रतिक्रियावादी था।

१६वी सदी के अन्त म सोवियत रूस मे चेतना प्रवाहित हुई। इस समय औद्योगिक क्रान्ति के परिणामस्वरूप यूरोप के अन्य राज्यो क समान ही सोवियत रूस मे भी मध्यम वग का उदय हुआ, जिसन निरकुशता का विरोध करते हुए स्वत त्रता तथा सवैधानिक सरकार के आन्दोलन का नेतत्व किया। इसी चेतना के परिणामस्वरूप १८६५ म 'रूसी सामाजिक प्रजातन्त्रवादी दल (Russian Social Democratic Party) का उदय हुआ। शीघ्र ही यह दल दो भागो म बँट गया—बोल्शेविक तथा मेशेविक। १९०४-१९०५ में एक एसी घटना हुई जिसने इस आन्दोलन का तीव्रता प्रदान की। यह घटना थी सोवियत रूस और जापान के युद्ध म सोवियत रूस की अप्रत्याशित पराजय। इस घटना न अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र म सोवियत रूस के सम्मान को और आन्तरिक क्षेत्र मे जार के शासन के सम्मान को तीव्र आघात पहुचाया। इसस देश म विद्रोह की एक लहर दौड गयी और क्रान्तिकारियो को एक अवसर मिला। सवधानिक शासन की माग बहुत प्रबल हो जाने क कारण तत्कालीन शासक निकोलस द्वितीय को बाध्य होकर व्यवस्थापिका (ड्यूमा) की स्थापना करनी पडी और साथ ही यह घोषणा भी करनी पडी कि जनता को भाषण धम तथा अन्य प्रकार की स्वतन्त्रताएँ प्रदान की जायेंगी। लेकिन जिस ड्यूमा की स्थापना जार की शक्तियो को कम करने क लिए की गयी थी, व्यवहार म वह जार की कठपुतली बन गयी। मर्ले फेनसोड का विचार है ड्यूमाओ का इतिहास अधिकतर ससदीय आशाओ की असफलताओ का विवरण है।"[1]

प्रथम विश्वयुद्ध और मार्च १९१७ की उदार क्रान्ति

१९१४ के लगभग सोवियत रूस म वसी ही सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ हो गई थी, जसी फ्रास की १७८९ म क्रान्ति क समय थी। लोगो की सामाजिक और आर्थिक दशा बहुत खराब थी और जीवनस्तर बहुत निम्न था। शिक्षा और स्वास्थ्य का कोई प्रबन्ध नही था और महामारी तथा भुखमरी का भीषण प्रकोप था। राजनीतिक दृष्टि स सोवियत रूस यूरोप के अन्य राज्यो स सदियो पीछे था। जबकि यूरोप के अन्य देशो ने प्रजातन्त्र को अपना लिया था या वे इस ओर बढ रहे थे, सोवियत रूस निरकुशतावाद की दिशा म गतिमान था। एसी स्थिति मे जार शासको के लिए विवेकपूर्ण माग यह था कि व युद्ध म प्रवेश करने

[1] 'The history of the Dumas is largely a record of the frustration of parliamentary hopes —Merle Fainsod

की बात छोडकर देश की आन्तरिक स्थिति सुधारने की चेष्टा करते। लेकिन सोवियत रूस ने ब्रिटेन और फ्रास की ओर से युद्ध मे प्रवेश किया। युद्धकाल मे देश की आर्थिक और राजनीतिक स्थिति और तेजी से बिगडी और सरकार इस स्थिति को सँभाल न सकी। जार के युद्ध क्षेत्र मे चले जाने के कारण इस समय सोवियत रूस का शासन रानी जारीना द्वारा किया जा रहा था और जारीना ने एक पाखण्डी सलाहकार रासपुतिन के प्रभाव मे आकर विश्वासपात्र मन्त्रियो को पदच्युत कर दिया। इससे जारशाही के परम्परागत समर्थक भी उसके विरोधी हो गये। युद्ध क्षेत्र मे रूसी सेनाओ की जर्मन सेनाओ के हाथो पराजय और दुर्गति हुई।

इस समस्त घटनाचक्र ने जारशाही को बहुत अधिक निर्बल कर क्रान्तिकारियों को बहुत शक्ति प्रदान कर दी। हडतालें, लूटमार और हत्याएँ आय दिन की घटनाएँ हो गयी और पुलिस की दमन नीति इन्हे रोकने मे नितान्त असफल रही। मार्च १९१७ मे डयूमा की माग पर जार को सिंहासन छोडना पडा। वह आत्मरक्षा के लिए सपरिवार राजधानी छोड कर भागा, किन्तु क्रान्तिकारियों ने समस्त परिवार का वध कर दिया। डयूमा के उदार व मेन्शेविक सदस्यो ने मिलकर एलेक्जेण्डर केरेन्सकी के प्रधान मन्त्रित्व मे अस्थायी सरकार (Provisional Govt) का गठन किया।

अक्टूबर क्रान्ति (१९१७)—मार्च १९१७ की घटनाए क्रान्ति का प्रथम चरण मात्र थी। केरेन्सकी के नेतृत्व मे गठित अस्थायी सरकार का लक्ष्य था एक उदारवादी प्रजातन्त्र की स्थापना। लेकिन यह एक निर्बल सरकार थी तथा यह व्यक्तिगत सम्पत्ति को बनाये रखने और युद्ध जारी रखने के पक्ष मे थी। अत जनता इससे असन्तुष्ट रही। अप्रैल मे लेनिन स्विट्जरलैण्ड से सोवियत रूस आ गया और उसने तुरन्त ही समाजवादी क्रान्ति का नारा दिया। लेनिन को शीघ्र ही सभी पक्षो की सहानुभूति और सहयोग प्राप्त हो गया। अक्टूबर १९१७ मे लेनिन के नेतृत्व मे बोल्शेविको ने केरेन्सकी सरकार को पदच्युत कर शासन सत्ता अपने हाथ मे ले ली। इस प्रकार जारशाही का स्थान लेनिन के नेतृत्व मे स्थापित समाजवाद ने ले लिया। यह एक ऐसी घटना थी, जिसने समस्त ऐतिहासिक कालचक्र को प्रभावित किया। इस सरकार ने तुरन्त ही युद्ध रोकने, शान्ति के लिए सन्धि प्रस्ताव पारित करने और भूमि पर वैयक्तिक स्वामित्व की समाप्ति आदि लोकप्रिय कार्य किये।

१९१८ का संविधान

१९१८ का संविधान समाजवादी रूस का प्रथम संविधान है। इसके प्रारूप का निर्माण एक आयोग ने किया जिसके अध्यक्ष थे सेवेर्लाव और स्टलिन तथा बुखारिन आदि इसके सदस्य थे। पाँचवी अखिल रूसी सोवियत काग्रेस के अनुमोदन के पश्चात् जुलाई १९१८ मे इसे लागू किया गया। वास्तव मे यह केवल 'सोवियत समाजवादी संघीय रूसी गणराज्य' का संविधान था।

इस संविधान की प्रमुख बातें अग्र प्रकार थी

(१) संविधान में यह स्वीकार किया गया कि राज्य की सम्प्रभुता सोवियतों में निहित होगी, जिनकी स्थापना स्थानीय एवं केन्द्रीय सभी स्तरों पर शासन संचालन के लिए की जायगी।

(२) संविधान का उद्देश्य सोवियत रूस में एक समाजवादी राज्य की स्थापना करना और विश्व के अन्य राज्यों में समाजवाद को विजयी बनाना है।

(३) पूंजीपतियों, पादरियों कुलकों (जमींदारों और बड़े किसानों) तथा जारशाही से सम्बन्धित अन्य व्यक्तियों को राजनीतिक अधिकार से वंचित कर दिया गया।

(४) संविधान में व्यक्तियों के कुछ मौलिक अधिकारों की घोषणा की गई। इस उद्देश्य से संविधान में एक प्रस्तावना भी जोड़ी गई जिसका नाम 'श्रमिक और शोषित जनता के अधिकारों की घोषणा' रखा गया।

(५) इस संविधान की एक प्रमुख बात उसकी संघात्मक पद्धति थी। विभिन्न जातियों को स्वायत्त प्रशासकीय इकाइयों के रूप में संगठित किया गया। इकाइयों का यह संगठन ऐच्छिक था और उन्हें संघ से पृथक होने का अधिकार था। विभिन्न अवयवी इकाइयों को सोवियत कांग्रेस या केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति में कोई प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं किया गया। इस संघ राज्य का नाम 'रूसी समाजवादी संघीय सोवियत गणराज्य' (R S F S R) रखा गया।

(६) संविधान में एक अखिल रूसी सोवियत कांग्रेस की व्यवस्था की गई। यह राज्य की केन्द्रीय विधानसभा थी और इसकी सदस्य संख्या १,२०० थी। सदस्यों का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रूप में आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा होता था। केन्द्रीय सोवियत का निर्वाचन प्रान्तीय सोवियतों द्वारा, प्रान्तीय सोवियतों का जिला सोवियतों द्वारा, जिला सोवियतों का ग्राम या नगर सोवियतों द्वारा और ग्राम या नगर सोवियत का जनता द्वारा निर्वाचन किया जाता था। अखिल रूसी सोवियत कांग्रेस का मुख्य कार्य प्रतिवेदनों को सुनना और उनके सम्बन्ध में अपनी स्वीकृति प्रदान करना था।

(७) एक केन्द्रीय कार्यकारिणी (All Russian Central Executive Committee) की भी व्यवस्था की गई जिसका चुनाव अखिल रूसी सोवियत कांग्रेस करती थी। इसमें २०० सदस्य होते थे। इसकी एक आन्तरिक समिति होती थी, जिसमें ३० सदस्य थे। इस आन्तरिक समिति को प्रेजीडियम का नाम दिया गया। केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति के आदेशानुसार शासन संचालन करने के लिए एक 'जन प्रबन्धक परिषद' (Council of People's Commission) थी, जिसके सदस्य विभिन्न शासन विभागों के अध्यक्ष होते थे।

१९२४ का संविधान

रूस की बदलती हुई परिस्थितियों के अनुसार १९१८ के संविधान में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करना आवश्यक हो गया। १९२२ में तीन अन्य गणराज्य बाइलो

की बात छोड़कर देश की आन्तरिक स्थिति सुधारने की चेष्टा करते। लेकिन सोवियत रूस ने ब्रिटेन और फ्रांस की ओर से युद्ध में प्रवेश किया। युद्धकाल में देश की आर्थिक और राजनीतिक स्थिति और तेजी से बिगड़ी और सरकार इस स्थिति को सँभाल न सकी। जार के युद्ध क्षेत्र में चले जाने के कारण इस समय सोवियत रूस का शासन रानी जारीना द्वारा किया जा रहा था और जारीना ने एक पाखण्डी सलाहकार रासपुतिन के प्रभाव में आकर विश्वासपात्र मन्त्रियों को पदच्युत कर दिया। इससे जारशाही के परम्परागत समर्थक भी उसके विरोधी हो गये। युद्ध क्षेत्र में रूसी सेनाओं की जर्मन सेनाओं के हाथों पराजय और दुर्गति हुई।

इस समस्त घटनाचक्र ने जारशाही को बहुत अधिक निर्बल कर क्रान्तिकारियों को बहुत शक्ति प्रदान कर दी। हड़तालें, लूटमार और हत्याएँ आय दिन की घटनाएँ हो गयीं और पुलिस की दमन नीति इन्हें रोकने में नितान्त असफल रही। मार्च १९१७ में ड्यूमा की माँग पर जार को सिंहासन छोड़ना पड़ा। वह आत्मरक्षा के लिए सपरिवार राजधानी छोड़ कर भागा, किन्तु क्रान्तिकारियों ने समस्त परिवार का वध कर दिया। ड्यूमा के उदार दल में शक्ति सदस्यों ने मिलकर एलेक्जेण्डर केरेन्सकी के प्रधान मन्त्रित्व में अस्थायी सरकार (Provisional Govt) का गठन किया।

अक्टूबर क्रान्ति (१९१७)—मार्च १९१७ की घटनाएँ क्रान्ति का प्रथम चरण मात्र थी। केरेन्सकी के नेतृत्व में गठित अस्थायी सरकार का लक्ष्य था एक उदारवादी प्रजातन्त्र की स्थापना। लेकिन यह एक निर्बल सरकार थी तथा यह व्यक्तिगत सम्पत्ति को बनाये रखने और युद्ध जारी रखने के पक्ष में थी। अतः जनता इससे असन्तुष्ट रही। अप्रैल में लेनिन स्विटजरलैण्ड से सोवियत रूस आ गया और उसने तुरन्त ही समाजवादी क्रान्ति का नारा दिया। लेनिन को शीघ्र ही सभी पक्षों की सहानुभूति और सहयोग प्राप्त हो गया। अक्टूबर १९१७ में लेनिन के नेतृत्व में बोल्शेविकों ने केरेन्सकी सरकार को पदच्युत कर शासन सत्ता अपने हाथ में ले ली। इस प्रकार जारशाही का स्थान लेनिन के नेतृत्व में स्थापित समाजवाद ने ले लिया। यह एक ऐसी घटना थी, जिसने समस्त ऐतिहासिक कालचक्र को प्रभावित किया। इस सरकार ने तुरन्त ही युद्ध रोकने, शान्ति के लिए सन्धि प्रस्ताव पारित करने और भूमि पर वैयक्तिक स्वामित्व की समाप्ति आदि लोकप्रिय कार्य किये।

१९१८ का संविधान

१९१८ का संविधान समाजवादी रूस का प्रथम संविधान है। इसके प्रारूप का निर्माण एक आयोग ने किया जिसके अध्यक्ष ये सेवर्डलोव और स्टालिन तथा बुखारिन आदि इसके सदस्य थे। पाँचवीं अखिल रूसी सोवियत कांग्रेस के अनुमोदन के पश्चात् जुलाई १९१८ में इसे लागू किया गया। वास्तव में यह केवल 'सोवियत समाजवादी संघीय रूसी गणराज्य' का संविधान था।

इस संविधान की प्रमुख बातें अग्र प्रकार थीं

(१) संविधान म यह स्वीकार किया गया कि राज्य की सम्प्रभुता सावियतो मे निहित होगी, जिनकी स्थापना स्थानीय एव केन्द्रीय सभी स्तरा पर शासन सचालन के लिए की जायगी।

(२) संविधान का उद्देश्य सावियत रूस म एक समाजवादी राज्य की स्थापना करना और विश्व के अ य राज्या म समाजवाद का विजयी बनाना है।

(३) पूजीपतिया, पादरिया, कुलको (जमीदारा और बड किसानो) तथा जारशाही से सम्बधित अ य व्यक्तिया का राजनीतिक अधिकार स वचित कर दिया गया।

(४) संविधान म व्यक्तिया के कुछ मौलिक अधिकारा की घापणा की गई। इस उद्दय स संविधान म एक प्रस्तावना भी जोडी गई जिसका नाम 'श्रमिक और शोषित जनता के अधिकारा की घापणा रखा गया।

(५) इस संविधान की एक प्रमुख बात उसकी सघात्मक पद्धति थी। विभिन्न जातिया का स्वायत्त प्रशासकीय इकाइया के रूप म सगठित किया गया। इकाइया का यह सगठन एच्छिक था और उन्ह सघ स पृथक होन का अधिकार था। लेकिन अवयवी इकाइया को सोवियत काग्रेस या के द्रीय कायकारिणी समिति म कोइ प्रतिनिधित्व प्रदान नही किया गया। इस सघ राज्य का नाम रूसी समाजवादी सघीय सोवियत गणराज्य' (R S F S R) रखा गया।

(६) संविधान मे एक अखिल रूसी सोवियत काग्रेस की व्यवस्था की गई। यह राज्य की केन्द्रीय विधानसभा थी और इसकी सदस्य सख्या १ २०० थी। सदस्या का निर्वाचन अप्रत्यक्ष रूप मे आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली द्वारा होता था। केन्द्रीय सोवियत का निर्वाचन प्रा तीय सावियतो द्वारा प्रा तीय सोवियता का जिला सोवियता द्वारा जिला सोवियता का ग्राम या नगर सोवियता द्वारा और ग्राम या नगर सोवियत का जनता द्वारा निर्वाचन किया जाता था। अखिल रूसी सोवियत काग्रेस का मुख्य काय प्रतिवदना का सुनना और उनके सम्ब ध म अपनी स्वीकृति प्रदान करना था।

(७) एक के द्रीय कायकारिणी (All Russian Central Executive Committee) का भी व्यवस्था की गइ, जिसका चुनाव अखिल रूसी सोवियत काग्रेस करती थी। इसम २०० सदस्य होते थे। इसकी एक आ तरिक समिति होती थी, जिसमे ३० सदस्य थे। इस आ तरिक समिति को प्रेसीडियम का नाम दिया गया। केन्द्रीय कायकारिणी समिति के आदेशानुसार शासन सचालन करने के लिए एक जन प्रबधिका परिषद' (Council of People s Commission) थी जिसके सदस्य विभिन्न शासन विभागा के अध्यक्ष होते थे।

१९२४ का संविधान

रूस की बदलती हुइ परिस्थितियो के अनुसार १९१८ के संविधान मे महत्त्वपूर्ण परिवतन करना आवश्यक हो गया। १९२२ म तीन अ य गणराज्य बाइलो

रूस, यूक्रेन तथा ट्रासकाकेशिया रूसी गणराज्य के साथ मिल गये और इन्होंने सोवियत सघ की नीव डाली। अखिल रूसी काग्रेस और केद्रीय कायकारिणी मे इन्हे प्रतिनिधित्व प्रदान करना आवश्यक था। इसके अतिरिक्त देश म आतरिक शाति स्थापित हो चुकी थी और बाहरी आक्रमण का कोई भय नही रहा था। कई देशो ने सोवियत रूस को वैधानिक मान्यता भी दे दी थी। अत इन परिवतनो को दृष्टि मे रखते हुए १९२३ म सोवियत सघ की केद्रीय कायकारिणी समिति ने सविधान का प्रारूप तैयार करने हेतु एक सवधानिक आयोग की नियुक्ति की। आयोग द्वारा निर्मित प्रारूप ३१ जनवरी, १९२४ को सोवियत सघ की द्वितीय सोवियत काग्रेस ने स्वीकार कर लिया। १९२४ म ही ऊजवेक और तुकमान व १९२९ मे ताजिक भी इस सघ में सम्मिलित हो गये। इस प्रकार सोवियत सघ ७ इकाइयो का एक सघ बन गया।

१९२४ का सविधान १९१८ के सविधान का विस्तृत तथा परिवर्द्धित रूप था। इस सविधान म निम्न मुख्य बातें थी

(१) सघ तथा राज्यो (७ इकाइयो) मे शक्तियो का विभाजन कर दिया गया। अवशिष्ट शक्तिया राज्यो को दी गयी।

(२) इस सविधान द्वारा श्रमिको का शासन स्थापित किया गया तथा पूजीपति, व्यक्तिगत व्यापारी पादरी आदि का मताधिकार स वचित कर दिया गया।

(३) सघीय सरकार के ५ मुख्य प्रशासकीय अग थे

(i) **केद्रीय सोवियत काग्रेस**—सघ मे सम्मिलित समस्त गणराज्यो के प्रतिनिधि इसके सदस्य थे। इसम सघ की समस्त विधायी शक्तिया निहित थी। इसका अधिवेशन बहुत ही थोडे समय के लिए तथा लम्बे अवकाश के पश्चात् होता था।

(ii) *केद्रीय कायकारिणी समिति*—केद्रीय कायकारिणी समिति को केद्रीय सोवियत काग्रेस ने अपने समस्त अधिकार प्रदान कर दिये थे। इस समिति क दो सदन होते थ—सघीय सोवियत (Soviet of the Union) और राष्ट्रीयताओ की सोवियत (Soviet of the Nationalities)। प्रथम सदन के सदस्यो का निर्वाचन रूस की जनता करती थी। राष्ट्रीयताओ की सोवियत म सघ मे सम्मिलित गणराज्यो का प्रतिनिधित्व था।

(iii) प्रेजीडियम—केद्रीय कायकारिणी समिति का अधिवेशन भी अल्पकाल के लिए ही होता था। अत अतरिम काल मे इसकी शक्तियो का प्रयोग एक अय समिति करती थी, जिसे प्रेजीडियम कहा जाता था। अतरिम काल मे कायकारिणी समिति के समस्त अधिकार इसे मिल जाते थे। इसकी सदस्य सख्या २७ थी और इसका निर्वाचन समिति ही करती थी।

(iv) *केद्रीय जन प्रबधक परिषद*—एक केद्रीय जन प्रबधक परिषद की भी व्यवस्था की गयी थी जो पाश्चात्य सविधानो के दृष्टिकोण से एक मन्त्रिपरिषद के समान थी। इसे सभी प्रशासकीय अधिकार दिये गये थे। यह अपने कार्यो के

लिए केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति तथा प्रेजिडियम के प्रति उत्तरदायी थी। इसके १५ सदस्य थे, जो कार्यकारिणी समिति द्वारा नियुक्त होते थे।

(v) **सर्वोच्च न्यायालय**—सोवियत संघ के एक सर्वोच्च न्यायालय की भी स्थापना की गयी। यह एक स्वतन्त्र संस्था न होकर सोवियत कांग्रेस का ही एक अंग था। इसे न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं थी।

(४) इकाइयों के अन्तर्गत भी केन्द्रीय शासन के समान ही शासन पद्धति को अपनाया गया। यहां भी सोवियत कांग्रेस, कार्यकारिणी समिति, प्रेजीडियम, मन्त्रि-परिषद की व्यवस्था थी। गणराज्यों को सिर्फ स्थानीय और सांस्कृतिक स्वायत्तता प्राप्त थी और उनके अधिकार महत्त्वपूर्ण नहीं थे।

१९३६ का संविधान या स्टालिन संविधान

१९३५ तक सोवियत रूस में साम्यवाद भली प्रकार स्थापित हो गया था और इस समय तक सोवियत रूस ने आर्थिक क्षेत्र में असाधारण प्रगति कर ली थी। सोवियत संघ में इस समय तक ११ गणराज्य सम्मिलित हो गये थे। इन परिवर्तित परिस्थितियों में यह आवश्यक समझा गया कि १९२४ के संविधान में इस प्रकार का परिवर्तन किया जाय, जो कि नवीन परिस्थितियों के अनुरूप हो।

अतः १९३५ में सोवियत कांग्रेस के आदेशानुसार स्टालिन की अध्यक्षता में एक संवैधानिक आयोग की स्थापना की गयी, जिसमें ३१ सदस्य थे। कांग्रेस ने अपने प्रस्ताव में कहा कि आयोग एक ऐसे संविधान की रचना करे, जो अधिक प्रजातान्त्रिक तथा समाजवादी सामाजिक सिद्धान्तों पर आधारित हो। निम्नलिखित सिद्धान्तों को भावी संविधान का आधार बनाया गया

(१) सीमित मताधिकार के स्थान पर वयस्क मताधिकार की व्यवस्था।

(२) अप्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली के स्थान पर प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली की व्यवस्था।

(३) खुले मतदान के स्थान पर गुप्त मतदान की व्यवस्था।

(४) नवीन सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के अनुकूल राजनीतिक संस्थाओं की व्यवस्था।

इस समिति ने जो संविधान तैयार किया उसकी ६ करोड़ प्रतियाँ छपाकर जनता में वितरित की गयीं, जिससे वे उस पर विचार विमर्श कर सकें। प्रस्तावित संविधान पर विचार करने के लिए लाखों सभाओं का आयोजन किया गया और लोगों को अवसर दिया गया कि वे उसमें संशोधन प्रस्तावित कर सकें। परिणाम-स्वरूप जनता द्वारा कुल लगभग १ लाख ५० हजार संशोधन प्रस्तावित किये गये। इन सभी संशोधनों पर सोवियत रूस की संघीय कांग्रेस द्वारा अपने एक आवश्यक अधिवेशन में विचार किया गया। इस कांग्रेस ने ५ दिसम्बर १९३६ के दिन ४३ संशोधनों के साथ इस संविधान को स्वीकार किया और जनवरी १९३७ से यह संवि-धान लागू किया गया। यह संविधान स्टालिन संविधान के नाम से प्रसिद्ध है, क्योंकि

स्टालिन इस सवैधानिक आयोग के अध्यक्ष थे और इस सविधान के निर्माण मे उनका सबसे मुख्य हाथ था।

सविधान की विशेषताएँ

१९३६ का स्टालिन सविधान ही सोवियत रूस का वर्तमान सविधान है। यद्यपि परिवर्तित परिस्थितियो के अनुसार इस सविधान म कुछ परिवर्तन हुए है, किन्तु सविधान का मूल स्वरूप अब भी वही है।

इस सविधान की प्रमुख विशेषताओ का अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) सविधान का नया अर्थ—सोवियत सघ की प्रथम विशेषता सविधान शब्द के सम्बन्ध म ही है। सविधान का सामान्य आशय कानूनो और परम्पराओ के रूप म एक ऐसी व्यवस्था से होता है, जो यह बतलाती है कि राज्य किस पथ पर चलेगा। सविधान का महत्व ही इस बात मे है कि शासन से सम्बन्धित सभी पदाधिकारी उसका पालन करने के लिए बाध्य होते है लेकिन सोवियत रूस म सविधान को एक नवीन और अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूर्ण धारणा के रूप म अपनाया गया है। वहा क्रान्ति और शान्ति का निर्देशन करने वाली शक्ति साम्यवादी दल ही सब कुछ है और सविधान उनके हाथ म एक साधन मात्र है। सविधान की यह गौण स्थिति स्टालिन के इन शब्दो से स्पष्ट हो जाती है 'व्यवहार मे जो कार्य कर लिये जाते हैं और जिनमे सफलता मिल जाती है सविधान उन्हीं का पजीबद्ध करने या वैधिक रूप देने का काम करता है।" व्यवहार म स्थिति यही है और इस सम्बन्ध मे एक उदाहरण के आधार पर अन्य देशो के सविधानो से सोवियत सविधान का अन्तर स्पष्ट किया जा सकता है। १९४६ के चुनाव के पूर्व ही रूसी सरकार ने सर्वोच्च सोवियत के लिए निर्वाचित होने वाले उम्मीदवारो की आयु १८ वर्ष से २३ वर्ष निर्धारित कर ली और इसी डिग्री के अनुसार वहा निर्वाचन भी हो गय। बाद मे नई सर्वोच्च सोवियत ने इसे यथाविधि पारित करके सविधान मे सशोधन कर दिया। ऐसा कार्य अन्य देशो म असवैधानिक समझा जायगा, परन्तु रूस मे नही।

सविधान के सम्बन्ध मे सोवियत रूस द्वारा अपनाये गये इस दृष्टिकोण के कारण जेकब और जिंक तो यहा तक लिखते है कि— रूस का सविधान सोवियत सरकारी व्यवस्था को समझने मे शायद ही कोई सहायता देता है आज का सोवियत सविधान स्टालिन द्वारा १९३६ मे लिखा गया था। उस समय भी वह रूस मे पायी जाने वाली राजनीतिक और सत्ता सम्बन्धी वास्तविकता को चित्रित नहीं करता था आज तो वह उसका और भी कम चित्रण करता है।'[1]

[1] The constitution of the Soviet Union provides little if any help to the understanding of the Soviet system The present constitution was written in 1936 by Stalin Even at that time it provided no picture of political and powers reality in the Soviet Union and it provides even less today

—Jacob and Zink *Modern Governments* p 515

'सोवियत रूस के संविधान का प्रमुख आधार समाजवाद के सिद्धांत हैं।' संविधान के प्रथम अनुच्छेद में ही स्पष्टतया घोषित किया गया है कि 'सोवियत संघ श्रमिकों और कृषकों का एक समाजवादी राज्य है। संविधान के अनुच्छेद ३ और ४ में भी इसी विचार को विस्तृत अभिव्यक्ति प्रदान की गई है।

१८१८ और १९२४ के संविधानों में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना के बारे में लगभग मौन रखा गया था। वस्तुतः उस समय समाजवाद का आधार तैयार हो रहा था लेकिन १९३६ तक समाजवाद की पूर्णरूपेण स्थापना और व्यवस्था हो चुकी थी। अतः इस संविधान द्वारा सोवियत रूस को एक समाजवादी राज्य घोषित किया जा सका। स्टालिन ने अपनी इस समाजवादी व्यवस्था को स्पष्ट करते हुए कहा था कि "हमारे कारखाने और मिलें बिना पूंजीपतियों के ही चल रहे हैं। सर्वसाधारण ही सारे औद्योगिक कार्यों का संचालन कर रहे हैं। इसी को हम व्यावहारिक समाजवाद कहते हैं। हमारे खेत में कृषक बिना जमींदारी के कार्य करते हैं। कृषि कार्य का संचालन भी सामान्य लोग ही करते हैं। इसी को हम व्यावहारिक समाजवाद और स्वतन्त्र सामाजिक जीवन कहते हैं।' समस्त भूमि पर, समस्त खनिज पदार्थों और उत्पादन के सभी साधनों पर राज्य का पूर्ण अधिकार है और राज्य की ओर से सर्वसाधारण इन साधनों से लाभ उठाते हैं। कोई व्यक्ति न किसी का शोषण कर सकता है और न किसी को सता सकता है। इस प्रकार सोवियत रूस में उत्पादन के साधनों पर व्यक्तिगत स्वामित्व समाप्त कर दिया गया है और इस दृष्टि से सोवियत रूस निश्चित रूप से एक समाजवादी राज्य है।[1] सोवियत रूस में उत्पादन के साधनों पर या तो राज्य का स्वामित्व है अथवा उन्हें सहकारी या सामूहिक स्वामित्व के अन्तर्गत रखा गया है।

सोवियत रूस के इस समाजवादी राज्य में स्वाभाविक रूप से अकर्मण्य व्यक्तियों के लिए कोई स्थान नहीं है। संविधान के अनुच्छेद १२ में काम को एक पवित्र कर्तव्य और प्रत्येक स्वस्थ व्यक्ति के लिए सम्मान की बात कहा गया है और इस धारणा को अपनाया गया है कि जो काम नहीं करेगा, वह खायेगा भी नहीं। सोवियत राज्य द्वारा अपने नागरिकों को ऐसे व्यापक आर्थिक अधिकार प्रदान किये गये हैं, जो पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देशों के नागरिकों को प्राप्त नहीं हैं। उदाहरण के लिए सभी नागरिकों को काम का अधिकार, व्यापकतम स्तर में—सामाजिक सुरक्षा का अधिकार और विश्राम का अधिकार प्रदान किया गया है। आर्थिक, राजनीतिक सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन के सभी क्षेत्रों में स्त्रियों को पुरुषों से पूर्ण समानता प्रदान की गई है और 'समान कार्य के लिए समान वेतन' के विचार को व्यवहार में

1 *Under Stalin's leadership private ownership of the means of production in Russia has disappeared and that from this point of view the Soviet Union is definitely a Socialist state*
—Florinsky Michael T *Government of Continental Europe* p 925 26

अपना लिया गया है। सोवियत रूस में उत्पादित वस्तुओं के बँटवारे का आधार यह सिद्धान्त है 'प्रत्येक अपनी योग्यता के अनुसार काय करे और काय के अनुसार प्राप्त करे।'[1]

सोवियत रूस की इस समाजवादी व्यवस्था के सम्बन्ध मे कुछ प्रश्न उपस्थित होते हैं। प्रथम, क्या सोवियत रूस म व्यक्तिगत सम्पत्ति का अस्तित्व है? और द्वितीय, क्या सोवियत रूस मे आय सम्बन्धी असमानताएँ है? इन दोनो ही प्रश्नो का उत्तर 'हाँ' म दिया जा सकता है। सोवियत रूस मे अब भी किसी न किसी रूप म यक्तिगत सम्पत्ति और निजी स्वामित्व विद्यमान है। सविधान का अनुच्छेद ९ व्यक्तिगत कृषको और कामगारो को आज्ञा देता है कि वे अपने अपने निजी व्याव सायिक सस्थान रख सकते है, किन्तु शत यह है कि इन सस्थानो मे वे स्वय मेहनत करते हैं और वे अन्य लोगो की मेहनत पर नही चलाय जाते। इस प्रकार सविधान ने छोट पैमान पर व्यक्तिगत उद्योगो को मा यता दी है। इसी प्रकार अनुच्छेद १० नागरिको के व्यक्तिगत सम्पत्ति रखने के अधिकार को स्वीकार करता है। 'इस सम्पत्ति मे नागरिकों के काम की आय और बचत हो सकती है, उनके रहने का मकान और घर का सामान हो सकता है, घर का फर्नीचर, बतन और अपने व्यक्ति गत आराम तथा काम की चीजें हो सकती हैं।'[1] मकान बनान के लिए कामगरो को सस्त ब्याज की दर पर ५ हजार से १० हजार रूबल तक ऋण भी मिल सकता है।

सोवियत रूस मे आय सम्बन्धी असमानता भी है। 'प्रत्येक अपनी योग्यता के अनुसार काय करे और उसे काय के अनुसार वेतन मिले'—इस धारणा म आय सम्बन्धी असमानता निहित है। इसमे सन्देह नही कि रूस मे आय सम्बन्धी असमानता उतनी उग्र नही है जितनी कि पूजीवादी देशो मे है किन्तु इसके साथ ही आय सम्बन्धी असमानता इतनी कम भी नही है कि उसकी सवथा उपेक्षा की जा सके। उदाहरण के लिए १९५० मे किसी कुशल शिल्पी का मासिक वेतन ९०० रूबल था, जबकि सचालको और प्रबन्धको का मासिक वेतन ९ हजार रूबल से लेकर १६ हजार रूबल तक था। इसक अतिरिक्त उच्च वेतनभोगी अधिकारियो को अच्छे निवासस्थान मोटरकार और अन्य अनेक विशेष सुख सुविधाएं प्रदान की जाती है, जो इस आय सम्बन्धी असमानता को और बढा देती हैं।

वस्तुस्थिति यह है कि स्टालिन के समय मे ही सोवियत शासको के द्वारा व्यक्तिगत सम्पत्ति और आय सम्बन्धी असमानता के विषय मे सिद्धान्तवादी दृष्टि कोण अपनाने के बजाय यथार्थवादी और व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसके अतिरिक्त मार्क्सवादी दशन म समाजवाद और साम्यवाद दो विभिन्न

[1] From each according to his ability to each according to his work

अवस्थाएँ है। मार्क्सवादी दर्शन के अनुसार समाजवाद मे जो कि साम्यवाद के पहले की अवस्था है आर्थिक असमानता के लिये कुछ स्थान है पूर्ण आर्थिक असमानता और व्यक्तिगत सम्पत्ति का नितान्त निषेध तो साम्यवादी अवस्था के प्रतीक है। मार्क्सवादी दर्शन के अनुसार सोवियत रूस अब तक समाजवाद को ही अपना सका है साम्यवाद को नही। सोवियत नेताओ के अनुसार साम्यवाद की दिशा म वह गतिशील है। स्वतन्त्र विचार के आधार पर कहा जा सकता है कि सोवियत रूस साम्यवाद की स्थिति अर्थात राज्यहीन और वर्गविहीन समाज की स्थापना और पूर्ण समानता को प्राप्त कर सकेगा इसम सन्देह के लिए पर्याप्त गुजाइश है।

(५) **विशेष अर्थो मे सविधान की सर्वोच्चता**—सोवियत न्यायशास्त्रियो का विचार है कि यह सविधान देश का सर्वोच्च विधान अथवा मौलिक विधि है और किसी भी गणराज्य या सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्मित कानून तथा कार्यपालिका के आदेश अनिवार्यत इसके अनुकूल होगे। परन्तु वस्तुत सविधान की सर्वोच्चता सदिग्ध है और इसे अमरीकी या भारतीय सविधान के अर्थो म सर्वोच्च नही कहा जा सकता। व्यवहार म स्थिति यह है जिसे परोक्ष रूप से सिद्धान्त मे भी स्वीकार कर लिया गया है कि राज्य का आधारभूत सिद्धान्त सविधान नही वरन् 'सर्वहारावर्ग का अधिनायकत्व है। अत सविधान सर्वहारा अधिनायकत्व के द्वारा मर्यादित होता है। डाउइटर के शब्दो म सविधान सर्वहारा अधिनायकत्व की उपज है न कि इसकी जननी। सर्वहारा ही समस्त शक्ति का स्रोत है और वास्तव में सर्वहारा अधिनायकत्व ही सविधान का मूल तत्त्व है। सर्वहारा अधिनायकत्व की शक्ति असीमित है और इस पर किसी नियम या विधान की मर्यादा नहीं है।' सर्वहारा अधिनायकत्व का अन्ततोगत्वा अर्थ होता है—साम्यवादी दल का अधिनायकत्व। दल बदलती हुई परिस्थितियो और आवश्यकताओ का सर्वमान्य व्याख्याता है और दल के आदेशो निर्देशो के अनुसार सविधान को नियमित तथा सशोधित होना होता है।

(६) **सीमित अर्थो में ससद की प्रधानता**—सोवियत न्यायशास्त्री अपने सविधान की एक अन्य विशेषता बतलाते हैं—व्यवस्थापिका या ससद की प्रधानता। सघीय सरकार की सर्वोच्च सत्ता सर्वोच्च सोवियत म निहित है और वह सर्वोच्च विधान निर्मात्री सस्था है। उसे सविधान म सशोधन की अनन्य (exclusive) और पूर्ण शक्ति प्राप्त है और उसका कोई निर्णय सविधान के प्रतिकूल होने पर भी सर्वोच्च न्यायालय उसे अवैध घोषित नही कर सकता। मन्त्रिपरिषद और प्रेसीडियम अपने सभी कार्यो के लिए सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी हैं। उक्त बातो के आधार पर वे यह निष्कर्ष निकालते हैं कि सोवियत सघ म ब्रिटेन के ही समान ससद की प्रधानता के सिद्धान्त को अपनाया गया है। लेकिन व्यवहार म सर्वोच्च सोवियत की यह प्रधानता एक निरर्थक कल्पना मात्र है। सर्वोच्च सोवियत की शक्ति पर अनेक प्रतिबन्ध हैं और सबप्रमुख बात यह है कि उसे अपना प्रत्येक कार्य साम्यवादी दल के आदेशो के अनुसार ही करना होता है। अल्पकालीन बैठकें और सर्वोच्च

सोवियत की कार्यप्रणाली से सम्बन्धित अन्य बातें भी ऐसी हैं कि सर्वोच्च सोवियत विधायी या प्रशासनिक क्षेत्र में प्रभावी नियन्त्रण रखने में नितान्त असमर्थ है।

(७) **संघात्मक शासन**—सोवियत संविधान द्वारा संघात्मक शासन व्यवस्था को अपनाया गया है। संविधान की धारा १३ में उल्लेख है कि सोवियत संघ एक संघीय राज्य है जिसकी इकाइयां स्वेच्छापूर्वक संगठित हुई हैं। सोवियत संघ के अन्तर्गत चार प्रकार की इकाइयां हैं जिनकी शासन प्रणाली और अधिकार भिन्न भिन्न हैं। ये चार प्रकार की इकाइयाँ हैं—(१) **संघीय गणराज्य** (Union Republics), (२) **स्वायत्त गणराज्य** (Autonomous Republics) (३) **स्वायत्त प्रदेश** (Autonomous Regions) और (४) **राष्ट्रीय क्षेत्र** (National Areas)।

सोवियत संघ में १५ संघीय गणराज्य हैं और वे भौगोलिक आधार के स्थान पर राष्ट्रीयता के आधार पर संगठित हैं। प्रत्येक संघीय गणराज्य का अपना संविधान है और सोवियत रूस के संघीय विधानमण्डल के द्वितीय सदन राष्ट्रीयताओं की सोवियत में प्रत्येक के द्वारा ३२ प्रतिनिधि भेजे जाते हैं। संघीय गणराज्यों के क्षेत्र के अन्तर्गत स्वायत्त गणराज्य हैं, जिनका अपना अलग अलग संविधान है। ये संख्या में २० है और इनमें से प्रत्येक को द्वितीय सदन में ११ प्रतिनिधि भेजने का अधिकार है। इसी प्रकार ८ स्वायत्त प्रदेश हैं जिनमें से प्रत्येक को द्वितीय सदन में ५ प्रतिनिधि भेजने का अधिकार प्राप्त है। इनके संगठन का आधार संस्कृति तथा मूलवंशीय समूह है। सोवियत संघ में १० राष्ट्रीय प्रदेश भी हैं। प्रत्येक राष्ट्रीय प्रदेश को द्वितीय सदन में १ प्रतिनिधि भेजने का अधिकार प्राप्त है।

सोवियत संघ के अन्तर्गत चार प्रकार की इकाइयों की जो व्यवस्था की गई है उसका मूल कारण यह है कि सोवियत रूस में अनेक राष्ट्रीयताओं के लोग निवास करते हैं, जिनकी भाषा, धर्म, सभ्यता और संस्कृति में पर्याप्त विभिन्नताएँ हैं।

(८) **नागरिकों के अधिकार और कर्तव्य**—जिस प्रकार भारत अमरीका, आयरलैण्ड और जापान आदि देशों के संविधानों द्वारा वहां के नागरिकों के अधिकारों का वर्णन किया गया है उसी प्रकार से सोवियत संविधान में नागरिकों के अधिकारों का उल्लेख किया गया है। मूल अधिकारों के साथ साथ संविधान में कर्तव्यों का भी वर्णन है। सोवियत संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों में प्रमुख हैं—काम का अधिकार, विश्राम तथा अवकाश का अधिकार, भौतिक सुरक्षा का अधिकार, शिक्षा का अधिकार समानता का अधिकार, धार्मिक और राजनीतिक स्वतन्त्रता का अधिकार आदि।

आग और जिंक के द्वारा सोवियत अधिकार पत्र को 'इतिहास का सर्वाधिक असाधारण अधिकार पत्र' कहा गया है। उनके इस विचार का सर्वाधिक प्रमुख कारण यह है कि जहाँ अन्य देशों के संविधानों द्वारा नागरिक अधिकारों, विचार और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता, संगठन की स्वतन्त्रता, धार्मिक स्वतन्त्रता और सम्पत्ति की स्वतन्त्रता को प्रमुखता प्रदान की गई है, वहाँ सोवियत संविधान नागरिकों के आर्थिक अधिकारों—काम का अधिकार, विश्राम तथा अवकाश का अधिकार और

भौतिक सुरक्षा के अधिकार—को प्रमुख स्थिति और नागरिक अधिकारों को गौण स्थिति प्रदान करता है। जहाँ तक आर्थिक अधिकारों का सम्बन्ध है, सोवियत नागरिक अपनी व्यवस्था पर गर्व कर सकते हैं। लेकिन सोवियत नागरिकों के नागरिक अधिकारों की स्थिति निश्चित रूप से संदिग्ध है।

(६) सोवियत प्रणाली—सोवियत रूस के संविधान की एक प्रमुख देन सोवियत प्रणाली है। सोवियत शब्द का अर्थ है श्रमिकों के द्वारा चुनी गई परिषद या उनके प्रतिनिधियों की संस्था।' इस प्रकार ये सोवियतें श्रमिकों की संस्थाएँ हैं। अक्टूबर क्रान्ति में सोवियतों ने महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की थी, इसलिए क्रान्ति के बाद स्थापित व्यवस्था में भी उनका महत्त्वपूर्ण स्थान रखा गया। विशिंस्की के अनुसार "सोवियतें रूस की प्रमुख सर्वगुणी सरकारी संस्थाएँ हैं जो रूस के सभी श्रमिक वर्गों को लिंग, राष्ट्रीय प्रजातीय, व्यावसायिक, दिशा और धर्म के भेदभाव के बिना एक सूत्र में बाँधती हैं।"[1]

सोवियत संघ में प्रत्येक गाँव, नगर फैक्टरी जिला, प्रान्त, संघीय गणराज्य तथा संघ के लिए सोवियत बनी हुई है। सेना में भी सोवियत बनी हुई है। इन सोवियतों में श्रमिक वर्ग प्रत्यक्ष और गुप्त मतदान के आधार पर अपने प्रतिनिधि चुनकर भेजता है। ये सोवियतें जनता को शासन से सम्बन्धित करती हैं और जनता तथा साम्यवादी दल के बीच कड़ी का कार्य करती हैं। लेनिन ने इस पद्धति की श्रेष्ठता बतलाते हुए लिखा है कि "सोवियत प्रणाली बुर्जुआ (पूँजीवादी), संसदीय प्रणाली से कई गुना श्रेष्ठ है क्योंकि इसमें सरकार का कार्य चलाने के लिए स्वतन्त्र, विस्तृत और अधिकतम उत्साह के साथ समस्त जनता भाग लेती है। बुर्जुआ प्रणाली की प्रतिनिधि संस्थाएँ शोषक वर्ग का प्रतिनिधित्व करती हैं, सोवियतें सर्वसाधारण श्रमिक जनता का।'

(१०) शक्ति पृथक्करण की अवहेलना—संयुक्त राज्य अमरीका का संविधान शक्ति पृथक्करण पर आधारित है, परन्तु सोवियत रूस के संविधान में शक्ति पृथक्करण सिद्धान्त को एक पूँजीवादी सिद्धान्त कहकर इसकी अवहेलना की गई है। रूस में मन्त्रिपरिषद् सर्वोच्च सोवियत द्वारा चुनी जाती है और वह सर्वोच्च सोवियत के ही प्रति उत्तरदायी है। इसी प्रकार उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश भी सर्वोच्च सोवियत द्वारा चुने जाते हैं। सर्वोच्च सोवियत की समिति के रूप में एक विशेष संस्था प्रेज़ीडियम की व्यवस्था की गई है जो सर्वोच्च सोवियत द्वारा चुनी जाती है और सर्वोच्च सोवियत के अवकाश के समय उसकी शक्तियों का प्रयोग करती है। जिस रूप में सोवियत शासन व्यवस्था का गठन किया गया है, उससे शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त की अवहेलना नितान्त स्पष्ट हो जाती है।

1 The Soviets constitute the most all embracing state organisation which unite all the working people of the Soviet Union regardless of sex nationality race occupation party affiliation, education religion etc —Vyshinsky, *The Law of the Soviet State* p 32

(११) प्रेजीडियम—रूस की शासन व्यवस्था में प्रेजिडियम एक ऐसी संस्था है, जिसे कई दृष्टि से अनोखी कहा जा सकता है। प्रेजिडियम ३७ सदस्यों की एक समिति है जिसके सदस्य दोनो सदनो की एक सम्मिलित बैठक में चुने जाते हैं। इसकी विचित्रता कई रूपों में है। सर्वप्रथम, जहाँ विश्व के अन्य राज्यो मे एकल कार्यपालिका है, सोवियत रूस में स्विटजरलैण्ड के समान प्रेजिडियम के रूप मे बहुल कार्यपालिका है। द्वितीय, प्रेजीडियम यद्यपि एक कार्यपालिका संस्था है लेकिन व्यवहार मे इसके द्वारा ऐसी अनेक शक्तियो का प्रयोग किया जाता है, जिनका प्रयोग अन्य देशों मे व्यवस्थापिका या सर्वोच्च न्यायालय करता है। इन्ही आधारों पर प्रेजीडियम को 'सोवियत संविधान का एक रोचक आविष्कार'[1] कहा जाता है।

(१२) एक दलीय व्यवस्था—सोवियत संविधान की एक अन्य विशेषता है एक दलीय व्यवस्था। इस सम्बन्ध में दो बातें उल्लेखनीय हैं साम्यवादी दल की संवैधानिक स्थिति तथा सिर्फ एक ही दल का अस्तित्व। प्रजातान्त्रिक संविधानो में राजनीतिक दल ऐच्छिक संगठन होते हैं और उन्हे संविधान द्वारा मान्यता प्रदान करने की आवश्यकता नही समझी जाती, लेकिन सोवियत संविधान में साम्यवादी दल को मान्यता प्रदान की गई है। संविधान की धारा १२६ मे कहा गया है कि 'सर्वाधिक सक्रिय और राजनीतिक दृष्टि से जागरूक नागरिक साम्यवादी दल के अन्तर्गत संगठित होंगे, जो समाजवादी व्यवस्था की स्थापना मे संघरत श्रमिकों का अगुआ है तथा सर्वहारा वर्ग के सभी संगठनों का केन्द्र है।' इसी प्रकार संविधान की धारा १४१ में कहा गया है कि सोवियत रूस मे मार्क्स और लेनिन की विचारधारा पर आधारित साम्यवादी दल का ही गठन किया जा सकता है और अन्य कोई दल सोवियत निर्वाचनो में भाग लेने का अधिकारी नहीं है।'

इस सम्बन्ध में एक अन्य महत्वपूर्ण बात यह है कि सोवियत रूस मे साम्यवादी दल और सरकार एक ही है। साम्यवादी दल ही वास्तव में देश का शासन करता है और सरकार के विभिन्न अंग दल के साधन मात्र हैं। जिक के शब्दों में "यहाँ दल और सरकार का इतना अटूट सम्बन्ध है कि यह कहना असम्भव है कि दल का कार्य कहाँ समाप्त होता है और शासन का कार्य कहाँ प्रारम्भ होता है। कुछ विशेष व्यक्ति ही दलीय संगठन और शासन संगठन दोनो में सर्वोपरि स्थान रखे हुए हैं और यह निश्चित करना असम्भव रहता है कि वे कब दल के नेता की भांति या कब शासनाधिकारी के रूप में कार्य करते हैं।"[2]

(१३) लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद (Democratic Centralism)—सोवियत संविधान की एक विशेषता लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद है और सोवियत रूस में संघीय और

1 The Presidium is an interesting innovation of the Soviet Constitution

2 Zink H *Modern Governments* p 567

इकाइयों की शासन व्यवस्था, उच्च व निम्न सोवियतें तथा साम्यवादी दल सभी का कार्य लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के आधार पर सचालित होता है। लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का तात्पर्य यह है कि लोकतन्त्र तथा केन्द्रवाद की परस्पर विरोधी प्रवृत्तियों का समन्वय किया गया है। इसमें लोकतान्त्रिक तत्त्व यह है कि नागरिकों को शासन कार्य में भाग लेने का समुचित अवसर प्रदान किया जाता है। केन्द्रवादी तत्व यह है कि शासन या दल का प्रत्येक अंग अपने उच्च अंग के आधीन है। निम्न स्तर के अंग को उसी सीमा तक स्वतन्त्रता है जिस सीमा तक उच्च अंग उस पर प्रतिबन्ध नहीं लगाता। प्रत्येक निम्न अंग के लिए अपने उच्च अंग की आज्ञा का पालन करना अनिवार्य है। अतः अन्ततोगत्वा समस्त राज्यशक्ति एक केन्द्र बिन्दु में जाकर निहित हो जाती है।

सोवियत नेता और साम्यवादी विचारक इस लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के बहुत अधिक प्रशंसक हैं। लेनिन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का अर्थ बतलाते हैं 'निरीक्षण का केन्द्रीकरण और कार्यों का विकेन्द्रीकरण।' इसी प्रकार विशिंस्की लिखता है, 'सोवियत संघ लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त पर निर्मित है जो पूँजीवादी राज्यों के नौकरशाही केन्द्रीकरण का पूर्ण विरोधी है।'[1] किन्तु पाश्चात्य लेखक इस धारणा के कटु आलोचक हैं। फेनसोड का कहना है 'व्यवहार में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद में केन्द्रवाद की ही प्राथमिक महत्ता है।' आग और जिंक का भी यही विचार है।

(१४) न्यायपालिका की निर्बल स्थिति—पाश्चात्य प्रजातन्त्रीय धारणा के अन्तर्गत न्यायपालिका को सरकार के एक ऐसे स्वतन्त्र अंग की स्थिति प्रदान की गई है जो संविधान और कानून के अतिरिक्त अन्य किसी तत्त्व से बँधा हुआ नहीं है और जिसके क्षेत्र में व्यवस्थापिका या कार्यपालिका हस्तक्षेप नहीं कर सकती। लेकिन सोवियत संविधान साम्यवादी दर्शन पर आधारित है, जो न्यायपालिका की स्वतन्त्रता में विश्वास नहीं करता। सोवियत रूस में न्यायपालिका सामान्य शासन का ही एक अंग है, जिसका कर्त्तव्य समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ़ करना और समाजवाद के शत्रुओं को दण्ड देना है।

शक्ति की दृष्टि से भी सोवियत संघ में न्यायपालिका की वह स्थिति नहीं है जो संयुक्त राज्य अमरीका या अन्य किसी संघ राज्य में है। सोवियत संघ का सर्वोच्च न्यायालय या गणराज्यों के उच्चतम न्यायालय किसी कानून को इस आधार पर अवैध घोषित नहीं कर सकते कि वह संविधान के विरुद्ध है। इस प्रकार सोवियत रूस में सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या का अधिकार प्राप्त नहीं है।

1 *The Soviet Union is built on the principle of democratic centralism sharply opposed to the bureaucratic centralism of the capitalist state*

—Vyshinsky A. V., *Law of the Soviet State* p. 230

दूसरे शब्दों में, सोवियत रूस में यायिक पुनर्विलोकन की धारणा को नहीं अपनाया गया है।

(१५) लोकनिर्णय और वापस बुलाने की व्यवस्था (Provision for Referendum and Recall)—सोवियत रूस के संविधान के अनुच्छेद ४९ की पाचवी धारा में लोकनिर्णय की व्यवस्था की गई है। लोकनिर्णय प्रेज़ीडियम अपनी इच्छा से या किसी संघीय गणराज्य की माँग पर करवा सकता है संविधान के अनुच्छेद १४२ में नागरिकों को अधिकार दिया गया है कि वे अपने प्रतिनिधियों को वापस बुला सकते हैं, यदि उनका काय सन्तोषजनक न हो। सोवियत रूस जैसे विशाल देश में ये व्यवस्थाएँ विशेषताएँ ही रही जायेंगी, लेकिन एकदलीय राज्य में इनका व्यावहारिक महत्त्व संदिग्ध है।

सोवियत संविधान की उपरोक्त विशेषताओं से यह नितान्त स्पष्ट है कि सोवियत शासन व्यवस्था 'संविधानवाद' (Constitutionalism) को एक अनुपम भेंट है।

एक नवीन संविधान

जनवरी १९५९ में आयोजित काँग्रेस में प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए ख्रुश्चेव ने एक नवीन संविधान के निर्माण या १९३६ के संविधान को बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप रूप प्रदान करने की आवश्यकता का उल्लेख किया था। उनका विचार था कि १९३६ से लेकर अब तक सोवियत रूस बहुत अधिक आर्थिक और राजनीतिक प्रगति कर चुका है, नवीन आर्थिक सम्बन्ध स्थापित हो गये हैं और सोवियत रूस विश्व में अब अकेला समाजवादी राज्य नहीं है। अब सोवियत रूस की समाजवादी व्यवस्था पूर्णतया सुरक्षित है। अतः परिस्थितियों की माग है कि नागरिक अधिकारों और स्थानीय स्वशासन संस्थाओं आदि से सम्बन्धित व्यवस्था को नवीन परिस्थितियों के अनुरूप ढाला जाय।

इसी विचारधारा के आधार पर अप्रैल १९६३ में सर्वोच्च सोवियत ने ९७ सदस्यों के एक संवैधानिक आयोग का निर्वाचन किया था और उससे १९६३ के अन्त तक नवीन संविधान का प्रारूप प्रस्तुत करने के लिए कहा गया था। परन्तु १९६४ में ख्रुश्चेव का पतन हो गया और अब तक भी ऐसा कुछ नहीं हो सका है। ख्रुश्चेव के पतन के बाद ब्रेजनेव इस आयोग के अध्यक्ष बने, लेकिन आयोग के काय में प्रगति की कोई सूचना अब तक प्राप्त नहीं हुई है और निकट भविष्य में सोवियत रूस के लिए किसी नवीन संविधान की आशा नहीं की जा रही है।

सोवियत शासन—संसदीय या अध्यक्षात्मक

क्या सोवियत शासन संसदीय है?—कुछ विद्वानों, जिनमें सोवियत विधि और न्यायशास्त्री प्रमुख हैं, ने इस विचार का प्रतिपादन किया है कि सोवियत संविधान द्वारा एक संसदात्मक शासन व्यवस्था की स्थापना की गई है। वे अपने विचार की पुष्टि में

सविधान के कुछ ससदीय लक्षणो का उल्लेख करते हैं । प्रथमत , सोवियत सविधान में ससद की सर्वोच्चता के सिद्धात को मान्यता दी गई है और सर्वोच्च सोवियत को राज्यशक्ति का सर्वोच्च अग माना गया है। सर्वोच्च सोवियत जनता की प्रतिनिधि सभा है । द्वितीय, सोवियत सविधान अन्य किसी भी ससदात्मक व्यवस्था वाले सविधान की भाँति ही शक्ति पृथक्करण के सिद्धात को मान्यता प्रदान नही करता । तृतीय, ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की भाँति ही सोवियत सविधान एक मन्त्रिपरिषद की व्यवस्था करता है, जिसके सदस्य सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्वाचित होते हैं । ये सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी भी होते हैं । सविधान के अनुच्छेद ६५ मे कहा गया है कि सोवियत सघ का मन्त्रिमण्डल सर्वोच्च सोवियत के प्रति और सर्वोच्च सोवियत के अवकाश काल मे प्रेजोडियम के प्रति उत्तरदायी होगा ।

सोवियत शासन व्यवस्था की उपरोक्त विशेषताएँ यद्यपि ससदात्मक शासन से मिलती है लेकिन फिर भी इसे ससदीय शासन समझना नितान्त भ्रममूलक होगा । सोवियत सघ की व्यवस्था के अन्तगत ससदीय शासन के बाहरी ढाचे को तो अपना लिया गया है, किन्तु ससदीय शासन की आत्मा के दर्शन उसमे नही होते । ससदीय या मन्त्रिमण्डलात्मक शासन की कुछ मौलिक विशेषताएँ हैं, जिनका सोवियत शासन व्यवस्था मे नितान्त अभाव है ।

(१) सोवियत रूस के अन्तगत ससद (सर्वोच्च सोवियत) की सर्वोच्चता की बात कही जाती है किन्तु वस्तुस्थिति नितान्त भिन्न है । सोवियत रूस मे शासन की सर्वोच्च शक्ति तो साम्यवादी दल के पोलिट ब्यूरो मे निहित है और सर्वोच्च सोवियत तो उसके हाथ की एक कठपुतली मात्र है । डा० फाइनर के शब्दो मे इसे जनसम्प्रभुता पर विचित्र टीका[1] कहा जा सकता है ।

(२) सोवियत सविधान द्वारा यद्यपि एक मन्त्रिपरिषद की स्थापना की गई है, लेकिन सोवियत मन्त्रिपरिषद को सगठन, उत्तरदायित्व और कार्यसचालन की दृष्टि से ससदीय व्यवस्था की मन्त्रिपरिषद नहीं कहा जा सकता । सर्वप्रथम, ससदीय व्यवस्था के अन्तगत मन्त्रिमण्डल के सदस्यो का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से ससद द्वारा नही होता परन्तु सोवियत सघ मे मन्त्रियो का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से सर्वोच्च सोवियत करती है । द्वितीय यद्यपि सविधान मे मन्त्रिमण्डल के सर्वोच्च सोवियत अथवा उसके प्रेजीडियम के प्रति उत्तरदायी होने की कल्पना की गई है परन्तु सर्वोच्च सोवियत का विश्वास खो देने पर या सर्वोच्च सोवियत से मतभेद होने पर मन्त्रिमण्डल के लिए पदत्याग करना आवश्यक नहीं है । व्यवहार मे अब तक कभी भी सर्वोच्च सोवियत द्वारा मन्त्रिमण्डल को पदच्युत नहीं किया गया है । तृतीय, सोवियत

1 Supreme Soviet is a strange commentary on popular Sovereignty
Finer *The Major Govts of Modern Europe* p 620

मन्त्रिमण्डल सामूहिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त के आधार पर काय नहीं करता जो कि ससदीय व्यवस्था वाले मन्त्रिमण्डल का प्रमुख सिद्धान्त है।

(३) ससदीय शासन मे, जैसा कि इगलण्ड और भारत आदि देशों मे है, मन्त्रिमण्डल ससद को भग कराकर पुन निर्वाचन करा सकता है, परन्तु सोवियत मन्त्रिमण्डल को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

(४) ससदीय शासन के अन्तगत नाममात्र की और वास्तविक कायपालिका अलग अलग होती है। सविधान नाममात्र के लिए सम्राट, राष्ट्रपति या गवनर जनरल को कायपालिका शक्ति प्रदान करता है किन्तु वास्तविक कायपालिका शक्ति मन्त्रिमण्डल मे निहित होती है परन्तु सोवियत शासन प्रणाली मे इस प्रकार की कोई व्यवस्था नही है।

(५) ससदीय व्यवस्था के अन्तगत वास्तविक कायपालिका एकल होती है। ब्रिटेन, भारत, कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि सभी देशो मे ऐसा है। किन्तु सोवियत रूस म प्रेजीडियम के रूप मे बहुल कायपालिका को अपनाया गया है जो ससदीय धारणा के अनुरूप नही है।

(६) वास्तविक कायपालिका के दो भेद होते हैं—राजनीतिक कायपालिका अर्थात् मन्त्रिमण्डल और स्थायी कायपालिका अर्थात् लोकसेवा के पदाधिकारी। ससदीय व्यवस्था मे लोकसेवा के ये पदाधिकारी न तो व्यवस्थापिका के सदस्य हो सकते हैं और न ही राजनीतिक कायपालिका के। इनके कार्यों का अन्तिम दायित्व भी उन मन्त्रियो पर होता है जो ससद के प्रति उत्तरदायी होते हैं, किन्तु रूस म ऐसा नही है। वहाँ लोकसेवा के सदस्य सर्वोच्च सोवियत के सदस्य हो सकते हैं और व्यवहार मे भी अनेक बार ऐसा होता है। रूस मे लोकसेवा के इन सदस्यो को उनके कार्यों के लिए उत्तरदायी भी ठहराया जाता है।

(७) इन सबके अतिरिक्त सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि दलपद्धति ससदीय शासन का प्राण है और ससदीय शासन प्रणाली के लिए एक से अधिक राजनीतिक दलो का होना अनिवार्य है—एक बहुमत दल जो शासन का सचालन करे और दूसरे एक या अधिक विरोधी दल, जो सत्तारूढ दल का विरोध करे। ससदीय व्यवस्था के आदर्श ब्रिटेन मे तो विरोधी दल को इतना अधिक महत्त्व दिया जाता है कि विरोधी दल के नेता को सरकारी कोष से वेतन मिलता है। लेकिन सोवियत रूस मे एकदलीय व्यवस्था है और साम्यवादी दल के अतिरिक्त अन्य किसी दल का अस्तित्व नही है। विलियम्स के विनोदपूर्ण शब्दों म 'दूसरे दल रह सकते हैं लेकिन एक शर्त पर कि एक दल शक्ति में हो तथा अन्य दल जेल में।'[1] वस्तुत एकदलीय व्यवस्था के अन्तगत ससदीय शासन की कल्पना ही नही की जा सकती।

[1] There might or still may be other parties, but on the sole condition that one is in power and the others in jail *Williams*

(८) संसदीय व्यवस्था के अंतर्गत शासन तथा दल पृथक पृथक होते हैं और दल के द्वारा शासन में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता, किन्तु सोवियत रूस में शासन और साम्यवादी दल को एक दूसरे से पृथक नहीं किया जा सकता। फिक के शब्दों में "शासन और सरकार का इतना अटूट सम्बन्ध है कि यह कहना असम्भव है कि दल का कार्य कहाँ समाप्त होता है और सरकार का कार्य कहाँ प्रारम्भ होता है।"

उपरोक्त तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि सोवियत शासन में संसदीय व्यवस्था के कुछ ऊपरी लक्षण होने हुए भी वस्तुतः इसे संसदीय व्यवस्था नहीं कहा जा सकता।

क्या सोवियत शासन अध्यक्षात्मक है?—यदि सोवियत शासन संसदीय या मन्त्रिमण्डलात्मक नहीं है तो यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या यह अध्यक्षात्मक है? इसका उत्तर भी निषेधात्मक ही है।

साम्यवादी नेता सदैव ही संयुक्त राज्य अमरीका की अध्यक्षात्मक पद्धति के आलोचक रहे है ऐसी स्थिति में यह सहज ही सोचा जा सकता है कि उनका उद्देश्य अध्यक्षात्मक पद्धति की स्थापना नहीं हो सकता था। वस्तुतः सोवियत रूस की शासन व्यवस्था के कुछ लक्षण अध्यक्षात्मक पद्धति के नितान्त विपरीत हैं।

सर्वप्रथम—अध्यक्षात्मक शासन शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त पर आधारित होता है, परन्तु सोवियत शासन व्यवस्था में इस सिद्धान्त की नितान्त अवहेलना की गई है। प्रेजीडियम और मन्त्रिपरिषद दोनों का चुनाव सर्वोच्च सोवियत द्वारा किया जाता है और दोनों ही सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी होते है। इसके अतिरिक्त प्रेजीडियम विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक तीनों ही प्रकार की शक्तियों का उपभोग करता है।

द्वितीय, अध्यक्षात्मक पद्धति के अन्तर्गत राज्य की कार्यपालिका एकल होती है और कार्यपालिका प्रधान जनता द्वारा निर्वाचित होता है जैसे कि संयुक्त राज्य अमरीका का राष्ट्रपति। परन्तु सोवियत संविधान में कार्यपालिका बहुल है और इसका निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत द्वारा होता है।

इस प्रकार सोवियत शासन व्यवस्था न तो संसदीय है और न ही अध्यक्षात्मक। यह तो वास्तव में अपने आप में ही एक वर्ग है।

इस सम्बन्ध में हमारे द्वारा एक अन्य मूलभूत बात पर भी विचार किया जाना चाहिए। संसदीय और अध्यक्षात्मक ये दोनों ही शासन व्यवस्थाएँ प्रजातन्त्र के भेद हैं और इनके अस्तित्व के लिए प्रजातन्त्र मूल स्थिति है। जहाँ तक सोवियत रूस का सम्बन्ध है, सोवियत रूस में एकदलीय व्यवस्था, विचार भाषण, प्रेस और संगठन की नागरिक स्वतन्त्रताओं पर प्रतिबन्ध और चुनावों में जनता के सम्मुख किसी भी प्रकार के विकल्प का अभाव आदि कुछ ऐसी बातें हैं जिनके आधार पर कहा जा सकता है कि सोवियत रूस की शासन व्यवस्था प्रजातन्त्रीय ही नहीं है।

ऐसी स्थिति में संसदीय या अध्यक्षात्मक होने का प्रश्न ही उपस्थित नहीं होता। इस सम्बन्ध में मर्ले फेनसोड का कथन है कि 'सोवियत संघ में स्पष्टतया एकदलीय अधिनायकत्व है, जिसमें निर्णायक शक्ति एक छोटे से वर्ग के पास है।'[1]

प्रश्न

१ 'सोवियत संघ श्रमिकों और किसानों का एक समाजवादी राज्य है।' (अनु १) विवेचना कीजिए। (आगरा, १९७१)

२ यह कथन कहाँ तक सत्य है कि सोवियत रूस में संसदीय शासन है? (आगरा, १९६६, ६७, ७१, जीवाजी, १९६९)

३ क्या सोवियत संघ की शासन व्यवस्था संसदीय प्रणाली के अनुरूप है? अपना मत कारण सहित दीजिए। (आगरा १९६९)

४ सोवियत संघ के संविधान की विशेषताओं का वर्णन कीजिए। (जीवाजी, १९७२)

५ सोवियत संविधान की विशेषताओं पर एक आलोचनात्मक निबंध लिखिए। (विक्रम, १९६५)

६ 'सोवियत संघ का संविधान अनूठा है और विश्व के अन्य संविधानों से भिन्न है। उपरोक्त कथन की पुष्टि कीजिए। (विक्रम, १९६७)

[1] 'The political realities of Soviet life speak in the unmistakable language of a one party dictatorship in which ultimate power is deposited in a narrow ruling group' —*Merle Fainsod*

2

नागरिको के अधिकार और कर्तव्य

(RIGHTS AND DUTIES OF THE CITIZENS)

"स्टालिन सविधान सोवियत नागरिकों को वे अधिकार और स्व त न्त्रताएं प्रदान करता है जो पूजीवादी देशा मे न तो हैं और न ही हो सकती हैं।
—कारपिन्सकी

१९१८ और १९२४ के सविधानो मे नागरिक अधिकारो का कोई उल्लेख नही किया गया था। वस्तुत उस समय तक सोवियत रूस मे समाजवादी व्यवस्था पूणतया स्थापित नही हो सकी थी और सोवियत शासको को इस बात का भय था कि सविधान मे नागरिक अधिकारो का उल्लेख करने पर प्रतिक्रियावादी शक्तियाँ उनका उपयोग क्रान्ति विरोधी षडयन्त्र के लिए कर सकती हैं। लेकिन १९३५ तक सोवियत रूस मे समाजवाद भलीभाति स्थापित हो चुका था और अब क्रान्ति विरोधी शक्तियो के सिर उठाने का कोई भय नही रहा था। अत १९३६ के सविधान मे नागरिक अधिकारो का उल्लेख किया गया और इसे १९३६ के सविधान का एक प्रमुख लक्षण कहा जा सकता है। सिडनी और बट्रिस वब न लिखा है कि '१९३६ के सविधान की प्रमुख बात चुनाव यन्त्र का पुनगठन नहीं, वरन् व्यक्तियों के अधिकारों की एक नवीन सूची का समावेश है।'[1]

सोवियत अधिकार पत्र की विशेषताएं

यद्यपि १९३६ के पूव भी आयरलैण्ड, स्विटजरलण्ड, सयुक्त राज्य अमरीका और अन्य अनक देशों क सविधानो द्वारा अपने नागरिकों को अधिकार प्रदान किये गये थ और द्वितीय महायुद्ध के बाद निर्मित अधिकाश सविधानो द्वारा भी ऐसा किया गया है लेकिन सोवियत सविधान का अधिकार पत्र अपनी विशिष्ट स्थिति रखता है।

1 The Stalin constitution grants Soviet citizens rights and liberties that do not and cannot exist in any of the capitalist country
—*Karpinsky*

ऑग और जिंक ने इस अधिकार पत्र को 'इतिहास के सर्वाधिक असाधारण अधिकार पत्रों में से एक'[1] कहा है। सोवियत अधिकार पत्र की विशेषताओं का उल्लेख निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) समाजवादी स्वरूप—पाश्चात्य संविधानों के अधिकार पत्र उदारवाद और व्यक्तिवादी विचारधारा पर आधारित हैं लेकिन सोवियत अधिकार पत्र कार्ल मार्क्स और लेनिन के समाजवादी दर्शन पर आधारित है। यह एक महत्वपूर्ण तत्त्व है और इसके अनेक परिणाम निकले हैं। सर्वप्रथम, पश्चिमी संविधानों में नागरिकों के अधिकारों का उल्लेख व्यक्ति को केंद्र मानकर किया गया है, लेकिन सोवियत संविधान में अधिकारों की व्यवस्था समाज को केंद्र मानकर की गई है और यह इस धारणा पर आधारित है कि 'समष्टि में ही व्यक्ति का हित निहित है।' द्वितीय पश्चिमी संविधानों के अधिकार पत्रों में नागरिकों की नागरिक स्वतन्त्रताओं और अधिकारों पर अधिक बल दिया गया है, लेकिन सोवियत संविधान में नागरिकों के आर्थिक अधिकारों यथा काम का अधिकार, विश्राम और अवकाश का अधिकार तथा सामाजिक सुरक्षा के अधिकार को अधिक महत्ता प्रदान की गई है। इस सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण स्पष्ट करते हुए स्टालिन ने १९३७ में ही कहा था कि "एक बेकार व्यक्ति के लिए जो भूखा है और परिश्रम करने पर भी रोटी नहीं कमा सकता व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का क्या अर्थ है? वास्तव में सच्ची स्वतन्त्रता वहीं मिल सकती है जहाँ शोषण को समाप्त कर दिया जाय, बेकारी न हो, भीख माँगने की आवश्यकता न हो तथा काम, रोटी या मकान छिन जाने का भय न हो।"

(२) उद्देश्यों और साधनों का सामंजस्य—पश्चिमी देशों के संविधानों में केवल नागरिक अधिकारों का उल्लेख है उन अधिकारों की प्राप्ति के साधनों का नहीं। इसके विपरीत, सोवियत संविधान में नागरिकों के केवल अधिकार ही नहीं गिनाये गये हैं वरन् उन साधनों की भी व्यवस्था की गई है, जिनके द्वारा इन अधिकारों का वास्तविक रूप से प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरणार्थ व्यक्ति को काम करने का अधिकार प्रदान किया गया है और साथ ही राज्य की ओर से चलाये जाने वाले इतने व्यवसायों की व्यवस्था की गई है कि कोई भी व्यक्ति बेकार न रहे। इसी प्रकार संविधान में विश्राम और अवकाश के अधिकार का उल्लेख करने के साथ-साथ व्यवहार में इस अधिकार के उपभोग हेतु काम के कम घण्टों, अनिवार्य छुट्टियों और विश्राम गृहों आदि की व्यवस्था भी की गई है।

(३) सर्वव्यापकता—सोवियत संविधान में मौलिक अधिकार सर्वव्यापी हैं अर्थात् बिना किसी भेदभाव के प्रत्येक स्त्री पुरुष को प्रदान किए गए हैं। इस प्रकार

[1] The Soviet Constitution carries one of the most extraordinary Bill of Rights known to history
—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 852

की सवव्यापकता पश्चिम के अनेक देशो मे नही पायी जाती। उदाहरणार्थ, ब्रिटन मे रोमन कैथोलिको के साथ और सयुक्त राज्य अमरीका मे नीग्रो लोगो के साथ भेद भाव किया जाता है और १९७० तक स्विटजरलैण्ड मे स्त्रियो को पूण नागरिक और राजनीतिक अधिकार प्राप्त नही थे।

(४) अधिकारों पर सामान्य प्रतिबन्ध—सोवियत संविधान द्वारा प्रदत्त आर्थिक अधिकार तो व्यक्तियो को लगभग पूण सीमा तक प्राप्त हैं, लेकिन नागरिक अधिकारो के सम्बन्ध म स्थिति ऐसी नही है। व्यक्तियों के नागरिक अधिकारों पर संविधान द्वारा ही एक सामान्य प्रतिबन्ध लगा दिया गया है जो इन अधिकारों को बहुत अधिक सीमित कर देता है। संविधान की धारा १२५ मे कहा गया है कि केवल वे नागरिक अधिकार राज्य की ओर से सुरक्षित होगे जो 'श्रमिक वग के हितो के अनुरूप और समाजवादी व्यवस्था को सुदढ़ करने वाले हैं।' पश्चिमी देशो के संविधानो म नागरिक अधिकारो पर इस प्रकार के किसी सामान्य प्रतिबन्ध की व्यवस्था नही है।

(५) अधिकारो के साथ कतव्यो का उल्लेख—पश्चिमी देशो की मान्यता यह है कि अधिकारो के साथ कतव्य स्वत ही जुडे हुए हैं और इसी कारण संविधान मे नागरिक कतव्यो के उल्लेख की कोई आवश्यकता नही है। उदाहरणार्थ, भाषण, प्रेस और धम आदि की स्वतन्त्रता के अधिकार म यह कतव्य निहित है कि व्यक्ति इन अधिकारो का दुरुपयोग नही करेगा या अन्य व्यक्तियो के इन अधिकारो म हस्तक्षेप नही करेगा। लेकिन सोवियत संविधान का केन्द्र बिन्दु समाज है और इसी कारण अधिकारो के साथ साथ कतव्यो का भी संविधान म ही उल्लेख कर दिया गया है। उदाहरणार्थ प्रत्येक व्यक्ति का यदि यह अधिकार है कि उसे काम मिले, तो उसका यह कतव्य भी है कि वह काम करे।

(६) न्यायपालिका के संरक्षण का अभाव—प्राय लोकतान्त्रिक राज्यो मे नागरिक अधिकारो की सुरक्षा के लिए निष्पक्ष और सर्वोच्च न्यायपालिका की व्यवस्था की जाती है और नागरिक अधिकारो का हनन होने पर उनकी रक्षा हेतु नागरिक न्यायालय म आवेदन कर सकते हैं। लेकिन सोवियत संघ मे नागरिक अधिकारो को न्यायपालिका का संरक्षण प्राप्त नही है। यदि सरकार इन अधिकारो के विरुद्ध किसी कानून का निर्माण करे तो नागरिको के पास ऐसा कोई संवैधानिक साधन नही है, जिसके माध्यम से वे अपने अधिकारो की रक्षा कर सकें।

(७) संविधान द्वारा प्रदत्त कुछ विशेष अधिकार—सामान्यतया संविधान केवल अपने ही देश के नागरिको को अधिकार प्रदान करता है, लेकिन सोवियत संविधान समस्त विश्व के नागरिको को शरणागत का अधिकार प्रदान करता है। जिन विदेशी नागरिको को राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए संघष करने, वैज्ञानिक गतिविधियो म भाग लेने या श्रमिक वग के हितो की रक्षा करने के कारण कष्ट दिया जाता है, उनके द्वारा सोवियत रूस म शरण प्राप्त की जा सकती है।

नागरिको के अधिकार

सोवियत सविधान के अध्याय १० (धारा ११८ से १३३) मे नागरिक अधिकार और कतव्यो का उल्लेख किया गया है। सविधान द्वारा नागरिको को निम्नलिखित अधिकार दिये गये है

(१) काम का अधिकार (Right to work)—व्यक्ति के काम के अधिकार को सविधान द्वारा मा यता सवप्रथम सोवियत रूस के सविधान द्वारा ही दी गई है। काम के अधिकार का तात्पय यह है कि राज्य काम की शक्ति रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को काम करने का अवसर प्रदान करेगा और एसी व्यवस्था की जायगी कि कोई भी बेकार न रहे। इस सम्बध मे सविधान की धारा ११८ म कहा गया है कि 'सोवियत सघ के नागरिको को काम का अधिकार है, अर्थात् उनका यह अधिकार है कि वे बेकार न रहे और उन्हे काम की अच्छाई व मात्रा के अनुसार वेतन मिले।'[1]

सोवियत रूस मे जार सम्राटो के समय बहुत अधिक बेकारी थी, लेकिन अब वह पूणतया समाप्त हो गयी है। इसे साम्यवादी व्यवस्था और सोवियत सविधान की एक महत्त्वपूण सफलता कहा जा सकता है। कारपिन्सकी ने इस अधिकार के महत्त्व का वणन करते हुए लिखा है 'काम करने का अधिकार रूस के लोगो की महान सफलता है। ऐसा अधिकार न किसी पूजीवादी देश मे है और न ही हो सकता है।'[2] काम के अधिकार का तात्पय यह नही है कि सबको एकसा काम और एकसा वतन मिलगा। यह स्वीकार किया गया है कि काम की मात्रा व उसके स्तर के अनुसार वतन म अन्तर होना स्वाभाविक है और ऐसा अन्तर सोवियत रूस म है किन्तु उसका अनुपात अन्य पश्चिमी देशो की तुलना मे कम है।

(२) विश्राम और अवकाश का अधिकार (Right to Rest and Leisure)—सोवियत सविधान द्वारा नागरिको को विश्राम और अवकाश का अधिकार भी प्रदान किया गया है। सरकार के द्वारा ऐसी भी व्यवस्था की गयी है जिसस यह अधिकार प्रभावी हो सके। सरकार के द्वारा काम के घण्टे निश्चित किये गये है और स्वास्थ्य गृहो, विश्राम गृहो व आमोदालयो की व्यवस्था की गयी है जिसस विश्राम और अवकाश के समय का उचित उपयोग किया जा सके। सविधान की धारा ११९ मे कहा गया है कि "अवकाश के अधिकार की व्यवस्था कारखानो व

[1] Citizens of the U S S R have the right to work that is the right to guaranteed employment and payment for their work in accordance with its quantity and quality
—*Article 118 of U S S R Constitution*

[2] The right to work is one of the greatest achievements of the Soviet people No such right exists or can exist in the capitalist countries'
—*Karpinsky*

कार्यालयो मे काम करने वालो के लिए प्रतिदिन ८ घण्टे काम करने का समय निश्चित करके, कठिन कार्यों के लिए प्रतिदिन काम करने का समय ७ या ६ घण्टे तक घटाकर, अत्यधिक कठिन काम करने वालो दुकानों मे प्रतिदिन ४ घण्ट काम का समय निश्चित करके, कारखानों व कार्यालयों के कर्मचारियों के लिए सवेतन वार्षिक अवकाश की व्यवस्था करके तथा काम करने वाले लोगों के लिए स्वास्थ्य गृहों, विश्राम गृहों व आमोदालयों का जाल बिछाकर की गयी है।" आपातकालीन स्थिति मे काम के ये घण्टे बढाये जा सकते हैं।

(३) सामाजिक सुरक्षा का अधिकार (Right to Social Security)—सोवियत सविधान का अनुच्छेद १२० नागरिको को बुढापे, बीमारी और अयोग्यता की स्थिति मे राज्य से जीवन निर्वाह के लिए सहायता प्राप्त करन का अधिकार देता है। यह अधिकार नागरिको का उद्योगो कार्यालयो और व्यवसायो मे बहुत बडे पैमाने पर सामाजिक बीमा, मुफ्त चिकित्सा सवा और बहुत बडी सख्या मे स्वास्थ्य केद्र स्थापित करक दिया गया है। सामूहिक फार्मों पर काय करने वाले व्यक्तियो को 'अखिल सघीय सामाजिक बीमा निधि' से पेंशन दी जाती है। सोवियत रूस की सरकार अपने बजट का एक बडा भाग नागरिको को सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने पर व्यय करती है। व्यापक सामाजिक सुरक्षा की यह व्यवस्था किसी पूजीवादी देश मे नही पायी जाती।

(४) शिक्षा का अधिकार (Right to Education)—सोवियत सविधान का अनुच्छेद १२१ सोवियत नागरिको को शिक्षा का अधिकार प्रदान करता है। सोवियत सघ म प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर तक नि शुल्क शिक्षा का प्रबध किया गया है और सब बच्चो के लिए ८ वष तक शिक्षा प्राप्त करना अनिवार्य है। सरकार योग्य विद्यार्थियो को शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्ति या सहायता के रूप म धनराशि भी दती है। देश भर म बहुत बडी सख्या मे प्राविधिक, व्यावसायिक तथा उच्च शिक्षा के लिए स्कूल तथा कालेज खोले गये हैं। जार शासन के समय सोवियत रूस म बहुत अधिक निरक्षरता थी लेकिन साम्यवादी शासन द्वारा किये गये निर तर प्रयासो के परिणामस्वरूप निरक्षरता लगभग समाप्त हो हो गयी है। रूस के स्कूलो मे बच्चो को शिक्षा उनकी मातृभाषा म हो दी जाती है।

सोवियत रूस मे शिक्षा की व्यापक व्यवस्था की गयी है, लेकिन यह शिक्षा साम्यवादी दशन से नियत्रित अवश्य हो है। प्रो० यूमन ने इस सम्बध मे लिखा है कि, "सोवियत सरकार शिक्षा तथा इसके आधार पर भविष्य की पीढ़ी के मनों को नियन्त्रित करने की आवश्यकता के महत्त्व को भलीभाँति समझती है। यह काय सोवियत स्कूलो मे किया जाता है और इसमे विदेशी विचारधारा के तनिक से प्रभाव को भी बहिष्कृत कर दिया गया है। साम्यवादी दल सदव ही शिक्षा तथा खोज कार्यों के निरीक्षण मे जागरूक रहता है और उसके द्वारा यह काय सत्य की खोज करने

वाले यन्त्र के रूप मे नहीं, वरन सोवियत राज्य के उद्देश्यो को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है।"[1]

(५) स्त्रियो तथा पुरुषों को समान अधिकार (Equal rights of Man and Women)—सविधान के अनुच्छेद १२२ मे कहा गया है कि "स्त्रियो को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक अथवा सरकार से सम्बन्धित क्षेत्रो मे पुरुषों के समान ही अधिकार प्राप्त होंगे। स्त्रियो को भी पुरुषो के समान ही काम का अधिकार प्राप्त है। इसी प्रकार उन्हे पुरुषो के समान वेतन, विश्राम तथा अवकाश, सामाजिक बीमा और शिक्षा की सुविधाएँ प्राप्त हैं। इसके साथ ही राज्य माता तथा बच्चों के हितो की रक्षा के लिए विशेष कार्य कर सकता है। राज्य के द्वारा प्रसूति गृहों (Maternity homes), नर्सरियो तथा शिशु गृहो (kinder gartens) की व्यापक स्तर पर व्यवस्था की गयी है। राज्य अधिक बच्चो वाली माताओ और अविवाहित नारियो के हितो की विशेष रक्षा करता है। स्त्री पुरुष की समानता और नारियो के अधिकारो का न केवल सविधान म उल्लेख है, वरन व्यवहार मे भी उन्हे ये समस्त सुविधाएँ प्राप्त हैं। उदाहरणार्थ सर्वोच्च सोवियत मे लगभग ३० प्रतिशत स्थान स्त्रियों को प्राप्त है।

(६) जातीय व राष्ट्रीय समानता का अधिकार (Right to Racial and National Equality)—जार के शासन के अन्तर्गत रूसी राष्ट्रीयता का अन्य राष्ट्रीयताओ पर प्रभुत्व था और इस स्थिति ने अन्य राष्ट्रीयताओं मे तीव्र असन्तोष को जन्म दिया। लेकिन साम्यवादी व्यवस्था के अन्तर्गत राष्ट्रीय समानता को स्वीकार करते हुए १०० स अधिक राष्ट्रीयताओ वाले इस राज्य मे राष्ट्रीय एकता का लक्ष्य प्राप्त कर लिया गया है। रूस मे सब जातियो और राष्ट्रीयताओं का स्तर समान है और उन्हे समाजवादी व्यवस्था की सीमाओ मे रहते हुए पूर्ण सास्कृतिक स्वतन्त्रता प्राप्त है। इस सम्बन्ध मे सविधान के अनुच्छेद १२३ म कहा गया है कि "राष्ट्रीयता व जाति के भेदभाव के बिना आर्थिक, प्रशासनिक, सास्कृतिक, राजनीतिक तथा अन्य सार्वजनिक कार्यक्षेत्रों मे सोवियत सघ के नागरिकों को अधिकारों की समानता प्राप्त है।"[1]

प्रत्येक राष्ट्रीयता को अपनी मातृभाषा म स्कूल चलाने का अधिकार है और न्यायालयो मे भी विभिन्न राष्ट्रीयताओ की भाषाओ को मान्यता दी गयी है। इसके साथ ही सर्वोच्च सोवियत के उच्च सदन मे प्रतिनिधित्व की व्यवस्था राष्ट्रीयताओ के आधार पर की गयी है और सघ म ४ प्रकार की इकाइयों—सघीय गणराज्य, स्वायत्त गणराज्य, स्वायत्त प्रदेश और राष्ट्रीय क्षेत्रो—की व्यवस्था पर विभिन्न राष्ट्रीयताओ को प्रशासन सम्बन्धी अधिकार और प्रतिनिधित्व दिया गया है।

[1] Robert G Neumann, *European and Comparative Governments* p 624

(७) धर्म व आध्यात्म सम्बन्धी स्वतन्त्रता (Right to Religion and Conscience)—सोवियत संविधान अपने नागरिकों को धर्म और आध्यात्म सम्बन्धी स्वतन्त्रता भी प्रदान करता है। संविधान के अनुच्छेद १२४ में उल्लेख है कि 'प्रत्येक नागरिक को धार्मिक पूजा की स्वतन्त्रता तथा धर्म विरोधी प्रचार की स्वतन्त्रता प्रदान की जाती है।'[1] इस प्रकार सोवियत संविधान की विशेषता यह है कि वह अपने नागरिकों को धर्म विरोधी प्रचार करने की छूट देता है। ऐसी छूट पश्चिमी प्रजातन्त्रों में नहीं दी जाती और सोवियत रूस की यह व्यवस्था साम्यवादी दर्शन पर आधारित है।

(८) भाषण व अभिव्यक्ति का अधिकार (Right to Speech and Expression)—अनुच्छेद १२५ द्वारा सोवियत नागरिकों को भाषण की स्वतन्त्रता, प्रेस की स्वतन्त्रता, एकत्रित होने की स्वतन्त्रता तथा जुलूस निकालने और प्रदर्शन करने की स्वतन्त्रता प्रदान की गयी है। इस हेतु मजदूरों को प्रेस, कागज, सार्वजनिक भवन और अन्य आवश्यक सुविधाएँ भी दी गयी हैं। संविधान के इस अनुच्छेद में ही स्पष्ट कर दिया गया है कि इन स्वतन्त्रताओं का उपयोग श्रमिक वर्ग के हितों के अनुकूल और समाजवादी व्यवस्था को दृढ़ करने के लिए ही किया जा सकता है। इनके आधार पर समाजवाद का विरोध नहीं किया जा सकता।

(९) समुदाय निर्माण का अधिकार (Right to form associations)—संविधान के अनुच्छेद १२६ के अनुसार सोवियत नागरिकों को सार्वजनिक संगठन, सहकारी समितियों, श्रमिक संघों, खेलकूद, सुरक्षात्मक संगठनों और वैज्ञानिक समुदायों आदि में संगठित होने का अधिकार है। लेकिन संविधान के इसी अनुच्छेद में कह दिया गया है कि इस अधिकार का प्रयोग श्रमिक वर्ग के हितों के अनुकूल और समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए ही किया जाना चाहिए। संविधान के अनुसार समस्त राजनीतिक संगठनों का केन्द्र साम्यवादी दल ही होगा। साम्यवादी दल को सर्वहारावर्ग के सर्वाधिक सक्रिय और जागरूक सदस्यों का संगठन कहा गया है। इस प्रकार समुदाय निर्माण की स्वतन्त्रता बहुत अधिक सीमित है और एलेक्स एन ड्रैगनिच के शब्दों में "केवल उन्हीं दलों का गठन किया जा सकता है जो साम्यवादी दल की इच्छाओं और आकांक्षाओं के अनुकूल हों।"[2]

(१०) व्यक्तिगत जीवन तथा घरों की स्वतन्त्रता का अधिकार (The right of the inviolability of the person and homes)—अनुच्छेद १२७ और १२८ नागरिकों को व्यक्तिगत जीवन तथा घर की स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं। अनुच्छेद १२७

1 Freedom of religious worship and freedom of anti religious propaganda is recognised for all citizens

—*Article 124 of the Constitution*

2 Alex N Dragnich *Major European Governments* p 427

में कहा गया है कि "किसी भी व्यक्ति को न्यायालय के निर्णय या प्रोक्यूरेटर की स्वीकृति के बिना गिरफ्तार नहीं किया जायगा।" अनुच्छेद १२८ में लिखा है "नागरिकों के घर और उनके पत्र व्यवहार की गोपनीयता का उल्लंघन नहीं किया जायगा और कानून के द्वारा उसकी रक्षा की जायगी।" व्यवहार के अन्तर्गत साम्यवादी विचारधारा और सोवियत शासन के विरोधी इन स्वतन्त्रताओं का उपयोग नहीं कर सकते हैं।

(११) निजी सम्पत्ति का अधिकार (Right to private property)—यद्यपि रूस में उत्पादन के साधनों पर निजी स्वामित्व समाप्त कर दिया गया है लेकिन नागरिकों को अपने परिश्रम से कमाया हुआ धन रखने का अधिकार है और सम्बन्धित व्यक्ति की मृत्यु के बाद उसके पुत्र या अन्य सम्बन्धी उसे प्राप्त कर सकते है। अनुच्छेद ८ से लेकर १० तक निजी सम्पत्ति के अधिकार का ही उल्लेख है। अनुच्छेद १० में कहा गया है कि "नागरिकों को अपने काम से हुई आमदनी तथा बचत, रहने के मकान, घरेलू वस्तुएँ निजी सुविधा और प्रयोग की वस्तुएँ तथा सहायक खेती को अपनी निजी सम्पत्ति के रूप मे रखने का अधिकार है और उसको उनके उत्तराधिकारी भी प्राप्त कर सकेंगे। कानून के द्वारा इन अधिकारों की रक्षा की जायेगी।" निजी सम्पत्ति का अधिकार सीमित है और इसके अन्तर्गत निजी सुविधा तथा आराम की वस्तुएँ ही रखी जा सकती है। निजी सम्पत्ति के आधार पर किसी का शोषण नहीं किया जा सकता।

(१२) मताधिकार (Right to vote)—सोवियत संघ में प्रजाति, राष्ट्रीयता, सम्पत्ति शिक्षा, लिंग धर्म और निवासस्थान के भेदभाव के बिना १८ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक व्यक्ति को मताधिकार प्रदान किया गया है। २३ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नागरिक सर्वोच्च सोवियत का चुनाव लड़ सकता है।

(१३) शरण प्राप्त करने का अधिकार (Right to Asylum)—सामान्यतया एक राज्य का संविधान केवल अपने ही नागरिकों को अधिकार प्रदान करता है, लेकिन सोवियत संविधान के एक अधिकार का सम्बन्ध समस्त विश्व के नागरिकों से है। संविधान के अनुच्छेद १२९ में उल्लेख है कि "जिन विदेशी नागरिकों को राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने या वज्ञानिक गतिविधियों मे भाग लेने या श्रमिक वर्ग के हितों की रक्षा करने के कारण कष्ट दिया जाता है, उनको शरण देने का रूस अपने पास अधिकार रखता है।" संविधान के अन्तर्गत यह व्यवस्था अन्य देशों मे साम्यवादी क्रांति या प्रसार करने की दृष्टि से की गयी है। इससे अन्य देशों के साम्यवादियों को अपने देश में तोड़ फोड़ करने के लिए प्रोत्साहन मिलता है और कई बार वे अपने देश मे गिरफ्तारी से बचकर सोवियत रूस में शरण प्राप्त कर लेते हैं।

नागरिकों के कर्तव्य

सोवियत संविधान में नागरिक अधिकारों के साथ साथ कर्तव्यों का भी उल्लेख किया गया है। संविधान द्वारा नागरिकों के अग्रलिखित कर्तव्य निर्धारित किये गये है

(१) काम करने का कर्तव्य—सविधान के अनुच्छेद १२ के अनुसार, श्रम करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है और उसके लिए सम्मान की वस्तु है। सोवियत रूस की समाजवादी व्यवस्था मे प्रत्येक नागरिक के लिए श्रम करना अनिवार्य है और समस्त व्यवस्था इस सिद्धान्त पर आधारित है कि 'जो काम नहीं करेगा वह खायेगा भी नहीं।'

(२) सविधान तथा कानूनों का पालन—अनुच्छेद १३० के अनुसार, 'प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह सविधान के प्रति भक्ति रखे और कानून का पालन करे।' कोई भी नागरिक कानूनो की अवहेलना नही कर सकता।

(३) श्रमिक अनुशासन का पालन—अनुच्छेद १३० के अनुसार ही नागरिको का यह भी कर्तव्य है कि 'वे श्रमिक अनुशासन को कायम रखें, सार्वजनिक कर्तव्यों का पालन करें और समाजवादी समाज के नियमो का सम्मान करें।' श्रमिक अनुशासन मे यह बात सम्मिलित है कि नागरिकों के द्वारा हडताल, तोडफोड या इस प्रकार के अन्य किसी कार्य मे भाग नही लिया जा सकता, जिससे उत्पादन म कमी हो।

(४) सार्वजनिक समाजवादी सम्पत्ति की रक्षा करना—अनुच्छेद १३१ के अनुसार प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह सार्वजनिक समाजवादी सम्पत्ति की रक्षा करे तथा उसे दृढ़ करे क्योंकि यह समाजवादी देश की शक्ति और समृद्धि का स्रोत है। जो व्यक्ति समाजवादी सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध करते है वे जनता के शत्रु हैं।

(५) सनिक सेवा—अनुच्छेद १३२ मे लिखा है कि 'सनिक सेवा एक कानून है और यह प्रत्येक सोवियत नागरिक का सम्मानित कर्तव्य है।' इस कर्तव्य का महत्त्व बतलाते हुए कारपिन्सकी ने लिखा है कि "इससे बढकर और कौन-सा कर्तव्य अधिक सम्मानित हो सकता है कि हाथ मे शस्त्र लेकर हम अपने महान सोवियत देश की रक्षा करें जो विश्व भर मे श्रमिकों और किसानों का प्रथम देश है और जो विश्व भर मे परिश्रम करने वाली मानवता द्वारा शोषण से छुटकारा पाने के लिए सघर्ष करने वाला की एकमात्र आशा है।"[1]

(६) देश की रक्षा करना—अनुच्छेद १३३ मे लिखा है कि 'देश की रक्षा करना प्रत्येक रूसी नागरिक का कर्तव्य है। देशद्रोह, देश के प्रति भक्ति की शपथ का उल्लघन, शत्रुओं से जा मिलना, राज्य की सनिक शक्ति को हानि पहुँचाना और सोवियत रूस के भेद शत्रु देशों को बताना सबसे अधिक निन्दनीय अपराध है और उसके लिए अधिक से अधिक कठोर दण्ड मिलेगा।"

[1] V Karpinsky *The Law of the Soviet State* p 219-20

सम्बन्ध में डॉ० जिवागो के लेखक डॉ० बोरिस पास्टरनाक और स्टालिन की पुत्री स्वेतलाना के अनुभव इस बात के उदाहरण सर्वप्रसिद्ध हैं। व्यक्तियों के द्वारा साम्यवादी दल के अतिरिक्त अन्य किसी दल का गठन नहीं किया जा सकता। जहाँ तक धार्मिक स्वतन्त्रता का सम्बन्ध है सोवियत नागरिकों को धार्मिक आचरण की स्वतन्त्रता के स्थान पर धर्म विरोध की स्वतन्त्रता ही अधिक मात्रा में प्राप्त है। कार्टर के शब्दों में "ईश्वर में आस्था रखने वाले व्यक्तियों के लिए साम्यवादी दल की सदस्यता या शासन के उच्च पद प्राप्त करना असम्भव है।"[1] इसी प्रकार व्यक्तिगत जीवन तथा घरों की स्वतन्त्रता केवल साम्यवाद के समर्थकों को ही प्राप्त है। इन सबके अतिरिक्त सोवियत रूस में संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों के लिए न्यायालय के संरक्षण की व्यवस्था नहीं है और इनके अभाव में इन अधिकारों का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। उपरोक्त विवेचना के आधार पर बेन्सोड लिखता है कि 'सोवियत संविधान द्वारा प्रदत्त विभिन्न अधिकार पूर्णतया महत्त्वहीन हैं, क्योंकि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को राज्य द्वारा नियमित और नियन्त्रित किया जाता है।'"

सोवियत अधिकार पत्र के सम्बन्ध में व्यक्त किये गये ये दोनों ही दृष्टिकोण त्रुटिपूर्ण और अतिरंजित हैं। वस्तुतः यह अधिकार पत्र न तो पृथ्वी पर स्वर्ग उतार कर लाया है जैसा कि साम्यवादी विचारक कहते हैं और न ही यह नितान्त महत्त्वहीन है, जैसा कि पाश्चात्य लेखकों द्वारा बतलाया गया है। सोवियत संविधान द्वारा प्रदत्त आर्थिक अधिकार वास्तविक और निश्चित रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। ये अधिकार सोवियत संविधान के निर्माताओं द्वारा अपनाये गये रचनात्मक दृष्टिकोण के परिचायक हैं और इस दृष्टि से सोवियत संविधान अन्य संविधानों का मार्गदर्शन करता है। लेकिन सोवियत संविधान द्वारा प्रदत्त नागरिक अधिकारों और स्वतन्त्रताओं का विशेष महत्त्व नहीं है। इन अधिकारों का उपभोग एक स्वतन्त्र समाज में ही किया जा सकता है लेकिन सोवियत समाज एक स्वतन्त्र समाज होने के बजाय एक नियन्त्रित समाज है।

सोवियत अधिकार पत्र को महत्त्वहीन कहने के बजाय विशिष्ट ही कहना होगा जो अन्य अधिकार पत्रों की तुलना में नागरिक अधिकारों की कम, लेकिन आर्थिक अधिकारों की अधिक प्रभावी व्यवस्था करता है।

प्रश्न

१ सोवियत संघ के संविधान में नागरिकों के प्रमुख अधिकारों और कर्तव्यों का आलोचनात्मक वर्णन कीजिए। (आगरा, १९६४, ६७, ७०, लखनऊ, १९६६, ६८, जीवाजी, १९६६ ७०, विक्रम, १९७२)

1 It is impossible for believers to be admitted to the Communist Party or to important position in the government
—Carter and others, *The Government of the Soviet Union*, p 25

3

सघात्मक व्यवस्था
(FEDERAL SYSTEM)

"सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ सोवियत राष्ट्रो का भ्रातृ भावना से पूर्ण परिवार है। इसका सगठन स्वैच्छिक है और यह समानता पर आधारित है।"[1] —कार्पिसकी

सोवियत रूस मे सघ की स्थापना का कारण

साम्यवादी विचारधारा सघवाद की आलोचक है और मार्क्स, ऐंजिल्स, लेनिन और स्टालिन आदि साम्यवादी विचारको ने सघवाद को पूजीवादी व्यवस्था के अनुकूल तथा समाजवादी व्यवस्था के हितो के विरुद्ध बताया है। मार्क्स प्रौधा और और फोरियर के आर्थिक सघवाद का कटु आलोचक था और लेनिन स्विस सघ की दुर्बलता से परिचित होने के कारण सघवाद के विरुद्ध था। १६१३ मे उसने लिखा था कि "हम सिद्धा तत सघवाद का विरोध करते हैं। यह आर्थिक ब धनो को शिथिल करता है। यह एक राज्य के लिए अनुपयुक्त प्रणाली है।"[2]

लेकिन सिद्धान्त रूस मे सघीय व्यवस्था के विरुद्ध होते हुए भी इन साम्यवादी नेताओ को परिस्थितियो स बाध्य होकर सोवियत रूस के लिए सघीय व्यवस्था को अपनाना पडा। सोवियत रूस मे सदैव स जाति भाषा और राष्ट्रीयता की विभिन्नताएँ रही हैं लेकिन क्राति पूर्व की जार सरकार इन विभिन्नताओ के प्रति असहिष्णु थी और उसके द्वारा सभी व्यक्तियो पर रूसी भाषा और सस्कृति लादने का प्रयत्न किया गया जिसके परिणामस्वरूप विद्रोह हुए और जार सरकार

1 "The U S S R is a fraternal family of Soviet nations united voluntarily and on the basis of equality
—Karpinsky (Quoted from Ogg F A *European Govt and Politics* p 837)

2 "We are against the Federation on principle it weakens the economic ties it is an unfit type for one state —*Lenin*

ने अत्यधिक शक्ति के बल पर कम से कम तात्कालिक रूप मे इन विद्रोहो को दबा दिया।

रूस मे समाजवादी क्राति के समथको की प्रारम्भ से ही इन सास्कृतिक आन्दोलनो के प्रति सहानुभूति थी और वे सास्कृतिक अल्पसख्यको पर जारशाही द्वारा किये गये अत्याचारो के विरोधी थे। लेनिन आदि क्राति के नेताओ द्वारा भी इस बात को समझ लिया गया कि यदि रूस मे विद्यमान सास्कृतिक विविधताओ को स्वीकार कर लिया गया, तो इससे रूस की नवीन व्यवस्था को सुदृढता प्राप्त होगी। अत व्यावहारिक दृष्टि से उन्होने सघवाद को अपना लिया। लेकिन सघवाद साम्यवादी व्यवस्था का सदैव के लिए आदश नही है और लेनिन ने स्पष्ट रूप से कहा था कि 'सघवाद केवल पूण एकता के पथ की ओर एक सक्रान्तिकालीन व्यवस्था है।'[1] इस प्रकार राष्ट्रीयता की समस्या को हल करने के लिए सघात्मकता को अपनाया गया।

सोवियत सघ की स्थापना—सोवियत सघ वतमान समय मे जिस रूप मे है, उसकी स्थापना एक ही चरण मे नही हुई वरन अनेक स्थितियो से गुजरकर उसने अपने वतमान स्वरूप को प्राप्त किया है। जुलाई १९१८ मे अपनाये गये सविधान द्वारा 'सोवियत समाजवादी सघीय रूसी गणराज्य' की स्थापना की गयी थी। १९२२ मे तीन अन्य गणराज्य (वाइलो रूस, यूक्रेन और ट्रासकाकेशिया) इसमे सम्मिलित हो गये। इसके बाद १९२४ मे ऊजबेक और तुर्कमान व १९२९ मे ताजिक भी इस सघ मे सम्मिलित हो गये। तदुपरान्त एशियन गणराज्य भी इसमे सम्मिलित हुए और इसका नाम 'सोवियत समाजवादी गणराज्यो का सघ' पड गया। १९४० मे लिथूआनिया, लैटविया और एस्टोनिया ने सघ मे प्रवेश की आज्ञा मांगी जो उन्हे दे दी गई और सोवियत सघ १६ गणराज्यो का सघ हो गया। परन्तु १९५४ मे कार्लो फिनिश रिपब्लिक को गणराज्य नही रखा गया और सोवियत सघ मे १५ गणराज्य रह गये।

सोवियत सघ की इकाइयाँ—सामान्यतया एक सघ राज्य मे एक ही प्रकार की इकाइयाँ होती हैं लेकिन सोवियत सघ मे ४ प्रकार की इकाइयाँ हैं। ये हैं—सघीय गणराज्य (Union Republics) स्वायत्त गणराज्य (Autonomous Republics), स्वायत्त प्रदेश (Autonomous Regions) और राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas)। इन चार प्रकार की इकाइयो का निर्माण राष्ट्रीयताओ और सास्कृतिक विविधताओ की समस्या को हल करने के लिए किया गया है। सोवियत सघ मे १५ सघीय गणराज्य हैं। इनमे से कुछ मे, विशेषतया रूसी गणराज्य मे, विविध राष्ट्रीयताएँ

[1] "Federation is only a transitional form on the road to complete unity —Lenin, *Original Thesis on the National and Colonial Questions*

और प्रजातियाँ है जिनके महत्त्व का स्वीकार करते हुए उन्हे स्वायत्त शासन सम्बन्धी अधिकार प्रदान करना आवश्यक समझा गया। अत इन सघीय गणराज्यो म ही स्वायत्त गणराज्यो, स्वायत्त प्रदेशो और राष्ट्रीय क्षत्रो की व्यवस्था की गई है।

सोवियत सघ मे निम्नलिखित १५ सघीय गणराज्य हैं

१ रूसी सोवियत सघात्मक समाजवादी गणराज्य।
२ यूक्रेनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।
३ बाइलो-रशियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।
४ उजबेग सोवियत समाजवादी गणराज्य।
५ कजाख सोवियत समाजवादी गणराज्य।
६ जार्जियन सोवियत सामाजवादी गणराज्य।
७ एजरबैजान सोवियत समाजवादी गणराज्य।
८ लिथूनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।
९ माल्डेवियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।
१० लैटवियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।
११ किरगीज सोवियत समाजवादी गणराज्य।
१२ ताजिक सोवियत समाजवादी गणराज्य।
१३ आर्मेनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।
१४ तुर्कमान सोवियत समाजवादी गणराज्य।
१५ एस्टोनियन सोवियत समाजवादी गणराज्य।

सोवियत सघ मे २० स्वायत्त गणराज्य हैं, इनमे से १६ सोवियत सघात्मक गणराज्य मे हैं, जार्जियन मे २ स्वायत्त गणराज्य हैं और ऊजबेक तथा एजरबैजान मे एक एक स्वायत्त गणराज्य है। स्वायत्त गणराज्यो के भी अपने अलग सविधान हैं और उन्हे अपने क्षेत्र मे स्वायत्त शासन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हैं।

सोवियत सघ मे ८ स्वायत्त प्रदेश हैं, इनम से ५ रूसी सघात्मक गणराज्य म और एक-एक एजरबजान, जार्जिया और ताजिकस्तान मे है। सोवियत सघ मे १० राष्ट्रीय प्रदश हैं जो सभी रूसी सघात्मक गणराज्य मे हैं। स्वायत्त प्रदेशो और राष्ट्रीय क्षेत्रो को अपने आन्तरिक क्षेत्रो मे स्वायत्त शासन सम्बन्धी पर्याप्त अधिकार प्राप्त हैं।

सोवियत सघ मे सघात्मक लक्षण
(Federal Features in Soviet Union)

सोवियत सविधान के अनुच्छेद १३ मे कहा गया है कि 'सोवियत समाजवादी गणराज्यो का सघ एक सघात्मक राज्य है जो कि समान सोवियत समाजवादी

गणराज्यों की स्वेच्छा के आधार पर बना हुआ है।"[1] सोवियत संघ के संविधान में संघात्मक व्यवस्था के निम्नलिखित लक्षण देखे जा सकते हैं

(१) **लिखित और कठोर संविधान**—सोवियत संघ में संघ राज्य का प्रथम लक्षण लिखित और कठोर संविधान के रूप में पाया जाता है। सोवियत रूस का संविधान लिखित है और इसमें १३ अध्याय तथा १४६ अनुच्छेद हैं। यह संविधान इस दृष्टि से कठोर है कि इसमें सर्वोच्च सोवियत के प्रत्येक सदन द्वारा उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पारित प्रस्ताव के आधार पर ही संशोधन किया जा सकता है। सोवियत संघ में सिद्धान्तत संविधान की सर्वोच्चता को भी स्वीकार किया गया है।

(२) **शक्तियों का विभाजन**—संघीय शासन की एक प्रमुख विशेषता केन्द्र तथा इकाइयों में शक्तियों का विभाजन होती है और सोवियत संविधान में इसे अपनाया गया है। शक्ति विभाजन के सम्बन्ध में 'गणना और अवशेष' के सिद्धान्त को अपनाते हुए संविधान के अनुच्छेद १४ में सोवियत संघ की केन्द्रीय सरकार के क्षेत्राधिकार का वर्णन किया गया है। संघ की केन्द्रीय सरकार के क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत निम्नलिखित विषय आते हैं

(१) अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र में सोवियत संघ का प्रतिनिधित्व, दूसरे देशों के साथ सन्धियाँ करना, उनका अनुसमर्थन करना या उन्हें रद्द करना। केन्द्र को वह नीति तथा नियम निर्धारित करने का अधिकार भी प्राप्त है, जिसके अनुसार सोवियत संघ के एकक गणराज्य विदेशी राज्यों के साथ सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।

(२) युद्ध तथा शान्ति विषयक प्रश्नों का निपटारा करना।

(३) सोवियत संघ में नवीन गणराज्यों का सम्मिलित करना। इस शक्ति के आधार पर ही १९४० में सर्वोच्च सोवियत के द्वारा मोल्डवियन, लिथुआनियन, लाटवियन और एस्टोनियन गणराज्यों को सोवियत संघ में सम्मिलित किया गया।

(४) संघीय संविधान का पालन करना तथा यह देखना कि एकक गणराज्यों के संविधान उसके अनुकूल हैं।

(५) संघीय गणराज्यों की सीमाओं में परिवर्तन करना तथा उनके क्षेत्र का पुनर्निर्धारण करना।

(६) नये राज्य क्षेत्रों और प्रदेशों तथा संघीय गणराज्यों के अन्तर्गत स्वायत्त गणराज्यों एवं स्वायत्त प्रदेशों के निर्माण की स्वीकृति देना।

(७) राज्य के एकाधिकार के आधार पर विदेशों के साथ व्यापार करना।

(८) सोवियत संघ के प्रतिरक्षा दल का गठन करना, सैन्य संचालन करना तथा संघीय गणराज्यों के सैन्य संगठन विषयक सिद्धान्तों का निर्धारण करना।

[1] 'The *Union of Soviet Socialist Republics* is a *federal state formed* on the basis of a voluntary union of equal Soviet Socialist Republics
—*Article 13 of the U S S R Constitution*

(९) बाहरी तथा आंतरिक शत्रुओं से राज्य की सुरक्षा व्यवस्था करना।

(१०) सोवियत संघ की आर्थिक योजना निश्चित करना।

(११) सोवियत संघ के संचित राज्य बजट (Consolidated State Budget) को मान्य करना, तथा उन करों और राजस्वों को स्वीकृत करना, जो संघीय गण राज्यों और स्थानीय बजटों को जाते हैं।

(१२) कृषि कार्यों बंकों, औद्योगिक और व्यावसायिक कार्यों का प्रबन्ध करना।

(१३) संचार तथा यातायात का प्रबन्ध।

(१४) मुद्रणालय और ऋण व्यवस्था का संचालन।

(१५) राजकीय बीमे का संगठन।

(१६) भूमि, खनिज पदार्थ, जंगल, नदी तथा जलाशयों के उपयोग के लिए नियमों का निर्माण करना।

(१७) शिक्षा और सार्वजनिक स्वास्थ्य से सम्बन्धित आधारभूत सिद्धान्तों को निर्धारित करना।

(१८) राष्ट्रीय आर्थिक आंकड़ों की सामान्य व्यवस्था का गठन करना।

(१९) श्रमिकों से सम्बन्धित कानून के आधारभूत सिद्धान्तों को निर्धारित करना।

(२०) न्यायिक पद्धति और प्रक्रिया तथा दीवानी और फौजदारी संहिता से सम्बन्धित कानूनों का निर्धारण करना।

(२१) संघ की नागरिकता तथा विदेशियों के अधिकारों से सम्बन्धित कानूनों का निर्माण करना।

(२२) पारिवारिक जीवन से सम्बन्धित कानूनों के आधारभूत सिद्धान्तों का निर्धारण करना।

(२३) ऋण लेना या देना।

(२४) सोवियत संघ में लागू किये जाने वाले क्षमादान की घोषणा करना।

संविधान के द्वारा अवशेष शक्तियां संघीय गणराज्यों को प्रदान की गई हैं। संविधान के १५वें अनुच्छेद में स्पष्ट उल्लेख है कि जो शक्तियाँ संविधान के १४वें अनुच्छेद के अनुसार केन्द्रीय सरकार को नहीं दी गई हैं उनका प्रयोग संघीय गण राज्य करेंगे।

(३) द्वि सदनीय विधानमण्डल—संघ राज्यों में ऐसी द्वि-सदनीय व्यवस्था प्रायः आवश्यक समझी जाती है, जिसके द्वितीय सदन में इकाइयों के आधार पर प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की गई हो। सर्वोच्च सोवियत के उच्च सदन (राष्ट्रीयताओं की सोवियत) में प्रत्येक संघीय गणराज्य द्वारा ३२ प्रत्येक स्वायत्त गणराज्य द्वारा ११, प्रत्येक स्वायत्त प्रदेश द्वारा ५ और प्रत्येक राष्ट्रीय क्षेत्र द्वारा १ प्रतिनिधि भेजा जाता है।

(४) दोहरी नागरिकता—अन्य संघ राज्यों के समान ही सोवियत संघ में

दोहरी नागरिकता की व्यवस्था की गई है। सविधान के अनुच्छेद २१ के अनुसार प्रत्येक नागरिक सोवियत सघ और अपने गणराज्य दोनो का नागरिक होगा।

(५) सघीय गणराज्यो को अलग सविधान बनाने का अधिकार—अनुच्छेद १६ के अनुसार प्रत्येक सघीय गणराज्य को अपना अलग सविधान बनाने का अधिकार है परन्तु यह सविधान सोवियत सघ के सविधान के अनुकूल होना चाहिए। स्वायत्त गणराज्यो को भी अपने अलग सविधान का अधिकार दिया गया है।

(६) सघीय गणराज्यों को प्रदत्त विशेष अधिकार—सोवियत सविधान के द्वारा सघ की इकाइयो अर्थात् सघीय गणराज्ा को कुछ ऐसे विशेष अधिकार भी प्रदान किये गये हैं, जो अधिकार सामान्यतया सघ राज्यो की इकाइयो को प्राप्त नही होते हैं और न ही विश्व के अन्य सघ राज्यो की इकाइयो को प्राप्त हैं। इकाइयों को प्राप्त ये विशेष अधिकार निम्न है :

(i) राज्यो का सघ से अलग होने का अधिकार—अनुच्छेद १७ के अनुसार प्रत्येक सघीय गणराज्य को सघ से अलग होने का अधिकार दिया गया है। सयुक्त राज्य अमरीका या भारत के सघ म इकाइयो को इस प्रकार का अधिकार प्राप्त नही है।

(ii) राज्यो की सीमाओं में उनकी सहमति के बिना परिवर्तन नहीं—अनुच्छेद १८ के अनुसार राज्यो की सीमाओ म उनकी सहमति के बिना परिवर्तन नही किया जा सकता।

(iii) राज्यो को विदेशो से सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार—सघ राज्यो के अन्तगत सामान्यत विदेशो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का काय सिर्फ केन्द्रीय सरकार के द्वारा ही किया जा सकता है लेकिन सोवियत सविधान म राज्यो को भी यह अधिकार प्राप्त है। सविधान के अनुच्छेद १८ अ के अनुसार प्रत्येक गणराज्य को विदेशो से सीधे सम्बन्ध स्थापित करने, उनसे सन्धियां करने तथा अपने प्रतिनिधि भेजने और उनके प्रतिनिधियो को अपने राज्य म रखने का अधिकार दिया गया है। इसी अधिकार के अन्तगत श्वेत रूस और यूक्रेन के सघ गणराज्यो ने सयुक्त राष्ट्र सघ म पृथक प्रतिनिधित्व प्राप्त किया है।

(iv) राज्यों को पृथक सेनाएँ रखने का अधिकार—सामान्यत सघ राज्य मे सेना रखने का अधिकार केवल केन्द्र का होता है, परन्तु सोवियत सविधान के अनुच्छेद १८ ब के अनुसार प्रत्येक गणराज्य को अपनी पृथक सेना रखने का अधिकार दिया गया है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक गणराज्य का अपना अलग झण्डा होता है और उसे अपनी भाषा मे शासन काय चलाने का अधिकार है। केन्द्रीय प्रेजीडियम मे प्रत्येक सघीय गणराज्य के प्रेजीडियम का अध्यक्ष शामिल होता है।

सोवियत सविधान और शासन व्यवस्था के उपरोक्त लक्षणो के आधार पर

यह सोचा जा सकता है कि सोवियत रूस एक वास्तविक सघीय राज्य है। लेकिन इस सम्ब ध म स्थिति का एक अ य पक्ष भी है।

सोवियत सघ मे एकात्मक तत्त्व (सघात्मक व्यवस्था की आलोचना)

सोवियत सविधान म यदि एक ओर कुछ सघात्मक तत्त्व है तो दूसरी ओर अनक एकात्मक तत्त्व भी हैं, जिनके आधार पर यह कहा जाता है कि सोवियत सघ एक वास्तविक सघ राज्य नही हैं। सोवियत सविधान और शासन के प्रमुख एकात्मक तत्त्व निम्न ह

(१) व्यवहार मे सविधान की सर्वोच्चता नहीं— सघीय शासन का एक प्रमुख तत्त्व सविधान की सर्वोच्चता होती है जिसका तात्पय है कि सघीय शासन और इकाइया के शासन, दोनो की ही शक्ति सविधान स मर्यादित होती है और किसी के भी द्वारा इसका उल्लघन नही किया जा सकता। सोवियत सघ मे सिद्धान्तत तो सविधान की सर्वोच्चता की घोषणा की गयी है, लेकिन इसके साथ ही सवहारावग के अधिनायकत्व की धारण को सोवियत रूस का सर्वोच्च मागदशक सिद्धा त घोषित किया गया है। वस्तुत सवहारावग का अधिनायकत्व ही सब कुछ है और सविधान, जैसा कि मोलोतोव ने कहा था 'समाजवाद के हितो तथा सवहारा तानाशाही को दृढ बनाने के लिए केवल एक साधन है।" सोवियत रूस मे सविधान को भी विशेष और अपेक्षाकृत कम महत्त्वपूण अर्थो म ग्रहण किया गया है और यह स्थिति शासन तथा सघात्मकता दोना के ही प्रतिकूल है।

(२) सर्वोच्च यायालय को सविधान की व्याख्या का अधिकार नहीं— विश्व के अ य सघ राज्यो मे सर्वोच्च यायालय को के द्र तथा इकाइया के विवादो को निबटाने तथा सविधान की व्याख्या करन की शक्ति दी जाती है पर तु सोवियत सघ मे सर्वोच्च यायालय को इस प्रकार की शक्ति नही दी गई है। वहा पर सविधान की व्याख्या का अधिकार प्रेजीडियम को प्राप्त है।

(३) सविधान के सशोधन मे इकाइयो को भाग नहीं— इस बात को सव सम्मत मा यता प्राप्त है कि सघ राज्य का सविधान कठोर होता है और सघ राज्य के स दभ मे सविधान की कठोरता का तात्पय यह है कि के द्रीय सरकार या इकाइयो की सरकारें इन दोनो म से किसी एक के ही द्वारा सविधान मे परिवतन नही किया जा सकता। लकिन सोवियत सविधान म अकेली सर्वोच्च सोवियत के ही द्वारा परि वतन किया जा सकता है। इस सम्ब ध म इकाइयो को कोई भाग प्राप्त नही है। भारत, अमरीका और अ य सभी सघ राज्यों म सविधान द्वारा इकाइयो को प्रदत्त शक्तियाँ सुरक्षित है और उनकी सहमति क बिना इनम परिवतन नही किया जा सकता। लेकिन सोवियत सघ म इकाइयो क समस्त अधिकार सर्वोच्च सोवियत अर्थात केन्द्रीय सरकार की दया पर निभर करते हैं। यह स्थिति सघात्मकता के नितान्त प्रतिकूल है।

(४) शक्तिशाली केन्द्र—सविधान के अनुच्छेद १४ म केन्द्र को जो शक्तिया दी गई हैं, वे असीम हैं और केन्द्र को अत्यन्त शक्तिशाली बना देती हैं। इस प्रकार शक्ति विभाजन स्पष्ट रूप से केन्द्र के पक्ष म है। माइकल टी० फ्लोरेंस्की के शब्दो म "सविधान द्वारा केन्द्रीय सरकार को प्रदत्त इन व्यापक शक्तियो ने सोवियत सघ को एक केन्द्रीकृत और एकात्मक राज्य का रूप प्रदान कर दिया है।"[1]

(५) गणराज्यो के सविधानो पर केन्द्र का नियन्त्रण—सघीय गणराज्यो को यद्यपि अपने पृथक सविधान के निर्माण का अधिकार है परन्तु अनुच्छेद १६ म यह स्पष्ट कर दिया गया है कि यह सविधान केन्द्रीय सविधान के पूर्णतया अनुकूल होना चाहिए।

(६) गणराज्यो का छोडने का अधिकार नाममात्र का है—यद्यपि सविधान म सघीय गणराज्यो को सघ से पृथक होने का अधिकार दिया गया है परन्तु यह अधिकार केवल शब्दो म ही है। सघ से अलग होने की बात देशद्रोह समझी जाती है और व्यवहार म यह सम्भव नही है। अब तक कोई भी राज्य सघ से अलग नही हुआ है। वस्तुस्थिति के सम्बन्ध म डा फाइनर ने ठीक ही लिखा है कि 'सघ से पृथक होने की बात तो दूर रही सघीय गणराज्यो को असन्तोष की ध्वनि करने की अनुमति भी प्राप्त नहीं है।"[2]

(७) अखिल सघ के मन्त्रालयो का सघीय गणराज्यो के मन्त्रालयों पर नियन्त्रण—सोवियत सघ के अन्तर्गत केन्द्र म दो प्रकार के मन्त्रालय है, (१) अखिल सघीय मन्त्रालय तथा (२) सघीय गणराज्यीय मन्त्रालय। अखिल सघीय मन्त्रालय उन विषयो का प्रशासन करते है, जो अनन्य रूप से सघीय सरकार के क्षेत्राधिकार मे आते है। सघीय गणराज्यिय मन्त्रालय उन विषयो का प्रवन्ध करते हैं, जो सघीय गणराज्यो के अधिकार क्षेत्र म आते है और इनके द्वारा गणराज्यो म स्थित अपने तदनुरूप मन्त्रालयो पर नियन्त्रण रखा जाता है। इस प्रकार गणराज्यो के शासन पर केन्द्रीय एजेन्सी द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है जो सघीय शासन की धारणा के नितान्त विरुद्ध है।

(८) सघीय गणराज्यो के विशेष अधिकारो का कोई महत्त्व नहीं—यद्यपि सविधान के अनुच्छेद १८ अ और १८ ब के द्वारा सघीय गणराज्यो को विदेशो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने तथा अपनी पृथक सेना रखने का अधिकार दिया गया

[1] In the light of these vast and broadly ill defined powers it is not incorrect to describe the All Union Government of the U S S R as a colossus which bestrides the Russian world and makes the country a highly centralised and unitary State '—Florinsky Michael T *The Government of Continental Europe* p 85

[2] The Union Republics have never been allowed even to murmer much less secede

—Finer Herman *Govt of Greater European Powers*, p 819

है किन्तु वस्तुत इन अधिकारो का कोई महत्त्व नही है। सघीय गणराज्य विदेशो से साधारण महत्त्व के व्यापारिक सम्बन्ध ही स्थापित कर सक्ते हैं, राजनीतिक नही। इसी प्रकार सघ राज्यो के द्वारा अपने क्षेत्र म बहुत थोडी सी ही सेना रखी जा सकती है जो भारतीय और अमरीकी सघ के राज्यो की पुलिस शक्ति के समान है। वस्तुत सघीय गणराज्यो के ये अधिकार मात्र दिखावे के लिए है और सघीय गण राज्यो को विदेशो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार देकर सोवियत रूस ने सयुक्त राष्ट्र सघ म दो अतिरिक्त स्थान प्राप्त कर लिए ह। व्यवहार के अन्तगत गणराज्यो के सभी कार्यों पर केन्द्र की कडी दृष्टि रहती है और गणराज्य कन्द्रीय शासन तथा साम्यवादी दल की सर्वोच्च सत्ता की सहमति के बिना कुछ नही कर सकते।

(९) सघीय गणराज्यों की केन्द्र पर वित्तीय निर्भरता—सघीय गणराज्यो की केन्द्र पर वित्तीय निर्भरता ने भी उनकी स्थिति को बहुत निर्बल कर दिया है। समस्त करो तथा साधनो से लगभग सारी आय केन्द्रीय सरकार को होती है और वही यह निश्चित करती है कि कौन से कर तथा राजस्व के मद केन्द्र के पास रखे जायें, कौन से सघीय गणराज्यो को सापे जायें और कौन से स्थानीय सरकारो को दिये जायें। सघीय गणराज्यो की यह वित्तीय निर्भरता अन्य सघ राज्यो की इकाइयो की तुलना म बहुत अधिक है।

(१०) आर्थिक नियोजन—सोवियत सघ मे समस्त आर्थिक जीवन पर राज्य का नियन्त्रण है और राज्य ने आर्थिक नियोजन के माग को अपनाया हुआ है। यद्यपि सघीय गणराज्यो और स्वायत्त गणराज्यो के अपने अलग अलग योजना आयोग हैं और अपने अपने क्षेत्र की योजनाओ के निर्माण मे उनका हाथ रहता है, किन्तु अन्तिम रूप से समस्त योजनाओ को एकरूपता प्रदान करने की शक्ति सघ के योजना आयोग को प्राप्त है। सघीय सरकार अपनी इस शक्ति के माध्यम से राज्यो पर बहुत अधिक नियन्त्रण प्राप्त कर लेती है।

(११) साम्यवादी दल का एकछत्र प्रभुत्व—इन सबके अतिरिक्त सोवियत सविधान का सवप्रमुख एकात्मक तत्त्व साम्यवादी दल का एकछत्र प्रभुत्व है। सविधान के अनुच्छेद १२६ और १४१ के माध्यम से ऐसी व्यवस्था की गई है कि सोवियत रूस मे साम्यवादी दल के अतिरिक्त अन्य किसी दल का गठन नही किया जा सकता। यह तथ्य है कि साम्यवादी दल की सहमति के बिना केन्द्रीय या गणराज्यो के शासन के क्षेत्र मे कुछ भी नही किया जा सकता और साम्यवादी दल मे सत्ता का अत्यधिक केन्द्रीकरण और लौह अनुशासन है। सघीय गणराज्यो के साम्यवादी नेता केन्द्रीय नेताओ के पूणतया आधीन हैं। इसी कारण सविधान के द्वारा चाहे सघीय शासन की व्यवस्था की गई हो, व्यवहार म यह पूर्ण एकात्मक होकर रह गया है। प्रो० न्यूमन

ने इस स्थिति का अच्छा वर्णन करते हुए कहा है रूस मे संघ के केन्द्र प्रधान बनने का सबसे बड़ा कारण सर्वव्यापी साम्यवादी दल है जो पूर्ण रूप से केन्द्र प्रधान है और जिसमे एक बिन्दु मात्र भी संघीय व्यवस्था नहीं है। क्योंकि सारी नीतियों का निर्माण साम्यवादी दल के द्वारा होता है इसलिए यह बात महत्त्वहीन है कि रूस मे संघीय सरकार है अथवा नहीं संघवाद वास्तविक तभी हो सकता है, जबकि कम से कम नीतियों के निर्धारण मे इकाइयों को कुछ स्वायत्तता प्रदान की जाय परन्तु सोवियत संघ की एक दलीय व्यवस्था मे यह पूर्ण रूप से असम्भव है।"[1]

इस प्रकार यदि एक ओर सोवियत शासन म कुछ संघात्मक लक्षण है, तो दूसरी ओर अनेक एकात्मक लक्षण भी ह। वस्तुस्थिति यह है कि साम्यवादी नेताओं का संघात्मक व्यवस्था मे कभी भी विश्वास नही रहा है। उनके द्वारा संघात्मक व्यवस्था को एक आदश के रूप मे नही, वरन एक बाध्यकारी स्थिति के रूप मे अपनाया गया ह। इसी कारण सोवियत रूस की शासन व्यवस्था म संघात्मक तत्त्व सतही है और एकात्मक तत्त्व ही अधिक वास्तविक है। आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र म केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति निश्चित रूप से बहुत अधिक सबल है। डॉ० ह्वीयर, फाइनर, न्यूमन, ऑग और अन्य लगभग सभी लेखकों द्वारा इस मत का प्रतिपादन किया गया है कि सोवियत संविधान अमरीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और स्विटजरलैण्ड आदि राज्यों की भाँति पूर्ण संघीय प्रणाली की स्थापना नही करता है। संघवाद के अधिकारी विद्वान प्रो ह्वीयर लिखते हैं कि 'स्टालिन संविधान एक अर्द्ध संघीय प्रणाली की स्थापना करता है, जिसे संघीय शासन का उदाहरण नहीं कहा जा सकता।'[2] आग ने भी विचार व्यक्त किया है कि 'संघात्मकता के दिखावे के बावजूद सोवियत रूस में सत्ता का इतना अधिक केन्द्रीकरण है कि इसे संघात्मक व्यवस्था नहीं कहा जा सकता।'[3]

1 Most important of all, however is the all pervasive position of the Communist Party which is strictly centralist and without a spark of federalism Since all policy emanates from the Communist Party, it actually matters little whether there exists a federal form of government or not Federalism in order to be real must reserve to the component parts at least some autonomy in the realm of policy, but that is quite impossible in the one party state of Soviet Union'

—Robert Neumann, *European and Comparative Governments* p 581

2 The Stalin constitution sets up a quasi federal system and the same is not a working example of the Federal Govt

—K C Wheare *Federal Government*, p 27 28

3 Inspite of the form of federalism, centralism of authority in the U S S R is possibly equalled but hardly exceeded anywhere in the world In point of fact the system is not federal in any ultimate sense —F A Ogg *European Govt and Politics*, p 837

सोवियत रूस—एक सास्कृतिक सघ

आर्थिक और राजनीतिक क्षेत्र म सोवियत रूस मे अत्यधिक केन्द्रीकरण है, लेकिन जहाँ तक सास्कृतिक क्षेत्र का प्रश्न है, इकाइयो को इस क्षेत्र म पर्याप्त स्वायत्तता प्रदान की गई है। सोवियत रूस म १०० से अधिक राष्ट्रीयताएँ हैं और उनमे भाषा, प्रजाति तथा सस्कृति क भेद हैं। अत साम्यवादी नेताओ द्वारा सोवियत रूस के लोगो की भावनाओ को समझकर तदनुरूप आचरण किया गया है। सोवियत रूस एक सास्कृतिक सघ है यह बात निम्नलिखित तथ्यो के आधार पर कही जा सकती है

(१) साम्यवादी शासन के द्वारा जारशाही के अन्तगत राष्ट्रीयताओ पर लगे हुए सभी बधन समाप्त कर दिये गये हैं। जारशाही के अन्तगत रूसी राष्ट्रीयता को विशेष स्थिति प्राप्त थी, लेकिन साम्यवादी व्यवस्था म इसे समाप्त कर सभी राष्ट्रीयताओ की आधारभूत समानता का प्रतिपादन किया गया है।

(२) इस बात की चेष्टा की गई है सघ के क्षेत्र म रहने वाले राष्ट्रीय अल्पसख्यको व जातीय समूहो को विकास की पूरी सुविधाएँ प्राप्त हो।

(३) विविध राष्ट्रीयताओ को अधिक से अधिक सास्कृतिक स्वतन्त्रता प्रदान करने की दृष्टि से ही सोवियत सघ म चार प्रकार की इकाइयो की व्यवस्था की गई है। सामान्यतया सघ राज्यो मे इकाइयो का गठन भौगोलिक आधार पर किया जाता है। लेकिन सोवियत सघ म गणराज्यो का गठन राष्ट्रीयताओ के आधार पर किया गया है तथा उनके नाम भी उनम रहने वाले लोगो की राष्ट्रीयता के आधार पर ही रखे गये हैं। यूक्रेन, उजबेक और ताजिक गणराज्यो के नाम राष्ट्रीयता और जातीयता पर ही आधारित है।

(४) सभी गणतन्त्रो को भाषा सम्बन्धी स्वतन्त्रता भी प्राप्त है तथा इस बात का कोई प्रयत्न नही किया गया है कि सम्पूण सघ की भाषा एक हो। अनुच्छेद ४० म स्पष्ट कहा गया है कि न्यायालयो की कायवाही गणतन्त्रो की अलग अलग भाषाओ मे होगी। सघ के कानून व आदेश सघीय गणतन्त्रो म साधारणतया बोली जाने वाली भाषाओ म छापे जाते हैं।

इस प्रकार विविध इकाइयो के लोगो की सास्कृतिक स्वाधीनता के लिए कानून द्वारा उचित व्यवस्था की गयी है। राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र म सघवाद को अपनाया गया है। यह कहा जा सकता है कि **सोवियत सघ का सविधान राजनीतिक केन्द्रवाद का सास्कृतिक सघवाद से समन्वय करता है।**

प्रश्न

१ क्या आप इस मत से सहमत हैं कि सोवियत सघ एक वास्तविक सघ है? तक सहित उत्तर दीजिए। (आगरा, १९६५)

२ क्या आप इस मत से सहमत हैं कि सोवियत सघ एक वास्तविक सघ नही है? तक सहित उत्तर दीजिए। (आगरा, १९७०)

३ सोवियत सविधान के अन्तगत सघ व इकाइयो के सम्बन्धो की विवेचना कीजिए।
(कानपुर, १९६४, लखनऊ, १९६४, ६६, ७१)

४ 'सोवियत सविधान दिखावे म सघात्मक किन्तु वास्तव म एकात्मक है।' विवेचना कीजिए। (लखनऊ १९६५ ६६, ६८)

५ सोवियत सघवाद की प्रकृति की व्याख्या कीजिए।
(जीवाजी, १९६९, विक्रम, १९७१)

६ सोवियत सविधान की विभिन्न सघीय विशेषताओ का आलोचनात्मक दृष्टिकोण से उल्लेख कीजिए। (विक्रम, १९६६)

७ 'सोवियत सघ का सविधान राजनीतिक केन्द्रवाद का सास्कृतिक सघवाद से समन्वय करता है।' स्पष्टीकरण और समीक्षा कीजिए। (राजस्थान, १९७३)

अपने सदन के अधिवेशनों की अध्यक्षता करते हैं तथा उसकी कार्यवाही और प्रक्रिया का संचालन करते हैं। सर्वोच्च सोवियत के किसी भी सदन के सभापति को वह गौरव, प्रतिष्ठा और विशेषाधिकार प्राप्त नहीं हैं जो अन्य देशों के सदनों के अध्यक्ष, विशेषकर निम्न सदन के अध्यक्ष, को प्राप्त हैं।

सर्वोच्च सोवियत की शक्तियां तथा कार्य

सोवियत संविधान के अनुच्छेद ३० में उल्लेख है कि 'सर्वोच्च सोवियत राज्य की शक्ति का सर्वोच्च अंग है।' सर्वोच्च सोवियत इस दृष्टि से सर्वोच्च है कि इसे कानून निर्माण की अनन्य शक्ति प्राप्त है और शासन कार्य से सम्बन्धित अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाओं के सदस्य (मन्त्रिपरिषद और प्रेजिडियम के सदस्य) सर्वोच्च सोवियत के द्वारा निर्वाचित होते तथा इसी के प्रति उत्तरदायी हैं।

सर्वोच्च सोवियत की शक्तियों तथा कार्यों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) विधायी शक्तियां—सोवियत संविधान के अनुच्छेद १४ में संघीय सरकार के क्षेत्राधिकार का वर्णन किया गया है और संघीय क्षेत्राधिकार के समस्त विषयों पर एकमात्र सर्वोच्च सोवियत को कानून निर्माण की शक्ति प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद ३२ में लिखा है कि, 'सोवियत संघ की विधायी शक्ति अनन्य रूप से सर्वोच्च सोवियत के पास है।'[1] सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्मित कानूनों पर किसी को भी निषेधाधिकार के प्रयोग की शक्ति प्राप्त नहीं है। इन कानूनों को सोवियत रूस के उच्चतम न्यायालय द्वारा भी रद्द नहीं किया जा सकता है, क्योंकि संविधान की व्याख्या करने की शक्ति सोवियत संघ के उच्चतम न्यायालय के पास नहीं है। यह शक्ति तो सोवियत रूस में प्रेजिडियम के पास ही है। सर्वोच्च सोवियत द्वारा पास किये गये कानून सारे देश पर लागू होते हैं। संविधान के अनुच्छेद २० में उल्लेख है कि यदि संघ की सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्मित कानून और इसके गणराज्यों की सर्वोच्च सोवियत (राज्यों के विधान मण्डल) द्वारा निर्मित कानूनों में किसी प्रकार का विरोध उत्पन्न हो जाय, तो संघ की सर्वोच्च सोवियत का कानून मान्य समझा जायगा और राज्यों के कानून को मान्यता नहीं मिलेगी।[2]

सर्वोच्च सोवियत के अवकाश काल में प्रेजिडियम द्वारा जारी किये गये अध्यादेशों का अनुमोदन सर्वोच्च सोवियत द्वारा किया जाना आवश्यक है।

प्रेजिडियम अपनी इच्छा से या किसी संघीय गणराज्य की मांग पर किसी

1 The legislative power of the U S S R is exercised exculsively by the Supreme Soviet of the U S S R

—*Article 32 of the Soviet Constitution*

2 In the event of divergence b tween the law of a Union Republic and a law of the Union the Union law shall prevail

—*Article 20*

कानून पर जनमत संग्रह करा सकती है, परन्तु अभी तक किसी भी कानून पर जनमत संग्रह नहीं हुआ है। वास्तव में संग्रह तभी हो सकता है, जबकि साम्यवादी दल व सर्वोच्च नेता चाहें और समस्त कानून निर्माण साम्यवादी दल की इच्छानुसार ही होता है, अतः जनमत संग्रह की आवश्यकता नहीं रहती।

(२) **संविधान में संशोधन करने का अधिकार**—सर्वोच्च सोवियत को रूस के संविधान में संशोधन करने का अधिकार प्राप्त है और उसके द्वारा यह कार्य अकेले ही किया जा सकता है। संवैधानिक संशोधन की पद्धति सरल है और अनुच्छेद १४६ के अनुसार सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदन पृथक्-पृथक् अपने उपस्थित और मत देने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित कर संविधान में संशोधन कर सकते हैं।

सर्वोच्च सोवियत का यह देखने का भी अधिकार है कि संघीय गणराज्यों की इकाइयों के संविधान तथा कानून समस्त सोवियत संघ के संविधान तथा कानूनों के अनुकूल हों।

(३) **वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन और सुरक्षा सम्बन्धी शक्ति**—सर्वोच्च सोवियत को ही सोवियत संघ के वैदेशिक सम्बन्धों को नियमित एवं नियन्त्रित करने का अधिकार है। वह यह निर्णय करता है कि अन्तरराष्ट्रीय मामलों में सोवियत संघ किस सीमा तक भाग ले। युद्ध तथा शान्ति के प्रश्नों का निर्णय, विदेशी राज्यों से की जाने वाली सन्धियों की सम्पुष्टि, युद्ध की घोषणा और देश की रक्षा हेतु सेना के संगठन का अधिकार भी सर्वोच्च सोवियत को ही प्राप्त है। वह उस सामान्य प्रणाली का भी नियन्त्रण करती है जिसके अनुसार संघीय गणराज्यों को विदेशी राज्यों के साथ अपने सम्बन्धों का संचालन करना है। देश की सुरक्षा केन्द्रीय सरकार का विषय है। अतः सर्वोच्च सोवियत ही संघ के रक्षा साधनों की व्यवस्था करती है, सशस्त्र बलों का नियन्त्रण तथा संचालन करती है।

(४) **वित्तीय शक्ति**—सर्वोच्च सोवियत को वित्तीय क्षेत्र में व्यापक शक्ति प्राप्त है। सर्वप्रथम सर्वोच्च सोवियत समस्त रूसी संघ के लिए एक 'संचित आय व्ययक' (Consolidated Budget) तैयार करती है। वही यह निर्णय करती है कि राजस्व और कर की कौन सी मदें संघ को जायेंगी और कौन सी संघीय गणराज्यों को प्राप्त होंगी। द्वितीय, सर्वोच्च सोवियत संघ की आर्थिक योजनाओं को अपनी अनुमति देती है और राज्य के एकमात्र अधिकार के आधार पर विदेशी व्यापार का संचालन करती है। तृतीय, यह मुद्रा, उधार लेन और देन की व्यवस्था का निर्देशन और राज्य बीमे का संगठन देखती है। चतुर्थ संघ के क्षेत्राधिकार में जो वस्तु तथा औद्योगिक, कृषि और व्यापार सम्बन्धी उद्यम तथा संस्थाएँ आती हैं, उनके प्रशासन की देखभाल यही करती है। पंचम यह खनिज पदार्थ, वन और नदियों के प्रयोग के बारे में मूल सिद्धान्त निर्धारित करती और यातायात तथा परिवहन प्रशासन की देखभाल करती है।

(५) **संघीय व्यवस्था के सम्बन्ध में शक्ति**—अनुच्छेद १४ के अनुसार सर्वोच्च सोवियत को यह अधिकार है कि वह नवीन गणराज्यों को संघ में प्रवेश प्रदान कर सके। संघीय गणराज्यों के अन्दर नये स्वायत्त गणराज्यों तथा स्वायत्त प्रदेशों का निर्माण भी सर्वोच्च सोवियत की अनुमति से ही किया जा सकता है।

(६) **नियुक्ति और निर्वाचन सम्बन्धी शक्ति**—सर्वोच्च सोवियत की चुनाव सम्बन्धी शक्ति बहुत व्यापक है। विश्व के किसी भी अन्य देश के विधानमण्डल को इतने अधिक पदाधिकारियों के चुनाव नहीं करने होते। सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदन अपनी संयुक्त बैठक में सोवियत संघ के प्रेजिडियम, मन्त्रिपरिषद, सर्वोच्च न्यायालय तथा अन्य न्यायाधीशों और प्रोक्यूरेटर जनरल का निर्वाचन करते हैं। प्रेजिडियम और मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत के ही प्रति उत्तरदायी होते हैं। परन्तु सर्वोच्च सोवियत के ये कार्य केवल औपचारिक हैं और वस्तुतः इन कार्यों का सम्पादन *साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा किया जाता है।*

(७) **अन्वेषण सम्बन्धी शक्ति**—सर्वोच्च सोवियत को कुछ अन्वेषण सम्बन्धी शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। वह सोवियत संघ की किसी भी कार्यवाही या आय व्यय परीक्षण के लिए आयोग नियुक्त कर सकती है और सभी सरकारी अधिकारियों के लिए आवश्यक है कि वे इस प्रकार के आयोग को जाँच कार्य में सभी आवश्यक सहायता दें।

सोवियत संविधान के निर्माताओं का शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त में विश्वास नहीं था, अतः सर्वोच्च सोवियत को न केवल विधायी, वरन् प्रशासनिक और न्यायिक क्षेत्र में भी व्यापक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं। सिद्धान्ततः सर्वोच्च सोवियत को ब्रिटिश संसद के समान प्रभुताधारी कहा जा सकता है।

सर्वोच्च सोवियत की वास्तविक स्थिति

संविधान द्वारा सर्वोच्च सोवियत को सोवियत राजसत्ता का सर्वोच्च अंग तथा एकमात्र विधि निर्मात्री संस्था घोषित किया गया है। संविधान द्वारा सर्वोच्च सोवियत को प्रदत्त शक्तियों की सूची पर्याप्त व्यापक और अत्यन्त प्रभावशाली है। लेकिन यह नहीं समझ लिया जाना चाहिए कि सर्वोच्च सोवियत इन सभी शक्तियों का व्यावहारिक प्रयोग करने की स्थिति में है। व्यवहार में ऐसे अनेक कारण हैं, जिनसे सर्वोच्च सोवियत की स्थिति बहुत अधिक मर्यादित हो गई है।

सर्वप्रथम, सोवियत रूस में केवल एक ही दल (साम्यवादी दल) का अस्तित्व है। संविधान के अनुच्छेदों में जो कुछ भी कहा गया हो, व्यवहार में सोवियत शासन व्यवस्था का संचालन साम्यवादी दल के द्वारा किया जाता है। साम्यवादी दल के अधिक महत्वपूर्ण सदस्य प्रेजिडियम और मन्त्रिपरिषद के सदस्य होते हैं और कम महत्वपूर्ण सदस्य सर्वोच्च सोवियत के। साम्यवादी दल में अत्यधिक कठोर अनुशासन है और लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त के अनुसार दल की निम्न सत्ताओं के लिए दल की उच्च सत्ता की आज्ञा का पालन अनिवार्य है। ऐसी [illegible] सर्वोच्च सोवियत दल की उच्च सत्ता के निर्णय पर स्वीकृति [illegible] मोहर [illegible] करती है।

द्वितीय, सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनों की अल्पावधि के कारण सर्वोच्च सोवियत की स्थिति बहुत अधिक निर्बल हो गई है। सर्वोच्च सोवियत अधिक से अधिक वर्ष में केवल दो सप्ताह के लिए अधिवेशन में रहती है और संविधान के अनुसार अधिवेशनों के अन्तरकाल में सर्वोच्च सोवियत के अधिकारों का प्रयोग प्रेजिडियम करता है। अल्पावधि के कारण सर्वोच्च सोवियत मंत्रिपरिषद तथा प्रेजिडियम के आदेशों और निर्णयों का अनुमोदन करने के अतिरिक्त और क्या कर सकती है। टाउस्टर ने इस सम्बन्ध में लिखा है "आज्ञाप्तियों (Decrees) का विवरण प्रस्तुत किये जाने के पश्चात् न तो सर्वोच्च सोवियत में उन पर वादविवाद होता है और न विचार, वरन् उनके प्रस्तावित किये जाने के पश्चात् शीघ्र ही उन्हें अनुमोदित कर दिया जाता है।

तृतीय, सर्वोच्च सोवियत द्वारा मंत्रिपरिषद और प्रेजीडियम के सदस्यों तथा अन्य अधिकारियों को चुनने की शक्ति भी नाममात्र की ही है। वस्तुतः जो सूची साम्यवादी दल के नेताओं द्वारा प्रस्तावित की जाती है, सर्वोच्च सोवियत उसका समर्थन कर देती है। उदाहरणस्वरूप १६ मार्च १९४६ को लगभग १८२ पदाधिकारियों को ७० मिनट की बैठक में चुन लिया गया। ऐसी स्थिति में वास्तविकता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

चतुर्थ, सोवियत रूस में साम्यवादी दल का एकाधिकार है और सर्वोच्च सोवियत में कोई विरोधी दल नहीं है। यह तथ्य है कि विरोधी दल के अभाव में कोई भी व्यवस्थापिका अपने कर्त्तव्यों का भलीभाँति सम्पादन नहीं कर सकती।

पंचम, वैसे तो सभी देशों में व्यवस्थापिका के सदस्य सामान्य योग्यता वाले व्यक्ति होते हैं लेकिन सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों के बारे यह बात विशेष रूप से लागू होती है। सर्वोच्च सोवियत में व्यावसायिक राजनीतिज्ञ नहीं होते, वरन् सामान्य श्रमिक और किसान होते हैं। सामान्य योग्यता वाले ये व्यक्ति इस स्थिति में नहीं होते कि विधेयकों या प्रशासनिक विषयों के सम्बन्ध में उपयोगी सुझाव दे सकें। अतः सर्वोच्च सोवियत के हाथ में कोई प्रभावशाली शक्ति नहीं है।

वस्तुस्थिति यह है कि साम्यवादी दल के नेता सर्वोच्च सोवियत का उपयोग दल की नीति और विचारधारा समझाने के एक महत्त्वपूर्ण मंच के रूप में करते हैं। साम्यवादी दल के नेता सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों को दलीय दृष्टिकोण से अवगत करते हैं और सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों से इस बात की अपेक्षा की जाती है कि वे सामान्य जनता को दलीय दृष्टिकोण से अवगत करायेंगे। विशेष बात यह है कि संविधान के अन्तर्गत सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों का यह एक विशेष कर्त्तव्य बतलाया गया है। जूलियन टाउस्टर ने इस सम्बन्ध में कहा है कि—'सर्वोच्च सोवियत ने अब तक प्रमुखतया केवल एक पुष्टि करने वाली व प्रचार करने वाली संस्था के रूप में ही कार्य किया है। समय समय पर अथवा जब आवश्यक हो, प्रतिनिधि संस्था के रूप में सरकार की नीति को स्वीकृति प्रदान कर देना मात्र इसका प्रमुख उद्देश्य

प्रतीत होता है।"[1] फाइनर के द्वारा ऐसा ही विचार व्यक्त किया गया है और न्यूमन भी इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि—"वह संस्था जो नीति का निर्माण नहीं करती और वास्तव में नीति निर्धारण में जिसका कोई हाथ नहीं होता है, उसके सम्बन्ध में आसानी से यह नहीं कहा जा सकता कि वह सत्ताधारी है। यह भी एक सच्चाई है कि पास किये जाने वाले कानूनों की अधिकतम संख्या का प्रारम्भ सर्वोच्च सोवियत नहीं करती है वरन् वे प्रेजीडियम की ओर से आज्ञाप्तियों (Decrees) अथवा निर्णयों और अध्यादेशों के रूप में सरकार की ओर से पेश किये जाते हैं।"[2]

यद्यपि सर्वोच्च सोवियत एक प्रभुत्व सम्पन्न संस्था नहीं है लेकिन इसके साथ ही उसे एक शून्य कहना त्रुटिपूर्ण होगा। इसका थोड़ा बहुत प्रभाव रूसी जीवन पर अवश्य ही है। आग और जिंक ने इसका मूल्यांकन करते हुए लिखा है 'पश्चिमी विचारों में सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत भले ही एक वास्तविक वाद विवाद संस्था न हो, परन्तु यह अनुमान नहीं लगा लिया जाना चाहिए कि वह सोवियत संघ के सार्वजनिक मामलों पर कम से कम उचित मात्रा में भी प्रभाव नहीं डालती।"[3] चर्चवार्ड जैसे विचारक भी सोवियत रूस की सर्वोच्च सोवियत को सरकार की नीति पर रबड़ की मुहर लगाने वाली संस्था कह जाने को उचित नहीं समझते हैं। चर्चवार्ड जैसे लेखकों के द्वारा यह विचार भी व्यक्त किया गया है कि न केवल सोवियत रूस की व्यवस्थापिका, अर्थात् सर्वोच्च सोवियत, वरन् विश्व के लगभग सभी देशों में व्यवस्थापिका की स्थिति पतनोन्मुख है।[4]

यद्यपि चर्चवार्ड के तर्क का कुछ महत्त्व है, लेकिन टाउस्टर, फाइनर और न्यूमैन का दृष्टिकोण ही सत्य के अधिक समीप है। सर्वोच्च सोवियत की वास्तविक

1 The Supreme Soviet has so far operated primarily as a ratifying and propagating body Its chief purpose appears to be periodically or as occasion demands to lend the voice of approval of a representative body to governmental policy —*Towster Jullian*

2 An institution which does not determine policy which in fact has no hand in determining action of policy cannot easily be held to possess power It is also a fact that overwhelming majority enactments do not come from the Supreme Soviet but from its Presidium in the form of decrees or from the government in the form of decisions and ordinances —Neumann G Rob rt *European and Comparative Governments* p 599

3 'In the Western sense the Supreme Soviet of U S S R may not be truly deliberative body—certainly it does not confirm to the pattern of Western legislative bodies but it should not be assumed that it does not exercise atleast a reasonable amount of influence in the public affairs of the Soviet Union —Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 860

4 Churchward *Contemporary Soviet Governments* p 130

स्थिति पर विचार करते हुए हम सोवियत रूस की एकदलीय व्यवस्था और सर्वहारा-वर्ग के अधिनायकत्व की पृष्ठभूमि को दृष्टि मे रखना होगा, जिन्होने सर्वोच्च सोवियत की शक्ति और सम्मान को निश्चित रूप से आघात पहुचाया है। यह तथ्य है कि भारतीय या ब्रिटिश ससद या अमरीकी काग्रेस अथवा अन्य किसी पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देश की तुलना म सर्वोच्च सोवियत को सोवियत शासन व्यवस्था मे अपेक्षाकृत निर्बल स्थिति ही प्राप्त है।

सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो का पारस्परिक सम्बन्ध

वर्तमान समय म विश्व के लगभग सभी देशो म द्वि सदनात्मक व्यवस्थापिका को अपनाया गया है और सोवियत सघ म भी सर्वोच्च सोवियत के दो सदन है—सघीय सोवियत तथा राष्ट्रीयताओ की सोवियत। सामान्यतया विश्व के अन्य देशो म प्रथम सदन का निर्माण प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर और द्वितीय सदन का निर्माण अप्रत्यक्ष निर्वाचन या मनोनयन आदि के आधार पर किया जाता है। लेकिन सोवियत रूस म अमरीकी काग्रेस के समान ही सर्वोच्च सोवियत के दानो सदनों का निर्माण प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर ही किया जाता है।

जहा तक सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रश्न है, सोवियत सविधान द्वारा दोनो सदनो को समान अधिकार तथा कार्य प्रदान किये गये है और दोनो सदनो का कार्यकाल भी समान (४ वर्ष) है। सघीय सोवियत तथा राष्ट्रीयताओ की सोवियत दोनो के अधिवेशन एक साथ प्रारम्भ तथा समाप्त होते हैं। सविधान के अनुसार कोई भी विधेयक किसी भी सदन म प्रस्तावित हो सकता है और दोनो सदनो की स्वीकृति के बिना कानून का रूप धारण नही कर सकता।

यदि किसी विषय पर दोनो सदनो म मतभेद हो, तो सविधान के अनुच्छेद ४७ के अनुसार वह विषय दोनो सदनो के बराबर-बराबर सदस्यो की एक 'समझौता समिति' (Conciliation Commission) के पास प्रस्तुत किया जाता है। यदि दोनो मे से किसी एक सदन को समझौता समिति का प्रस्ताव मान्य न हो या समिति निर्णय नही दे सके, तो वह विषय दोनो सदनो मे पुन विचार के लिए प्रस्तुत किया जाता है। यदि इस बार भी दोनो सदनो मे मतभेद रहे, तो प्रेजिडियम को अधिकार है कि वह दोनो सदनो को विघटित कर नवीन निर्वाचन का आदेश दे। ऐसी स्थिति मे दो महीने के अन्दर नवीन निर्वाचन आवश्यक है और नयी सर्वोच्च सोवियत ही उस विषय पर विचार करती है। सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनों की शक्तियाँ इस सीमा तक समान है कि सर्वोच्च सोवियत के सयुक्त अधिवेशन म दोनो के सभापति क्रम क्रम से सभापतित्व करते हैं, जबकि अन्य देशो मे प्रथम सदन का अध्यक्ष ही सयुक्त अधिवेशन का सभापतित्व करता है

अधिकार तथा कार्यों की दृष्टि से राष्ट्रीयताओ की सोवियत की स्थिति अन्य देशो के द्वितीय सदन (सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट को छोडकर) की तुलना म अच्छी है। सोवियत रूस की राष्ट्रीयताओ की सोवियत को स्विटजरलैण्ड की सघीय

सभा के द्वितीय सदन राज्य परिषद (Council of State) के समान कहा जा सकता है क्योंकि इन दोनों देशों में द्वितीय सदन को प्रथम सदन के समकक्ष ही स्थिति प्राप्त है।

सर्वोच्च सोवियत में समिति व्यवस्था

जिस प्रकार ब्रिटेन, अमरीका और भारत आदि देशों में समितियाँ कानून निर्माण में पर्याप्त प्रभावशाली भूमिका अदा करती हैं उसी प्रकार सोवियत रूस में भी विधायी कार्यों के लिए समिति व्यवस्था को अपनाया गया है। समितियों को यहाँ 'आयोग' (Commission) का नाम दिया गया है और सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदन अपने कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए स्थायी तथा अस्थायी आयोगों की स्थापना कर सकते हैं। ये आयोग अपने अधिकार क्षेत्र में आने वाले सभी विषयों पर पूर्णता और आवश्यक गम्भीरता के साथ विचार करते हैं। स्थायी आयोगों का गठन सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों द्वारा पृथक पृथक किया जाता है। इनका निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत के प्रथम अधिवेशन में ही होता है तथा इनका कार्यकाल सदनों के कार्यकाल के समान ही होता है। ये आयोग विभिन्न मन्त्रालयों तथा विभागों से आवश्यक सूचनाएं सामग्री और लेख पत्र आदि मांग सकते हैं। दोनों सदन निम्न आयोगों की नियुक्ति करते हैं

(१) विधायी सुझाव आयोग (Commission of Legislative Proposals)—यह आयोग नवीन विधेयकों के प्रारूपों का निर्माण करता है। आयोग सदन में प्रस्तावित विधेयक पर संशोधन भी प्रस्तुत कर सकता है। यह आयोग अपने कार्य के लिए विशेषज्ञों, वैज्ञानिकों, श्रमिकों और नागरिकों की बड़ी संख्या द्वारा प्रस्तुत सुझावों का ध्यानपूर्वक अध्ययन करता है।

आयोग विधेयकों पर पूर्णतया जनतांत्रिक रीति से विचार करता है तथा इसका प्रत्येक निर्णय बहुमत द्वारा होता है। यदि आयोग का कोई सदस्य किसी निश्चय से असहमत हो, तो वह अपने विचार उस समय प्रकट कर सकता है जब सदन के विचारार्थ विधेयक प्रस्तुत किया जाय। आयोग को अपना निर्णय करने के लिए उसके दो तिहाई सदस्यों का उपस्थित होना आवश्यक है।

(२) बजट आयोग (Budget Commission)—यह आयोग सर्वोच्च सोवियत के सामने रखे गये या रखे जाने वाले आय-व्यय के प्रस्तावों की जाँच करता है। इसके द्वारा पूरक मांगों की पूर्ति, आर्थिक और लेखा सम्बन्धी प्रश्नों तथा राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओं पर भी अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

(२) परराष्ट्र सम्बन्धी आयोग (Foreign Affairs Commission)—यह आयोग विभिन्न सन्धियों को स्वीकार या अस्वीकार करने या अन्य अंतरराष्ट्रीय प्रश्नों पर सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों या प्रेज़ीडियम के सम्मुख अपने विचार

प्रस्तुत करता है। यह आयोग वैदेशिक नीति सम्बधी विधेयको के प्रारूपा का निर्माण कर सर्वोच्च सोवियत के सम्मुख विचाराथ प्रस्तुत करता है।

(४) आर्थिक आयोग (Economic Commission)—यह आयाग केवल राष्ट्रीयताओं की सोवियत द्वारा नियुक्त किया जाता है। इसका काय विभिन्न सघीय गणराज्यो की आर्थिक तथा नियोजन सम्बधी व्यवस्था तथा आर्थिक, सामाजिक और सास्कृतिक जीवन मे उन्नति करन वाले प्रश्ना पर विचार करना होता है।

उक्त आयोगा के अतिरिक्त कुछ और आयोगो की स्थापना की गयी है, जिनमे मुख्य हैं **'प्रमाण समिति'** (Credential Commission) तथा **'ज्येष्ठतर सदस्यो की परिषद'** (Council of Elders)। प्रमाण समिति दाना सदनो के निर्वाचित सदस्यो के प्रमाण पत्रो की जाँच करती है तथा अपने अपने सदन को प्रस्ताव करती है कि उन्ह सदन की सदस्यता प्रदान की जाय। वह किसी सदस्य के चुनाव को रद्द करने का प्रस्ताव भी कर सकती है। ज्यष्ठतर सदस्यो की परिषद अपने सदन के कायक्रमो को निश्चित करन मे सहायता प्रदान करती है।

सर्वोच्च सोवियत अपना काय और अधिक सुविधाजनक रूप म सचालित करने के लिए उप-आयोग या विशेष आयोग की नियुक्ति कर सकती है।

विधि निर्माण की प्रक्रिया (Law making Procedure)—विधि निर्माण के सम्बध मे सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो को समान अधिकार प्राप्त है। अन्य प्रजातन्त्रीय देशा मे कम से कम वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे प्रथम सदन को विशेष स्थिति प्राप्त हाती है, लेकिन सावियत रूस मे इस सम्बन्ध मे भी दोनो सदनो के अधिकार समान हैं। सामान्यतया सभी विधेयक दोनो सदनो की सयुक्त बठक मे प्रस्तावित किये जाते हैं। विधेयक मन्त्रिपरिषद या सर्वोच्च सोवियत के किसी सदन द्वारा प्रस्तुत किय जाते हैं। किसी एक सदन द्वारा प्रस्तुत किय जान वाले विधेयका के प्रारूप का निर्माण उस सदन का 'व्यवस्थापन सुझाव आयोग' करता है। मन्त्रिपरिषद द्वारा प्रस्तावित किये जाने वाले विधेयका पर सवप्रथम व्यवस्थापन सुझाव आयोग विचार करता है तथा किसी भी सदन द्वारा विधेयक पर विचार किये जान के पूव आयोग का अध्यक्ष सदन के सम्मुख विधेयक के सम्बध मे आयोग का दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। इसके बाद सदन के सदस्य विधेयक पर विचार व्यक्त करते हैं। इसके बाद कोई मन्त्री भाषण देता है और सदन द्वारा की गयी आलोचनाओ का उत्तर देता है। इसी समय वह मन्त्रिपरिषद द्वारा स्वीकृत सशोधनो का ब्यौरा भी प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात विधेयक की प्रत्यक धारा पर मतदान कराया जाता है तथा सशोधन के उपरान्त जिस रूप म विधेयक स्वीकृत किया जाता है, उसी रूप मे उस सदन द्वारा पारित समझा जाता है। इसके बाद उसे दूसरे सदन म भेज दिया जाता है, जहाँ पर भी विधेयक के सम्बन्ध मे इसी प्रकार की कायवाही होती है। यदि दूसरा सदन विधेयक मे कुछ सशोधन करता है और प्रथम सदन उस मान

लेता है, तो वह विधेयक कानून बन जाता है। यदि विधेयक के सम्बन्ध में दोनों सदनों में मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो इन मतभेदों को दूर करने के लिए एक 'समझौता आयोग' (Conciliation Commission) की नियुक्ति की जाती है जिसमें दोनों सदनों के प्रतिनिधि समान संख्या में होते हैं। यदि आयोग मतभेदों को दूर करने में सफल हो जाता है तो वह कानून बन जाता है, अन्यथा प्रेजीडियम के द्वारा सर्वोच्च सोवियत का भंग कर नवीन चुनावों की व्यवस्था की जाती है।

वित्तीय विधेयकों के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनायी जाती है। वित्त विधेयक भी सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन में प्रस्तुत किये जाते हैं। वित्त मन्त्री द्वारा बजट प्रस्तुत किया जाता है और उसके भाषण के पश्चात् दोनों सदन उस पर पृथक पृथक विचार करते हैं। सर्वप्रथम, उस पर बजट आयोग का प्रवक्ता भाषण करता तथा संशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात सदन के सदस्य अपने विचार व्यक्त करते और संशोधन प्रस्तुत करते हैं। सदस्यों द्वारा विचार व्यक्त किये जाने के बाद वित्त मन्त्री भाषण करता है तथा जिन संशोधनों को स्वीकार किया जाता है उनके सम्बन्ध में सदन को सूचना देता है। अन्त में बजट आयोग का प्रवक्ता पुनः भाषण देता और बजट के विभिन्न भागों पर मतदान होता है। बजट पर एक सदन की स्वीकृति मिल जाने पर उसे दूसरे सदन में भेज दिया जाता है। वहाँ पर भी बजट के सम्बन्ध में इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनायी जाती है और दूसरे सदन द्वारा भी पास कर दिये जाने पर बजट पारित समझा जाता है।

कानून निर्माण की प्रक्रिया के सम्बन्ध में विशेष बात यह है कि सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन बहुत अल्पकालीन होते हैं और इतने कम समय में विधेयकों पर पूर्ण वादविवाद नहीं हो पाता। वस्तुस्थिति यह है कि वहाँ साम्यवादी दल के निर्देशन में आयोग ही विधेयकों के सम्बन्ध में समस्त कार्य करते हैं। सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों को अधिकार है कि वे विधेयक की आलोचना कर सकते और सुझाव प्रस्तुत कर सकते हैं। लेकिन यह एक ऐसा औपचारिक अधिकार है जिसका व्यवहार में कभी प्रयोग नहीं किया जाता। एकदलीय व्यवस्था और साम्यवादी दल में कठोर दलीय अनुशासन होने के कारण वास्तविकता यह है कि सभी सदस्य विधेयक के पक्ष में ही बोलते हैं और मतदान के समय उसके पक्ष में ही मतदान करते हैं। कानून निर्माण का समस्त कार्य साम्यवादी दल की इच्छानुसार ही सम्पन्न होता है।

प्रश्न

१ क्या यह सत्य है कि सर्वोच्च सोवियत, सोवियत शासन का सबसे अधिक शक्तिशाली अंग है? (आगरा, १९६३, ६६)

२ सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत के सगठन, कार्यों और शक्तियो का वणन कीजिए। (आगरा १६६५, ७२, विक्रम, १६६३ ६८, ७२, लखनऊ, १६६४, ६७, ६६, ७१, जीवाजी, १६६५)

३ सोवियत सघ के प्रथम सदन के निर्माण और शक्तियो का वणन कीजिए। सोवियत सघ म शासन और साम्यवादी दल के सम्बधो का वणन कीजिए। (आगरा, १६६८)

४ स्विट्जरलैण्ड और सोवियत सघ के सघीय शासनो के उच्च सदन की स्थिति की तुलना कीजिए। (कानपुर, १६७०)

५ सर्वोच्च सोवियत के गठन, शक्तियो और विशेषताओ का वणन कीजिए। (लखनऊ, १६६१)

5

प्रेजिडियम
(PRESIDIUM)

> 'सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत की प्रेजिडियम इसे प्रदान की गई शक्तियो के आधार पर सोवियत सघ की राज्य शक्ति का सर्वोच्च और स्थायी रूप में काय करने वाला अग है।"[1]
>
> —कारपिंसकी

प्रेजिडियम

सोवियत शासन व्यवस्था की एक अत्यधिक महत्वपूर्ण और सर्वाधिक रोचक सस्था प्रेजिडियम है। यह एक एसी विशेष सस्था है जिसका सादृश्य विश्व के अन्य किसी देश मे नही मिलता। सामान्यतया पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देशो म तीन प्रमुख और पृथक पृथक सस्थाएँ होती है जिनके द्वारा क्रमश विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक क्षेत्र मे काय किया जाता है। लेकिन सोवियत रूस के सविधान म शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त को मान्यता नही दी गई है और उनके द्वारा प्रेजिडियम के रूप म एक ऐसी सस्था की स्थापना की गई है, जिसे विधायी प्रशासनिक और न्यायिक तीनो ही क्षेत्रो की शक्तियां प्राप्त हैं।

प्रेजिडियम के द्वारा सोवियत समाजवादी सघ राज्य के प्रधान के रूप म काय किया जाता है। प्रेजिडियम के सभी सदस्यो को समान शक्ति प्राप्त है और इस दृष्टि से सोवियत रूस म स्विट्जरलण्ड के समान एक बहुल या मण्डलात्मक प्रधान (Collegial Head) की व्यवस्था की गई है, एकल प्रधान की नही। स्टालिन जनता द्वारा निर्वाचित एकल राष्ट्रपति के विरुद्ध था और उसका तक था कि एकल राष्ट्रपति लोकप्रिय सर्वोच्च सोवियत का विरोध करत हुए नपोलियन प्रथम या नपोलियन

1 Presidium of the Supreme Soviet of the U S S R by virtue of the power granted to it is the highest permanently functioning organ of state power of the Soviet Union
—V Karpinsky *The Social and State Structure of U S S R* p 122

तृतीय की भांति आचरण कर सकता है। अतः उसने मण्डलात्मक प्रधान की पद्धति का ही प्रजातन्त्रीय धारणा के उपयुक्त समझा। स्विस कार्यपालिका की भांति प्रेजिडियम का संगठन बहुल और इसके कार्य मिश्रित है।

प्रेजिडियम की रचना—सोवियत संविधान के अनुच्छेद ४८ में प्रेजिडियम की रचना का उल्लेख है। प्रेजिडियम की सदस्य संख्या समय-समय पर परिवर्तित होती रही है। पहले इसकी सदस्य संख्या ३३ थी, किंतु १९६८ में संविधान में किये गये संशोधन के अनुसार इसकी संख्या ३७ है। प्रेजिडियम में एक अध्यक्ष या सभापति, १५ उपाध्यक्ष (प्रत्येक गणराज्य से एक), एक सचिव तथा २० अन्य सदस्य होते हैं। ये सदस्य सर्वोच्च सोवियत की पहली संयुक्त बैठक में चुने जाते हैं। एक परम्परा के अनुसार प्रेजिडियम के १५ उपाध्यक्ष वे व्यक्ति चुने जाते हैं, जो अपने संघीय गणराज्य की प्रेजिडियम के अध्यक्ष होते हैं। प्रेजिडियम के ये सदस्य सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्वाचित होते हैं और उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

सदस्यता के लिए योग्यताएँ—प्रेजिडियम के सदस्य सामान्यतया सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों में से ही निर्वाचित होते हैं, यद्यपि संविधान द्वारा ऐसा होना आवश्यक नहीं है। सर्वोच्च सोवियत के अन्तर काल में मन्त्रिपरिषद प्रेजिडियम के प्रति उत्तरदायी होती है, अतः मन्त्रिपरिषद के सदस्य प्रेजिडियम के सदस्य नहीं हो सकते। इसी प्रकार सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों के अध्यक्ष भी प्रेजिडियम के सदस्य नहीं होते, क्योंकि प्रेजिडियम सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी होती है। व्यवहार में साम्यवादी दल के उच्च नेता ही प्रेजिडियम के सदस्य होते हैं।

कार्यकाल—प्रेजिडियम का कार्यकाल ४ वर्ष है। जब तक सर्वोच्च सोवियत रहती है, तब तक प्रेजिडियम भी रहती है। यदि अनुच्छेद ४७ के अधीन प्रेजिडियम के द्वारा सर्वोच्च सोवियत का विघटन कर दिया जाय, तो नव निर्वाचित सर्वोच्च सोवियत के द्वारा नवीन प्रेजिडियम का गठन किया जायगा। नई प्रेजिडियम बनने तक पहली प्रेजिडियम अपना कार्य करती रहेगी। यदि युद्ध अथवा संकटकालीन अवस्था के कारण सर्वोच्च सोवियत का कार्यकाल बढ़ा दिया जाय, जैसा कि दूसरे विश्वयुद्ध के समय हुआ था, तो प्रेजिडियम का कार्यकाल भी स्वतः ही बढ़ जाता है।

प्रेजिडियम का अध्यक्ष
(Chairman of the Presidium)

अनेक बार विदेशी लोग प्रेजिडियम के अध्यक्ष को ही सोवियत रूस का राष्ट्रपति मान लेते हैं, परन्तु ऐसा सोचना सत्य नहीं है, क्योंकि सोवियत संघ में एकल राष्ट्रपति के स्थान पर बहुमुखी अध्यक्ष (Collegial President) की व्यवस्था की गई है। रूस में प्रेजिडियम का अध्यक्ष स्विटजरलैण्ड की संघीय परिषद के अध्यक्ष की भांति नाममात्र का अध्यक्ष है। प्रेजिडियम के अध्यक्ष को अन्य सदस्यों की अपेक्षा कोई अधिक शक्ति प्राप्त नहीं है जिसके आधार पर उसे अन्य सदस्यों से

श्रेष्ठ कहा जा सके। कारपि सको ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि "हमारे राज्य का अध्यक्ष एक व्यक्ति नहीं, वरन सोवियत सघ के ३३ (प्रेजिडियम की तत्कालीन सदस्य सख्या) सदस्यो की बहुमुखी कार्यपालिका है, जो स्टालिन के शब्दो मे सोवियत सघ के बहुमुखी अध्यक्ष का काय करती है।"

प्रेजिडियम का अध्यक्ष, अध्यक्ष होने के नाते प्रेजिडियम की बैठको को बुलाता और उनकी अध्यक्षता करता है। वह विदेशी राजदूतो का स्वागत करता है और विदशी राजदूत उसे अपना परिचय पत्र भेंट करते हैं। उसकी अनुपस्थिति म किसी भी उपाध्यक्ष के द्वारा यह काय किया जा सकता है और व्यवहार म कइ बार ऐसा होता है। प्रेजिडियम द्वारा जारी की गई आज्ञप्तियो (Decrees) पर प्रेजिडियम के अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर किये जाते हैं। सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित सभी कानूनो पर उसके हस्ताक्षर होते ह और वे तभी घोषित किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त वह दूसरे राज्यो के अध्यक्षो के साथ बराबरी के स्तर पर मिलता है। उनका सोवियत रूस म स्वागत करता है और यदि प्रेजिडियम का अध्यक्ष विदेश यात्रा पर जाय तो विदेशी राज्याध्यक्ष उसका स्वागत करते हैं। प्रेजिडियम के अध्यक्ष की स्थिति औपचारिक उच्चता की ही है, वास्तविक उच्चता की नही। कार्टर के विचारानुसार "अ य अनेक देशो के प्रधानो के समान ही उसका भी एक महत्वपूर्ण कर्तव्य यह है कि वह देश की जनता से मिले-जुले और उन्ह यह सोचने के लिए प्रेरित करे कि वह सभी का हित चाहने वाली सरकार का जीवित प्राणयुक्त प्रतीक है।"

प्रेजिडियम की शक्तियाँ और कार्य

सोवियत सविधान के अनुच्छेद ४९ मे प्रेजिडियम के अधिकारो व कार्यों का व्यापक वर्णन किया गया है। सविधान द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार प्रेजिडियम को विधायी, प्रशासनिक तथा यायिक तीनो ही क्षेत्रो मे व्यापक शक्तिया प्राप्त हैं जिनका अध्ययन निम्नलिखित रूपो मे किया जा सकता है

विधायी शक्तियाँ—प्रेजिडियम को सर्वोच्च सोवियत का साधारण और असाधारण अधिवेशन बुलाने का अधिकार प्राप्त है। सर्वोच्च सोवियत द्वारा जो विधेयक पारित किय जाते है, उन पर प्रेजिडियम के अध्यक्ष क हस्ताक्षर तथा सचिव के प्रति हस्ताक्षर होते हैं और इन औपचारिकता के पूरी हो जान पर ही य विधेयक समस्त देश पर लागू होते हैं। प्रेजिडियम को यह भी अधिकार है कि वह स्वविवेक से अथवा किसी एक सघीय गणराज्य की माग पर सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित किसी भी कानून पर जनमत सग्रह करा सके। जनमत सग्रह सम्बन्धी इस अधिकार के कारण प्रेजिडियम सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित कानून को उस समय तक के लिए रोक सकता है, जब तक कि उस पर जनमत सग्रह न हो जाय।

प्रेजिडियम को कानून निर्माण का अधिकार नही है, क्योंकि सविधान ने यह

प्रेजिडियम विदेशों में सोवियत संघ के प्रतिनिधियों को नियुक्त कर सकता और उन्हें वापस बुला सकता है तथा वह विदेशी राजदूतों के प्रमाण पत्र स्वीकार करता है।

संविधान के अनुसार प्रेजिडियम का उत्तरदायित्व है कि वह सोवियत संघ में शान्ति और सुव्यवस्था बनाये रखे और सोवियत संघ की प्रतिरक्षा करे। इस उद्देश्य से यह आवश्यकता पड़ने पर समस्त सोवियत संघ अथवा उसके किसी क्षेत्र में 'सैनिक कानून (Martial Law) घोषित कर सकता है और सामान्य या आंशिक सैन्य संगठन का आदेश दे सकता है। यह अन्तरराष्ट्रीय संधियों को स्वीकृत कर सकता है तथा सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनों के अन्तर्काल में सोवियत संघ पर सैनिक आक्रमण की स्थिति में या पारस्परिक सुरक्षा सम्बन्धी अन्तरराष्ट्रीय सन्धियों के प्रति कर्तव्यपालन के लिए भी युद्ध की घोषणा कर सकता है।

इस प्रकार प्रेजिडियम की कार्यपालिका शक्ति बहुत व्यापक है और फाइनर के शब्दों में कहा जा सकता है कि 'यह सर्वोच्च सोवियत का निरन्तर विकल्प भी है और मन्त्रिपरिषद से उच्च स्तरीय कार्यपालिका भी। इसके साथ ही यह मन्त्रिपरिषद की गतिविधियों का ऐसा निरीक्षक भी है, जिसे मन्त्रिपरिषद को अनुशासन में और ठीक मार्ग पर रखने की शक्ति प्राप्त है। इसे मन्त्रिपरिषद के निर्णयों और आज्ञाओं को रद्द करने और मन्त्रियों को पदच्युत करने की शक्ति भी प्राप्त है।

न्यायिक शक्तियाँ—यद्यपि यह असंगतिपूर्ण प्रतीत होता है, लेकिन तथ्य यह है कि प्रेजिडियम को न्यायिक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। इस सम्बन्ध में उसका सबसे महत्वपूर्ण अधिकार संविधान की व्याख्या करने के विषय में है। सामान्यतया यह अधिकार राज्य के सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त होता है, लेकिन सोवियत संघ में यह अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को नहीं, वरन् प्रेजिडियम को प्राप्त है। अपने इस अधिकार के आधार पर प्रेजिडियम संघ अथवा गणराज्यों के उन आदेशों को रद्द कर सकता है, जो संविधान के विरुद्ध हों। संविधान के अनुच्छेद ४९ के अनुसार यदि सोवियत संघ में प्रचलित कानूनों पर किसी प्रकार के मतभेद उत्पन्न हो जायें, तो उनकी अधिकारिक व्याख्या प्रेजिडियम के द्वारा ही की जाती है।

क्षमा और सर्वक्षमा (Amnesty) प्रदान करने की शक्ति भी प्रेजिडियम को ही प्राप्त है। १९४५ में हिटलर की पराजय और १९४० में अक्टूबर क्रान्ति की ४०वीं वर्षगाँठ आदि अवसरों पर प्रेजिडियम के द्वारा सर्वक्षमा की शक्ति का प्रयोग किया गया था। इन सबके अतिरिक्त सर्वोच्च सोवियत के अन्तर्काल में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश प्रेजिडियम के द्वारा ही नियुक्त और पदच्युत किये जा सकते हैं।

प्रेजिडियम की वास्तविक स्थिति

सोवियत संघ की प्रेजिडियम के पास बहुत अधिक वास्तविक शक्तियाँ हैं। सोवियत सामाजिक जीवन और शासन व्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र में उसे बहुत अधिक

व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं। सद्धान्तिक स्थिति तो यह है कि प्रेजिडियम सर्वोच्च सोवियत की एक समिति मात्र है जो अपने सभी कार्यों के लिए सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है। सर्वोच्च सोवियत कभी भी प्रेजिडियम को भग कर उसके स्थान पर नवीन प्रेजिडियम का चुनाव कर सकता है। लेकिन यह तो सोवियत सवैधानिक व्यवस्था का सैद्धान्तिक वणन मात्र है, जिसके साथ व्यवहार का कोई मेल नही है।

वास्तविक स्थिति यह है कि प्रेजिडियम के अधिवशन वप म केवल दो बार बहुत थोडे समय के लिए होते ह और सर्वोच्च सोवियत के अवकाश काल मे उसकी सभी शक्तियो का प्रयोग प्रेजिडियम के द्वारा ही किया जाता है। सिद्धान्तत प्रेजिडियम द्वारा जारी की गई प्रत्येक आज्ञप्ति की सर्वोच्च सोवियत द्वारा पुष्टि आवश्यक है किन्तु व्यवहार मे ये आज्ञप्तियाँ तुरन्त ही लागू हो जाती हैं और सर्वोच्च सोवियत द्वारा इनकी पुष्टि एक औपचारिकता मात्र ही है, क्योंकि प्रेजिडियम म साम्यवादी दल के उच्च नेता होते हैं और प्रेजिडियम की बठको मे सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो के अध्यक्ष भी निमन्त्रित किय जाते हैं। अब तक कभी भी ऐसा नहीं हुआ है कि प्रेजिडियम की किसी आज्ञप्ति को सर्वोच्च सोवियत ने रद्द कर दिया हो।

व्यवहार के अन्तगत प्रेजिडियम के द्वारा न केवल सामान्य महत्व, वरन् बहुत अधिक सवैधानिक महत्त्व के विषयो पर भी आज्ञप्तियाँ जारी की गई हैं। मुनरो का कहना है कि प्रेजिडियम की आज्ञप्तियाँ जारी करने की असीमित शक्ति का प्रदशन १९४६ के निर्वाचन के पूव हुआ जब इसने एक आज्ञप्ति द्वारा सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो की निम्नतम आयु १८ वप से बढाकर २३ वप कर दी तथा विदशो मे सेवा करने वाली सोवियत सेनाओ के प्रतिनिधित्व की व्यवस्था की। य दोनों आदेश व्यवहार म सवैधानिक सशोधन ही थे। यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि इन आदेशो का अनुसमर्थन उस सर्वोच्च सोवियत द्वारा किया गया जो इसके द्वारा की गई व्यवस्थाओ के अनुसार ही चुनी गई थी।

सोवियत सघ की प्रेजिडियम को आन्तरिक प्रशासन और वदेशिक सम्बन्धो के सचालन, दोनो ही क्षेत्रो मे बहुत अधिक व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं। इसे सविधान की व्याख्या करने व उन कानूनो को रद्द करने का अधिकार भी प्राप्त है, जो सविधान क विरुद्ध हो। यह सर्वोच्च सोवियत क अवकाश के समय सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो को निर्वाचित करती और पदच्युत करती है।

मन्त्रिपरिषद पर भी प्रेजिडियम का प्रभावशाली नियन्त्रण रहता है, क्योंकि सर्वोच्च सोवियत के अवकाश काल म मन्त्रिपरिषद प्रेजिडियम क प्रति ही उत्तरदायी है और प्रेजिडियम सघ की मन्त्रिपरिषद तथा सघीय गणराज्यो की मन्त्रिपरिषदो के आदेशो तथा निणयो को रद्द कर सकता है, यदि वे सविधान तथा कानून के अनुकूल न हो।

यह बात निर्विवाद है कि प्रेजिडियम को सोवियत जीवन और प्रशासन म

प्रत्येक क्षेत्र मे व्यापक प्रभाव प्राप्त है। सविधान के द्वारा सर्वोच्च सत्ता सर्वोच्च सोवियत को प्रदान की गई है, किन्तु व्यवहार मे जैसा कि आग और जिक लिखते हैं 'प्रेजिडियम ने सरकार के कार्यों के प्रबन्ध मे अपनी जननी अर्थात् सर्वोच्च सोवियत से अधिक भाग लिया है।'[1] डॉ० फाइनर भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं कि 'प्रेजिडियम सख्या की दृष्टि से सर्वोच्च सोवियत का सूक्ष्म रूप है, लेकिन वास्तविक प्रदत्त शक्तियो की दृष्टि से उसका महान और आन्तरिक रूप है।'[2] सोवियत नेता भी प्रेजिडियम के सम्बन्ध मे इस बात को स्वीकार करते है। कार पिन्सकी ने लिखा है कि "सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत की प्रेजिडियम इसे प्रदान की गई शक्तियों के आधार पर सोवियत सघ की राज्य शक्ति का सर्वोच्च और स्थायी रूप मे काय करने वाला अग है।"

प्रश्न

१ प्रेजिडियम के अधिकार और सगठन की विवेचना कीजिए।
(कानपुर, १९६८, लखनऊ, १९६३, ७०, ७२, जीवाजी १९६९)

२ प्रेजिडियम की शक्तियो और कार्यों स सम्बन्धित स्टालिन सविधान के प्रबन्धो की व्याख्या कीजिए। (लखनऊ १९६७)

३ सोवियत सघ मे प्रेजिडियम की स्थिति का वणन कीजिए। (लखनऊ, १९६८)

४ सोवियत सघ की प्रेजिडियम एक अनोखी सस्था क्यो समझी जाती है ? अपना उत्तर उदाहरण सहित समझाइए। (विक्रम, ६६३, ७०, जीवाजी, १९७७)

1 'The record shows that the Presidium has taken a more active role in handling the work of government than its parent body the Supreme Council —Ogg & Zink

2 'The Presidium is the miniature self of the Soviet in numbers and its greater and inner self in actual delegated power
—Finer, Herman *The Major Governments of Modern Europe* p 623.

6

मन्त्रिपरिषद
(COUNCIL OF MINISTERS)

"मन्त्रिपरिषद का काय दोहरा है। सामूहिक रूप से इसका शासन की नीतियों पर विचार करना व उन्हें कार्यान्वित करना है, जबकि व्यक्तिगत रूप में उसके सदस्य प्रशासन के विभागो के अध्यक्ष होते हैं।"[1]

—आग व जिंक

सोवियत रूस की शासन व्यवस्था मे प्रशासन का सबसे प्रमुख केन्द्र मन्त्रिपरिषद है। इस सम्बन्ध म सोवियत सविधान के अनुच्छेद ६४ म कहा गया है कि "सोवियत सघ की मन्त्रिपरिषद सोवियत समाजवादी गणराज्य सघ की राज्यशक्ति का सर्वोच्च कार्यपालिका तथा प्रशासनिक अग है।"[2] १९४६ तक इसे 'काउन्सिल ऑफ पीपुल्स कमीसार' (Council of People s Commissar) कहा जाता था, लेकिन अब इसका नाम 'मन्त्रिपरिषद' (Council of Ministers) है।

मन्त्रिपरिषद की रचना और सगठन

मन्त्रिपरिषद के सदस्यो का चुनाव सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो द्वारा अपनी एक सयुक्त बैठक म किया जाता है। मन्त्रिपरिषद म यदि कोई स्थान रिक्त हो जाय तो प्रेजिडियम उस मन्त्रिपरिषद के अध्यक्ष अथात प्रधान मन्त्री की सलाह से भर सकता है। प्रेजिडियम का यह भी अधिकार है कि वह प्रधानमन्त्री की सलाह से मन्त्रिपरिषद के सदस्यो को पदमुक्त कर सके नय मन्त्रिपदो

1 'The Council of Ministers has a dual role As a group it is charged with the discussion and adoption of executive policies while its individual members are the heads of administrative departments'

—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments,* p 866

2 The highest executive and administrative organ of state power of the Union of Soviet Socialist Republics is the Council of Ministers of the U S S R.' —*Article 64 of the Soviet Constitution*

की व्यवस्था कर सके तथा उन्हें समाप्त भी कर सके। प्रेजिडियम प्रधानमन्त्री की सलाह से मन्त्रियों के विभागों में भी परिवर्तन कर सकता है, लेकिन प्रेजिडियम के इन सभी कार्यों की सर्वोच्च सोवियत द्वारा पुष्टि की जाना आवश्यक है। संविधान में मन्त्रिपरिषद के कार्यकाल के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा गया है, व्यवहार में इसका कार्यकाल प्रेजिडियम के समान ही सर्वोच्च सोवियत के साथ ही चलता है।

संविधान के ७०वें अनुच्छेद में मन्त्रिपरिषद के गठन का विस्तार से उल्लेख किया गया है। सोवियत रूस की मन्त्रिपरिषद में एक अध्यक्ष, कई उपाध्यक्ष, राजकीय योजना आयोग, सोवियत नियन्त्रण आयोग, कला समिति, उच्च शिक्षा समिति व राजकीय बैंक परिषद के अध्यक्ष तथा सोवियत रूस के मन्त्रिगण आदि सम्मिलित होते हैं। सोवियत संघ के १५ संघीय गणराज्यों के मुख्यमन्त्री भी संघीय मन्त्रिपरिषद के सदस्य होते हैं।

इस प्रकार मन्त्रिपरिषद एक विशाल संस्था है, जिसके सदस्यों की संख्या वर्तमान समय में ९० है। ये सदस्य इस प्रकार हैं

अध्यक्ष	१
प्रथम उपाध्यक्ष	२
अन्य उपाध्यक्ष	६
अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के अतिरिक्त सामान्य मन्त्री	५३
राज्य समितियों व अन्य केन्द्रीय समितियों के प्रधान	१०
इकाई गणराज्यों के मन्त्रिमण्डलों के प्रधान	१५

मन्त्रिपरिषद का अध्यक्ष—सोवियत रूस की मन्त्रिपरिषद के अध्यक्ष की स्थिति बहुत कुछ सीमा तक ब्रिटेन, भारत आदि संसदीय शासन व्यवस्था वाले देशों के प्रधानमन्त्री जैसी ही है। उसका औपचारिक निर्वाचन यद्यपि सर्वोच्च सोवियत और उसका अधिवेशन न होने की स्थिति में प्रेजिडियम द्वारा होता है, किन्तु स्टालिन की मृत्यु के बाद व्यवहार में मालेनकोव, बुल्गानिन, ख्रुश्चेव और वर्तमान प्रधानमन्त्री कोसीगिन के नामों का जिस प्रकार से निश्चय हुआ, उससे स्पष्ट है कि मन्त्रिपरिषद के अध्यक्ष का नामांकन दल की केन्द्रीय समिति द्वारा ही किया जाता है। अध्यक्ष मन्त्रिपरिषद की बैठकों की अध्यक्षता करता तथा उसके निर्णयों और आदेशों पर हस्ताक्षर करता है। वह मन्त्रिपरिषद के कार्यों का निर्देशन और नियन्त्रण करता है। उसे यह भी अधिकार है कि वह व्यक्तिगत मन्त्रियों के निर्णयों को रद्द कर दे। उसकी स्थिति वस्तुतः बड़े महत्व की है, क्योंकि वह मन्त्रिपरिषद का अध्यक्ष होने के साथ साथ साम्यवादी दल का एक प्रमुख नेता भी होता है। क्रान्ति के बाद से लेकर अब तक जिन व्यक्तियों के द्वारा इस पद को धारण किया गया, उससे भी यह बात नितान्त स्पष्ट हो जाती है। टाउस्टर के अनुसार, 'मन्त्रिपरिषद

के अध्यक्ष को परिषद मे बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण स्थिति होती है और यह समस्त सोवियत शासनतन्त्र के सर्वाधिक निर्णायक पदों मे से एक है।"[1]

उपाध्यक्ष—मन्त्रिपरिषद म अध्यक्ष के बाद महत्त्वपूर्ण स्थिति उपाध्यक्षो को प्राप्त होती है। उपाध्यक्षो की सख्या निश्चित नही है और समय समय पर इसमे परिवतन होता रहा है। वतमान समय म प्रथम उपाध्यक्ष २ व अन्य उपाध्यक्ष ६ हैं, इस प्रकार उपाध्यक्षो की सख्या ११ है। उपाध्यक्ष दल के उच्च नेता होते है और इनम म अधिकाश दलीय प्रेजिडियम के भी सदस्य होते हैं। कभी कभी ये किसी विभाग के प्रधान होते ह, किन्तु सामान्य चलन यह है कि इन्हे विभागीय उत्तरदायित्वो से मुक्त रखा जाता है, जिससे इनके द्वारा सम्बन्धित अनेक विभागो के कार्यो म उचित रूप म समन्वय स्थापित किया जा सके।

मन्त्रिमण्डल का प्रेजिडियम या अन्तरग मन्त्रिमण्डल
(Inner Cabinet)

सोवियत रूस की मन्त्रिपरिषद के सदस्यो की सख्या वतमान समय म ६० के लगभग है और इतनी अधिक सख्या वाली सस्था के लिए व्यवहार मे नीति निश्चय करना और प्रशासनिक निणय लेना बहुत अधिक कठिन हो जाता है। अत सोवियत रूस म एक अन्तरग मन्त्रिमण्डल की व्यवस्था का उदय हो रहा है, जिसे मन्त्रिपरिषद का प्रेजिडियम भी कहा जाता है। इसमे सामान्यतया प्रधानमन्त्री, प्रथम उपप्रधान मन्त्री तथा अन्य उपप्रधान मन्त्री होते हैं। वतमान समय म प्रधानमन्त्री के अतिरिक्त ११ सदस्य इस अन्तरग मन्त्रिमण्डल मे है। हरमन फाइनर ने इस अन्तरग मन्त्रिमण्डल के महत्त्व का वणन करते हुए लिखा है कि—"यह स्पष्टतया मन्त्रियों की बडी सख्या के मध्य प्रगतिशील, सचालक, निरीक्षक तथा समन्वय करने वाला अग है। अन्तरग मन्त्रिमण्डल के ये सदस्य व्यक्तिगत रूप मे दलीय प्रेजिडियम, सोवियतो, प्रेजिडियम तथा स्वय सर्वोच्च सोवियत से परस्पर जुडे होते हैं और इस दृष्टि से यह समस्त सोवियत शासन मे एक जोडने वाले प्रभाव का काय करता है।

सोवियत सघ के मन्त्रालयो के प्रकार व उनका अधिकार क्षेत्र

सोवियत सविधान के अनुच्छेद ७४ के अनुसार केन्द्र म दो प्रकार के मन्त्रालय हैं—प्रथम अखिल सघीय मन्त्रालय (All Union Ministries) और द्वितीय, सघीय गणराज्यीय मन्त्रालय (Union Republican Ministries)।

सविधान के अनुच्छेद ७७ मे अखिल सघीय मन्त्रालयो का वणन किया गया है और इनकी सख्या २२ ह। ये मन्त्रालय सारे राष्ट्र के महत्त्वपूर्ण विषयो का प्रशासन या तो प्रत्यक्ष रूप से स्वय चलाते हैं या अपने द्वारा नियुक्त की गई समितियो

1 'The Office of the Chairman of the Council of Ministers is the most important position on the Council and one of the most crucial in the Soviet polity as a whole
—Towster Julian *Political Power in the U S S R*

के माध्यम से काय करते है। ये मन्त्रालय सारे देश से सम्बन्धित महत्त्वपूण विषया का सचालन करते हैं जसे विदेशी व्यापार रेल, व्यापारी जहाज, असैनिक हवाई जहाज, गस, अस्त्र शस्त्र, समुद्री जहाज तथा बिजली का अणु सम्ब धी सामान आदि। सोवियत रूस मे नियन्त्रित अथ व्यवस्था है, इसलिए अधिकाश म त्रालय उत्पादन व्यवस्था तथा आर्थिक क्षेत्र से ही सम्बन्धित हैं। ये मन्त्रालय उत्पादन बढाने के लिए जनता का मागदशन करत और उन्हे प्रोत्साहित करते हैं।

सघीय गणराज्यीय मन्त्रालय (Union Republican Ministries)—सोवियत रूस की अपनी विशिष्ट व्यवस्था है। ये उन विषयो के सम्बन्ध मे काय करते है जो सविधान के द्वारा सघीय गणराज्यो के क्षेत्राधिकार मे रखे गय हैं जैसे कृषि, जनस्वास्थ्य, शिक्षा, जगल, खाद्य, वस्त्र उद्योग बिजली उद्योग, फिल्म उद्योग, गृह शासन और याय आदि। सघीय गणराज्यीय म त्रालय इन विषयो का प्रशासन स्वय नही करते और प्रत्यक्षत इनके सम्बन्ध मे सघीय गणराज्यो की सरकारो द्वारा काय किया जाता है। य म त्रालय सघीय गणराज्यो की सरकारो के कार्यों का निरीक्षण करते और उनमे परस्पर समन्वय स्थापित करते हैं। सघीय गणराज्यीय मन्त्रालय सम्बन्धित सघीय गणराज्यो की सरकारो का निर्देश द सकते है और उपरोक्त विषयो के प्रशासन पर अतिम नियन्त्रण सघीय गणराज्यीय मन्त्रालयो का ही प्राप्त होता है। इस प्रकार ये सघीय गणराज्यीय मन्त्रालय सोवियत शासन व्यवस्था मे केन्द्रीकरण स्थापित करने के साधन और केन्द्रवाद के प्रतीक हैं।

राजकीय नियन्त्रण मन्त्रालय—सोवियत मन्त्रिपरिषद के गठन की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि इसके अ तगत एक ऐसा मन्त्रालय है जो शासन के प्रमुख अगो और उनके क्रियाकलापो पर नियन्त्रण रखता है। इसे राजकीय नियन्त्रण मन्त्रालय (Ministry of State Control) कहा जाता है। यह मन्त्रिपरिषद का ही एक अग होता है, तथापि इसका काय शासन के सभी अगो पर नियन्त्रण रखना होता है, जिससे शासक दल व सरकार म समन्वय बना रहे।

आर्थिक सोवियत (Economic Soviet)—मन्त्रिपरिषद की एक विशिष्ट शाखा आर्थिक सोवियत है जिसका काय देश के प्रमुख उद्योगो व व्यवसायो आदि पर नियन्त्रण रखकर देश के औद्योगिक एव आर्थिक जीवन का निर्देशन करना है।

मन्त्रिपरिषद की सहायता के लिए कई अन्य परिषद तथा समितिया भी हैं जिनमे 'राजकीय योजना आयोग' (Gosplan) सबसे प्रमुख है। अन्य समितिया हैं कला समिति, उच्च शिक्षा समिति, राजकीय बैंक परिषद आदि, जिनके अध्यक्ष मन्त्रिपरिषद के सदस्य होते हैं।

मन्त्रिपरिषद की शक्तियाँ तथा कार्य

सोवियत सविधान के अनुच्छेद ६४ म कहा गया है कि "सोवियत सघ में राज्यशक्ति का सर्वोच्च कार्यपालिका तथा प्रशासनिक अग मन्त्रिपरिषद ही है।"

मन्त्रिपरिषद को समस्त सोवियत सघ मे सर्वोच्च प्रशासनिक अग की स्थिति प्राप्त होगी, इसे स्पष्ट करते हुए सविधान के अनुच्छेद ६७ मे कहा गया है कि "सोवियत सघ की मन्त्रिपरिषद के निणय तथा आदेश सोवियत सघ के सारे क्षेत्र के लिए बन्धनकारी हैं और उनका पालन सब नागरिको को अवश्य ही करना होगा।"

सोवियत सविधान की ६८वीं धारा म मन्त्रिपरिषद की शक्तियो और उसके कार्यों का विस्तत विवेचन किया गया है। उसके अनुसार मन्त्रिपरिषद निम्नलिखित कार्यों के लिए उत्तरदायी है

(१) मन्त्रिपरिषद अपने आदेशो और निणयो द्वारा विभिन्न मन्त्रालया, समितियो परिषदा एव आयोगो आदि का गठन करता है। मन्त्रिपरिषद के द्वारा उनका क्षत्राधिकार निश्चित किया जाता, उनके कार्यों पर नियन्त्रण रखा जाता और उनके कार्यों म समन्वय स्थापित किया जाता है।

(२) *मन्त्रिपरिषद की ओर से सोवियत रूस का बजट तैयार किया जाता है।* इसी के द्वारा बजट सर्वोच्च सोवियत के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है और सर्वोच्च सोवियत मे स्वीकृत हो जाने पर मन्त्रिमण्डल ही बजट के अनुसार सरकार की आय और व्यय की व्यवस्था करता है।

(३) मन्त्रिपरिषद के द्वारा मुद्रा पद्धति का सचालन और बकिंग व राष्ट्रीय साख की व्यवस्था की जाती है।

(४) मन्त्रिपरिषद का उत्तरदायित्व है कि वह देश की आर्थिक, सामाजिक व सामूहिक उन्नति और समृद्धि के लिए योजनाएँ तैयार करे तथा उन्ह लागू करे।

(५) बाहरी तथा आन्तरिक सकटो से देश की रक्षा करना, विदेशी आक्रमणो से देश की सुरक्षा करना, देश के सभी भागो मे शान्ति और व्यवस्था बनाये रखना और नागरिक अधिकारो की रक्षा करना मन्त्रिपरिषद का उत्तरदायित्व है। इन उत्तरदायित्वो का पूरा करने हेतु मन्त्रिपरिषद सभी आवश्यक कदम उठा सकता है।

(६) मन्त्रिपरिषद का उत्तरदायित्व है कि वह विदेशी राज्यो से सम्बन्ध स्थापित करे और सघ के अन्तगत विभिन्न गणराज्य विदेशो से जो सम्बन्ध स्थापित करें, उन्ह नियन्त्रित और निर्देशित करे।

(७) मन्त्रिपरिषद का उत्तरदायित्व है कि वह जल, स्थल और वायु सेनाओ को सगठित करे, उनकी शक्ति मे वृद्धि करे और यह निश्चित करे कि कितने नागरिक सनिक सेवा म रह।

(८) मन्त्रिपरिषद सोवियत सघ के अन्तगत विविध राज्यो के शासन विभागो में काय करने की प्रणाली की एकता व एकरूपता बनाये रखने का कार्य करता है।

(९) यदि सोवियत सघ के अन्तगत कोई गणराज्य ऐसा कानून पारित कर या कोई ऐसा आदेश जारी कर या कोई ऐसी व्यवस्था करे, जो कि सघीय सरकार

के कानूनो, आदशो व व्यवस्थाओ के प्रतिकूल हो, तो मन्त्रिपरिषद के द्वारा उन्हे रद्द किया जा सकता है।

(१०) मन्त्रिपरिषद श्रमिको के वेतन, करो व सामाजिक बीमे की दर निश्चित करती है।

(११) सर्वोच्च सोवियत के सम्मुख प्रस्तावित अधिकाश विधेयको के प्रारूप मन्त्रिपरिषद के द्वारा ही तैयार किये जाते है।

(१२) नवीन राज्यो को मान्यता देने का कार्य मन्त्रिपरिषद का ही है।

(१३) सोवियत सविधान अनुच्छेद ६६ के अनुसार "सोवियत सघ की मन्त्रिपरिषद प्रचलित कानूनो के आधार पर और उनको लागू करने के लिए निर्णय तथा आदेश जारी करती है और इस बात की जाँच करती है कि उनका पालन ठीक प्रकार से हो।

मन्त्रिपरिषद की वास्तविक स्थिति

मन्त्रिपरिषद की शक्तियो की उपरोक्त विवेचना से नितान्त स्पष्ट है कि मन्त्रिपरिषद सोवियत प्रशासनिक व्यवस्था की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इकाई है। आन्तरिक प्रशासन, वैदेशिक सम्बन्धो के सचालन और सत्ता दल की सामान्य व्यवस्था सभी के सम्बन्ध मे इसकी स्थिति सर्वोपरि है। वित्तीय क्षेत्र म भी मन्त्रिपरिषद सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण इकाई है। राज्य के वार्षिक बजट और आर्थिक योजनाओ के सम्बन्ध म अन्तिम शक्ति मन्त्रिपरिषद को ही प्राप्त है।

न केवल प्रशासन और वित्त, वरन् विधायी क्षेत्र मे भी मन्त्रिपरिषद के कार्य बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। यह सत्य है कि सविधान द्वारा विधि निर्माण का अधिकार सर्वोच्च सोवियत को ही प्रदान किया गया गया है, लेकिन मन्त्रिपरिषद को आदेश एव निर्देश जारी करने का अधिकार प्राप्त है जो व्यवहार मे सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित विधियो के समान ही प्रभावी होते है। व्यवहार म मन्त्रिपरिषद द्वारा जारी किये गये आदेशो निर्देशो की सख्या बहुत होती है। इसके अतिरिक्त मन्त्रिपरिषद ही अधिकाश कानूनो का प्रारूप तैयार करता और उसी के द्वारा इन्हे सर्वोच्च सोवियत मे प्रस्तावित किया जाता है। आग और जिक ने तो यहा तक कहा है कि 'सर्वोच्च सोवियत द्वारा विचारित अधिकाश कानून या प्रस्तावो का उद्गम स्थल मन्त्रिपरिषद ही है।" शूमन ने इसी आधार पर मन्त्रिपरिषद को सोवियत सघ का अग्रणी विधायक' (Foremost legislator) कहा है। इस प्रकार मन्त्रिपरिषद सोवियत सघ की एक अत्यन्त शक्तिशाली सस्था है और इसके अधिकार बहुत व्यापक तथा विस्तृत हैं। हार्पर और थाम्पसन के कथनानुसार "यद्यपि सिद्धान्तत पिरामिड का आधार सर्वोच्च सोवियत है और मन्त्रिपरिषद एक ऊपरी ढाचा है, लेकिन व्यवहारत

बात उल्टी है, मन्त्रिपरिषद आधार बन गई है और सर्वोच्च सोवियत ऊपरी ढाचा ।"[1]

सोवियत सविधान के अनुसार मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत अथवा उसकी प्रेजिडियम के प्रति उत्तरदायी है, परन्तु यह उत्तरदायित्व अर्थहीन है, क्योंकि ये दोनों निकाय मन्त्रिपरिषद को अपदस्थ नही कर सकते । यदि मन्त्रिपरिषद पर नियन्त्रण रखने वाली कोई शक्ति है तो वह है साम्यवादी दल का प्रेजिडियम जिसके निर्देशन मे मन्त्रिपरिषद कार्य करती है । मन्त्रिपरिषद की वास्तविक स्थिति के सम्बन्ध मे एक दृष्टिकोण यह भी है कि मन्त्रिपरिषद पर साम्यवादी दल की उच्च सत्ता का नियन्त्रण देखते हुए इसे सर्वोच्च कार्यपालिका नही माना जा सकता । आग और जिक ने इसी विचार को अपनाते हुए लिखा है कि "केवल औपचारिक दृष्टि से ही मन्त्रिपरिषद एक सर्वोच्च कार्यपालिका मानी जा सकती है । वस्तुत पोलिट ब्यूरो के रहते उसे वह स्थान प्राप्त नही हो सकता ।" लेकिन साम्यवादी दल की सर्वोच्च महत्ता को स्वीकार करते हुए भी उपरोक्त दृष्टिकोण अपनाना उचित नही है । मन्त्रिपरिषद के प्रमुख सदस्य सामान्यतया दलीय प्रेजिडियम के भी सदस्य होते हैं और इसी कारण मन्त्रिपरिषद सोवियत शासन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई है ।

सोवियत मन्त्रिपरिषद व सर्वोच्च सोवियत

सोवियत सविधान के अनुच्छेद ३० मे कहा गया है कि 'सोवियत सघ म राज्य शक्ति का सर्वोच्च अग सर्वोच्च सोवियत है । सविधान म यह भी कहा गया गया है कि मन्त्रिपरिषद के सदस्यो का चुनाव सर्वोच्च सोवियत के द्वारा किया जायगा व मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत के ही प्रति उत्तरदायी होगी । सविधान का अनुच्छेद ७१ आदेश देता है कि सघ सरकार या उसके किसी मन्त्री को, जिससे सर्वोच्च सोवियत का कोई सदस्य प्रश्न पूछे, तीन दिन के अन्दर प्रश्न का लिखित या मौखिक उत्तर देना होगा । सविधान म किये गये इन उपबन्धो से ऐसा प्रतीत होता है कि मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत के आधीन एक समिति है, जिसके द्वारा अपने सभी कार्य सर्वोच्च सोवियत के निर्देशानुसार ही किये जाते है ।

किन्तु वास्तविक स्थिति ऐसी नही है । जिस प्रकार ब्रिटेन में ससद की प्रभुसत्ता की बात कही जाती है किन्तु वस्तुत ससद द्वारा मन्त्रिपरिषद को नियन्त्रित किये जाने के बजाय, वह स्वय मन्त्रिपरिषद से नियन्त्रित होती है उसी प्रकार सोवियत रूस म भी मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत से निर्देशित होने के बजाय

[1] The Supreme Soviet therefore is not the immense base on which the Council of Ministers rises as a sort of superstructure on the contrary it might with much greater justice be said that the Council of Ministers is the base and the Supreme Soviet the super-structure —*Harper and Thompson*

सर्वोच्च सोवियत को निर्देशित करता है। इस स्थिति का कारण यह है कि सोवियत रूस मे शासन का ढाचा तो अपने स्थान पर है ही, लेकिन वस्तुत शासन व्यवस्था का सचालन साम्यवादी दल के द्वारा किया जाता है। साम्यवादी दल के अधिक प्रमुख नेता मन्त्रिपरिषद के सदस्य होते हैं और अपेक्षाकृत कम महत्वपूर्ण व्यक्ति सर्वोच्च सोवियत के सदस्य होते हैं। साम्यवादी दल मे अत्यधिक कठोर अनुशासन है और दल की उच्चसत्ता के द्वारा दल की निम्न सत्ता पर पूर्ण नियन्त्रण रखा जाता है। एक अन्य तथ्य यह है कि जहा मन्त्रिपरिषद निरन्तर सक्रिय सस्था है सर्वोच्च सोवियत वर्ष मे १५ दिन से भी कम अवधि के लिए अधिवेशन म रहती है। ऐसी स्थिति म सर्वोच्च सोवियत के लिए मन्त्रिपरिषद पर नियन्त्रण रख सकना नितान्त कठिन होता है। हार्पर और थाम्पसन ने इस स्थिति पर टिप्पणी करते हुए लिखा है कि "यद्यपि सिद्धान्तत पिरामिड का आधार सर्वोच्च सोवियत है और मन्त्रिपरिषद एक ऊपरी ढाचा है लेकिन व्यवहारत बात उल्टी है, मन्त्रिपरिषद आधार बन गई है और सर्वोच्च सोवियत ऊपरी ढाचा।"

सोवियत मन्त्रिपरिषद की विशेषताएँ
(Distinctive Features of the Soviet Council of Ministers)

सोवियत मन्त्रिपरिषद यद्यपि नाम और ऊपरी ढाचे के आधार पर अन्य देशो की मन्त्रिपरिषद के समान ही एक सस्था प्रतीत होती है, लेकिन इसकी अपनी कुछ विशिष्टताएँ है, जो इसे अन्य देशो की मन्त्रिपरिषदो से अलग करती है। सोवियत मन्त्रिपरिषद की विशेषताओ का अध्ययन निम्न रूपो म किया जा सकता है

(१) **मन्त्रिपरिषद के उत्तरदायित्व की विशेष व्यवस्था**—स्टालिन सविधान म व्यवस्था की गयी है कि मन्त्रिपरिषद के सदस्यो का चुनाव सर्वोच्च सोवियत द्वारा किया जायगा। इसके साथ ही सविधान के अनुच्छेद ३५ म कहा गया है कि **'सोवियत मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत के प्रति और उसके अधिवेशनों के अन्तर्काल मे सर्वोच्च सोवियत के प्रेजिडियम के प्रति उत्तरदायी होगी।'** मन्त्रिपरिषद के प्रत्येक निर्णय तथा आदेश की सर्वोच्च सोवियत द्वारा पुष्टि होना आवश्यक है। सविधान के अनुच्छेद ७१ म उल्लेख किया गया है कि **'सघीय सरकार या उसके किसी मन्त्री को जिससे सर्वोच्च सोवियत का प्रतिनिधि कोई प्रश्न पूछे, लिखित या मौखिक उत्तर तीन दिन के अन्दर देना होगा।'**

सविधान के उपरोक्त उपबन्धो से ऐसा प्रतीत होता है कि सोवियत मन्त्रिपरिषद उसी प्रकार सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी है, जिस प्रकार ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल लोकसदन के प्रति होता है। लेकिन सोवियत रूस म मन्त्रिमण्डलीय उत्तरदायित्व को उस अर्थ मे ग्रहण नही किया गया है, जिस अर्थ मे यह ब्रिटेन म प्रचलित है। ससदीय व्यवस्था म उत्तरदायित्व का तात्पर्य सामूहिक उत्तरदायित्व से लिया जाता है लेकिन सोवियत रूस मे सामूहिक उत्तरदायित्व जैसी कोई बात नही है। मन्त्रिपरिषद के सदस्य केवल व्यक्तिगत रूप मे ही उत्तरदायी होते हैं। इसके

अतिरिक्त संसदीय शब्दावली में उत्तरदायित्व का तात्पर्य होता है—लोकप्रिय सदन द्वारा मन्त्रिपरिषद में अविश्वास व्यक्त किये जाने पर उसका पदत्याग। लेकिन सोवियत रूस में सर्वोच्च सोवियत का विश्वास खो देने पर मन्त्रिपरिषद को पदत्याग नहीं करना होता है और एकदलीय व्यवस्था होने के कारण अभी तक कभी भी ऐसा नहीं हुआ है। जहाँ तक मन्त्रिमण्डल के निर्माण का सम्बन्ध है, इसमें भी वास्तविक निर्णय साम्यवादी दल का राजनीतिक ब्यूरो ही करता है और सर्वोच्च सोवियत के द्वारा तो केवल औपचारिक स्वीकृति ही दी जाती है। इस प्रकार वास्तविक स्थिति यह है कि मन्त्रिपरिषद न तो सर्वोच्च सोवियत के प्रति और न उसकी प्रेजिडियम के ही प्रति उत्तरदायी होता है। सोवियत मन्त्रिपरिषद उस प्रकार से सर्वोच्च सोवियत को भंग नहीं कर सकता, जिस प्रकार ब्रिटिश मन्त्रिपरिषद के द्वारा लोकसदन को भंग किया जा सकता है।

(२) **नाममात्र के कार्यपालिका प्रधान का अभाव**—ब्रिटेन या भारत की संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत कार्यपालिका के एक नाममात्र के प्रधान या संवैधानिक राज्याध्यक्ष का पद है, जिसके नाम से शासन सम्बन्धी समस्त कार्य संचालित होते हैं, परन्तु वास्तविक कार्यपालिका शक्ति मन्त्रिमण्डल के हाथों में रहती है। सोवियत शासन पद्धति की विशेषता यह है कि यहाँ ब्रिटिश सम्राट तथा भारतीय राष्ट्रपति के समान नाममात्र के कार्यपालिका प्रधान या संवैधानिक राज्याध्यक्ष की व्यवस्था नहीं की गयी है।

(३) **मन्त्रिपरिषद के निर्माण की विचित्र पद्धति**—पश्चिमी देशों में मन्त्रिमण्डल का निर्माण प्रधानमन्त्री की सलाह से राज्याध्यक्ष द्वारा किया जाता है लेकिन सोवियत संघ में यह अधिकार सर्वोच्च सोवियत को प्राप्त है। इस सम्बन्ध में सर्वोच्च सोवियत की भूमिका भी औपचारिक ही है। वास्तविकता यह है कि मन्त्रिपरिषद के सदस्य साम्यवादी दल के पोलिट ब्यूरो द्वारा मनोनीत किये जाते हैं और सर्वोच्च सोवियत दल के निर्णयों का मात्र अनुमोदन करता है।

(४) **प्रधानमन्त्री की अपेक्षाकृत हीन स्थिति**—भारत या ब्रिटेन की शासन व्यवस्था के समान सोवियत रूस में प्रधानमन्त्री नाम का कोई पद नहीं है, लेकिन सोवियत मन्त्रिपरिषद के अध्यक्ष को ही सोवियत रूस का प्रधानमन्त्री कहा जाता है। सोवियत रूस में यद्यपि प्रधानमन्त्री की स्थिति पर्याप्त महत्त्वपूर्ण है, लेकिन उसे भारत या ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री के समतुल्य नहीं कहा जा सकता। सोवियत मन्त्रिपरिषद के अध्यक्ष को मन्त्रियों की नियुक्ति पदच्युति, नीति निर्धारण और मन्त्रालयों के निर्माण आदि में उस प्रकार स्वविवेक प्राप्त नहीं है जिस प्रकार की स्वविवेकी शक्ति ब्रिटिश प्रधानमन्त्री को प्राप्त है। ब्रिटेन या भारत में प्रधानमन्त्री के त्यागपत्र का अर्थ होता है—सम्पूर्ण मन्त्रिपरिषद का त्यागपत्र, लेकिन सोवियत रूस में ऐसा नहीं है। व्यवहार के अन्तर्गत जब सोवियत रूस में प्रधानमन्त्री पद पर आसीन व्यक्ति साम्यवादी दल का महामन्त्री भी था, तो उस समय उसकी स्थिति ब्रिटिश प्रधानमन्त्री

से भी अधिक प्रमुख थी। लेकिन जब प्रधानमन्त्री और साम्यवादी दल के महामन्त्री पद पर अलग अलग व्यक्ति आसीन थे, तो प्रधानमन्त्री की तुलना में साम्यवादी दल के महामन्त्री की स्थिति ही उच्च थी। उदाहरण के लिए, १९५५ में बुलगानिन प्रधान मन्त्री थे और ख़ुश्चेव साम्यवादी दल के महामन्त्री, और सभी इस बात से परिचित हैं कि उस समय सोवियत रूस का सर्वोच्च शासक ख़ुश्चेव को ही कहा जाता था। इस प्रकार सोवियत प्रधानमन्त्री की स्थिति अन्य किसी संसदीय व्यवस्था वाले प्रधान मन्त्री की तुलना में निश्चित रूप से हीन है। यह कहा जा सकता कि 'सोवियत प्रधानमन्त्री तथा ब्रिटिश प्रधानमन्त्री एक ही नाव में सवार नहीं हैं।'

(५) **दो प्रकार के मन्त्रालय**—सोवियत मन्त्रिपरिषद की एक अन्य विशेषता यह है कि वहाँ दो प्रकार के मन्त्रालय हैं—अखिल संघीय मन्त्रालय तथा संघीय गणराज्जीय मन्त्रालय। इस प्रकार की स्थिति अन्य किसी भी देश में नहीं है।

(६) **एकदलीय राज्य**—अब तक केवल दो ही प्रकार की राजनीतिक पृष्ठभूमि में मन्त्रिपरिषद का अध्ययन किया जाता रहा है ये दो प्रकार की स्थितियाँ हैं—द्विदलीय पद्धति और बहुदलीय पद्धति। लेकिन सोवियत रूस में इन दोनों ही प्रकार की स्थितियों से भिन्न एकदलीय व्यवस्था को अपनाया गया है। वहाँ विरोधी दल के लिए कोई स्थान नहीं है। इस एकदलीय व्यवस्था ने व्यवहार में सोवियत मन्त्रिपरिषद को एक नितान्त भिन्न रूप प्रदान कर दिया है।

प्रश्न

१ सोवियत प्रधानमन्त्री तथा ब्रिटिश प्रधानमन्त्री एक ही नाव में सवार नहीं हैं। इस कथन की व्याख्या कीजिए। (आगरा, १९६३)

२ सोवियत संघ में मन्त्रिपरिषद का गठन किस प्रकार होता है ? प्रेजिडियम तथा सर्वोच्च सोवियत के साथ उसके सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।
(लखनऊ, १९६६ आगरा १९७१)

३ सोवियत संघ के संविधान के कार्यकरण में मन्त्रिपरिषद की स्थिति का परीक्षण कीजिए। (कानपुर, १९७०)

४ सोवियत मन्त्रिमण्डल की विशिष्टताओं की विवेचना कीजिए।

५ सोवियत रूस में मन्त्रिपरिषद के गठन और कार्यों का वर्णन कीजिए तथा सर्वोच्च सोवियत के साथ उसके सम्बन्धों की विवेचना कीजिए।
(आगरा, १९७३)

7

न्यायपालिका
(JUDICIARY)

"यदि कोई न्यायाधीश कच्चा मार्क्सवादी है जो दल के निर्णय के लिए शक्ति के साथ लड नहीं सकता, तो वह बेकार है।"[1]

—कालीनिन

सोवियत रूस की न्याय-व्यवस्था

प्रत्येक देश की न्याय-व्यवस्था उसकी कानून सम्बन्धी मान्यताओं पर आधारित होती है और सोवियत रूस की न्याय व्यवस्था के सम्बन्ध में विशेष रूप से यह बात सत्य है। १९१७ की साम्यवादी क्रान्ति द्वारा पुराने जारशाही कानूनों और न्याय व्यवस्था को पूर्णतया समाप्त कर दिया गया। यह नितान्त स्वाभाविक था क्योंकि कानून के सम्बन्ध में पाश्चात्य परम्परागत विचार और मार्क्सवादी धारणा में आधारभूत अन्तर है। पाश्चात्य परम्परागत धारणा के अनुसार कानून सार्वभौम न्याय के वे सिद्धान्त हैं जो सभी के हित को दृष्टि में रखते हुए मानवीय आचरण को निर्धारित करते हैं सामान्य नागरिक और सरकारी अधिकारी दोनों जिसके समान रूप से अधीन होते हैं और जिनका प्रशासन स्वतन्त्र न्यायालयों द्वारा किया जाता है। लेकिन मार्क्सवादी धारणा, जिसे सोवियत नेता स्वीकार करते हैं राज्य के समान ही कानून को एक वर्गीय संस्था मानती है। उनके अनुसार, कानून सामाजिक व्यवस्था के अन्तर्गत वर्गीय सम्बन्धों की रक्षा के साधन होते हैं। अतः एक पूंजीवादी समाज में कानून बुर्जुआ वर्ग की इच्छा मात्र होती है जिसे सब पर लागू कर दिया जाता है। पाश्चात्य कानूनी व्यवस्था के समर्थकों द्वारा 'कानून के समक्ष समानता' की जो बात कही जाती है, साम्यवादी विचारकों के अनुसार वह वास्तविक असमानता को छिपाने

[1] If a judge is a poor Marxist who does not know the party decisions and who is unable to fight strongly enough for the party decisions he is no good —Kalinin

के लिए उत्पन्न किया गया एक भ्रममात्र है। विशिस्की के शब्दो मे 'कानून शक्तिशाली वग की इच्छा मात्र होती है, जिसे अधिनियम का स्तर दे दिया जाता है।'[1]

अन्तिम आदर्श अवस्था अर्थात् पूर्ण साम्यवाद मे राज्य और स्वाभाविक रूप से कानून के भी लिए भी कोई स्थान नही होगा, क्योकि उसम अलग-अलग वग ही नही होंगे जिनके सम्बन्धो का कानून द्वारा निर्धारित किया जाता है। सक्रमण कालीन अवस्था म क्योकि सवहारावग का शासन होगा अत कानून की शक्ति का प्रयोग पुराने बुर्जुआ वग के विरुद्ध सवहारावग के हितो की रक्षा के लिए किया जायगा। दूसर शब्दो मे कानून की शक्ति का प्रयोग सवहारावग के अधिनायकत्व को सुदृढता प्रदान करने के लिए किया जायगा। कार्पिसकी ने इस सम्बन्ध म लिखा है कि सोवियत सघ मे न्यायालयो की आवश्यकता प्रथमत सोवियत शासन के शत्रुओ से सघष करने के लिए और द्वितीयत श्रमिक वग मे नवीन समाजवादी अनुशासन उत्पन्न करने के लिए है जिससे कि नवीन सोवियत व्यवस्था सुदृढ हो सके।'[2]

न्यायपालिका का सगठन

सोवियत सघ मे कानून और न्याय सघीय सरकार के अधिकार क्षेत्र के विषय हैं। स्वय सविधान मे सोवियत सघ और सघीय गणराज्यो मे न्यायिक सगठन की रूपरेखा निर्धारित कर दी गई है और सघीय सर्वोच्च सोवियत को अधिकार दिया गया है कि वह न्याय प्रणाली न्यायिक कार्यविधि तथा दीवानी एव फौजदारी विधि सहिता सम्बन्धी नियम बनाये। सविधान मे की गई इस व्यवस्था के कारण सम्पूर्ण राज्य के न्यायिक सगठन म एकरूपता एव समानता आ गई है।

सोवियत सघ मे न्यायपालिका का सगठन एक पिरामिड क रूप मे है जिसमे सर्वोच्च स्थान सोवियत सघ के सर्वोच्च न्यायालय का है और सबसे निम्न स्तर पर साथी न्यायालयों (Comradely Courts) को सगठित किया गया है। इन दोनो के मध्य सघीय गणराज्यो तथा स्वायत्त गणराज्यो के सर्वोच्च न्यायालय, प्रदेशो, क्षेत्रो तथा स्वायत्त क्षेत्रो के न्यायालय स्थित है। इसके अतिरिक्त सर्वोच्च सोवियत द्वारा कुछ 'विशिष्ट न्यायालयो' (Special Courts) की भी स्थापना की गई है।

साथी न्यायालय
(Comradely Courts)

सोवियत रूस मे सबसे नीचे के स्तर के न्यायालय 'साथी न्यायालय' हैं। इन

1 Law is merely the will of the dominant class elevated into a statute —*Vyshinsky*

2 In the Soviet Union the Courts are needed first to fight the enemies of Soviet Government and secondly to fight for the consolidation of the new Soviet system to firmly anchor the new socialist discipline among the working people —V Karpinsky, *The Social and State Structure of the U S S R* p 94

न्यायालयो के काय उन नियमो के अनुसार नही होते, जिनके अनुसार नियमित न्यायालयो के काय होते हैं। इनके न्यायाधिकारी का निर्वाचन सम्बधित लोगो के समूहो द्वारा किया जाता है। ये न्यायाधिकारी कानून जानने वाले नही होते और इनके द्वारा न्याय काय सामान्य विवेक के आधार पर ही किया जाता है। इन न्यायालयो की स्थापना कारखानो, जेलो व अन्य सस्थाओ मे की जाती है जहाँ ये उनमे काम करने वाले लोगों के जनसमूहो के पारस्परिक झगडो का निवटारा करते हैं। सगठन और कार्यविधि की दृष्टि से इन साथी न्यायालयो को भारत की न्याय पचायतो के समान कहा जा सकता है।

जन न्यायालय (People's Courts)—यह सोवियत रूस की नियमित न्याय व्यवस्था मे सबसे निम्न स्तर के न्यायालय हैं। इन्हे जिला न्यायालय भी कहते है, क्योकि प्रत्यक जिले मे इस प्रकार का कम से कम एक न्यायालय अवश्य होता है। बडे जिलो या नगरो मे एक से अधिक जन न्यायालय होते हैं। जिले मे कितने जन न्यायालय स्थापित किये जायँ, इसका निणय वह सघीय गणराज्य अथवा स्वायत्त गणराज्य की मन्त्रिपरिषद करती है जिससे वह विशेष जिला सम्बद्ध है। प्रत्येक जिला न्यायालय मे एक न्यायाधीश व दो जन निर्धारक (People s Assessors) होते हैं। न्यायाधीश तथा जन निर्धारको को वहा की जनता वयस्क मताधिकार और गुप्त मतदान के आधार पर चुनती है। प्रत्येक जन न्यायालय मे काम करने के लिए ५० से ७० तक जन निर्धारको को निर्वाचित किया जाता है, जिनमे से दो जन निर्धारक क्रम-क्रम से १० दिन के लिए जन न्यायालय मे काय करते हैं। न्यायाधीशो के लिए कोई योग्यता निर्धारित नही की गई है किन्तु व्यवहार मे इन पदो के लिए वे ही लोग निर्वाचित होते हैं जिन्हे विधियो का सामान्य ज्ञान हो। यदि जनता न्यायाधीशो और जन निर्धारको के काय से सन्तुष्ट नही हो, तो उसके द्वारा उन्हे वापस बुलाया (Recall) जा सकता है।

जन न्यायालयो को दीवानी और फौजदारी दोनो प्रकार के विवादो मे केवल प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार ही प्राप्त है। दीवानी के अन्तगत सम्पत्ति, श्रमिक विधि और उत्तराधिकार आदि से सम्बन्धित विवाद इसके क्षेत्राधिकार मे आते हैं फौजदारी मे निम्न अपराधो से सम्बधित विवाद इसके क्षेत्राधिकार मे आते हैं

(i) नागरिक जीवन, स्वतन्त्रता एव प्रतिष्ठा के विरुद्ध किये गये अपराध—हत्या, बलात्कार आदि।

(ii) सम्पत्ति के विरुद्ध अपराध—चोरी, डाका और कपट आदि।

(iii) सेवा सम्बन्धी अपराध (Service Crimes)—अपनी सत्ता अथवा अधिकारो का दुरुपयोग और गबन आदि।

(iv) शासन प्रणाली के विरुद्ध अपराध—निर्वाचन विधि का उल्लघन, कर न देना, अनिवाय सैनिक भर्ती मे टालमटोल करना और कृषि उपज का निश्चित भाग राज्य को न देना।

सघीय गणराज्यों के उच्चतर न्यायालय (Higher Courts in Union Republics)—सोवियत सघ म जो १५ सघीय गणराज्य है, उनमे से प्रत्येक मे इस प्रकार के उच्चतर न्यायालय स्थित है। बडे सघीय गणराज्यो मे इनकी सख्या अधिक लेकिन छोटे सघीय गणराज्यो म इनकी सख्या कम होती है। सघीय गणराज्य के प्रत्येक उच्चतर न्यायालय मे एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, कई सदस्य और जन निर्धारक होते ह, जिन्ह 'श्रमजीवियों के प्रतिनिधियो को सोवियतें (Soviets of Working People's Deputies) ५ वष के लिये निर्वाचित करती हैं।

इन्हें प्रारम्भिक तथा अपीलीय दोनों ही प्रकार का अधिकार क्षेत्र प्राप्त है। इन न्यायालयो म दो विभाग होते हैं,—एक फौजदारी और दूसरा दीवानी मामलो से सम्बन्धित। प्रत्येक विभाग मे एक न्यायाधीश तथा कम म कम दो जन-निर्धारक होते है। प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार मे फौजदारी से सम्बन्धित प्रश्न आते है जैसे क्रान्ति, राज्य शासन और सोवियत सघ की सुरक्षा के विरुद्ध अपराध जिन्ह महापराध की सज्ञा दी गई है, समाजवादी सम्पत्ति की चोरी तथा अन्य प्रशासकीय और आर्थिक अपराध आदि। दीवानी मामलो मे इसके प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार के अन्तगत राज्य तथा राजकीय सस्थाओ, उद्योगो एव सगठनो के बीच उत्पन्न हुए विवाद आते हैं। अपीलीय क्षेत्राधिकार के अन्तगत यह न्यायालय अपने क्षेत्र म आने वाले जन-न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध अपीलें सुनता है।

स्वायत्त गणराज्यो के सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Courts of Autonomous Republics)—प्रत्येक स्वायत्त गणराज्य म एक सर्वोच्च न्यायालय होता है, जिसके न्यायाधीशो का निर्वाचन स्वयत्त गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत करती है। इसमे एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष कई सदस्य तथा जन निर्धारक होते हैं। इन न्यायालयो के क्षेत्राधिकार का सविधान म ही उल्लेख किया गया है। यह न्यायालय दीवानी तथा फौजदारी दोनो ही प्रकार के विवादो पर निर्णय देता है और इसे प्रारम्भिक तथा अपीलीय दोनो ही प्रकार का क्षेत्राधिकार प्राप्त है।

सघीय गणराज्यों के सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Courts of the Union Republics)—प्रत्येक सघीय गणराज्य म एक सर्वोच्च न्यायालय होता है, जिसम एक अध्यक्ष, कई उपाध्यक्ष सदस्य तथा जन निर्धारक होते ह। न्यायालय के अध्यक्ष को मुख्य न्यायाधीश कहते हैं। इन न्यायाधीशो तथा जन निर्धारको का निर्वाचन सघीय गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत ५ वष के लिए करती है।

इस न्यायालय को दीवानी तथा फौजदारी मामलो म प्रारम्भिक और अपीलीय दोनो प्रकार के अधिकार प्राप्त हैं। इसका प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार विशेष महत्त्व के मामलो के सम्बन्ध म ही है। उदाहरण के लिए वे मामले, जिनम गणराज्य की सर्वोच्च प्रशासनीय सस्थाओ के अधिकारियो के विरुद्ध अभियोग लगाया जाय अथवा वे मामले जो गणराज्य की सर्वोच्च सोवियत के प्रेजिडियम द्वारा न्यायवादी

(Procurator) अथवा मन्त्रिपरिषद के किसी सदस्य के विरुद्ध अभियोग से सम्बन्धित हो।

गणराज्य का सर्वोच्च न्यायालय उस गणराज्य मे स्थित सब न्यायालयो के कार्यों का निरीक्षण करता है तथा उनके निर्णयो को रद्द कर सकता है। इस प्रकार स्वायत्त गणराज्यो, स्वायत्त प्रदेशो एव राष्ट्रीय क्षेत्रो आदि के सभी न्यायालय सघीय गणराज्य के सर्वोच्च न्यायालय के अधीन होते हैं।

सोवियत सघ का सर्वोच्च न्यायालय
(Supreme Court of the U S S R)

रचना–सोवियत न्याय व्यवस्था मे उच्चतम स्तर पर सोवियत सघ का सर्वोच्च न्यायालय स्थित है। इस न्यायालय के न्यायाधीशो की सख्या सविधान के द्वारा निश्चित नही की गयी है, वरन यह सर्वोच्च सोवियत के निर्णय पर निर्भर है। वर्तमान समय मे इसमे एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, ६८ न्यायाधीश और २५ जन निर्धारक (Assessors) होते हैं। इसके अतिरिक्त सघीय गणराज्यो के सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय के 'पदेन सदस्य' (Ex office member) होते हैं। इन न्यायाधीशो का निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो की सयुक्त बैठक मे ५ वर्ष की अवधि के लिए किया जाता है। यद्यपि सविधान मे न्यायाधीश के पद के लिए किन्ही आवश्यक योग्यताओ का उल्लेख नही किया गया है, परन्तु व्यवहार मे कानून के अच्छे ज्ञाता और अनुभवी व्यक्ति ही न्यायाधीश चुने जाते हैं।

सुविधापूर्वक न्याय सचालन के लिए सर्वोच्च न्यायालय के ५ डिवीजन (Division) या मण्डल कर दिये गये है—(१) फौजदारी मण्डल (Criminal Division), (२) दीवानी मण्डल (Civil Division), (३) सैनिक बैंच (Military Bench), (४) रेल यातायात बैंच (Railway Bench) और (५) जलीय परिवहन मण्डल (Water Transport Division)। जब कोई मण्डल प्रारम्भिक न्यायालय के रूप मे बैठता है, तब उसमे एक न्यायाधीश और दो जन निर्धारक होते है, किन्तु जब वह अपीलीय न्यायालय के रूप मे सुनवायी करता है, तो इसमे ८ न्यायाधीश सुनवायी करते हैं। इन मण्डलो के अध्यक्ष अपने अपने मण्डलो की बैठको का सभापतित्व करते और मण्डलो के कार्यों का निर्देशन करते हैं। इनके द्वारा सर्वोच्च न्यायालय की पूर्ण सभा को अपने कार्यों का प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है। सैनिक मण्डल का अध्यक्ष विभिन्न सैनिक न्यायालयो के सगठनात्मक कार्यों का निर्देशन करता है।

सर्वोच्च न्यायालय का अध्यक्ष, जिसे मुख्य न्यायाधीश कहा जाता है, को यह अधिकार है कि वह किसी भी मुकदमे में किसी भी मण्डल की अध्यक्षता ग्रहण कर सकता है। उसे यह भी अधिकार प्राप्त है कि वह किसी मण्डल या सघीय गणराज्य

के किसी न्यायालय मे विचाराधीन किसी मुकदमे को सर्वोच्च न्यायालय की पूण सभा के सम्मुख निणय के लिए रख सकता है। सर्वोच्च न्यायालय की पूण सभा की बैठक दो महीने मे कम से कम एक बार अवश्य ही बुलायी जाती है। इस बैठक मे सर्वोच्च न्यायालय के मण्डलो के उन निणयो तथा आदशो पर विचार किया जाता है, जिन्हे मुख्य न्यायाधीश या सोवियत सघ के महान्यायवादी पुनर्विचाराथ इसके समक्ष प्रस्तुत करते है। इस बैठक मे न्यायालय की कायविधि के सम्बन्ध मे भी आदेश-निर्देश जारी किये जाते है। इस पूण सभा मे सोवियत सघ के महान्यायवादी अनिवाय रूप से उपस्थित होते हैं तथा सोवियत सघ के न्याय मन्त्री भी उपस्थित हो सकते हैं।

सर्वोच्च न्यायालय के अधिकार और काय

सर्वोच्च न्यायालय, सोवियत सघ की न्याय व्यवस्था के शिखर पर स्थित है। अत इसे सोवियत सघ तथा सघातरित गणराज्यो की सम्पूण न्याय-व्यवस्था के निरीक्षण और निर्देशन की शक्ति प्राप्त है। दीवानी और फौजदारी दोनो ही प्रकार के विवादो मे इसे प्रारम्भिक और अपीलीय दोनो ही प्रकार का क्षेत्राधिकार प्राप्त है। इसके प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र म दीवानी तथा फौजदारी के केवल बहुत गम्भीर तथा महत्त्वपूण अखिल सघीय मामले आते है जैसे क्रान्ति विरोधी काय, सोवियत सघ की सुरक्षा के विरुद्ध अपराध या समाजवादी सम्पत्ति को क्षति पहुचाना। ऐसे मामले कानून द्वारा सीमित कर दिये गये हैं।

सर्वोच्च न्यायालय का अधिकाश समय निम्न स्तर के न्यायालयो के निणयो के विरुद्ध की गयी अपीलो को सुनने मे ही बीतता है। अगर वादी या प्रतिवादी मे से कोई भी अपील न कर, तब भी सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश या सोवियत सघ का महान्यायवादी किसी भी निम्न न्यायालय मे चल रहे विवाद को सर्वोच्च न्यायालय के विचाराथ प्रस्तुत कर सकता है। किसी भी न्यायालय के निणय पर सर्वोच्च न्यायालय अपनी इच्छा से भी पुनर्विचार कर सकता है। सर्वोच्च न्यायालय सघातरित गणराज्यो के सर्वोच्च तथा अन्य न्यायालयो और सोवियत सघ के विशिष्ट न्यायालयो के निणयो के विरुद्ध भी की गयी अपीलो पर पुनर्विचार कर उन पर अन्तिम निणय देता है। सर्वोच्च न्यायालय के एक मण्डल के निणय के विरुद्ध भी सम्पूण न्यायालय मे पुनर्विचार किया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय सरकारी कमचारियो द्वारा अपने कतव्यो का पालन करते हुए किये गय अपराधो का निणय करता है। यह सघीय गणराज्यो के बीच उत्पन्न हुए पारस्परिक अन्तद्वन्द्वो (conflicts) स सम्बन्धित मुकदमो की भी सुनवायी करता है तथा उच्च श्रेणी के सैनिक अधिकारी भी इसी के अधिकार क्षेत्र म आते हैं।

इसके अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय के और कोई न्यायिक काय नहीं है। यह कानूनो की व्याख्या कर अपना मत प्रकट कर सकता है, परन्तु इसका मत बाध्य नहीं है। यह कानूनी न होकर मात्र परामर्शदात्री होता है।

न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था नहीं (No Judicial Review)— सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय को संयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय की भाँति न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्राप्त नहीं है। दूसरे शब्दों में, इसे सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत तथा प्रेजिडियम अथवा संघीय गणराज्यों की सर्वोच्च सोवियत तथा उनकी प्रेजिडियमों द्वारा निर्मित विधियों की वैधानिकता के परीक्षण का अधिकार प्राप्त नहीं है। इसी प्रकार इसके द्वारा मन्त्रिपरिषद के निर्णयों तथा आदेशों का भी संविधान के आधार पर परीक्षण नहीं किया जा सकता है। संघीय व्यवस्था वाले राज्यों में सामान्यतया यह आवश्यक समझा जाता है कि सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त हो, जिसके आधार पर उसके द्वारा संविधान के व्याख्याता और रक्षक के रूप में कार्य किया जा सके। लेकिन सोवियत संघ में संविधान की व्याख्या और रक्षा करने की शक्ति सर्वोच्च सोवियत की प्रेजिडियम को प्रदान की गयी है सोवियत संघ के सर्वोच्च न्यायालय को नहीं।

क्या सर्वोच्च न्यायालय स्वतन्त्र है ?

सर्वोच्च न्यायालय के सम्बन्ध में यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या यह एक स्वतन्त्र संस्था है ? संविधान के अनुच्छेद ११२ में कहा गया है कि "न्यायाधीश स्वतन्त्र हैं और यह केवल कानून के आधीन हैं।' किन्तु वस्तुतः यह बात बहुत अधिक सन्देहास्पद है। सोवियत रूस में न्यायपालिका को सरकार का एक स्वतन्त्र अंग नहीं, वरन् सामान्य प्रशासन का ही एक अंग माना गया है। अतः संघ के सर्वोच्च न्यायालय में न्यायाधीशों को भी विवादों का निर्णय करते हुए सरकार की सामान्य नीति का ध्यान रखना होता है। सोवियत रूस के एक प्रसिद्ध न्यायशास्त्री पोलियास्की ने इस सम्बन्ध में कहा है कि "वास्तविक मामलों का परीक्षण करते समय सरकार की सामान्य नीति पर चलने का कर्तव्य न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता से बाहर की बात बिलकुल नहीं है। न्यायपालिका राजसत्ता का एक अंग है और इस कारण वह राजनीति से अलग नहीं हो सकती। न्यायपालिका को राजनीति से अलग रखने की माँग किन्हीं भी परिस्थितियों में और कहीं भी पूरी नहीं होती।"[1]

इस प्रकार न्यायाधीश साम्यवादी दल और उसकी विचारधारा के साथ बंधे हुए हैं और उन्हें स्वतन्त्र नहीं कहा जा सकता।

सर्वोच्च न्यायालय के ये न्यायाधीश योग्यता के आधार पर मनोनीत नहीं किये जाते, वरन् निर्वाचन के आधार पर अपना पद प्राप्त करते हैं। संविधान के

[1] 'The independence of judges in examining concrete cases does not at all exclude the duty of following the general policy of government. Judiciary is an organ of state power and therefore cannot be outside politics. The demand that judiciary remain outside of politics is nowhere and under no circumstances realised.
—*Poliarsky*

अ तगत उनके वापस बुलाये ज.ने (recall) की भी व्यवस्था की गयी है। अत यायाधीशो को सदा यह भय रहता है कि यदि उनके निणय उनके निर्वाचको की इच्छा के प्रतिकूल हुए, तो उ ह वापस बुला लिया जायगा। ऐसी स्थिति म यायाधीशो की स्वत त्रता की कल्पना ही हास्यजनक हो जाती है।

सोवियत सविधान के अ तगत जिस रूप मे प्रोक्यूरेटर जनरल के पद की व्यवस्था की गयी है और उसे याय क्षेत्र म जितन अधिक अधिकार प्रदान किये गये हैं, उससे सर्वोच्च यायालय की स्वत त्रता बहुत अधिक सीमित हो गयी है। सोवियत सघ का यायम त्री भी सर्वोच्च यायालय की कि ही भी बठको मे उपस्थित होकर माग निर्देशन कर सकता है। यायम त्री और प्रोक्यूरटर जनरल का जितना *निय त्रण सर्वोच्च यायालय तथा अ य य.यालयो* पर रहता है और जिस प्रकार वे इन यायालयो के कार्यों म हस्तक्षेप करते हैं वह निश्चित रूप से अनुचित और याय विरुद्ध है। इस निय त्रण के सम्ब ध म ईवानोव (Ivanov) अपनी पुस्तक 'एक यायाधीश की टिप्पणियां' मे लिखत हैं कि "म त्रालय के कुछ अधिकारी, के द्रीय प्रशासनिक कार्यालयो के अध्यक्ष तथा एक उपम त्री यायालय के ऊपर दबाव डालने का प्रयत्न करते थे। बहुधा वे हमको टेलीफोन करते थे और यह समझाने की चेष्टा करते थे कि यदि म त्रालय के विरुद्ध निणय किया गया, तो इससे एक बडा अवांछनीय दृष्टा त स्थापित हो जायगा, जो कि सरकारी सस्था की प्रतिष्ठा के लिए घातक होगा।'

यह निर्विवाद है कि सोवियत सघ म जिस सीमा तक यायपालिका दल के उच्च नेताओ तथा कायपालिका के निय त्रण मे रहती है, उसकी पश्चिमी प्रजात त्रीय शासन प्रणालियो मे कल्पना भी नही की जा सकती।

सोवियत सघ के सर्वोच्च यायालय की स्थिति सयुक्त राज्य अमरीका के सर्वोच्च यायालय [की तुलना मे बहुत कम महत्वपूण है। उसकी इस कम महत्वपूण स्थिति का सबसे बडा कारण यह है कि सर्वोच्च यालय को यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्राप्त नही है। सोवियत रूस मे यायपालिका स्वत त्र भी नही है। वहाँ सर्वोच्च यायालय सरकार के कार्यों की पुष्टि करन का ही काय करता है और वह *शासन का एक सहायक अग मात्र है। सोवियत सघ के सर्वोच्च यायालय का* महत्त्व सवधानिक नही, वरन केवल राजनीतिक ही है।

सोवियत सघ का महान्यायवादी या प्रोक्यूरेटर जनरल
(Procurator General)

सोवियत सविधान मे महा यायावादी के पद की भी व्यवस्था की गई है। सवप्रथम, इस पद की व्यवस्था सन् १९२२ मे सोवियत समाजवादी सघीय रूसी गणराज्य मे की गई थी। १९४६ के पूव इसे 'अटार्नी जनरल' (Attorney General) कहा जाता था, पर तु अब इसका नाम महा यायावादी रखा गया है। महा यायवादी

का सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत के द्वारा ७ वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित किया जाता है।

सोवियत संविधान में न केवल महान्यायवादी के पद की वरन् इसके साथ ही प्रोक्यूरेटर या महान्यायवादी के पद की शृंखला की व्यवस्था की गई है। प्रत्येक संघीय गणराज्य, स्वशासित गणराज्य, स्वशासित क्षेत्र प्रदेश तथा खण्ड में एक एक प्रोक्यूरेटर होता है, जिसकी नियुक्ति संघ के महान्यायवादी द्वारा ५ वर्ष की अवधि के लिए की जाती है। संघीय गणराज्यों के न्यायवादी सोवियत संघ के महान्यायवादी की सहमति से अपने गणराज्य में स्थित क्षेत्रों, जिलों तथा नगरों के न्यायवादियों की नियुक्ति ५ वर्ष के लिए करते हैं।

अधिकार तथा कार्य
(Powers and Functions)

सोवियत संघ के महान्यायवादी का पद उसी प्रकार का है, जिस प्रकार का पद अन्य अनेक राज्यों में महाधिवक्ता (Advocate General) का होता है, पर सोवियत संघ के महान्यायवादी के अधिकार व उसके पद का महत्त्व अन्य राज्यों के महाधिवक्ताओं से निश्चित रूप से बहुत अधिक है। सोवियत संविधान के अनुच्छेद ११३ में महान्यायवादी के कार्यों की व्याख्या की गयी है। संक्षेप में, उसके अधिकार तथा काम इस प्रकार हैं

(१) इसे सोवियत संघ की सभी सरकारी संस्थाओं, अधिकारियों एवं नागरिकों द्वारा कानून का पालन कराने व कानून को उचित ढंग से लागू कराने की सर्वोच्च निरीक्षण शक्ति प्रदान की गई है। संविधान के अनुच्छेद ११३ में कहा गया है कि "सोवियत संघ के महान्यायवादी को यह अधिकार होगा कि वह इस बात का निरीक्षण करे कि सोवियत संघ के मन्त्रालय तथा उनके आधीन संस्थाएँ, सोवियत संघ के पदाधिकारी तथा नागरिक कानून का ठीक प्रकार और पूर्ण रूप से पालन कर रहे हैं अथवा नहीं।"

(२) वह किसी भी राजकीय अंग या पदाधिकारी के अवैधानिक निर्णय के विरुद्ध अपील कर सकता है। न्यायालयों का कर्तव्य है कि वे महान्यायवादी द्वारा प्रस्तुत किये गये मामलों पर पुनर्विचार कर निर्णय दें।

(३) वह फौजदारी कार्यवाही प्रारम्भ करता है। वह फौजदारी मामलों की जाँच पड़ताल अथवा खोज बीन करता है तथा उन परिस्थितियों की जाँच करता है, जिनके कारण वह अपराध किया गया। वह इस बात को भी देखता है कि अन्य अन्वेषणकारी संस्थाएँ कानून की सीमाओं के अन्दर ही अपना कार्य करती है अथवा नहीं।

(४) जब न्यायालय के सम्मुख किसी फौजदारी अभियोग की सुनवाई होती है, तो महान्यायवादी राज्य की ओर से अभियोग के समर्थन में वकालत करता

(५) न्यायालयों द्वारा दिये गये निर्णयों के औचित्य अथवा वैधानिकता की भी महान्यायवादी जाँच पड़ताल करता है और उन निर्णयों के विरुद्ध अपील करता है जिन्हें वह अनुचित या भ्रमात्मक समझे।

(६) वह यह भी देखता है कि न्यायालय द्वारा दिये गये निर्णय सही प्रकार से लागू किये जा रहे हैं या नहीं। वह न्यायालय द्वारा दिये गये दण्डों को लागू करवाता है।

(७) वह किसी भी नागरिक को अपराध के सन्देह पर गिरफ्तार करवा सकता है। चूँकि वह जनता के अधिकारों का रक्षक है, इसलिए उसकी आज्ञा के बिना कोई भी नागरिक गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है।

(८) वह सारे देश में कानूनों की एकरूपता स्थापित करता है। इस सम्बन्ध में कार्टर का कथन है—'समस्त सोवियत संघ में, कानूनों और नियमों की एकरूपता स्थापित करने में, महान्यायवादी का हाथ सर्वोच्च न्यायालय से भी अधिक है।"

सोवियत रूस में महान्यायवादी का पद निश्चित रूप से बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। विशिंस्की जो स्वयं महान्यायवादी पद पर रहा उसकी प्रभावशाली स्थिति का वर्णन करते हुए लिखता है कि— 'महान्यायवादी समाजवादी कानून का रक्षक समाजवादी दल और सोवियत सत्ता का नेता तथा समाजवाद का प्रबल समर्थक है।'[1] टाउस्टर के अनुसार, 'महान्यायवादी साम्यवादी दल के नियन्त्रण में सर्वहारावर्ग के अधिनायकत्व का मुख्य आधार और मुख्य शक्ति है।'[2]

सोवियत न्याय-व्यवस्था की विशेषताएँ

कानून और न्याय व्यवस्था के सम्बन्ध में जो साम्यवादी विचारधारा है और सोवियत रूस में न्यायपालिका का जिस रूप में गठित किया गया है, उसके आधार पर न्यायप्रणाली की निम्नलिखित विशेषताएँ बतलाई जा सकती हैं

(१) न्याय व्यवस्था सामान्य प्रशासन का ही एक अंग—पश्चिमी देशों में न्यायपालिका की स्वतन्त्रता की धारणा को अपनाया जाता है, जिसका तात्पर्य यह है कि न्यायपालिका व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के दबाव से स्वतन्त्र रहकर अपना कार्य करती है। इसमें यह भी बात निहित है कि न्यायाधीशों की अपनी कोई राजनीतिक विचारधारा नहीं होती और उनके द्वारा प्राकृतिक न्याय की धारणा के आधार पर ही न्यायिक कार्य किया जाता है। लेकिन सोवियत रूस में न्यायपालिका स्वतन्त्र न होकर सामान्य प्रशासन का ही एक अंग है। शासक दल की नीति की

1 The Soviet Prosecuting Officer is the watchman of socialist legality the leader of the Communist Party and of the Soviet authority the champion of socialism —*Vyshinsky*

2 Procurator General is an integral lever of the proletariat dictatorship directed by the party —*Towster*

साधना ही न्यायपालिका का सर्वोच्च कर्तव्य है और सोवियत नेता इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार करते हैं। एक भूतपूर्व न्यायमन्त्री रिचकोव ने १६३८ मे लिखा था कि "अक्टूबर की समाजवादी क्रान्ति की रक्षा करने तथा समाजवादी निर्माण कार्य को सुदृढ करने की दिशा मे सोवियत न्यायपालिका श्रमिक वर्ग के अधिनायकत्व का एक तेज और महत्त्वपूर्ण अस्त्र है।" इसी प्रकार सर्वोच्च सोवियत की प्रेजिडियम के भूतपूर्व अध्यक्ष कालीनिन ने कहा था कि "यदि कोई न्यायाधीश कच्चा मार्क्सवादी है, जो दलीय निर्णयो से परिचित नहीं है और उनके लिए शक्ति के साथ लड नहीं सकता तो वह बेकार है।"

(२) निश्चित अवधि के लिए निर्वाचित न्यायाधीश—सामान्यतया कार्यपालिका द्वारा मनोनीत न्यायाधीशो को ही न्यायिक कार्य के लिए श्रेष्ठ समझा जाता है लेकिन सोवियत रूस मे निश्चित अवधि के लिए निर्वाचित न्यायाधीशो की व्यवस्था को अपनाया गया है। सर्वोच्च न्यायलय एव विशिष्ट न्यायालयो के न्यायाधीश सर्वोच्च सोवियत द्वारा ५ वर्ष के लिए निर्वाचित होते हैं। सघीय गणतन्त्रो व अन्य क्षेत्रीय इकाइयो के न्यायाधीशो का निर्वाचन उनकी सोवियते ५ वर्ष के लिए करती हैं। सबसे नीचे के न्यायालयो तथा जन न्यायालयो के न्यायाधीशो को जिले के नागरिक तीन वर्ष के लिए निर्वाचित करते है। साम्यवादी नेता इस व्यवस्था के आधार पर न्यायिक सगठन के प्रजातन्त्रीय होने का दावा करते हैं, लेकिन अन्य विचारको का कथन है कि इससे न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को आघात पहुचा है।

(३) जन-निर्धारकों (Assessors) की व्यवस्था—सोवियत रूस में न्यायिक कार्य के लिए न्यायाधीशो के साथ-साथ जन-निर्धारको (Assessors) की भी व्यवस्था की गई है। ये जन निर्धारक भी निर्वाचित होते है। नीचे के न्यायालयो मे इन जन-निर्धारको द्वारा मामलो की सुनवाई के समय मे ही कार्य किया जाता है। जन निर्धारको की यह व्यवस्था पश्चिमी देशो की जूरी के ही समान है, अन्तर केवल यह है कि जूरी मानवीय आधार पर कार्य करती है, जन निर्धारक साम्यवादी सिद्धान्तो के आधार पर।

(४) न्यायाधीशो और जन-निर्धारको के प्रत्यावर्तन की व्यवस्था— न्यायाधीश और जन निर्धारक न केवल निर्वाचित हैं, वरन् उनको चुनने वाली सस्था प्रत्यावर्तन के आधार पर उनको पदो से हटा भी सकती है। नीचे के न्यायालयो के न्यायाधीशो के विरुद्ध सम्बन्धित गणतन्त्र की प्रेजिडियम की स्वीकृति से जिले के प्रोक्यूरेटर द्वारा तथा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो के विरुद्ध सघ की प्रेजिडियम की स्वीकृति से प्रोक्यूरेटर जनरल द्वारा फौजदारी का मुकदमा चलाया जा सकता है। जिन न्यायाधीशो के द्वारा अपने निर्णयो में साम्यवादी दर्शन का पूर्ण पालन नहीं किया जाता उनके प्रति ऐसा ही किया जाता है।

(५) सभी के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय—रूस मे सभी व्यक्ति

कानून के समक्ष समान हैं और सभी के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय न्यायिक कार्य करते हैं। वहाँ प्रशासकीय न्यायालयों जैसे कोई न्यायालय नहीं हैं।

(६) मुकदमों की सार्वजनिक सुनवाई—सोवियत रूस में न्यायिक कार्यवाही प्रायः सार्वजनिक रूप में होती है। जनता उसे देख सकती है और अभियुक्त को स्वयं अथवा वकील के माध्यम से अपने पक्ष की पैरवी का अधिकार प्राप्त होता है। लेकिन कुछ विशेष प्रकार के मामलों में गुप्त सुनवाई की व्यवस्था को अपनाया जा सकता है।

(७) समस्त संघ में एक समान न्यायिक प्रक्रिया—सोवियत रूस में यद्यपि न्यायिक कार्य विकेन्द्रित है तथापि सम्पूर्ण संघ के क्षेत्र में दीवानी या फौजदारी की न्यायिक प्रक्रिया एक सी है, क्योंकि कानून व न्याय संघीय सरकार के अधिकार क्षेत्र का विषय है।

(८) न्यायिक कार्यवाही क्षेत्रीय भाषाओं में—सोवियत रूस में न्यायालयों के द्वारा क्षेत्र विशेष की भाषा में ही न्यायिक कार्यवाही का संचालन किया जाता है। यदि कोई व्यक्ति उस क्षेत्र विशेष की भाषा नहीं समझता है तो उसकी सुविधा को दृष्टि में रखते हुए उसे द्विभाषिया (Interpreter) दिया जाता है।

(९) निजी पेशेवर वकील नहीं—सोवियत रूस में वकालत के व्यवसाय का भी राष्ट्रीयकरण कर दिया गया है और वकालत निजी व्यवसाय के रूप में नहीं की जाती है। न्याय मन्त्रालय प्रादेशिक वकील संघ को निश्चित धनराशि दे देता है और वकील संघ इसे अपने सदस्यों में बाँट देता है। सोवियत रूस के लोग इस बात पर गर्व करते हुए कहते हैं कि हमारे यहाँ पर कोई भी व्यक्ति धन की कमी के कारण कानूनी सहायता से वंचित नहीं रहता है।

(१०) न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार नहीं—ऐसा माना जाता है कि कम से कम संघीय व्यवस्था वाले राज्यों में सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या करने और उसकी रक्षा करने का अधिकार प्राप्त होना चाहिए लेकिन सोवियत रूस के सर्वोच्च न्यायालय को इस प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं है। सोवियत रूस में संविधान की व्याख्या का अधिकार केवल प्रेजिडियम को ही प्राप्त है।

व्यक्तियों को न्याय प्राप्त हो इसके दो आशय होते हैं। प्रथमतः व्यक्ति की स्थिति की समाज के अन्य सबल और साधनसम्पन्न व्यक्तियों से रक्षा की जाय और द्वितीय, राज्य के हस्तक्षेप से व्यक्ति के अधिकारों की रक्षा की जाय। जहाँ तक पश्चिमी देशों का सम्बन्ध है वहाँ समाज के साधनसम्पन्न वर्ग द्वारा दोनों ही रूपों में न्याय प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन न्याय बहुत महँगा होने के कारण निर्धन व्यक्तियों की स्थिति समाज के साधनसम्पन्न वर्ग की तुलना में बहुत निर्बल है। सोवियत रूस में धन की असमानता को इस सीमा तक अवश्य ही दूर कर दिया गया है कि किसी भी व्यक्ति द्वारा धन सम्पदा के बल पर अन्याय या शोषण की प्रवृत्ति

को नही अपनाया जा सकता। लेकिन जहा तक राज्य के विरुद्ध व्यक्तियो के अधिकारो और स्वतन्त्रताओ का सम्बन्ध है, सोवियत रूस मे उनकी रक्षा की उचित व्यवस्था नही की गई है। एक पंक्ति मे कहा जा सकता है कि सोवियत रूस मे न्याय सभी को सुलभ है लेकिन तभी तक जब तक कि उनका आचरण साम्यवादी विचारधारा और व्यवस्था तथा तत्कालीन शासको के अनुरूप हो।

प्रश्न

१ सोवियत रूस मे न्यायपालिका के सगठन तथा कार्यो का वणन कीजिए।
(लखनऊ १९६२)

२ सोवियत सघ की न्यायिक प्रणाली पर एक निबन्ध लिखिए। (लखनऊ, १९६४)

३ प्रोक्यूरेटर जनरल के पद पर टिप्पणी लिखिए।

8

सोवियत प्रणाली और लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद
(SOVIET SYSTEM AND DEMOCRATIC CENTRALISM)

"सोवियतें सोवियत रूस की प्रमुख सर्वगुणी राजकीय सस्थाएँ हैं जो रूस के सभी श्रमिक वर्गों को लिंग, राष्ट्रीयता, प्रजातीयता, व्यवसाय, विद्या और धर्म के भेदभाव के बिना एक सूत्र मे बाँधती हैं।"[1]

—विशिस्की

सोवियतें सोवियत सघ की अपनी विशेष सस्थाएँ हैं, जिनकी सहगामी सस्थाएँ विश्व के अन्य किसी भी राज्य मे मिलनी दुलभ है। रूसी नागरिकों को इन पर बहुत गर्व है। उनके मतानुसार सोवियत प्रणाली के कारण ही रूस की ससदीय व्यवस्था पाश्चात्य देशों की ससदीय व्यवस्था से श्रेष्ठतर है। सोवियतों की व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो रूस की जनता की अपनी व्यवस्था है और जिसके माध्यम से ग्राम स्तर से लेकर सघीय शासन के स्तर तक जनसाधारण शासन काय मे भाग ले सकते है। सोवियत प्रणाली की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुए लेनिन ने लिखा है कि 'शासन के काय मे पूरी स्वतन्त्रता, पूरी व्यापकता तथा पूरी शक्ति के साथ समस्त जनता को लगाने की दृष्टि से सोवियत प्रणाली बुर्जुआ ससदीय व्यवस्था से कहीं अधिक श्रेष्ठ है। यह एक ऐसी शक्ति है, जिसका प्रयोग सबके लिए खुला हुआ है, जिसके द्वारा जनता की दृष्टि मे आने वाला प्रत्येक काय पूरा हो सकता है जो सम्पूर्ण जनता के लिए प्राप्त है तथा जिसकी उत्पत्ति सीधी जनता से होती है।"

1 The Soviets constitute the most all embracing state organisation which unite *all the working people of the Soviet Union regardless* of sex nationality race occupation party affiliation education religion etc —Vyshinsky *The Law of the Soviet State* p 32

The Soviet system is immensely superior to the bourgeoise parliamentarianism for drawing in the freest broadest and *the most* energetic manner all the masses in the work of the government It is a power that is open to all that does everything in the sight of the masses that is accessible to the masses to that springs directly from the masses —*Lenin (Quoted by G M* Carter *Govt of Soviet Union* p 93)

सोवियतो का स्वरूप

'सोवियत' शब्द रूसी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ होता है 'सभा' अथवा 'परिषद'। इस प्रकार अपने शाब्दिक अर्थ मे सोवियत जनप्रतिनिधियो की एक सभा हुई। परन्तु सोवियत और जनप्रतिनिधि सभा मे महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि जन-प्रतिनिधि सभा तो सभी वर्गो के व्यक्तियो की प्रतिनिधि सभा हो सकती है, लेकिन सोवियत मे शोषक और शोषित सभी व्यक्तियो का प्रतिनिधित्व होने के बजाय, केवल श्रमिक वर्ग ही सगठित होता है। इस प्रकार सोवियत एक नवीन प्रकार की प्रतिनिधि परिषद है, जो विशुद्ध रूप से सर्वहारा वर्ग की सस्था है। अन्य प्रतिनिधि सस्थाएँ कहने के लिए तो सभी वर्गो का प्रतिनिधित्व करती हैं लेकिन यथार्थ म इन प्रतिनिधि सस्थाओ के अन्तर्गत समाज का शोषक वर्ग, जमीदार और पूजीपति आ जाते है और परिणामत ये सस्थाएँ श्रमिक और समाज के अन्य निम्न वर्गो के हितो की रक्षा नही कर पाती, लेकिन सोवियत रूस की सोवियत प्रणाली,म सर्वहारावर्ग अर्थात् श्रमिक वर्ग का प्रभुत्व है। अन्य प्रतिनिधि सस्थाओ से इसकी भिन्नता और श्रेष्ठता बतलाते हुए विशिंस्की ने लिखा है कि "सोवियत राजशक्ति तथा ससदीय रूप मे आधारभूत अन्तर यह है कि सोवियत प्रणाली में राज्य के सचालन मे समस्त श्रमिक वर्गो के सम्पूर्ण तौर पर भाग लेने के उद्देश्य को प्राप्त किया गया है।"[1] कार्पिसकी इन सोवियतो के सम्बन्ध म लिखते है कि 'सोवियतें शुद्ध लोकप्रिय सरकारें हैं और लोगो के माँस तथा हड्डियों की बनी हुई हैं।"[2]

सोवियतो का उदय

सोवियतें १९३६ के सविधान की ही उपज नही है वरन् इनका उदय १९०५ के क्रान्तिकारी उपद्रवो के समय ही हो गया था। ये सोवियतें एक प्रकार की क्रान्ति-कारी समितिया थी, जिनका उद्देश्य हडतालो और अन्य साधनों के माध्यम से नवीन व्यवस्था की स्थापना करना था। यद्यपि जार ने इन सोवियतो और उनके क्रान्ति-कारी आन्दोलन को कुचल दिया, लेकिन थोडे ही समय मे जनता के सामने इनकी उपयोगिता नितान्त स्पष्ट हो गयी थी। सन् १९१७ के क्रान्तिकाल म, फरवरी मार्च मे ही ये पुन उठ खडी हुईं। इस बार ये बडे बडे नगरो से लेकर छोटे छोटे गाँवो और सनिको तक म फैल गयी। बोल्शेविको ने सर्वहारावर्ग की क्रान्ति के सघर्ष म

[1] "The fundamental difference between the Soviet form of state power and the parliamentary form is that in the Soviet form is realised the universal participation of working people one and all in the management of the state

—A Y Vyshinsky, *Law of the Soviet State* p 152

[2] The Soviet are genuine popular governments are of flesh and bone of the people

—V Karpinsky *The Social and State Structure of U S S R* p 43

इन सोवियतो की शक्ति को पहचाना और लेनिन ने नारा बुलन्द किया— सारी शक्ति सोवियतो को' (*All power to the Soviets*)। स्वभावत क्रान्ति के बाद १६१८ से ही ये सोवियतें नवीन सवैधानिक पद्धति का आधार बन गयी और इन्होने सोवियत सघ के प्रशासन के प्रत्येक क्षेत्र–ग्राम, नगर जिला या प्रान्त, अवयवी सघीय गणराज्य और अखिल सघ—मे शासन के मूल अग का रूप प्राप्त कर लिया।

सोवियतो का निर्वाचन और सगठन

सोवियत रूस मे सोवियतो का एक पूरा जाल बिछा हुआ है जो गाँव से प्रारम्भ होकर केन्द्रीय सरकार तक विस्तृत है। सन १६३६ के पूव सभी सोवियतो का गठन अप्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर होता था, लेकिन १६३६ के सविधान के अन्तगत इन सोवियतो के निर्माण हेतु प्रत्यक्ष निर्वाचन और गुप्त मतदान की प्रणाली को अपनाया गया। १८ वष की आयु प्राप्त प्रत्येक नागरिक के द्वारा इस प्रक्रिया म भाग लिया जाता है। सोवियतो के प्रतिनिधियो से यह आशा की गयी है कि वे जनता की आकाक्षाओ के अनुकूल काय करेंगे। यदि जनता इन प्रतिनिधियों के काय से असन्तुष्ट हो तो जनता कायकाल की समाप्ति के पूव ही उन्हे वापस बुला सकती है।

वतमान सोवियतो के प्रमुख प्रकारो और उनके सगठन का अध्ययन निम्न प्रकार से किया जा सकता है

प्रारम्भिक सोवियतें (Primary Soviets)—प्रारम्भिक सोवियतें जनता की ऐसी छोटी छोटी समितिया हैं जो प्राय प्रत्येक गाँव प्रत्येक कारखाने, प्रत्येक नगर और सेना की प्रत्येक रैजीमेण्ट मे होती हैं। इनका काय अपने क्षेत्र से सम्बन्धित सभी बातो की व्यवस्था करना होता है। उदाहरणाथ, किसी कारखाने की सोवियत मे वहाँ के कमचारियो के प्रतिनिधि होते हैं, जो कारखाने का प्रबन्ध करते है। इसी तरह एक ग्राम सोवियत मे ग्राम के लोगो के प्रतिनिधि होते है और वे उस ग्राम की स्थानीय आवश्यकताओ की पूर्ति करते हैं। सोवियत रूस के प्रशासनिक ढाँचे की प्रारम्भिक और मूलभूत इकाई मे प्रारम्भिक सोवियतें ही हैं।

जिला सोवियतें (District Soviets)—प्रारम्भिक सोवियतो के ऊपर जिला सोवियतें होती हैं जिन्ह 'रेयन्स' (Raions) का नाम दिया गया है। ये सोवियतें अपेक्षाकृत व्यापक होती हैं और इन्हें बहुत विशाल क्षेत्र का प्रबन्ध करना होता है। इनका सबसे प्रमुख काय प्रारम्भिक सोवियतो का माग निर्देशन है। जिला सोवियतें प्रारम्भिक सोवियतो को प्रान्तीय सोवियतो से जोडने का काय करती हैं।

प्रान्तीय सोवियतें (Provincial Soviets)—जिला सोवियतो के ऊपर प्रान्तीय सोवियतें होती हैं जिन्हें 'आब्लास्टी' (Oblasti) का नाम दिया गया है। इन पर पूरे प्रान्त के प्रबन्ध का दायित्व होता है। प्रान्तीय सोवियतें नीति सम्बन्धी निणय लेती हैं और उन सिद्धान्तो का निश्चय करती हैं, जिनके आधार पर निम्नतर

सोवियतो के द्वारा काय किया जाता है। प्रान्तीय सोवियतो का स्थानीय विषयो के प्रबन्ध से कोई सम्बन्ध नही होना, क्योकि स्थानीय विषयो का प्रबन्ध प्रारम्भिक और जिला सोवियतें कर लेती हैं।

सघीय गणराज्यों की सोवियतें (Soviets of Constituent Union Republics)—ये सोवियतें मुख्यतया सघीय गणराज्यो की व्यवस्थापिका सभाए होती हैं। ये उन सभी विषयो पर कानूना का निमाण करती है, जिनके प्रबन्ध का अधिकार सविधान के द्वारा सघीय गणराज्यो को प्रदान किया गया है। शिक्षा कृषि, स्थानीय स्वशासन और मत्स्य काय आदि अनेक विषय इनके कायक्षेत्र में सम्मिलित हैं। इन सोवियतो द्वारा इस बात का भी निणय किया जाता है कि निम्नतर सोवियता के प्रशासन द्वारा कानूना को किस प्रकार लागू किया जायगा।

सर्वोच्च सोवियत (Supreme Soviet)—सोवियता के इस समस्त ढाचे के ऊपर सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत है। यह सर्वोच्च सोवियत केन्द्रीय व्यवस्थापिका है, जिसके दो सदन हैं। सर्वोच्च सोवियत की शक्ति सर्वोच्च है और इसे सभी सघीय विषयो पर कानून बनाने का अधिकार प्राप्त है।

सोवियतों के काय

सोवियत सघ के समस्त क्षेत्र मे लगभग ७० हजार सोवियतें है। य स्व शासन की इकाइयाँ हैं, जिनके द्वारा व्यवस्थापन और कायपालन सम्बन्धी दोना ही प्रकार के काय किये जाते ह। ये सोवियते अपन क्षेत्र के लिए कानून बनाती और उनकी क्रियान्विती हेतु कायकारिणी समिति का भी निर्वाचन करती हैं। प्रत्येक सोवियत का कार्य अपने क्षेत्र का प्रबन्ध करना और अपन स निम्न स्तर की सोवियत के काय का निरीक्षण करना होता है। निम्नतर स्तर की सोवियत के काय का निरीक्षण करते हुए उच्चतर स्तर की सोवियत को यह ध्यान रखना होता है कि निम्नतर स्तर की सोवियत के स्वशासन का अधिकार अनावश्यक रूप से भग न हो। सोवियत सविधान के अनुच्छेद ७० मे सोवियतो के कार्यों का उल्लेख किया गया है, जो इस प्रकार हैं

१ सोवियतें अपने आधीन प्रशासनिक अगो के कार्यों का निर्देशन करती ह।

२ वे यह देखती हैं कि कानून तथा व्यवस्था बनी रह।

३ वे कानूना का पालन करवाती हैं।

४ नागरिको के अधिकारा की रक्षा करती हैं।

५ स्थानीय प्रकृति के आर्थिक और सास्कृतिक मामला के सम्बन्ध म निर्देश जारी करती हैं।

६ स्थानीय वार्षिक वित्तीय विवरणो का तैयार करती तथा इन्हे स्वीकृति प्रदान करती हैं।

इस प्रकार सोवियत सघ के प्रत्यक क्षेत्र मे सोवियता का ही प्रभाव है। लेनिन ने इस तथ्य को व्यक्त करते हुए ही लिखा था कि 'सोवियतें हमार

देश मे समस्त राज्य शक्ति का स्थायी और एकमात्र आधार बन चुकी हैं।' इन्हें सोवियत रूस के 'समाजवादी समाज का राजनीतिक आधार' कहा जा सकता है।

सोवियतें तथा साम्यवादी दल

सोवियत रूस की शासन व्यवस्था के अन्तगत प्रारम्भ से ही सोवियतें और साम्यवादी दल एक दूसरे के पूरक के रूप में काय करते रहे हैं। सोवियत शासन व्यवस्था मे सोवियतें महत्त्वपूण रूप से भाग लेती हैं। लेकिन इसके साथ ही यह भी तथ्य है कि ये समस्त सोवियतें—चाहे व प्रारम्भिक सोवियतें हो या अखिल सघीय महत्त्व की सोवियतें—अपने-अपने प्रदेश अथवा क्षेत्र के साम्यवादी दल के सगठन के साथ मिलकर उनके सचालन और निरीक्षण मे काय करती रहती हैं। वस्तुत सोवियतो के उत्तरोत्तर सगठन के साथ साम्यवादी दल का उत्तरोत्तर सगठन भी निकट सहयोग से काय करता है और साम्यवादी दल की शाखाए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सोवियतो के काय को नियन्त्रित करती रहती हैं। स्टालिन ने इसे स्वीकार करते हुए स्पष्ट कहा था कि 'साम्यवादी दल से आदेश प्राप्त हुए बिना हमारी सोवियतें कभी कोई महत्त्वपूण राजनीतिक अथवा सगठन सम्बन्धी निणय नहीं करतीं।" साम्यवादी दल सोवियतो के विस्तृत सगठन द्वारा ही सवसाधारण मे अपने प्रभाव की अभिवृद्धि करता है और इनके माध्यम से ही सहानुभूतिशील गैर साम्यवादी तत्त्वो का शासन मे सहयोग प्राप्त करता है। एक अन्य स्थान पर स्टालिन ने लिखा है कि 'सोवियतें वे सचार साधन हैं जो दल का जनता के साथ सम्बन्ध जोडती हैं। ये वे सगठन हैं जो मजदूर जनता को दल के नेतृत्व में एकत्रित करती हैं।"[1]

सोवियत सघ मे लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद
(Democratic Centralism in U S S R)

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद—सोवियत सविधान और व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद है और सोवियत रूस मे सघीय इकाइयो की शासन व्यवस्था, उच्च व निम्न सोवियतें तथा साम्यवादी दल सभी का काय लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के आधार पर सचालित होता है। लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद अपने आप मे एक विरोधाभास ही प्रतीत होता है क्योंकि लोकतन्त्र का पूरक विकेन्द्रवाद है, केन्द्रवाद नहीं लेकिन सोवियत रूस मे लोकतन्त्र और केन्द्रवाद को परस्पर विरोधी प्रवृत्तियो के बीच समन्वय स्थापित किया गया है और यही लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद है।

इसमे लोकतान्त्रिक तत्त्व यह है कि नागरिको को शासन काय मे भाग लेने का समुचित अवसर प्रदान किया जाता है। केन्द्रवादी तत्त्व यह है कि शासन या दल

1 The Soviets are transmission belts linking the party with the mass organizations which rally the labouring masses under the leadership of the party —Stalin *Problems of Leninism* p 149

का प्रत्येक अंग अपने उच्च अंग के आधीन है। निम्न स्तर के अंग को उसी सीमा तक स्वतन्त्रता है जिस सीमा तक उच्च अंग उस पर प्रतिबन्ध नहीं लगाता। प्रत्येक निम्न अंग के लिए अपने उच्च अंग की आज्ञा का पालन करना अनिवार्य है। अतः अन्ततोगत्वा समस्त राज्यशक्ति एक केन्द्र बिन्दु में जाकर निहित हो जाती है। इस प्रकार लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद मौलिक प्रश्नों के सम्बन्ध में एकरूपता तथा मौलिक नीतियों की क्रियान्विती में केन्द्रीय मार्गदर्शन और नेतृत्व स्थापित करता है किन्तु स्थानीय प्रकृति के मामलों में स्वशासन और अनेकरूपता को स्वीकार कर लेता है। लेनिन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का अर्थ बतलाते हैं 'निरीक्षण का केन्द्रीकरण और कार्यों का विकेन्द्रीकरण।'

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद तथा नौकरशाही केन्द्रवाद में अन्तर—सोवियत नेता और साम्यवादी विचारक इस लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के बहुत अधिक प्रशंसक हैं। उनके द्वारा इस बात पर बहुत अधिक बल दिया गया है कि सोवियत रूस का यह लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद पश्चिमी देशों के नौकरशाही केन्द्रवाद (Bureaucratic Centralism) से नितान्त भिन्न है। उनके अनुसार, नौकरशाही केन्द्रवाद में उच्च-पदासीन सरकारी अधिकारियों द्वारा सामान्य जनता पर एक व्यवस्था लाद दी जाती है और आज्ञापालन के अतिरिक्त सामान्य जनता का शासन में कोई भाग नहीं होता। लेकिन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद में दो बातों में नौकरशाही केन्द्रवाद से भिन्न है। प्रथमतः, इसके अन्तर्गत मूल प्रश्नों के सम्बन्ध में निर्णय नौकरशाही के सदस्यों द्वारा नहीं वरन् जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा लिया जाता है और ये प्रतिनिधि जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं। द्वितीय, लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद में नौकरशाही केन्द्रवाद के विपरीत स्थानीय इकाइयों को पर्याप्त स्वतन्त्रता दी जाती है और एक बहुत बड़े क्षेत्र में उनके द्वारा अपनी इच्छानुसार कार्य किया जा सकता है। विशिंस्की ने इस सम्बन्ध में लिखा है कि "सोवियत संघ का शासन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद पर आधारित है, जो पूंजीवादी देशों के नौकरशाही केन्द्रवाद के नितान्त विपरीत है।"[1]

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद व्यवहार में (Democratic Centralism in Practice)—लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद सोवियत व्यवस्था का एक बहुत अधिक विवादास्पद सिद्धान्त है। सोवियत लेखकों द्वारा जहाँ इसकी बहुत अधिक प्रशंसा की गयी है, वहाँ पश्चिमी लेखक इसकी आलोचना में कोई कसर नहीं उठा रखते हैं। ऐसी स्थिति में यह बतलाना बहुत अधिक कठिन हो जाता है कि लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद व्यवहार में किस प्रकार कार्य कर रहा है। लेकिन सामान्य विचारधारा यही है कि यद्यपि सोवियत व्यवस्था में स्थानीय स्वायत्तता और केन्द्रीय नियन्त्रण के बीच

[1] "The Soviet Union State is built on the principle of democratic centralism sharply opposed to the bureaucratic centralism of the capitalist state.

—A. Y. Vyshinsky *The Law of the Soviet State* p. 230

समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया गया है, लेकिन व्यवहार मे स्थानीय स्वायत्तता की अपेक्षा केन्द्रवाद पर बहुत अधिक बल है। फेनसोड का विचार है कि लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद मे केन्द्रवाद को ही प्रधानता प्रदान की गयी है।"[1] ऑग और जिक का विचार है कि "यह विश्वास करना कठिन है कि लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद में उतना लोकतन्त्र है जितना कि केन्द्रवाद। फिर भी उपलब्ध प्रमाणो के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पूर्णरूप से स्थानीय प्रकृति के दिन प्रतिदिन के मामलो मे किसी सीमा तक स्वतन्त्रता अवश्य रहती है।"[2] इस प्रकार पूर्णतया स्थानीय प्रकृति के मामलो मे लोकतन्त्र के तत्त्व को भले ही अपनाया गया हो, अन्तिम नियन्त्रण और नेतृत्व केन्द्र को ही प्राप्त है।

सोवियत सघीय व्यवस्था मे लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद—रूस की सघीय व्यवस्था मे लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त को ही अपनाया गया है। सविधान के द्वारा सघीय गणराज्यो को पर्याप्त स्वायत्तता के अधिकार प्रदान किये गये हैं। सघीय व्यवस्था के अन्तर्गत इकाइयो को प्राप्त परम्परागत अधिकारो के अतिरिक्त उन्हे कुछ विशेष अधिकार भी प्रदान किये गये हैं यथा उन्हे अपने पृथक सविधान के निर्माण, केन्द्र से अलग होने, अपनी पृथक सेना रखने और विदेशो से सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार प्राप्त है। लेकिन इसके साथ ही सविधान मे कुछ ऐसी बातें जोड़ दी गयी है, जिनसे ये अधिकार मात्र सैद्धान्तिक होकर रह गये हैं। सघीय गणराज्य जो सविधान बनाते है, वह केन्द्रीय सविधान के अनुकूल ही होना चाहिए। इससे भी आगे सविधान के अनुच्छेद २० मे कहा गया है कि यदि अखिल सघ तथा सघीय गणराज्यो के कानूनो मे किसी प्रकार का विरोध उत्पन्न हो जाय, तो सघीय गणराज्यो के कानून नही माने जायेंगे और अखिल सघ का ही कानून लागू होगा।' जहाँ तक सेना रखने का प्रश्न है, सघीय गणराज्य के द्वारा अपने क्षेत्र मे केवल इतनी ही सेना रखी जा सकती है, जो कानून और व्यवस्था बनाये रखने के लिए आवश्यक हो। इस सेना के बल पर केन्द्र के विरुद्ध किसी प्रकार के विद्रोह की कल्पना नही की जा सकती है। सघीय गणराज्य विदेशो से सीमित व्यापारिक सम्बन्ध ही स्थापित कर सकते हैं राजनीतिक नही। इन सबके अतिरिक्त सघीय गणराज्यो तथा केन्द्र, दोनो मे एक ही राजनीतिक दल (साम्यवादी दल) का एकछत्र प्रभुत्व है और ऐसी स्थिति मे सघीय गणराज्यो के केन्द्र से पृथक होने की कल्पना भी नही की जा सकती है। इस प्रकार के किसी भी प्रयत्न को देशद्रोह और साम्यवादी व्यवस्था के विरुद्ध षड्यन्त्र

1 In democratic centralism centralism has primary significance
—Merle Fainsod *How Russia is Ruled* p 181

2 It is difficult to believe that democratic centralism embodies as much of democracy as of centralism However the available evidence leads a student to conclude that there is a certain amount of freedom in routine affairs of strictly local character
—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 850

कहकर कुचल दिया जाता है। वस्तुस्थिति के सम्बन्ध में फाइनर लिखते हैं कि "केन्द्रीय नियन्त्रण इतना अधिक कठोर है कि संघ से पृथक होने की बात तो दूर रही, संघीय गणराज्य असन्तोष की ध्वनि भी नहीं कर सकते हैं।"

सोवियत संघीय व्यवस्था के अन्तर्गत कुछ और भी संघवादी तत्त्व हैं। अनुच्छेद ६७ के अनुसार 'संघीय मन्त्रिपरिषद के निर्णय तथा आदेश सारे देश पर लागू होंगे। अनुच्छेद ६९ के अनुसार अखिल संघ की मन्त्रिपरिषद को संघीय गणराज्यों की मन्त्रिपरिषदों के निर्णयों तथा आदेशों को निलम्बित करने का अधिकार प्राप्त है। संविधान के अन्तर्गत 'संघीय गणराज्यीय मन्त्रालयों' (Union Republican Ministries) की जो व्यवस्था की गई है वह अपने आप में विशेष है और इसके द्वारा संघीय गणराज्यों की सरकारों पर नियन्त्रण रखा जाता है। संविधान के अन्तर्गत संघीय गणराज्यों अर्थात् इकाइयों की तुलना में बहुत अधिक शक्तिशाली केन्द्र की व्यवस्था की गई है और संविधान के संशोधन में इकाइयों को कोई भाग प्राप्त नहीं है। संविधान के संशोधन की शक्ति भी सर्वोच्च न्यायालय को नहीं, वरन सर्वोच्च सोवियत के प्रेजिडियम को प्रदान की गई है।

संघीय गणराज्यों की केन्द्र पर बहुत अधिक वित्तीय निर्भरता है और आर्थिक नियोजन के मार्ग को अपनाकर समस्त आर्थिक जीवन पर केन्द्र का नियन्त्रण स्थापित कर दिया गया है। इन सबके अतिरिक्त सोवियत संघीय व्यवस्था का सबसे बड़ा केन्द्रवादी तत्त्व साम्यवादी दल का एकछत्र प्रभुत्व है। इस प्रकार राजनीतिक और आर्थिक दोनों ही क्षेत्रों में केन्द्रवादी तत्त्व बहुत अधिक प्रबल है।

सोवियतों (Soviets) में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद—सोवियत रूस की शासन व्यवस्था के अन्तर्गत व्यापक स्तर पर सोवियत प्रणाली को अपनाया गया है। इस सोवियत प्रणाली के अन्तर्गत सोवियतों की एक शृंखला स्थापित की गयी है, जिनका क्रम इस प्रकार है—प्रारम्भिक सोवियतें जिला सोवियतें प्रान्तीय सोवियतें संघीय गणराज्यों की सोवियतें और सर्वोच्च सोवियत।

इस सोवियत प्रणाली में भी लोकतान्त्रिक केन्द्रवादी तत्त्व स्पष्ट दिखायी देता है। इसमें लोकतान्त्रिक तत्त्व यह है कि प्रत्येक सोवियत के सदस्य जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं और जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं। जनता के द्वारा उन्हें कार्यकाल की समाप्ति के पूर्व भी वापस बुलाया (Recall) जा सकता है। इनमें केन्द्रवादी तत्त्व भी इस रूप में स्पष्ट दिखाई देता है कि प्रत्येक सोवियत अपने से ऊपर की सोवियत के पूर्ण आधीन होती है। सर्वोच्च स्तर पर सर्वोच्च सोवियत है जिसके आदेश सभी के लिए बन्धनकारी होते हैं। सर्वोच्च सोवियत की प्रेजिडियम को भी इन सभी सोवियतों पर बहुत अधिक नियन्त्रण प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद ७० में सोवियतों के कार्यों का उल्लेख करते हुए यह स्पष्ट कर दिया गया है कि प्रत्येक सोवियत का कार्य अपने से निम्न स्तर की सोवियत का निरीक्षण करना और उस पर नियन्त्रण रखना है। इस प्रकार सोवियत प्रणाली में भी लोकतान्त्रिक और

के द्रवादी तत्वो का समन्वय है, जिसमे केन्द्रवादी तत्त्व निश्चित रूप से प्रबल है। वस्तुस्थिति यह है कि निम्न सोवियतें सुझाव देने का काय करती हैं और उच्च सोवियतो के द्वारा निणय किया जाता है। टाउस्टर ने इसी स्थिति को लक्ष्य करते हुए कहा है कि—'राजनीतिक बुद्धि, सुझाव और जिम्मेदारी का नीचे से ऊपर की ओर प्रवाह है और कानूनो, आज्ञप्तियो (decrees) अथवा आदेशों और अनुदेशों का ऊपर से नीचे की ओर प्रवाह है।'[1]

साम्यवादी दल में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद—सोवियत रूस के अन्तगत सघीय व्यवस्था और सोवियत प्रणाली मे भी लोकतान्त्रिक केन्द्रवादी तत्त्व है, लेकिन सबसे प्रमुख रूप मे सोवियत सघ के साम्यवादी दल मे ही लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद देखा जा सकता है। साम्यवादी दल का सगठन एक पिरामिड की भाँति है, जो स्थानीय इकाइयो या ग्राम के निम्नतर स्तर से लेकर सोवियत सघ के सर्वोच्च स्तर तक स्थित है। साम्यवादी दल १६१७ से ही निम्न चार सिद्धान्तो के आधार पर काय करता रहता रहा है, जो लोकतन्त्र और केन्द्रवाद के समन्वय ही है। ये चार सिद्धान्त इस प्रकार है

(१) दल का सचालन करने वाले ऊपर से नीचे तक के सब अग निर्वाचित होगे।

(२) दल के विविध अग अपने क्रियाकलाप का विवरण दल के सगठन को दिया करेंगे।

(३) दलीय अनुशासन अत्यन्त कठोर होगा और अल्पसख्यको को बहुसख्यको के आधीन रहना होगा।

(४) उच्चस्तरीय अगो के निणय निम्नस्तरीय अगो व दल के सदस्यो को अनिवायत मान्य होगे।

इनमे पहले दो सिद्धान्त लोकतन्त्रात्मक है, लेकिन अन्तिम दो सिद्धान्त केन्द्रवाद के प्रतीक हैं। एक अन्य बात यह है कि साम्यवादी दल के सगठन मे अन्तिम दो सिद्धान्त, विशेषतया चतुथ सिद्धान्त ही वास्तविक है और पहले दो सिद्धान्तो का पालन बहुत कम होता है। प्राय सभी प्रमुख समितियो मे निर्वाचन का स्थान अब नियुक्ति ने ले लिया है। साधारण लोगो की सभाओ को समितिया अपने कार्यों का प्रतिवेदन प्राय नही देती और साधारण बैठकें अब बहुत कम बुलाई जाती हैं। दल की नीति के विषय मे खुला प्रचार न तो दलीय सगठनो की बैठको मे ही सम्भव होता है और न ही प्रेस मे। सभी निणय केन्द्रीय नेताओ के द्वारा लिये जाते हैं और ये निणय सभी सघीय गणराज्यो और प्रदेशो के साम्यवादी नेताओ द्वारा बिना किसी

[1] It means an upward stream of political intelligence suggestion and accounting from the lower organs and a downward stream of laws decrees and institutions from the apex or central organs
—Julian Towster *Political Power in the U S S R*, p 207

विवाद वे स्वीकार किये जाते और लागू किये जाते हैं। केन्द्रीय नेताओं की आलोचना को किसी भी रूप मे सहन नहीं किया जाता है। इस प्रकार साम्यवादी दल के अन्तगत केन्द्रवादी तत्त्व ही प्रबल है। डॉ० फाइनर ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि "साम्यवादी दल कोई ऐसा सगठन नहीं है, जिसके मूल मे जनतन्त्र हो। यह अपने आप मे तानाशाही है। इसका स्वरूप और इसके निश्चय लोकतांत्रिक केन्द्रवाद के दिखावटी नारे में छिपे हुए हैं।"[1] फेनसोड भी इसी विचार की पुष्टि करते हुए लिखते हैं कि "साम्यवादी दल का सगठन उत्तरोत्तर सैनिक सगठन के समान है, जिसमें समस्त नीति सम्बन्धी निर्णय केन्द्रीय कमान से आते हैं और निम्नतर अधिकारियों का कार्य उन निर्णयों और आज्ञाओं को क्रियान्वित करना रहता है।"[2]

प्रश्न

१ सोवियतों से आपका क्या अभिप्राय है ? इसके सगठन और कार्यों का वर्णन कीजिए।

२ लोकतांत्रिक केन्द्रवाद की परिभाषा कीजिए। सोवियत रूस मे इसे किस प्रकार अपनाया गया है ?

३ 'सोवियत सघ का ढाँचा लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद पर आधारित है, जो कि पूँजीवादी देशों के लोकतांत्रिक केन्द्रवाद के सर्वथा विपरीत है।' विवेचना कीजिए।

[1] ' The Communist Party is not an organisation with democracy at work within its own operation It is a dictatorship within itself Its intention and nature masked with the specious slogan democratic centralism

—Finer *The Govts of Greater European Powers* p 868

[2] The organisational pattern of the Communist Party is that of a military hierarchy in which policy directions come from the central command and the obligation of the subordinate is to carry them out —Merle Fainsod, *How Russia Is Ruled* p 181

9

साम्यवादी दल
(COMMUNIST PARTY)

"सर्वहारावर्ग का अधिनायकतन्त्र वस्तुत उसके उस प्रहरी दल का अधिनायकतन्त्र है जो सर्वहारावर्ग का निर्देशन करने वाली शक्ति है।"[1] —स्टालिन

राजनीतिक दल के सम्बन्ध मे साम्यवादी मान्यता

पाश्चात्य प्रजातन्त्रीय धारणा के अनुसार राजनीतिक दल आधारभूत समस्याओ के सम्बन्ध मे विचारो की एकता पर आधारित ऐसे सगठित समुदाय होते हैं जिनके द्वारा सवधानिक साधनो के आधार पर राष्ट्रीय हित की साधना की जाती है। लेकिन इस सम्बन्ध म साम्यवादी मान्यता भिन्न है और उसके अनुसार राजनीतिक दल वर्गीय सगठन होते हैं, जिनका उद्देश्य राष्ट्रीय हित नही, वरन् वर्गीय हित की साधना होता है। इस धारणा के आधार पर साम्यवादी विचारको का कथन है कि सोवियत रूस म केवल एक ही वग (सवहारावग) होने के कारण, उसके हितो का प्रतिनिधित्व एक ही दल (साम्यवादी दल) के द्वारा किया जा सकता है और सोवियत रूस म साम्यवादी दल के अतिरिक्त अन्य किसी दल के अस्तित्व का कोई औचित्य नही है। इस वचारिक पृष्ठभूमि के आधार पर ही सोवियत रूस म साम्यवादी दल के एकाधिकार को अपनाया गया है।

सोवियत सघ मे साम्यवादी दल का इतिहास

साम्यवादी दशन मे राजनीतिक दल का तत्व कार्ल मार्क्स की नही, वरन् लेनिन की देन है। पूँजीवादी व्यवस्था और अन्तिम आदश राज्यहीन और वग विहीन समाज की स्थापना के मध्य म जो सक्रमण काल होता है कार्ल मार्क्स के द्वारा उसके सम्बन्ध म सवहारावग के अधिनायकत्व की कल्पना की गयी थी।

1 "The dictatorship of the proletariat is substantially the dictatorship of its vanguard the dictatorship of the party as the force which guides the proletariat" —*Stalin*

कार्ल मार्क्स का व्यक्ति के स्वय के सम्बन्ध मे सोचने और कार्य करने की शक्ति मे विश्वास था और उसका विचार था कि सर्वहारावर्ग स्वय सामूहिक रूप से पूंजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध क्रान्ति करने और नवीन व्यवस्था के अन्तर्गत शासन व्यवस्था के सचालन का कार्य कर लेगा। लेकिन इस सम्बन्ध मे लेनिन अधिक यथार्थवादी था और उसके द्वारा अत्यधिक सगठित व प्रशिक्षित कार्यकर्ताओ के एक ऐसे समूह की आवश्यकता अनुभव की गई, जो इस कार्य मे मार्ग निर्देश और नेतृत्व प्रदान कर सके। क्रान्ति के लिए सगठित और प्रशिक्षित कार्यकर्ताओ के इस समूह को ही साम्यवादी दल का नाम दिया गया।

सोवियत सघ मे जबसे साम्यवादी दल की स्थापना हुई है, तबसे अब तक उसके नामो मे अनेक बार परिवर्तन हुए हैं। इसका प्रारम्भिक नाम 'रूसी सामाजिक जनतान्त्रिक श्रमिक दल' (Russian Social Democratic Labour Party) था, जिसकी स्थापना १८९८ में विभिन्न तत्कालीन समाजवादी समुदायो के सगठन के परिणामस्वरूप हुई थी। परन्तु शीघ्र ही इस दल मे मतभेद उत्पन्न हो गये और यह दो भागो मे विभक्त हो गया—एक वर्ग 'मैन्शेविक' (Mensheviks) तथा दूसरा बोल्शेविक' (Bolsheviks) कहलाया। बोल्शेविक दल का नेता लेनिन था। सन १९०५ से १९१७ तक ये दोनो दल प्रभुता स्थापित करने के लिए परस्पर सघर्ष करते रहे। सन १९१७ की क्रान्ति के समय इन दो दलो के अतिरिक्त भी अन्य दल थे जिनमे प्रमुख सवैधानिक जनतन्त्रवादी तथा सामाजिक क्रान्तिकारी थे। क्रान्ति मे इन सभी दलो के द्वारा सहयोग दिया गया था और क्रान्ति के बाद ऐलेक्जेण्डर केरेन्सकी के नेतृत्व मे जो मिली जुली सरकार स्थापित की गयी, उसमे बोल्शेविक दल के अतिरिक्त ये सभी दल सम्मिलित थे। परन्तु अक्टूबर १९१७ मे लेनिन के नेतृत्व मे बोल्शेविक दल ने केरेन्सकी सरकार का तख्ता उलट दिया और सत्ता अपने हाथ मे ले ली। इसी समय बोल्शेविक दल के द्वारा अन्य सभी दलो का अन्त कर अपनी एकछत्र प्रभुता स्थापित कर ली गयी। ६ मार्च, १९१८ को 'रूसी सामाजिक जनतान्त्रिक श्रमिक दल' की सातवी कांग्रेस का अधिवेशन हुआ, जिसमे इस दल का नाम बदलकर रूसी साम्यवादी दल' (बोल्शेविक) कर दिया गया। दिसम्बर १९२५ मे दल की १४वी कांग्रेस मे फिर इसके नाम मे परिवर्तन किया गया और तब से यह दल 'सोवियत सघ का साम्यवादी दल' कहलाया। सन १९३६ के सविधान मे प्रथम बार इस दल को मान्यता प्रदान की गयी।

साम्यवादी दल के उद्देश्य—१८९८ मे साम्यवादी दल के मूल रूप की स्थापना के समय इसका उद्देश्य जारशाही और पूंजीवादी व्यवस्था का अन्त कर सारी शक्ति श्रमिको को देना निश्चित किया गया था। उस समय यह लक्ष्य एक सुखद स्वप्न मात्र लगता था किन्तु १९१७ मे इसे प्राप्त कर लिया गया। १९१७ में इसका उद्देश्य समाजवाद की स्थापना और उसे सुदृढ करना निश्चित

किया गया। द्वितीय महायुद्ध तक इस लक्ष्य को भी पूणतया प्राप्त कर लिया गया था। अत परिवर्तित परिस्थितियो मे नवीन लक्ष्य निर्धारित करना उपयुक्त समझा गया और ३१ अक्टूबर, १९६१ को साम्यवादी दल की जो २२वी काग्रेस हुई, उसमे दल के उद्देश्यो का वर्णन इस प्रकार किया गया

(१) समाजवाद को धीरे धीरे साम्यवाद में बदलकर साम्यवादी समाज का निर्माण करना।

(२) लोगो के भौतिक तथा सास्कृतिक स्तर को उन्नत करने के लिए निरन्तर सघष करना।

(३) समाजवाद के शत्रुओ के विरुद्ध सोवियत रूस की प्रतिरक्षा शक्ति को सुदृढ करना।

(४) अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्र मे सोवियत रूस के प्रभाव को बढाना।

(५) सभी देशो के श्रमिको को साथ लेकर उन्हे विश्वब धुत्व तथा अन्तर राष्ट्रीयता की भावना मे शिक्षित करना।

(६) विश्व के राष्ट्रो म स्थायी और स्थिर शान्ति स्थापित करना।

साम्यवादी दल की सदस्यता
(Membership)

सामान्यतया राजनीतिक दल अपनी सदस्य सख्या मे वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं, लेकिन साम्यवादी दल सदैव ही अपनी सदस्यता को सीमित रखने के पक्ष मे रहा है, जिससे दल मे कठोर अनुशासन बनाये रखा जा सके। इस सम्ब ध म, दल की नीति का सार लेनिन का यह कथन है कि 'सदस्यता कम करो और दल की शक्ति बढाओ।'[1]

साम्यवादी दल की सदस्यता प्राप्त करना बहुत अधिक कठिन है। साम्यवादी दल की सदस्यता प्राप्त करने के इच्छुक प्रत्यक व्यक्ति को कुछ वष के लिए परीक्षा काल (Probation) पर रखा जाता है। किसी व्यक्ति को तभी सदस्य बनाया जाता है, जबकि सदस्यता के लिए उसके नाम की सिफारिश कम से कम ३ ऐसे पुराने सदस्य करें, जो स्वय कम से कम ३ वष पुराने सदस्य हो। जब सदस्य परीक्षाकाल सफलतापूवक पूरा कर लेता है और दल के प्रति अपनी पूण भक्ति प्रकट करता है तथा दल के अनुशासन और लक्ष्य का कठोरता के साथ पालन करता है तो उसे पूण सदस्य बना दिया जाता है।

सदस्यता प्रदान कर दने के बाद भी सदस्यो के आचरण पर कठोर दृष्टि रखी जाती है। यदि सदस्य दल के प्रति अपने उत्तरदायित्वो को पूरा न कर सके, तो वह भत्सना (censure), सावजनिक भत्सना (public censure), दायित्व के पद से मुक्ति, निष्कासन (expulsion) तथा पुलिस रिपोट के साथ निष्कासन

[1] 'Reduce the membership and strengthen the Party' —*Lenin*

के दण्ड की व्यवस्था तक का भागी होता है। दल म कठोर अनुशासन बनाये रखने की दृष्टि से ही समय-समय पर शुद्धिकरण (Purges) होते हैं जिनके आधार पर बहुत बडी सख्या मे सदस्यो को दल से निष्कासित कर दिया जाता है। १९२१ से १९२४ तक दल म जो शुद्धिकरण आदोलन चला, उसके परिणामस्वरूप १७ हजार सदस्य निष्कासित किये गये और १९३४ म किये गये शुद्धिकरण के परिणामस्वरूप २ लाख ७० हजार सदस्य निष्कासित किये गये।

वतमान समय मे, सोवियत सघ मे साम्यवादी दल के सदस्यो की सख्या १ करोड २६ लाख के लगभग है, जो समस्त जनसख्या की ७ प्रतिशत के लगभग है। इनमे ७५ प्रतिशत सदस्य कृषक और मजदूर हैं। १६ प्रतिशत शिक्षा, विज्ञान, स्वास्थ्य रक्षा तथा सस्कृति आदि क्षेत्रो म काय करने वाले हैं। शेष सदस्य अन्य क्षेत्रो मे काम करने वाले है। साम्यवादी दल म सभी व्यवसायो और सोवियत सघ की सभी राष्ट्रीयताओ के प्रतिनिधि सम्मिलित है।

दल के सदस्यो के कतव्य—१९५२ मे साम्यवादी दल की जो १९वी काग्रेस हुई, उसमे स्वीकृत नियमो के अनुसार दल के सदस्यो के निम्न कतव्य निश्चित किये गये है

(१) दल के उद्देश्यो के प्रति पूण आस्था रखना और समाजवादी व्यवस्था को सुदृढ करना।

(२) दल की एकता को बनाये रखना और उसे शक्तिशाली बनाना।

(३) अपने काय या व्यवसाय मे विशेषज्ञता या प्रवीणता प्राप्त कर दूसरो के सम्मुख उदाहरण उपस्थित करना।

(४) समाजवादी सम्पत्ति की रक्षा करना।

(५) मावसवाद लेनिनवाद के विषय मे अधिक से अधिक ज्ञान प्राप्त करना तथा जनता म उसका प्रसार करना।

(६) अपनी आलोचना स्वय करना, अपने काय मे होने वाली त्रुटियो का पता लगाना तथा उसकी सूचना अपने दल की केन्द्रीय समिति और अन्य सगठनो को देना।

(७) दलीय अनुशासन का कठोरता से पालन करना।

(८) जनता से अपना सम्पक स्थापित करना, श्रमिक वग की इच्छाओ और आवश्यकताओ की जानकारी प्राप्त करना तथा उन्हे पूरा करवाना।

(९) दल मे ईमानदारी से काय करना तथा सच्चाई को न छिपाना।

(१०) जनता का साम्यवादी दल की नीतियो और निणयो के बारे में पूरी जानकारी देना।

(११) कुछ विशेष प्रकार के मामलो म दल तथा राज्य और शासन की गोपनीयता को बनाये रखना।

(१२) दल के आदेशो का पूण रूप स पालन करना।

दलीय सदस्यों के विशेषाधिकार—साम्यवादी दल के विधान मे दलीय सदस्यो के कर्तव्यो के साथ साथ उनके विशेष अधिकारो का भी उल्लेख किया गया है। दल के सदस्य दलीय बैठको तथा प्रेस म होने वाले वाद विवाद मे स्वतन्त्रता पूर्वक भाग ले सकते हैं। उनके द्वारा दल के उच्च सगठनो तथा केन्द्रीय समिति के सदस्यो से दलीय नीति, निर्णयो और कार्यों के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रश्न पूछे जा सकते हैं। दलीय बैठको मे उन्हें दलीय पदाधिकारियों की आलोचना करने का भी अधिकार प्राप्त है। इसके अतिरिक्त उनके द्वारा दल के सगठनात्मक चुनावो मे स्वतन्त्रतापूर्वक भाग लिया जा सकता है। दलीय विधान में सदस्यो के इन विशेष अधिकारो का उल्लेख किया गया है, किन्तु व्यवहार म सदस्यों के द्वारा किस सीमा तक इन अधिकारो का प्रयोग किया जा सकता है, यह सन्देह और विवाद का ही विषय है।

साम्यवादी दल का सगठन
(Organisation of the Communist Party)

लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद (Democratic Centralism)—साम्यवादी दल का सगठन लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के आधार पर किया गया है, जिसका तात्पर्य यह है कि

(१) दल का सचालन करने वाले ऊपर से नीचे तक के सब अग निर्वाचित होंगे।

(२) दल के विविध अग अपने-अपने क्रियाकलाप का विवरण दल के सगठन को दिया करेंगे।

(३) दलीय अनुशासन अत्यन्त कठोर होगा और अल्पसख्यको को बहुसख्यको के आधीन रहना होगा।

(४) उच्चस्तरीय अगो के निर्णय निम्नस्तरीय अगो व दल के सदस्यो को अनिवार्यत मान्य होंगे।

इस प्रकार साम्यवादी दल के सगठन मे लोकतन्त्र और केन्द्रवाद के परस्पर विरोधी तत्त्वो के बीच समन्वय स्थापित किया गया है। लेनिन के अनुसार लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद का अर्थ यह है कि दल के सदस्यो को अपने विचार व्यक्त करने की पूरी स्वतन्त्रता दी जाय, उसके बाद बहुमत का पता लगाया जाय और बहुमत के विचार को दल के निर्णय के रूप मे स्वीकार कर लिया जाय। एक बार निर्णय हो जाने पर दल के सदस्यो के लिए आवश्यक है कि वे उसे स्वीकार करें और पूरे मन से लागू करें। जहा तक व्यवहार का सम्बन्ध है, यह बात सन्देहरहित है कि साम्यवादी दल के सगठन म केन्द्रवादी तत्त्वो की प्रधानता है। वस्तुस्थिति यह है कि दल के सामान्य सदस्य निर्णय लेने की प्रक्रिया मे कोई भाग नही ले पाते और सभी बातो के सम्बन्ध म दल की उच्च सत्ता के द्वारा ही निर्णय किया जाता है। दल की निम्न सत्ताओ का एकमात्र अधिकार और कर्तव्य उच्च सत्ता के आदेशो का पालन ही है। दल के अन्तर्गत लोकतन्त्र के तत्त्व का निरन्तर ह्रास होता रहा है। प्राय सभी प्रमुख

समितियो मे निर्वाचन का स्थान अब नियुक्ति ने ले लिया है। साधारण सभाओ को समितियाँ अब अपना प्रतिवेदन नही देती और साधारण बठकें अब बहुत कम बुलाई जाती हैं। दल की नीतियो के विषय मे खुला विचार न तो दलीय बैठको मे सम्भव है और न ही प्रेस मे। दल की सदस्यता प्राप्त करने की जो बहुत अधिक कठिन प्रक्रिया है और दल मे समय-समय पर जिस प्रकार की शुद्धियां (Purges) होती रहती हैं, उससे साम्यवादी दल का अत्यधिक कठोर अनुशासन और केन्द्रवादी स्वरूप ही स्पष्ट होता है। दलीय सगठन मे केन्द्रवादी तत्व की प्रबलता बतलाते हुए फेसोड ने लिखा है कि "साम्यवादी दल का सगठन उत्तरोत्तर सैनिक सगठन के समान है, जिसमे समस्त नीति सम्बन्धी निणय केन्द्रीय कमान से आते हैं और निम्नतर अधिकारियो का काय उन निणयो और आज्ञाओ को क्रियान्वित करना होता है।"

साम्यवादी दल का सगठन एक पिरामिड की भाति है, जिसमे एक के ऊपर एक पत्थर रखा हुआ है और अन्त मे जाकर एक नोकदार शिला है, जो सबसे ऊँची है और यहीं से दल की समस्त गतिविधियो को नियन्त्रित किया जाता है।

(१) प्राथमिक दलीय सगठन (Primary Party Organisation)—दलीय सगठन मे सबसे नीचे का आधार प्राथमिक दलीय सगठन है जिसे पहले सैल्स (Cells) या न्यूक्ल्यू (Neucleu) भी कहा जाता था। इनका अस्तित्व प्रत्येक कारखाने, प्रत्येक बडी दुकान के कार्यालय, प्रत्येक स्कूल, प्रत्येक रेजीमेण्ट और प्रत्येक गाव या छोटे स्थान म है। कम से कम तीन सदस्यो से भी प्राथमिक सगठन की स्थापना की जा सकती है। जिन प्राथमिक सगठनो म १५ या इससे अधिक सदस्य होते हैं, उनके द्वारा अपनी एक कायकारिणी भी चुनी जाती है जिसे ब्यूरो कहा जाता है। इस कायकारिणी म एक सभापति, एक सचिव तथा एक कोषाध्यक्ष होता है। १५० से अधिक सदस्य होने पर एक वैतनिक सचिव भी चुना जाता है। यदि किसी सदस्य के द्वारा अनुशासन भग किया जाय तो प्राथमिक सगठन अपने दो तिहाई बहुमत से सम्बन्धित सदस्य को दल से निष्कासित कर सकता है, लेकिन इस कायवाही की पुष्टि जिला समिति से करवानी होती है।

१९६६ के अन्त तक प्राथमिक दलीय सगठनो की सख्या ३,२५,००० हो गयी थी। इन सगठनो का काय साम्यवादी दल के सिद्धान्तो का प्रचार करना, समाजवादी समाज म जनता की आस्था को बढाना, श्रमिक अनुशासन बनाये रखना तथा देश के आर्थिक और राजनीतिक कायक्रमो मे सक्रिय भाग लेना है। दलीय नियमो के अनुसार प्राथमिक दलीय सगठन का अधिकार है कि वह उस इकाई के प्रबन्ध पर नियन्त्रण रखे, जिसम वह काय कर रहा है।

(२) नगर, जिला (शहरी और ग्रामीण) तथा क्षेत्रीय दलीय सगठन (City, District, Area and Regional Party Organisations)—प्राथमिक सगठनो के ऊपर नगर, जिला तथा क्षेत्रीय सगठन होते हैं, जिनका वष मे एक बार अवश्य

ही अधिवेशन होता है। इसमे वे अपनी एक कार्यकारिणी समिति (ब्यूरो) चुनते हैं, जो वर्ष भर दल का कार्य करती हैं। नगर तथा जिला सगठन अपने क्षेत्र के प्राथमिक सगठनो और क्षेत्र के अन्य सगठनो जैसे युवक सगठन, श्रमिक सगठन तथा सहकारी समिति की देखभाल करता है।

(३) **क्षेत्रीय, प्रादेशिक व गणतन्त्रीय सगठन** (Regional, Territorial and Republican Party Organisations)—साम्यवादी दल के सगठन की तीसरी इकाई क्षेत्रीय, प्रादेशिक व गणतन्त्रीय सगठन है। क्षेत्रीय, प्रादेशिक व गणतन्त्रीय सगठनो के प्रतिनिधियो का चुनाव नगर और जिला सगठनो के द्वारा किया जाता है। प्रत्येक स्थिति मे सर्वोच्च सत्ता सम्मेलन (Conference) मे होती है, जो कि सभी सदस्यो की सामान्य सस्था (General Body) है। सघीय गणराज्यो के सगठन मे इस सामान्य सस्था को 'पार्टी काग्रेस' कहा जाता है। यह सम्मेलन या काग्रेस अपनी एक कार्यकारिणी समिति (ब्यूरो) का चुनाव करती है, जो कि सदैव अधिवेशन मे रहती है और सगठन के कार्यो का मार्ग निर्देशन करती है। सामान्य सस्था ४ या ५ सचिवो का भी चुनाव करती है जोकि वास्तव मे समस्त कार्यों का सम्पादन करते हैं। इन सभी चुनावो की पुष्टि सघीय काग्रेस की केन्द्रीय समिति द्वारा की जानी आवश्यक है। नगर और जिला सगठनो के समान ही क्षेत्रीय, प्रादेशिक और गणतन्त्रीय सगठन अपने क्षेत्र मे दलीय कार्यों को सगठित, निर्देशित और नियन्त्रित करते हैं। ये अपने क्षेत्र के अन्तर्गत दल के प्रकाशनो की व्यवस्था करने के लिए सम्पादक मण्डलो का चुनाव भी करते हैं तथा दल के बाहर जो साम्यवादी दल के गुट कार्य करते हैं, उनके कार्यो की देखभाल करना भी इन सगठनो का ही कार्य है।

(४) **अखिल सघीय काग्रेस** (All Union Congress)—साम्यवादी दल के सगठन की चौथी इकाई अखिल सघीय काग्रेस है। यह समस्त सोवियत सघ के साम्यवादी दल के सगठन का सर्वोच्च अग है। इसकी सदस्य सख्या हजारो मे है। दलीय विधान के अनुसार यह दल की सबसे अधिक शक्तिशाली इकाई है, यद्यपि व्यवहार मे उसकी यह स्थिति सन्देहास्पद है। इसका कार्य दल की नीति निर्धारित करना है। दल की नीति, कार्यक्रम और सगठन मे जो भी महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं उन सभी की पुष्टि सघीय काग्रेस द्वारा की जाना आवश्यक है। अखिल सघीय काग्रेस की भी एक निर्वाचित कार्यकारिणी समिति है, जिसे केन्द्रीय समिति कहते हैं। यह समिति विभिन्न विषयो पर अपने प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है, जिन पर निर्णय लेना अखिल सघीय काग्रेस का कार्य है। इसकी बैठकें वर्ष मे कई बार होती हैं।

(५) **केन्द्रीय समिति** (The Central Committee)—साम्यवादी दल के सगठन का एक प्रमुख अग केन्द्रीय समिति है जिसके अन्तर्गत वर्तमान समय मे १६५ सदस्य और १६५ प्रत्याशी होते हैं। इस समिति के सदस्यो का निर्वाचन

अखिल सघीय काग्रेस द्वारा गुप्त मतदान के आधार पर किया जाता है। इसकी रचना कुछ विचित्र सी है। इसमे दल के सचिव, गणतन्त्रो की मन्त्रिपरिषद के प्रभावशाली सदस्य, उनके प्रधान, उच्च सैनिक कमान के सदस्य, उच्च पुलिस अधिकारी, बुद्धिजीवी व कुछ विचारक लोग सम्मिलित होते हैं। केन्द्रीय समिति इस दृष्टि से दल का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अग है कि इससे साम्यवादी दल और सोवियत रूस की सरकार के समस्त कार्यों का माग निर्देशन करने की आशा की जाती है। अखिल सघीय काग्रेस के अधिवेशनो के अन्तरकाल मे यह सघीय काग्रेस के समस्त काय सम्पादित करती है। इसका काय जनता, साम्यवादी दलीय सगठन व सरकार को अखिल सघीय काग्रेस के निणयो के अनुसार आदेश देते रहना है।

(६) पोलिटब्यूरो (Politbureau)—व्यवहार मे केन्द्रीय समिति भी सत्ता का अन्तिम स्रोत नही है। केन्द्रीय समिति भी दल और सरकार का निर्देशन करने और उन पर नियन्त्रण रखने मे असमथ है क्योकि इसकी बठके वष मे साधारणतया केवल चार बार होती हैं और इसका आकार बहुत अधिक बडा है। यद्यपि महत्त्वपूण निणय सदव केन्द्रीय समिति के नाम से ही जारी किये जाते है, लेकिन वास्तविक सत्ता का प्रयोग अनेक समितियो के द्वारा किया जाता है यथा पोलिटब्यूरो, आगब्यूरो (Orgbureau), सचिवालय केन्द्रीय नियन्त्रण आयोग और लेखा परीक्षण समिति। इनम 'पोलिटब्यूरो (राजनीति समिति) निश्चित रूप से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है। न्यूमन के शब्दो मे 'यह पार्टी पैरामिड का वास्तविक शिखर और समस्त शक्ति तथा निणयों का स्रोत है।'[1]

स्टालिन ने अपनी मृत्यु के पूव पोलिटब्यूरो और आगब्यूरो दोनो को समाप्त करके २५ सदस्यो की एक प्रेजिडियम स्थापित कर दी थी, परन्तु १९६६ मे साम्यवादी दल की २३वी काग्रेस ने प्रेजिडियम को समाप्त करके पुन 'पोलिटब्यूरो' की स्थापना कर दी। यह एक छोटी सस्था है, जिसमे १० से १५ तक सदस्य होते हैं और जिसका प्रधान दल का महासचिव होता है। सिद्धान्त म पोलिटब्यूरो दल की केन्द्रीय समिति द्वारा निर्वाचित और उसके प्रति उत्तरदायी होता है, किन्तु व्यवहार मे यह स्वय केन्द्रीय समिति पर नियन्त्रण रखता है। वस्तुत यह राजनीतिक मामलो के सम्बन्ध मे दल की अन्तिम नीति निर्धारक समिति है। पोलिटब्यूरो की बठकें सदैव गुप्त होती है और उनमे स्पष्ट वादविवाद होते हैं, लेकिन जब कोई निणय हो जाय, तो वह सभी पर बन्धनकारी होता है। विश्व म शायद कोई भी ऐसी सीमित नही है, जिसे पोलिटब्यूरो के समान शक्तियाँ प्राप्त हो। स्टालिन क

[1] 'Politbureau is the real top of the party pyramid the source of all powers and decisions
—G Robert Neuman *European & Comparative Government'* p

शब्दों में पोलिटब्यूरो दल की सर्वोच्च समिति है और दल राज्य को निर्देशित करने वाली सर्वोच्च शक्ति है।"[1]

(७) सचिवालय (Secretariat)—सचिवालय साम्यवादी दल के सभी महत्त्वपूर्ण कार्यों का रिकार्ड रखना और उनके बारे में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करता है। सभी व्यक्तियों के द्वारा दल के निर्णयों का पालन किया जाय, यह देखना भी सचिवालय का ही काय है। सचिवालय का अध्यक्ष महासचिव कहलाता है। १९५२ में इसे प्रथम सचिव कहा जाने लगा था, १९६६ में इसे बदलकर पुनः महासचिव का नाम दिया गया। महासचिव साम्यवादी दल का निर्विवाद रूप में सर्वोच्च नेता होता है और उसका पोलिटब्यूरो, मन्त्रिपरिषद तथा प्रेजिडियम सभी पर विशेष प्रभाव होता है। साम्यवादी दल में अध्यक्ष पद की व्यवस्था न होने के कारण उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी भी नहीं होता है। वर्तमान समय (जून १९७३) में महासचिव पद पर ल्योनिड ब्रेजनेव आसीन हैं। सचिवालय के सदस्यों की संख्या इस समय ११ है, परन्तु यह दल के द्वारा आवश्यकतानुसार घटाई बढ़ाई जा सकती है।

(८) दलीय नियन्त्रण आयोग (Party Control Commission)—यह दल की सर्वोच्च अनुशासन समिति के समान है। इस आयोग की नियुक्ति केन्द्रीय समिति के द्वारा की जाती है। आयोग यह देखता है कि दल के सभी सदस्य व इकाइयाँ दलीय अनुशासन का पालन करें। अनुशासन भंग करने वाले व्यक्तियों को आयोग के द्वारा दण्डित किया जाता है। आयोग निम्न संगठनों द्वारा दिये गये दण्डों के विरुद्ध अपील भी सुनता है।

(९) लेखा परीक्षा समिति (Audit Committee)—इसकी नियुक्ति भी केन्द्रीय समिति के द्वारा ही की जाती है। यह दल के विभिन्न संगठनों के वित्तीय मामलों की देख रेख और हिसाब किताब की जाँच पड़ताल करती है।

साम्यवादी दल से सम्बद्ध अन्य युवक संगठन

साम्यवादी दल का उद्देश्य जीवन के प्रारम्भ से ही व्यक्तियों को साम्यवादी विचारधारा में ढालना है। इस दृष्टि से कुछ युवक संगठनों द्वारा साम्यवादी दल के सहायक संगठन के रूप में कार्य किया जाता है। ये युवक संगठन इस प्रकार हैं

(१) लिटिल अक्टूबरिस्ट्स (Little Octoberists)—इस प्रकार का एक संगठन लिटिल अक्टूबरिस्टस है जिसमें ८ से ११ वर्ष तक के बालक सम्मिलित होते हैं। इसका उद्देश्य प्रारम्भ में ही बालकों के मस्तिष्क और हृदय पर साम्यवादी संस्कार डालना है।

[1] The Politbureau is the highest organ not of the State, but of the party and the party is the highest directing force of the State' —Stalin (Quoted in Julian Towster's *Political Power in the U S S R* p 160)

(२) यग पायनियस (Young Pioneers)—यह भी एक युवक सगठन है, जिसमे १० से १६ वप तक की आयु के बच्चे लिए जाते हैं। सोवियत रूस के प्रत्येक स्कूल मे 'यग पायनियस' की एक शाखा होती है। इसका उद्देश्य भी बालको को साम्यवादी जीवन का अभ्यस्त बनाना और उनम साम्यवाद के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करना है। 'यग पायनियस' का अपना विशेष प्रकार का सगठन होता है। ८ से १२ सदस्यो का एक लिक' और ४० सदस्यो का एक 'ब्रिगेड' होता है। ब्रिगेड मे ५ सदस्यो की एक समिति का गठन किया जाता है। 'पायनियस लिटिल अक्टूबरिस्ट्स के कार्यों की भी देखभाल करता है।

(३) लेनिनवादी तरुण कम्युनिस्ट लोग या कामसोमोल्स (Comsomols)—इसकी स्थापना १६१८ मे लेनिन के सुझाव पर की गई थी और इसमे १५ से २८ वप तक के युवक युवतिया सम्मिलित होते है। इस सगठन के माध्यम से साम्यवाद की वह शिक्षा पूरी की जाती है, जो लिटिल अक्टूबरिस्टस या यग पायनियस क माध्यम से प्रारम्भ हुई थी। इसके माध्यम से साम्यवादी दल जनसाधारण से सम्पक स्थापित करता है और यह सगठन साम्यवादी दल के लिए बहुत अच्छ नवयुवक कायकर्ता तयार करता है। इसे साम्यवादी दल का सबसे प्रमुख सहायक दल कहा जा सकता है। १६६६ मे कामसोमोल्स के सदस्यो की सख्या २ करोड ३० लाख थी।

(४) मजदूर सघ (Trade Unions)—य माक्सवाद लेनिनवाद पर आधारित मजदूर सगठन है। य सगठन मजदूरो मे अनुशासन कायम रखते और मजदूरो को समाजवादी समाज का उपयोगी अग बनाते हैं। य मजदूरो मे भ्रातृभाव तथा सहयोग उत्पन्न करते, मजदूरो के सास्कृतिक कायक्रमो को सगठित करत और उनका साम्यवादी दल से सम्पक स्थापित करते हैं।

सभी मजदूर सघो की सस्था 'मजदूर सघों की काग्रस' (Congress of Trade Unions) कहलाती है। यह ४ वप मे केवल एक बार मिलती है और अपन अन्तरकाल मे काय चलाने के लिए अखिल सघीय मजदूर सगठनो की सास्कृतिक परिषद' चुन लेती है। यह बाद मे अपना प्रेजिडियम और सचिवालय चुन लेती है, जो दिन प्रतिदिन के कार्यों का सचालन करता है।

इन सभी सहायक सगठनो पर साम्यवादी दल के द्वारा पूण नियन्त्रण रखा जाता है।

सोवियत रूस मे साम्यवादी दल की भूमिका
(Role of the Communist Party in the USSR)

साम्यवादी दल सोवियत रूस की समस्त सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था की केन्द्रीय धुरी है। फाइनर क शब्दो मे—"दल सोवियत रूस का सम्प्रभु शासक है। इसकी शक्ति की कोई मर्यादा नहीं है और इसके द्वारा यह सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है, जो मानवीय सामर्थ्य दमन और प्रोत्साहन स प्राप्त कर

सकती है ।"[1] सोवियत रूस मे समाजवादी व्यवस्था स्थापित करने का श्रेय साम्य वादी दल को ही प्राप्त है और यह दल ही समाजवादी व्यवस्था का रक्षक भी है। सोवियत रूस मे साम्यवादी दल की भूमिका का अध्ययन निम्नलिखित रूपों मे किया जा सकता है ।

संविधान द्वारा साम्यवादी दल को मान्यता—पाश्चात्य प्रजातन्त्रीय राज्यों मे राजनीतिक दल ऐच्छिक सगठन होते हैं और उन्हें संविधान द्वारा मान्यता प्रदान करने की आवश्यकता नही समझी जाती । भारत, ब्रिटेन, अमरीका और स्विटजर लण्ड आदि देशो मे राजनीतिक दलो को संविधानेत्तर स्थिति (Extra Constitu tional position) ही प्राप्त है अर्थात् सम्बन्धित देशो के संविधानो में उनका कोई उल्लेख नही है, लेकिन सोवियत संविधान मे साम्यवादी दल को स्पष्ट मान्यता प्रदान की गयी है । इस सम्बन्ध मे सोवियत संविधान के अनुच्छेद १२६ मे कहा गया है कि "सर्वाधिक सक्रिय और राजनीतिक दृष्टि से जागरूक नागरिक साम्यवादी दल के अन्तर्गत सगठित हैं, जो समाजवादी व्यवस्था की स्थापना मे सघर्षरत श्रमिकों का अगुआ है तथा सर्वहारावर्ग के सभी सगठनों का केन्द्र है ।"[2]

साम्यवादी दल का एकाधिकार—न केवल संविधान के द्वारा साम्यवादी दल को मान्यता प्रदान की गयी है, वरन इसे सोवियत राजनीति मे एकाधिकारवाद की स्थिति भी प्रदान की गयी है । साम्यवादी विचारधारा राजनीतिक दल को वर्गीय हितो के पोषण का एक साधन मानती है और सोवियत नेताओं का मत है कि सोवियत रूस म एक ही वर्ग (सर्वहारावर्ग) है । अत केवल एक ही राजनीतिक दल (साम्यवादी दल) का ही अस्तित्व हो सकता है । संविधान के अनुच्छेद १४१ मे कहा गया है कि 'सोवियत रूस मे मार्क्स और लेनिन की विचारधारा पर आधारित साम्य वादी दल का ही गठन किया जा सकता है और अन्य कोई दल सोवियत निर्वाचनों में भाग लेने का अधिकारी नहीं है ।' सोवियत नेता सर्वहारावर्ग के अधिनायकत्व को

1 The party is the sovereign ruler of the Soviet Union Its power has no limits in principle but only in human ability to achieve all it wants by coercion and persuasion
—Finer Herman *Government of Greater European Powers*, p 353

2 The most active and politically conscious citizens in the ranks of the working class and the other sections of the working people unite in the communist party of the Soviet Union, which is the vanguard of the working people in their struggle to strengthen and develop the socialist system and is the leading core of all organization of the working people both public and state
—*Article 126 of the Soviet Constitution*

बनाये रखने के लिए साम्यवादी दल का एकाधिकारवाद आवश्यक मानते हैं। जसा कि स्टालिन न कहा था—"राज्य का नेतृत्व करने वाला, सर्वहारावग के अधिनायकत्व की व्यवस्था का नेतृत्व करने वाला केवल एक दल है, जो समाज का दल है और जो किसी और का सहनेतत्व न स्वीकार करता है और न कर सकता है।"[1]

समाजवादी क्रान्ति का नियन्ता और रक्षक—सोवियत रूस मे जारशाही का बहुत अधिक कठोर नियन्त्रण स्थापित था और उसका अ त कर समाजवादी व्यवस्था की स्थापना निश्चित रूप से एक दुष्कर कार्य था। सोवियत जनता द्वारा यह काय साम्यवादी दल के नेतृत्व मे ही किया जा सका। इस प्रकार साम्यवादी दल सोवियत रूस की समाजवादी क्रान्ति का सृजक कहा जा सकता है।

प्रारम्भ स ही सोवियत रूस की समाजवादी व्यवस्था को आ तरिक और बाहरी ओर से अनक सकट थे, जिन्हे साम्यवादी दल के द्वारा ही सफलतापूवक दूर किया गया। क्रान्ति के बाद अत्यन्त कठिन परिस्थितियो म साम्यवादी दल ने जनता का धय बँधाया और उसे प्रसन्नतापूवक कष्ट सहन करने के योग्य बनाया। इसने जमीदारो, पूजीपतियो, पादरियो और अ य सभी क्राति विरोधियो को नष्ट कर समाजवादी व्यवस्था को सुदृढता प्रदान की। साम्यवादी दल साम्यवादी व्यवस्था की रक्षा हेतु सतत् प्रहरी का काय करता है। आज सोवियत रूस मे समाजवादी व्यवस्था सुदृढ रूप मे स्थापित हो चुकी है, लेकिन भविष्य म इस व्यवस्था के प्रति सभी सम्भावित खतरो को दूर करन का भार साम्यवादी दल पर ही है।

समाजवादी व्यवस्था का प्रेरक, आदश और शिक्षक—साम्यवादी दल समाजवादी व्यवस्था का रक्षक ही नही, वरन उसका माग-प्रदशक, आदश और शिक्षक भी है। साम्यवादी दल सवहारावग का नेतृत्व करता है और दल से आशा की जाती है कि वह समाजवादी व्यवस्था के आदश और शिक्षक के रूप मे काय करेगा। वस्तुत साम्यवादी दल ही वह प्रेरक शक्ति है जो समस्त सोवियत जीवन के सावजनिक एव निजी क्रियाकलापो को सचालित करती है। काटर के अनुसार "प्रत्येक साम्यवादी सदस्य को हर समय माग दशक, रक्षक, अध्यापक जनसाधारण को उपदेश देने वाला और स्वय आदश प्रस्तुत करने वाला होना चाहिए।"

दल तथा शासन का समन्वय—प्रजातन्त्रीय व्यवस्था के अ तगत दल तथा शासन एक दूसरे से पृथक रहते हैं, लेकिन सोवियत रूस मे साम्यवादी दल तथा

[1] The leader of the State, the leader within the system of the dictatorship of the proletariat is one party alone the party of the community, which does not and cannot share the leadership with others —*Stalin*

सरकार म अटूट सम्बन्ध है और इनमे विभेद कर सकना बडा कठिन है। जिक ने स्थिति की विवेचना करते हुए लिखा है कि "यह दल तथा सरकार का इतना अटूट सम्बन्ध है कि यह कहना असम्भव है कि दल का काय कहाँ समाप्त होता है और सरकार का काय कहाँ प्रारम्भ होता है, क्योंकि कुछ व्यक्ति ही दलीय सगठन और शासन सगठन मे सर्वोपरि स्थान रखे हुए हैं और यह निश्चित करना असम्भव रहता है कि वे कब दल के नेता की भाँति या कब शासनाधिकारी के रूप में काय करते हैं।"[1]

साम्यवादी दल ही वास्तविक शासक—यद्यपि सोवियत सविधान के द्वारा सोवियत रूस म एक प्रशासनिक ढाँचा खडा किया गया है लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि 'सोवियत दल ही सोवियत रूस का वास्तविक शासक है।' दलीय नेताओ का सरकार के प्रत्येक अग पर इतना प्रभुत्व है कि सरकारी अग दल के हाथों में अपने लक्ष्यो की प्राप्ति हेतु केवल साधन-मात्र लगते हैं। शासन की समस्त नीतियों एव क्रियाओ का दल के आदेशो के अनुसार होना अनिवाय होता है। साम्यवादी दल के महासचिव और पोलिटब्यूरो के सदस्य शासनाधिकारियों को समय समय पर आदेश देते रहते हैं। मुख्य मुख्य पद तो स्वय इन नेताओ के ही हाथो मे होते हैं, अत दल द्वारा प्रशासन पर नियन्त्रण सरल हो जाता है। सरकारी नीतियो की रूपरेखा दलीय नेताओ द्वारा ही तैयार की जाती है और साम्यवादी दल के कायक्रमो को लागू करना ही शासन का प्रथम और अन्तिम उद्देश्य है। इसी आधार पर आग और जिक यह कहते हैं कि "चाहे वह पचवर्षीय योजना हो या सुरक्षा परिषद के किसी प्रस्ताव पर निषेधाधिकार के प्रयोग की बात हो या श्रमिको अथवा प्रेस सम्बन्धी किसी नीति की बात हो निणय वस्तुत दल ही करता है। सरकार को निणय प्राप्त हो जाता है और वह उसे क्रियान्वित करती है।"[2] न केवल प्रशासन, वरन कानून निर्माण के सम्बन्ध मे भी स्थिति यही है। कार्टर ने इसी प्रकार का विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि "व्यवस्थापन और प्रशासन दोनों ही मे नियन्त्रण हर समय

[1] It is impossible to say where the party leaves off and the government begins so close is the union The same persons frequently hold the top positions in the party apparatus and in the government making it virtually impossible to determine when they act [as party leaders and when they function as government officials —Zink H *Modern Governments*, p 567

[2] 'Whether it be a five year plan a veto of a Security Council proposal a policy affecting labour or the press the party in fact, decides the government receives the decision and carries it out —Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 812

दल का ही रहता है और वही यह निर्णय करता है कि क्या किया जाना है, कब किया जाना है, कैसे किया जाता है और किसके द्वारा किया जाना है।"[1]

यद्यपि सोवियत संविधान के अन्तर्गत शासन के एक पूरे ढाँचे की व्यवस्था की गयी है, लेकिन जहाँ तक वस्तुस्थिति का सम्बन्ध है, सर्वोच्च सोवियत, प्रेजिडियम और मन्त्रिपरिषद—सब संस्थाएँ दिखावे और वस्तुस्थिति को छिपाने के लिए ही हैं और मास्को से लेकर दूरस्थ गाँव तक की समस्त प्रशासनिक व्यवस्था पर साम्यवादी दल के द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है। हरमन फाइनर के इस कथन में अधिक अतिशयोक्ति नहीं है कि 'साम्यवादी दल का संविधान ही सोवियत रूस का वास्तविक संविधान है।'[2] साम्यवादी दल ही सोवियत रूस का वास्तविक शासक है, इसका प्रमाण यह है कि १९४१ तक स्टालिन किसी भी सरकारी पद पर नहीं थे, लेकिन साम्यवादी दल के महासचिव के रूप में उनके द्वारा सोवियत रूस की समस्त शासन व्यवस्था पर नियन्त्रण रखा जाता था। इसी प्रकार स्टालिन की मृत्यु के बाद कुछ वर्षों तक प्रधानमन्त्री पद पर मालेकोव और बुलगानिन आसीन थे, लेकिन साम्यवादी दल के महासचिव के रूप में १९५३ से ही वास्तविक शासक की स्थिति ख्रुश्चेव के द्वारा प्राप्त कर ली गयी थी।

शासन के अन्तर्गत साम्यवादी दल की इस सर्वोच्च स्थिति को संविधान के द्वारा भी स्पष्टतया स्वीकार किया गया है। संविधान के अन्तर्गत इसे 'श्रमिकों का अगुआ और सर्वहारावर्ग के सभी संगठनों का केन्द्र' कहा गया है। साम्यवादी दल सोवियत रूस का एकमात्र मान्यताप्राप्त दल है और संविधान के इन प्रावधानों का समर्थन करते हुए स्टालिन ने १९३६ में घोषित किया था कि "मुझे यह स्वीकार करना चाहिए कि नवीन संविधान का प्रारूप सोवियत संघ में साम्यवादी दल को प्राप्त अग्रणी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं करता। यदि हमारे आदरणीय आलोचक इसे संविधान के प्रारूप का एक दोष मानते हैं, तो इसका हमें दुःख है। हम बोल्शेविक इसे संविधान के प्रारूप का एक गुण मानते हैं।" आगे उन्होंने स्थिति और भी स्पष्ट करते हुए कहा कि "हमारी सोवियतों और अन्य जन संगठनों के द्वारा एक भी महत्वपूर्ण राजनीतिक अथवा संगठनात्मक प्रश्न का निर्णय दल के निर्देश के बिना नहीं किया जा सकता सर्वहारावर्ग का अधिनायकवाद वस्तुतः उसके

[1] "Both in legislation and administration, it is the party which controls at all times, deciding what is to be done, when it is to be done how it is to be done and by whom
—G M Carter and others *The Government of the Soviet Union* p 69

[2] "The true constitution of the Soviet Union is the constitution of the Communist Party
—Finer, Herman, *Government of Greater European Powers* p 769

सरकार मे अटूट सम्बन्ध है और इनमे विभेद कर सकना बडा कठिन है। जिंक ने स्थिति की विवेचना करते हुए लिखा है कि "यह दल तथा सरकार का इतना अटूट सम्बन्ध है कि यह कहना असम्भव है कि दल का काय कहाँ समाप्त होता है और सरकार का काय कहाँ प्रारम्भ होता है, क्योकि कुछ व्यक्ति ही दलीय सगठन और शासन सगठन मे सर्वोपरि स्थान रखे हुए हैं और यह निश्चित करना असम्भव रहता है कि वे कब दल के नेता की भाति या कब शासनाधिकारी के रूप में काय करते हैं।"[1]

साम्यवादी दल ही वास्तविक शासक—यद्यपि सोवियत सविधान के द्वारा सोवियत रूस मे एक प्रशासनिक ढाँचा खडा किया गया है लेकिन वस्तुस्थिति यह है कि 'सोवियत दल ही सोवियत रूस का वास्तविक शासक है।' दलीय नेताओ का सरकार के प्रत्येक अग पर इतना प्रभुत्व है कि सरकारी अग दल के हाथो में अपने लक्ष्यो की प्राप्ति हेतु केवल साधन-मात्र लगते है। शासन की समस्त नीतिया एव क्रियाओ का दल के आदेशो के अनुसार होना अनिवाय होता है। साम्यवादी दल के महासचिव और पोलिटब्यूरो के सदस्य शासनाधिकारियो को समय समय पर आदेश देते रहते हैं। मुख्य मुख्य पद तो स्वय इन नेताओ के ही हाथो मे होते हैं, अत दल द्वारा प्रशासन पर नियन्त्रण सरल हो जाता है। सरकारी नीतियो की रूपरेखा दलीय नेताओ द्वारा ही तैयार की जाती है और साम्यवादी दल के कायक्रमो को लागू करना ही शासन का प्रथम और अन्तिम उद्देश्य है। इसी आधार पर ऑग और जिंक यह कहते हैं कि 'चाहे वह पचवर्षीय योजना हो या सुरक्षा परिषद के किसी प्रस्ताव पर निषेधाधिकार के प्रयोग की बात हो या श्रमिको अथवा प्रेस सम्बन्धी किसी नीति की बात हो निणय वस्तुत दल ही करता है। सरकार को निणय प्राप्त हो जाता है और वह उसे क्रियान्वित करती है।'[2] न केवल प्रशासन, वरन कानून निर्माण के सम्बन्ध में भी स्थिति यही है। कार्टर ने इसी प्रकार का विचार व्यक्त करते हुए लिखा है कि "व्यवस्थापन और प्रशासन दोनो ही मे नियन्त्रण हर समय

1 It is impossible to say where the party leaves off and the government begins, so close is the union The same persons frequently hold the top positions in the party apparatus and in the government making it virtually impossible to determine when they act (as party leaders and when they function as government officials —Zink H *Modern Governments*, p 567

2 'Whether it be a five year plan, a veto of a Security Council proposal a policy affecting labour or the press the party in fact decides, the government receives the decision and carri it out' —Ogg & Zink *Modern Foreign Governments* p 81

३ सोवियत सघ के शासन मे साम्यवादी दल की भूमिका का वणन कीजिए । (लखनऊ, १९६१, ६३)

४ सोवियत सघ के साम्यवादी दल के गठन का वणन कीजिए तथा उसका शासन से सम्बन्ध समझाइए । (लखनऊ, १९६५, ६७, ६९)

५ साम्यवादी गल की स्थिति और महत्त्व की विवेचना कीजिए । (लखनऊ, १९७२)

६ सोवियत रूस मे एक ही राजनीतिक दल क्यो है ? सोवियत सघ के साम्यवादी दल के सगठन का वणन कीजिए । (जीवाजी, १९६८)

७ साम्यवादी दल के महत्त्व का वणन कीजिए तथा सरकार से उसका सम्बन्ध समझाइए । (जीवाजी, १९७१)

८ सोवियत रूस के साम्यवादी दल के सगठन तथा कार्यों की व्याख्या कीजिए । (विक्रम, १९७१)

उस प्रहरी दल का अधिनायकवाद है, जो सर्वहारावग का माग निर्देशन करता है।'[1]

सोवियत रूस की सोवियत व्यवस्था तथा मजदूर सघो और सहकारी समितियो आदि अ य सगठनो पर भी साम्यवादी दल के द्वारा पूण नियन्त्रण रखा जाता है।

दल द्वारा शासन पर नियन्त्रण के साधन

कार्टर के द्वारा विचार व्यक्त किया गया है कि प्रमुखतया तीन पद्धतियो के आधार पर दल के द्वारा शासन के कार्यों को निर्देशित और नियन्त्रित किया जाता है। सवप्रथम, सभी प्रमुख प्रशासनिक अधिकारी और सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो का एक बडा बहुमत साम्यवादी दल के सदस्यो का ही होता है। ८० प्रतिशत से अधिक सर्वोच्च सोवियत के सदस्य और प्रोजिडियम तथा मन्त्रिपरिषद के सभी सदस्य साम्यवादी दल के सदस्य हैं और दल की उच्च सत्ता के निणयो से पूणतया बाधित होते हैं। द्वितीय, दल को प्रत्यक्ष रूप से भी विधायी और प्रशासनिक निर्देश देने का अधिकार प्राप्त है। प्रशासन सम्बन्धी अनेक महत्त्वपूण निणय साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति के द्वारा घोषित किये जाते हैं और अनेक बार दल के द्वारा शासन के क्षेत्र मे प्रत्यक्षतया काय किया जाता है। ततीय, दल के द्वारा अपनी दलीय इकाइयो (प्रारम्भिक दलीय सगठन और नगर व जिला सगठनो आदि) के माध्यम से नियन्त्रण रखा जाता है। समस्त देश मे साम्यवादी दल की इकाइयो का जाल बिछा हुआ है और इनके माध्यम से सोवियत रूस के जीवन के प्रत्येक क्षेत्र पर पूर्ण नियन्त्रण रखा जाता है। काटर के शब्दो मे 'दल न केवल शिखर पर नियन्त्रण रखता है, वरन् देश के अन्तर्गत प्रत्येक स्तर और प्रत्येक सस्था पर छाया हुआ है।'

प्रश्न

१ 'सोवियत सघ म कोई भी महत्त्वपूण प्रश्न—राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक या सास्कृतिक—साम्यवादी दल के निर्देश बिना तय नही किया जाता।' विवेचना कीजिए और साम्यवादी दल का सोवियत रूस मे महत्त्व स्पष्ट कीजिए।
(आगरा १९६३, विक्रम, १९६६)

२ इस कथन की व्याख्या कीजिए कि 'साम्यवादी दल सोवियत सघ के प्रत्यक अग पर पूणतया छाया हुआ है' (आगरा, १९६६, कानपुर, १९६९)

[1] "No important political or organisational problem is ever decided by our Soviets and other mass organisations without directives from the party The dictatorship of the proletariat is substantially the dictatorship of its vanguard the dictatorship of its party as the force which guides the proletariat
—*Stalin*

३ सोवियत सघ के शासन मे साम्यवादी दल की भूमिका का वणन कीजिए।
(लखनऊ, १९६१, ६३)

४ सोवियत सघ के साम्यवादी दल के गठन का वणन कीजिए तथा उसका शासन से सम्बन्ध समझाइए। (लखनऊ, १९६५, ६७, ६९)

५ साम्यवादी दल की स्थिति और महत्त्व की विवेचना कीजिए।
(लखनऊ, १९७२)

६ सोवियत रूस मे एक ही राजनीतिक दल क्यो है ? सोवियत सघ के साम्यवादी दल के सगठन का वणन कीजिए। (जीवाजी, १९६८)

७ साम्यवादी दल के महत्त्व का वणन कीजिए तथा सरकार से उसका सम्बन्ध समझाइए। (जीवाजी, १९७१)

८ सोवियत रूस के साम्यवादी दल के सगठन तथा कार्यों की व्याख्या कीजिए।
(विक्रम, १९७१)

सविधानो द्वारा किया जाता है, न कि सोवियत सघ के सविधान के प्रारूप द्वारा। इसी कारण मेरा विचार है कि सोवियत सघ का सविधान ही विश्व का एकमेव पूर्णरूपेण जनत त्रात्मक सविधान है।" ब्रिटिश विचारक वैब दम्पत्ति ने भी विचार व्यक्त किया है कि '१६३६ के सविधान द्वारा स्थापित सोवियत शासन प्रणाली जनतन्त्र का सर्वश्रेष्ठ रूप है।'[1] मक्सिम गोर्की रूसी लोकतन्त्र को 'विश्व का सर्वाधिक निश्चित लोकत त्र बतलाते हैं। विशिस्की ने लिखा है कि "सोवियत रूस मे उच्च प्रकार का लोकत त्र है।

इन व्यक्तियो ने द्वारा अपने विचार के समर्थन मे निम्न युक्तियो का प्रयोग किया गया है

(१) वयस्क मताधिकार—१६३६ के पूर्व सोवियत रूस म सीमित मताधिकार की व्यवस्था थी, लेकिन रूस के वर्तमान सविधान के अनुसार प्रजाति, राष्ट्रीयता, धर्म, जन्मस्थान, शिक्षा, सम्पत्ति और पिछली गतिविधियो के आधार पर किसी भेदभाव के बिना १८ वर्ष के प्रत्येक नर नारी को मताधिकार प्रदान किया गया है। २३ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नागरिक सर्वोच्च सोवियत का चुनाव लड सकता है और सघीय गणराज्यो की सोवियतो के चुनाव लडने के लिए तो २१ वर्ष की आयु ही रखी गई है। साम्यवादी विचारक इस बात पर भी गर्व करते है कि सोवियत रूस म सरकारी कर्मचारियो और सनिको को भी अन्य नागरिको के समान चुनाव लडने का अधिकार प्रदान किया गया है, जो पूजीवादी देशो मे नही है। सविधान की इन व्यवस्थाओ के आधार पर उनका दावा है कि सोवियत सविधान सभी नागरिको को शासन कार्य मे भाग लेन का अवसर प्रदान करता है, जो कि प्रजातन्त्र का एक प्रमुख लक्षण है।

(२) प्रत्यक्ष चुनाव तथा गुप्त मतदान—वर्तमान सविधान द्वारा सोवियत रूस मे प्रत्यक्ष चुनाव और गुप्त मतदान की व्यवस्था की गई है, जिसका तात्पर्य यह है कि नागरिक बिना किसी भय के प्रत्यक्ष रूप मे अपने प्रतिनिधि निर्वाचित कर सकते हैं। जनता न केवल विधायको, वरन् स्थानीय न्यायाधीशो को भी निर्वाचित करती है। मतदाताओ को यह भी अधिकार प्राप्त है कि वे अपने प्रतिनिधियो को वापस बुला सकते हैं। सोवियत नागरिक अपने मताधिकार के प्रति अत्यधिक सजग भी हैं जहा पश्चिमी देशो मे ५० से ८० प्रतिशत तक मतदाता अपने अधिकार का प्रयोग करते हैं, सोवियत रूस मे लगभग सभी चुनावो म ९५ प्रतिशत से अधिक मतदाताओं के द्वारा अपने मताधिकार का प्रयोग किया जाता है।

[1] Tested by the constitution of the Soviet Union as revised and enacted in 1936 the U S S R is the most inclusive and equalized democracy in the world —*Webbs*

[2] 'Most pronounced democracy on earth —*M Gorky*

10

सोवियत सघ—प्रजातन्त्र या अधिनायकतन्त्र

(SOVIET UNION—DEMOCRACY OR DICTATORSHIP)

'सोवियत सघ के सविधान के अध्ययन से हम सोवियत शासन के बारे मे भ्रांति मे पड जाते हैं, क्योंकि स्टालिन सविधान ने केवल दिखावे का ही लोकतन्त्र स्थापित किया है, वास्तविक लोकतन्त्र नहीं ।''[1]
—मुनरो

सोवियत रूस की शासन व्यवस्था की मूल प्रकृति के सम्बन्ध मे राजनीति विज्ञान के विद्वानो मे बहुत अधिक मतभेद है । सोवियत नेता और साम्यवादी विचारक इसे सर्वोत्तम लोकतन्त्र की सज्ञा देते है, लेकिन पाश्चात्य विचारको का कथन है कि सोवियत रूस की शासन व्यवस्था अधिनायकतन्त्र के अतिरिक्त और कुछ नही है ।

सोवियत शासन एक लोकतन्त्रीय व्यवस्था

स्टालिन, सिडनी और बट्रिस वेब, मैक्सिम गोर्की और अनातोले फ्रास आदि के द्वारा विचार व्यक्त किया गया है कि सोवियत रूस की शासन व्यवस्था प्रजातन्त्रीय है । १९३६ के सविधान का प्रारूप प्रस्तुत करते हुए स्टालिन ने कहा था कि 'पूजीवादी देशो मे, जहा परस्पर विरोधी हितों वाले वर्ग विद्यमान हैं, अतिम विश्लेषण मे प्रजातन्त्र का अर्थ होता है सशक्त लोगो के लिए प्रजातन्त्र अर्थात् सम्पत्तिवान् अल्पसख्यको के लिए प्रजातन्त्र । इसके विपरीत सोवियत सघ मे प्रजातन्त्र श्रमजीवी जनो के लिए है, अर्थात् सबके लिए प्रजातन्त्र है । इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जनतन्त्रवाद के सिद्धान्तों का अतिक्रमण बुर्जुआ देशों के

[1] One is likely to get a wholly misleading impression of the Russian Government by nearly reading the constitution because the Stalin Constitution created a democracyin form but not in fact' —W B *Munro*

संविधानों द्वारा किया जाता है, न कि सोवियत संघ के संविधान के प्रारूप द्वारा। इसी कारण मेरा विचार है कि सोवियत संघ का संविधान ही विश्व का एकमेव पूर्णरूपेण जनतन्त्रात्मक संविधान है।" ब्रिटिश विचारक वेब दम्पत्ति ने भी विचार व्यक्त किया है कि '१९३६ के संविधान द्वारा स्थापित सोवियत शासन प्रणाली जनतन्त्र का सर्वश्रेष्ठ रूप है।[1] मक्सिम गोर्की रूसी लोकतन्त्र को 'विश्व का सर्वाधिक निश्चित लोकतन्त्र'[2] बतलाते हैं। विशिस्की ने लिखा है कि "सोवियत रूस में उच्च प्रकार का लोकतन्त्र है।

इन व्यक्तियों के द्वारा अपने विचार के समर्थन में निम्न युक्तियों का प्रयोग किया गया है

(१) वयस्क मताधिकार—१९३६ के पूर्व सोवियत रूस में सीमित मताधिकार की व्यवस्था थी, लेकिन रूस के वर्तमान संविधान के अनुसार प्रजाति, राष्ट्रीयता, धर्म जन्मस्थान, शिक्षा, सम्पत्ति और पिछली गतिविधियों के आधार पर किसी भेदभाव के बिना १८ वर्ष के प्रत्येक नर नारी को मताधिकार प्रदान किया गया है। २३ वर्ष की आयु प्राप्त प्रत्येक नागरिक सर्वोच्च सोवियत का चुनाव लड़ सकता है और संघीय गणराज्यों की सोवियतों के चुनाव लड़ने के लिए तो २१ वर्ष की आयु ही रखी गई है। साम्यवादी विचारक इस बात पर भी गर्व करते हैं कि सोवियत रूस में सरकारी कर्मचारियों और सैनिकों को भी अन्य नागरिकों के समान चुनाव लड़ने का अधिकार प्रदान किया गया है जो पूँजीवादी देशों में नहीं है। संविधान की इन व्यवस्थाओं के आधार पर उनका दावा है कि सोवियत संविधान सभी नागरिकों को शासन कार्य में भाग लेने का अवसर प्रदान करता है, जो कि प्रजातन्त्र का एक प्रमुख लक्षण है।

(२) प्रत्यक्ष चुनाव तथा गुप्त मतदान—वर्तमान संविधान द्वारा सोवियत रूस में प्रत्यक्ष चुनाव और गुप्त मतदान की व्यवस्था की गई है, जिसका तात्पर्य यह है कि नागरिक बिना किसी भय के प्रत्यक्ष रूप में अपने प्रतिनिधि निर्वाचित कर सकते हैं। जनता न केवल विधायकों, वरन् स्थानीय न्यायाधीशों को भी निर्वाचित करती है। मतदाताओं को यह भी अधिकार प्राप्त है कि वे अपने प्रतिनिधियों को वापस बुला सकते हैं। सोवियत नागरिक अपने मताधिकार के प्रति अत्यधिक सजग भी हैं जहाँ पश्चिमी देशों में ५० से ८० प्रतिशत तक मतदाता अपने अधिकार का प्रयोग करते हैं, सोवियत रूस में लगभग सभी चुनावों में ९५ प्रतिशत से अधिक मतदाताओं के द्वारा अपने मताधिकार का प्रयोग किया जाता है।

[1] Tested by the constitution of the Soviet Union as revised and enacted in 1936 the U S S R is the most inclusive and equalized democracy in the world —*Webbs*

[2] Most pronounced democracy on earth —*M Gorky*

(३) मौलिक अधिकार—प्रजातन्त्र की एक आवश्यक शर्त संविधान और राज्य द्वारा अपने नागरिकों को विकास के उचित अवसर प्रदान करना होती है और सोवियत शासन के द्वारा यह शर्त भी पूरी की जाती है। सोवियत संविधान के अनुच्छेद ११८ से लेकर अनुच्छेद १२६ तथा अनुच्छेद ८ से लेकर अनुच्छेद १० सोवियत नागरिकों को विविध अधिकार प्रदान करते हैं। इनमें वे सभी नागरिक और राजनीतिक अधिकार सम्मिलित हैं, जो पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देशों के द्वारा परम्परागत रूप में अपने नागरिकों को प्रदान किये जाते हैं। इनके साथ ही सोवियत संविधान काम का अधिकार, विश्राम तथा अवकाश का अधिकार व आर्थिक सुरक्षा का अधिकार आदि अधिकार भी प्रदान करता है। इन अधिकारों के बल पर कहा जा सकता है कि सोवियत संविधान अपने नागरिकों के विकास के प्रति पर्याप्त सचेष्ट है।

(४) आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था—साम्यवादी विचारक जिस बात के आधार पर सोवियत रूस की व्यवस्था को उच्च और पश्चिमी देशों की तुलना में श्रेष्ठ प्रजातन्त्र बतलाते हैं, वह सोवियत संविधान और राज्य द्वारा की गयी आर्थिक सुरक्षा की व्यवस्था है। उनके अनुसार यद्यपि पश्चिमी देश अपने नागरिकों को राजनीतिक अधिकार प्रदान करते हैं लेकिन इन देशों में नागरिकों को आर्थिक सुरक्षा प्राप्त नहीं होती और इसी कारण वे इस स्थिति में नहीं होते हैं कि अपने राजनीतिक अधिकारों का प्रयोग कर सकें। सोवियत रूस में आर्थिक सुरक्षा की व्यापक व्यवस्था कर लोकतन्त्र को वास्तविकता का रूप दे दिया गया है। आर्थिक शोषण का अन्त कर दिया गया है, सभी को काम का अधिकार, विश्राम तथा अवकाश का अधिकार प्रदान किया गया है, उद्योगों के प्रबन्ध में नागरिकों को हिस्सा दिया गया है और सभी असहाय तथा अक्षम व्यक्तियों के लिए सामाजिक सुरक्षा की व्यवस्था की गयी है। इस सम्बन्ध में स्टालिन ने कहा था कि 'वास्तविक स्वतन्त्रता वहीं रह सकती है जहाँ शोषण का अन्त कर दिया गया हो, जहाँ पर दूसरों पर कोई अत्याचार न हो, जहाँ पर कोई बेरोजगारी तथा निर्धनता न हो, जहाँ पर व्यक्ति को यह चिन्ता न हो कि कल उसे काम, मकान या रोटी से वंचित कर दिया जायगा। ऐसे समाज में ही नागरिकों को कागज पर नहीं वरन वास्तव में स्वतन्त्रता प्राप्त होती है।"

(५) वर्गविहीन या प्रजातन्त्रीय समाज की स्थापना—सोवियत नेताओं के अनुसार पश्चिमी देशों के अन्तर्गत एक ओर तो शोषणकर्ता पूँजीपति हैं और दूसरी ओर साधनहीन श्रमिक वर्ग है। इस व्यवस्था में सम्पत्तिशाली वर्ग के द्वारा निर्धन वर्ग का निरन्तर शोषण किया जाता है। इन देशों में वर्ण और जाति के आधार पर भी भेदभाव के अनेक उदाहरण अब तक देखे जाते हैं। इस प्रकार पश्चिमी प्रजातन्त्रीय राज्यों में अब तक प्रजातन्त्रीय समाज की स्थापना नहीं की जा सकी है। सोवियत रूस में ऊँच नीच और अमीर गरीब के भेदभाव का अन्त कर एक प्रजातन्त्रीय समाज की स्थापना कर ली गयी है और इस प्रजातन्त्रीय समाज में ही प्रजातन्त्र अधिक सफलता के साथ कार्य कर सकता है।

(६) लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद—साम्यवादी विचारक लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद को भी सोवियत रूस में लोकतन्त्रीय व्यवस्था के अस्तित्व की पुष्टि में ही प्रस्तुत करते हैं। वे इस बात पर बल देते हैं कि जहां पश्चिमी देशों में नौकरशाही केन्द्रवाद है, सोवियत रूस में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद को अपनाया गया है, जिसके अन्तर्गत सत्ता का प्रयोग निर्वाचित प्रतिनिधियों के द्वारा किया जाता है। उनके अनुसार इस व्यवस्था के अन्तर्गत जनता के द्वारा शासन की त्रुटियां बतलायी जा सकती हैं, शासन की आलोचना की जा सकती है, सरकारी प्रस्तावों, विधेयकों और योजनाओं पर सोवियतों और समाचारपत्रों में स्पष्ट वाद विवाद होते हैं और शासन जनता द्वारा व्यक्त किये गये विचारों के आधार पर ही अपना कार्य करता है। इस प्रकार उनके अनुसार सोवियत रूस में शासन के कार्यों की प्रक्रिया निश्चित रूप से प्रजातान्त्रिक है।

(७) सामूहिक नेतृत्व—इन सबके अतिरिक्त सोवियत नेता इस बात पर बल देते हैं कि स्टालिन के समय में चाहे सोवियत रूस में व्यक्तिगत नेतृत्व के तत्व की प्रधानता रही हो, लेकिन ख्रुश्चेव काल से ही सोवियत रूस में सामूहिक नेतृत्व को अपना लिया गया है। दूसरे शब्दों में, सोवियत रूस में तानाशाही का अन्त हो चुका है और अब यह उदारवाद की ओर बढ़ रहा है। वर्तमान समय में सोवियत रूस में ब्रेजनेव, कोसीगिन और अन्य साम्यवादी नेताओं का सामूहिक नेतृत्व है जो प्रजातन्त्रीय धारणा के अनुरूप है।

सोवियत रूस में अन्य प्रजातन्त्रीय देशों के ही समान सर्वोच्च सोवियत के रूप में द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका है। सोवियत संविधान के द्वारा संसदीय व्यवस्था को अपनाया गया है। इन सभी बातों के आधार पर न केवल साम्यवादी, वरन कुछ अन्य विचारकों का भी कथन है कि सोवियत शासन और राज्य प्रजातन्त्र का एक श्रेष्ठ उदाहरण है।

सोवियत रूस—एक अधिनायकवादी व्यवस्था

यदि एक ओर स्टालिन, विंशिस्की, वेब दम्पत्ति, अनातोले फ्रांस और मेक्सिम गोर्की आदि अनेक विचारक सोवियत रूस को एक श्रेष्ठ प्रजातन्त्र बतलाते हैं, तो दूसरी ओर मुनरो, एडम जान, न्यूमैन, कार्टर, डा० फाइनर, टाउस्टर और माइकेल टी० फ्लोरेन्सकी जैसे अनेक विचारक इस बात का प्रबलता के साथ प्रतिपादन करते हैं कि सोवियत शासन एक प्रजातन्त्रीय व्यवस्था नहीं, वरन् अधिनायकवादी व्यवस्था का ही उदाहरण है। एडम्स के अनुसार तो यह विश्व में निरंकुश शासन का सबसे प्रमुख उदाहरण है।[1] इन विचारकों के अनुसार तो सोवियत रूस का वर्तमान

[1] 'Soviet Russia is the world's most conspicuous example of despotism' —Adams John & others *Foreign Governments and their Background* p 756

तात्पर्य है 'एक व्यक्ति का अधिनायकत्व' जो साम्यवादी दल में महासचिव के पद पर आसीन हो। इस व्यवस्था में शासक वर्ग को दैवत्वपूर्ण दोषमुक्तता का स्थान प्रदान कर दिया गया है और मतभेद तथा आलोचना के लिए कोई स्थान नहीं है। अधिनायक के विरुद्ध मुंह खोलने वाले को ट्राटस्की, बेरिया बुल्गानिन और ख्रुश्चेव के से दिन देखने होते हैं। साम्यवादी दल में लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद की जो बात कही जाती है, उसमें वस्तुतः केन्द्रवाद ही सब कुछ है और लोकतन्त्र तो केवल कहने भर की बात है। राइट के शब्दों में 'राज्य सिद्धान्त रूप में लोकतन्त्र प्रदान करता है किन्तु दल वास्तविक रूप में उसे छीन लेता है।'[1]

(३) नागरिक और राजनीतिक स्वतन्त्रताओं का अस्तित्व नहीं—प्रजातन्त्रीय व्यवस्था के अन्तर्गत विचार और अभिव्यक्ति, प्रेस, सम्मेलन और अन्य नागरिक स्वतन्त्रताओं का विशेष महत्व होता है, लेकिन सोवियत रूस में इस प्रकार की स्वतन्त्रताओं का अस्तित्व केवल कागज पर ही है, वास्तव में नहीं। यदि कोई व्यक्ति साम्यवादी नेताओं की आलोचना करता है तो उसे क्रान्ति विरोधी कहकर भीषणतम दण्ड दिया जाता है। सोवियत रूस के दो प्रमुख समाचारपत्र प्रावदा (Pravada) और इजवेस्तिया (Izvestia) हैं। इनमें प्रावदा साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति द्वारा प्रकाशित पत्र है और इजवेस्तिया सरकारी पत्र है। व्यवहार में दोनों ही ऊंचे स्वर में सोवियत रूस के नेतृत्व की प्रशंसा करते रहते हैं। अभी हाल ही के वर्षों (१९६२-७२) में सिन्यावस्की डेनियल गिन्सबर्ग, गलेनस्कोव, सोवियत संघ में हाइड्रोजन बम के आविष्कारक आन्द्रे सखारोव, कला समीक्षक विक्टर फेनबर्ग और इंजीनियर बोरिसोव के साथ जिस प्रकार का व्यवहार किया गया, वह इस बात का प्रतीक है कि सोवियत शासक अब भी विरोधियों से निबटने के लिए स्टालिनवादी पद्धति को ही अपनाते हैं। इस सम्बन्ध में डॉ० जिवागो के लेखक डॉ० पास्टरनाक और स्टालिन की पुत्री स्वेतलाना के उदाहरण तो सर्वप्रसिद्ध हैं। वस्तुतः आन्द्रे गाइड ने ठीक ही कहा है कि 'संसार के अन्य किसी देश में विचार इतना कम स्वतन्त्र नहीं है।'[2]

सोवियत नागरिकों की स्वतन्त्रता पर एक बहुत बड़ा प्रतिबन्ध 'सोवियत गुप्तचर पुलिस (G P U) है जो बहुत अधिक शक्तिशाली है और जिसके द्वारा बिना किसी कानूनी प्रक्रिया का पालन किये नागरिकों के साथ अत्यन्त कठोर व्यवहार किया जा सकता है। बन्दी प्रत्यक्षीकरण (Habeas Corpus) की व्यवस्था, जिसे पश्चिमी देशों में व्यक्ति स्वतन्त्रता का सबसे बड़ा रक्षक कहा जा सकता है, सोवियत

[1] 'The state gives democracy in theory, the party takes it away in fact —F J Wright, *An Introduction to the Study of Democratic Government*, p 110

[2] In no country of the World is thought less free —*Andre Guide*

रूस मे विद्यमान नही है। इस प्रकार सोवियत रूस मे वह नागरिक स्वतन्त्रता ही नही है, जिसके अभाव मे लोकतन्त्र के सचालन की कल्पना नही की जा सकती है।

(४) **मौलिक अधिकारो की क्रियान्विती की व्यवस्था नहीं**—मौलिक अधिकारो का महत्त्व ही इस दृष्टि से होता है कि उन्हे राज्य के विरुद्ध भी लागू किया जा सकता है, लेकिन सोवियत रूस म ऐसा नही है। रूस म नागरिक अपने अधिकारो की रक्षा के लिए न्यायपालिका की शरण प्राप्त नही कर सकते है और न ही न्यायपालिका शासन को नागरिक अधिकारो के विरुद्ध आचरण करने से रोक सकती है। अधिकारो की क्रियान्विती की व्यवस्था न होने के कारण उनके उल्लेख का कोई महत्त्व नही रह जाता है। सोवियत सविधान मे ही मौलिक अधिकारो पर एक सामान्य प्रतिबन्ध भी लगा दिया गया है और वह प्रतिबन्ध यह है कि 'अधिकारो का प्रयोग समाजवादी मान्यताओ के अनुरूप होना चाहिए।' अधिकारो पर लगाये इस सामान्य प्रतिबन्ध से भी उनकी व्यावहारिक उपयोगिता कम हो गयी है।

(५) **धार्मिक स्वतन्त्रता का वस्तुत अभाव**—प्रजातन्त्र अपने सभी नागरिको के लिए धार्मिक स्वतन्त्रता मे विश्वास करता है। यद्यपि सोवियत सविधान के अनुच्छेद १२४ मे सभी नागरिको को अन्तकरण तथा पूजा की स्वतन्त्रता दी गई है, किन्तु वास्तविक स्थिति दूसरी ही है। वास्तविकता यह है कि सोवियत रूस एक साम्यवादी राज्य होने के नाते धर्म विरोधी है और नागरिको को धार्मिक प्रचार की स्वतन्त्रता के स्थान पर धर्म विरोधी प्रचार करने की स्वतन्त्रता दी गयी है। ईश्वर मे आस्था रखने वाले व्यक्तियो को साम्यवादी दल और सभी उत्तरदायित्वपूर्ण पदो से दूर रखा जाता है, यह स्थिति प्रजातन्त्र के अनुकूल नही है।

(६) **न्यायपालिका स्वतन्त्र नहीं**—स्वतन्त्र न्यायपालिका प्रजातन्त्र का एक प्रमुख आधार होती है, लेकिन सोवियत रूस मे न्यायपालिका स्वतन्त्र नही है। न्यायपालिका को सामान्य प्रशासन का ही एक अग समझा जाता है, जिसके द्वारा समाजवादी मान्यताओ के अनुरूप ही आचरण किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय के कार्य पर भी प्रोक्यूरेटर जनरल और न्यायमन्त्री के द्वारा बहुत अधिक नियन्त्रण रखा जाता है और न्यायपालिका शासन की इच्छा के विरुद्ध कोई कार्य नही कर सकती।

(७) **सोवियत चुनाव पद्धति एक दिखावा मात्र**—सोवियत रूस म प्रजातन्त्र का दावा करने वाले व्यक्तियो के द्वारा वयस्क मताधिकार, प्रत्यक्ष निर्वाचन और गुप्त मतदान की बात कही जाती है, लेकिन साम्यवादी दल का एकछत्र प्रभुत्व होने के कारण इस चुनाव पद्धति का कोई महत्त्व नहीं रहा है। सहकारी सस्थाएँ और मजदूर सघ आदि सभी साम्यवादी दल द्वारा नियन्त्रित हैं और सभी चुनावो के अन्तर्गत एक स्थान के लिए केवल एक ही उम्मीदवार होता है। ऐसी स्थिति म चुनाव और लोकतन्त्र एक दिखावे के अतिरिक्त और क्या है?

सोवियत नेता अपने देश मे ९८ और ९९ प्रतिशत नागरिको द्वारा मताधिकार के प्रयोग की बात कहते हैं, लेकिन यह स्थिति राजनीतिक जागरूकता का परिचय देने के बजाय सर्वाधिकारवादी प्रवृत्तियो का ही परिचय देती है। इतिहास के अन्तर्गत इतने अधिक प्रतिशत मतदाताओ द्वारा मताधिकार के प्रयोग की बात हिटलर और मुसोलिनी के फासीवादी और नाजीवादी राज्यो मे ही देखी गयी है।

सोवियत रूस के अन्तर्गत सत्ता मे जिस प्रकार के आकस्मिक परिवर्तन होते हैं, कल तक जो शासन के अन्तर्गत सर्वोच्च पदो पर आसीन थे, उनके द्वारा जिस प्रकार से अपनी त्रुटियों को स्वीकार कर राजनीति से सयास ले लिया जाता है आदि बातें सर्वाधिकारवादी प्रवृत्तियो का ही परिचय देती हैं। इस बात म कोई भी सन्देह नही रहना चाहिए कि पाश्चात्य मान्यताओ के अनुसार सोवियत रूस की शासन व्यवस्था प्रजातन्त्रीय नही है। स्टालिन की मृत्यु के बाद नवीन शासन द्वारा उदारतावादी दृष्टिकोण अपनाने की बात बहुत कही जाती रही है, लेकिन इससे मूल स्थिति मे कोई विशेष अन्तर नही आया है और फाइनर के शब्दो मे कहा जा सकता है कि "**१९५३ के बाद कुछ उदारवादिता अपनाते हुए भी सोवियत सघ की सरकार सर्वाधिकारवादी राज्य के सभी प्रमुख तत्वों को प्रकट करती है।**"[1] मुनरो ने भी इसी प्रकार का विचार व्यक्त करते हुए कहा है कि "**सोवियत सघ के सविधान के अध्ययन से हम सोवियत शासन के बारे में भ्रान्ति में पड जाते हैं, क्योंकि स्टालिन सविधान ने केवल दिखावे का ही लोकतन्त्र स्थापित किया है, वास्तविक लोकतन्त्र नहीं।**'

इस बात को तो सोवियत नेता भी नही छिपाते कि पश्चिमी अर्थों मे उनकी सरकार लोकतन्त्रीय नही है। उनके द्वारा भी अपनी शासन व्यवस्था को लोकतन्त्र का नही, वरन 'सर्वहारावर्ग के अधिनायकत्व' (Dictatorship of the Proletariat) का नाम दिया गया है। वे अपनी शासन व्यवस्था को 'बहुजनहिताय' बतलाते हुए इसे एक '**उच्च प्रकार का लोकतन्त्र**' कहते हैं। वस्तुत इसे एक उच्च प्रकार का लोकतन्त्र नही, वरन एक विशेष प्रकार की शासन व्यवस्था ही कहा जा सकता है जो प्रजातन्त्र की तुलना म सर्वाधिकारवाद के ही अधिक समीप है।

वस्तुत जहाँ तक शब्दो और भावनाओ दोनो म ही प्रजातन्त्र का सम्बन्ध है विश्व के किसी भी देश के द्वारा अब तक शब्दो और भावनाओ दोनो मे अर्थात् जनता का, जनता के द्वारा और जनता के लिए शासन को पूर्ण रूप से प्राप्त नही

[1] In each one of these major respects, therefore, the government of the U S S R, for all the softening of the regime since 1953 exhibits the essential features of the totalitarian state"

—S E Finer, *Comparative Government*, p 438

किया जा सकता है। इस रूप में प्रजातन्त्र की सिद्धि तभी सम्भव है जबकि राजनीतिक प्रजातन्त्र को आर्थिक प्रजातन्त्र अर्थात् समाजवाद के साथ अपनाया जाय। पश्चिमी देशों ने जहाँ राजनीतिक प्रजातन्त्र को अपना लिया है, वहाँ सोवियत रूस ने आर्थिक प्रजातन्त्र को अपनाया है। जिस प्रकार पश्चिमी देश आर्थिक प्रजातन्त्र की ओर अग्रसर हैं, उसी प्रकार सोवियत रूस भी यद्यपि बहुत धीमी गति के साथ, लेकिन राजनीतिक प्रजातन्त्र की ओर अग्रसर अवश्य ही है। एडम्स जान ने इस स्थिति के सम्बन्ध में लिखा है कि "पश्चिमी देशों में राजनीतिक लोकतन्त्र है और कुछ सीमा तक वे समाजवाद का भी प्रयोग करते हैं। रूस में समाजवाद है और कुछ कुछ लोकतन्त्र का स्वरूप भी है। दोनों पक्षों में से कोई भी पक्ष लोकतन्त्र और समाजवाद को परस्पर विरोधी नहीं मानता, अपितु दोनो पक्ष ही समाजवाद और लोकतन्त्र को एक दूसरे के अनुकूल बनाना चाहते हैं।[1]

सोवियत रूस वर्तमान समय में एक अधिनायकवादी या सर्वाधिकारवादी राज्य ही है, जिसमें अभी हाल ही के कुछ वर्षों में उदारतावाद के कुछ लक्षण अवश्य देखे गये हैं। सम्भवतया आर्थिक प्रजातन्त्र को पूर्णतया प्राप्त कर लिये जाने के बाद सोवियत नागरिक भी राजनीतिक प्रजातन्त्र की ओर आकृष्ट होंगे।

प्रश्न

१ 'सोवियत संघ में वर्तमान शासन नाम में प्रजातन्त्रीय होते हुए भी वास्तव में अधिनायकतन्त्रीय है।" आप इस विचार को कहाँ तक स्वीकार करते हैं? (आगरा, १९६३, जीवाजी, १९६५)

२ क्या आप सोवियत संघ को जनतन्त्र समझते हैं? अपने उत्तर के लिए तर्क प्रस्तुत कीजिए। (कानपुर, १९७०)

३ सोवियत संघ का संविधान कहाँ तक प्रजातन्त्रात्मक कहा जा सकता है? (लखनऊ, १९६४)

४ यह कहना कहाँ तक उचित है कि सोवियत संघ एक प्रजातन्त्रीय शासन है? विवेचना कीजिए। (विक्रम, १९६८)

५ क्या आप स्टालिन के इस कथन से सहमत हैं कि सोवियत संघ एक यथार्थ लोकतन्त्र है? अपने मत के पक्ष में कारण दीजिए। (विक्रम, १९७०)

६ कारण सहित बताइए कि सोवियत रूस का संविधान सिद्धान्त और व्यवहार दोनों में लोकतन्त्रात्मक है? (आगरा, १९७२)

1 The Westerners have political democracy and practice some socialism The Russians have socialism and some forms of democracy Neither group regards democracy and socialism as diametrically opposed both are trying to make them compatible with each other —Adams John and others
Foreign Governments and their Background p 766

और सरकार तथा जनता के बीच सम्पर्क स्थापित करने आदि से सम्बन्धित कर्तव्य भी पूरे करने होते हैं। प्रतिनिधि के सम्बन्ध में सोवियत मान्यता यह है कि वह जनता का सेवक और सर्वोच्च सोवियत में उनका सदेशवाहक होता है।[1]

सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों को वापस बुलाने की पद्धति (System of Recall)—सर्वोच्च सोवियत के एक सदस्य को जनता द्वारा वापस बुलाया जा सकता है, यदि उसने अपने निर्वाचकों का विश्वास प्राप्त न किया हो या अपने ऊंचे पद की मर्यादा के विरुद्ध कोई कार्य किया हो। प्रतिनिधि (Deputy) को वापस बुलाने का प्रश्न निर्वाचकों की किसी सभा में उठाया जा सकता है। सम्बन्धित प्रतिनिधि रक्षा के लिए अपना बयान सर्वोच्च सोवियत अथवा निर्वाचकों के सामने दे सकता है। सम्बन्धित प्रतिनिधि और उसके विपक्षी दोनों ही अपने विचारों का प्रचार कर सकते हैं। प्रेजिडियम प्रतिनिधि को वापस बुलाने के सम्बन्ध में मतदान का प्रबन्ध करती है। मतदान निर्वाचकों की एक सभा में हाथ उठवा कर लिया जाता है। सर्वोच्च सोवियत के एक सदस्य को वापस बुलाया समझा जाता है, यदि उसके निर्वाचन क्षेत्र के आधे से अधिक मतदाता उसके विरुद्ध मत दे दें। इस प्रकार उस सदस्य का स्थान रिक्त हो जाता है और दो महीने के अन्दर ही उसके स्थान पर नया सदस्य चुन लिया जाता है। अब तक सर्वोच्च सोवियत के कुल १० सदस्यों को वापस बुलाया गया है।

अधिवेशन (Sessions)—सर्वोच्च सोवियत का चुनाव हो चुकने के बाद शीघ्रातिशीघ्र अधिवेशन बुलाया जाता है और कानून के अनुसार इसमें तीन माह से अधिक विलम्ब नहीं किया जा सकता है। अनुच्छेद ४६ के अनुसार प्रेजिडियम के द्वारा वर्ष में दो बार सर्वोच्च सोवियत का अधिवेशन बुलाया जाना आवश्यक है। प्रेजिडियम के द्वारा अपने विवेक से या किसी एक संघीय गणराज्य की मांग पर सर्वोच्च सोवियत का असाधारण अधिवेशन बुलाया जा सकता है। एक अधिवेशन की अवधि बहुत ही कम (सामान्यतया ७ ८ दिन) होती है। संविधान के अन्तर्गत दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाने की भी व्यवस्था है। प्रेजिडियम, मंत्रिपरिषद और सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के निर्वाचन तथा आयोगों के प्रतिवेदनों पर विचार करने के लिए दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाई जाती है। संयुक्त बैठक की अध्यक्षता संघीय सोवियत तथा राष्ट्रीयताओं की सोवियत के सभापति बारी बारी से करते हैं। सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों का अधिवेशन एक साथ प्रारम्भ तथा समाप्त होता है।

सर्वोच्च सोवियत के पदाधिकारी—सर्वोच्च सोवियत के दोनों ही सदन अपने लिये अलग अलग एक सभापति तथा ४ उपसभापति निर्वाचित करते हैं। इनका चुनाव ४ वर्ष की अवधि के लिए किया जाता है। दोनों ही सदनों के सभापति अपने-

[1] Towster Julian, *Political Power in the U S S R* p 252

अपने सदन के अधिवेशनों की अध्यक्षता करते हैं तथा उसकी कार्यवाही और प्रक्रिया का संचालन करते हैं। सर्वोच्च सोवियत के किसी भी सदन के सभापति को वह गौरव, प्रतिष्ठा और विशेषाधिकार प्राप्त नहीं हैं जो अन्य देशों के सदनों के अध्यक्ष, विशेषकर निम्न सदन के अध्यक्ष, को प्राप्त हैं।

सर्वोच्च सोवियत की शक्तियाँ तथा कार्य

सोवियत संविधान के अनुच्छेद ३० में उल्लेख है कि 'सर्वोच्च सोवियत राज्य की शक्ति का सर्वोच्च अंग है।' सर्वोच्च सोवियत इस दृष्टि से सर्वोच्च है कि इसे कानून निर्माण की अनन्य शक्ति प्राप्त है और शासन कार्य से सम्बन्धित अन्य महत्त्वपूर्ण संस्थाओं के सदस्य (मंत्रिपरिषद और प्रेजिडियम के सदस्य) सर्वोच्च सोवियत के द्वारा निर्वाचित होते तथा इसी के प्रति उत्तरदायी हैं।

सर्वोच्च सोवियत की शक्तियों तथा कार्यों का अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) **विधायी शक्तियाँ**—सोवियत संविधान के अनुच्छेद १४ में संघीय सरकार के क्षेत्राधिकार का वर्णन किया गया है और संघीय क्षेत्राधिकार के समस्त विषयों पर एकमात्र सर्वोच्च सोवियत को कानून निर्माण की शक्ति प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद ३२ में लिखा है कि, '**सोवियत संघ की विधायी शक्ति अनन्य रूप से सर्वोच्च सोवियत के पास है।**'[1] सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्मित कानूनों पर किसी को भी निषेधाधिकार के प्रयोग की शक्ति प्राप्त नहीं है। इन कानूनों को सोवियत रूस के उच्चतम न्यायालय द्वारा भी रद्द नहीं किया जा सकता है, क्योंकि संविधान की व्याख्या करने की शक्ति सोवियत संघ के उच्चतम न्यायालय के पास नहीं है। यह शक्ति तो सोवियत रूस में प्रेजिडियम के पास ही है। सर्वोच्च सोवियत द्वारा पास किये गये कानून सारे देश पर लागू होते हैं। संविधान के अनुच्छेद २० में उल्लेख है कि यदि संघ की सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्मित कानून और इसके गणराज्यों की सर्वोच्च सोवियत (राज्यों के विधान मण्डल) द्वारा निर्मित कानूनों में किसी प्रकार का विरोध उत्पन्न हो जाय तो संघ की सर्वोच्च सोवियत का कानून मान्य समझा जायगा और राज्यों के कानून को मान्यता नहीं मिलेगी।[2]

सर्वोच्च सोवियत के अवकाश काल में प्रेजिडियम द्वारा जारी किये गये अध्यादेशों का अनुसमर्थन सर्वोच्च सोवियत द्वारा किया जाना आवश्यक है।

प्रेजिडियम अपनी इच्छा से या किसी संघीय गणराज्य की माँग पर किसी

1 'The legislative power of the U S S R is exercised exculsively by the Supreme Soviet of the U S S R
—*Article 32 of the Soviet Constitution*

2 In the event of divergence between the law of a Union Republic and a law of the Union the Union law shall prevail
—*Article 20*

कानून पर जनमत संग्रह करा सकती है, परन्तु अभी तक किसी भी कानून पर जनमत संग्रह नहीं हुआ है। वास्तव में संग्रह तभी हो सकता है, जबकि साम्यवादी दल के सर्वोच्च नेता चाहे और समस्त कानून निर्माण साम्यवादी दल की इच्छानुसार ही होता है, अत जनमत संग्रह की आवश्यकता नहीं रहती।

(२) **संविधान मे संशोधन करने का अधिकार**—सर्वोच्च सोवियत को रूस के संविधान मे संशोधन करने का अधिकार प्राप्त है और उसके द्वारा यह कार्य अकेले ही किया जा सकता है। संवैधानिक संशोधन की पद्धति सरल है और अनुच्छेद १४६ के अनुसार सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदन पृथक-पृथक अपने उपस्थित और मत देने वाले सदस्यो के दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित कर संविधान मे संशोधन कर सकते हैं।

सर्वोच्च सोवियत का यह देखने का भी अधिकार है कि संघीय गणराज्यो की इकाइयो के संविधान तथा कानून समस्त सोवियत संघ के संविधान तथा कानूनों के अनुकूल हो।

(३) **वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन और सुरक्षा सम्बन्धी शक्ति**—सर्वोच्च सोवियत को ही सोवियत संघ के वैदेशिक सम्बन्धो को नियमित एव नियन्त्रित करने का अधिकार है। वह यह निर्णय करती है कि अन्तरराष्ट्रीय मामलो मे सोवियत संघ किस सीमा तक भाग ले। युद्ध तथा शान्ति के प्रश्नो का निर्णय, विदेशी राज्यो से की जाने वाली सन्धियो की सम्पुष्टि, युद्ध की घोषणा और देश की रक्षा हेतु सेना के संगठन का अधिकार भी सर्वोच्च सोवियत को ही प्राप्त है। वह उस सामान्य प्रणाली का भी नियन्त्रण करती है, जिसके अनुसार संघीय गणराज्यो को विदेशी राज्यों के साथ अपने सम्बन्धो का संचालन करना है। देश की सुरक्षा केन्द्रीय सरकार का विषय है। अत सर्वोच्च सोवियत ही संघ के रक्षा साधनों की व्यवस्था करती है, सशस्त्र बलों का नियन्त्रण तथा संचालन करती है।

(४) **वित्तीय शक्ति**—सर्वोच्च सोवियत को वित्तीय क्षेत्र मे व्यापक शक्ति प्राप्त है। सर्वप्रथम सर्वोच्च सोवियत समस्त रूसी संघ के लिए एक 'संचित आय व्ययक' (Consolidated Budget) तैयार करती है। वही यह निर्णय करती है कि राजस्व और कर की कौन सी मदें संघ की जायेंगी और कौन सी संघीय गणराज्यो को प्राप्त होगी। द्वितीय, सर्वोच्च सोवियत संघ की आर्थिक योजनाओं को अपनी अनुमति देती है और राज्य के एकमात्र अधिकार के आधार पर विदेशी व्यापार का संचालन करती है। तृतीय, यह मुद्रा, उधार लेने और देने की व्यवस्था का निर्देशन और राज्य बीमे का संगठन देखती है। चतुर्थ, संघ के क्षेत्राधिकार मे जो बैंक तथा औद्योगिक, कृषि और व्यापार सम्बन्धी उद्यम तथा संस्थाएं आती हैं उनके प्रशासन की देखभाल यही करती है। पंचम, यह खनिज पदार्थ, वनो और नदियो के प्रयोग के बारे मे मूल सिद्धान्त निर्धारित करती और यातायात तथा परिवहन प्रशासन की देखभाल करती है।

(५) सघीय व्यवस्था के सम्बन्ध मे शक्ति—अनुच्छेद १४ के अनुसार सर्वोच्च सोवियत को यह अधिकार है कि वह नवीन गणराज्यो को सघ मे प्रवेश प्रदान कर सके। सघीय गणराज्यो के अन्दर नये स्वायत्त गणराज्यों तथा स्वायत्त प्रदेशो का निर्माण भी सर्वोच्च सोवियत की अनुमति से ही किया जा सकता है।

(६) नियुक्ति और निर्वाचन सम्बन्धी शक्ति—सर्वोच्च सोवियत की चुनाव सम्बन्धी शक्ति बहुत व्यापक है। विश्व के किसी भी अन्य देश के विधानमण्डल को इतने अधिक पदाधिकारियो के चुनाव नही करने होते। सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदन अपनी सयुक्त बैठक म सोवियत सघ के प्रेजिडियम, मन्त्रिपरिषद, सर्वोच्च न्यायालय तथा अन्य न्यायाधीशो और प्रोक्यूरेटर जनरल का निर्वाचन करते हैं। प्रेजिडियम और मन्त्रिपरिषद सर्वोच्च सोवियत के ही प्रति उत्तरदायी होते हैं। परन्तु सर्वोच्च सोवियत के ये काय केवल औपचारिक है और वस्तुत इन कार्यों का सम्पादन साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति के राजनीतिक ब्यूरो द्वारा किया जाता है।

(७) अन्वेषण सम्बन्धी शक्ति—सर्वोच्च सोवियत को कुछ अन्वेषण सम्बन्धी शक्तिया भी प्राप्त हैं। वह सोवियत सघ की किसी भी कायवाही या आय व्यय परीक्षण के लिए आयोग नियुक्त कर सकती है और सभी सरकारी अधिकारियो के लिए आवश्यक है कि वे इस प्रकार के आयोग को जाँच काय मे सभी आवश्यक सहायता दें।

सोवियत सविधान के निर्माताओ का शक्ति पथक्करण के सिद्धान्त मे विश्वास नही था, अत सर्वोच्च सोवियत को न केवल विधायी, वरन् प्रशासनिक और न्यायिक क्षेत्र मे भी व्यापक शक्तिया प्रदान की गई है। सिद्धान्तत सर्वोच्च सोवियत को ब्रिटिश ससद के समान प्रभुताधारी कहा जा सकता है।

सर्वोच्च सोवियत की वास्तविक स्थिति

सविधान द्वारा सर्वोच्च सोवियत को सोवियत राजसत्ता का सर्वोच्च अग तथा एकमात्र विधि निर्मात्री सस्था घोषित किया गया है। सविधान द्वारा सर्वोच्च सोवियत को प्रदत्त शक्तिया की सूची पर्याप्त व्यापक और अत्यन्त प्रभावशाली हैं। लेकिन यह नही समझ लिया जाना चाहिए कि सर्वोच्च सोवियत इन सभी शक्तियो का व्यावहारिक प्रयोग करने की स्थिति म है। व्यवहार मे ऐसे अनेक कारण है जिनसे सर्वोच्च सोवियत की स्थिति बहुत अधिक मर्यादित हो गई है।

सवप्रथम, सोवियत रूस म केवल एक ही दल (साम्यवादी दल) का अस्तित्व है। सविधान क अनुच्छेदो मे जो कुछ भी कहा गया हो व्यवहार म सोवियत शासन व्यवस्था का सचालन साम्यवादी दल के द्वारा किया जाता है। साम्यवादी दल क अधिक महत्त्वपूण सदस्य प्रेजिडियम और मन्त्रिपरिषद क सदस्य होते हैं और कम महत्त्वपूण सदस्य सर्वोच्च सोवियत के। साम्यवादी दल मे अत्यधिक कठोर अनुशासन है और लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद के सिद्धान्त के अनुसार दल की निम्न सत्ताओ के लिए दल की उच्च सत्ता की आज्ञा का पालन अनिवाय है। ऐसी स्थिति म सर्वोच्च सोवियत दल की उच्च सत्ता के निणय पर स्वीकृति की मोहर लगाने का ही कार्य करती है।

द्वितीय, सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनों की अल्पावधि के कारण सर्वोच्च सोवियत की स्थिति बहुत अधिक निबल हो गई है। सर्वोच्च सोवियत अधिक से अधिक वर्ष मे केवल दो सप्ताह के लिए अधिवेशन म रहती है और संविधान के अनुसार अधिवेशनो के अन्तरकाल मे सर्वोच्च सोवियत के अधिकारों का प्रयोग प्रेजिडियम करता है। अल्पावधि के कारण सर्वोच्च सोवियत मन्त्रिपरिषद तथा प्रेजिडियम के आदेशो और निणयो का अनुमोदन करने के अतिरिक्त और क्या कर सकती है। टाउस्टर ने इस सम्बन्ध मे लिखा है, "आज्ञाप्तियों (Decrees) का विवरण प्रस्तुत किये जाने के पश्चात् न तो सर्वोच्च सोवियत मे उन पर वादविवाद होता है और न विचार, वरन् उनके प्रस्तावित किये जाने के पश्चात् शीघ्र ही उन्हे अनुमोदित कर दिया जाता है।

तृतीय, सर्वोच्च सोवियत द्वारा मन्त्रिपरिषद और प्रेजीडियम के सदस्यो तथा अन्य अधिकारियो को चुनने की शक्ति भी नाममात्र की ही है। वस्तुत जो सूची साम्यवादी दल के नेताओ द्वारा प्रस्तावित की जाती है, सर्वोच्च सोवियत उसका समथन कर देती है। उदाहरणस्वरूप, १६ माच १६४६ को लगभग १८२ पदाधिकारियो को ७० मिनट की बैठक मे चुन लिया गया। ऐसी स्थिति मे वास्तविकता का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

चतुर्थ, सोवियत रूस मे साम्यवादी दल का एकाधिकार है और सर्वोच्च सोवियत मे कोई विरोधी दल नही है। यह तथ्य है कि विरोधी दल के अभाव म कोई भी व्यवस्थापिका अपने कत्तव्यो का भलीभांति सम्पादन नही कर सकती।

पचम, वैसे तो सभी देशो मे व्यवस्थापिका के सदस्य सामान्य योग्यता वाले व्यक्ति होते हैं, लेकिन सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो के बारे यह बात विशेष रूप से लागू होती है। सर्वोच्च सोवियत मे व्यावसायिक राजनीतिज्ञ नही होते, वरन् सामान्य श्रमिक और किसान होते हैं। सामान्य योग्यता वाले ये व्यक्ति इस स्थिति मे नही होते कि विधेयको या प्रशासनिक विषयो के सम्बन्ध मे उपयोगी सुझाव दे सकें। अत सर्वोच्च सोवियत के हाथ मे कोई प्रभावशाली शक्ति नही है।

वस्तुस्थिति यह है कि साम्यवादी दल के नेता सर्वोच्च सोवियत का उपयोग दल की नीति और विचारधारा समझाने के एक महत्त्वपूर्ण मच के रूप मे करते हैं। साम्यवादी दल के नेता सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो को दलीय दृष्टिकोण से अवगत करते हैं और सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो से इस बात की अपेक्षा की जाती है कि वे सामान्य जनता को दलीय दृष्टिकोण से अवगत करायेंगे। विशेष बात यह है कि संविधान के अन्तगत सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो का यह एक विशेष कत्तव्य बतलाया गया है। जूलियन टाउस्टर ने इस सम्बन्ध म कहा है कि—"सर्वोच्च सोवियत ने अब तक प्रमुखतया केवल एक पुष्टि करने वाली व प्रचार करने वाली सस्था के रूप मे ही काय किया है। समय समय पर अथवा जब आवश्यक हो, प्रतिनिधि सस्था के रूप मे सरकार की नीति को स्वीकृति प्रदान कर देना मात्र इसका प्रमुख उद्देश्य

प्रतीत होता है।"[1] फाइनर के द्वारा ऐसा ही विचार व्यक्त किया गया है और न्यूमन भी इस सम्बन्ध में लिखते हैं कि—"वह संस्था जो नीति का निर्माण नहीं करती और वास्तव में नीति निर्धारण में जिसका कोई हाथ नहीं होता है, उसके सम्बन्ध में आसानी से यह नहीं कहा जा सकता कि वह सत्ताधारी है। यह भी एक सच्चाई है कि पास किये जाने वाले कानूनों की अधिकतम संख्या का प्रारम्भ सर्वोच्च सोवियत नहीं करती है, वरन् वे प्रेजीडियम की ओर से आज्ञाप्तियों (Decrees) अथवा निर्णयों और अध्यादेशों के रूप में सरकार की ओर से पेश किये जाते हैं।"[2]

यद्यपि सर्वोच्च सोवियत एक प्रभुत्व सम्पन्न संस्था नहीं है, लेकिन इसके साथ ही उसे एक शून्य कहना त्रुटिपूर्ण होगा। इसका थोड़ा बहुत प्रभाव रूसी जीवन पर अवश्य ही है। आग और जिंक ने इसका मूल्यांकन करते हुए लिखा है 'पश्चिमी विचारों में सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत भले ही एक वास्तविक वाद विवाद संस्था न हो, परन्तु यह अनुमान नहीं लगा लिया जाना चाहिए कि वह सोवियत संघ के सार्वजनिक मामलों पर कम से कम उचित मात्रा में भी प्रभाव नहीं डालती।"[3] चर्चवार्ड जैसे विचारक भी सोवियत रूस की सर्वोच्च सोवियत को सरकार की नीति पर रबड़ की मुहर लगाने वाली संस्था कहे जाने को उचित नहीं समझते हैं। चर्चवार्ड जैसे लेखकों के द्वारा यह विचार भी व्यक्त किया गया है कि न केवल सोवियत रूस की व्यवस्थापिका, अर्थात् सर्वोच्च सोवियत, वरन् विश्व के लगभग सभी देशों में व्यवस्थापिका की स्थिति पतनोन्मुख है।[4]

यद्यपि चर्चवार्ड के तर्क का कुछ महत्व है, लेकिन टाउस्टर, फाइनर और न्यूमैन का दृष्टिकोण ही सत्य के अधीक समीप है। सर्वोच्च सोवियत की वास्तविक

1 The Supreme Soviet has so far operated primarily as a ratifying and propagating body Its chief purpose appears to be periodically or as occasion demands to lend the voice of approval of a representative body to governmental policy —*Towster Jullian*

2 An institution which does not determine policy which in fact has no hand in determining action of policy cannot easily be held to possess power It is also a fact that overwhelming majority enactments do not come from the Supreme Soviet *but from its* Presidium in the form of decrees or from the *government in the form* of decisions and ordinances —Neumann G Robert, *European and Comparative Governments*, p 599

3 'In the Western sense the Supreme Soviet of *U S S R* may not be truly deliberative body—certainly it does not confirm to the pattern of Western legislative bodies but it should not be assumed *that it does* not exercise atleast a reasonable amount of influence in the public affairs of the Soviet Union
—Ogg & Zink *Modern Foreign Governments*, p 860

4 Churchward *Contemporary Soviet Governments* p 130

स्थिति पर विचार करते हुए हमे सोवियत रूस की एकदलीय व्यवस्था और सर्वहारा-वर्ग के अधिनायकत्व की पृष्ठभूमि को दृष्टि म रखना होगा, जिन्होंने सर्वोच्च सोवियत की शक्ति और सम्मान को निश्चित रूप से आघात पहुचाया है। यह तथ्य है कि भारतीय या ब्रिटिश ससद या अमरीकी काग्रेस अथवा अन्य किसी पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देश की तुलना म सर्वोच्च सोवियत का सोवियत शासन व्यवस्था म अपेक्षाकृत निर्बल स्थिति ही प्राप्त है।

सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो का पारस्परिक सम्बन्ध

वर्तमान समय म विश्व के लगभग सभी देशो मे द्वि सदनात्मक व्यवस्थापिका को अपनाया गया है और सोवियत सघ म भी सर्वोच्च सोवियत के दो सदन है—सघीय सोवियत तथा राष्ट्रीयताओ की सोवियत। सामान्यतया विश्व के अन्य देशो म प्रथम सदन का निर्माण प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर और द्वितीय सदन का निर्माण अप्रत्यक्ष निर्वाचन या मनोनयन आदि के आधार पर किया जाता है। लेकिन सोवियत रूस म अमरीकी काग्रेस के समान ही सर्वोच्च सोवियत के दोना सदनो का निर्माण प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर ही किया जाता है।

जहा तक सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो के पारस्परिक सम्बन्ध का प्रश्न है, सोवियत सविधान द्वारा दोनो सदना को समान अधिकार तथा काय प्रदान किय गय हैं और दोना सदनो का कायकाल भी समान (४ वर्ष) है। सघीय सोवियत तथा राष्ट्रीयताओ की सोवियत दोनो के अधिवेशन एक साथ प्रारम्भ तथा समाप्त होते हैं। सविधान के अनुसार कोई भी विधेयक किसी भी सदन म प्रस्तावित हो सकता है और दोना सदनो की स्वीकृति के बिना कानून का रूप धारण नही कर सकता।

यदि किसी विषय पर दोना सदनो मे मतभेद हो, तो सविधान के अनुच्छेद ४७ के अनुसार वह विषय दोना सदनो के बराबर-बराबर सदस्यो की एक 'समझौता समिति' (Conciliation Commission) के पास प्रस्तुत किया जाता है। यदि दोनो मे म किसी एक सदन को समझौता समिति का प्रस्ताव मान्य न हो या समिति निर्णय नही दे सके, तो वह विषय दोनो सदना मे पुन विचार के लिए प्रस्तुत किया जाता है। यदि इस बार भी दोनो सदना मे मतभेद रह, तो प्रेजिडियम को अधिकार है कि वह दोनो सदनो को विघटित कर नवीन निर्वाचन का आदेश द। ऐसी स्थिति म दो महीने के अन्दर नवीन निर्वाचन आवश्यक है और नयी सर्वोच्च सोवियत ही उस विषय पर विचार करती है। सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो की शक्तियाँ इस सीमा तक समान है कि सर्वोच्च सोवियत के सयुक्त अधिवेशन मे दोनो के सभापति क्रम क्रम स सभापतित्व करते हैं, जबकि अन्य देशो मे प्रथम सदन का अध्यक्ष ही सयुक्त अधिवेशन का सभापतित्व करता है

अधिकार तथा कार्यों की दृष्टि से राष्ट्रीयताओ की सोवियत की स्थिति अन्य देशो के द्वितीय सदन (सयुक्त राज्य अमरीका की सीनेट को छोडकर) की तुलना मे अच्छी है। सोवियत रूस की राष्ट्रीयताओ की सोवियत को स्विट्जरलैण्ड की सघीय

सभा के द्वितीय सदन राज्य परिषद (Council of State) के समान कहा जा सकता है, क्योंकि इन दोनों देशों में द्वितीय सदन को प्रथम सदन के समकक्ष ही स्थिति प्राप्त है।

सर्वोच्च सोवियत मे समिति व्यवस्था

जिस प्रकार ब्रिटेन, अमरीका और भारत आदि देशो मे समितिया कानून निमाण मे पर्याप्त प्रभावशाली भूमिका अदा करती हैं उसी प्रकार सोवियत रूस म भी विधायी कार्यों के लिए समिति व्यवस्था को अपनाया गया है। समितियों को वहाँ 'आयोग' (Commission) का नाम दिया गया है और सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदन अपने कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए स्थायी तथा अस्थायी आयोगो की स्थापना कर सकते हैं। ये आयोग अपने अधिकार क्षेत्र मे आने वाले सभी विषयो पर पूणता और आवश्यक गम्भीरता के साथ विचार करते हैं। स्थायी आयोगो का गठन सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनों द्वारा पृथक पृथक किया जाता है। इनका निर्वाचन सर्वोच्च सोवियत के प्रथम अधिवेशन मे ही होता है तथा इनका कायकाल सदनो के कायकाल के समान ही होता है। ये आयोग विभिन्न मन्त्रालयों तथा विभागो से आवश्यक सूचनाएँ सामग्री और लेख पत्र आदि माग सकते हैं। दानो सदन निम्न आयोगो की नियुक्ति करते हैं

(१) विधायी सुझाव आयोग (Commission of Legislative Proposals)—यह आयोग नवीन विधेयको के प्रारूपो का निर्माण करता है। आयोग सदन मे प्रस्तावित विधेयक पर सशोधन भी प्रस्तुत कर सकता है। यह आयोग अपने काय के लिए विशेषज्ञो, वज्ञानिको, श्रमिका और नागरिका की बडी सख्या द्वारा प्रस्तुत सुझावो का ध्यानपूवक अध्ययन करता है।

आयोग विधेयको पर पूणतया जनतान्त्रिक रीति से विचार करता है तथा इसका प्रत्येक निणय बहुमत द्वारा होता है। यदि आयोग का कोई सदस्य किसी निश्चय से असहमत हो, तो वह अपने विचार उस समय प्रकट कर सकता है, जब सदन के विचाराथ विधेयक प्रस्तुत किया जाय। आयाग को अपना निणय करने क लिए उसके दो तिहाई सदस्यो का उपस्थित हाना आवश्यक है।

(२) बजट आयोग (Budget Commission)—यह आयोग सर्वोच्च सोवियत के सामन रखे गये या रखे जाने वाले आय-व्यय के प्रस्तावो की जाँच करता है। इसके द्वारा पूरक माँगा की पूर्ति, आर्थिक और लेख सम्बन्धी प्रश्नो तथा राष्ट्रीय आर्थिक योजनाओ पर भी अपनी रिपोट प्रस्तुत की जाती है।

(२) परराष्ट्र सम्बन्धी आयोग (Foreign Affairs Commission)—यह आयोग विभिन्न सन्धियो को स्वीकार या अस्वीकार करने या अन्य अन्तरराष्ट्रीय प्रश्नो पर सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो या प्रेजीडियम के सम्मुख अपन विचार

प्रस्तुत करता है। यह आयोग वैदेशिक नीति सम्बन्धी विधेयको के प्रारूपों का निर्माण कर सर्वोच्च सोवियत के सम्मुख विचारार्थ प्रस्तुत करता है।

(४) आर्थिक आयोग (Economic Commission)—यह आयोग केवल राष्ट्रीयताओं की सोवियत द्वारा नियुक्त किया जाता है। इसका कार्य विभिन्न संघीय गणराज्यो की आर्थिक तथा नियोजन सम्बन्धी व्यवस्था तथा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन मे उन्नति करने वाले प्रश्नो पर विचार करना होता है।

उक्त आयोगो के अतिरिक्त कुछ और आयोगो की स्थापना की गयी है, जिनमे मुख्य हैं 'प्रमाण समिति' (Credential Commission) तथा 'ज्येष्ठतर सदस्यो की परिषद्' (Council of Elders)। प्रमाण समिति दोनो सदनो के निर्वाचित सदस्यो के प्रमाण पत्रो की जांच करती है तथा अपने अपने सदन को प्रस्ताव करती है कि उन्हें सदन की सदस्यता प्रदान की जाय। वह किसी सदस्य के चुनाव को रद्द करने का प्रस्ताव भी कर सकती है। ज्येष्ठतर सदस्यो की परिषद अपने सदन के कार्यक्रमो को निश्चित करने मे सहायता प्रदान करती है।

सर्वोच्च सोवियत अपना कार्य और अधिक सुविधाजनक रूप मे सचालित करने के लिए उप-आयोग या विशेष आयोग की नियुक्ति कर सकती है।

विधि निर्माण की प्रक्रिया (Law making Procedure)—विधि निर्माण के सम्बन्ध मे सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो को समान अधिकार प्राप्त है। अन्य प्रजातन्त्रीय देशो मे कम से कम वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध मे प्रथम सदन को विशेष स्थिति प्राप्त होती है, लेकिन सोवियत रूस मे इस सम्बन्ध मे भी दोनों सदनो के अधिकार समान है। सामान्यतया सभी विधेयक दोनो सदनो की सयुक्त बैठक मे प्रस्तावित किये जाते हैं। विधेयक मन्त्रिपरिषद या सर्वोच्च सोवियत के किसी सदन द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। किसी एक सदन द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले विधेयको के प्रारूप का निर्माण उस सदन का 'व्यवस्थापन सुझाव आयोग' करता है। मन्त्रिपरिषद द्वारा प्रस्तावित किये जाने वाले विधेयको पर सर्वप्रथम व्यवस्थापन सुझाव आयोग विचार करता है तथा किसी भी सदन द्वारा विधेयक पर विचार किये जाने के पूर्व आयोग का अध्यक्ष सदन के सम्मुख विधेयक के सम्बन्ध मे आयोग का दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। इसके बाद सदन के सदस्य विधेयक पर विचार व्यक्त करते हैं। इसके बाद कोई मन्त्री भाषण देता है और सदन द्वारा की गयी आलोचनाओं का उत्तर देता है। इसी समय वह मन्त्रिपरिषद द्वारा स्वीकृत सशोधनो का ब्यौरा भी प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात विधेयक की प्रत्येक धारा पर मतदान कराया जाता है तथा सशोधन के उपरान्त जिस रूप मे विधेयक स्वीकृत किया जाता है, उसी रूप में उस सदन द्वारा पारित समझा जाता है। इसके बाद उसे दूसरे सदन मे भेज दिया जाता है, जहाँ पर भी विधेयक के सम्बन्ध मे इसी प्रकार की कार्यवाही होती है। यदि दूसरा सदन विधेयक मे कुछ सशोधन करता है और प्रथम सदन उसे मान

२ सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत के सगठन, कार्यों और शक्तिया का वणन कीजिए। (आगरा, १६६५, ७२, विक्रम, १६६३, ६८ ७२, लखनऊ, १६६४, ६७, ६६, ७१, जीवाजी, १६६५)

३ सोवियत सघ के प्रथम सदन के निर्माण और शक्तिया का वणन कीजिए। सोवियत सघ मे शासन और साम्यवादी दल के सम्बन्धो का वणन कीजिए। (आगरा, १६६८)

४ स्विटजरलैण्ड और सोवियत सघ के सघीय शासना के उच्च सदन की स्थिति की तुलना कीजिए। (कानपुर, १६७०)

५ सर्वोच्च सोवियत के गठन, शक्तियो और विशेषताओ का वणन कीजिए। (लखनऊ, १६६१)

लेता है, तो वह विधेयक कानून बन जाता है। यदि विधेयक के सम्बन्ध मे दोनो सदनो मे मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो इन मतभेदो को दूर करने के लिए एक 'समझौता आयोग' (Conciliation Commission) की नियुक्ति की जाती है, जिसमे दोना सदनो के प्रतिनिधि समान सख्या म होते हैं। यदि आयोग मतभेदो को दूर करने मे सफल हो जाता है तो वह कानून बन जाता है, अन्यथा प्रेजीडियम के द्वारा सर्वोच्च सोवियत को भग कर नवीन चुनावो की व्यवस्था की जाती है।

वित्तीय विधेयको के सम्बन्ध म भी इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनायी जाती है। वित्त विधेयक भी सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो के सयुक्त अधिवेशन म प्रस्तुत किये जाते हैं। वित्त मत्री द्वारा बजट प्रस्तुत किया जाता है और उसके भाषण के पश्चात दोना सदन उस पर पृथक पृथक विचार करते हैं। सवप्रथम, उस पर बजट आयोग का प्रवक्ता भाषण करता तथा सशोधन सम्बन्धी प्रस्ताव प्रस्तुत करता है। तत्पश्चात सदन के सदस्य अपने विचार व्यक्त करते और सशोधन प्रस्तुत करते हैं। सदस्यो द्वारा विचार व्यक्त किये जाने के बाद वित्त मन्त्री भाषण करता है तथा जिन सशोधनो को स्वीकार किया जाता है उनके सम्बन्ध मे सदन को सूचना देता है। अन्त म बजट आयोग का प्रवक्ता पुन भाषण देता और बजट के विभिन्न भागो पर मतदान होता है। बजट पर एक सदन की स्वीकृति मिल जाने पर उसे दूसरे सदन मे भेज दिया जाता है। वहा पर भी बजट के सम्बन्ध मे इसी प्रकार की प्रक्रिया अपनायी जाती है और दूसरे सदन द्वारा भी पास कर दिये जाने पर बजट पारित समझा जाता है।

कानून निर्माण की प्रक्रिया के सम्बन्ध मे विशेष बात यह है कि सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन बहुत अल्पकालीन होते है और इतने कम समय म विधेयको पर पूर्ण वादविवाद नही हो पाता। वस्तुस्थिति यह है कि वहा साम्यवादी दल के निर्देशन मे आयोग ही विधेयको के सम्बन्ध म समस्त कार्य करते हैं। सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो को अधिकार है कि वे विधेयक की आलोचना कर सकते और सुझाव प्रस्तुत कर सकते है। लेकिन यह एक ऐसा औपचारिक अधिकार है जिसका व्यवहार म कभी प्रयोग नही किया जाता। एकदलीय व्यवस्था और साम्यवादी दल मे कठोर दलीय अनुशासन होने के कारण वास्तविकता यह है कि सभी सदस्य विधेयक के पक्ष मे ही बोलते है और मतदान के समय उसके पक्ष मे ही मतदान करते है। कानून निर्माण का समस्त कार्य साम्यवादी दल की इच्छानुसार ही सम्पन्न होता है।

प्रश्न

१ क्या यह सत्य है कि सर्वोच्च सोवियत, सोवियत शासन का सबसे अधिक शक्तिशाली अग है? (आगरा, १९६३, ६६)

२ सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत के सगठन, कार्यों और शक्तियो का वणन कीजिए। (आगरा, १९६५, ७२, विक्रम, १९६३, ६८ ७२, लखनऊ, १९६४, ६७, ६९, ७१, जीवाजी, १९६५)

३ सोवियत सघ के प्रथम सदन के निमाण और शक्तिया का वणन कीजिए। सोवियत सघ मे शासन और साम्यवादी दल के सम्बन्धो का वणन कीजिए। (आगरा, १९६८)

४ स्विटजरलैण्ड और सोवियत सघ के सघीय शासना के उच्च सदन की स्थिति की तुलना कीजिए। (कानपुर, १९७०)

५ सर्वोच्च सावियत के गठन, शक्तिया और विशेपताओ का वणन कीजिए। (लखनऊ, १९६१)

5

प्रेजिडियम
(PRESIDIUM)

'सोवियत सघ की सर्वोच्च सोवियत की प्रेजिडियम इसे प्रदान की गई शक्तियों के आधार पर सोवियत सघ की राज्य शक्ति का सर्वोच्च और स्थायी रूप में काय करने वाला अग है।"[1]

—कारपिन्सकी

प्रेजिडियम

सोवियत शासन व्यवस्था की एक अत्यधिक महत्वपूर्ण और सर्वाधिक रोचक सस्था प्रेजिडियम है। यह एक ऐसी विशेष सस्था है, जिसका सादृश्य विश्व के अन्य किसी देश मे नही मिलता। सामान्यतया पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देशो मे तीन प्रमुख और पृथक पृथक सस्थाएँ होती है, जिनके द्वारा क्रमश विधायी, प्रशासनिक और न्यायिक क्षेत्र मे काय किया जाता है। लेकिन सोवियत रूस के सविधान मे शक्ति पृथक्करण के सिद्धान्त को मान्यता नही दी गइ है और उनके द्वारा प्रेजिडियम के रूप मे एक ऐसी सस्था की स्थापना की गई है, जिसे विधायी प्रशासनिक और न्यायिक तीनो ही क्षेत्रो की शक्तिया प्राप्त हैं।

प्रेजिडियम के द्वारा सोवियत समाजवादी सघ राज्य के प्रधान के रूप म काय किया जाता है। प्रेजिडियम के सभी सदस्यो को समान शक्ति प्राप्त है और इस दृष्टि से सोवियत रूस मे स्विट्जरलैण्ड के समान एक बहुल या मण्डलात्मक प्रधान *(Collegial Head)* की व्यवस्था की गई है एकल प्रधान की नही। स्टालिन जनता द्वारा निर्वाचित एकल राष्ट्रपति के विरुद्ध था और उसका तक था कि एकल राष्ट्रपति लोकप्रिय सर्वोच्च सोवियत का विरोध करते हुए नैपोलियन प्रथम या नैपोलियन

1 ' Presidium of the Supreme Soviet of the U S S R by virtue of the power granted to it is the highest permanently functioning organ of state power of the Soviet Union

—V Karpinsky *The Social and State Structure of U S S R* p 122

तानाशाह की भाँति आचरण कर सकता है। अत उसने मण्डलात्मक प्रधान की पद्धति को ही प्रजातन्त्रीय धारणा के उपयुक्त समझा। स्विस कार्यपालिका की भाँति प्रेजिडियम का संगठन बहुल और इसके कार्य मिश्रित हैं।

प्रेजिडियम की रचना—सोवियत संविधान के अनुच्छेद ४८ मे प्रेजिडियम की रचना का उल्लेख है। प्रेजिडियम की सदस्य संख्या समय-समय पर परिवर्तित होती रही है। पहले इसकी सदस्य संख्या ३३ थी, किन्तु १९६८ मे संविधान मे किये गये संशोधन के अनुसार इसकी संख्या ३७ है। प्रेजिडियम मे एक अध्यक्ष या सभापति, १५ उपाध्यक्ष (प्रत्येक गणराज्य से एक), एक सचिव तथा २० अन्य सदस्य होते हैं। ये सदस्य सर्वोच्च सोवियत की पहली संयुक्त बैठक मे चुने जाते हैं। एक परम्परा के अनुसार प्रेजिडियम के १५ उपाध्यक्ष वे व्यक्ति चुने जाते हैं, जो अपने संघीय गणराज्य की प्रेजिडियम के अध्यक्ष होते हैं। प्रेजिडियम के ये सदस्य सर्वोच्च सोवियत द्वारा निर्वाचित होते हैं और उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

सदस्यता के लिए योग्यताएँ—प्रेजिडियम के सदस्य सामान्यतया सर्वोच्च सोवियत के सदस्यो मे से ही निर्वाचित होते हैं, यद्यपि संविधान द्वारा ऐसा होना आवश्यक नही है। सर्वोच्च सोवियत के अन्तर काल मे मन्त्रिपरिषद प्रेजिडियम के प्रति उत्तरदायी होती है, अत मन्त्रिपरिषद के सदस्य प्रेजिडियम के सदस्य नही हो सकते। इसी प्रकार सर्वोच्च सोवियत के दोनो सदनो के अध्यक्ष भी प्रेजिडियम के सदस्य नही होते, क्योंकि प्रेजिडियम सर्वोच्च सोवियत के प्रति उत्तरदायी होती है। व्यवहार मे साम्यवादी दल के उच्च नेता ही प्रेजिडियम के सदस्य होते हैं।

कार्यकाल—प्रेजिडियम का कार्यकाल ४ वर्ष है। जब तक सर्वोच्च सोवियत रहती है, तब तक प्रेजिडियम भी रहती है। यदि अनुच्छेद ४७ के आधीन प्रेजिडियम के द्वारा सर्वोच्च सोवियत का विघटन कर दिया जाय, तो नव निर्वाचित सर्वोच्च सोवियत के द्वारा नवीन प्रेजिडियम का गठन किया जायगा। नई प्रेजिडियम बनने तक पहली प्रेजिडियम अपना कार्य करती रहगी। यदि युद्ध अथवा संकटकालीन अवस्था के कारण सर्वोच्च सोवियत का कार्यकाल बढा दिया जाय, जैसा कि दूसरे विश्वयुद्ध के समय हुआ था, तो प्रेजिडियम का कार्यकाल भी स्वत ही बढ जाता है।

प्रेजिडियम का अध्यक्ष
(Chairman of the Presidium)

अनेक बार विदेशी लोग प्रेजिडियम के अध्यक्ष को ही सोवियत रूस का राष्ट्रपति मान लेते है, परन्तु ऐसा सोचना सत्य नही है, क्योंकि सोवियत संघ मे एकल राष्ट्रपति के स्थान पर बहुमुखी अध्यक्ष (Collegial President) की व्यवस्था की गई है। रूस मे प्रेजिडियम का अध्यक्ष स्विट्जरलैण्ड की संघीय परिषद के अध्यक्ष की भाँति नाममात्र का अध्यक्ष है। प्रेजिडियम के अध्यक्ष को अन्य सदस्यो की अपेक्षा कोई अधिक शक्ति प्राप्त नही है जिसके आधार पर उसे अन्य सदस्यो से

श्रेष्ठ कहा जा सके। कारपि सको ने इस सम्बन्ध म लिखा है कि "हमारे राज्य का अध्यक्ष एक व्यक्ति नहीं, वरन सोवियत सघ के ३३ (प्रेजिडियम की तत्कालीन सदस्य सख्या) सदस्यो की बहुमुखी कार्यपालिका है, जो स्टालिन के शब्दों मे सोवियत सघ के बहुमुखी अध्यक्ष का कार्य करती है।'

प्रेजिडियम का अध्यक्ष, अध्यक्ष होने के नाते प्रेजिडियम की बैठक का बुलाता और उनकी अध्यक्षता करता है। वह विदेशी राजदूतो का स्वागत करता है और विदेशी राजदूत उसे अपना परिचय पत्र भेंट करते हैं। उसकी अनुपस्थिति मे किसी भी उपाध्यक्ष के द्वारा यह काय किया जा सकता है और व्यवहार म कई बार ऐसा होता है। प्रेजिडियम द्वारा जारी की गई आनप्तिया (Decrees) पर प्रेजिडियम के अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर किये जाते हैं। सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित सभी कानूना पर उसके हस्ताक्षर होत है और व तभी घोषित किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त वह दूसरे राज्यो क अध्यक्षा के साथ बराबरी के स्तर पर मिलता है। उनका सोवियत रूस मे स्वागत करता है और यदि प्रेजिडियम का अध्यक्ष विदेश यात्रा पर जाय, तो विदशी राज्याध्यक्ष उसका स्वागत करते हैं। प्रेजिडियम के अध्यक्ष की स्थिति औपचारिक उच्चता की हो है वास्तविक उच्चता की नही। कार्टर के विचारानुसार 'अ य अनेक देशों के प्रधानो के समान ही उसका भी एक महत्वपूर्ण कर्तव्य यह है कि वह देश की जनता मे मिले-जुले और उन्हें यह सोचने के लिए प्रेरित करे कि वह सभी का हित चाहने वाली सरकार का जीवित प्राणयुक्त प्रतीक है।"

प्रेजिडियम की शक्तिया और काय

सोवियत सविधान के अनुच्छेद ४९ म प्रेजिडियम के अधिकारो व कार्यों का व्यापक वणन किया गया है। सविधान द्वारा की गई व्यवस्था के अनुसार प्रेजिडियम को विधायी, प्रशासनिक तथा यायिक तीनो ही क्षेत्रो से व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं जिनका अध्ययन निम्नलिखित रूपो मे किया जा सकता है

विधायी शक्तिया—प्रेजिडियम को सर्वोच्च सोवियत का साधारण और असाधारण अधिवेशन बुलाने का अधिकार प्राप्त है। सर्वोच्च सोवियत द्वारा जो विधेयक पारित किये जाते है, उन पर प्रेजिडियम के अध्यक्ष के हस्ताक्षर तथा सचिव के प्रति-हस्ताक्षर होते हैं और इस औपचारिकता के पूरी, हो जाने पर ही य विधेयक समस्त देश पर लागू होते है। प्रेजिडियम को यह भी अधिकार है कि वह स्वविवेक से अथवा किसी एक सघीय गणराज्य की माग पर सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित किसी भी कानून पर जनमत सग्रह करा सके। जनमत सग्रह सम्बन्धी इस अधिकार के कारण प्रेजिडियम सर्वोच्च सोवियत द्वारा पारित कानून को उस समय तक के लिए रोक सकता है जब तक कि उस पर जनमत सग्रह न हो जाय।

प्रेजिडियम को कानून निर्माण का अधिकार नहीं है, क्योंकि सविधान ने यह

शक्ति अनन्य रूप से सर्वोच्च सोवियत को दी है। लेकिन संविधान के अनुसार जब सर्वोच्च सोवियत का अधिवेशन न हो रहा हो, तब प्रेजिडियम के द्वारा आज्ञप्तियाँ (Decrees) जारी की जा सकती हैं। यद्यपि इन आज्ञप्तियों की पुष्टि सर्वोच्च सोवियत द्वारा होनी आवश्यक होती है, लेकिन यह पुष्टि मात्र औपचारिक होती है। प्रेजिडियम के ये अध्यादेश या आज्ञप्तियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हैं और इनके द्वारा इसने अनेक दूरगामी निर्णय किये हैं जैसे संघ की इकाइयों की सीमाओं में उनकी इच्छा से परिवर्तन, नवीन गणराज्यों को संघ में प्रवेश देना, नये मन्त्रालयों की स्थापना, विशेष परिस्थितियों में सर्वोच्च सोवियत की अवधि बढ़ाना और सर्वोच्च सोवियत के सदस्यों की आयु १८ वर्ष से बढ़ाकर २३ वर्ष करना।

विधायी क्षेत्र के सम्बन्ध में वास्तविकता यह है कि सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन बहुत थोड़े समय के लिए होने के कारण व्यवस्थापन का अधिकांश उन अध्यादेशों के रूप में होता है जो प्रेजिडियम के द्वारा जारी किये जाते हैं तथा जिन्हें सर्वोच्च सोवियत औपचारिक रूप से स्वीकार मात्र कर लेती है। हापर और थाम्पसन ने ठीक ही कहा है कि **"इस बात से कि प्रेजिडियम लगातार और सर्वोच्च सोवियत समय समय पर कार्य करती है, प्रेजिडियम के पास आवश्यक रूप से बहुत सा ऐसा व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्य आ जाता है, जिसे सर्वोच्च सोवियत के लिए नहीं छोड़ा जा सकता। सर्वोच्च सोवियत के सम्बन्ध में ऐसा कभी भी ज्ञात नहीं हुआ है कि प्रेजिडियम द्वारा प्रस्तुत किसी विधेयक को उसने अस्वीकृत किया हो।"**

कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ—प्रेजिडियम सोवियत संघ का अध्यक्ष मण्डल है और इस रूप में वह राज्य के प्रधान के कार्यों का सम्पादन करता है। पश्चिमी प्रजातन्त्रीय देशों में जो काम राज्याध्यक्ष करते हैं, सोवियत रूस में वे सभी प्रेजिडियम के द्वारा किये जाते हैं। उदाहरणार्थ, यह वर्ष में दो बार सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशन बुलाता है और सर्वोच्च सोवियत के दोनों सदनों में मतभेद हो जाने पर दोनों सदनों को विघटित कर सकता है। विघटन अथवा सामान्य कार्यकाल की समाप्ति के बाद दो महीने के अन्दर यह नवनिर्वाचन का आदेश देता और सर्वोच्च सोवियत का प्रथम अधिवेशन आमन्त्रित करता है। सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनों के अन्तर्काल में यह संघीय मन्त्रिपरिषद के सभापति के परामर्श से मन्त्रियों तथा सैनिक अधिकारियों को नियुक्त या पदच्युत कर सकता है। अधिवेशनों के अन्तर्काल में मन्त्रिपरिषद प्रेजिडियम के ही प्रति उत्तरदायी होती है।

प्रेजिडियम को सम्मानसूचक पद, उपाधियाँ आदि संस्थापित करने तथा प्रदान करने का अधिकार है, जैसे वह 'श्रमिक वीर' (Hero of labour) और 'वीर माता' (Heroine Mother Order) आदि उपाधियाँ प्रदान करता है। वह सैनिक उपाधियों, राजनीतिक पदों तथा अन्य विशेष उपाधियों की भी व्यवस्था करता है। सोवियत संघ की समाजवादी पृष्ठभूमि में प्रेजिडियम की इस शक्ति का बहुत महत्त्व है।

प्रेजिडियम विदेशो म सोवियत सघ के प्रतिनिधियों को नियुक्त कर सकता और उन्हे वापस बुला सकता है तथा वह विदेशी राजदूतो के प्रमाण पत्र स्वीकार करता है।

सविधान के अनुसार प्रेजिडियम का उत्तरदायित्व है कि वह सोवियत सघ म शान्ति और सुव्यवस्था बनाये रखे और सोवियत सघ की प्रतिरक्षा करे। इस उद्देश्य से वह आवश्यकता पडने पर समस्त सोवियत सघ अथवा उसके किसी क्षेत्र मे 'सनिक कानून (Martial Law) घोषित कर सकता है और सामान्य या आशिक सैन्य सगठन का आदेश दे सकता है। वह अन्तरराष्ट्रीय सन्धियों को स्वीकृत कर सकता है तथा सर्वोच्च सोवियत के अधिवेशनो के अन्तर्काल मे सोवियत सघ पर सनिक आक्रमण की स्थिति मे या पारस्परिक सुरक्षा सम्बन्धी अन्तरराष्ट्रीय सन्धियों के प्रति कर्तव्यपालन के लिए भी युद्ध की घोषणा कर सकता है।

इस प्रकार प्रेजिडियम की कार्यपालिका शक्ति बहुत व्यापक है और फाइनर के शब्दो मे कहा जा सकता है कि 'यह सर्वोच्च सोवियत का निरन्तर विकल्प भी है और मन्त्रिपरिषद से उच्च स्तरीय कार्यपालिका भी। इसके साथ ही यह मन्त्रि-परिषद की गतिविधियो का ऐसा निरीक्षक भी है, जिसे मन्त्रिपरिषद को अनुशासन मे और ठीक मार्ग पर रखने की शक्ति प्राप्त है। इसे मन्त्रिपरिषद के निर्णयों और आज्ञाओ को रद्द करने और मन्त्रियों को पदच्युत करने की शक्ति भी प्राप्त है।

न्यायिक शक्तियाँ—यद्यपि यह असगतिपूर्ण प्रतीत होता है, लेकिन तथ्य यह है कि प्रेजिडियम को न्यायिक शक्तियाँ भी प्राप्त हैं। इस सम्बन्ध म उसका सबसे महत्त्वपूर्ण अधिकार सविधान की व्याख्या करने के विषय म है। सामान्यतया यह अधिकार राज्य के सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त होता है, लेकिन सोवियत सघ म यह अधिकार सर्वोच्च न्यायालय को नही वरन् प्रेजिडियम को प्राप्त है। अपने इस अधिकार के आधार पर प्रेजिडियम सघ अथवा गणराज्यो के उन आदेशो को रद्द कर सकता है, जो सविधान के विरुद्ध हो। सविधान के अनुच्छेद ४९ के अनुसार यदि सोवियत सघ मे प्रचलित कानूनो पर किसी प्रकार के मतभेद उत्पन्न हो जायँ, तो उनकी अधिकारिक व्याख्या प्रेजिडियम के द्वारा ही की जाती है।

क्षमा और सवक्षमा (Amnesty) प्रदान करने की शक्ति भी प्रेजिडियम को ही प्राप्त है। १९४५ मे हिटलर की पराजय और १९४० मे अक्टूबर क्रान्ति की ४०वी वर्षगाठ आदि अवसरो पर प्रेजिडियम के द्वारा सवक्षमा की शक्ति का प्रयोग किया गया था। इन सबके अतिरिक्त सर्वोच्च सोवियत के अन्तर्काल मे सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश प्रेजिडियम के द्वारा ही नियुक्त और पदच्युत किय जा सकते हैं।

प्रेजिडियम की वास्तविक स्थिति

सोवियत सघ की प्रेजिडियम के पास बहुत अधिक वास्तविक शक्तियाँ हैं। सोवियत सामाजिक जीवन और शासन व्यवस्था के प्रत्येक क्षेत्र म उसे बहुत अधिक

का अधिकार है। अभियुक्त को गवाहों से जिरह (cross-examination) करने तथा वकील की सहायता पाने का अधिकार होगा। यदि अभियुक्त स्वयं वकील न कर सकता हो, तो राज्य के खर्चे पर उसके लिए वकील का प्रबन्ध किया जायगा।'

अनुच्छेद ३८ के अनुसार, "किसी भी व्यक्ति को अपने ही विरुद्ध गवाही देने के लिए विवश नहीं किया जायगा। यदि किसी व्यक्ति को मारपीट कर या यातनाएँ देकर कुछ स्वीकार करा लिया गया है तो वह उसके विरुद्ध प्रमाण नहीं माना जायगा।

अनुच्छेद ३९ के अनुसार 'किसी भी व्यक्ति को इस कार्य के लिए अपराधी नहीं ठहराया जायगा, जो कि उस समय कानून के अनुसार था जबकि वह किया गया था या जिसके लिए उसको छोड़ दिया गया है। किसी भी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए दो बार दण्डित नहीं किया जा सकेगा।'

(३) धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार—नवीन संविधान के अन्तर्गत धर्म निरपेक्षता के आदर्श को अपनाते हुए सभी नागरिकों को समान रूप से धार्मिक स्वतन्त्रता का अधिकार प्रदान किया गया है। संविधान के अनुच्छेद २० में कहा गया है कि "सबको धार्मिक स्वतन्त्रता प्राप्त होगी। किसी भी धार्मिक संगठन को राज्य से कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होगा और न ही वह किसी राजनीतिक शक्ति का प्रयोग करेगा। किसी भी व्यक्ति को किसी धार्मिक कार्य, समारोह अथवा रीति में भाग लेने के लिए बाध्य नहीं किया जायगा। राज्य धार्मिक शिक्षा नहीं देगा।"

(४) शोषण के विरुद्ध अधिकार—भारतीय संविधान के समान ही जापान के संविधान द्वारा भी नागरिकों की शोषण से रक्षा की व्यवस्था की गयी है। पहले की सामन्तवादी पृष्ठभूमि के कारण इस प्रकार का अधिकार प्रदान करना आवश्यक भी था। संविधान के अनुसार नागरिकों से (दण्डित व्यक्तियों को छोड़कर) उनकी इच्छा के विरुद्ध बलपूर्वक लिया हुआ श्रम अपराध माना गया है जो विधि के अनुसार दण्डित होगा। संविधान के अनुच्छेद १८ द्वारा दासता की प्रथा का अन्त कर दिया गया है और अनुच्छेद २७ द्वारा बच्चों के शोषण पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

(५) शिक्षा का अधिकार—जापानी नागरिकों को योग्यतानुसार शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार दिया गया है और इसके साथ ही प्रजाजनों का यह कर्तव्य बतलाया गया है कि वे स्वयं की देखरेख में बच्चों को विधि द्वारा उपबन्धित शिक्षा दिलावें (अनुच्छेद २६)। वर्तमान समय में, जापान में प्रथम ९ वर्ष तक की शिक्षा अनिवार्य और निःशुल्क रखी गयी है और पाठ्य विषयों में सदाचार, संयम तथा खेल आदि विषय भी सम्मिलित किये गये हैं। शिक्षा का माध्यम जापानी भाषा है। शिक्षा के क्षेत्र में जापान के द्वारा जो प्रगति की गयी है वह एकदम आश्चर्यजनक और प्रशंसनीय है। वर्तमान समय में जापान में ९९.९ प्रतिशत व्यक्ति साक्षर हैं।

(६) पारिवारिक स्वतन्त्रता तथा घरों की सुरक्षा का अधिकार—जापान के संविधान द्वारा अपने नागरिकों को पारिवारिक स्वतन्त्रता तथा घरों की सुरक्षा का अधिकार भी प्रदान किया गया है जिससे व्यक्ति अपना पारिवारिक और सामाजिक

जीवन उचित रूप मे व्यतीत कर सकें। अनुच्छेद २४ पारिवारिक स्वतन्त्रता और परिवार मे स्त्री पुरुष की समानता की व्यवस्था करता है और अनुच्छेद ३५ मे कहा गया है कि सभी नागरिको का अपने घरो की सुरक्षा का अधिकार है। घर की तलाशी किसी वारण्ट के आधार पर ही ली जा सकती है।

(७) व्यवसाय और सम्पत्ति का अधिकार—व्यक्ति के द्वारा श्रेष्ठता के साथ सामाजिक जीवन व्यतीत किया जा सके, इसके लिए उसे व्यवसाय की स्वतन्त्रता व उचित मात्रा में सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त होना आवश्यक होता है। जापान के संविधान द्वारा इन अधिकारो की उचित व्यवस्था की गयी है। व्यवसाय की स्वतन्त्रता को स्वीकार करते हुए संविधान के अनुच्छेद २२ में कहा गया है कि 'प्रत्येक व्यक्ति को अपना निवास स्थान बदलने तथा इच्छानुसार व्यवसाय चुनने का उस सीमा तक अधिकार होगा कि सार्वजनिक कल्याण मे कोई बाधा उपस्थित न हो।'

इसी प्रकार सम्पत्ति के अधिकार को स्वीकार करते हुए अनुच्छेद २९ मे कहा गया है कि "व्यक्तियो के सम्पत्ति रखने तथा धारण करने के अधिकार का उल्लघन न होगा। सम्पत्ति के अधिकार की परिभाषा कानून द्वारा की जायगी और इस परिभाषा को निर्धारित करते समय सार्वजनिक हित को दृष्टि मे रखा जायगा। निजी सम्पत्ति को 'उपयुक्त मुआवजा' (Just Compensation) देने पर सरकार जनता के उपयोग के लिए ले सकेगी।" इस प्रकार नागरिको को सम्पत्ति का अधिकार असीमित रूप में प्राप्त नही है और सार्वजनिक हित की दृष्टि से उसे सीमित किया जा सकता है। राज्य द्वारा किसी व्यक्ति की सम्पत्ति जनता के उपयोग के लिए और उचित मुआवजा देकर ही ली जा सकती है। इस सम्बन्ध मे मुआवजे की उपयुक्तता का निर्णय स्वाभाविक रूप से न्यायालय के द्वारा ही किया जायगा।

(८) राजनीतिक अधिकार—संविधान के द्वारा नागरिको को राजनीतिक अधिकार भी प्रदान किये गये हैं। ये अधिकार इस प्रकार है

(i) मताधिकार—संविधान के द्वारा प्रत्येक वयस्क को मताधिकार दिया गया है। २० वर्ष की आयु पूरी कर चुकने पर प्रत्येक स्त्री पुरुष को यह अधिकार प्राप्त होगा। यह भी कहा गया है कि जनता के प्रतिनिधि और सभी सार्वजनिक अधिकारी नागरिकों के सेवक हैं और वे किसी विशेष वर्ग के नही हैं (अनुच्छेद १५)।

(ii) याचिका भेजने का अधिकार (Right to Petition)—अनुच्छेद १६ मे उल्लेख है कि 'प्रत्येक व्यक्ति को अपनी हानि की पूर्ति करवाने, सार्वजनिक अधिकारियो को हटवाने कानूनो को बनवाने, रद्द या संशोधित कराने, अध्यादेशों, नियमो तथा विनियमो में कोई परिवर्तन करवाने या उन्हें रद्द करवाने के लिए याचिका भेजने वाले व्यक्ति के विरुद्ध कोई भेदभाव नही दिखाया जायगा।"

(iii) क्षतिपूर्ति का अधिकार (Right to Compensation)—अनुच्छेद १७ मे उल्लेख है कि यदि किसी व्यक्ति को किसी सरकारी अधिकारी के अवध कार्यों के कारण कोई हानि पहुची है तो उसे क्षतिपूर्ति प्राप्त करने के लिए कानूनी कामवाही करने या मुकदमा चलाने का अधिकार होगा।

(iv) नागरिकता छोडने का अधिकार—सभी नागरिको को विदेशो में बसने और अपनी राष्ट्रीयता छोडने का अधिकार दिया गया है (अनुच्छेद २२)।

(६) भौतिक कल्याण तथा सामाजिक सुरक्षा प्राप्त करने का अधिकार (आर्थिक अधिकार)—जापान के सविधान द्वारा अपने नागरिको को न केवल नागरिक, सामाजिक और राजनीतिक अधिकार, वरन् सोवियत रूस आदि साम्यवादी राज्यो के समान आर्थिक अधिकार भी प्रदान किये गये हैं। इस प्रकार के आर्थिक अधिकार ये हैं

(i) काम का अधिकार—अनुच्छेद २७ मे कहा गया है कि "सभी व्यक्तियो को काम पाने का अधिकार है। मजदूरी के स्तर, काम के घण्टे, विश्राम तथा काय की अन्य शर्तें कानून के द्वारा तय की जायेंगी। बच्चा का शोषण नही होगा।"

(ii) जीवन स्तर को बनाये रखने का अधिकार—अनुच्छेद २५ म उल्लेख है कि "सभी नागरिको को स्वास्थ्यप्रद और सास्कृतिक दृष्टि से कम से कम जीवन स्तर बनाये रखने का अधिकार होगा। साथ मे राज्य का कतव्य है कि वह सामाजिक कल्याण, सुरक्षा तथा सावजनिक स्वास्थ्य की उन्नति करे।"

(iii) मजदूरों के अधिकार—अनुच्छेद २८ मे कहा गया है कि 'मजदूरो को सघ बनाने सौदेबाजी करने और सामूहिक रूप मे काय करने का अधिकार है।"[1]

इन सबके अतिरिक्त भी कुछ अन्य अधिकारो की व्यवस्था की गयी है। सविधान के अनुच्छेद ३६ मे क्रूर दण्ड का निषेध करते हुए लिखा है कि 'सरकारी अधिकारियो द्वारा मारपीट करने तथा क्रूर दण्ड देने पर कठोर प्रतिबन्ध है।' इसी प्रकार अनुच्छेद ३३ मे कहा गया है कि किसी भी व्यक्ति को उस समय तक बन्दी नही बनाया जा सकता है जब तक कि उसके विरुद्ध न्यायिक अधिकारो द्वारा वारण्ट जारी न किया गया हो और उसमे उसके बन्दी बनाये जाने का स्पष्ट कारण न लिखा हो।'

अधिकारो का महत्व—सविधान द्वारा नागरिको को प्रदत्त उपरोक्त अधिकारो क अध्ययन मे यह स्पष्ट हो जाता है कि जापान के सविधान का अधिकार पत्र अन्य किसी भी सविधान की तुलना म बहुत अधिक व्यापक है। इस सम्बन्ध मे विशेष बात यह है कि पश्चिमी देशों की परम्पराओ के अनुसार नागरिका को न

1 The right of workers to organise and to bargain and act collectively is guaranteed —*Ar 28 of the Japanese Cons*

केवल नागरिक, सामाजिक और राजनीतिक अधिकार प्रदान किये गये हैं, वरन् यह सविधान नागरिकों को आर्थिक अधिकार भी प्रदान करता है, जिनका वतमान समय की परिस्थितिया मे निश्चित रूप से बहुत अधिक महत्त्व है। जापान नागरिका और लेखको द्वारा इस दृष्टि से सविधान की बहुत अधिक प्रशसा की गयी है। यानागा लिखते हैं कि "इससे पूर्व कभी भी नागरिकों को इतने व्यापक अधिकार और स्वत त्रताएँ प्राप्त नहीं रही हैं, जिन्हें कि समाज में व्यक्ति की स्थिति की रक्षा और उसके सम्मान में वृद्धि करने के लिए वैधानिक व्यवस्था का आन्तरिक अग बनाया गया है। प्रजात त्र में व्यक्तियों को प्रदान की जाने वाली सभी स्वत त्रताओं की व्यवस्था इस सविधान द्वारा की गयी है।"[1] मैकिनले लिखते हैं कि नवीन सविधान के मानवीय अधिकार सम्ब धी प्रावधानों ने जापान में नागरिकों मे महान प्रभाव उत्पन्न किया है।"[2]

अधिकारो की क्रियान्विती की व्यवस्था

सविधान द्वारा अधिकार प्रदान किये जाने के साथ ही साथ यह आवश्यक होता है कि अधिकारो की क्रियान्विती हेतु आवश्यक व्यवस्था की जाय। अधिकारों की क्रियान्विती का काय न्यायिक कायवाही के आधार पर ही किया जा सकता है। जापान के सविधान द्वारा प्रत्यक्ष रूप मे न सही, लेकिन परोक्ष रूप मे अवश्य ही सर्वोच्च न्यायालय को अधिकारो की रक्षा का भार सौंपा गया है। इस सम्बन्ध मे सविधान के अनुच्छेद ११ और अनुच्छेद ८१ का अध्ययन किया जा सकता है। अनुच्छेद ११ मे उल्लेख है कि 'व्यक्तियों को इनमें से किसी भी मानवीय अधिकार के उपभोग से वचित नहीं किया जायगा। ये मूलभूत मानवीय अधिकार वतमान और भविष्य की पीढ़ी को अनुल्लघनीय (Inviolable) रूप में प्राप्त रहेंगे।" सविधान द्वारा अधिकारो को अनुल्लघनीय घोषित किये जाने मे इस बात की स्पष्ट ध्वनि है कि राज्य के द्वारा इन नागरिक अधिकारो का उल्लघन नही किया जायगा। सविधान के अनुच्छेद ८१ मे लिखा है कि "सर्वोच्च न्यायालय अ तिम न्यायालय है और इसे किसी भी कानून, आदेश, व्यवस्था तथा सरकारी काय की सवधानिकता के निणय का अधिकार प्राप्त है।" सविधान की इस व्यवस्था स स्पष्ट है कि यदि डायट द्वारा नागरिक अधिकारो की व्यवस्था के विरुद्ध किसी कानून का निर्माण किया जाता है या शासन द्वारा इन अधिकारो की व्यवस्था के विरुद्ध कोई प्रशासनिक काय किया जाता है, तो सर्वोच्च न्यायालय उसे अवैधानिक घोषित कर सकता है।

1 "Never before has the individual citizen enjoyed such extensive rights and freedoms which have been made an integral part of the legal system to protect and enhance his position in society All the reedoms guaranteed to individuals in democracies are provi ded for Yanaga Chitoshi *Japanese People and Politics* p 352

2 Theodore Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 209

अनुच्छेद ९८ मे सविधान की सर्वोच्चता की जो घोषणा की गयी है, उससे भी स्पष्ट है कि इन अधिकारो का अन्य व्यक्तियो या शासन द्वारा उल्लघन नही किया जा सकता और सर्वोच्च न्यायालय अधिकारो की रक्षा हेतु आवश्यक कदम उठा सकता है।

व्यवहार मे न्यायपालिका और जापान के नागरिको ने स्वय अपने अधिकारो की रक्षा हेतु सदैव सजगता का परिचय दिया है। विशेष बात यह है कि जापान के नागरिक अपने अधिकारो का प्रयोग सदैव ही बहुत अधिक उत्तरदायित्व की भावना के साथ करते रहे हैं।

कर्तव्य
(Duties)

सविधान के द्वारा मूलभूत मानवीय अधिकारो की घोषणा करने के साथ-साथ नागरिको के कुछ कर्तव्य भी निर्धारित किये गये है। सविधान द्वारा निर्धारित ये कर्तव्य इस प्रकार हैं

(१) सविधान के प्रति भक्ति रखना।

(२) कानूनो का पालन करना।

(३) कानून द्वारा निर्धारित करो को चुकाना (अनुच्छेद ३०)।

(४) काम करना—अनुच्छेद २७ के अनुसार काम करना न केवल एक अधिकार, वरन् एक कर्तव्य और उत्तरदायित्व भी है।

(५) अपने बच्चो को शिक्षा दिलाना—अनुच्छेद २६ के अनुसार सभी व्यक्तियो का यह अनिवार्य कर्तव्य है कि वे अपने बच्चो को कानून द्वारा निर्धारित सामान्य शिक्षा दिलावें।

उपरोक्त के अतिरिक्त नागरिकों का सामान्य उत्तरदायित्व है कि वे अपने अधिकारो और स्वतन्त्रताओ का दुरुपयोग नही करेंगे और इनका प्रयोग सार्वजनिक कल्याण की दृष्टि से ही करेंगे।

प्रश्न

१ जापान के सविधान द्वारा प्रदत्त नागरिक अधिकारो और कर्तव्यो का वर्णन कीजिए।

3

जापान का सम्राट तथा मन्त्रिमण्डल
(THE EMPEROR AND CABINET OF JAPAN)

"सम्राट राज्य तथा जनता की एकता का प्रतीक होगा और अपनी स्थिति उन लोगों से ग्रहण करेगा, जिनके हाथ में प्रभुसत्ता निहित है।"[1] —जापान के संविधान का प्रथम अनुच्छेद

जापान का सम्राट
(Emperor of Japan)

जापानियों को इस बात पर बहुत गर्व है कि उनका राजवंश विश्व में सबसे अधिक प्राचीन है। वर्तमान राजवंश २६०० से भी अधिक वर्षों से वहाँ राज्य करता आ रहा है। वर्तमान सम्राट हीरोहितो इस वंश के १२४वें शासक हैं। जापानियों की मान्यता है कि उनका सम्राट सूर्य की सन्तान है और वे उसका सदैव ईश्वर की भाँति ही सम्मान करते रहे हैं और आज भी करते हैं।

उत्तराधिकार—नवीन संविधान के पूर्व राजसिंहासन के उत्तराधिकार के प्रश्न का निर्णय सम्राट के कानून द्वारा किया जाता था। लेकिन वर्तमान संविधान के अन्तर्गत यह शक्ति सम्राट से 'डायट' (संसद) को हस्तान्तरित कर दी गयी है। अनुच्छेद २ के अनुसार सम्राट का पद वंश परम्परानुकूल रखा गया है और उसका उत्तराधिकार डायट द्वारा पारित। 'साम्राज्यीय गृह कानून' द्वारा निश्चित किया जाता है। इंगलैण्ड के समान जापान में सम्राट की मृत्यु के अनन्तर ज्येष्ठ पुत्र सिंहासन का उत्तराधिकारी होता है। पुत्र न होने पर पुत्री भी इस पद की अधिकारिणी हो सकती है। यदि सम्राट किसी भयंकर रोग से पीड़ित होने के कारण राज्य कार्य करने में असमर्थ हो अथवा उत्तराधिकारी अल्पवयस्क हों, तो 'राज संचालक' (Regent) नियुक्त किया जाता है, जो सम्राट के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है।

1 The Emperor shall be the symbol of the state and of the unity of the people deriving his position from the people with whom resides sovereign power' —*Article I of the Japanese Constitution*

सम्राट का व्यक्तिगत खर्च—वर्तमान संविधान के अन्तर्गत राजमहल का सम्पूर्ण व्यय वहाँ की संसद द्वारा स्वीकृत किया जाता है। नवीन संविधान लागू किये जाने के बाद सम्राट की अधिकांश सम्पत्ति सरकार के आधीन कर ली गयी है। अब उनके पास बहुत थोड़ी सम्पत्ति शेष है और उस पर भी उसे साधारण नागरिक की भाँति कर देना होता है। अनुच्छेद ८ उपबन्धित करता है कि 'सम्राट अथवा राजपरिवार का कोई व्यक्ति संसद की आज्ञा के बिना न तो कोई सम्पत्ति किसी से प्राप्त कर सकता है और न दे ही सकता है।"

मेइजी संविधान के अन्तर्गत सम्राट की शक्तियाँ

१८८९ ई० के मेइजी संविधान के अन्तर्गत सम्राट को बहुत अधिक शक्तियाँ प्राप्त थी और उसे समस्त राजसत्ता का स्रोत समझा जाता था। मेइजी संविधान के प्रथम अनुच्छेद में कहा गया था कि 'जापान के साम्राज्य पर सम्राट द्वारा शासन किया जायगा' और अनुच्छेद ४ में कहा गया था कि 'राज्य की सम्प्रभुता सम्राट में निहित होगी।' वह व्यवस्थापन का अन्तिम स्रोत था और डायट का कार्य उसे परामर्श देना मात्र था। मन्त्रिमण्डल डायट के स्थान पर उसके प्रति ही उत्तरदायी होता था। इस प्रकार विधायी और कार्यपालिका सत्ता सम्राट के व्यक्तित्व में निहित थी। लेकिन यह सैद्धान्तिक स्थिति मात्र थी और व्यवहार में सम्राट की प्रभुसत्ता का प्रयोग मन्त्रिमण्डल के द्वारा ही किया जाता था।

वर्तमान संविधान में सम्राट की शक्तियाँ

मेइजी संविधान के अन्तर्गत सम्राट को जो देवत्व तथा निरंकुशता और सर्वोपरिता की स्थिति प्राप्त थी उसे वर्तमान संविधान के द्वारा समाप्त कर दिया गया है। 'सम्राट के शासन' के स्थान पर वर्तमान संविधान द्वारा 'लोकप्रिय सम्प्रभुता' की धारणा को अपनाया गया है। सम्राट जापान का अब एक संवैधानिक प्रधान मात्र है। सम्राट की शक्तियों का उल्लेख संविधान के प्रथम अध्याय में किया गया है जो निम्नलिखित है

(१) संविधान के अनुच्छेद ६ के अनुसार सम्राट डायट (संसद) द्वारा मनोनीत व्यक्ति को प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है।

(२) सम्राट मन्त्रिमण्डल द्वारा मनोनीत व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त करता है।

(३) अनुच्छेद ७ में लिखा है कि सम्राट मन्त्रिमण्डल के परामर्श तथा अनुमोदन से कुछ अन्य ये कार्य करेगा

(क) संविधान में संशोधनों की घोषणा।

(ख) कानूनों, मन्त्रिमण्डल के आदेशों तथा सन्धियों की घोषणा।

(ग) डायट के अधिवेशन आमन्त्रित करना।

(घ) डायट के प्रथम सदन प्रतिनिधि सदन (House of Representatives) को भंग करना।

(ङ) राज्यमन्त्रियों तथा अन्य कर्मचारियों की कानून के अनुसार नियुक्ति तथा पदच्युति की स्वीकृति देता है।

(च) राजदूतों की नियुक्ति सम्बन्धी प्रमाण पत्रों को कानून के अनुसार स्वीकृति देता है।

(छ) उपाधियां प्रदान करता है।

(ज) विदेशी राजदूतों तथा मन्त्रियों का स्वागत करता है।

(झ) अन्य समारोह सम्बन्धी कार्य करता है।

(ञ) कानून के अनुसार पुष्टीकरण के दस्तावेजों तथा कूटनीतिक प्रलेखों को स्वीकृति देता है।

(ट) उसे विद्रोहियों को आम क्षमा प्रदान करने (Amnesty), अपराधियों के दण्ड मे परिवर्तन करने तथा उसे स्थगित करने का अधिकार है। वह उनके अधिकारों को दुबारा स्थापित कर सकता है।

सम्राट की स्थिति

१८८९ के मेइजी संविधान के अन्तर्गत सम्राट समस्त शक्तियों का स्रोत था। समस्त प्रभुसत्ता उसमें निहित थी और मन्त्री केवल परामर्शदाता ही थे। लेकिन १९४७ के संविधान के अन्तर्गत स्थिति नितान्त परिवर्तित हो गयी है। अब सम्राट एक वैधानिक प्रधान मात्र है। सम्राट की निजी वास्तविक शक्तियाँ कुछ भी नहीं हैं। संविधान के द्वारा सम्राट को जो भी शक्तियां प्रदान की गयी हैं, उन सबका प्रयोग वह मन्त्रिमण्डल के परामर्श से ही कर सकता है। अनुच्छेद ३ में कहा गया है कि 'राज्य से सम्बंधित सम्राट के सभी कार्यों के लिए मन्त्रिमण्डल की मन्त्रणा और स्वीकृति आवश्यक होगी और इन कार्यों के लिए मन्त्रिमण्डल ही उत्तरदायी होगा।'[1] इसी प्रकार अनुच्छेद ४ के अनुसार, "सम्राट केवल राज्य से सम्बंधित वे कार्य करेगा जिनकी संविधान में व्यवस्था है और उसे शासन से सम्बंधित शक्तियाँ प्राप्त नहीं होंगी।'[2] इन सबके अतिरिक्त प्रथम अनुच्छेद में ही स्पष्ट कर दिया गया है कि 'सम्राट केवल राज्य और जनता की एकता का प्रतीक होगा और अपनी स्थिति लोगों की इच्छा से ग्रहण करेगा, जिनमें सम्प्रभुता निहित है।'

संविधान के इन उपबन्धों से सम्राट की स्थिति के सम्बन्ध में कोई सन्देह नहीं रहा है और यह बात नितान्त स्पष्ट है कि वह मात्र एक संवैधानिक प्रधान के अतिरिक्त कुछ नहीं है। वह किसी भी शक्ति का प्रयोग स्वयं अपने ही विवेक से

1 The advice and approval of the cabinet shall be required for all acts of the Emperor in matters of state and the cabinet shall be responsible there for —*Article* 3

2 'The Emperor shall perform only such acts in matters of state as are provided for in this constitution and he shall not have powers related to government —*Article* 4

अनुसार करने की स्थिति म नही है। वारेन एम० तुनिशी के शब्दो मे कहा जा सकता है कि "सम्राट राज्य का एक शक्तिहीन प्रतीक मात्र है जो अपनी स्थिति सप्रभु जनता से प्राप्त करता है। वह अब सप्रभु शासक नहीं है और राज्य के सम्बन्ध में उसके काय मात्र औपचारिक है।"[1]

सम्राट अब एक सवैधानिक शासक मात्र है, लेकिन आज भी सम्राट को देश की जनता मे बहुत अधिक नैतिक शक्ति तथा श्रद्धा-सम्मान प्राप्त है। ऑग और जिक ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि "सविधान निर्माता सम्राट की नैतिक सम्पदा को, राज्य के प्रधान के रूप मे उसकी प्रतीकात्मक स्थिति, सदियो की परम्पराओं में निहित उसके सम्मान और जनता के साथ उसके प्रेम और सम्मानपूण सम्बन्धों को समाप्त नहीं कर सके।'[2] यानागा के मतानुसार भी सम्राट की शासनिक शक्तियों के लोप से उसकी प्रतिष्ठा में कोई कमी नहीं हुई है। जहा तक जनता के सम्राट के प्रति रुख का सम्बन्ध है आज भी कम से कम चिह्न रूप में सम्राट ही राज्य है।[3]

जापान के सम्राट की ब्रिटिश सम्राट (महारानी से) तुलना
(Comparision of Japanese Emperor with British King)

समानताएँ—दोनो देशो के सम्राटो मे अनेक समानताएँ पायी जाती हैं जो इस प्रकार हैं

(१) जापान और इगलण्ड—दोनो ही देशो मे सम्राट पद की शक्तिया बहुत सीमित कर दी गयी है और आज पूण लोकतन्त्र का विकास हो गया है। दोनो ही देशो म सम्राट केवल औपचारिक शासक है, क्योंकि प्रशासन की वास्तविक शक्तिया मन्त्रिमण्डलों को हस्तान्तरित कर दी गयी हैं। वे स्वेच्छा से कोई कार्य नही कर सकते। व्यक्तिगत हो अथवा सावजनिक, सभी कार्यों के लिए उन्हे मन्त्रियो से परामश लेना तथा उसके अनुरूप काय करना होता है।

(२) दोनो देशो के राजवश बहुत प्राचीन हैं यद्यपि जापानी अपने राजवश को अधिक प्राचीन बताते हैं।

[1] The Emperor is today a powerless symbol of the state who derives his status from the sovereign people He is no longer the absolute monarch and his activities in matters of state are strictly ceremonial " —Warren M Tsuneishi *Japanese Political Style*

[2] What the constitution makers could not take away were the Emperor s moral assets his symbolic position as titular head of the state his prestige rooted in centuries of traditions his hold upon the affection and instinctive loyalties of the people —Ogg & Zink *Modern Governments* pp 978 979

[3] The loss of government power by the Emperor does not eem to have detracted one bit from his dignity To day even under the new constitution so far as the popular attitude is concerned in a symbolic sense at least the Emperor may still be regarded as the state —C Yanaga *Japanese People and Politics* p 143

सभी का विश्वास प्राप्त है, उसके निर्वाचन की कोई समस्या नही है और उसके राजनीतिक अनुभव से सरकार लाभ उठा सकती है। कभी कभी उसने अपने महान व्यक्तित्व के आधार पर राष्ट्रीय प्रश्नो पर दलीय मतभेद दूर करने मे भी सफलता पायी है। अत ससदीय व्यवस्था के अन्तगत एक निर्वाचित प्रधान की तुलना म सम्राट का पद श्रेयस्कर है।

इन्ही बातो के आधार पर जापान मे सम्राट के पद को बनाये रखा गया है। वतमान समय मे सभी व्यक्ति सम्राट पद से सन्तुष्ट हैं और इस पद के भविष्य के सम्बन्ध मे थियोडर मक्निले के शब्दो म कहा जा सकता है कि "यदि सम्राट अपनी राजनीतिक तटस्थता बनाये रखने में सफल रहते हैं और यदि शिण्टो हठवादिता का पुनरोदय नहीं होता है जोकि सम्राट पद के प्रति वामपथी शकाओं को प्रबल करेगा, तो यह निश्चित है कि राजसिंहासन जापान में प्रजातन्त्र को सबलता प्रदान करता रहेगा।"[1]

मन्त्रिमण्डल
(The Cabinet)

मेइजी सविधान के अन्तगत केबीनेट—मेइजी सविधान मे 'केबीनेट' और प्रधान मन्त्री शब्द का कही भी प्रयोग नही किया गया था परन्तु १८८६ मे इस सविधान को लागू किये जाने के ४ वष पूव ही सम्राट के एक अध्यादेश के अनुसार केबीनेट की स्थापना हो गयी थी और सविधान ने भी एक प्रकार से उसे मान्यता दे दी थी। सविधान के अनुच्छेद ५५ मे केवल यही कहा गया था कि राज्य के विभिन्न मन्त्री होगे, जो सम्राट को परामश देंगे और उसके लिए उत्तरदायी होगे। मन्त्रियो की नियुक्ति सम्राट के द्वारा की जाती थी और वे सम्राट के प्रति ही उत्तरदायी होते थे। इस प्रकार मेइजी सविधान के अन्तगत केबीनेट मुख्य प्रशासनिक सस्था न होकर एक मन्त्रणा देने वाली समिति के समान ही थी। समस्त कायपालिका सत्ता सम्राट मे निहित थी और मन्त्री उसके परामशदाता मात्र थे।

मन्त्रियो के लिए डायट का सदस्य होना और डायट के बहुमत दल से सम्बन्धित होना आवश्यक नही था, क्योकि डायट के प्रति उनका कोई उत्तरदायित्व नही था। वे तो केवल व्यक्तिगत रूप से सम्राट के प्रति ही उत्तरदायी होते थे। प्रधानमन्त्री की नियुक्ति सम्राट वरिष्ठ राजनीतिज्ञो, मुद्राध्यक्ष (Lord Keeper of the Privy Seal), शाही परिवार के मन्त्री तथा अन्य परामशदाताओ की सिफारिश पर करता था और प्रधानमन्त्री के लिए प्रतिनिधि सदन के बहुमत दल का नेता

[1] "If the Emperor succeeds in maintaining his political neutrality and if there is no revival of Shinto fanaticism which would intensify lefting suspicions of the imperial system it is probable that the throne will continue to lend stability to the fledging democracy in Japan" Theodore Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 68

सबसे पहले किया जायगा।' संविधान की इस व्यवस्था से स्पष्ट है कि डायट प्रधान मन्त्री को अपने सदस्यों में से स्वयं चुनती है और उसके द्वारा चुने गये व्यक्ति को ही सम्राट प्रधानमन्त्री के पद पर नियुक्त करेगा। प्रधानमन्त्री के मनोनयन के सम्बन्ध में "यदि प्रतिनिधि सदन और सभासद सदन एकमत न हों तथा कानून द्वारा स्थापित दोनों सदनों की एक संयुक्त समिति के प्रयत्नों से भी सहमति प्राप्त न हो सके, अथवा सभासद सदन प्रतिनिधि सदन द्वारा नाम तय कर लिए जाने के अनन्तर १० दिन के अन्दर अन्दर कोई निर्णय न ले सके। इस समय में अवकाश काल छोड़ दिया गया है, तो फिर प्रतिनिधि सदन का निश्चय ही डायट का निर्णय मान लिया जायगा।"[1]

इस प्रकार प्रधानमन्त्री के चयन में अंतिम शक्ति निम्न सदन अर्थात् प्रतिनिधि सदन को प्राप्त है। संविधान की व्यवस्था से स्पष्ट है कि प्रधानमन्त्री के चयन में सम्राट स्वविवेक का प्रयोग नहीं कर सकता है।

प्रधानमन्त्री की नियुक्ति के पश्चात्, अन्य मन्त्री नियुक्त किये जाते हैं, किन्तु उनकी नियुक्ति में डायट के निर्देशन की आवश्यकता नहीं होती है। उनका चयन प्रधानमन्त्री स्वयं करता है और उसे इस सम्बन्ध में दो बातों का ध्यान रखना होता है। प्रथम कम से कम आधे मन्त्री डायट के सदस्य हों और द्वितीय सभी मन्त्री असैनिक हों। व्यवहार के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल में विभिन्न प्रदेशों, समुदायों और दलीय गुटों को उचित प्रतिनिधित्व देना होता है।

संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत यह आवश्यक समझा जाता है कि सभी मन्त्री संसद सदस्य हों लेकिन जापान की संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत सिद्धान्त रूप में यह आवश्यक नहीं समझा गया है। व्यवहार के अन्तर्गत वर्तमान समय में कैबीनेट के सभी सदस्य डायट में से ही लिए जाते हैं जिनमें से अधिकांश प्रतिनिधि सदन में से होते हैं।

मन्त्रिमण्डल में कितने सदस्य हों, उनका स्तर क्या हो और उन्हें कौन कौन से विभाग सौंपे जाय, इस सम्बन्ध में संविधान बिल्कुल मौन है अतः कैबीनेट के आकार व स्वरूप का निर्धारण प्रधानमन्त्री ही करता है। वस्तुतः मन्त्रियों और विभागों की संख्या में समय समय पर परिवर्तन होता रहा है। १९४७ में निर्मित प्रथम मन्त्रिमण्डल में कुल १७ मन्त्री थे जिनमें से १६ प्रतिनिधि सदन के थे और १ सभासद सदन का था लेकिन १९७० के अन्तर्गत मन्त्रिमण्डल में कुल २२ मन्त्री थे। प्रधानमन्त्री को मन्त्रियों को अपदस्थ करने की महत्वपूर्ण शक्ति प्राप्त है और वह जब चाहे अपने मन्त्रिमण्डल में परिवर्तन कर सकता है। व्यवहार के अन्तर्गत प्रधानमन्त्री के द्वारा अपनी इस शक्ति का खुलकर प्रयोग किया [illegible] विधान के अनुच्छेद ६९ में लिखा है कि यदि प्रति[illegible] एक अविश्वा[illegible] रत कर दें या विश्वास के किसी प्रस्ताव को [illegible] तो समस्त [illegible] ना

1 *Article* 96

त्याग पत्र दे देगा, यदि प्रतिनिधि सदन १० दिन के अन्दर अन्दर विघटित न कर दिया जाय। इन दोनो स्थितियो मे मन्त्रिमण्डल अपने कार्य तब तक करता रहेगा, जब तक कि नये प्रधानमन्त्री की नियुक्ति न हो जाय।

मन्त्रिमण्डल के कार्य करने की विधि—मन्त्रिमण्डल अपना समस्त कार्य प्रधानमन्त्री के नेतृत्व मे ही करता है। प्रधानमन्त्री का एक कार्यालय होता है, जिसका मुख्य एक निर्देशक होता है तथा दो अन्य उप निर्देशक (Deputy directors) होते हैं। यह कार्यालय मन्त्रिमण्डलीय बैठको की 'कार्य सूची (Agenda) तैयार करता है और मन्त्रियो के कार्यों मे सहायता देता है। मन्त्रिमण्डल की बैठकें प्रधानमन्त्री के निवास स्थान पर सप्ताह में दो बार मंगलवार और शुक्रवार को होती हैं। बैठकों की अध्यक्षता प्रधानमन्त्री और उसकी अनुपस्थिति मे उप प्रधानमन्त्री करता है। सारी कार्यवाही गुप्त रखी जाती है और समस्त निर्णय सर्वसम्मति से किये जाते हैं। निर्णय से असहमत मन्त्री अपने त्यागपत्र दे देता है। कबीनेट की बैठकों के लिए कोई गणपूर्ति नहीं है। ब्रिटेन व भारत की भाँति जापान की केबीनेट मे भी समितियों का प्रयोग किया जाता है। इस समय दो प्रमुख समितियाँ ये हैं—मन्त्रीय परिषद् (Ministerial Council) और राष्ट्रीय प्रतिरक्षा परिषद (National Defence Council)।

केबीनेट की शक्तियां तथा कार्य

केबीनेट जापान की समस्त शासन व्यवस्था की आधार बिन्दु है और इसे प्रशासनिक, विधायी, वित्तीय और न्यायिक शक्तियों से विभूषित किया गया है। केबीनेट की शक्तियो का अध्ययन निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) **प्रशासनिक शक्तियाँ**—१८८९ के मेइजी संविधान के अन्तर्गत कार्यपालिका शक्ति सम्राट मे निहित थी और केबीनट उसे केवल परामर्श देने का कार्य करती थी, किन्तु वर्तमान संविधान के अनुच्छेद ६५ मे स्पष्ट रूप से लिखा है कि 'कार्यपालिका शक्ति केबीनेट में निहित होगी।' केबीनेट ही शासन सम्बन्धी सभी महत्त्वपूर्ण निर्णय लेती है। वह सभी राष्ट्रीय एवं अन्तरराष्ट्रीय प्रश्नो पर विचार कर नीति निर्धारित करती, डायट से उसे स्वीकृत कराती और उन्हें मूर्त रूप प्रदान करती है। अनुच्छेद ७३ मे कहा गया है कि अन्य सामान्य प्रशासनिक कार्यों के अतिरिक्त निष्ठा के साथ कानून की क्रियान्विती तथा राज्य के कार्यों का संचालन करना केबीनेट का कार्य है। इस प्रकार केबीनेट डायट द्वारा निर्मित कानूनो के अनुसार सम्पूर्ण प्रशासन का संचालन करती व इस हेतु सामान्य आदेश निर्देश जारी करती है। वैदेशिक मामलो पर भी केबीनेट का पूर्ण नियन्त्रण है। विदेशी राज्यो से सम्बन्ध स्थापित करना और सन्धि सम्बन्धी निर्णय लेना केबीनेट का ही कार्य है, यद्यपि सन्धियो पर डायट की पूर्व या अन्तिम स्वीकृति आवश्यक होती है। केबीनेट ही कानून द्वारा स्थापित मापदण्डो के अनुसार लोक सभाओं की व्यवस्था और उनका संचालन करती है। उसे कुछ विशिष्ट अधिकारियो को पदच्युत करने का भी अधिकार

प्राप्त है। इस प्रकार प्रशासनिक क्षेत्र मे केबीनेट को बहुत अधिक व्यापक शक्तियाँ प्राप्त हैं और उसे हम समस्त प्रशासनिक तन्त्र की मुख्य धुरी कह सकते हैं।

(२) विधायी शक्तियाँ—जापान में संसदीय व्यवस्था होने के कारण केबीनेट का डायट से घनिष्ट सम्बन्ध रहता है और विधायी व कार्यपालिका शक्तियों का एकीकरण हो गया है। अब केबीनेट न केवल प्रशासन का संचालन, वरन् विधि निर्माण के क्षेत्र मे भी डायट का नेतृत्व और पथ प्रदर्शन करती है। शासन की सर्वोच्च नीति व कार्यक्रम को क्रियान्वित रूप देने के लिए प्राय सभी महत्त्वपूर्ण विधेयकों का प्रारम्भ केबीनेट ही करती है और डायट मे उन्हें पास करवाने का उत्तरदायित्व भी केबीनेट का ही है। केबीनेट को यह भी अधिकार है कि वह सम्राट को प्रतिनिधि सदन को भंग करने और सामान्य निर्वाचनों की घोषणा करने का परामर्श दें। प्रतिनिधि सदन भंग हो जाने पर केबीनेट सम्राट को सभासद सदन का संकटकालीन अधिवेशन बुलाने का परामर्श दे सकती है। वस्तुत प्रशासनिक और विधायी दोनों क्षेत्रों मे नेतृत्व केबीनेट को ही प्राप्त है और यही वह कड़ी है जो कार्यपालिका और विधायिका को परस्पर संयुक्त करती है। आरडाय बक्स के शब्दों मे 'केबीनेट राष्ट्रीय नीति निर्धारित करती और विधायी प्रक्रिया में प्रभावपूर्ण रूप से भाग लेती है।'

(३) वित्तीय शक्ति—राष्ट्रीय वित्त पर केबीनेट को पूर्णशक्ति प्राप्त होती है। बजट अर्थात् राष्ट्रीय आय-व्यय के ब्यौरे का निर्माण, उसे डायट मे प्रस्तुत और स्वीकृति करना केबीनेट का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य है। केबीनेट अपने बहुमत के बल पर बजट पर डायट की स्वीकृति लेने मे भी सफल हो जाती है और इस सम्बन्ध मे जापान की केबीनेट की स्थिति भारतीय या ब्रिटिश केबीनेट के समान है। वित्तीय क्षेत्र मे जापान की केबीनेट अमरीकी कार्यपालिका की तुलना मे निश्चित रूप से अधिक शक्तिशाली है।

(४) न्यायिक शक्ति—न्यायिक क्षेत्र में भी केबीनेट को कुछ अधिकार प्राप्त हैं। सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश व अन्य न्यायाधीशों के मनोनयन की शक्ति उसे ही प्राप्त है। अनुच्छेद ६ में स्पष्ट लिखा है कि 'सम्राट् केबीनेट द्वारा निर्देशित व्यक्ति को सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश नियुक्त करेगा।' मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त सर्वोच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों तथा अधीनस्थ न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति करना भी केबीनेट का ही कार्य है, यद्यपि केबीनेट की इस शक्ति पर लोकनिर्णय का नियन्त्रण है। संविधान के अनुच्छेद ७३ के अनुसार 'सामान्य क्षमादान, विशिष्ट क्षमादान, दण्ड को समाप्त करने, दण्ड में कमी करने और अधिकारों को पुन स्थापित करने के सम्बन्ध में भी केबीनेट ही निर्णय लेती है।'

केबीनेट ही जापान की वास्तविक कार्यपालिका है और इसे जापान की शासन व्यवस्था में वही स्थिति प्राप्त है, जो ब्रिटिश शासन में केबीनेट को प्राप्त है।

अत सर जॉन मेरीयट के शब्दो म कहा जा सकता है कि 'केबीनेट वह धुरी है, जिस पर समस्त प्रशासनिक यन्त्र घूमता रहता है।'

केबीनेट तथा डायट

जापान मे ससदीय व्यवस्था को अपनाया गया है और सिद्धान्तत केबीनेट अपने सभी कार्यों के लिए डायट के प्रति उत्तरदायी है। डायट के द्वारा अनेक साधनो के आधार पर मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण रखा जाता है। डायट के सदस्य मन्त्रियो से प्रश्न पूछ सकते हैं, मन्त्रियों के कार्यों की आलोचना कर सकते हैं और स्थगन प्रस्ताव पारित कर सकते हैं। अनुच्छेद ६२ के अनुसार डायट के किसी भी सदन द्वारा प्रस्ताव पारित कर प्रशासनिक कार्यों की जाँच करायी जा सकती है। डायट अपनी इस शक्ति के आधार पर प्रशासन पर नियन्त्रण रख सकती है। इन सबके अतिरिक्त प्रतिनिधि सदन अविश्वास का प्रस्ताव पारित कर केबीनेट को पद त्याग करने के लिए बाध्य कर सकता है। सन्धियो पर भी केबीनेट को डायट की स्वीकृति प्राप्त करनी होती है और बजट पर डायट की स्वीकृति के बिना आय-व्यय सम्बन्धी कोई काम नही किया जा सकता। केबीनेट को वैदेशिक तथा राष्ट्रीय मामलो से सम्बन्धित सभी विषयो की रिपोर्ट डायट को देनी होती है। इन सभी बातो से यह स्पष्ट है कि डायट केबीनेट पर पूर्ण नियन्त्रण रखती है और केबीनेट का अस्तित्व ही डायट विशेषतया प्रतिनिधि सदन की इच्छा पर निर्भर है।

लेकिन यह सैद्धान्तिक स्थिति मात्र है और जहाँ तक व्यवहार का सम्बन्ध है, विश्व के अन्य अनेक देशो के समान ही जापान मे भी कार्यपालिका अर्थात् केबीनेट के अधिक शक्तिशाली होने की प्रवृत्ति देखी जा सकती है। सैद्धान्तिक रूप म डायट क प्रति उत्तरदायी होते हुए भी, व्यवहार मे केबीनेट डायट पर अपना नियन्त्रण स्थापित करने मे सफल होती है। प्रशासन और कानून निर्माण दोनों ही क्षेत्रो मे केबीनेट की स्थिति सर्वोपरि है। प्रशासनिक क्षेत्रो मे भी केबीनेट डायट का मार्ग निर्देशन करती है। सभी महत्त्वपूर्ण विधायी प्रस्ताव केबीनेट द्वारा तैयार कर डायट मे प्रस्तुत किय जाते हैं और अपने बहुमत के बल पर वह उन्हें स्वीकार करवा लेती है। कानून निर्माण का काय बहुत अधिक जटिल व प्राविधिक हो जाने के कारण भी इस सम्बन्ध म केबीनेट की भूमिका बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण हो गयी है। इसके अतिरिक्त अन्य देशो के समान जापान मे भी प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated legislation) की प्रथा का विकास हो गया है, जिसके अनुसार डायट कानूनो की रूपरेखा मात्र तैयार करती है और उसके अनुरूप विवरण तैयार करने तथा आदेश जारी करने का अधिकार मन्त्रिमण्डल को मिल जाता है। इस प्रकार कानून निर्माण तथा प्रशासन केबीनेट की इच्छानुसार होता है और डायट का काय केबीनेट द्वारा निर्धारित बातो पर औपचारिक स्वीकृति देना भर है।

केबीनेट तथा डायट के पारस्परिक सम्बन्धो मे केबीनेट की बढती हुई शक्ति के अनेक कारण बतलाये जा सकते हैं, जिनमे एक प्रमुख कारण है केबीनेट की प्रति

निधि सदन को भंग करने की शक्ति। शासन की नीतियों का विरोध करने वाले डायट के सदस्यों को नियन्त्रण में रखने का यह एक प्रभावशाली साधन है। अनुच्छेद ६९ के अनुसार, 'प्रतिनिधि सदन द्वारा अविश्वास का प्रस्ताव पारित किये जाने पर या तो कैबीनेट के द्वारा सामूहिक रूप से पद त्याग किया जाना चाहिए अथवा १० दिन के अन्दर ही प्रतिनिधि सदन को भंग करवा दिया जाना चाहिए। कैबीनेट के द्वारा दूसरा मार्ग अपनाने की आशंका ही अधिक रहती है और प्रतिनिधि सदन के सदस्य पुनर्निर्वाचन में होने वाली परेशानियों और व्यय भार से बचने के लिए अविश्वास का प्रस्ताव पारित करने का मार्ग नहीं अपनाते हैं। कठोर दलीय अनुशासन कैबीनेट के सदस्यों का अपने राजनीतिक दल और देश की राजनीति में प्रभावपूर्ण स्थान और कैबीनेट के पास विशाल 'संरक्षण शक्ति' (Power of Patronage) आदि भी कुछ ऐसे कारण हैं, जिनके आधार पर कैबीनेट डायट पर नियन्त्रण करने में सफल रहती है। अन्य देशों के समान ही जापान में भी आधुनिक प्रवृत्ति कैबीनेट की शक्तियों में वृद्धि और डायट के प्रभाव में कमी की ओर है।

प्रधानमन्त्री की स्थिति

प्रधानमन्त्री की स्थिति—१८८९ ई० के मेइजी संविधान के अन्तर्गत प्रधान मन्त्री को वह गौरवपूर्ण स्थिति प्राप्त नहीं थी, जो कि संसदीय व्यवस्था के अन्तर्गत उसे प्राप्त होनी चाहिए। उस समय प्रधानमन्त्री का चुनाव वरिष्ठ राजनीतिज्ञ करते थे और उनकी सिफारिश पर ही सम्राट के द्वारा प्रधानमन्त्री को नियुक्त किया जाता था। अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति भी सम्राट ही करते थे, प्रधानमन्त्री नहीं, और इस कारण प्रधानमन्त्री को अपने मन्त्रिमण्डल पर प्रभावी नियन्त्रण प्राप्त नहीं था।

एक अन्य तथ्य यह था कि मेइजी संविधान के अन्तर्गत कैबीनेट एकमात्र कार्यपालिका सत्ता नहीं थी। कैबीनेट के अतिरिक्त प्रिवी कौंसिल, जेनरो और युद्ध परिषद जैसी संवैधानिक और संविधानेत्तर संस्थाएँ थी, जो प्रशासन के संचालन में पर्याप्त प्रभाव रखती थी। इन संस्थाओं के कारण कैबीनेट और उसके प्रमुख प्रधान मन्त्री की शक्ति बहुत अधिक सीमित हो गयी थी। लेकिन अब इन संस्थाओं का अन्त कर दिया गया है। वर्तमान समय में स्थिति यह है कि कैबीनेट प्रशासनिक क्षेत्र की सर्वोच्च संस्था है और कैबीनेट में प्रधानमन्त्री की स्थिति सर्वोच्च है। कैबीनेट और डायट में प्रधानमन्त्री की स्थिति का अध्ययन इस प्रकार किया जा सकता है

प्रधानमन्त्री और कैबीनेट—संवैधानिक उपबन्धों के आधार पर कैबीनेट में प्रधानमन्त्री की स्थिति को सर्वोच्चता प्रदान की गयी है और व्यवहार में भी उसे अपने सहयोगियों में यह सर्वोच्चता प्राप्त है। अनुच्छेद ६६ में प्रधानमन्त्री को कैबीनेट का प्रमुख बतलाया गया है और अनुच्छेद ६८ में स्पष्टतया कहा गया है कि 'उसे अन्य मन्त्रियों को नियुक्त और पदच्युत करने की शक्ति प्राप्त होगी।' इस बात ने प्रधान

मन्त्री की स्थिति को शक्तिशाली बनाने मे बहुत अधिक योग दिया है। जापान म विशेष प्रकार की दलीय स्थिति के कारण प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रिमण्डल मे बहुत अधिक परिवतन करते रहे हैं और वाड तथा मेकरीडीज के शब्दो मे कहा जा सकता है कि 'जापान में प्रधानमन्त्री मन्त्रिमण्डलों का अपेक्षा अधिक स्थायी होते हैं।'[1] उदाहरण के लिए, योशीदा और इकेदा ने पाच पाँच मन्त्रिमण्डलो की अध्यक्षता की।

अनुच्छेद ७२ के द्वारा प्रधानमन्त्री को प्रशासन की विभिन्न शाखाओ के निरीक्षण और नियन्त्रण की शक्ति प्रदान की गयी है और डायट म विधेयक तथा सामान्य और वदेशिक मामला पर प्रतिवेदन प्रस्तुत करते हुए वह केबीनेट का प्रतिनिधित्व करता है। वह केबीनेट की बठका की अध्यक्षता करता है और अनुच्छेद ७४ के अनुसार ऐसी व्यवस्था है कि सभी कानून और मन्त्रिमण्डलीय आज्ञाए न केवल सम्बन्धित मन्त्री द्वारा हस्ताक्षरित, वरन् प्रधानमन्त्री द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित होनी चाहिए। यदि मन्त्रिमण्डल के सदस्यो म क्षेत्राधिकार सम्बन्धी कोई विवाद उत्पन्न हो जाय, तो इसका निणय भी प्रधानमन्त्री के द्वारा ही किया जाता है। मन्त्रिमण्डल मे प्रधानमन्त्री की केन्द्रीय स्थिति इस तथ्य मे स्पष्ट है कि अनुच्छेद ७० के अनुसार यदि प्रधानमन्त्री का पद रिक्त हो जाय, तो समस्त केबीनेट के द्वारा त्यागपत्र दे दिया जाना चाहिए।

मन्त्रिमण्डल के अन्य सदस्यो की तुलना म प्रधानमन्त्री को बहुत अधिक व्यापक सरक्षण की शक्तियाँ प्राप्त हैं और उसके द्वारा बडी सख्या म व्यक्तियों को पद और सम्मान प्रदान कर अपनी स्थिति को प्रभावशाली बनाया जा सकता है। कुछ अन्य तथ्यों से भी उसकी सर्वोच्च स्थिति नितान्त सुरक्षित है। वह सामान्य तया १२ मन्त्रालयो और ४ ऐजन्सिज का प्रधान होता है। प्रधानमन्त्री के कार्यालय मे भी बहुत अधिक शक्ति केन्द्रित हो गयी है क्योंकि वतमान समय मे इस कार्यालय के साथ अनेक सहायक अग जुड गये हैं। १९६५ मे इस प्रकार की समितियां, आयोगों और सस्थाओं की सख्या ३९ थी।

प्रधानमन्त्री की शक्तियो की उपरोक्त विवेचना से स्पष्ट है कि प्रधानमन्त्री केबीनेट मे सर्वोच्च सत्ताधारी है। प्रधानमन्त्री केबीनेट की बैठको की अध्यक्षता करता है। वही इन बठको की काय सूची (Agenda) तयार करता है और केबीनेट के समस्त कार्यों तथा निणयो म उसका प्रमुख हाथ रहता है। यद्यपि केबीनेट के सभी सदस्यो के विचारा का महत्व है, किन्तु अन्तिम रूप मे प्रधानमन्त्री का निणय ही मान्य होता है और इससे असहमत सदस्य के लिए त्यागपत्र देने का ही एकमात्र माग बच रहता है। ब्रिटेन और भारत के समान ही जापान म भी मन्त्रिमण्डल का अस्तित्व प्रधानमन्त्री की इच्छा पर निभर करता है। इस सम्बन्ध मे लास्की के य

1 In Japan the Prime Ministers are more durable than their cabinets —R E Ward and R. C Macridis *Modern Political Systems*, p 97

शब्द लागू होते हैं कि "प्रधानमन्त्री कैबीनेट का केन्द्र बिन्दु है। वह उसके निर्माण, उसके जीवन और उसके अन्त में केन्द्रीय स्थिति रखता है।" अन्य मन्त्रियों की तुलना मे प्रधानमन्त्री की स्थिति निश्चित रूप से बहुत अधिक उच्चतर है। वह तो वास्तव म सूर्य है, जिसके चारो ओर नक्षत्र घूमते हैं।

प्रधानमन्त्री डायट (ससद)—प्रधानमन्त्री न केवल मन्त्रिमण्डल वरन् डायट का भी प्रधान होता है। वस्तुत डायट का नेता होने के कारण उसे प्रधान मन्त्री पद प्राप्त होता है और प्रधानमन्त्री पद ग्रहण करने के बाद भी वह डायट का नेता बना रहता है। वह डायट मे मन्त्रिमण्डल का मुख्य प्रवक्ता होता है और उसके द्वारा डायट का मन्त्रिमण्डल के बीच सम्पर्क सूत्र का काय किया जाता है। सभासद् का सदन का वह एक नेता नियुक्त कर देता है जो सदन मे उसका प्रतिनिधित्व करता है।

प्रमुख विधायी प्रस्ताव प्रधानमन्त्री के निर्देशन मे ही तैयार किये जाते हैं और डायट विशेषतया प्रतिनिधि सदन के बहुमत दल का सर्वमान्य नेता होने के कारण वह उन्हें डायट से स्वीकार करवा लेता है। वार्षिक बजट तैयार कराने में भी उसका प्रमुख हाथ होता है और उसे डायट से बजट स्वीकृत कराने मे कोई विशेष कठिनाई नहीं होती। डायट स्वेच्छा से प्रधानमन्त्री का अनुकरण करती है, अन्यथा प्रधानमन्त्री के हाथ मे प्रतिनिधि सदन को भग करने की शक्ति होने के कारण भी डायट को बाध्य होकर प्रधानमन्त्री के निर्देशों का पालन करना होता है।

अपने राजनीतिक दल का सर्वोच्च नेता होने के नाते प्रधानमन्त्री अपने दल मे एकता, अनुशासन और सगठन बनाये रखने मे महत्त्वपूर्ण रूप से भाग लेता है और एक जन नायक के रूप मे वह राष्ट्रीय जीवन को नवीन दिशा प्रदान करता है।

ब्रिटिश प्रधानमन्त्री के सदस्य ही जापान की राष्ट्रीय राजनीति मे प्रधान मन्त्री का स्थान सर्वोच्च होता है। वस्तुत यदि कैबीनेट शासन रूपी जहाज की चालक मशीन है तो प्रधानमन्त्री उसका चालक है।

प्रश्न

१ 'जापान का सम्राट राज्य करता है, शासन नहीं' इस कथन के आधार पर जापान मे सम्राट की शक्तियों का वर्णन कीजिए।
२ जापान के सम्राट की स्थिति की ग्रेट ब्रिटेन के सम्राट से तुलना कीजिए।
३ जापान मे लोकतन्त्र को अपना लेने पर भी सम्राट पद को बनाये रखने के कारणों का वर्णन कीजिए।
४ जापान मे मन्त्रिमण्डल का निर्माण कैसे होता है? मन्त्रिमण्डल की शक्तियों तथा कार्यों का वर्णन कीजिए।
५ जापान के प्रधानमन्त्री की नियुक्ति, स्थिति तथा शक्तियों का वर्णन कीजिए।

4

जापान की डायट अथवा ससद
(DIET OR PARLIAMENT OF JAPAN)

"डायट राज्यशक्ति का सर्वोच्च अग होगी तथा वही राज्य की एक-मात्र कानून बनाने वाली सस्था होगी।"[1]

—जापानी सविधान का अनुच्छेद ४१

जापान पहला एशियाई देश है जहाँ ससदीय व्यवस्था की स्थापना हुई। बर्क्स ने लिखा है कि 'जापान की डायट गैर पश्चिमी देशों में सबसे प्राचीन और सबसे अधिक अनुभवी विधायक सभा है।'[2] १८८६ ई० के मेइजी सविधान के अन्तर्गत भी 'शाही डायट' (Imperial Diet) की व्यवस्था थी, जिसके दो सदन थे 'पीयर सभा' (House of Peers) और 'प्रतिनिधि सभा' (House of Representatives)। यह शाही डायट पर्याप्त शक्तिशाली नही थी और इसे सम्राट मन्त्रिमण्डल पर भी कोई नियन्त्रण प्राप्त न था। लेकिन जापान के वतमान सविधान के अनुच्छेद ४१ के अनुसार, 'डायट राज्यशक्ति का सर्वोच्च अग और एकमात्र कानून निर्मात्री सस्था है।' जापान के सविधान के चौथे अध्याय म अनुच्छेद ४१ से लेकर अनुच्छेद ६४ तक डायट की रचना तथा शक्तियो का ही उल्लेख किया गया है।

डायट द्विसनात्मक व्यवस्थापिका सभा—जापान की डायट द्विसदनात्मक व्यवस्थापिका सभा है। इसके प्रथम या निम्न सदन 'प्रतिनिधि सदन' (House of Representatives) और द्वितीय या उच्च सदन को 'सभासद सदन या 'पापद सभा' (House of Councillors) का नाम दिया गया है।

1 The Diet shall be the highest organ of state power and shall be the sole law making organ of the state —*Ar* 41

2 'The Japanese Diet is the oldest and most experienced legislature of the non western world Ardath W Burks *The Government of Japan*

डायट के अधिवेशन—संविधान के अंतर्गत डायट के साधारण, असाधारण तथा विशेष अधिवेशनों की व्यवस्था की गयी है। साधारण अधिवेशन के लिए मन्त्रिमण्डल के निर्णय के अनुसार राज्याज्ञा जारी कर दी जाती है। यह अधिवेशन १ दिसम्बर से १० दिसम्बर के बीच किसी दिन अवश्य ही बुलाया जाना चाहिए और साधारणतया यह अधिवेशन १५० दिन तक चलता रहता है। दोनो सदनों की स्वीकृति से या दोनो सदनो की स्वीकृति न होने पर प्रतिनिधि सदन अपनी इच्छा से अधिवेशन की अवधि बढा सकता है। मन्त्रिमण्डल अधिवेशन स्थगित किये जाने के लिए प्रार्थना कर सकता है, किन्तु वह इस हेतु आदेश जारी नही कर सकता।

साधारण अधिवेशनो के अन्तरकाल मे कभी भी असाधारण अधिवेशन बुलाया जा सकता है। अनुच्छेद ५३ मे कहा गया है कि दोनो सदनो म से किसी एक सदन के ¼ या उससे अधिक सदस्य डायट के असाधारण अधिवेशन की मांग कर सकते हैं और ऐसी माग की जाने पर मन्त्रिमण्डल को डायट का असाधारण अधिवेशन बुलाना चाहिए।

विशेष अधिवेशन साधारण अधिवेशन आरम्भ होने के पहले हो सकते हैं। अनुच्छेद ५४ के अनुसार जब प्रतिनिधि सभा का विघटन हो जाता है तो विघटन के दिन से ४० दिन के भीतर आम चुनाव होने चाहिए तथा चुनाव के दिन से ३० दिन के भीतर डायट का अधिवेशन बुलाया जाना चाहिए। इस विशेष अधिवेशन का उद्देश्य प्रधानमन्त्री तथा प्रतिनिधि सभा के पदाधिकारियों आदि का चुनाव करना होता है। अकेले सभासद सदन का भी आपातकालीन सत्र बुलाया जा सकता है। प्रतिनिधि सदन के विघटन के साथ ही साथ सभासद सदन भी स्थगित हो जाता है किन्तु राष्ट्रीय संकट के समय केबीनेट यदि चाहें तो आवश्यक विषयो के सम्बन्ध म कार्यवाही करने के लिए सभासद सदन का आपातकालीन अधिवेशन बुला सकती है। इस अधिवेशन मे की गयी कार्यवाही अस्थायी होगी और यदि डायट का अगला अधिवेशन प्रारम्भ होने की तिथि से १० दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन उसे स्वीकार नहीं कर लेता, तो वह रद्द या अवैध समझी जायगी।

डायट सदस्यो के वेतन तथा भत्ते—संविधान के अनुच्छेद ४९ म उल्लेख है कि 'दोनों सदनों के सदस्यो को कानून के अनुसार राष्ट्रीय कोष से वेतन मिलेगा।' डायट के प्रत्येक सदस्य को २ लाख २५ हजार येन प्रतिमास वेतन मिलता है। उन्हें अधिवेशन के दिनो मे तथा अधिवेशन के बीच मे समितियो मे कार्य करने के लिए ११,२५० येन प्रतिदिन भत्ता भी दिया जाता है। प्रत्येक सदस्य को अपना अलग कार्यालय तथा सचिव रखने का अधिकार है तथा उसे 'कार्यालय भत्ता' अलग मिलता है। सदस्यो का रेल बस तथा समुद्री जहाज मे सरकारी कार्य के लिए यात्रा करने का तीसरे दर्जे का फ्री पास दिया जाता है। उन्हें अपने पद से सम्बन्धित डाक मुफ्त भेजने का अधिकार होता है।

सदस्यों के विशेषाधिकार—डायट के सदस्य निभयता के साथ कत य पालन कर सकें, इसके लिए उन्हें कुछ विशेषाधिकार और उन्मुक्तिया प्रदान की गयी है। अनुच्छेद ५० मे कहा गया है कि जब तक किसी कानून के द्वारा कोई अ य व्यवस्था न हो, तब तक सदस्यो का अधिवेशनों के दिनो म गिरफ्तार नही किया जा सकता है। यदि किसी सदस्य को अधिवेशन प्रारम्भ होने के पूव ही किसी कारण से बन्दी बना लिया गया है, तो भी उसे सदन की माँग पर अधिवेशन क दिना मे छोड दिया जायगा। अनुच्छेद ५१ मे लिखा है कि सदन मे दिये गय भाषण, विवाद और मतदान मे भी भाग लेने के कारण वे बाहर किसी भी सत्ता के प्रति उत्तरदायी नही होंगे।

डायट का सचिवालय—डायट का एक सचिवालय होता है जिसका अध्यक्ष मुख्य सचिव होता है। मुख्य सचिव की नियुक्ति डायट के बाहर से की जाती है। वह सरकारी पत्रो पर हस्ताक्षर करता और डायट की कायवाहियो का रिकाड रखता है। डायट का एक अलग पुस्तकालय भी होता है।

गणपूर्ति (Quorum)—सविधान की धारा ५६ मे कहा गया है कि डायट के किसी भी सदन मे तब तक कोई कायवाही नही की जा सकती, जब तक कि सदन की कुल सख्या के एक तिहाई सदस्य उपस्थित न हो। प्रत्येक सदन मे प्रश्नो का निणय उपस्थिति के बहुमत से किया जायगा और समान मत आने पर सदन के अध्यक्ष को निर्णायक मत देने का अधिकार होगा।

प्रतिनिधि सदन
(House of Representatives)

रचना (Composition)—वतमान समय म प्रतिनिधि सदन के सदस्यो की सख्या ४८६ है जिन्हें प्रत्यक्ष निर्वाचन और वयस्क मताधिकार तथा गुप्त मतदान के आधार पर चुना जाता है। इन सदस्यो का चुनाव बहुल सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रो से किया जाता है और इस हेतु समस्त जापान को ११८ निर्वाचन क्षेत्रो मे बाँट दिया गया है। प्रत्येक चुनाव क्षेत्र से ३ से लेकर ५ सदस्य चुने जाते हैं, परन्तु टोकियो स ७ और अमामी द्वीप समूह से केवल १ सदस्य ही चुना जाता है। इन सदस्यो का चुनाव 'सीमित मत प्रणाली' (Limited Vote System) के आधार पर किया जाता है जिसके अ तगत यद्यपि अधिक सख्या म सदस्य चुने जाने होते है, लेकिन मतदाताओं को एक ही मत देने का अधिकार होता है। 'सीमित मत प्रणाली' जनता क सभी वर्गो बहुसख्यक और अल्पसख्यक को प्रतिनिधित्व प्रदान करने की दृष्टि से अपनायी गयी है।

सदस्यों के लिए आवश्यक योग्यताएँ—प्रतिनिधि सदन की सदस्यता क लिए निम्नलिखित योग्यताएँ आवश्यक रखी गयी हैं

(१) वह जापान का प्राकृतिक नागरिक हो, देशीयकृत (Naturalised) नागरिक नही हो।

(२) वह २५ वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(३) वह सरकार के अधीन किसी लाभदायक पद पर न हो।

(४) वह पागल अथवा दिवालिया न हो।

(५) वह चुनाव क्षेत्र मे कम से कम तीन मास से रह रहा हो।

(६) वह कानून द्वारा डायट की सदस्यता के अयोग्य घोषित न किया गया हो।

(७) कोई भी व्यक्ति एक साथ दोनो सदनो की सदस्यता प्राप्त नहीं कर सकता है।

कार्यकाल—अनुच्छेद ४५ के अनुसार प्रतिनिधि सदन का कार्यकाल ४ वर्ष निश्चित किया गया है, परन्तु प्रतिनिधि सदन को समय के पूर्व भग किया जा सकता है। यदि प्रतिनिधि सदन मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास कर दें तो या तो मन्त्रिमण्डल त्याग पत्र दे देगा या प्रधान मन्त्री सम्राट से १० दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन को भग करके नवीन चुनाव कराने की अपील करेगा। सम्राट प्रधानमन्त्री की अपील पर प्रतिनिधि सदन को भग कर देंगे। यदि प्रतिनिधि सदन भग कर दिया जाय तो भग करने की तिथि से ४० दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन के लिए आम चुनाव होंगे और चुनाव सम्पन्न होने की तिथि से ३० दिन के अन्दर डायट अवश्य ही बुलाई जानी चाहिए।

सदन के पदाधिकारी—स्पीकर
(Speaker)

प्रतिनिधि सदन का सबसे प्रमुख पदाधिकारी स्पीकर' होता है। मेइजी संविधान के अन्तर्गत स्पीकर का चुनाव सदन के द्वारा नही होता था। सदन के द्वारा तीन सदस्यो के नाम दिये जाते थे और सम्राट् इनमे से किसी एक को स्पीकर नियुक्त करता था। किन्तु वर्तमान संविधान के अनुच्छेद ५८ द्वारा दोनो सदनो को अपना-अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार दिया गया है। स्पीकर का चुनाव प्रत्येक सदन के आरम्भ मे गुप्त मतदान से हस्ताक्षर किये गये मतपत्रों के आधार पर होता है। यह चुनाव दलीय आधार पर ही किया जाता है। मृत्यु त्यागपत्र या अन्य किसी कारण से स्पीकर का पद रिक्त हो जाने पर नये स्पीकर का चुनाव होगा। स्पीकर के अतिरिक्त सदन मे एक डिप्टी स्पीकर की भी व्यवस्था है, जो कि स्पीकर की अनुपस्थिति मे सदन की बैठको की अध्यक्षता करता है।

सदन के स्पीकर द्वारा प्रमुखतया निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं

(१) अधिवेशन प्रारम्भ होते ही स्पीकर का पहला कार्य यह होता है कि सदन में आवश्यक उपस्थिति (Quorum) है अथवा नही।

(२) वह सदन की बैठको की अध्यक्षता करता है। वह सदन के कार्यों को निश्चित कार्य प्रणाली के अनुसार चलाता और विधेयकों को सम्बन्धित ... के पास भेजता है।

(३) उसका कर्तव्य है कि वह ऐसे विधेयको पर सदन मे विचार न होने दें, जो सदन की सुनिश्चित व्यवस्था के प्रतिकूल हो।

(४) बोलते समय सभी सदस्य अध्यक्ष को सम्बोधित करते हैं। वह सदस्यो के बोलने का क्रम निर्धारित करता है और उन्हे प्रश्न पूछने की अनुमति देता है।

(५) उसे यह अधिकार है कि वह कार्यों का क्रम निर्धारित करें और विवाद पूर्ण विषयो पर अपनी व्यवस्था (Ruling) दें।

(६) वह काम रोको प्रस्ताव प्रस्तुत करने की अनुमति देता है तथा उन्हें नियमित अथवा अनियमित घोषित करता है।

(७) वह इस बात का निर्णय करता है कि किस विषय पर कितने समय तक वादविवाद हो और वही वादविवाद समाप्त करने की आज्ञा देता है।

(८) वह सदस्यो द्वारा दिये गये मतो की गणना करता है, निर्णय घोषित करता है और समान मत आने पर *'निर्णायक मत' (Casting vote) देता है।*

(९) सदन के बाहर वह सदन का प्रतिनिधित्व करता है।

(१०) सदन मे शांति तथा व्यवस्था बनाये रखना उसका विशेष दायित्व है। यदि कोई सदस्य असंसदीय भाषा का प्रयोग करें या सदन के सुनिश्चित नियमो को भग करें या सदन की प्रतिष्ठा को आघात पहुँचावें अथवा स्पीकर की आज्ञा न मानें तो वह उसे चेतावनी दे सकता है। यदि फिर भी वह अनुशासनहीनता का परिचय दें, तो वह उसे अस्थायी रूप से सदन के बाहर भी निकलवा सकता है। अनुच्छेद ५८ के अनुसार इसके लिए उपस्थित सदस्यो के $\frac{2}{3}$ के बहुमत से प्रस्ताव पारित किया जाना आवश्यक है।

(११) यदि सदन मे अव्यवस्था इतनी अधिक फल जाय कि नियन्त्रण रखना कठिन हो, तो वह सदन की कार्यवाही को स्थगित कर सकता है।

(१२) वह सदस्यो के प्रवेश पर नियन्त्रण लगा सकता है, उन्हें सदन के बाहर जाने की आज्ञा दे सकता है और दीर्घाओ (Galleries) को खाली करा सकता है।

(१३) वह सदन की मर्यादा और हितो का रक्षक है और सदन के सम्मान की रक्षा हेतु सभी प्रकार की उचित कार्यवाही कर सकता है।

(१४) वह प्रतिनिधि सदन मे सचिवालय के कामकाज की देखभाल करता है।

जापान के प्रतिनिधि सदन के स्पीकर की स्थिति ग्रेट ब्रिटेन या भारत के स्पीकर के स्थान पर अमरीका प्रतिनिधि सभा के स्पीकर से अधिक मिलती है। वह अमरीकी प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष की भाँति ही अपने दल से त्यागपत्र नही देता है। वह उसका सक्रिय सदस्य रहता है और सदन मे उसके हितों की रक्षा करता है। यानागा ने इस सम्बन्ध मे लिखा है कि 'प्रतिनिधि सदन के अध्यक्ष के रूप में उसकी भूमिका अमरीका की प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष के समान है। सर्वोच्च कानूनी निर्मात्री संस्था के अध्यक्ष के रूप में स्पीकर से अधिकाधिक उचित व्यवहार

(२) वह २५ वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

(३) वह सरकार के अधीन किसी लाभदायक पद पर न हो।

(४) वह पागल अथवा दिवालिया न हो।

(५) वह चुनाव क्षेत्र मे कम से कम तीन मास से रह रहा हो।

(६) वह कानून द्वारा डायट की सदस्यता के अयोग्य घोषित न किया गया हो।

(७) कोई भी व्यक्ति एक साथ दोनो सदनो की सदस्यता प्राप्त नही कर सकता है।

कार्यकाल—अनुच्छेद ४५ के अनुसार प्रतिनिधि सदन का कार्यकाल ४ वर्ष निश्चित किया गया है, परन्तु प्रतिनिधि सदन को समय के पूर्व भग किया जा सकता है। यदि प्रतिनिधि सदन मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास कर दें, तो या तो मन्त्रिमण्डल त्याग पत्र दे देगा या प्रधान मन्त्री सम्राट से १० दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन को भग करके नवीन चुनाव कराने की अपील करेगा। सम्राट प्रधानमन्त्री की अपील पर प्रतिनिधि सदन को भग कर देंगे। यदि प्रतिनिधि सदन भग कर दिया जाय तो भग करने की तिथि से ४० दिन के अन्दर प्रतिनिधि सदन के लिए आम चुनाव होगे और चुनाव सम्पन्न होने की तिथि से ३० दिन के अन्दर डायट अवश्य ही बुलाई जानी चाहिए।

सदन के पदाधिकारी—स्पीकर
(Speaker)

प्रतिनिधि सदन का सबसे प्रमुख पदाधिकारी स्पीकर' होता है। मेइजी सविधान के अन्तर्गत स्पीकर का चुनाव सदन के द्वारा नही होता था। सदन के द्वारा तीन सदस्यों के नाम दिये जाते थे और सम्राट इनमे से किसी एक को स्पीकर नियुक्त करता था। किन्तु वर्तमान सविधान के अनुच्छेद ५८ द्वारा दोनो सदनो को अपना-अपना अध्यक्ष चुनने का अधिकार दिया गया है। स्पीकर का चुनाव प्रत्येक सदन के आरम्भ मे गुप्त मतदान से हस्ताक्षर किये गये मतपत्रों के आधार पर होता है। यह चुनाव दलीय आधार पर ही किया जाता है। मृत्यु त्यागपत्र या अन्य किसी कारण से स्पीकर का पद रिक्त हो जाने पर नये स्पीकर का चुनाव होगा। स्पीकर के अतिरिक्त सदन मे एक डिप्टी स्पीकर की भी व्यवस्था है, जो कि स्पीकर की अनुपस्थिति मे सदन की बैठको की अध्यक्षता करता है।

सदन के स्पीकर द्वारा प्रमुखतया निम्नलिखित कार्य किये जाते हैं

(१) अधिवेशन प्रारम्भ होते ही स्पीकर का पहला कार्य यह होता है कि सदन मे आवश्यक उपस्थिति (Quorum) है अथवा नही।

(२) वह सदन की बैठको की अध्यक्षता करता है। वह सदन के कार्यों को निश्चित कार्य प्रणाली के अनुसार चलाता और विधेयकों को सम्बन्धित समितियों के पास भेजता है।

डायट-शक्तियाँ तथा कार्य

राष्ट्रीय व्यवस्थापिका के रूप में डायट को विधायी, प्रशासनिक वित्तीय और न्यायिक सभी प्रकार की शक्तियाँ प्राप्त हैं, जिनका अध्ययन निम्न रूपों में किया जा सकता है

(१) विधायी शक्तियाँ—अनुच्छेद ४१ के अनुसार डायट राज्य की सत्ता का सर्वोच्च अंग और एकमात्र विधि निर्मात्री संस्था है। इसे नवीन कानूनों के निर्माण और पहले से चले आ रहे कानूनों मे संशोधन परिवर्तन की पूर्ण शक्ति प्राप्त करने के लिए सम्राट की स्वीकृति की भी आवश्यकता नहीं है। इस प्रकार संविधान की सीमाओं मे रहते हुए डायट सम्पूर्ण देश के लिए किसी भी विषय पर कोई भी कानून बनाने की सामर्थ्य रखती है।

इस सम्बन्ध में केवल एक अन्तर के साथ जापान की डायट की स्थिति ब्रिटिश संसद के समान है। ब्रिटेन में लचीला संविधान होने और न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था न होने के कारण ब्रिटिश संसद द्वारा निर्मित किसी भी कानून के अवैधानिक होने का प्रश्न उत्पन्न नहीं होता है। लेकिन जापान का संविधान कठोर है और जापान में न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था भी है। अतः जापान की डायट द्वारा निर्मित ऐसे किसी भी कानून को, जो संविधान की धाराओं के प्रतिकूल हो, सर्वोच्च न्यायालय अवैध घोषित कर सकता है।

कोई भी साधारण विधेयक किसी भी सदन मे प्रस्तावित किया जा सकता है और दोनों सदनों द्वारा पारित हो जाने पर कानून का रूप ग्रहण कर लेता है। लेकिन यदि किसी विधेयक के सम्बन्ध मे दोनों सदनों में उग्र मतभेद हो जाय, तो इस सम्बन्ध में अन्तिम अधिकार प्रतिनिधि सदन को ही प्राप्त होता है। प्रक्रिया यह है कि यदि किसी साधारण विधेयक को प्रतिनिधि सदन पारित कर देता है परन्तु सभासद सदन उसे अस्वीकार कर देता है या ऐसे संशोधन कर देता है जो प्रतिनिधि सदन को मान्य न हो या सभासद सदन उस विधेयक को ६० दिन की अवधि तक अपने पास पड़े रहने देता है, तो दोनों सदनों की संयुक्त समिति दोनों सदनों में कोई समझौता कराने का प्रयत्न करती है लेकिन यदि समिति को इसमें सफलता प्राप्त न हो और प्रतिनिधि सदन उपस्थिति और मतदान मे भाग लेने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से उस विधेयक को दुबारा पास कर दे तो वह कानून का रूप धारण कर लेता है। इसके विपरीत यदि सभासद सदन किसी विधेयक को पास कर दे और प्रतिनिधि सदन उसे अस्वीकार कर दे तो उच्च सदन उस पर पुनर्विचार नहीं कर सकता। इस प्रकार साधारण विधेयकों के सम्बन्ध में सभासद सदन की शक्तियाँ सीमित हैं और इस सम्बन्ध में प्रतिनिधि सदन को निर्णायक स्थिति प्राप्त है। सभासद सदन एक विलम्बकारी सदन ही है और उसके द्वारा ६० दिन के विधेयक को रोक रखा जा सकता है।

और निष्पक्षता की आशा की जाती है, लेकिन वह दलीय हितों की अभिवृद्धि करता है और शासन के विधायी कार्यक्रम को आगे बढाता है।"[1]

सभासद सदन या पार्षद सभा
(The House of Councillors)

रचना (Composition)—सभासद सदन की सदस्य संख्या २५० है, जिसमे से १५० भौगोलिक आधार पर चुने जाते हैं अर्थात् उन ४६ निर्वाचन जिलो से चुने जाते हैं, जिनमे देश को विभाजित किया जाता है और जो स्थानीय प्रशासनिक क्षेत्रो (Prefectures) के अनुरूप होते है। शेष १०० सदस्य सम्पूर्ण राष्ट्र द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। किसी एक स्थानीय प्रशासनिक क्षेत्र को मिलने वाले स्थानो की संख्या मोटे तौर पर उसकी जनसंख्या के अनुपात मे २ से लेकर ८ तक होती है। प्रत्येक मतदाता को २ मतो के प्रयोग का अधिकार होता है, एक स्थानीय निर्वाचन क्षेत्र के उम्मीदवार के लिए और दूसरा राष्ट्रीय क्षेत्र के उम्मीदवार के लिए।

सदस्यों के लिए विशेषताएँ—प्रतिनिधि सदन और सभासद सदन के सदस्यो की योग्यताएँ समान है अन्तर केवल यह है कि सदन के लिए उम्मीदवारो की आयु २५ के बजाय ३० वर्ष होनी चाहिए।

कार्य काल—सभासद सदन एक अर्द्ध स्थायी सदन है जिसका पूर्ण रूप से कभी भी विघटन नही होता। इसके सदस्य ६ वर्ष के लिए निर्वाचित किये जाते हैं लेकिन आधे सदस्य प्रति ३ वर्ष के पश्चात् अवकाश ग्रहण कर लेते हैं और उनके स्थान पर नये सदस्यो का निर्वाचन होता है।

सभापति—सभासद सदन को अपना सभापति तथा उपसभापति चुनने का अधिकार है। सभापति सदन की अध्यक्षता करता है और उनकी अनुपस्थिति मे उपसभापति सदन की अध्यक्षता करता है। सभापति सदन म अनुशासन तथा व्यवस्था बनाये रखता है, लेकिन उसे यह अधिकार नही है कि वह किसी सदस्य को सदन से बाहर निकाल दे। ऐसा केवल उपस्थिति और मत देने वाले सदस्यो के दो तिहाई बहुमत से पारित एक प्रस्ताव के आधार पर ही किया जा सकता है। वह प्रस्तावो तथा विधेयकों पर मतदान कराता और उनके परिणामो की घोषणा करता है। किसी विधेयक पर पक्ष तथा विपक्ष म बराबर मत आने पर वह अपने निर्णायक मत का प्रयोग करता है।

1 The role of the presiding officer of the House of Representatives is very much like that of his counter part in the United States Congress As a presiding officer of the highest law making organ the speaker is naturally expected to be as fair and impartial as possible but he functions to advance the interests of his party and aids the government s legislative programme C Yanaga *Japanese People and Politics* pp 180-181

डायट-शक्तियाँ तथा कार्य

राष्ट्रीय व्यवस्थापिका के रूप मे डायट को विधायी, प्रशासनिक वित्तीय और न्यायिक सभी प्रकार की शक्तिया प्राप्त हैं, जिनका अध्ययन निम्न रूपो मे किया जा सकता है

(१) विधायी शक्तिया—अनुच्छेद ४१ के अनुसार डायट राज्य की सत्ता का सर्वोच्च अग और एकमात्र निधि निर्मात्री सस्था है। इसे नवीन कानूनो के निर्माण और पहले से चले आ रहे कानूनो मे सशोधन परिवतन की पूण शक्ति प्राप्त करने के लिए सम्राट की स्वीकृति की भी आवश्यकता नही है। इस प्रकार सविधान की सीमाओ मे रहते हुए डायट सम्पूण देश के लिए किसी भी विषय पर कोई भी कानून बनाने की सामथ्य रखती है।

इस सम्ब ध मे केवल एक अ तर के साथ जापान की डायट की स्थिति ब्रिटिश ससद के समान है। ब्रिटेन मे लचीला सविधान होने और न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था न होने के कारण ब्रिटिश ससद द्वारा निर्मित किसी भी कानून के अवैधानिक होने का प्रश्न उत्पन्न नही होता है। लेकिन जापान का सविधान कठोर है और जापान म न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था भी है। अत जापान की डायट द्वारा निर्मित ऐसे किसी भी कानून को, जो सविधान की धाराओ के प्रतिकूल हो, सर्वोच्च यायालय अवैध घोषित कर सकता है।

कोई भी साधारण विधेयक किसी भी सदन मे प्रस्तावित किया जा सकता है और दोनो सदनो द्वारा पारित हो जाने पर कानून का रूप ग्रहण कर लेता है। लेकिन यदि किसी विधेयक के सम्ब ध मे दोनो सदनो मे उग्र मतभेद हो जाय, तो इस सम्ब ध मे अन्तिम अधिकार प्रतिनिधि सदन को ही प्राप्त होता है। प्रक्रिया यह है कि यदि किसी साधारण विधेयक को प्रतिनिधि सदन पारित कर देता है परन्तु सभासद सदन उसे अस्वीकार कर लेता है या ऐसे सशोधन कर देता है जो प्रतिनिधि सदन को मान्य न हो या सभासद सदन उस विधेयक का ६० दिन की अवधि तक अपने पास पडे रहने देता है, तो दोनो सदनो की सयुक्त समिति दोनो सदनो मे कोई समझौता कराने का प्रयत्न करती है लेकिन यदि समिति को इसमे सफलता प्राप्त न हो और प्रतिनिधि सदन उपस्थिति और मतदान म भाग लेने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से उस विधेयक को दुबारा पास कर दे, तो वह कानून का रूप धारण कर लेता है। इसके विपरीत यदि सभासद सदन किसी विधेयक को पास कर दे और प्रतिनिधि सदन उसे अस्वीकार कर दे तो उच्च सदन उस पर पुनर्विचार नही कर सकता। इस प्रकार साधारण विधेयको के सम्ब ध म सभासद सदन की शक्तियाँ सीमित हैं और इस सम्ब ध मे प्रतिनिधि सदन को निर्णायक स्थिति प्राप्त है। सभासद सदन एक विलम्बकारी सदन ही है और उसके द्वारा ६० दिन क विधेयक को रोक रखा जा सकता है।

(२) कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियाँ—न केवल विधि निर्माण, वरन् कार्यपालिका क्षेत्र में भी डायट को महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं। इस सम्बन्ध में उसका सर्वप्रथम और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य प्रधानमन्त्री का चुनाव करना है। अनुच्छेद ६ के अनुसार सम्राट डायट द्वारा निर्देशित व्यक्ति को ही प्रधानमन्त्री नियुक्त करता है। 'प्रधानमन्त्री का चुनाव डायट का विशेष अधिकार कहा जा सकता है, क्योंकि अन्य संसदीय प्रजातन्त्रों में राष्ट्रीय व्यवस्थापिका को इस प्रकार का अधिकार प्राप्त नहीं होता है।'[1]

केबीनेट के अधिकांश सदस्य डायट से ही नियुक्त किये जाते हैं और केबीनेट अपने सभी कार्यों के लिए डायट के प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी होती है। डायट के सदस्य मन्त्रियों से प्रश्न पूछने, उनकी नीतियों का स्पष्टीकरण माँगने और आलोचन करने के माध्यम से प्रशासन पर नियन्त्रण रखते हैं। उसके अतिरिक्त प्रतिनिधि सदन अविश्वास का प्रस्ताव पास कर डायट को पद त्याग करने के लिए बाध्य कर सकता है।

डायट न केवल एक विधायी और विचारात्मक निकाय, वरन् अमरीकी कांग्रेस की सीनेट के समान एक शोध संस्था भी है और अनुच्छेद ६२ के अनुसार इसे प्रशासनिक शाखा की जाँच करने की शक्ति प्राप्त है। डायट की कुछ समितियों ने प्रशासनिक भ्रष्टाचार आदि की जाँच में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है और डायट शासन कार्यों की जाँच द्वारा प्रशासनिक गतिविधियों पर अपना नियन्त्रण बनाये रखने में असमर्थ हुई है।[2] इन सबके अतिरिक्त, अनुच्छेद ७३ के अनुसार केबीनेट के लिए सन्धियों पर डायट की स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक है और डायट सन्धियों को स्वीकार या अस्वीकार करके वैदेशिक क्षेत्र में अपने प्रभाव का उपयोग कर सकती है।

इस प्रकार डायट दिन प्रतिदिन के प्रशासन की निगरानी रखती है और उसे प्रशासन पर अन्तिम नियन्त्रण भी प्राप्त है।

(३) वित्तीय शक्तियाँ—अनुच्छेद ८३ के अनुसार, 'राष्ट्रीय वित्त के प्रशासन की शक्ति डायट को ही प्राप्त है'[3] और यह डायट की निश्चित रूप में एक महत्त्वपूर्ण शक्ति है। मन्त्रिमण्डल का यह दायित्व है कि वह प्रत्येक वर्ष के लिए आय

1 This is a somewhat extra ordinary power of the national legislature For neither in Britain nor in any other parliamentary democracy has the parliament as such been given any direct function in choice of the Prime Minister", A K Mukhergee *Japanese Political System*

2 'Each House may unduct investigations in relation to government and may demand the presence and testimony of witnesses and the production of records —*Article* 62

3 The Diet is the sole authority to administer national finances —*Article* 83

व्यय मंत्रिमंडल डायट के समक्ष उसके विचार तथा निर्णय हेतु प्रस्तुत करे। डायट की स्वीकृति के बिना मंत्रिमण्डल आय-व्यय सम्बन्धी कोई कार्य नहीं कर सकता। मंत्रिमण्डल का अधिकार है कि वह आवश्यकता पड़ने पर संसद की संचित निधि से व्यय कर सके, किन्तु इस प्रकार किये गये व्यय पर डायट से पश्चात् स्वीकृति लेना आवश्यक है।

यहाँ व्यय के सम्बन्ध में विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि जापान में व्यय की सभी मदें डायट द्वारा स्वीकृत की जाती हैं जबकि इंग्लैण्ड में ऐसी अनेक मदें होती हैं जिन पर पार्लियामेण्ट की स्वीकृति प्राप्त करना आवश्यक नहीं समझा जाता। ऐसे व्यय 'राज्य पर भारित व्यय' कहलाते हैं। जापान में 'राज्य पर भारित व्यय' की कोई व्यवस्था नहीं है।

इसके अतिरिक्त सम्राट और उसके परिवार के सभी व्यक्तियों का व्यय डायट द्वारा नियन्त्रित और स्वीकृत किया जाता है। अनुच्छेद ८८ के अनुसार राज परिवार की समस्त सम्पत्ति राज्य से सम्बद्ध होगी और राज परिवार के सभी व्यय डायट द्वारा स्वीकृत किये जायेंगे। इतना ही नहीं, डायट की स्वीकृति के बिना राजवंश का कोई भी व्यक्ति न तो किसी प्रकार की सम्पत्ति ग्रहण कर सकता है और न दे ही सकता है।

संविधान के द्वारा इस बात की व्यवस्था की गयी है कि डायट राज्य की समस्त आर्थिक व्यवस्था पर नियन्त्रण रखें। इस सम्बन्ध में अनुच्छेद ९० और ९१ महत्त्वपूर्ण है। अनुच्छेद ९० के अनुसार राज्य के राजस्व और व्यय की जाँच प्रतिवर्ष एक 'जाँच समिति' (Bourd of Audit) द्वारा होगी और उसकी रिपोर्ट केबीनेट के द्वारा डायट के सम्मुख प्रस्तुत की जायगी। अनुच्छेद ९१ में कहा गया है कि 'केबीनेट नियमित मध्यान्तरों में तथा कम से कम वार्षिक रूप में डायट को राष्ट्रीय वित्त की स्थिति की रिपोर्ट देती रहेगी।'

इस प्रकार वित्तीय क्षेत्र में डायट की शक्तियाँ अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं और समस्त वित्तीय व्यवस्था उसके नियन्त्रण और निरीक्षण के अधीन है।

(४) *संविधान संशोधन की शक्ति*—अनुच्छेद ९६ के अनुसार संविधान में संशोधन कार्य में भी डायट की भूमिका बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण है। संशोधन सम्बन्धी कोई भी प्रस्ताव दोनों सदनों में दो तिहाई या उससे अधिक सदस्यों के मत से डायट में ही प्रस्तुत किया जा सकता है। ऐसा प्रस्ताव बाद में जनता के समक्ष उसकी स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। यदि उस प्रस्ताव को एक विशिष्ट निर्वाचन या लोकनिर्णय में कुल मतदान करने वाले मतदाताओं के बहुमत का समर्थन प्राप्त हो जाय, तो सम्राट उस संशोधन को तुरन्त ही संविधान का अभिन्न अंग घोषित कर देते हैं। इस प्रकार संविधान में संशोधन सम्बन्धी किसी भी प्रस्ताव को डायट में ही प्रारम्भ किया जा सकता है।

(५) न्यायिक शक्ति न्यायिक क्षेत्र मे डायट को महाभियोग की सुनवाई करने सम्ब धी महत्वपूण शक्ति प्राप्त है। किसी यायाधीश पर महाभियोग लापरवाही बरतने, भ्रष्टाचार तथा न्यायालय की मर्यादा को हानि पहुचाने वाले आचरण के आधार पर लगाया जा सकता है। इस सम्ब ध मे अनुच्छेद ६४ द्वारा निर्धारित प्रक्रिया यह है कि किसी न्यायाधीश पर आरोप लगाने का काय एक दोषारोपण समिति (Indictment Committee) करती है, जिसम डायट के दोनो सदनो क बराबर की सख्या मे सदस्य होते हैं और आरोपो की जाच एक 'महाभियोग यायालय' (Impeachment Court) द्वारा की जाती है जिसकी स्थापना डायट द्वारा की जाती है और जिसमे दोनो सदनो के सदस्य सम्मिलित होते हैं। वतमान समय मे महाभियाग यायालय म कुल १४ सदस्य है। कोई भी सदस्य एक ही समय मे महाभियोग न्यायालय तथा दोषारोपण समिति का सदस्य नही हो सकता है।

(६) डायट सर्वोच्च राष्ट्रीय मच (National Forum)—डायट के द्वारा सर्वोच्च राष्ट्रीय मच के रूप म भी काय किया जाता है। एडरथ बक्स क शब्दो मे, 'डायट का एक अत्य त महत्वपूण काय राष्ट्रीय मच के रूप में काय करना है। इसमें जनता के प्रतिनिधि अपने विचार व्यक्त करते हैं और जनता का शासन तथा विरोधी दल के उद्देश्यो से प्रशिक्षित करते हैं।'[1] डायट के वाद विवाद जापानी जनता की राजनीतिक शिक्षा के महत्त्वपूण साधन है। डायट जन अस तोप की अभिव्यक्ति और उसे दूर करने के साधन के रूप मे भी काय करती है। यह काय डायट को याचिका' (Petition) देकर किया जाता है। याचिका पर सम्बन्धित सदन की समिति विचार करती है और यदि समिति उचित समझें तो सदन उस पर विचार करता है। सदन के द्वारा याचिका आवश्यक कायवाही हेतु कैबीनेट को भेजी जा सकती है। कैबीनेट इन याचिकाओ पर किये गये काय का प्रतिवेदन सदन को देती है।

(७) अ य शक्तिया—उपरोक्त के अतिरिक्त डायट का कुछ अन्य अधिकार भी प्राप्त हैं। सविधान के अनुच्छेद २ के अनुसार डायट का राजसिंहासन के उत्तराधिकार विषयक कानून बनाने की भी शक्ति प्राप्त है।

डायट को निर्वाचन सम्बन्धी भी कुछ शक्तियाँ प्राप्त हैं। प्रधानम त्री का निर्वाचन करने के अतिरिक्त दोनो सदन कानून द्वारा अपने सदस्यो और उनके निर्वाचको की योग्यताओ का निणय करते हैं, परन्तु इस सम्बन्ध म उनके द्वारा जाति धम, लिंग, सामाजिक स्तर, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शिक्षा, सम्पत्ति और आय के

1 One of the most significant functions of the Diet is to serve as a national forum in which popular opinion is expressed and in which people are educated as to both government and opposition objectives —Adradth W Burks *The Government of Japan* p 123

आधार पर किसी प्रकार का भेद भाव नहीं किया जा सकता है। अपने सदस्यों की योग्यता सम्बन्धी विवादों का निर्णय प्रत्येक सदन स्वयं करता है और उपस्थित सदस्यों के दो तिहाई या इससे अधिक बहुमत से प्रस्ताव पास कर किसी सदस्य को उसके स्थान से वंचित किया जा सकता है। निर्वाचन मण्डलों और मतदान की पद्धति आदि से सम्बन्ध रखने वाले अन्य मामलों का निर्धारण डायट के कानून द्वारा ही होता है।

इस प्रकार डायट राज्य की शक्ति का सर्वोच्च अंग है और जापान की राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत उसे लगभग वही स्थिति प्राप्त है जो ब्रिटेन की राजनीतिक व्यवस्था में ब्रिटिश संसद की है।

प्रतिनिधि सदन और सभासद् सदन—एक तुलना

सन् १८८९ ई० के मेइजी संविधान के अन्तर्गत राष्ट्रीय व्यवस्थापिका के दो सदनों—प्रतिनिधि सभा और पीयर सभा (House of Peers) की शक्तियाँ लगभग समान थीं परन्तु १९४७ के नवीन संविधान के अन्तर्गत प्रतिनिधि सदन को विशिष्ट स्थिति प्रदान की गयी है और उसे सभासद सदन की तुलना में व्यापक अधिकारों से विभूषित किया गया है। वास्तव में इस प्रकार की व्यवस्था संसदीय लोकतन्त्र की सुस्थापित परम्पराओं के नितान्त अनुकूल है। तुलनात्मक रूप में इन दोनों सदनों की शक्तियों का अध्ययन निम्न प्रकार से किया जा सकता है

साधारण विधेयकों के सम्बन्ध में—साधारण विधेयक डायट के किसी भी सदन में प्रस्तावित किये जा सकते हैं, परन्तु उनके सम्बन्ध में निर्णायक स्थिति प्रतिनिधि सदन को प्राप्त है। यदि किसी साधारण विधेयक को प्रतिनिधि सदन पारित कर दें और सभासद सदन उसे अस्वीकार कर दें या उसमें ऐसे संशोधन करदें जो प्रतिनिधि सदन को स्वीकार्य न हों तो संयुक्त सम्मेलन समिति दोनों सदनों में समझौता कराने का प्रयत्न करती है। लेकिन यदि यह समिति अपने कार्य में असफल रहें और निम्न सदन उसी विधेयक को पुनः उपस्थित सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पारित करदें, तो वह कानून बन जाता है। यदि प्रतिनिधि सदन द्वारा पास किये गये विधेयक पर सभासद सदन ६० दिन के अन्दर अपना निर्णय न भेजें तो प्रतिनिधि सदन इसका आशय अस्वीकृति समझेगा और उपरोक्त विधि से अकेले ही उसे पास कर देगा। किन्तु यदि सभासद सदन द्वारा पास किये गये विधेयक को प्रतिनिधि सदन अस्वीकृत करदे, तो उस पर सभासद सदन दुबारा विचार नहीं कर सकता है। इस प्रकार विधि निर्माण में अंतिम अधिकार प्रतिनिधि सदन को प्राप्त है और सभासद सदन एक विलम्बकारी सदन मात्र है।

वित्तीय क्षेत्र में—वित्तीय क्षेत्र में तो सभासद सदन की स्थिति अत्यन्त निर्बल है। अनुच्छेद ६० के अनुसार बजट और अन्य वित्तीय प्रस्ताव प्रतिनिधि सदन में ही प्रस्तावित किये जा सकते हैं। बजट या अन्य वित्त विधेयक निम्न सदन द्वारा पारित किये जाने के पश्चात सभासद सदन के सम्मुख रखा जाता है। यदि सभासद सदन का निर्णय प्रतिनिधि सदन के निर्णय से भिन्न हो और दोनों सदनों की संयुक्त समिति

भी कोई समझौता न करा सके अथवा ३० दिन की अवधि तक सभासद सदन उस पर कोई निणय न ले सके, तो प्रतिनिधि सदन की इच्छा ही मान्य होगी और विधेयक डायट द्वारा पास किया गया समझा जायगा। ऐसे विधेयक को प्रतिनिधि सदन द्वारा दुबारा पास किये जाने की आवश्यकता नही है। इस प्रकार वित्त विधेयकों के सम्बन्ध मे सभासद सदन को केवल ३० दिन की विलम्बकारी शक्ति प्राप्त है।

धारा ६१ के अनुसार सन्धियो के अनुमोदन के सम्बन्ध में भी वित्तीय विधेयकों के समान ही प्रक्रिया अपनाई गयी है अर्थात मतभेद की स्थिति मे, सन्धियो पर भी प्रतिनिधि सदन का विचार निर्णायक होता है और सभासद सदन ३० दिन तक विलम्ब की शक्ति का प्रयोग कर सकता है। सन् १९६० मे जापान और अमेरिका के बीच की गयी 'पारस्परिक सहयोग और सुरक्षा सन्धि' प्रतिनिधि सदन द्वारा १९ मई को स्वीकार कर ली गयी, किन्तु सभासद् सदन १९ जून तक इस स्वीकार करने मे असफल रहा। अत ३० दिन बीत जाने पर सभासद सदन की स्वीकृति के बिना ही यह डायट द्वारा स्वीकृत मान ली गयी।

प्रधानमन्त्री के निर्वाचन के विषय में—प्रधानमन्त्री के निर्वाचन के सम्बन्ध में भी सभासद सदन की स्थिति प्रतिनिधि सदन की तुलना मे हीन है। यदि प्रधान मन्त्री के निर्वाचन पर दोनो सदनो मे असहमति हो जाती है और सयुक्त समिति कोई समझौता नही करा पाती अथवा प्रतिनिधि सदन किये गये निणय के पश्चात् १० दिन के अन्दर सभासद सदन कोई निणय करने मे असमर्थ रहता है, तो प्रतिनिधि सदन का निणय ही डायट का निणय समझा जाता है। प्रधानमन्त्री अनिवायत प्रतिनिधि सदन मे से ही होता है और केबीनेट के भी अधिकाश सदस्य प्रतिनिधि सदन मे से ही होते हैं।

केबीनेट पर नियन्त्रण के सम्बन्ध में—केबीनेट के उत्तरदायित्व के सम्बन्ध मे भी प्रतिनिधि सभा की तुलना मे सभासद् सदन गौण है। सभासद् सदन के द्वारा केबीनेट से प्रश्न पूछने, स्पष्टीकरण प्राप्त करने और आलोचना करने का काय तो किया जा सकता है किन्तु केबीनेट के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर उसे पदच्युत करने का कार्य प्रतिनिधि सदन ही कर सकता है। व्यवहार मे केबीनेट प्रतिनिधि सभा के ही प्रति उत्तरदायित्व रखती है।

सविधान मे सशोधन महाभियोग और जाच समितियाँ नियुक्त करने आदि के सम्बन्ध मे दोनो सदनो की शक्तिया समान हैं। सशोधन सम्बन्धी किसी भी प्रस्ताव पर दोना सदनो के दो तिहाई बहुमत की स्वीकृति आवश्यक है। इसी प्रकार न्यायाधीशों के विरुद्ध महाभियोग की सुनवाई के लिए जो 'महाभियोग न्यायालय' स्थापित किया जाता है, उसमे दोनो सदनो के सदस्य बराबर की सख्या मे होते हैं। प्रशासनिक कायवाही की जाँच और छान बीन करने के लिए दोनों ही सदन जाँच समितियों की नियुक्ति कर सकते हैं।

वस्तुस्थिति यह है कि विधायी प्रशासनिक और वित्तीय क्षेत्रो । सभासद सदन की तुलना मे प्रतिनिधि सदन की स्थिति बहुत शक्तिशाली है । प्रतिनिधि सदन को डायट का मुख्य तथा सभासद् सदन को डायट का गौण सदन कहा जा सकता है ।

यदि अन्य देशो के उच्च सदनो से सभासद सदन की तुलना की जाय, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि केवल कुछ अन्तर के साथ जापान का सभासद सदन इगलैण्ड की लार्डसभा या भारत की राज्यसभा के ही समान है और अमरीकी सीनेट की तुलना म उसकी शक्तियाँ निश्चित रूप से कम हैं । भारत, ब्रिटेन और जापान इन सभी देशो मे वित्तीय और अवित्तीय विषयो पर कानून निर्माण मे द्वितीय सदन एक विलम्बकारी सदन ही है और अन्तिम निर्णय की शक्ति प्रथम सदन मे निहित है । तीनो ही देशो मे कार्यपालिका पर भी अन्तिम नियन्त्रण प्रथम सदन के ही द्वारा रखा जाता है । जापान म सभासद सदन की स्थिति गौण होने पर भी इस सदन की उपयोगिता है और जापान की राष्ट्रीय राजनीति मे सभासद् सदन के सदस्यो को उचित सम्मान प्राप्त है ।

डायट की समिति पद्धति
(Committee System of the Diet)

अन्य लोकतन्त्रीय देशो की भाति ही जापान म भी समिति पद्धति का बहुत अधिक महत्त्व है, क्योकि इन समितियो के माध्यम से डायट को विशेषज्ञो की मन्त्रणा प्राप्त हो जाती है और डायट का कार्य अपेक्षाकृत हल्का तथा सरल हो जाता है । वर्तमान समय म ४ प्रकार की समितिया हैं

१ स्थायी समितिया (Standing Committees),
२ विशेष समितिया (Special Committees),
३ सयुक्त सम्मेलन समितिया (Joint Conference Committees),
४ सयुक्त विधायी समिति (Joint Legislative Committees) ।

(१) स्थायी समितिया—पहले स्थायी समितियो की सख्या २२ थी, परन्तु १९५५ मे कम करके इनकी सख्या १६ कर दी गयी । वर्तमान काल मे निम्नलिखित १६ विषयो से सम्बन्धित ये समितिया इस प्रकार हैं

१ मन्त्रिमण्डल समिति, २ स्थानीय शासन समिति, ३ न्यायिक समिति, ४ विदेशी मामलों की समिति, ५ वित्त समिति, ६ शिक्षा समिति ७ सामाजिक तथा श्रमिक मामलो की समिति, ८ कृषि वन तथा मत्स्य पालन व्यवसाय सम्बन्धी समिति ९ बजट समिति, १० परिवहन समिति, ११ सचार समिति, १२ निर्माण समिति, १३ लेखा परीक्षण समिति, १४ सदन का सचालन समिति, १५ अनुशासन समिति, १६ व्यापार एव उद्योग समिति ।

स्थायी समितियो के सदस्यो की नियुक्ति सम्बन्धित सदन के अध्यक्ष द्वारा उस अनुपात म की जाती है जिस अनुपात म विभिन्न दल सदन मे हो । प्रत्येक स्थायी समिति के सदस्यो की सख्या २० और ३० के बीच मे होती है, लेकिन दोनो

सदनो की बजट समिति की सदस्य सख्या इससे अधिक है। प्रत्येक समिति का अध्यक्ष सदन के द्वारा ही चुना जाता है। सदन के अध्यक्ष द्वारा विधेयक समिति के पास भेज दिया जाता है। समितियाँ विधेयक पर गम्भीरता के साथ और पूर्ण विचार करती हैं। इनके द्वारा जनता की गवाही और विशेषज्ञो की सलाह भी ली जा सकती है। समितियों मे निर्णय बहुमत से लिये जाते हैं और 'टाई' पडने की स्थिति मे सदन के अध्यक्ष को निर्णायक मत देने का अधिकार है। अमेरिका की भाँति ही जापान मे भी समितियाँ बहुत शक्तिशाली हैं और जिन विधेयको को वे अनुचित, अनुपयोगी या आपत्तिजनक समझें, उनके द्वारा इन्हे समाप्त किया जा सकता है।

(२) विशेष समितियाँ—ये समितिया तदर्थ (Adhoc) होती हैं और इनका गठन किसी विशेष कार्य को करने के लिए किया जाता है। समिति के सदस्यों की नियुक्ति सदन के अध्यक्ष द्वारा की जाती है और समिति स्वय अपने सदस्यों मे से एक अध्यक्ष चुनती है। समिति मे सभी निर्णय बहुमत से किये जाते हैं और 'टाई' पडने अर्थात बराबर मत आने की स्थिति मे अध्यक्ष को निर्णायक मत के प्रयोग का अधिकार होता है।

(३) सयुक्त सम्मेलन समिति—जब किसी विधेयक, किसी सन्धि या प्रधान-मन्त्री के चुनाव के प्रश्न पर दोनो सदनो मे मतभेद उत्पन्न हो जाय, तो मतभेद दूर करने के लिए दोनो सदनो की एक 'सयुक्त सम्मेलन समिति' स्थापित की जाती है। इस समिति मे प्रत्येक सदन के १० १० सदस्य अर्थात कुल २० सदस्य होते हैं। दोनो सदनो के सदस्य अलग अलग अपना एक 'चेयरमैन' या अध्यक्ष चुनते हैं और ये दोनो व्यक्ति क्रम क्रम से समिति की बैठको की अध्यक्षता करते हैं। यदि समिति मे पूर्ण सहमति हो जाय, तो समिति की रिपोर्ट दोनो सदनो मे प्रस्तुत कर दी जाती है। यदि समिति मे पूर्ण सहमति न हो तो दोनो सदनो के सदस्य अलग अलग अपने-अपने सदनों को रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं।

(४) संयुक्त विधायी समिति—इस समिति मे कुल १८ सदस्य होते हैं जिनमे से १० सदस्य प्रतिनिधि सदन और ८ सदस्य सभासद सदन के होते हैं। प्रत्येक सदन इस समिति के लिए अपने अपने सदस्य चुनता है और प्रत्येक सदन के सदस्य अपने मे से समिति का एक एक अध्यक्ष चुनते हैं। ये दोनो अध्यक्ष क्रम क्रम से समिति की बैठको की अध्यक्षता करते हैं। समिति का कार्य कानून निर्माण का कार्यक्रम तैयार करना और प्रमुख प्रस्तावों पर विचार करना है। यह समिति दलीय प्रभाव से मुक्त रहते हुए इस सम्बन्ध मे मन्त्रिमण्डल और दोनो सदनो को उपयुक्त सुझाव देती है। यह समिति कानून बनाने की नयी विधियो, दोनों सदनो की पारस्परिक समस्याओ कानून को सरल बनाने के उ[illegible] अन्य सम्बन्धित प्रश्नो पर विचार करती तथा सुझा[illegible]।

यद्यपि समितियाँ डायट की विधि निर्माण की प्रक्रिया का अनिवार्य अंग हैं, किन्तु फिर भी जापान की समिति व्यवस्था की कड़ी आलोचना की जाती है। सर्व प्रथम, यह कहा जाता है कि प्रत्येक सदन में समितियों की संख्या बहुत अधिक है परिणामत: राष्ट्र के मामले छोटे छोटे खण्डों में विभक्त हो जाते हैं और उनके सम्बन्ध में जिस प्रकार का एकीकृत दृष्टिकोण और कार्य किया जाना चाहिए वैसा सम्भव नहीं हो पाता। द्वितीय, यह कहा जाता है कि समितियों की शक्तियाँ बहुत अधिक हैं और विधेयकों की परीक्षा तथा जाँच पड़ताल आदि कार्य समितियों में होने से अन्य विधायक ब्योरों तथा अन्य प्रासंगिक सूचनाओं से अनभिज्ञ रह जाते हैं। विधेयक के भाग्य का निर्णय समितियों में ही हो जाने से डायट के सदस्यों में विधेयक के प्रति कोई उत्सुकता नहीं रहती और सदन में होने वाले वाद विवाद निस्तेज तथा प्रभावहीन हो जाते हैं। तृतीय यह भी कहा जाता है कि समितियाँ दृष्टिकोण विकसित करने के बजाय विशेष हितों और वर्गीय स्वार्थों की शिकार हो जाती हैं। इससे स्वस्थ दृष्टिकोण का विकास रुक जाता है। यानागा के द्वारा विशेषतया इसी आधार पर समितियों की आलोचना की गयी है। अन्त में, यह कहा जाता है कि चूँकि स्थायी समितियाँ प्राय: मन्त्रालयों के अनुरूप होती हैं, अतः दोनों में निकट सम्पर्क स्थापित हो जाता है जो कार्यपालिका की शक्तियों को बहुत बढ़ाने वाला सिद्ध होता है। काहिन का विचार है कि "विभिन्न मन्त्रालयों और एजेन्सियों से घनिष्ठ सम्बन्ध होने के कारण समितियाँ उन्मुक्त वाद विवाद का स्थल बनने के बजाय विभिन्न मन्त्रालयों और एजेन्सियों के हितों की वकालत करने वाली संस्थाएँ बनकर रह गयी हैं।"[1]

कानून निर्माण की प्रक्रिया
(Law Making Procedure)

जापान में विधेयकों का वर्गीकरण लगभग ब्रिटेन के समान ही किया गया है। विधेयक दो प्रकार के होते हैं—साधारण विधेयक तथा वित्त विधेयक। जो साधारण विधेयक मन्त्रियों द्वारा सदन में प्रस्तुत किये जाते हैं, उन्हें 'सरकारी विधेयक' कहा जाता है। जो विधेयक निजी सदस्यों (सदन के सदस्य, लेकिन मन्त्री नहीं) के द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, उन्हें निजी सदस्य विधेयक कहा जाता है। जापान में अधिकांश विधेयक मन्त्रियों द्वारा ही प्रस्तुत किये जाते हैं क्योंकि मन्त्रियों की सहायता के लिए 'विधायी ब्यूरो' (Bureau of legislation) तथा विशेषज्ञ होते हैं और उनकी सहायता से विधेयक सरलता से तैयार किये जा सकते हैं। सरकारी विधेयकों के ही सदन द्वारा स्वीकृत होने के अधिक अवसर रहते हैं। सभी वित्त विधेयक मन्त्रियों द्वारा ही प्रस्तावित किये जाते हैं।

---

1 Kahin G M *Major Governments of Asia* p 192

(१) विधेयक प्रस्तावित करना (Introduction of the Bill)—वित्त विधेयक प्रतिनिधि सदन म ही प्रस्तावित किये जा सक्ते हैं किन्तु साधारण विधेयक किसी भी सदन मे प्रस्तावित किये जा सकते हैं। सरकारी विधेयको (मन्त्रियो द्वारा प्रस्तावित किये जाने वाले विधेयको) की सूचना दोनो सदनो के अध्यक्षा को पहले ही भेज दी जाती है। पहले सूची उस सदन के अध्यक्ष को भेजी जाती है, जिसम विधेयक प्रस्तावित होना हो उसके बाद ५ दिन के भीतर वह सूची दूसरे सदन का भी भेज दी जाती है। निजी सदस्य द्वारा विधेयक पेश किये जाने के लिए प्रतिनिधि सदन म उसे कम से कम २० और सभासद सदन म कम से कम १० सदस्यो का लिखित समथन प्राप्त होना आवश्यक है। डायट की विभिन्न समितियो और राजनीतिक दलों की 'शोध समितिया' (Research Committees) भी विधेयक प्रस्तुत कर सकती हैं।

(२) समिति स्तर (Committee stage)—विधेयक अध्यक्ष को प्राप्त होने के बाद उसकी प्रतिया सदस्यो मे बाँट दी जाती हैं और विधेयक को उपयुक्त समिति के पास भेज दिया जाता है। समिति के द्वारा विधेयक पर पूणता और गम्भीरता के साथ विचार किया जाता है। समिति मन्त्रियो, लोक सेवा के पदाधिकारियो या जनता मे से किन्ही व्यक्तियो को विधेयक पर प्रश्न पूछने क लिए बुला सकती है। विधेयक से प्रभावित होने वाले पक्ष अपनी ओर से उपस्थित होकर भी विधेयक पर विचार व्यक्त कर सकते हैं।

(३) प्रतिवेदन स्तर (Report stage)—समिति का अध्यक्ष निश्चित तिथि को सदन की पूण बैठक के सम्मुख समिति की रिपोट प्रस्तुत करता है। यदि समिति के सदस्यो म विधेयक के सम्बन्ध मे मतभेद हैं तो अल्पमत की रिपोट अलग से प्रस्तुत की जाती है। इस समय विधेयक पर पूण वाद-विवाद होता है और विधेयक पर सशोधन भी रखे जा सकते हैं। वित्त विधेयक पर प्रतिनिधि सदन मे ५० सदस्यो और सभासद् सदन मे कम से कम २० सदस्यो द्वारा सशोधन रखे जा सकते हैं। साधारण विधेयकों पर प्रतिनिधि सदन मे २० सदस्यो और सभासद सदन मे १० सदस्यो द्वारा ही सशोधन रखा जा सकता है। सदन के अन्तगत वादविवाद मे सभी दलो को विचार व्यक्त करने का पूरा अवसर दिया जाता है। इस प्रकार का वादविवाद पूण हो जाने के पश्चात् विधेयक पर मतदान होता है। सदन मे राजनीतिक दलो का अपने अपने दल के सदस्यो पर कठोर नियन्त्रण होता है और इसीलिए मतदान दलीय आधार पर ही होता है। प्राय सदन मे मतो की गिनती विधेयक के समथको को खडा करके की जाती है। यदि मतो म बहुत कम अन्तर हो, तो उपस्थित सदस्यो का कम से कम पाँचवाँ भाग गुप्त मतदान की माँग कर सकता है। उस समय मतदान मतपत्र द्वारा होता है।

विधेयक दूसरे सदन में—एक सदन द्वारा विधेयक पारित किये जान के बाद सदन का अध्यक्ष उसे अपने हस्ताक्षर से दूसरे सदन म भेज देता है। दूसर सदन म

विधेयक को पहले सदन के ही समान सभी अवस्थाओ से होकर गुजरना पडता है। यदि दूसरा सदन, विधेयक को उसी रूप मे पारित कर दें जिस रूप मे पहले सदन ने पारित किया था, तो विधेयक दोना सदनो द्वारा पारित समझा जाता है। यदि दोनो सदनो मे विधेयक पर मतभेद उत्पन्न हो जायें, तो सयुक्त सम्मेलन समिति द्वारा मत भेद दूर करने का प्रयत्न किया जाता है। यदि समिति इसम अफसल रह, तो प्रति निधि सदन उस विधेयक को दुबारा उपस्थित सदस्यो क दो तिहाई बहुमत से पारित कर सकता है और इस स्थिति मे विधेयक दोनो सदनों से पारित समझा जाता है। यदि सभासद सदन द्वारा पारित विधेयक को प्रतिनिधि सदन रद्द कर दें, तो सभासद् सदन उस पर दुबारा विचार नही कर सकता है।

विधेयक को कानून का रूप प्राप्त होना—दोनो सदनो द्वारा विधेयक पारित किये जाने के बाद प्रतिनिधि सदन का अध्यक्ष इसे मन्त्रिमण्डल के पास भेज देता है। विधेयक से सम्बन्धित मन्त्री और प्रधानमन्त्री द्वारा विधेयक पर हस्ताक्षर किये जाते हैं और इसे सम्राट के पास भेज दिया जाता है। स्वीकर की रिपोर्ट जाने के ३० दिन के अन्दर-अन्दर सम्राट इसे सरकारी गजट या सूचना पत्र म छापने की आज्ञा प्रदान करते हैं और यह 'सम्राट द्वारा कानून की उदघोषणा' (Declaration of law by Emperor) कहलाती है। इस प्रकार विधेयक कानून का रूप ग्रहण कर लेता है।

डायट एक मूल्यांकन
(The Diet An Estimate)

सन् १८८९ ई० के मेइजी सविधान के अन्तगत 'शाही डायट' की शक्तिया अत्यन्त सीमित थी। विधि निर्माण के क्षेत्र मे उसे अनन्य अधिकार प्राप्त नही थे और कायपालिका का डायट के प्रति कोई उत्तरदायित्व नही था। लेकिन १९४७ ई० के सविधान के अन्तगत डायट को राज्य शक्ति का सर्वोच्च अग और एकमात्र विधि निर्मात्री सस्था घोषित किया गया है। सिद्धान्तया डायट शासन के समस्त अवयवों क ऊपर है, जिसे विभिन्न क्षेत्रा मे व्यापक शक्तिया प्राप्त हैं। विधि निर्माण क क्षेत्र मे *अन्तिम उत्तरदायित्व डायट का ही है और वह राष्ट्रीय वित्त की भी अधिकारिणी है।* कायपालिका डायट के प्रति अपने सभी कार्यों के लिए सामूहिक रूप से उत्तरदायी है और उसका जीवन मरण डायट पर ही निभर करता है।

लेकिन यह सैद्धान्तिक स्थिति मात्र है और अन्य कुछ देशो के समान जापान की भी सवैधानिक व्यवस्था के सिद्धान्त और व्यवहार मे बहुत अधिक अन्तर है। सिद्धान्त मे केबीनेट पर डायट के द्वारा नियन्त्रण रखा जाता है और डायट केबीनेट को पदच्युत कर सकती है, लेकिन व्यवहार मे स्थिति दूसरी ही है। लाइनबागर के शब्दो मे, 'राजशक्ति का सर्वोच्च अग बनने के स्थान पर यह (डायट) वादविवाद का एक स्थान मात्र बन कर रह गयी है। यह कायपालिका को समथन देने के एक साधन

के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।"[1] १९५५ ई० म द्विदल पद्धति के विकास के बाद से विशेष तौर पर यह बात देखी गयी है। थियोडर मेक्नेली के मतानुसार, "१९५५ में जब जापान के अन्तर्गत बहुदलीय पद्धति का स्थान द्विदलीय पद्धति ने लिया है तब से डायट क प्रति केबीनेट की आधीनता लुप्त होना आरम्भ हो गयी। अब कठोर दलीय अनुशासन क कारण बहुमत दल अपने ही मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास नहीं होने देता।"[2] डायट के दोनो ही सदनो मे उदार प्रजातान्त्रिक दल' (Liberal Democratic Party) के सुविधाजनक बहुमत के कारण केबीनट की सत्ता और सम्मान मे वृद्धि तथा डायट म गिरावट आयी है। इस सम्बन्ध म कबीनट की प्रतिनिधि सदन का भग करने की शक्ति ने महत्त्वपूण भूमिका अदा की है। सविधान लागू किये जान के समय म लेकर आज तक किसी भी प्रतिनिधि सदन न ४ वष के अपने कायकाल को पूण नही किया है उसके पूव ही केबीनेट प्रतिनिधि सदन को भग करवा देती है। अत सिद्धान्त रूप से सर्वोच्च निकाय होते हुए भी व्यवहार मे डायट सरकार पर नियन्त्रण नही रख पाता। यद्यपि जापान मे ब्रिटेन के समान 'केबीनेट के अधिनायकत्व' (Dictatorship of the Cabinet) की बात नही की जाती, लेकिन विरोधी दल 'बहुमत के अत्याचार' (Tyranny of the Majority) की बात अवश्य ही कहता है।

न केवल प्रशासन, वरन् कानून निर्माण के क्षेत्र मे भी डायट की शक्तियों का पतन स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। सविधान इसे एकमात्र कानून निर्मात्री सस्था घोषित करता है, किन्तु कानून निर्माण म उसकी वास्तविक भूमिका बहुत कम महत्त्वपूण है। विधि निर्माण के क्षेत्र म पहल अब केबीनट के हाथो मे आ गयी है और सभी महत्त्वपूण विधेयक सरकार की ओर से ही प्रस्तुत किये जाते हैं। अभी हाल ही म किये गये सर्वेक्षण के अनुसार सन् १९५१ से १९६५ तक २ ६४६ विधेयको को कानून का रूप दिया गया, जिनमे से ८४ प्रतिशत विधेयक सरकार की ओर से प्रस्तुत किये गये थे और केवल १६ प्रतिशत व्यक्तिगत सदस्यो की ओर से प्रस्तुत किये गये थे। डायट मे कौन कौन से विधेयक रखे जायेंगे और डायट उन पर किस क्रम मे विचार करेगी इस सम्बन्ध मे समस्त व्यवस्था करना केबीनेट का काय है। विधेयको पर

[1] Instead of becoming the highest organ of statepower it has become a cockpit for debate and nothing more than the suppor ting facility for the executive Linebarger *Far Eastern Govt and Politics China and Japan* p 532

[2] In 1955 when the two party system replaced the multi party system in Japan the subordinance of the cabinet to the Diet began to disappear A vote of no confidence in the cabinet became unlikely because party loyalty inhibited the majority from voting its own government out of office —Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 113

महत्त्वपूर्ण विचार और वादविवाद तो समितियो म होता है, जहा दलीय अनुशासन बहुत अधिक कठोर है। डायट तो शासन द्वारा प्रस्तावित विधेयको पर औपचारिक स्वीकृति की मोहर मात्र लगाती है। राबर्ट वाड ने लिखा है कि "डायट और उसके सदस्य वस्तुत कोई कानून नहीं बनाते। विधेयकों पर प्रारम्भ कहीं और होता है, सदन केवल उनका परीक्षण करते हैं उन पर वाद विवाद करते हैं और उनको प्रचारित करते हैं कभी कभी उनमें कुछ सशोधन करते हैं और अ तत उन्हे कानून के रूप मे पास कर देते हैं।"

विधायी निकाय के रूप म डायट की शक्तियो का जो ह्रास हुआ है, उसके प्रमुख कारण ये बतलाये जाते है

(१) आधुनिक काल मे डायट के कार्यों म बहुत अधिक वृद्धि हो गयी है जिसके कारण उसके पास समय का अभाव रहता है और वह कानून निर्माण के काय को उचित समय नही दे पाती। ससदीय व्यवस्था के कारण डायट क समय का एक बडा भाग प्रशासन सम्ब धी कार्यों मे चला जाता है और कानून निर्माण के काय हेतु समय का विशेष अभाव रहता है।

(२) वतमान समय मे कानून निर्माण का काय बहुत अधिक जटिल हो गया है और इसे करने के लिए विशेषज्ञो की आवश्यकता होती है। डायट के सदस्य सामाजिक और आर्थिक विषयो के विशेषज्ञ नही होते, अत उनके द्वारा यह काय प्रशासनिक अधिकारियो पर छोड दिया जाता है। ये प्रशासनिक अधिकारी केबीनेट सदस्यो क निर्देशन मे विधेयको के प्रारूप का निर्माण करते हैं, अत कानून निर्माण मे केबीनेट की शक्तियाँ बढ गयी हैं और डायट का पतन हुआ है।

(३) डायट के काय तथा शक्तियो के पतन का सबसे प्रमुख कारण राजनीतिक दलो का बढता हुआ प्रभाव तथा उनका कठोर दलीय अनुशासन है। इसके कारण सामान्य सदस्य अपने नेताओ का विरोध नही कर पाते और सभी बातो मे दलीय नेताओ का, जो शासन क्षेत्र मे सामान्यतया मन्त्री पद पर आसीन होते हैं अन्ध समथन करने के लिए बाध्य होते हैं। १९५५ मे जापान के अन्तगत द्वि दलीय पद्धति का विकास होने के बाद से विशेष तौर पर यह बात देखी गयी है।

उपरोक्त विवेचना से यह नही समझ लिया जाना चाहिए कि डायट की अब कोई शक्ति और सम्मान नहीं रहा है। डायट जापान का सर्वोच्च राष्ट्रीय मच है, जनता के मनो की अभिव्यक्ति का सर्वोत्तम साधन है और यह बात राष्ट्रीय राजनीति मे उसे बहुत अधिक महत्त्वपूर्ण बना देती है। कोई भी शक्तिशाली सरकार डायट मे व्यक्त किये गये जनमत की अवहेलना नही कर सकती।

जापान में असंसदीय पद्धतियों का प्रचलन (Resort to Extra Parliamentary Techniques)—जापान मे द्वि दलीय पद्धति क विकास के समय स ही राजनीतिक शक्तियो का बहुत अधिक असन्तुलन है। दो प्रमुख राजनीतिक दल उदार लोकतन्त्री दल और समाजवादी दल है। इनमे प्रथम अनुदारवादी दल है और द्वितीय

वामपथी । विशेष बात यह है कि इन दोना राजनीतिक दलों की शक्ति मे बहुत अधिक अ तर है और इस तथ्य ने समाजवादी दल को असहनशील और निराश दल का रूप दे दिया है । ऐसी स्थिति म समाजवादी दल और अ य कुछ छोटी शक्तियों ने बहुमत दल उदार लोकतन्त्री दल को अपना काय करने से रोकने के लिए असंसदीय पद्धतियो और तरीको को अपना लिया है । इस प्रकार की असंसदीय पद्धतिया मे 'फिलीबस्टर' (Filibuster) अर्थात् अनावश्यक रूप से लम्बे वादविवाद तो है ही, विरोधी दल 'धरना देने' (Sit in) की पद्धति को भी अपना लेता है । इस पद्धति को बहुत अधिक अपनाया जाता है और इसने एक विशिष्ट जापानी पद्धति का रूप ग्रहण कर लिया है । अनेक बार तो स्पीकर को हठी सदस्यों से दीर्घाएँ (Corridors) खाली कराने के लिए पुलिस शक्ति का आश्रय लेना होता है । विरोधी दलो द्वारा अपनाई गयी अ य पद्धति 'बहिष्कार' है । यदि उनकी अनुपस्थिति मे सदन मे मतदान होता है, तो विरोधी दल यह दिखाने का प्रयत्न करता है कि शासक दल प्रजातन्त्रीय ढग से काय कर रहा है । कि हीं विधेयको पर मतदान रोकने क लिए कभी कभी सदन मे ही झगडा करना भी प्रारम्भ कर दिया जाता हैं और सदन के बाहर विशाल जन प्रदशन तो एक सामा य बात है । ये असंसदीय पद्धतिया जापान के संसदीय प्रजात त्र के लिए खतरे का कारण बन सकती हैं और इन पद्धतियो ने डायट की प्रतिष्ठा मे निश्चित रूप से बहुत गिरावट उत्पन्न की है ।

प्रश्न

१ डायट की सूचना तथा शक्तियो का वणन कीजिए तथा दोनो सदनो के सम्ब धो पर प्रकाश डालिए ।

२ जापान की प्रतिनिधि सभा और सभासद सदन क सम्ब धो का वणन कीजिए । सभासद सदन के प्रभावहीन होने के क्या कारण हैं ? (राजस्थान, १९७३)

३ डायट की शक्तियो का वणन कीजिए और उसका आलोचनात्मक मूल्याकन कीजिए ।

४ डायट के गठन का वणन कीजिए और प्रतिनिधि सदन के स्पीकर क काय बतलाइए । यह ब्रिटिश लोकसदन के स्पीकर से किस प्रकार भिन्न है ?

५ जापान की डायट म समिति पद्धति का वणन कीजिए ।

६ जापान मे विधि निर्माण की प्रक्रिया का वणन कीजिए ।

5

जापान की न्यायपालिका
(THE JUDICIARY OF JAPAN)

'नवीन सविधान के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति स्पष्टतया प्रदान की गयी है, न्यायालय ने यह शक्ति सविधान की अपनी व्याख्या के आधार पर प्राप्त नहीं कर ली है, जैसा कि सयुक्त राज्य अमेरिका में हुआ है।"[1] —थियोडर मैक्निले

मेइजी सविधान के अन्तर्गत न्यायपालिका

मेइजी युग के अन्तगत जापान मे न्यायपालिका स्वतन्त्र नही थी, वरन् वह सामान्य प्रशासन का एक अभिन्न अग थी। न्यायालयो की शक्ति पर अनेक सीमाएँ लगी हुई थी और न्यायिक प्रशासन न्याय मन्त्रालय के अधीन था। इसके अतिरिक्त विधि के शासन तथा विधि के समक्ष समानता के सिद्धान्त का भी पूर्ण अभाव था। न्यायालयो को सविधान की व्याख्या करने, नागरिको के मौलिक अधिकारो की रक्षा करने तथा सरकार और नागरिको के बीच उठने वाले विवादो के निर्णय करने का कोई अधिकार नही था। सक्षेप मे मेइजी युग की न्याय व्यवस्था फ्रांसीसी और जर्मन विधिशास्त्र पर आधारित थी और उसमे ऐंग्लो सैक्सन विधिशास्त्र को कोई स्थान प्राप्त नही था।

वर्तमान सविधान मे न्याय व्यवस्था

१९४७ ई० के शोवा सविधान द्वारा जापान मे लोकतन्त्रीय व्यवस्था का सूत्रपात किया गया और लोकतन्त्रीय भावना के अनुरूप जापान की न्याय व्यवस्था मे महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किये गये। प्रजातन्त्र को सुदृढता प्रदान करने के लिए न्यायालयो के ऊपर से न्याय मन्त्रालय के प्रभुत्व को समाप्त किया गया और एक स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष न्यायपालिका की स्थापना की गयी।

[1] 'The power of judicial review is explicitly granted to the Japanese supreme court by the new constitution the court does not derive this power merely from its own interpretation of the constitution as occured in the United States —T Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 168

वतमान याय प्रणाली की विशेषताए—जापान की वतमान याय प्रणाली की विशेषताओ का अध्ययन निम्न रूपा मे किया जा सकता है

(१) न्यायपालिका की पृथकता—मेइजी सविधान के अन्तगत न्यायपालिका शासन की एक स्वतन्त्र शाखा हाने क स्थान पर कायपालिका का अग मात्र थी। नवीन सविधान के अ तगत न्यायपालिका का व्यवस्थापिका तथा कायपालिका के नियन्त्रण से मुक्त कर शासन की एक स्वतन्त्र शाखा का रूप प्रदान किया गया है। सविधान के अनुच्छेद ७६ के अनुसार 'समस्त न्यायिक शक्ति सर्वोच्च यायालय तथा ऐसे अधीनस्थ यायालयो में निहित होगी, जो कानून द्वारा स्थापित किये गये हों।'[1] सविधान के इसी अनुच्छेद म यह भी स्पष्ट कर दिया गया है कि किसी असाधारण न्यायालय की स्थापना नही की जायगी और न ही कायपालिका के किसी अवयव अथवा एजेन्सी को अ तिम न्यायिक शक्ति दी जायगी।

(२) यायपालिका की स्वतन्त्रता की गारण्टी—वतमान सविधान के अ तगत न केवल शासन की पृथक शाखा के रूप मे न्यायपालिका की स्थापना की गयी है वरन् यायपालिका की स्वत त्रता की गारण्टी देकर ऐसी परिस्थितियो की यवस्था की गयी है कि न्यायपालिका निष्पक्षता और निभयता के साथ कतव्य पालन कर सकें। पुरानी न्याय व्यवस्था मे न्यायमन्त्रालय न्यायालयो की कायप्रणाली के नियमो का निर्माण करके और न्यायाधीशो की नियुक्ति तथा पदोन्नति करके याय व्यवस्था को प्रभावित करता रहता था लेकिन अब यायमन्त्रालय को इन शक्तियो से वचित कर दिया गया है। अब सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशा की नियुक्ति केबीनेट करती है और बाद मे उस पर जनता की राय ली जाती है। अधीनस्थ न्यायालयो के न्यायाधीश केबीनेट द्वारा उन व्यक्तियो की सूची मे से नियुक्त किय जात हैं जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तैयार की जाती है। सविधान म कहा गया है कि न्यायाधीश अपने अन्त करण के अनुसार काय करने मे स्वतन्त्र होगे। वे केवल सविधान तथा कानूनो के अधीन होगे। अनुच्छेद ७७ के अनुसार, "यायिक प्रक्रिया के सम्बन्ध में नियम निर्माण की समस्त शक्ति सर्वोच्च यायालय को प्राप्त हैं।' न्यायाधीशा को पद की सुरक्षा भी प्रदान की गयी है और अनुच्छेद ७८ के अनुसार, सावजनिक महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से उन्हे पदच्युत नहीं किया जा सकता।' इसके अतिरिक्त न्यायाधीशा क लिए पर्याप्त वतन और सुविधाओ की व्यवस्था की गयी है और उनके कायकाल मे उनके वेतन भत्तो मे कमी नही की जा सकती। इस प्रकार सविधान म यायपालिका की स्वत त्रता की पूरी व्यवस्था कर ली गयी है और व्यवस्थापिका तथा कायपालिका न्यायाधीशो के आचरण का प्रभावित नही कर सकती।

1 The whole judicial power is vested in ... and such inferior courts as are established ... Article

(३) विधि के शासन की स्थापना—नवीन संविधान के अन्तगत ऐंग्लो सक्सन न्यायप्रणाली की मूलभूत धारणा — विधि के शासन' (Rule of law) को अपनाया गया है। अब जापान मे सभी व्यक्ति विधि के समक्ष समान हैं और सभी के लिए एक ही प्रकार के कानून और एक ही प्रकार के न्यायालय हैं। इस सम्ब ध में व्यक्तियो के पद के आधार पर कोई अन्तर नही किया गया है।

(४) न्याय व्यवस्था की एकरूपता—नवीन संविधान के अन्तगत देश की सम्पूण न्यायिक सत्ता एक सर्वोच्च न्यायालय तथा कानून द्वारा स्थापित अधीनस्थ न्यायालयो म निहित है। न्यायपालिका के शीष पर सर्वोच्च न्यायालय है और उसके अधीन उच्च न्यायालय, जिला न्यायालय, कौटुम्बिक न्यायालय और ५७० प्रारम्भिक न्यायालय हैं, जो ऊपर से नीचे तक ही शृंखला मे आबद्ध हैं। पुराने प्रकार के स्थानीय न्यायालयो (Local Courts) व पुलिस न्यायालयो की तरह के अब कोई न्यायालय नही हैं। सभी अधीनस्थ न्यायालयो पर सर्वोच्च न्यायालय को अधीक्षण और नियन्त्रण की शक्ति प्राप्त है।

(५) प्रशासकीय न्यायालयों का अभाव—मेइजी संविधान के अन्तगत जमनी, आस्ट्रिया आदि दशो की पद्धति पर प्रशासकाय न्यायालयो की स्थापना की गयी थी, जिनके द्वारा कर लाइसेंस, सावजनिक और व्यक्तिगत भूमियो के बीच सीमा सम्बन्धी विवादो तथा पुलिस प्रशासन से सम्बन्धित मामलो की जाँच की जाती थी। प्रशासनिक न्याया यो की स्थापना इस मा यता के आधार पर की गयी थी कि साधारण न्याया लयों को प्रशासनिक क्रियाकलापो की जाँच करने का अधिकार दने पर कायपालिका न्यायपालिका के अधीन हो जायगी। पर तु अब प्रशासकीय न्यायालयो (Adminis trative Courts) का अन्त कर दिया गया है और सभी प्रकार के विवादो के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय हैं।

(६) न्यायिक पुनर्विलोकन—संयुक्त राज्य अमेरिका का अनुकरण करत हुए जापान के नवीन संविधान म सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति से विभूषित किया गया है। न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था संविधान क अनुच्छेद ८१ म की गयी है और इसका तात्पय यह है कि सर्वोच्च न्यायालय को कानूनो की वैधानिकता की जाच करने की शक्ति प्राप्त है। यदि डायट किसी ऐसे कानून का निर्माण करे या केबीनेट कोई ऐसी आज्ञा जारी करें, जो संविधान के प्रतिकूल हो तो सर्वोच्च न्यायालय उसे अवैधानिक घोषित कर सकत है। न्यायिक पुनर्विलोकन की व्यवस्था से सर्वोच्च न्यायालय की प्रतिष्ठा मे पर्याप्त वृद्धि हुई है।

(७) न्यायाधीशों की नियुक्ति का जनता द्वारा अनुसमथन—जापान की न्याय व्यवस्था की एक विचित्रता यह है कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति पर जनता का अनुसमथन आवश्यक है। इस सम्बन्ध म अनुच्छेद ७९ मे कहा गया है कि "न्यायाधीशों की नियुक्ति केबीनेट द्वारा की जायगी परन्तु इसक

बाद प्रतिनिधि सदन के प्रथम आम निर्वाचन के अवसर पर तथा प्रति १० वर्ष बाद उनके बारे में जनता की राय ली जाती है। यदि जनता बहुमत से किसी नियुक्ति को अस्वीकार कर दे, तो उसे अपदस्थ कर दिया जायगा।'[1] यानागा के अनुसार यह व्यवस्था इस धारणा पर आधारित है कि सर्वोच्च न्यायालय को जनता की सामूहिक इच्छा का प्रतिबिम्ब होना चाहिए।[1] किन्तु जैसा कि मकिनले ने कहा है, 'इससे परिणामस्वरूप न्यायाधीश दलीय राजनीति के शिकार हो सकते हैं।'[2] व्यवहार में अब तक सर्वोच्च न्यायालय के किसी भी न्यायाधीश को जनता द्वारा पदच्युत नहीं किया गया है।

(८) न्यायिक व्यवस्था में नागरिक स्वतन्त्रता की गारण्टी—मेइजी संविधान के अन्तर्गत न्याय व्यवस्था ऐसी थी कि कार्यपालिका पदाधिकारियों के द्वारा मनमानी करते हुए नागरिक स्वतन्त्रता को आघात पहुँचाया जा सकता था। लेकिन अब समस्त व्यवस्था नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षा करने की दृष्टि से की गयी है। पहले किसी भी व्यक्ति को बन्दी बनाने के लिए पुलिस वारण्ट जारी कर सकती थी, किन्तु अब किसी व्यक्ति को केवल तभी बन्दी बनाया जा सकता है, जबकि न्यायालय के द्वारा वारण्ट जारी किया गया हो। पहले मारपीट तथा सख्ती के आधार पर अभियुक्त से अपराध स्वीकार करा लिया जाता था, किन्तु अब 'फौजदारी कानूनी संहिता' (Criminal Code) में परिवर्तन करके मारपीट तथा सख्ती का अन्त कर दिया गया है। अब अभियुक्तों को अपनी रक्षा के सभी अवसर प्रदान किये जाते हैं। अभियुक्त को अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता। वह गवाह से प्रश्न पूछ सकता है और उसे वकील करने की आज्ञा है। इन सभी बातों के आधार पर न्यायपालिका व्यक्तिगत और नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षक हो गयी है।

(९) खुली न्यायिक कार्यवाही—निष्पक्ष न्याय की दृष्टि से खुली न्यायिक कार्यवाही को उपयुक्त समझा जाता है और जापान के संविधान के अन्तर्गत ऐसी ही व्यवस्था की गयी है। जापानी संविधान के अनुच्छेद ८२ में यह व्यवस्था की गयी है कि 'मुकदमों की सुनवाई सार्वजनिक होगी और निर्णय खुले आम किये जायेंगे। जब न्यायालय सर्व सम्मति से यह निर्णय कर ले कि सर्वप्रचार (Publicity) सार्वजनिक शान्ति अथवा नैतिकता के लिए खतरनाक होगा तो सुनवाई गुप्त रूप से हो सकती है, किन्तु राजनीतिक अपराधों प्रेस सम्बन्धी अपराधों अथवा नागरिकों के अधिकारों से सम्बन्धित मामलों पर सदा सार्वजनिक रूप में विचार होगा।'

(१०) घरेलू मामलों तथा बच्चों के लिए विशेष न्यायालय—जापान की न्याय व्यवस्था के अन्तर्गत पारिवारिक मामलों और बच्चों के विवादों के लिए पृथक

1 Chitoshi Yanaga *Japanese People and Politics* p 356
2 Theodore Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 169

न्यायालयों की स्थापना की गयी है और इन्हें 'पारिवारिक न्यायालयों' का नाम दिया गया है ।

न्यायपालिका का संगठन

जापान के अन्तर्गत न्याय व्यवस्था की एकरूपता है, जिसके अन्तर्गत सर्वोच्च स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय है । इसके आधीन ८ उच्च न्यायालय, ४९ जिला न्यायालय, ४९ कौटुम्बिक न्यायालय तथा ५७० प्रारम्भिक न्यायालय हैं ।

सर्वोच्च न्यायालय
(Supreme Court)

रचना—जापान में न्याय व्यवस्था के शीर्ष पर सर्वोच्च न्यायालय स्थित है जिसमें १ मुख्य न्यायाधीश तथा १४ अन्य न्यायाधीश हैं । यह आवश्यक है कि १५ न्यायाधीशों में से कम से कम १० कानून के बहुत अच्छे ज्ञाता हों और उन्हें २० वर्ष का कानूनी अनुभव प्राप्त हो । शेष ५ न्यायाधीशों के लिए कानूनी अनुभव आवश्यक नहीं है किन्तु वे बुद्धिमान और विद्वान अवश्य होने चाहिए । नियुक्ति के समय न्यायाधीशों की आयु ४० वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए ।

संविधान के अनुच्छेद ६ में कहा गया है कि मुख्य न्यायाधिपति की नियुक्ति सम्राट मन्त्रिमण्डल के निर्णय के अनुसार करेगा । अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति मन्त्रिमण्डल द्वारा की जाती है । न्यायाधीशों की नियुक्ति के बाद प्रतिनिधि सदन के चुनाव के समय जनता द्वारा इसका अनुसमर्थन किया जाना आवश्यक है और प्रति १० वर्ष बाद प्रतिनिधि सदन के चुनाव के समय न्यायाधीशों के विषय में नागरिकों की राय ली जाती है । यदि मतदाता बहुमत से किसी न्यायाधीश की पद च्युति के विषय में हों, तो उसे हटा दिया जायगा । यदि जनमत न्यायाधीशों के पक्ष में रहे, तो वे ७० वर्ष की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं । अनुच्छेद ७८ के अनुसार, 'कोई भी न्यायाधीश सार्वजनिक महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी तरीके से नहीं हटाया जायगा, जब तक कि वह अपने शासकीय कर्त्तव्य निभाने के लिए मानसिक या शारीरिक रूप से अशक्त घोषित न किया गया हो । किसी भी न्यायाधीश के विरुद्ध कार्यपालिका द्वारा कोई कार्यवाही नहीं की जायगी ।' न्यायाधीशों पर महाभियोग लगाने की शक्ति डायट को प्राप्त है ।

सर्वोच्च न्यायालय की कार्यविधि—संवैधानिकता के प्रश्न से सम्बन्धित विवादों की सुनवाई १५ न्यायाधीशों ग्राण्ड बेंच' (Grand Bench) करती है, जिसमें गणपूर्ति के लिए ९ न्यायाधीशों की उपस्थिति आवश्यक मानी जाती है । अन्य मामलों में, जिनमें केवल कानूनी प्रश्न निहित होते हैं, छोटी बेंच ही अपीलें सुनती हैं, जिनमें ५ न्यायाधीश होते हैं और ३ न्यायाधीशों की गणपूर्ति आवश्यक मानी जाती है । बहुमत के निर्णय से असहमत न्यायाधीश अपना अलग निर्णय दे सकते हैं ।

क्षेत्राधिकार और शक्तियाँ—सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार और शक्तियों का अध्ययन अग्र रूपों में किया जा सकता है

बाद प्रतिनिधि सदन के प्रथम आम निर्वाचन के अवसर पर तथा प्रति १० वर्ष बाद उनके बारे मे जनता की राय ली जाती है। यदि जनता बहुमत से किसी नियुक्ति को अस्वीकार कर दे, तो उसे अपदस्थ कर दिया जायगा।' यानागा के अनुसार यह व्यवस्था इस धारणा पर आधारित है कि सर्वोच्च न्यायालय को जनता की सामूहिक इच्छा का प्रतिबिम्ब होना चाहिए।[1] किन्तु जसा कि मक्लिने ने कहा है, 'इसके परिणामस्वरूप न्यायाधीश दलीय राजनीति के शिकार हो सकते हैं।'[2] व्यवहार मे अब तक सर्वोच्च न्यायालय के किसी भी न्यायाधीश को जनता द्वारा पदच्युत नही किया गया है।

(८) न्यायिक व्यवस्था में नागरिक स्वतन्त्रता की गारण्टी—मेइजी सविधान के अन्तगत न्याय व्यवस्था ऐसी थी कि कार्यपालिका पदाधिकारियो के द्वारा मनमानी करते हुए नागरिक स्वतन्त्रता को आघात पहुचाया जा सकता था। लेकिन अब समस्त व्यवस्था नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षा करने की दृष्टि से की गयी है। पहले किसी भी व्यक्ति को बन्दी बनाने के लिए पुलिस वारण्ट जारी कर सकती थी, किन्तु अब किसी व्यक्ति को केवल तभी बन्दी बनाया जा सकता है, जबकि न्यायालय के द्वारा वारण्ट जारी किया गया हो। पहले मारपीट तथा भर्त्सना के आधार पर अभियुक्त से अपराध स्वीकार करा लिया जाता था, किन्तु अब 'फौजदारी कानूनी सहिता' (Criminal Code) मे परिवतन करके मारपीट तथा सख्ती का अन्त कर दिया गया है। अब अभियुक्त को अपनी रक्षा के सभी अवसर प्रदान किये जाते हैं। अभियुक्त को अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नही किया जा सकता। वह गवाह से प्रश्न पूछ सकता है और उसे वकील करने की आज्ञा है। इन सभी बातो के आधार पर न्यायपालिका व्यक्तिगत और नागरिक स्वतन्त्रता की रक्षक हो गयी है।

(९) खुली न्यायिक कार्यवाही—निष्पक्ष न्याय की दृष्टि से खुली न्यायिक कार्यवाही को उपयुक्त समझा जाता है और जापान के सविधान के अन्तगत ऐसी ही व्यवस्था की गयी है। जापानी सविधान के अनुच्छेद ८२ मे यह व्यवस्था की गयी है कि 'मुकदमों की सुनवाई सार्वजनिक होगी और निर्णय खुले आम दिये जायेंगे। जब न्यायालय सर्वसम्मति से यह निर्णय कर ले कि सर्वप्रचार (Publicity) सार्वजनिक शान्ति अथवा नैतिकता के लिए खतरनाक होगा तो सुनवाई गुप्त रूप से हो सकती है, किन्तु राजनीतिक अपराधों प्रेस सम्बन्धी अपराधो अथवा नागरिकों के अधिकारों से सम्बन्धित मामलों पर सदा सार्वजनिक रूप मे विचार होगा।'

(१०) घरेलू मामलों तथा बच्चों के लिए विशेष न्यायालय—जापान की न्याय व्यवस्था के अन्तगत पारिवारिक मामलो और बच्चो के विवादो के लिए पृथक

[1] Chitoshi Yanaga *Japanese People and Politics* p 356
[2] Theodore Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 169

न्यायालयों की स्थापना की गयी है और इन्हें 'परिवारिक न्यायालयों' का नाम दिया गया है।

न्यायपालिका का संगठन

जापान के अन्तर्गत न्याय व्यवस्था की एकरूपता है, जिसके अन्तर्गत सर्वोच्च स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय है। इसके अधीन ८ उच्च न्यायालय, ४९ जिला न्यायालय ४९ कौटुम्बिक न्यायालय तथा ५७० प्रारम्भिक न्यायालय हैं।

सर्वोच्च न्यायालय
(Supreme Court)

रचना—जापान में न्याय व्यवस्था के शीर्ष पर सर्वोच्च न्यायालय स्थित है जिसमें १ मुख्य न्यायाधीश तथा १४ अन्य न्यायाधीश हैं। यह आवश्यक है कि १५ न्यायाधीशों में से कम से कम १० कानून के बहुत अच्छे ज्ञाता हों और उन्हें २० वर्ष का कानूनी अनुभव प्राप्त हो। शेष ५ न्यायाधीशों के लिए कानूनी अनुभव आवश्यक नहीं है किन्तु वे बुद्धिमान और विद्वान अवश्य होने चाहिए। नियुक्ति के समय न्यायाधीशों की आयु ४० वर्ष से कम नहीं होनी चाहिए।

संविधान के अनुच्छेद ६ में कहा गया है कि मुख्य न्यायाधिपति की नियुक्ति सम्राट मन्त्रिमण्डल के निर्णय के अनुसार करेगा। अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति मन्त्रिमण्डल द्वारा की जाती है। न्यायाधीशों की नियुक्ति के बाद प्रतिनिधि सदन के चुनाव के समय जनता द्वारा इसका अनुसमर्थन किया जाना आवश्यक है और प्रति १० वर्ष बाद प्रतिनिधि सदन के चुनाव के समय न्यायाधीशों के विषय में नागरिकों की राय ली जाती है। यदि मतदाता बहुमत से किसी न्यायाधीश की पद च्युति के विषय में हों, तो उसे हटा दिया जायगा। यदि जनमत न्यायाधीशों के पक्ष में रहे, तो वे ७० वर्ष की आयु तक अपने पद पर बने रहते हैं। अनुच्छेद ७८ के अनुसार, 'कोई भी न्यायाधीश सार्वजनिक महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी तरीके से नहीं हटाया जायगा, जब तक कि वह अपने न्यायिक कर्तव्य निभाने के लिए मानसिक या शारीरिक रूप से अशक्त घोषित न किया गया हो। किसी भी न्यायाधीश के विरुद्ध कार्यपालिका द्वारा कोई कार्यवाही नहीं की जायगी।' न्यायाधीशों पर महाभियोग लगाने की शक्ति डायट को प्राप्त है।

सर्वोच्च न्यायालय की कार्यविधि—संवैधानिकता के प्रश्न से सम्बन्धित विवादों की सुनवाई १५ न्यायाधीशों 'ग्राण्ड बेंच' (Grand Bench) करती है, जिसमें गणपूर्ति के लिए ९ न्यायाधीशों की उपस्थिति आवश्यक मानी जाती है। अन्य मामलों में, जिनमें केवल कानूनी प्रश्न निहित होते हैं, छोटी बेंच ही अपीलें सुनती हैं, जिनमें ५ न्यायाधीश होते हैं और ३ न्यायाधीशों की गणपूर्ति आवश्यक मानी जाती है। बहुमत के निर्णय से असहमत न्यायाधीश अपना अलग निर्णय दे सकते हैं।

क्षेत्राधिकार और शक्तियाँ—सर्वोच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार और शक्तियों का अध्ययन अग्र रूपों में किया जा सकता है

किया जाता है। सर्वोच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयो को उनकी कार्यविधि के सम्बन्ध मे नियम बनाने का अधिकार प्रदान कर सकता है।

(४) न्यायिक पर्यवेक्षण और प्रशासन सम्बन्धी शक्तियां—मेइजी संविधान के अन्तर्गत न्यायपालिका न्याय मन्त्रालय के आधीन रहते हुए अपना कार्य करती थी लेकिन वर्तमान संविधान के अन्तर्गत न्यायपालिका की शासन के एक स्वतन्त्र अंग के रूप मे स्थापना की गयी है। इस कारण अधीनस्थ न्यायालयो पर निरीक्षण और नियन्त्रण की शक्ति सर्वोच्च न्यायालय को ही प्राप्त है। इस सम्बन्ध मे उसके द्वारा निम्न कार्य किये जाते हैं

(i) सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशन मे अनेक 'प्रशिक्षणात्मक संस्थाएँ' (Training Institutions) कार्य करती हैं, जिनका उद्देश्य व्यक्तियो को न्यायिक कार्य के लिए प्रशिक्षित करना है। इस प्रकार की कुछ संस्थाएँ हैं—विधि, प्रशिक्षण तथा अनुसन्धान संस्थान, न्यायालय लिपिक हेतु अनुसन्धान तथा प्रशिक्षण संस्थान, पारिवारिक न्यायालय प्रवीक्षण अधिकारी (*Probation Officers*) संस्थान आदि।

(ii) न्यायाधीशो की एक सेवा कालीन वार्षिक परीक्षा भी होती है, जिसकी व्यवस्था और संचालन सर्वोच्च न्यायालय करता है।

(iii) सर्वोच्च न्यायालय अन्य न्यायालयो के न्यायाधीशो के पदो पर नियुक्ति के लिए योग्य व्यक्तियो की सूची तैयार करता है। मन्त्रिमण्डल द्वारा न्यायाधीशो की नियुक्ति इस सूची मे से ही की जाती है।

(iv) सर्वोच्च न्यायालय किसी उच्च न्यायालय के क्षेत्र मे किसी भी न्यायालय की शाखाए स्थापित कर सकता है और उन्हे उच्च न्यायालय के कार्य का कुछ भाग हस्तान्तरित कर सकता है।

(v) सर्वोच्च न्यायालय अधीनस्थ न्यायालयो को आदेश भेज सकता है और उनका निरीक्षण भी कर सकता है।

उच्च न्यायालय
(High Courts)

सर्वोच्च न्यायालय के आधीन भौगोलिक आधार पर ८ उच्च न्यायालयो की स्थापना की गयी है। ये न्यायालय टोकियो, ओसाका, फ्यूकाका, नगोया, हीरोशिमा, टाकामत्सु, सेप्पारो तथा सन्दई नामक स्थानो पर स्थापित किये गये हैं। प्रत्येक उच्च न्यायालय मे न्यायाधीशो की संख्या उस क्षेत्र की जनसंख्या के अनुसार भिन्न भिन्न है। उदाहरणार्थ, सप्परो उच्च न्यायालय म केवल ७ न्यायाधीश हैं, जबकि टोकियो उच्च न्यायालय म न्यायाधीशो की संख्या ६४ है। उच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति १० वर्ष के लिए मन्त्रिमण्डल द्वारा उस सूची म से की जाती है, जो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा तैयार की जाती है।

उच्च न्यायालयो को प्रारम्भिक तथा अपीलीय दोनों ही प्रकार का अधिकार क्षेत्र प्राप्त है। प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत देशद्रोह तथा शासन के विरुद्ध षड

(१) इन दोनो देशो मे न्यायपालिका को शासन की एक स्वतन्त्र शाखा के रूप मे मान्यता प्रदान की गयी है और ऐसी व्यवस्था की गयी है कि न्यायपालिका व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के दबाव से मुक्त रहते हुए निर्भयता और निष्पक्षता के साथ अपने कर्तव्यो का सम्पादन कर सकें।

(२) दोनो देशो मे सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा होती है।

(३) दोनो देशो मे न्यायाधीशो को पद की सुरक्षा प्रदान की गयी है। उनके कार्य की लम्बी अवधि रखी गयी है और उन्हे महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से पदच्युत नही किया जा सकता है।

(४) दोनों देशो मे न्यायाधीशो के लिए पर्याप्त वेतन और सुविधाओ की व्यवस्था की गयी है और उनके पद को बहुत सम्मानपूर्ण समझा जाता है।

(५) दोनो देशो मे सर्वोच्च न्यायालय को अपनी कार्य विधि के नियम स्वय निश्चित करने का अधिकार दिया गया है।

(६) दोनो देशों मे सर्वोच्च न्यायालय अपने देश के अन्तिम अपीलीय न्यायालय है और वे नागरिक अधिकारो की रक्षा करते हैं।

(७) अन्तिम, किन्तु सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समानता यह है कि दोनो देशो मे सर्वोच्च न्यायालय को सविधान की व्याख्या और रक्षा करने की शक्ति प्रदान की गयी है। दोनो देशो मे सर्वोच्च न्यायालय कानूनो, आदेशो, सरकारी नियमो तथा विनियमो की सवैधानिकता की जाच कर सकते है और यदि वे सविधान के प्रतिकूल हो तो उन्हे रद्द कर सकते हैं। इस प्रकार दोनो ही देशो मे सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्रदान किया गया है।

असमानताएँ—दोनो देशो के सर्वोच्च न्यायालय मे जहाँ कुछ समानताएँ हैं, वहाँ अनेक असमानताएँ भी हैं

(१) जापान मे न्यायाधीशो की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा की जाती है, किन्तु इन नियुक्तियो का अनुमोदन प्रतिनिधि सदन के चुनाव के समय जनता द्वारा किया जाना आवश्यक है। एक बार अनुमोदन किये जाने के बाद भी प्रति १० वर्ष बाद जनता द्वारा न्यायाधीशो के कार्य पर विचार किया जाता है और मत देने वाली जनता का बहुमत किसी न्यायाधीश के प्रतिकूल हो, तो उसे अपदस्थ कर दिया जाता है। अमेरिका मे न्यायाधीशो की नियुक्ति पर जनता के अनुमोदन की कोई व्यवस्था नही है।

(२) अमेरिका मे न्यायाधीश यदि चाहे, तो जीवन पर्यन्त कार्य कर सकते हैं उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें सेवा निवृत्त नही किया जा सकता, लेकिन जापान मे न्यायाधीशो को ७० वर्ष की आयु पर सेवा निवृत्त कर दिया जाता है।

(३) जापान मे सर्वोच्च न्यायालय को केवल अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त है

य न के अपराधो से सम्बंधित विवाद आते हैं। ये न्यायालय अपने से निम्न न्यायालयों के निणय के विरुद्ध अपीलें भी सुनते हैं। अधिकांश विवादा मे इन न्यायालयो का निणय अंतिम होता है, किन्तु संवधानिक विवादों के सम्बन्ध मे सर्वोच्च न्यायालय मे अपील की जा सकती है।

जिला न्यायालय (District Courts)—जापान म ४६ 'प्रिफेक्चर' (Prefecture) हैं और प्रत्येक मे एक जिला न्यायालय है, इस प्रकार ४६ जिला न्यायालय हैं। इन न्यायालयो मे भी न्यायाधीशो की संख्या भिन्न भिन्न है और न्यायाधीशो की नियुक्ति आदि की व्यवस्था उच्च न्यायालयो के समान ही है। गम्भीर फौजदारी तथा बडी राशि मे सम्बन्धित दीवानी विवादो म इन्हे प्रारम्भिक क्षेत्राधिकार प्राप्त है। इसके अतिरिक्त ये 'सार न्यायालय' (Summary courts) के निणयो के विरुद्ध अपीलें सुनते हैं। साधारण मुकदमे एक न्यायाधीश द्वारा और गम्भीर मुकदमे ३ न्यायाधीशो द्वारा सुने जाते है।

सार न्यायालय (Summary Courts)—ये न्यायालय नगरो तथा ग्रामो म स्थापित किये जाते हैं और इन्हे 'प्रारम्भिक न्यायालय' भी कहा जाता है। ये ५ हजार यन तक के दीवानी विवाद और छोटे छोटे ऐसे फौजदारी विवाद सुनते हैं, जिनम एक मास से कम कैद की सजा दी जा सकती हो।

पारिवारिक क्षेत्राधिकार के न्यायालय (Domestic Jurisdiction Court)—इस श्रेणी के न्यायालय जापान की न्याय व्यवस्था की अपनी विशेषता है। इस प्रकार का न्यायालय प्रत्येक जिले मे १ है और इस प्रकार इनकी संख्या ४६ है। ये न्यायालय तलाक, उत्तराधिकार, सम्पत्ति के बँटवारे, गोद तथा निर्वाह धन आदि से सम्बंधित विवादो की सुनवाई करते हैं। ये बच्चों के अपराधो की भी सुनवाई करते हैं। पारिवारिक न्यायालय मे ३ न्यायाधीश होते हैं। इन न्यायालयो के द्वारा कानून की अपेक्षा मानवीयता के आधार पर अपना काय किया जाता है।

प्रोक्यूरेटज (Procurators)—इनकी नियुक्ति मन्त्रिमण्डल की राय से सम्राट करता है और ये न्याय मन्त्रालय के आधीन रहते हुए अपना काय करते है। ये सरकारी वकील होते हैं और शासन की ओर से न्यायालय मे मुकदमे प्रस्तुत करते हैं। सोवियत संघ के प्रोक्यूरेटर जनरल या प्रोक्यूरेटर के समान जापान के प्रोक्यूरेटर न्यायिक काय म कोई हस्तक्षेप नही कर सकते हैं।

जापान के सर्वोच्च न्यायालय की अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय से तुलना

समानताएँ—जापान के संविधान के निर्माण मे अमरीकी राजनीतिज्ञों द्वारा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की गयी थी और जापान के सर्वोच्च न्यायालय पर अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। इन दोनों म अग्र समानताएँ देखी जा सकती है

(१) इन दोनों देशों में न्यायपालिका को शासन की एक स्वतन्त्र शाखा के रूप में मान्यता प्रदान की गयी है और ऐसी व्यवस्था की गयी है कि न्यायपालिका व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के दबाव से मुक्त रहते हुए निर्भयता और निष्पक्षता के साथ अपने कर्तव्यों का सम्पादन कर सकें।

(२) दोनों देशों में सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा होती है।

(३) दोनों देशों में न्यायाधीशों को पद की सुरक्षा प्रदान की गयी है। उनके कार्य की लम्बी अवधि रखी गयी है और उन्हें महाभियोग के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार से पदच्युत नहीं किया जा सकता है।

(४) दोनों देशों में न्यायाधीशों के लिए पर्याप्त वेतन और सुविधाओं की व्यवस्था की गयी है और उनके पद को बहुत सम्मानपूर्ण समझा जाता है।

(५) दोनों देशों में सर्वोच्च न्यायालय को अपनी कार्य विधि के नियम स्वयं निश्चित करने का अधिकार दिया गया है।

(६) दोनों देशों में सर्वोच्च न्यायालय अपने देश के अन्तिम अपीलीय न्यायालय हैं और वे नागरिक अधिकारों की रक्षा करते हैं।

(७) अन्तिम, किन्तु सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समानता यह है कि दोनों देशों में सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या और रक्षा करने की शक्ति प्रदान की गयी है। दोनों देशों में सर्वोच्च न्यायालय कानूनों, आदेशों, सरकारी नियमों तथा विनियमों की संवैधानिकता की जाँच कर सकते हैं और यदि वे संविधान के प्रतिकूल हों तो उन्हें रद्द कर सकते हैं। इस प्रकार दोनों ही देशों में सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार प्रदान किया गया है।

असमानताएँ—दोनों देशों के सर्वोच्च न्यायालयों में जहाँ कुछ समानताएँ हैं, वहाँ अनेक असमानताएँ भी हैं

(१) जापान में न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा की जाती है, किन्तु इन नियुक्तियों का अनुमोदन प्रतिनिधि सदन के चुनाव के समय जनता द्वारा किया जाना आवश्यक है। एक बार अनुमोदन किये जाने के बाद भी प्रति १० वर्ष बाद जनता द्वारा न्यायाधीशों के कार्य पर विचार किया जाता है और मत देने वाली जनता का बहुमत किसी न्यायाधीश के प्रतिकूल हो, तो उसे अपदस्थ कर दिया जाता है। अमरिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति पर जनता के अनुसमर्थन की कोई व्यवस्था नहीं है।

(२) अमेरिका में न्यायाधीश यदि चाहें, तो जीवन पर्यन्त कार्य कर सकते हैं उनकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें सेवा निवृत्त नहीं किया जा सकता, लेकिन जापान में न्यायाधीशों को ७० वर्ष की आयु पर सेवा निवृत्त कर दिया जाता है।

(३) जापान में सर्वोच्च न्यायालय को केवल अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त है,

अमेरिका मे सर्वोच्च यायालय को प्रारम्भिक और अपीलीय दोनो ही प्रकार का क्षेत्राधिकार प्राप्त है।

(४) जापान मे अधीनस्थ यायालय के न्यायाधीशो की नियुक्ति मे सर्वोच्च यायालय का पर्याप्त हाथ रहता है क्योकि इन न्यायाधीशो की नियुक्ति केबीनेट द्वारा उस सूची मे से की जाती है, जिसे सर्वोच्च यायालय के द्वारा तैयार किया गया है।

(५) जापान मे यायिक पुनर्विलोकन का अधिकार स्पष्ट तौर पर सविधान के द्वारा ही सर्वोच्च यायालय को प्रदान किया गया है, अमेरिका मे सर्वोच्च न्यायालय ने सविधान की अपनी व्याख्या और प्रथा के आधार पर यह अधिकार प्राप्त कर लिया है।

(६) इन सबके अतिरिक्त व्यावहारिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण अन्तर यह है कि अमेरिका मे सर्वोच्च न्यायालय की स्थिति बहुत अधिक शक्तिपूर्ण और साथ ही बहुत अधिक विवादास्पद रही है, लेकिन जापान मे ऐसा नही है। अमेरिका मे ह्यूज जैसे न्यायाधीश गर्व के साथ कहते हैं कि 'हम एक सविधान के अन्तगत हैं, किन्तु सविधान वैसा ही है, जैसा कि सर्वोच्च यायालय कहता है।' लेकिन जापान के यायाधीशो द्वारा कभी भी इस प्रकार के विचार को नही अपनाया गया है। अमेरिका के सर्वोच्च यायालय द्वारा जहाँ यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का बहुत अधिक महत्त्वाकांक्षी रूप मे प्रयोग किया गया है, जापान के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस सम्बन्ध मे बहुत अधिक ससद का परिचय दिया गया है।

प्रश्न

१ जापान की याय पद्धति की विशेषताओ का वणन कीजिए।

२ जापान के सर्वोच्च यायालय तथा अन्य यायालयो के सगठन और शक्तियों का वणन कीजिए।

३ जापान के सर्वोच्च यायालय की अमेरिका के सर्वोच्च यायालय से तुलना कीजिए और भेद बतलाइए।

6

स्थानीय स्वशासन
(LOCAL SELF GOVERNMENT)

"सभी स्थानीय जन-संस्थाओं के मुख्य कार्यपालिका अधिकारी, सभाओं के सदस्य और कानून द्वारा निर्धारित अन्य स्थानीय अधिकारी अपने क्षेत्रों में प्रत्यक्ष लोकप्रिय मत द्वारा निर्वाचित होंगे।"[1] —अनुच्छेद ६३

स्थानीय स्वशासन का महत्त्व

स्थानीय स्वशासन प्रजातन्त्र का आधार है और इसके द्वारा लोकतन्त्र की सर्वश्रेष्ठ शिक्षण संस्था का कार्य किया जाता है। ब्राइस ने ठीक ही लिखा है कि "प्रजातन्त्र का सर्वश्रेष्ठ शिक्षणालय और प्रजातन्त्र की सफलता की सबसे बड़ी गारण्टी स्थानीय स्वशासन का चलन ही है।"[2] डी० टाकविले और लास्की के द्वारा भी यही विचार व्यक्त किया गया है और यह एक तथ्य है कि स्थानीय स्वशासन के बिना लोकतन्त्र का सफलतापूर्वक संचालन सम्भव नहीं हो सकता।

१६४७ के पूर्व स्थानीय स्वशासन

जापान में स्थानीय सरकारों का विकास १८६८ ई० से हुआ, जबकि २५० सामन्तशाही क्षेत्रों को तोड़कर ४६ नयी स्थानीय इकाइयाँ स्थापित की गयी। ये स्थानीय इकाइयाँ हमारे देश के जिलों के समान हैं और जापान में इन्हें प्रीफेक्चर (Prefacture) का नाम दिया गया। प्रत्येक प्रीफेक्चर में एक कार्यपालिका तथा एक विधानमण्डल (Assembly) स्थापित किया गया। प्रीफेक्चर की कार्यपालिका के प्रधान को 'गवर्नर' या प्रीफेक्ट (Prefect) का नाम दिया गया। प्रीफेक्चर केन्द्रीय सरकार द्वारा नियुक्त और गृहमन्त्री के प्रति उत्तरदायी होता था। केन्द्रीय

[1] "The chief executive officers of all local public entities, the members of their assemblies and such other local officials as may be determined by law shall be elected by direct popular vote within their several communities —*Article* 93

[2] The best school of democracy and the best guarantee for its success is the practice of local self government —*James Bryce*

सरकार के प्रतिनिधि के रूप म वह स्थानीय शासन का सचालन करता था। उसके द्वारा शिक्षा, निधनो की सहायता, पुलिस, सार्वजनिक स्वास्थ्य, उद्योगो का सरक्षण तथा अधीनस्थ अधिकारियो और कम्यूनो की सरकारो की निगरानी की जाती थी। प्रीफेक्चरो म द्विसदनीय विधानमण्डल की व्यवस्था की गयी थी, लेकिन विधानमण्डल को विशेष शक्तिया प्राप्त नही थी। प्रीफेक्चरो के नीचे नगरो, कस्बा तथा ग्रामो की स्थानीय सरकारें हुआ करती थी। इन क्षेत्रो मे भी असेम्बलिया हुआ करती थी। नगर का मुखिया मेयर कहलाता था जिसे असेम्बली द्वारा तैयार का गयी तीन व्यक्तियो की सूची मे से सम्राट द्वारा नियुक्त किया जाता था। वह नगर का स्थानीय प्रशासन चलाता था और प्रीफेक्चर के गवनर के प्रति उत्तरदायी होता था। ग्रामो तथा कस्बो म भी असेम्बलियाँ थी, जो कार्यपालिका प्रमुख को चुनती थी। इस प्रकार १६४७ के पूर्व का स्थानीय स्वशासन एक पिरामिड के रूप मे था और 'इसका सबसे प्रमुख तत्त्व स्थानीय सस्थाओ पर केन्द्र का अत्यन्त कठोर नियन्त्रण था।'[1]

स्थानीय स्वशासन की वर्तमान व्यवस्था

युद्ध के बाद जब जापान पर मित्र राष्ट्रो की सेनाओ का नियन्त्रण स्थापित हुआ, तो मित्र देश और विशेष रूप म मित्र देशो की ओर से शासन सचालक जनरल मैकआर्थर यह चाहते थे कि जापान म स्थानीय सरकारो पर केन्द्र का नियन्त्रण शिथिल कर दिया जाय और लोगो को स्थानीय स्वशासन के क्षेत्र मे अधिकाधिक शक्तिया प्रदान की जाय। इसलिये जापान के नवीन सविधान मे स्थानीय स्वशासन की प्रवृत्ति को अधिकाधिक प्रोत्साहित किया गया। नवीन सविधान के अन्तगत कई कानूनो म स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था की गयी, जिनम १६४७ का 'स्थानीय स्वायत्तता कानून' (Local Automony Law of 1947) सबसे प्रमुख है। इस कानून द्वारा दो स्तरीय स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था की गयी। प्रथम प्रीफेक्चर या जिलो मे प्रीफेक्चज और द्वितीय शहरो नगरों तथा ग्रामों म नगर पालिकाएँ (Municipalities)।

प्रीफेक्चरो की स्थानीय सरकार

वर्तमान समय म भी स्वशासन की दृष्टि से समस्त जापान ४७ इकाइयो म बँटा हुआ है, जिन्हें 'प्रीफेक्चर' कहा जाता है। ये 'प्रीफेक्चर' हमारे देश के जिलो के समान हैं। प्रत्येक प्रीफेक्चर का शासन एक गवनर क्षेत्र के विधानमण्डल की सहायता से चलाता है। इस सम्बन्ध मे गवनर तथा विधानमण्डल की शक्तियाँ इस प्रकार हैं

गवनर—प्रीफेक्चर का गवनर क्षेत्र की समस्त जनता द्वारा ४ वर्ष की अवधि के लिए चुना जाता है और ३० वर्ष की आयु प्राप्त कोई भी जापानी नाग

1 N Kitazawa *The Government of Japan* pp 102 103

रिक (उसके लिए प्रीफेक्चर का निवासी होना आवश्यक नहीं है) इस पद का उम्मीदवार हो सकता है। असेम्बली अपने ¾ बहुमत से अविश्वास का प्रस्ताव पास कर गवनर को ४ वर्ष की अवधि के पूर्व पदच्युत कर सकती है। ऐसी स्थिति में गवनर त्यागपत्र दे देगा या असेम्बली को भंग कर देगा, लेकिन नवनिर्वाचित विधानमण्डल कुल संख्या के दो तिहाई सदस्यों के सामान्य बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पास कर सकता है और अब गवनर विधानमण्डल का भंग नहीं कर सकता। गवनर को मतदाताओं के बहुमत द्वारा प्रस्ताव पास कर अर्थात् प्रत्यावर्तन (Recall) के आधार पर भी वापस बुलाया जा सकता है।

गवनर अपने सहायक के रूप में १ से ३ तक उप गवनर (Assistant Governors) नियुक्त कर सकता है। उप गवनरों के कर्तव्य गवनर ही निश्चित करता है और ये उसके प्रति ही उत्तरदायी होते हैं। गवनर की अनुपस्थिति में उसके सभी कार्य ये उप गवनर ही करते हैं। प्रत्येक प्रीफेक्चर में एक लेखापाल (Accountant), एक लेखा परीक्षक (Auditor), एक कोषाध्यक्ष तथा अन्य कुछ पदाधिकारी भी गवनर की सहायता के लिए नियुक्त किये जाते हैं।

गवर्नर की शक्तियाँ

(१) गवनर दोहरे रूप में कार्य करता है। एक ओर वह राष्ट्रीय सरकार के अभिकर्ता (agent) के रूप में कार्य करता है तथा दूसरी ओर वह प्रीफेक्चरों के कार्यों की देखभाल करता है। थियोडर मैकनेली के शब्दों में "इस प्रकार स्थानीय मुख्य कार्यपालिका अधिकारियों को दो स्वामियों की सेवा करनी होती है, क्योंकि वे राष्ट्रीय मामलों में राष्ट्रीय सरकार के अभिकर्ता के रूप में कार्य करते हैं और स्थानीय मामलों में वे स्थानीय शासनों के अधिकारियों के रूप में कार्य करते हैं। इस दृष्टि से जापानी गवनर अमरीकी गवनर से बहुत भिन्न हैं, जो राष्ट्रीय प्रशासन का प्रतिनिधि नहीं होता।'[1]

(२) गवनर प्रीफेक्चरों के उच्चाधिकारियों, उप गवनरों लेखाकारों तथा कोषाध्यक्ष आदि की नियुक्ति और पदच्युति करता है। वह उनके कार्यों की देखभाल भी करता है।

(३) प्रीफेक्चर का बजट उसके निर्देशन में तैयार किया जाता है और वह प्रीफेक्चर के समस्त आय व्यय, लेखे (Accounts) और लेखे की जाच (Audit) के लिए उत्तरदायी होता है।

(४) वह सरकारी प्रलेखों तथा अन्य महत्त्वपूर्ण पत्रों का सरक्षक होता है।

1 'Thus the local chief executives must serve two masters since they function as agents of the national government in national matters and as officers of their local governments in local matters A Japanese governor is very different from his American counter part who certainly does not regard himself as a functionary of the national administration ' T Mc Nelly *Contemporary Government of Japan* p 160

(५) वह सरकारी सम्पत्ति का प्रबन्ध करता है और जनता के लाभ के लिए मुआवजा देकर निजी सम्पत्ति का अधिग्रहण कर सकता है।

(६) वह प्रीफेक्चर के विधानमण्डल से परामर्श किये बिना प्रीफेक्चर के मामलो को ठीक करने के लिए अध्यादेश जारी कर सकता है और किसी अध्यादेश या विनियम का उल्लंघन करने वाले व्यक्ति पर २,००० येन तक जुर्माना कर सकता है।

(७) सकटकालीन स्थिति मे गवनर प्रीफेक्चर के विधानमण्डल की कुछ या समस्त शक्तियाँ अपने हाथ में ले सकता है और विधानमण्डल की अनुमति के बिना और उसके निणय के विरुद्ध भी आवश्यक तथा उचित कार्यों पर धन खच कर सकता है।

(८) वह नगरो तथा ग्रामो के मेयरो के कार्यों की देखभाल करता है और उनके अनुचित कार्यों के विरुद्ध न्यायालयों में कार्यवाही कर सकता है।

(९) वह अपने क्षेत्र की नगरपालिकाओ के कागज पत्रो और लेखे की जाँच कर सकता है।

(१०) वह सामाजिक समारोहो म सक्रिय भाग लेता है और प्रीफेक्चर के प्रधान के रूप मे कुछ औपचारिक काय सम्पन्न करता है।

प्रीफेक्चर का विधानमण्डल और उसकी शक्तियाँ

प्रीफेक्चर के विधानमण्डल के सदस्यो की सख्या, प्रीफेक्चर की जनसख्या के अनुपात के अनुसार ४० से लेकर १२० तक है। विधानमण्डल के सदस्यो को प्रीफेक्चर के वयस्क नागरिको द्वारा निर्वाचित किया जाता है। विधानमण्डल की सदस्यता के लिए आवश्यक योग्यता २५ वष की आयु प्राप्त नागरिक होना ही है। विधानमण्डल का एक वष मे ६ बार अधिवेशन होता है और ⅓ सदस्यो की माँग पर विशेष अधिवेशन बुलाया जा सकता है। विधानमण्डल का कायकाल ४ वष है, किन्तु गवनर द्वारा इसे समय के पूव भग किया जा सकता है। विधानमण्डल का कोई सदस्य राष्ट्रीय डायट या स्थानीय प्रशासन का सदस्य नही हो सकता है।

विधानमण्डल की शक्तियाँ—प्रीफेक्चर के विधानमण्डल को अपने क्षेत्राधिकार के अन्तगत रहते हुए उपनियम' (Bye laws) बनाने और उनके पालन कराने का अधिकार प्राप्त है। इन नियमो का उल्लघन करने वालो को विधान मण्डल दो वष की कैद या एक लाख येन जुर्माना या दोनो सजाएँ दे सकता है। यह गवनर द्वारा प्रस्तुत किये गये बजट पर विचार करता और उसे स्वीकार करता है। जनता पर कर इसके द्वारा ही लगाये जाते है। यह लेखा परीक्षको (Auditors) की वार्षिक रिपोट पर भी विचार करता है। विधानमण्डल लोक सेवाओ के लिए फीस निर्धारित करता और स्थानीय कमचारियो के वेतन निश्चित करता है। यह सावजनिक सम्पत्ति का प्रबन्ध करता है और इसके द्वारा पुस्तकालय आदि का सचालन भी किया जाता है।

विधानमण्डल तथा गवनर में सम्बन्ध—जापान के प्रीफेक्चर मे विधानमण्डल तथा गवनर के बीच लगभग वैसा ही सम्बन्ध है, जसा कि ससदीय व्यवस्था के अन्तगत कायपालिका और विधानमण्डल के बीच होता है। गवनर विधानमण्डल द्वारा पारित विधेयकों पर निषेधाधिकार का प्रयोग कर सकता है, लेकिन यदि विधान मण्डल इस विधेयक को पुन दो तिहाई बहुमत से पारित कर दे, तो गवनर का निषेधाधिकार रद्द हो जाता है। वह विधानमण्डल द्वारा पारित किसी प्रस्ताव पर पुर्नविचार भी करवा सकता है। यदि विधानमण्डल गवनर के विरुद्ध अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दे, तो गवनेर त्यागपत्र दे देगा या विधानमण्डल को भग कर नवीन चुनाव करायेगा। यदि वह नये चुनाव कराता है, तो उसके बाद नया चुना गया विधानमण्डल अपनी कुल सख्या के दो तिहाई सदस्यो के सामान्य बहुमत से पुन अविश्वास प्रस्ताव पास कर उसे पदच्युत कर सकता है। यह स्पष्ट है कि गवनर विधानमण्डल को दुबारा भग नही कर सकता।

नगरपालिकाएँ (Municipalities)—प्रीफेक्चर के आधीन नगरो तथा गाँवों मे जो स्थानीय सस्थाएँ हैं, उन्ह नगरपालिकाओ का नाम दिया गया है।

मेयर (Mayor)—नगरपालिका का मुख्य पदाधिकारी मेयर या महापौर होता है। मेयर अपने क्षेत्र के नागरिको द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर चुना जाता है और २५ वष की आयु प्राप्त कोई भी वयस्क नागरिक मेयर पद का उम्मीदवार हो सकता है। मेयर का कत०य पालन के लिए वेतन मिलता है और वह किसी असेम्बली या डायट का सदस्य नही हो सकता है। मेयर के लिए गवनर के निर्देशो का पालन आवश्यक है और यदि वह अपने काय कानूनो तथा गवनर के निर्देशो के अनुसार न करें, तो गवनर उसे पदच्युक्त कर सकता है। मेयर को नगरपालिका सभा अपने दो तिहाई बहुमत से पदच्युत कर सकती है और कुल मत दाताओ का बहुमत भी मेयर के विरुद्ध मतदान कर उसे पदच्युत कर सकता है। मेयर की सहायता के लिए एक सहायक मेयर भी होता है।

गवनर के समान ही मेयर भी दोहरे रूप मे काय करता है। एक ओर वह गृह म त्रालय तथा गवनर के आदेशो का पालन करता है और दूसरी तरफ वह नगर अथवा कस्बे की नगरपालिका का प्रमुख होता है। नगरपालिका का समस्त प्रशासन उसी के द्वारा चलाया जाता है। इस हेतु वह स्थानीय कमचारियो की नियुक्ति करता उनके काम की निगरानी करता और उन्हे पदच्युत कर सकता है। वह नगरपालिका का बजट तैयार करता और उसे नगरपालिका सभा से पास करवाता है। वह कर लगाता और उन्ह एकत्रित करता है। सकटकालीन अवस्था मे मेयर विनियम जारी कर सकता है, जिन्हे उपनियम की शक्ति प्राप्त होती है। वह अधिकृत उद्देश्यो के लिए सकटकाल म अपनी ओर से धन खच कर सकता है।

नगरपालिका सभा (The Municipal Assembly)—नगरपालिका सभा की सदस्य सख्या क्षेत्र की जनसख्या के अनुसार निर्धारित की जाती है जो कम से

कम १२ और अधिक से अधिक ४८ हो सकती है। सभा के सदस्य उन सभी वयस्क नागरिकों द्वारा चुने जाते है, जो कम से कम तीन मास से उस क्षेत्र के निवासी हो। २५ वर्ष की आयु प्राप्त कोई भी नागरिक सभा के लिए उम्मीदवार हो सकता है। सदस्यो के पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध नही है।

नगरपालिका सभा की बठकें वर्ष मे ६ बार होती हैं। इसका विशेष अधिवेशन मेयर के द्वारा अपने विवेक से या सभा के ⅓ सदस्यों की मांग पर बुलाया जा सकता है। यह सभा अपने पहले अधिवेशन मे ही एक सभापति तथा विशेष और स्थायी समितियों को चुनती है। सभा अपने क्षेत्र का वार्षिक बजट पास करती, क्षेत्र की जनता पर कर लगाती और सार्वजनिक सेवाओ के लिए फीस निश्चित करती है। यह स्थानीय अधिकारियो के कार्यों की जाँच कर सकती तथा उन्हें अपने समक्ष बुला सकती है। नगर सभा अपने क्षेत्राधिकार के अन्तर्गत उप कानूनों (Bye laws) का निर्माण करती और उल्लंघन करने वालों के लिए दण्ड निश्चित करती है।

स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण—यद्यपि वर्तमान समय में स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का उतना नियन्त्रण नही है, जितना नियन्त्रण मेइजी संविधान के अन्तर्गत था, लेकिन फिर भी स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार का नियन्त्रण पर्याप्त मात्रा मे है। वर्तमान समय मे यह नियन्त्रण १९४९ ई० मे स्थापित 'स्थानीय स्वायत्तता अभिकरण' (The Local Antonomy Agency) द्वारा रखा जाता है। यह अभिकरण स्थानीय अधिकारियो की टोकियो मे बठकें बुलाता है गवनरो तथा अन्य स्थानीय अधिकारियों को इस बैठक मे तथा अन्य अवसरो पर निर्देश देता रहता है, उनके लिए आदर्श कानूनो के प्रारूप तैयार करता और स्थानीय समस्याओ के सम्बन्ध मे उन्हें परामर्श देता रहता है। यह एक तथ्य है कि वर्तमान समय तक भी जापान की स्थानीय शासन की संस्थाओं को अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त नही है और इन संस्थाओं पर केन्द्रीय सरकार द्वारा पर्याप्त नियन्त्रण रखा जाता है। स्थानीय शासन की संस्थाओं द्वारा अधिक स्वतन्त्रता प्राप्त न कर सकने के कारण इस प्रकार हैं (१) जापान के लोगों में स्थानीयता का विचार अभी बहुत कम विकसित हो पाया है। स्थानीय जनो की राजनीतिक उदासीनता का स्वाभाविक परिणाम इन संस्थाओ पर केन्द्रीय नियन्त्रण के रूप मे देखा गया है। (२) स्थानीय अधिकारी परम्परा और आदत के अनुसार स्थानीय समस्याओ के निराकरण हेतु स्वय पहल नही करते और केन्द्रीय नेतृत्व की तरफ देखते रहते हैं। (३) वर्तमान समय मे स्थानीय संस्थाओं की भी प्रमुख समस्याएं आर्थिक ही हैं, यथा सामाजिक सुरक्षा बेकारी और आर्थिक नियोजन आदि। इन समस्याओं को राष्ट्रीय स्तर पर ही हल किया जा सकता है स्थानीय स्तर पर नही। (४) काहिन के अनुसार स्थानीय संस्थाओ पर केन्द्रीय नियन्त्रण का एक प्रमुख कारण यह है कि स्थानीय संस्थाओ के वित्तीय साधन बहुत अधिक सीमित है। वे केन्द्र

सरकार द्वारा दी जाने वाली वित्तीय सहायता पर निर्भर करती हैं। इस वित्तीय सहायता के साथ स्थानीय संस्थाओं पर केन्द्रीय नियन्त्रण भी लागू हो जाता है।[1]

स्थानीय संस्थाओं की स्वतन्त्रता की दिशा में क्रमश कुछ सुधार अवश्य ही हो रहा है।

प्रश्न

१ जापान में स्थानीय शासन के संगठन और कार्यों का वर्णन कीजिए।

२ प्रीफेक्चर और नगरपालिका पर टिप्पणियाँ लिखिए और यह बतलाइए कि इन पर केन्द्रीय सरकार किस प्रकार नियन्त्रण रखती है।

1 G M Kahin *Major Governments of Asia*, p 185

7

राजनीतिक दल
(POLITICAL PARTIES)

"एक वास्तविक द्वि दलीय पद्धति का विकास उस समय तक नहीं हो सकता जब तक कि दलीय सगठन व्यक्ति या नेता से केन्द्रित हो जिनमें आस्था सिद्धान्तो या नीति के स्थान पर प्रायमिक रूप से व्यक्तियो के प्रति हो।"[1] —चितोशी यानागा

जापानी दलो का सक्षिप्त इतिहास

जापान मे राजनीतिक दलो का उदय १९वी सदी के अन्त मे सुधारो की माँग को लेकर हुआ। सबसे पहले १८८१ ई० मे जापान मे 'लिबरल पार्टी (Liberal Party) स्थापित हुई। उसी वर्ष सम्राट ने जापान मे सुधार लागू करने और ससद बनाने की घोषणा की। उदार दल के नेता माण्टेस्क्यू, रूसो और वाल्टेयर आदि फासीसी दार्शनिको से बहुत प्रभावित थे और उन्होने जापान मे प्रतिनिध्यात्मक शासन का आदोलन प्रारम्भ कर दिया। आदोलन का दमन करने के लिए पुलिस शक्ति का आश्रय लिया गया और इसके परिणामस्वरूप दल के युवा वर्ग ने हिंसा तथा आतक का मार्ग अपना लिया। इससे जनता मे दल का समर्थन बहुत कम हो गया। मार्च १८८२ ई० म एक 'सुधार दल (Reform Party) का गठन हुआ। इसका उद्देश्य भी स्वतन्त्रता और प्रगति था, लेकिन यह इस दिशा मे क्रमश आगे बढने के पक्ष मे था। उदार दल और सुधार दल का विरोध करने और सम्राट के लिए जन समर्थन प्राप्त करने हेतु १८८२ ई० म राजकुमार आइटो के नेतृत्व म एक 'इम्पीरियल पार्टी बनी।

१८९८ ई० मे उदार दल और सुधार दल ने मिलकर एक नया सगठन स्थापित किया और इसे 'सवधानिक सरकार की पार्टी का नाम दिया। नये दल को

1 A genuine two party system cannot emerge as long as parties remain personality centred and leader centred organizations in which loyalty is primarily to persons rather than two principles and polities —C Yanaga *Japanese People and Politics* p 289

बहुत जल्दी ही सफलता मिली और इस दल की पहली एकदलीय केबीनेट का निर्माण हुआ। लेकिन थोडे समय बाद ही सवैधानिक पार्टी म मतभेद उत्पन्न हो गये और दल फिर से पुराने दो दलों म विभक्त हो गया। १६०० ई० मे राजनीतिक मित्रों की सभा' (Association of Political Friends) नामक पार्टी बनी। १६०० ई० से लकर १६०५ ई० तक इस दल की सरकार भी रही, परन्तु बाद मे फूट के कारण इस दल का प्रभाव भी घट गया। इससे अलग होकर एक ग्रुप ने अपना नाम 'राजनीतिक मानभाव सघ' (Political Fraternal Party) रख लिया। १६२० ई० मे एक शाही आदेश द्वारा सभी दलो का अत कर दिया गया। १६४० मे राजकुमार कोन के द्वारा 'इम्पीरियल राज्य सहायक सघ' बनाया गया, जिसका उद्देश्य जनता के विचार सरकार तक पहुचाना था। १६४५ मे सम्राट समथक इस दल का भी अन्त हो गया। इस प्रकार मेइजी काल म राजनीतिक दल निबल ही थे और वे व्यापक जन समथन प्राप्त करने मे असफल रहे।

द्वितीय विश्वयुद्ध के उपरान्त राजनीतिक दल—द्वितीय विश्व युद्ध मे जापान के आत्मसमपण के उपरान्त जापान मे राजनीतिक दलो के विकास मे एक नवीन युग का सूत्रपात हुआ। आरम्भ में छोटे-छोटे अनेक दल बने, परन्तु अन्त म दो प्रमुख दलो की स्थापना हुई। *उदार दल (Liberal Party) और प्रगतिवादी दल* (Progressive Party) वामपथी नेताओ ने भी सगठित होकर सोशल डेमोक्रेटिक पार्टी' का स्थापना की। इनक अलावा जापान के राजनीतिक क्षितिज पर कम्यूनिस्ट पार्टी कोमिटो दल (People's Cooperative Party) तथा अनेक छोटे-छोटे दलो का उदय हुआ। १६५५ म दोना प्रमुख अनुदार दलो ने मिलकर 'उदार लोकतन्त्री दल' (Liberal Democratic Party) का सगठन किया, जो आज तक जापान का सबसे प्रमुख दल है।

पिछले तीन आम चुनावो मे प्रतिनिधि सदन मे मुख्य दलो की स्थिति इस प्रकार रही है

राजनीतिक दल	१६६०	१६६३	१६६७
उदार लोकतन्त्री दल	२६६	२८३	२७७
समाजवादी दल	१४५	१४४	१४०
लोकतान्त्रिक समाजवादी दल	१७	१३	३०
कोमिटो दल			२५
साम्यवादी दल	३	५	५
स्वतन्त्र	५	१२	६

उपरोक्त तालिका मे स्पष्ट हैं कि वतमान समय मे जापान म उदार लोकतन्त्री दल, समाजवादी दल तथा लोकतान्त्रिक समाजवादी दल , मुख्य हैं, इनके अतिरिक्त

जिन छोटे दलो को डायट मे प्रतिनिधित्व प्राप्त है, उनमे कोमिटो और साम्यवादी दल भी है ।

आधुनिक जापान के मुख्य राजनीतिक दल

उदार लोकतन्त्रीय दल (Liberal Democratic Party)—१९५५ मे अनुदारवादी विचारधारा वाले 'उदार दल' और 'लोकतान्त्रिक दल' के आपस के विलय के परिणामस्वरूप 'उदार लोकतन्त्रीय दल' की स्थापना हुई । आड्रथ बर्क्स के शब्दो मे, "नीति की दृष्टि से यह दल निश्चित रूप से अनुदारवादी दल है ।"[1] घरेलू मामलो मे यह दल उदार नीति का समर्थक है और प्रजातन्त्र मे गहरी आस्था रखता है । इसका प्रथम उद्देश्य यथासम्भव युद्ध पूर्व की सामाजिक, राजनीतिक और सवैधानिक स्थिति को पुन स्थापित करना है । यह प्राचीन परिवार व्यवस्था परिवार के प्रधान और पुरुषो की प्रधानता स्थापित करना चाहता है । यह पुरानी परम्पराओ तथा शिक्षा प्रणाली को भी पुन आरम्भ करना चाहता है । यह केन्द्रीयभूत शासन व्यवस्था तथा पूर्णरूप से शासन के आधीन लोक सेवाए स्थापित करने के पक्ष मे है । आर्थिक क्षेत्र मे यह 'मुक्त व्यापार' (Free enterprise) और व्यक्तिगत उपक्रम का समर्थक है, फिर भी यह लोक कल्याणकारी राज्य, लोक स्वास्थ्य बीमा, वृद्धो की सहायता और श्रमिको के लिए साधारण मूल्य की भवन व्यवस्था आदि प्रगतिशील कदमो के पक्ष मे है ।

वैदेशिक क्षेत्र मे यह दल अमरिका के साथ सहयोग और रक्षा सन्धि का पक्षपाती रहा है । यह अणु अस्त्रो के निषेध, सामान्य निशस्त्रीकरण सयुक्त राष्ट्र सघ के समर्थन तथा एक एशियाई देश के रूप मे जापान की स्थिति को सुदृढ करने के लिए एशियाई देशो के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धो की स्थापना के पक्ष में है । साम्यवाद विरोधी होते हुए भी यह साम्यवादी चीन के साथ व्यापार बढाने का इच्छुक रहा है और अभी हाल ही मे साम्यवादी चीन को सयुक्त राष्ट्र सघ में प्रवेश दिये जाने के बाद यह दल चीन के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के पक्ष मे है ।

सन् १९५५ से ही इस दल का सत्ता पर अधिकार है और आज भी अन्य कोई दल इसे चुनौती देने की स्थिति मे नही है । किन्तु यह दल स्वय तीव्र आन्तरिक फूट से ग्रस्त है और दल मे सदैव ही अनेक गुट विद्यमान रहे हैं । राबर्ट वार्ड के शब्दो मे, "उदार लोकतन्त्री दल का वास्तव में कोई एक नेता नहीं है और इसे गुटों का एक शिथिल सम्मिश्रण कहना ही अधिक उचित होगा ।"

जापान समाजवादी दल (Japan Socialist Party)—द्वितीय महायुद्ध के पूर्व भी जापान मे समाजवादी और वामपथी राजनीतिक दलो का अस्तित्व था

1 'Ideologically Liberal Democratic Party is a distinctly conservative party of the right Adrath Burks *The Government of Japan* p 81

लेकिन उन्हें देश की राजनीति में महत्ता प्राप्त नहीं थी। महायुद्ध के बाद समाजवादी तत्त्वों ने कुछ शक्ति प्राप्त की थी और १९४७ ४८ में ९ माह के लिए कातायामा तेत्सू के नेतृत्व में एक शिथिल सम्मिलित सरकार की भी स्थापना हुई। १९५५ में वामपथी और दक्षिणपथी समाजवादी गुट आपस में मिल गये और दल के वर्तमान रूप का उदय उसी समय हुआ। किन्तु १९५९ ई० में दक्षिणपथी समाजवादी तत्त्व इससे पुन अलग हो गये।

जापान समाजवादी दल का दूसरा सबसे महत्त्वपूर्ण दल है, और इसे १९६०, ६३ तथा ६७ के चुनाव में प्रतिनिधि सदन के क्रमश १४५, १४४ और १४० स्थान प्राप्त हुए हैं। यह दल मार्क्सवाद से प्रभावित और उग्र समाजवादी विचारधारा का समर्थक है। मैकनेली के शब्दों में, 'जापानी समाजवादी दल यूरोपियन देशों के समाजवादी दलों से बहुत अधिक उग्रवादी है जबकि समाजवादी अन्तरराष्ट्रीय साम्यवादी प्रसार के विरोध और नाटो के समर्थन के लिए वचनबद्ध है, जापानी समाजवादी तटस्थता नीति का प्रतिपादन करते हैं और उन्होंने अपने आपको चीन के साम्यवादियों का मित्र और अमरीकी साम्यवाद का विरोधी घोषित किया हुआ है।"[1] १९७१ ७२ में सयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के एक दूसरे के समीप आ जाने के परिणामस्वरूप उदार लोकतन्त्री दल के नेतृत्व में ही जापान की विदेशनीति बहुत कुछ सीमा तक जापान समाजवादी दल के विचारानुसार ही हो गयी है। जापान समाजवादी दल आर्थिक क्षेत्र में निजी पूजी के प्रभुत्व को कम करके एक ऐसे प्रजातान्त्रिक समाजवाद की स्थापना करना चाहता है, जिसमें उत्पादन और वितरण के साधनों पर राज्य का अधिकार हो।

लोकतान्त्रिक समाजवादी दल (Democratic Socialist Party)—१९५५ में दक्षिणपथी और वामपथी समाजवादी तत्त्वों का विलय हो गया, लेकिन १९५६ से ही जापानी समाजवादी दल के आन्तरिक मतभेद उभर कर सामने आने लगे और दक्षिणपथी समाजवादियों ने निशिओ सुएहिरो के नेतृत्व में जापानी समाजवादी दल से अलग होकर लोकतान्त्रिक समाजवादी दल की स्थापना की। इस दल को १९६०, १९६३ और १९६७ के चुनावों में प्रतिनिधि सदन में क्रमश १७ १३ और ३० स्थान प्राप्त हुए हैं।

यह दल उदार और व्यावहारिक (Pragmatic) समाजवाद का समर्थक है और इस दृष्टि से उदार लोकतन्त्री दल और जापान समाजवादी दल के बीच का मार्ग ग्रहण करता रहा है। वैदेशिक नीति के क्षेत्र में यह सयुक्त राष्ट्र सघ के माध्यम से पश्चिमी देशों के साथ सहयोग करने का पक्षपाती है और अमेरिका के साथ सुरक्षा सन्धि को धीरे-धीरे सशोधित करते हुए जापान की भूमि से अमरीकी सनिकों

[1] T Mc Nelly *Contemporary Govt of Japan* p 127

की वापसी चाहता है। चीन के प्रति यह सावधानीपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने के पक्ष में है। आन्तरिक क्षेत्र म इसका प्रमुख उद्देश्य नियोजित अर्थ व्यवस्था और समाजवादी साधनों द्वारा कल्याणकारी राज्य की स्थापना है। सरकारी सहायता द्वारा कम कीमत के मकानों का निर्माण व किसानों तथा छोटे और मध्यमवर्गीय उद्योगों को सरकार की ओर से सहायता इसके कार्यक्रम के विशेष अग हैं।

साम्यवादी दल (Communits Party)—जापान के छोटे राजनीतिक दलों मे साम्यवादी दल सबसे प्रमुख है। १९४६ से लेकर अब तक के प्रत्येक चुनाव म यह अपने उम्मीदवार खडे करता रहा है और इसे २ से लेकर ५ प्रतिशत तक मत प्राप्त हुए हैं। दल सदैव ही अमरीकी साम्राज्यवाद का प्रबल विरोधी और साम्यवादी चीन के साथ घनिष्ठ मित्रता स्थापित करने के पक्ष मे रहा है। घरेलू नीतियों के क्षेत्र म यह निम्न वर्गों की आर्थिक स्थिति मे सुधार लाने वाले सभी उपायों और कार्यों का समर्थक है।

कोमिटो दल (The Fair Play Party)—जापान म साधारणतया धर्म राजनीतिक दलों के गठन का आधार नही है, परन्तु कोमिटो दल जापान के नवीन धर्म 'सोका गोक्काई' (Soka gokkai) अथवा Value bration Society का प्रतिनिधित्व करता है। दल ने सर्वप्रथम १९५५ मे राजनीति मे प्रवेश किया और इसके कुछ प्रतिनिधि टोकियो के स्थानीय चुनावों मे विजयी रहे। इस दल की शक्ति म क्रमश वृद्धि देखी गयी है और १९६७ के चुनाव मे इसके २५ सदस्य प्रतिनिधि सदन के लिए निर्वाचित हुए। सभासद सदन म इसका स्थान उदार लोकतन्त्री दल और जापान समाजवादी दल के बाद तीसरा है।

कोमिटो दल के नेता अपने आपको 'नव समाजवादी' (Neo socialists) कहते हैं परन्तु वे मार्क्सवाद के भक्त नही हैं। वे धार्मिक आधार पर समाज के नवीनीकरण और आयकर की समाप्ति के पक्ष मे है। राजनीतिक भ्रष्टाचार का अन्त उनके द्वारा अपना एक प्रमुख लक्ष्य घोषित किया गया है। जापान का पुन शस्त्रीकरण, अणु अस्त्रों के परीक्षण और जापान मे अमेरिका की आणविक पनडुब्बियों के प्रवेश का विरोध उनके वैदेशिक कार्यक्रम के प्रमुख अग है।

जापानी दल पद्धति की विशेषताए

जापान के राजनीतिक दलों ने पश्चिम से प्रेरणा प्राप्त की, लेकिन फिर भी इन दलों का मूल स्वरूप जापानी है और जापान की सामाजिक तथा राजनीतिक पृष्ठभूमि में ही इन्हें ठीक प्रकार से समझा जा सकता है। जापान म दल पद्धति की कुछ प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं

(१) दलों का सविधानेत्तर विकास (Extra constitutional growth)—ब्रिटेन, अमेरिका और भारत आदि देशों की भाँति ही जापान म भी राजनीतिक दल सविधानेतर विकास का परिणाम है। वर्तमान समय मे जापान की ससदीय व्यवस्था म राजनीतिक दलों ने महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया है और राजनीतिक दलों

के बिना जापान की शासन व्यवस्था के संचालन की कल्पना ही नही की जा सकती, लेकिन जापान के संविधान मे राजनीतिक दलो का कोई उल्लेख नही है।

(२) बहुदलीय पद्धति—जापान मे ब्रिटेन या अमेरिका के समान द्विदलीय पद्धति नही, वरन् भारत या फ्रास के समान बहुदलीय पद्धति (Multy Party System) है। १९५५ मे जब एक ओर अनुदारवादी तत्त्वो का तथा दूसरी ओर समाजवादी तत्त्वो का विलय हुआ, उस समय जापान मे भी द्विदल पद्धति के विकास की आशा की गयी थी किन्तु यह आशा फलीभूत नही हुई और न ही आगे आने वाले वर्षों मे द्विदल पद्धति के विकास की आशा की जा सकती है। जापान के राजनीतिक प्रागण मे अनेक दल हैं और इन दलो मे भी आन्तरिक मतभेदो के परिणाम स्वरूप अनेक गुट और प्रशाखाएँ बन गयी है।

(३) एक राजनीतिक दल का प्रभुत्व—जापान की बहुदलीय पद्धति फ्रास के समान होने के बजाय इस दृष्टि से भारत के समान है कि इसमे एक राजनीतिक दल को बहुत अधिक प्रभाव प्राप्त है और वह है उदार लोकतन्त्री दल। जापान मे इस दल की स्थिति वैसी ही है जैसी भारत मे राष्ट्रीय काग्रेस की है। १९५५ से लेकर अब तक इस दल का राजनीतिक शक्ति पर एक छत्र प्रभुत्व रहा है और बहुदलीय पद्धति होते हुए भी जापान मे मिली-जुली सरकारों की कोई स्थिति नही आयी है।

(४) गुटबन्दी और व्यक्तित्व का प्रभाव—जापान के राजनीतिक दल ब्रिटिश दलो की भाँति सुस्पष्ट राजनीतिक और आर्थिक विचारधारा पर आधारित नही हैं और इसी कारण इनमे गुटबन्दी तथा व्यक्तित्व का प्रभाव दोनो ही तत्त्व देखे जा सकते हैं। प्रनागा के अनुसार अधिकाश दलो का निर्माण बेमेल समूहो द्वारा व्यक्तिगत लाभ के उद्देश्य से किया गया है और इन्हें 'अवसरवादिता की उपज' तथा 'सुविधा का विवाह' कहा जा सकता है। अवसरवादिता की उपज होने के कारण ही दल अपने नामो मे बडी सरलता से परिवर्तन कर लेते हैं। एक दल के सदस्य अलग होकर नये दल का निर्माण कर लेते हैं और फिर कुछ ही दिनो मे वापस अपने दल मे लौट आते हैं। इसी कारण क्विग्ले और टर्नर ने तो लिखा है कि 'जापान में एक राजनीतिक दल वर्गीय हितों के शिथिल सघ से अधिक कुछ नहीं है।'[1]

गुटबन्दी का एक कारण और परिणाम राजनीतिक दलो का 'व्यक्तित्व केन्द्रित' (Personality Centred) और 'नेता केन्द्रित' (Leader Centred) होना है। सदस्य दल और उसके सिद्धान्तो के प्रति निष्ठा रखने के बजाय नेता के प्रति ही निष्ठा रखते हैं। अपने प्रिय नेता के दल मे अलग हो जाने, दूसरे दल मे मिल जाने या नवीन दल की स्थापना कर लेने पर वे भी नेता का अनुगमन करते हैं। व्यक्तित्व के प्रभाव की यह प्रवृत्ति निम्नतर स्तर अर्थात ग्राम सभा से लेकर सर्वोच्च स्तर डायट तक सर्वत्र देखी जा सकती है। यह प्रवृत्ति न केवल दल के सदस्यों वरन्

1 'In Japan a political party is little more than a loose association of factional interests Quigley & Turner *The New Japan*

निर्वाचकों मे भी है और मतदाता उम्मीदवार के नाम पर ही मतदान करते हैं, दलीय आधार पर नही। जापान म द्विदल पद्धति का एक प्रमुख कारण व्यक्तित्व के प्रभाव की यह प्रवृत्ति है। यानागा के मत मे 'जब तक दलों का केन्द्रीय आधा व्यक्ति या नेता रहेंगे, तब तक सच्ची दलीय पद्धति का विकास होना सम्भव नहीं हैं।'

(५) दलों में व्यावसायिक राजनीतिज्ञों (Professional Politicians) की बहुलता—जापान के राजनीतिक दलो म काफी सख्या म ऐसे व्यक्ति हैं, जिन्हे 'पेशेवर राजनीतिज्ञ' कहा जा सकता है। राजनीतिक दलो के अन्तर्गत सक्रिय होने मे इनका एकमात्र उद्देश्य आर्थिक और राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना ही है। ये केवल चुनाव के समय अपने निर्वाचन क्षेत्रो मे जाते हैं और बाकी समय मे इनके कार्य का केन्द्र राजधानी टोकियो व प्रतिनिधि सदन बना रहता है। ये पेशेवर राजनीतिज्ञ अपने लाभ के लिए उच्च पदो पर आसीन व्यक्तियो पर दबाव डालते रहते हैं और इनके कारण जापान की राजनीति मे अनेक भ्रष्टताएँ आ गयी हैं।

(६) केन्द्रीकरण की प्रवृत्ति और अपेक्षाकृत कठोर अनुशासन—जापान के राजनीतिक दलो मे बहुत अधिक केन्द्रीकरण पाया जाता है। सभी प्रमुख दलो का मुख्यालय टोकियो मे है। केन्द्रीय नेता ही दल की समस्त नीतियो और कार्यक्रमो को निर्धारित करते हैं और इसम स्थानीय इकाइयो की कोई भूमिका नही होती। केन्द्रीय नेता ही टोकियो म डायट के दोना सदनो के लिए अपने उम्मीदवारो का चुनाव करते हैं और वहीं से चुनाव अभियान का सचालन किया जाता है। केन्द्रीय सगठन जिला शाखाओ पर अपना पूर्ण नियन्त्रण रखते हैं।

बहुदलीय पथा और व्यक्तित्व की प्रधानता आदि तत्वो के कारण जापान मे दलीय अनुशासन ब्रिटेन के समान तो प्रभावपूर्ण नहीं है, लेकिन सामान्यतया विधायक अपने राजनीतिक सगठन के निर्णय से बंधे होते हैं और दलीय निर्णय का उल्लघन करने वाले को दल से बाहर कर दिया जाता है। वस्तुस्थिति के विषय मे यानागा का मत है कि "जापान में दलीय अनुशासन व्यवहार में ब्रिटेन में प्रयोग किये अत्यन्त प्रभावपूर्ण नियन्त्रण और अमरीकी दल पद्धति जो अपनी सदस्यता पर केवल अशक्त नियन्त्रण रखती है, के मध्य में कहीं है।"

(७) नौकरशाही का विशेष प्रभाव—जापान के राजनीतिक जीवन मे नौकरशाही वर्ग का विशेष प्रभाव है और इस कारण राजनीतिक दलो मे भूतपूर्व राजकीय कर्मचारियों को सख्या उत्तरोत्तर बढती जा रही है। यह उल्लेखनीय है कि युद्धोत्तर काल के प्रधानमन्त्रियो मे से अधिकाश वे रहे है जिन्होने लम्बा समय नागरिक सेवा मे बिताया था जैसे कि शिधेहारा, योशीदा, अशीदा, किशी और इकेदा। १९६० में इकेदा मन्त्रिमण्डल के तो १७ में से ९ सदस्य नौकरशाही वर्ग से सम्बन्धित थे। राजनीतिक दलो पर नौकरशाही के अत्यधिक प्रभाव को श्रेष्ठ प्रजातान्त्रिक प्रवृत्ति नहीं कहा जा सकता है।

(८) सामान्यत साम्प्रदायिकता का अभाव—एशिया के अन्य देशो के अन्तर्गत धर्म और सम्प्रदाय दलो के गठन का प्रमुख आधार है लेकिन जापान मे राजनीतिक दलो के गठन का आधार सामान्यतया सकीर्ण धार्मिक हित या सम्प्रदाय नही है । इस सम्बन्ध मे कोमिटो दल को अवश्य ही अपवाद कहा जा सकता है ।

(९) विभिन्न हित समूहों अथवा सगठनों का विकास—जापान म विभिन्न हितो ने राजनीतिक दलो के अन्तर्गत अपने 'दबाव गुट' (Pressure Groups) बनाये हुए हैं जिनका उद्देश्य दलीय नीति और कार्यो पर प्रभाव डालते हुए अपने समुदाय के हितो की रक्षा करना है । इनमे कुछ मुख्य गुट य हैं—वयोवृद्ध तथा कुशल कर्मचारियो की सभा (Veterans Association) व्यापारियो की सभाएँ (Japan Management Association), कृषक सघ (Japan Farmers Union), मजदूर सघ, गृहणियो का सघ आदि ।

इन सघों ने डायट तथा केबीनेट मे अपनी 'लाबिया' (Lobbies) बना रखी है जो कानून निर्माण तथा प्रशासन म अपने हितो की रक्षा के लिए दबाव डालती रहती है । यद्यपि जापान में 'लाबियों' की भूमिका उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है, जितनी कि सयुक्त राज्य अमेरिका में तथापि विभिन्न वर्गों के हितों को सुरक्षित करने के उद्देश्य से इनके क्षेत्र और प्रभाव में निरन्तर वृद्धि हो रही है ।

प्रश्न

१ जापान की दल पद्धति की विशेषताओ का वर्णन कीजिए ।

२ जापान के मुख्य राजनीतिक दलो की नीति तथा कार्यक्रम पर प्रकाश डालिए ।